॥ श्रीः ॥

सिद्धनित्यनाथप्रणीतः

रसरत्नाकरः ।

(समस्तरसग्रन्थानां शिरोभूषणम्)

माथुरवैश्याऽऽयुर्वेदोद्धारक शालग्रामकृत-

भाषाटीकाविभूषितः ।

स च

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९६६, शाके १८३१.

अनुवादकः-

लालाशालिग्रामजी।



"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-मुम्बई.

॥ श्रीः ॥

भूमिका।

प्रिय मित्रवरो ! यह तो आपको भलीभाँति विदित होगा कि, यह संसार अनेक प्रकारकी विद्याओंका पूर्ण भाण्डागार है, परन्तु आयुर्वेदविद्या ईश्वरने महा अद्भुत और तत्काल चमत्कार दिखानेवाली बनाई है, ऐसा कौन अज्ञानी मूर्ख होगा जिसको इस विद्यासे काम न पड़ता होगा, विचार करके देखा जाय तो कैसाही ज्ञानी, ध्यानी, राजा, महाराजा, योगी, वियोगी क्यों न हो, परन्तु इस संसारमें रहकर, दो चार बार प्रत्येक पुरुषको इस वैद्यक विद्याके जाननेवाले वैद्योंसे अवश्यही काम पड़ता है, क्योंकि यह शरीर आतङ्क भवन है, और इसका मूल पृथ्वी, पावक, आकाश, पानी, और पवन है, इनहीं पाँचों तत्त्वोंसे यह शरीर रचा गयाहै, इन तत्त्वोंको वैद्य लोग भली भाँति जानते हैं, ऐसे वैद्योंका सदैव तन मन धनसे आदर सत्कार करना चाहिये, क्योंकि वही इस देहके उपकारकर्त्ता और कष्टहर्त्ता हैं, जिनकी कृपादृष्टिसे यह शरीर सदा स्वस्थ रहता है, फिर उनकी समान प्राणदान देनेवाला और कौन है ? इस कारण आयुर्वेदविद्या सर्वोत्तम है ॥

इस विद्याके अनन्त भेद हैं, परन्तु इसमें चार प्रधान हैं, कोष, निदान, निघण्टु और चिकित्सा, उस चिकित्सामें भी चार भेद हैं, दैवी, आसुरी, मानुषी और सिद्धि ॥

रसेन कथितो वैद्यो मानुषो मूलकादिभिः ॥
अधमः शस्त्रदाहाभ्यां सिद्धवैद्यस्तु मांत्रिकः ॥ १ ॥

अर्थ-रसोंके आश्रयसे जो वैद्य लोग चिकित्सा करते हैं, वह वैद्य हैं। जो काष्ठादिक औषधियोंसे उपाय करते हैं, वह मनुष्य चिकित्सक हैं। जो शस्त्रसे अथवा दाहसे प्रयत्न करते हैं, वह अधम भिषक् हैं। और जो यंत्र मंत्रसे उपचार करते हैं, वह सिद्ध अगदङ्कार कहलाते हैं। इन सब प्रमाणोंसे यह रसायनविद्या (रस बनानेकी विधि) सर्वोत्तम और तत्काल फल देने वाली है, इसीलिये इसका नाम दैवी चिकित्सा रक्खा है ॥

रसविद्या परा विद्या त्रैलोक्येऽपि च दुर्लभा ॥
भुक्तिमुक्तिकरी यस्मात् तस्माज्ज्ञेया गुणान्वितः ॥ १ ॥

अर्थ-रसविद्या अत्यन्त श्रेष्ठ है, और तीनों लोकोंमें भी दुर्लभ है, तथा भुक्ति (भोग) और मुक्ति (मोक्ष) पदार्थ की देने वाली है, इस कारण इस सर्व गुण युक्त रसविद्या को अवश्य सीखना चाहिये, क्योंकि आयुर्वेदमें रसायनविद्याही मुख्य है ॥

साध्येषु भेषजं सर्वमीरितं तत्त्ववेदिना ॥
असाध्येष्वपि दातव्यो रसोऽतः श्रेष्ठमुच्यते ॥ १ ॥

अर्थ—तत्त्वके जानने वाले वद्यों ने साध्य रोगों के लिये अनेक औषधि कहा हैं, परन्तु असाध्य रोगोंके लिये एक औषधि भी नहीं कही, वहां यही कहा (औषधं जाह्नवी तोयं वैद्यो नारायणो हरिः) परन्तु रस उन असाध्य रोगों में भी तत्काल फल देता है, इसकारण रस सम्पूर्ण औषाधियों से उत्तम है, क्योंकि यह रसायन विद्या शिवजीने बड़े उत्साहसे निर्माण की है ॥

कोई वैद्यवर प्रश्न करे कि रसायन विद्या शिव प्रणीत कैसे है ? सो उसका वृत्तान्त लिखते हैं—

महोदय ! जब ब्रह्मा ने सृष्टि रची और चार वेद अपने हृदय कमल से प्रगट किये, तो विचार किया कि इस संसारमें मनुष्य अनेक प्रकारके रोगों से महा दुःखी होंगे, उनका हाहाकार शब्द मुझसे न सुना जायगा यह समझकर ब्रह्माजीने चारों वेदों को मथनकर आयुर्वेद उत्पन्न किया, उस आयुर्वेदको जगत् हितकारी सर्व रुजहारी जान महा विद्वान् सकल गुण निधान दक्षप्रजापति को अष्टांग सहित आयुर्वेद पढ़ाया, इसके उपरान्त दक्षप्रजापति ने सूर्य्य के अंश, परम चतुर, देवताओं में श्रेष्ठ अश्विनीकुमारों को परमोदार समझकर आयुर्वेद का उपदेश किया, उन अश्विनीकुमारों ने सम्पूर्ण वैद्यों को विद्वान् बनानेके लिये अपनी रची हुई अश्विनीकुमारसंहिता का सब संसार में प्रचार किया ॥

जब अश्विनीकुमार की संसार में अधिक प्रतिष्ठा हुई और सब देव विचार करने लगे, तब अश्विनीकुमार की यह अद्भुत दशा देख, वीरभद्रके चित्तमें अत्यन्त उत्साह उत्पन्न हुआ कि किसी प्रकार आयुर्वेद पढ़ना चाहिये, जो संसार में मेरी भी प्रतिष्ठा और सत्कार इसी प्रकार हो, यह विचार शिवजीसे आज्ञा ले वीरभद्र ब्रह्मा जीके समीप गये, दण्डवत् प्रणाम करके बोले कि हे प्रजापते ! मेरी इच्छा आयुर्वेद के पठनकी है, अनुग्रह करके मुझको आयुर्वेदका उपदेश कीजिये, क्योंकि आजकल पृथ्वी पर प्राणियों को महाभयंकर रोगों ने ग्रस रक्खा है, उनके दूर करनेका कोई उत्तम उपाय बताइये ? ब्रह्मा ने कहा कि हे गणोत्तम ! यह आयुर्वेद विद्या सौम्य पुरुषोंके पढ़नेके लिये है, और आप चञ्चलबुद्धि हैं, आपसे इस विद्याका साधन न होगा, यह विद्या स्थिर बुद्धिवाले को पढ़ानी चाहिये, दूसरे यह विद्या मैं दक्ष को संकल्प कर चुका हूँ, इस लिये यह विद्या मैं तुमको नहीं पढ़ा सक्ता, ब्रह्माके रूक्ष वचन सुन वीरभद्र के चित्तमें अत्यन्त क्रोध बढ़ा, शरीर से अग्निकी लपटें निकलने लगीं, नेत्र लाल लाल होगये, तब महा कुपित होकर बोला कि अरे चतुरानन ! यह अच्छा नहीं किया जो मेरा निरादर किया, इस निरादरका फल तत्काल ले, यह कह उसी समय ब्रह्माका शिर त्रिशूलसे छेदन किया, फिर दक्षकी सभा में जा दक्ष और जितने दक्षके अध्यक्ष थे सबको विध्वंस कर अपना क्रोध शान्त किया, अश्विनीकुमारोंने

कामरत्नतंत्र–सिद्ध नित्यनाथकृत.
नागार्जुनीय–सिद्धनागार्जुनकृत.
पञ्चसायक–कविशेखर ज्योतिरीश्वरकृत.
रसराजशिरोमणि—परशुरामकृत.
रससङ्केतकलिका–चामुण्डकृत
कौतुकचिन्तामणि–प्रतापरुद्रदेवकृत
रसेन्द्रशूरप्रभाव–शूरसेनकृत.
आयुर्वेदरसायन–भोजराजकृत.
सन्निपातकलिका–शम्भुनाथकृत.
क्षेमकौतूहल–क्षेमराजकृत.
सन्निपातकलिका–रुद्रनाथकृत.
महारसांकुश–रसांकुशकृत.
रससारामृत–रामसेनकृत.
रसवारिधि–माण्डवकृत.
मण्डूकब्राह्मीकल्प–ब्रह्माचार्य्यकृत.
काकचण्डेश्वरीतंत्र–काकचण्डेश्वरकृत.
रसेन्द्रचिन्तामणि–ढुंढनाथकृत.
रससंजीविनी–हरीश्वरकृत
कामरत्नतंत्र—श्रीनाथभट्टकृत.
योगसुधानिधि–बन्दी मिश्रकृत.
रसकषायवैद्यक–वैद्यराजकृत.
रसराजशिरोमणि–रेवणकृत.
रसविद्यारत्न–शिवनन्दन गोस्वामीकृत.
गोरक्षसंहिता–गोरक्षनाथकृत.
आयुर्वेदरसशास्त्र–माधवकृत.
आयुर्वेदसर्वस्व–भोजराजकृत.
रसराजशंकर–शंकरजीकृत.
चिकित्सामृग–गणेशजीकृत.
रसचन्द्रोदय–चन्द्रसेनकृत.
रसराजमहोदधि–कपालीकृत.
रससर्वेश्वर–वासुदेवकृत.
रसेन्द्रभैरव–भैरवकृत.
मन्थानभैरव–भैरवकृत.
रसेन्द्रभास्कर–सिद्ध भास्करकृत.
रसेन्द्रभाण्डागार रसेन्द्रकृत.

जब ऐसे ऐसे उत्तम ग्रन्थ बड़े बड़े विद्वान् कवियोंने निर्माण किये तब सब जगत्‌में रसका प्रचार फैल गया और वैद्यलोग रसोंको मुख्य समझकर रसोंहीं से सब काम लेने लगे, सब रोगियोंकी और वैद्योंकी जिह्वा पर रसहीरस बस गया, यह चर्चा सहस्रों वर्ष तक रही; जब दैवयोगसे इस भारतवर्षके बुरे दिन आये, यवनोंने हिन्दोस्थान पर चढ़ाईकी उस समय पृथ्वीराजका राज्य था, कई बार तो पृथ्वीराजसे हार मान भाग भाग गये, निदान एकबार धोखा देकर पृथ्वीराजको पकड लिया और उसकी आँखोंमें विषकी सलाई फिरवाकर उसको अन्धा करदिया, तब पृथ्वीराजकी पराजय हुई और हिन्दोस्थान पर मुसलमानोंका डंका वजा, तब तो हमारी परमप्रिय, सिद्ध प्रयोजनीय आयुर्वेदीय चिकित्साओंकी और रसोंकी जैसी उन्नति हुई थी वैसेही अवनति हुई, जिन ग्रन्थोंको पण्डितोंने एक एक अक्षर करके बड़े परिश्रमसे लिखा था, उन ग्रन्थोंको यवनोंने छोर २ करके यमुनाके जलमें बहा दिया। उस समय जो औषधियाँ कण्ठाग्र थीं उनके बलसे वे रोगियोंका उपचार करते रहे, जब वे वैद्यलोग मृत्युको प्राप्त हुए तो उनके बाल बच्चे ठेठ मूर्ख रहगये, क्योंकि ग्रन्थ तो प्रथमही लुट लुटा गये थे लिखना पढना कैसे हो सक्ता ? इस कारण आयुर्वेदका विचार और प्रचार सम्पूर्ण छूट गया, जिनको किञ्चित्मात्र भी स्मरण था वह अपने आपको धन्वतरिकी समान मानने लगे और सब क्रिया कर्म त्याग अभिमानकी आगमें जलने लगे, यहां तक आलस्य ने घेरा कि रोगियोंके घरोंका फेरा करना भी छोडदिया रसोंके बनानेकी सम्पूर्ण विधि भूलगये, रसपारिजात, रसपद्मचन्द्रिका, रसभस्म विधि, रसराजहंस, रसरहस्य, रस-

सुधाकर, रससिद्धान्तसागर, तंत्रोद्धार, इन ग्रन्थोंका तो केवल नामहीनाम रहगया वैद्य लोगोंको यह भी ध्यान न रहा कि यह कैसे ग्रन्थ थे, इनमें कौन कौनसे रसग्रन्थ थे, इनमें कितने श्लोकोंकी संख्या थी और कौन कौन कवि उनके कर्त्ता थे, यह सब परिपाटीही हिन्दोस्थानसे उठ गई, जब वैद्योंहींने औषधि करनी छोड दी तो पंसारी विचारे क्यों न भूलते, सब जानते हैं कि मूलहीके अधीन पत्र और फल फूल हैं, जब वैद्योंका सूर्य्यास्त हुआ और मुसलमानोंकी मुस्तरी (बृहस्पति) चमकी, सब दिल्ली विद्याविहीन होगई, तब यूनानी हकीम हिकमत करने लगे, जहां तहां उनहींके शफाखाने खुल गये; बीमार लोग उन्हींमें आने जाने लगे, उन्हीं हकीमोंका आदर सत्कार होनेलगा, गावजबाँ, गुलेबनुफशः, रेशःखतमी, मगजकद्दू, उस्केकद्रस, शर्वतनीलोफर, शर्वतउन्नाव, शर्वतअंजबार, शर्वतवर्द, शर्वतवजूरी, शर्वतखसखस, अर्कवादियान, अर्कमकोह, अर्कगुलाव, अर्ककेवड़ा, माजून जवारिश जालीनूस, माजूनऊद, आदि तरहतरहकी माजूने बनाने लगे, शीशियोंमें कारूरे आने लगे, उन्हींको देख देखकर रोगोंकी परीक्षा करने लगे, बीमारोंको नुस्खे लिखने लगे, अत्तारोंसे चहारुम ठहराने लगे, अत्तारभी अर्कोंमें पानी और गुलकन्दमें गुड़ मिलाने लगे, हरेक तरह बीमारोंके लूटनेका ढंग लगा दिया, जो कोई इन हकीमोंको अपने घर बुलाता मानो अपनी जानको झाड़ू लगाता, जातेही चार रुपैये भेटके लेने, आठ आने पालकीके कहारोंको दिलवाने, चार आने नौकरके लिये बतलाने, कमसे कम चार छः आनेका नुस्खा, जब बीमार पर यह मार पड़ी तो चार दिनके जीने वालेको एक दिन भी दुशवार हो गया, इसी प्रकार जब उनका सब लूट लिया और वर्तन भांडे तक बिकवादिये तो भी उन निर्दई हकीमोंको दया न आती थी, तब ऐसा अन्याय करने लगे और अपने आपको सबसे बडा समझने लगे, जहाँ जायँ वहाँ चहार तुख्म, मगजबादाम, शर्वतउन्नाबहीकी प्रशंसा करैं, घर घर और दूकान दूकान यूनानीही दवाइयोंकी चर्चा थी, सबकी जबानसे तिमर हिन्दी और नीलोफरही निकलता था।

धन्य है उस जगदाधार निर्विकार परमात्माको, एक दिन तो वह था कि घर घर मिश्रानी ही वैद्यककी चर्चा थी, आज एक दिन वह है प्रत्येक मनुष्यके मुखसे स्वप्नमें भी अर्कगुलाब और गिलेअरमनीकी ही प्रशंसा सुननेमें आती है। देखिये थोड़े ही दिनोंमें क्यासे क्या होगया, हाय ! जहाँ रस और आसव बनते थे वहाँ अर्क और माजूमें बनने लगीं, जिन रोगियोंको वैद्य लोग दो रत्ती नाराच अथवा पांच विन्दु घृतविन्दुसे विरेचन कराते थे उसके बदलेमें चार तोले अमलतास, दो तोले तुरंजवीन, छः मासे सौंफ, छः मासे गुलसुर्ख, छः मासे गावजबाँ, छः मासे हड़की बकली, छः मासे निसोत, छः मासे सनाय, दश दाने आलूबुखारे, दश दाने मुनक्का, तीन तोले इमली, चार तोले गुलकन्द, दो तोले खभीरा वनुफशः, पाव भर अर्क बादियान, पाव भर अर्क मकोह, पाव भर गुलाब, जब यह तीन पाव घुला हुआ खदड़ा रोगीके मुखके सन्मुख आया, उसी समय रोगीके प्राण सूख गये, अमलतासकी वास, सनायकी कषाय, हड़की दुर्गन्ध आतेही कहने लगा कि हे परमेश्वर ! ऐसी औषधि पीनेसे तो हमारे प्राणहीं ले ले तो अच्छा है, जब उनके

विलाप भारतवासी वैद्योंकी सन्तानसे न सुनेगये तो सबने परस्पर मिलकर सम्मति की और देश देशान्तरोंमें जाकर बड़े परिश्रमसे अनुसरण कर कराके रसोंके ग्रन्थ लाये और फिर उन भिषक्पुत्रोंने अधिक परिश्रम करके वैद्यक विद्या पढ़ी और रसरूपी भण्डार खोल डाले और कहने लगे कि हमारी औषधियोंके सामने इन हकीमोंकी औषधि किञ्चित्मात्र भी फलदायक नहीं है, तो भी यह मिथ्याभिमानी हमारे सन्मुख हमारे आयुर्वेदकी निन्दा करते हैं, अब इनको नीचा दिखाना चाहिये, जो यह बारम्बार अहंकार न करैं, और हारमान अभिमान छोड़ दें, यह विचार उनमेंसे पांच चार वैद्यपुत्रोंने मिल औषधालय खोला और रोगियोंको रस देना आरम्भ किया, तब तो यूनानी और ईरानी जो बड़े बड़े अभिमानी और लासानी हकीम थे सब कहानी भूल गये, अत्तारोंसे चहारुमखानी और झूठी बातें बनानी तो सौ कोस गई उनको जान बचानी कठिन होगई और जो अत्तार पानीके दाम उठाते थे पैसेकी दवाके आठ आने बतलाते थे और तबीबोंके घर बैठे चहारुम हिस्सा पान छाली पहुंचाते थे वह मिसरानी वैद्योंके सामने सब गज्झे जाते रहे। यूनानी हकीमोंके अन्याय, रसोंके दर्शन करतेही जहां तहां गुप्त होगये, और घर घर रसोंकीही चर्चा होने लगी, जो वर्षोंके जीर्णज्वरवाले थे उनके ज्वर रसोंके खाते ही जाते रहे, मिसरानी वैद्योंके भाग्य खुले और उनका सुयश मार्त्तण्ड खण्ड खण्डमें प्रकाश करने लगा, जो अत्तार पानीके दाम उठाते थे उनकी तो नानी मरगई और सब घमण्ड खण्ड खण्ड होगया। जबसे इस देशमें परम सुखदानी विकटोरिया महारानीका राज्य हुआ तबसे गवर्नमेण्टकी ओरसे आयुर्वेदके पढ़ानेके लिये आयुर्वेदीय पाठशालायें बनाकर आयुर्वेद पढ़ाना आरम्भ कियागया, और देश देशान्तरोंसे औषधियोंकी लता, द्रुम, वेलि मँगामँगा कर औषधालयोंके निकट बाग लगादिये गये कि, विद्यार्थी लोग रातदिन देखा करें, उन्हीं बागोंमें रसभवन बनाये जिनमें अनेक प्रकारके यन्त्र और उनकी क्रियाके सिखाने वाले वैद्यलोग उनमें नौकर रखदिये, विद्यार्थियोंको इतना उपकार किया कि लेखनी बारम्बार विचार करती है कि क्या लिखूँ? निदान हारमान मनमारकर असमर्थ हो रहजाती है, जब आयुर्वेदीय रसोंके ग्रन्थ बहुत छपने लगे और वैद्यलोग अपने नामके नवीन ग्रन्थ भी निर्माण करने लगे, ऐसा श्रेष्ठ समय देख, वैश्यवंश उजागर, सवर्गुण आगर, गोब्राह्मणहितकारी, सत्यव्रतधारी, पूर्ण सुखरासी मुम्बई पत्तन निवासी-सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासने बड़े उत्साहके साथ रसाभिलाषी चातकोंकी तृषा बुझानेके लिये स्वातिवर्षारूपी रस ग्रन्थोंको सहस्रों रुपया व्ययकरके देश देशान्तरोंसे मँगाया और उन्हीं रसग्रन्थोंमें अपना तन मन धन समर्प्पण कर दिया, कि जिससे संसारमें सुन्दर रस बना रहै, और कवियोंसे उनके भाषा तिलक कराये कि, जिनसे जगत्का उपकार हो, फिर उनको अपने निज यंत्रालयमें छापकर प्रसिद्ध किया, उसी अवसरमें मेरे पास कृपापत्र भेजा कि रसरत्नाकरकी भाषाटीका लिखो कि, जिससे सर्वसाधारणका उपकार हो, और रोगीजनोंको उपयोगी हो, भाषा ऐसी सरल और मनोहर हो जो प्रत्येक

मनुष्यके मनको मोहित कर ले, सेठजीका कृपापत्र देख मेरे चित्तमें बडा उत्साह बढ़ा, और उनकी आज्ञानुसार रसरत्नाकरका अनुवाद करना आरम्भ किया, जब परमेश्वरकी कृपासे यह टीका पूर्ण हुई तो उसका नाम (रसप्रदीपिका) रक्खा और वैद्यजनोंके उपकारार्थ इस ग्रन्थको श्रीमान् सर्व गुण निधान वैश्यवंशावतंस पूर्णयशोगार परमोदार, कविजन हितकारी, सर्व विद्या विहारी, मुम्बई पत्तन निवासी-हरि पद विश्वासी, श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीको पूर्णगुणग्राम सर्व, सुलक्षणधाम जानकर मैंने यह (रसरत्नाकर) (रस प्रदीपिका) टीका सहित समर्पण किया, उनको कोटि कोटि धन्यवाद है कि जिन्होंने अपना धनव्यय करके मेरे रचे हुए अनेक ग्रन्थ और यह 'रसरत्नाकर'सटीक अपने जगत्प्रसिद्ध "श्रीवेंकटेश्वर" यंत्रालयमें मुद्रित करके मुझको कृतार्थ किया, सब सज्जनोंसे मेरी यह प्रार्थना है कि इस रसरत्नाकरके "रसप्रदीपिका" तिलकको देखकर मेरा परिश्रम सफल करें, और जहाँ कहीं अशुद्धि देखें तो क्षमा करें, और मुझपर कृपादृष्टि करके सूचित करें जिससे द्वितीयावृत्तिमें शुद्ध कर दिया जाय, मैं अपनी रचित संकलित और अनुवादित पुस्तकोंका भी सूचीपत्र विद्यानुरागियोंके निमित्त लिखे देता हू कि, स्मरण रहे ।

शालिग्रामनिघण्टुभूषण ।

भाषाटीका सहित, वैद्यगण ! इसमें प्रत्येक औषधिके संस्कृत अनेक नाम, फिर हिन्दी, बँगला, मराठी, गुजराती, तैलंगी, कर्णाटकी, तामिली, औत्कली, द्राविड़ी, ब्राह्मी, लुसाई, दक्षिणी, सिन्धी, अंग्रेजी, लैटिन, फारसी, अरबी, पञ्जाबी, तुर्की और यूनानी इत्यादि और भी भाषा लिखी हैं, उसके पश्चात् अनेक मतान्तरोंसे गुणागुण लक्षण, आकृति, उत्पत्ति और विवर्णादि लिखा है, इस प्रकार इसके पच्चीस २५ वर्ग हैं. कर्पूरादि वर्ग इस ग्रन्थमें प्रथम लिखा है, इस कारण इस ग्रन्थका नाम कर्पूरादि निघण्टु भी है, अन्तमें परिशिष्टभाग भी लिखा है, उसमें अनेक यूनानी और अंग्रेजी औषधियें पूर्वोक्त रीतिसे लिखी हैं, आर औषधियोंके चित्रभी दिये हैं, हमको पूर्णविश्वास ह कि जो विषय इस ग्रन्थमें हैं वह और ग्रन्थोंमें न होंगे, और अन्य ग्रन्थोंके सम्पूर्ण विषय इसमें विद्यमान हैं, यह ग्रन्थ१४००पृष्ठमें पूर्ण हुआ है, इस ग्रन्थके बनानेमें अनेक निघण्टु, कोष और संहितादि पुस्तकोंसे सहायता लीगई है, प्रमाणके लिये श्लोकके अन्तमें ग्रन्थका नाम भी लिख दिया है मूल्य ८) रुपये हैं ॥

शालिग्रामौषधिशब्दसागर ।

भाषाटीका सहित, इसमें अकारादि क्रमसे वैद्यकके सम्पूर्ण शब्द संस्कृतमें लिखे हैं, फिर उनकी व्याख्या और हिन्दी भाषामें उनका अर्थ भी लिखा है, ऐसा उत्तम कोष आजतक दूसरा कहीं नहीं छपा मूल्य २) रुपये हैं ।

राजवल्लभनिघण्टु ।

भाषाटीका सहित, यह ग्रन्थ अति प्राचीन है, इसमें छः परिच्छेद हैं । पहिलेमें प्रभातकालके, दूसरेमें दुपहरसे पहिलेके, तीसरेमें दुपहरके, चौथेमें तीसरे पहरके, पांचवेंमें रात्रिमें होनेवाले कार्य और छठेमें सम्पूर्ण औषधियोंके गुण लिखे हैं, यह ग्रन्थ भी आज कल अपने रंग ढंगका निराला है और बहुतसी आयुर्वेदीय पाठशालाओंमें पढाया जाता ह । मूल्य १।।) रुपया है ।

अर्कप्रकाश।

भाषाटीकासहित (श्रीमन्महाराजाधिराज लंकेश्वर रावणाचार्य्य प्रणीत) इस ग्रन्थमें महात्मा रावणाचार्य्यने सब प्रकारकी औषधियोंके अर्क निकालनेकी विधि और सम्पूर्ण रोगोंमें केवल अर्कही प्रधान समझ कर उसहीसे चिकित्सा करना लिखा है। मूल्य १) रुपैया है।

वोपदेवशतक—वैद्यक।

भाषानुवादसहित, इस ग्रन्थमें अनेक बार परीक्षित चूर्ण, गुटिका, अवलेह, तेल, घृत और क्काथ, उत्तम ललित सौ १०० श्लोकोंमें भिषक्शिरोमणि वोपदेवने निर्माण किये हैं। मूल्य।=) आने हैं।

द्रव्यगुणशतक।

भाषाटीका सहित, इस छोटेसे निघण्टुमें श्रीमान् पण्डित त्रिमल्लभट्टने सम्पूर्ण औषधियोंके गुण १०० केवल सौही मनोहर श्लोकोंमें वर्णन किये हैं, जो काम चार रुपयेकी पुस्तक देती है वह काम यह चार आनेकी पुस्तक देती है। मूल्य।) आने हैं।

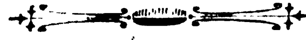
वंगसेन।

भिषग्वर्य्य गदाधरतनय वंगसेन विरचित।

यह ग्रन्थ निखिल वैद्यक ग्रन्थोंका मुकुटमणि और वैद्योंका सिद्धमन्त्र है। और यही एक वैद्यकका ग्रन्थ है कि जिसके संग्रह तथा विचार करनेसे फिर दूसरे ग्रन्थोंके लिये नहीं दौडना पडता, इसमें निदान, चिकित्सा आदि विषय बडी उत्तमता सरलता तथा विस्तरतासे वर्णित हैं। और अनेकानेक क्या प्रायः सभी रोगोंके लक्षण लिख साथही चिकित्सा भी लिख दी गई है। कहांतक कहें नानाप्रकारके घृत, तैल, मोदक वटी, चूर्ण, नस्य, आसव, क्काथ, अवलेह, धूप, रसायन आदि औषधोंके उत्तम उत्तम प्रकार वर्णित हैं जिनसे कि अनेक रोग अच्छे होते हैं और रोगियोंकी सुसाध्यता, कष्ट साध्यता, असाध्यता आदिका लक्षणोंसे भली भांति निरूपण है, खूबी यह कि जो कार्य अन्य ग्रन्थोंसे बहुत क्लिष्टतासे भी नहीं साध्य है वह इससे बहुतही सुगमतासे वैद्य कर सकते हैं और जिन रोगोंका निदान तथा चिकित्सा किसी ग्रन्थमें नहीं मिलती उसकी इसमें उत्तमता तथा विस्तारपूर्वक मिलती है और इसके सब विषय आर्षग्रन्थोंके आधारसे हैं। इसका भाषानुवाद भी मूलके अनुरूपही है, जैसा सरल मूलानुसार होना चाहिये उसमें कसर नहीं। इस ग्रन्थका वाह्यांग भी ऐसा सजाया गया है कि, चार रंगोंमें खूब-सूरत विलायती बार्डरसे टैटल बना है, टीकाकारका दर्शनीय चित्र भी साथ है। तथा विलायती मुलायम कपडेका बाँयडिंग भी देखने योग्य है और सोनेके अक्षरोंसे इसकी द्विगुणित शोभा होगई है। इस सर्वांगसुन्दर ग्रन्थको अवश्य संग्रह करनेकी शिफारस न करके सबके लाभके लिये सूचना की जाती है। इसके सिर्फ देखनेसेही चित्त प्रसन्न होगा तिसपर भी मूल्य बहुत कम रक्खा है ८) रु०

॥ श्रीः ॥

अथ रसरत्नाकरविषयाऽनुक्रमणिका।



इति वातरोगाध्यायः समाप्तः।

इति वातरक्ताधिकारः समाप्तः।

इति वाजीकरणाधिकारः समाप्तः ।

इति श्रीरसरत्नाकरविषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

॥ श्रीः ॥

अथ रसरत्नाकर ।

भाषाटीकासमेत ।

॥ श्रीत्रैलोक्यपतये नमः ॥

स्वर्गापवर्गविस्फारौभुवनस्योदयेयथा ।
भवरोगहरौवन्देचण्डिकाचन्द्रशेखरौ ॥ १ ॥

टीकामंगलाचरण—

विश्वेशंसज्जनानन्दंपार्वतीवल्लभंशिवम् ।
भूतिभूषितसर्वांगंदेवदेवंजगत्पतिम् ॥ १ ॥
रसग्रन्थप्रवक्तारंलोकानांहितकाम्यया ।
वन्देहंदेवदेवेशंभक्तानामभयप्रदम् ॥ २ ॥
शालग्रामेणवैश्येनलोकोपकृतयेखलु ।
रसरत्नाकरस्येयंभाषाटीकाविरच्यते ॥ ३ ॥
नानाग्रन्थान्समालोच्यनित्यनाथेनधीमता ।
रसरत्नाकरोग्रन्थोरचितोलोकहेतवे ॥ ४ ॥
अस्मिन्महारसाःप्रोक्तास्तत्कालगुणदायकाः ।
अज्ञानांखलुदुर्बोधाविदुषांचसुखावहाः ॥ ५ ॥
सर्वेषा[illegible]पकारायभिषजांतुविशेषतः ।
मर्त्यानांव्याधिनाशायकुर्वेव्य[illegible]रमाम् ॥ ६ ॥

अर्थ—स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के देनेवाले, संसारकी उत्पत्तिमें भवरोगके नाशक, ऐसे चण्डिका (पार्वती) और चन्द्रशेखरको मैं ग्रन्थकार नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥

रससाधनोपायः।

रसोपरसलोहानांतैलमूलफलैःसह।
असाध्यंप्रत्ययोपेतंकथ्यतेरससाधनम् ॥ २ ॥
वैद्यानांयशसेऽर्थायव्याधितानांहितायच।
वादिनांकौतुकार्थायवृद्धानांदेहसिद्धये ॥ ३ ॥
मन्त्रिणांमंत्रसिद्धयर्थंविविधाश्चर्यकारणम्।
पंचखण्डमिदंशास्त्रंसाधकानांहितंप्रियम् ॥ ४ ॥
रसखण्डेतुवैद्यानांव्याधितानांरसेन्द्रके।
वादिनांवादखण्डेचवृद्धानाञ्चरसायने ॥ ५ ॥
मंत्रिणांमंत्रखण्डेचरससिद्धिःप्रजायते।
सुतरांनास्तिसंदेहस्तत्तत्खण्डविलोकिनाम् ॥ ६ ॥

अर्थ—तेल, मूल और फलोंके साथ रस, उपरस लोहादिकका जो असाध्य रूप रस साधनहै उसको विश्वासयुक्त कहताहूं ॥ २ ॥ वैद्योंके यश और अर्थ के निमित्त, रोगियोंके हितके लिये, वादी मनुष्योंके कौतुकके लिये, वृद्धपुरुषोंके देहकी सिद्धिके लिये ॥ ३ ॥ और मंत्रियोंके मंत्रसिद्धिके लिये अनेक-प्रकारके आश्चर्योंका हेतु और साधकोंको हितकारक तथा प्रिय ऐसा पाँच खंड संयुक्त यह "रसरत्नाकर" है सो जानना ॥ ४ ॥ तहाँ रसखण्डमें वैद्यों-को, रसेन्द्रखण्डमें रोगियोंको, वादखण्डमें वादियोंको, रसायनखण्डमें वृद्धोंको और मंत्रखण्डमें मंत्रिजनोंको रससिद्धि प्राप्त होगी; इस प्रकार जानकर इन पाँच खण्डोंके देखनेवालोंको निःसन्देह रससिद्धि प्राप्तहो-जायगी ॥ ५ ॥ ६ ॥

हतादिपारदगुणाः।

हतोहन्तिजरामृत्यूमूर्छितोव्याधिघातकः।
धत्तेचखेगतिंबद्धःकोन्यःसूतात्कृपाकरः ॥ ७ ॥
जर [illegible] दारिद्र्यरोगनाशकरो [illegible] तः।
मूर्छि[illegible]धीन्नसोदेहेचरन्नपि ॥ ८ ॥

मोहयेद्यः परान्बद्धो जीवयेच्च मृतः परान् ॥
मूर्च्छितो बोधयेदन्यांस्तं सूतं को न सेवते ॥ ९ ॥
आयुर्द्रविणमारोग्यं वह्निर्मेधा महद्बलम् ।
रूपयौवनलावण्यं रसोपासनया भवेत् ॥ १० ॥
मारयेज्जारितं सूतं गंधकेनैव मूर्च्छयेत् ।
बद्धः स्याद्द्रुतिसत्त्वाभ्यां रसस्यैवं त्रिधा गतिः ॥ ११ ॥
दोषहीनो रसो ब्रह्मा मूर्छितस्तु जनार्दनः ।
मारितो रुद्ररूपः स्याद्बद्धः साक्षान्महेश्वरः ॥ १२ ॥
वेधको देहलोहाभ्यां सूतो देवि ! सदाशिवः ।
दर्शनाद्रसराजस्य ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ १३ ॥
स्पर्शनान्नाशयेद्देवि ! गोहत्यां नात्र संशयः ।
किं पुनर्भक्षणाद्देवि ! प्राप्यते परमं पदम् ॥ १४ ॥
अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ॥
क्षिप्रमारोग्यदायित्वाद्भेषजेभ्यो रसोऽधिकः ॥ १५ ॥

अर्थ-माराहुआ पारा अर्थात् पारेकी भस्म-जरा (बुढापा) और मृत्यु-नाशकहै। मूर्छित पारा व्याधिनाशकहै। और बद्धपारा आकाशमें गमन करनेकी शक्तिको देवै है, ऐसे जान पारेसे अधिक कृपाकरनेवाला और कौनहै ? ॥ ७ ॥ शरीरमें विचरतीहुई पारेकी भस्म जरा, मरण, दरिद्रता और रोगनाश करैहै। तथा मूर्छित पाराभी रोगोंके समूहको नाश करैहै ॥ ८ ॥ जो पारा बद्ध होनेपर मोहको उत्पन्नकरै, भस्म होनेपर प्राणोंकी रक्षाकरै, और मूर्छित होनेपर बोधको उत्पन्न करै; ऐसे पारेकी कौन सेवा नहीं करै ? अर्थात् सब मनुष्योंके सेवने योग्य है ॥ ९ ॥ पारेकी उपासना करनेसे आयु, धन, आरोग्यता, जठराग्नि, मेधा, अत्यन्त बल, रूप, यौवन और लावण्यता उत्पन्न होतीहै ॥ १० ॥ जारित पारेको गंधकके द्वारा मारित, मूर्छित, द्रावण और वीर्ययुक्त, बद्ध-करना चाहिये, पारेकी यह तीन गति जाननी ॥ ११ ॥ दोषहीन अर्थात् शुद्ध पारा साक्षात् ब्रह्मा है, मूर्छित पारा जनार्दन (विष्णु) है, मारित पारा रुद्ररूप है और बद्धपारा सक्षात् महेश्वर (शंकर) जानना ॥ १२ ॥ महादेवजी

कहते हुए की हे देवि ! देह और लोहवेधी पारा सबकालमें शिवरूपहै । और इस पारेके दर्शनकरनेसे ब्रह्महत्या दूरहोतीहै ॥ १३ ॥ तथा हे देवि ! इसके स्पर्श करनेसे गोहत्याका पाप दूर होजाताहै इसमें संशय नहींहै । और इसके भक्षण करनेसे हे देवि ! परमपद अर्थात् मोक्ष प्राप्त होताहै ॥ १४ ॥ और अल्प मात्राका उपयोगी होनेसे तथा रुचिके अनुसार देनेसे और शीघ्र आरोग्यता देनेसे पारेको और औषधियोंकी अपेक्षा अधिक गुणवाला कहाहै १५॥

यदुक्तंशम्भुनापूर्वंरसखण्डेरसार्णवे ।
रसस्यवन्दनार्थेचदीपिकारसमंगले ॥ १६ ॥
व्याधितानांहितार्थायप्रोक्तंनागार्जुनेनयत् ।
उक्तंचर्पटिसिद्धेनस्वर्गवैद्यकपालिके ॥ १७ ॥
अनेकरसशास्त्रेषुसंहितास्वागमेषुच ।
यदुक्तंवाग्भटेतन्त्रेसुश्रुतेवैद्यसागरे ॥ १८ ॥
अन्यैश्चबहुभिःसिद्धैर्यदुक्तञ्चविलोक्यतत् ।
तत्रयद्यदसाध्यंस्याद्यद्यद्दुर्लभमौषधम् ॥ १९ ॥
तत्तत्सर्वंपरित्यज्यसारभूतंसमुद्धृतम् ।
क्वचिच्छास्त्रेक्रियानास्तिक्रमसंख्यानचक्वचित् ॥ २० ॥
मात्रायुक्तिःक्वचिन्नास्तिसम्प्रदायोनचक्वचित् ।
तेनसिद्धिर्नतत्रास्तिरसेवाथरसायने ॥ २१ ॥
वैद्येवादेप्रयोगेचतस्माद्यत्नोमयाकृतः ।
यद्यद्गुरुमुखाज्ज्ञातंस्वानुभूतंचयन्मया ॥
तत्तल्लोकहितार्थायप्रकटीक्रियतेऽधुना ॥ २२ ॥

अर्थ—पूर्वकालमें महादेवने रसार्णवग्रन्थके रसखण्डमें जो तथा रसमंगल ग्रंथमें रसकी वन्दनाके अर्थमें जो दीपिका कहीहै ॥ १६ ॥ रोगियोंके हितके लिये नागार्जुनमुनिने जो कहा है, स्वर्गवैद्य कपालिक ग्रंथमें चर्पट सिद्धने जो कहाहै ॥१७॥ तथा अनेक रसशास्त्र, संहिता, आगम, वाग्भट, तन्त्र, सुश्रुत और वैद्यसागर ग्रंथमें जो कहा है ॥ १८ ॥ तथा अन्यान्य अनेक सिद्धोंने जो विषय कहा गया है उन सबको मैं देखकर उनमें जो असाध्य

और दुर्लभ औषधि हैं ॥१९॥ उन सबको त्यागकर सारभूत विषय इस ग्रंथमें समुद्धृत करताहूं। किसी शास्त्रमें क्रिया नहीं है, किसी शास्त्रमें क्रमसंख्या नहीं ॥२०॥ किसी शास्त्रमें मात्रायुक्ति नहीं और किसी शास्त्रमें सम्प्रदाय नहीं है इस कारण उन शास्त्रोंके द्वारा कुछभी सिद्ध नहीं होता है इससे मैंने रस, रसायन, वैद्यवाद और प्रयोग विषयमें यत्न किया है। मैंने जो २ विषय गुरुके मुखसे श्रवण और अपने ज्ञानसे अनुभव किये हैं, वह सब विषय मुझ करके लोकके हितके लिये इस ग्रन्थमें प्रकट किये जाते हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥

श्रीमान्सूतनृपोददातिविलसल्लक्ष्मींवपुःशाश्वतं
स्वानांप्रीतिकरीमचंचलमनोमातेवपुंसांयथा ।
अन्योनास्तिशरीरनाशकगदप्रध्वंसकारीततः
कार्यंनित्यमहोत्सवैःप्रथमतःसूताद्वपुःसाधनम् ॥ २३ ॥
साक्षादक्षयदायकोभुविनृणांपंचत्वमुच्चैःकुतो
मूर्च्छांमूर्च्छितविग्रहोगदभृतांहन्त्युच्चकैःप्राणिनाम् ।
बद्धंप्राप्यसुरासुरेन्द्रचरितं तां तांगतिंप्रापयेत्
सोऽयंपातुपरोपकारचतुरःश्रीसूतराजोजगत् ॥ २४ ॥

अर्थ–पारा माताकी समान प्रीति करनेवाला तथा लक्ष्मी, सुन्दर शरीर और अचल मनको देने वाला है। पारेकी समान शरीरनाशकरोगको हरनेवाली और कोईभी औषधि नहीं है, इस कारण नित्यप्रति महोत्सवसंयुक्त मनुष्योंको पारेका सेवन कर शरीरका साधन करना चाहिये ॥ २३ ॥ यह पृथिवीमें मनुष्योंको शाक्षात् अक्षयदायक और पंचत्वनाशक है। मूर्छित पारा प्राणियोंकी मूर्छाको हरनेवाला है। बद्धपारा सुर और असुरेन्द्रचरित गति देवै है। सो इस पारेकी समान परोपकारी जगमें और कौन है ? ॥ २४ ॥

योगमुक्तावल्यामिमौ ।

यदन्यत्रतदत्रास्तियदत्रास्तिनतत्क्वचित् ।
रसरत्नाकरःसोऽयं नित्यनाथेननिर्मितः ॥ २५ ॥
ततःकुर्यात्प्रयत्नेनरससंस्कारमुत्तमम् ।

अविज्ञात्वाच शास्त्रार्थंप्रयोगकुशलोभिषक् ।
यमएवसविज्ञेयोमर्त्यानांमृत्युरूपधृक् ॥ २६ ॥

अर्थ–ऐसा योगमुक्तावली ग्रन्थमें कहा है कि, नित्यनाथकृत इस रसरत्नाकर ग्रन्थमें अन्यान्य ग्रन्थोंके सर्व विषय हैं किन्तु इसमें जो विषय है वह विषय अन्य किसी ग्रन्थमें नहीं है ॥ २५ ॥ अतएव इसके द्वारा यत्नके साथ उत्तम प्रकारसे रससंस्कार करना जो मनुष्य शास्त्रार्थ नहीं जानते और रसका प्रयोग करते हैं उनको मृत्युरूपधारी यम समान जानना ॥ २६ ॥

दीपिका ।

नागोवङ्गोमलोवह्निश्चांचल्यश्चविषंगिरिः ।
असह्याग्निर्महादोषानिषिद्धाःपारदेस्थिताः ॥ २७ ॥
जाड्यंगण्डस्तनौनागात्कुष्ठंवंगाद्रुजामलात् ।
वह्नेर्दाहोबीजनाशश्चांचल्यान्मरणंविषात् ॥ २८ ॥
गिरिस्फोटोह्यसह्याग्नेर्दोषान्मोहोपजायते ।
दोषहीनोयदासूतस्तदामृत्युजरापहः ॥ २९ ॥
साक्षादमृतमप्येषदोषयुक्तोरसोविषम् ।
तस्माद्दोषविशुद्ध्यर्थंरसशुद्धिर्विधीयते ॥ ३० ॥

अर्थ–नाग, वंग, मल, अग्नि, चांचल्य, विष, गिरि और असह्याग्नि यह निषिद्ध महादोष पारेमें रहतेहैं ॥ २७ ॥ तहाँ नागदोषसे शरीरकी जड़ता, वंगदोषसे कुष्ठरोग, मलदोषसे अनेक प्रकारके रोग, अग्निके दोषसे दाह, चांचल्यदोषसे वीर्यका नाश, विषदोषसे मरण ॥ २८ ॥ गिरिदोषसे स्फोटक और असह्याग्नि दोषसे मोह उत्पन्न होता है । दोषहीन पारा मृत्यु और जरानाशक है ॥ २९ ॥ शाक्षात् अमृतसमान भी पारा दोषयुक्त होनेपर विषकी समान होता है; इस कारण दोषोंको दूर करनेकेलिये रसशुद्धि कहीजाती है ॥ ३० ॥

रसोग्राह्यः सुनक्षत्रेपलानांशतमात्रकम् ।
पंचाशत्पंचविंशद्वाद्वादशंचैकमेववा ॥ ३१ ॥

पलादूनंनकर्त्तव्यंरससंस्कार॰ त्तमम् ।
अघोरेणचमंत्रेणंससंस्कारंसपूजनम् ॥ ३२ ॥
ओंअघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः ।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्योनमस्तेरुद्ररूपेभ्यः ॥ ३३ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे रसपीठिकानाम प्रथमोपदेशः ॥ १ ॥

अर्थ–शुभनक्षत्रमें १०० सौ, ५० पचास, २५ पच्चीस, १२ बारह अथवा १ एकपल प्रमाण पारा लेवै, किन्तु एकपलसे कम कभी नहीं लेवै, क्योंकि, १ एकपलसे न्यून पारा उत्तम प्रकारसे शुद्ध नहीं होसक्ताहै। रस संस्कारके समय अघोर मंत्रसे पारेकी पूजाकरै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ (ओं अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्र रूपेभ्यः) ॥ ३३ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतायां रसपीठिकानाम प्रथमोपदेशः समाप्तः ॥ १ ॥

निःसारंवीक्ष्यविश्वंगदविकलवपुर्व्याप्तमेवातितप्तं
भूयःकारुण्यसिन्धोःसकलगुणनिधेःसूतराजस्ययुक्तिम्।
दृष्ट्वासूतस्यशास्त्राण्यवहितमनसाप्राणिनामिष्टसिद्ध्यै
शृण्वन्तूच्चैर्मयोक्तंसुविपुलमतयोभोगिकेन्द्रानरेन्द्राः १॥

अर्थ–संसारके प्राणियोंको रोगोंसे विकलशरीर, निःसार और अत्यन्त संतप्त देखकर करुणानिधान सकलगुणोंकी खान सूतराज अर्थात् पारेकी युक्ति कहताहूँ। पारदके शास्त्रको अवलोकन कर प्राणियोंकी इष्टसिद्धिके लिये हे नरेन्द्रो! मेरे कहेहुएको ऊँचेसे सुनो ॥ १ ॥

योगर॰त्नावल्याम् ।

यावत्सूतंनशुद्धंनच॰ तमथनोमू[illegible]बंधं
नोवज्रंमारितंवानचगगनवधं नोपसूताश्चशुद्धाः ।
[illegible]सर्वलोहंविषमपिनमृतंतैलपातोनयावत्
तावद्वैद्यःकासि[illegible]भवतिवसु॰ जामंडलेस्मि ध्ययाग्यः २ ॥

अर्थ–जबतक पारेको शुद्ध, मूर्च्छित और बद्ध नहीं करसकै तथा जबतक हीरेको मार न सकै, तैसेही जबतक अभ्रकको नहीं मारसकै, तथा जबतक उपरसोंको शुद्ध नहीं करसकै, तथा जबतक स्वर्णादि सब लोहोंको और विषको न मारसकै तथा जबतक तैलपात नहीं करसकै तबतक वैद्य सिद्ध और राजमंडलमें प्रशंसाके योग्य नहीं होताहै ॥ २ ॥

पारददोषनिवारणम् ।

अथातःसंप्रवक्ष्यामिदोषाष्टकनिवारणम् ।
इष्टकारजनीचूर्णैःषोडशांशैरसस्यतु ॥ ३ ॥
मर्दयेत्तप्तखल्वेतंजम्बीरोत्थद्रवैर्दिनम् ।
खल्वंलोहमयंवाथपाषाणाश्ममथापिवा ॥ ४ ॥
कांजिकैःक्षालयेत्सूतंनागदोषस्यशान्तये ।
विशालांकोलचूर्णेनवंगदोषंविनाशयेत् ॥ ५ ॥
राजवृक्षोमलंहन्तिचित्रकंहन्तिदूषणम् ।
चांचल्यंकृष्णधत्तूरैस्त्रैफलैर्विषनाशनम् ॥ ६ ॥
कटुत्रयंगिरिंहन्तिअसह्याग्निंत्रिकंटकैः ।
प्रतिदोषंकलांशेनतत्रचूर्णंसकन्यकम् ॥ ७ ॥
सुवस्त्रगालितंसूतंखल्वेक्षिप्त्वायथाक्रमम् ।
प्रत्येकंप्रत्यहंयत्नात्सप्तरात्रंविमर्दयेत् ॥ ८ ॥
उद्धृत्योष्णारनालेनमृद्भाण्डेक्षालयेत्सुधीः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तःसप्तकंचुकवर्जितः ॥ ९ ॥
जायतेशुद्धसूतोऽयंयुज्यतेवैद्यकर्मणि ।
अजाशकृत्तुषाग्निंचक्षालयित्वाभुविक्षिपेत् ॥
तस्योपरिस्थितंखल्वंपूर्वोक्तंमर्दयेद्रसम् ॥ १० ॥

अर्थ–अब पारेके आठ दोषोंका निवारण कहते हैं। पारेसे सोलमा भाग ईंट और हलदीका चूरन मिलाकर ॥ ३ ॥ लोहके अथवा पाषाणके तप्त खरलमें एक दिन जम्भीरी नींबूके रसके द्वारा मर्दन करै ॥ ४ ॥ फिर कांजीसे

धोलेवै पारेका नागदोष दूर होजायगा तथा पारेका वंगदोष इन्द्रायन और अंकोलके द्वारा ॥ ५ ॥ मलदोष अमलतासके द्वारा अग्निदोष लालचीतेके द्वारा, चांचल्यदोष कालेधतूरेके द्वारा, विषदोष त्रिफलेके द्वारा ॥ ६ ॥ गिरिदोष त्रिकुटेके द्वारा और असह्याग्निदोष गोखुरोंके द्वारा दूर होताहै। प्रतिदोष दूर करनेके लिये पारेका सोलहमा भाग पूर्वोक्त चूर्ण गेरै और घीका-रके रसमें घोटे फिर वस्त्रमें छान लेवै, फिर खरलमें डाल रोज रोज खरल करै, इस प्रकार प्रति दोष दूर करनेके लिये एक एक चूर्णके साथ पारेको सात सात दिन मर्द्दन करना चाहिये और मर्दनके बाद मट्टीके बासनमें गरम कांजीसे धोवै, इस प्रकार करनेसे पारा सर्व दोषोंसे मुक्त, सप्तकंचुकीरहित और शुद्ध होजाता है। यह पारा सर्वकार्यमें योजना चाहिये। (तप्तखरल)। बकरीकी विष्ठा और भूसी इनकी आग बनाके धरतीमें गड्ढा खोदकर उस आगको गड्ढेमें धर देवै उसके ऊपर खरल धर देवै, उसको तप्त खरल कहते हैं उसमें पारेको मर्द्दन करना चाहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

अथान्यमतम्।

श्रीखंडंदेवदारुंचकाकतुंडीजयाद्रवैः।
कर्कोटीमूषलीकन्याद्रवंदत्त्वाविमर्दयेत्।
दिनैकंपातनायंत्रेशुद्धंचविनियोजयेत् ॥ ११ ॥

अर्थ—और किसीके मतसे—सफेदचन्दन, देवदारु, कौआठोडी, जैंती, ककोडा, मुसली और घीकुवार इन प्रत्येकके रसमें एक दिन मर्द्दनकर फिर पातनायंत्रमें पातन करै तो पारा शुद्ध होजाता है ॥ ११ ॥

अन्यशास्त्रमतम्।

कुमार्याश्चनिशाचूर्णैर्दिनंसूतंविमर्दयेत्।
पातयेत्पातनायंत्रेसम्यक्शुद्धोभवेद्रसः ॥ १२ ॥

अर्थ—घीकुवारका रस और हलदीके चूर्णके साथ पारेको एकदिन मर्द्दन कर फिर पातना यंत्रमें पातन करै पारा शुद्ध होजाता है ॥ १२ ॥

अथ हिंगुलोत्थो यथा।

पारिभद्ररसैःपेष्यंहिंगुलंयामभमात्रकम्।
जम्बीराणांद्रवैर्वापिपात्यंप तालयंत्रके ॥ १३ ॥

तंसूतंयोजयेद्योगेसप्तकंचुकवर्जितम्।
इत्येवंशुद्धयःख्यातायथेष्टैकांप्रकारयेत्॥ १४॥

अर्थ—पारिभद्र (फरहद) के रसमें अथवा जम्बीरी नींबूके रसमें एक प्रहर सिंगरफको खरलकर फिर पातालयंत्रके द्वारा पातन करनेसे पारा शुद्ध निकलता है सप्तकांचलियोंसे रहित ऐसे पारेका सर्व कर्मोंमें प्रयोग करना चाहिये, इस प्रकार यह पारेकी शुद्धि कही। जौनसी अच्छी लगे वही करनी चाहिये॥ १३॥ १४॥

अथ मूलिकाः।

अथैता मूलिकावक्ष्येशुद्धसूतस्यमारणे।
ब्रह्मदण्डीमेघनादाचित्रकंतृणमुस्तिका॥ १५॥
वज्रवल्लीबलाशुण्ठीकटुतुम्ब्यर्द्धचन्द्रिका।
विषमुष्ट्यर्कलाक्षाश्वगोक्षुरःकाकतुण्डिका॥ १६॥
कन्याचंडालिनीकन्दंसर्पाक्षीशरपुंखिका।
वस्तारक्ताग्रनिर्गुण्डीलज्जालीदेवदालिकाः॥ १७॥
जातीजयन्तीवाराहीभूकदम्बंकुरण्टकम्।
कोषातकीनीरकणालांगलीसहदेविकाः॥ १८॥
चक्रमर्दोऽमृताकन्दंकाकमाचीरविप्रिया।
विष्णुक्रान्ताहस्तिशुण्ठीस्नुक्पयोभृंगराट्पटुः॥ १९॥
इत्येतामूलिकाःख्यातायोज्याःपारदमारिकाः।
एताःसमस्ताव्यस्तावादेयाह्यष्टादशाधिकाः॥ २०॥

अर्थ—अथानन्तर शुद्ध पारेको मारने के लिये मूलिका कहतेहैं—ब्रह्मदण्डी, चौलाई, चीता, मोथा, ॥ १५ ॥ वज्रवल्ली, खिरैटी, सोंठ, कडवीतोंबी, काला निसोत, कुचला, आक, लाख,गोखरू, कौआठोडी ॥ १६ ॥ घीकुवार, चण्डालकन्द, सर्पाक्षी, शरफोंका, बकरियावेल, रक्ताग्र, सम्हालु, लज्जावंती, देवदाली ॥ १७ ॥ जाई, जयन्ती, वाराहीकन्द, भूमिकदम्ब, नीली कटसरैया, कडवीतोरई, सुगंधवाला, पीपल, कलिहारी, सहदेई ॥ १८ ॥ चकवड़, गिलोय, जमींकन्द, मकोय, सूर्यमुखी, कोयल, हाथीशुण्डी, थूहरका दूध,

भांगरा और पित्तपापडा ॥ १९ ॥ यह सर्व पारेके मारनेवाली मूलिकाहैं । यह सर्व व इनमेंसे कुछेक पारेके मारनेके लिये प्रयोग कीजाती है ॥ २० ॥

अप्रसूतगवांमूत्रेपेषयेद्रक्तमूलिकाः ।
तद्द्रवैःशोधितंसूतं तुल्यंगंधकसंयुतः ॥ २१ ॥
तप्तखल्वेचतुर्याममविच्छिन्नंविमर्दयेत् ।
तत्पिण्डंपातयेद्यन्त्रेत्रिंशद्धस्तमहापुटे ॥ २२ ॥
एवंदशपुटैर्माय्र्यमर्द्यंपात्यंपुनःपुनः ।
तदुद्धृत्यपुनर्मर्द्यंवज्रमूषान्तरेक्षिपेत् ॥ २३ ॥
भूधराख्येपुटेपश्चाद्दशधाभस्मतांव्रजेत् ।
द्रवैर्द्रवैःपुनर्मर्द्यंसिद्धोऽयंभस्मसूतकः ॥ २४ ॥
मूलिकामारितः सूतोजारणक्रमवर्जितः ।
नक्रमेद्देहलोहाभ्यांरोगहर्त्ताभवेद्ध्रुवम् ॥ २५ ॥

अर्थ-अप्रसूता गाय अर्थात् वछिया या उसरियाके मूत्रमें लज्जावंतीको पीसे उस पिसीहुई लज्जावंतीसे पारेको शुद्धकरै, फिर पारेमें बराबरका गंधक मिलाकर ॥ २१ ॥ चारप्रहरतक तप्तखरलमें मर्द्दनकरै, फिर गोला बना यंत्रमें रख तीस अंगुलोंसे बनाये महापुटमें पचावै ॥ २२ ॥ इसप्रकार दशपुटदेवै और खरल तथा पातन बराबर करताजाय, फिर पारेको लेकर वज्रमूषामें धर ॥२३॥भूधरपुटके द्वारा दशवार पचायकर भस्म करलेवै, वारंवार उपरोक्त औष-धियोंके द्वारा खरल करता जाय इस प्रकार पारेकी भस्म अर्थात् पारा सिद्ध हो जाताहै ॥ २४ ॥ इसप्रकार पूर्वोक्त औषधियोंसे मारण किया हुआ यह पारा जारणक्रमसे वर्जित, देह और लोहेको न उल्लंघनेवाला और रोगोंको हरनेवाला होजाताहै ॥ २५ ॥

रसंगंधकतैलेनद्विगुणेनविमर्दयेत् ।
दिनैकंवाथसर्पाक्षीविष्णुक्रान्ताहृभृंगजैः ॥ २६ ॥
त्र्यहंविमर्दयेद्द्रावैस्त्रिंशद्धस्तमहापुटे ।
इत्येवमष्टधापाच्यंरसोभस्मीभवेद्ध्रुवम् ॥ २७ ॥

अर्थ–पारेको द्विगुने गंधकके तेलमें एकदिन, अथवा सर्पाक्षी, कोयल, और भांगरेके रसमें तीन दिन खरल कर तीस अंगुलोंसे बनायेहुये महापुटमें पकावै, इसप्रकार आठवार पकानेसे पारेकी निश्चय भस्म होजातीहै ॥ २६ ॥ २७ ॥

श्वेतांकोटजटावारिसूतंमर्द्यंदिनत्रयम् ।
पुटयेद्भूधरेयंत्रेमूषायांभस्मतांव्रजेत् ॥ २८ ॥
देवदालीहरिक्रान्तामारनालेनपेषयेत् ।
सप्तधासूतकंतेनकुर्यान्मर्दितमुत्थितम् ॥ २९ ॥
नसूतं खर्परेकुर्यादत्त्वादत्त्वाचतुर्द्रवम् ।
चुल्ल्योप[illegible]द्वह्नौभस्मस्यादरुणोपमम् ॥ ३० ॥
कोष्ठोदुम्बरजैःक्षीरैःसिताहिंगुविभावयेत् ।
सप्तवारंप्रयत्नेनशोध्यंपेष्यंपुनःपुनः ॥ ३१ ॥
कोष्ठोदुम्बरपंचांगैःकषायंषोडशांशकम् ।
हृत्वातेनपुनर्मर्द्यंहिंगुवंगंरसेश्वरम् ॥ ३२ ॥
क्षिप्त्वानिरुद्ध्यमूषायांभूधराख्येपुटेपचेत् ।
अष्टधाम्रियतेसूतोदेयंहिंगुपुटेपुटे ॥ ३३ ॥

अर्थ–कोयला और अंकोलकी जड़के रसमें पारेको तीन दिन खरल करै फिर मूषामें रख भूधरयंत्रके द्वारा फूंक देवै तौ पारेकी निश्चय भस्म होजावै ॥ २८ ॥ देवदाली और नीली कोयलको काँजीमें सातवार पीसकर रस बनाले उस रसमें पारेको खरलकरै ॥ २९ ॥ फिर पारेको कड़ाहीमें डाल पूर्वोक्त चौगुना रस मिलाके चूलेपै चढ़ाकर अग्नि जला देवै तौ पारेकी भस्म होकर लाल होजायगा ॥ ३० ॥ कठूमरके दूधमें वंग और हींगको सात भावना देवै फिर यत्नसहित सुखावै और खरल करै ॥ ३१ ॥ फिर कठूमरके पंचांगोंका षोड़शांश कषाय बना उसमें फिर वंग और हींग तथा पारेको खरल करै ॥ ३२ ॥ पीछे मूषामें रख मुखको बंदकर भूधरयंत्रके द्वारा आठ पुट देवै और प्रतिपुटमें हींग देतारहै तो पारेकी भस्म होजातीहै ॥ ३३ ॥

अपामार्गस्यबीजानितथैरण्डस्य[illegible]र्गयेत् ।
[illegible]पारदेदेयंमूषायामवरोधयेत् ॥ ३४ ॥

रुद्धालघुपुटेपश्चाच्चतुर्भिर्भस्मतांव्रजेत् ।
कटुतुम्ब्युद्भवेकन्देगर्भेनारीपयःसुवे ॥ ३५ ॥
सप्तधाम्रियतेसूतःस्वेदयेद्गोमयाग्निना ।
अंकोलस्यजटातोयैःपिष्ट्वाखल्वेविमर्दयेत् ॥ ३६ ॥
सूतंगंधकसंयुक्तंदिनान्तेतंनिरोधयेत् ।
पुटयेद्भूधरेयंत्रेदिनान्तेतत्समुद्धरेत् ॥ ३७ ॥
धान्याभ्रंसूतकंतुल्यंमर्दयेन्मारकद्रवैः ।
दिनैकंतेनकल्केनवस्त्रेपिष्ट्वाचवर्त्तिकाम् ॥ ३८ ॥
विलिप्यतैलैर्वर्त्तिन्तामेरण्डोत्थैःपुनःपुनः ।
प्रज्वाल्यतद्धृतंभाण्डेग्राहयेत्पतितामधः ॥ ३९ ॥
कृष्णभस्मभवेत्तच्चपुनर्मर्द्यंत्रियामकैः ।
दिनैकंतत्पचेद्यंत्रेकच्छपाख्येनसंशयः ॥ ४० ॥
मृतःसूतोभवेत्सद्यस्तत्तद्योगेषुयोजयेत् ।
द्विपलंशुद्धसूतन्तुसूतार्द्धंशुद्धगंधकम् ॥ ४१ ॥
मर्दयेन्मारकद्रावैर्दिनमेकं- रन्तरम् ।
बद्ध्वातुभूधरेयंत्रेदिनैकंमारयेत्पुटात् ॥ ४२ ॥

अर्थ—चिरचिटेके वीज और अंडीके बीजोंका चूरण पारेमें मिला मूपामें रख मुख बन्दकर ॥ ३४ ॥ चार लघुपुट देनेसे पारेकी भस्म होजातीहै । कडवीतोंबीके कंदमें गड्ढाकर उसके बीचमें स्त्रीका दूध और पारेको रखकर ॥ ३५ ॥ सातवार उपलोंकी अग्निसे पकावै तौ पारेकी भस्म होजावै । अंकोलकी जड़के रसमें गंधकयुक्त पारेको खरलमें पीसकर मर्दन करै फिर उसको संध्याके समय मूषामें डाल फिर भूधर यंत्रमें पचावै, फिर पारेकी बराबर धान्याभ्रक लेकर पारेको मारनेवाले द्रव्योंके रसमें एकदिनतक मर्दन करे फिर पूर्वोक्त द्रव्योंके कल्कके साथ उक्त पारेको वस्त्रपै लेपकर सुखावै, पीछे बत्ती बना अंडीके तेलमें भिजो लेवै पीछे उन वत्तियोंको एक बरतनमें अग्निके द्वारा जला देवै, तिसके उपरान्त बरतनमें जो कृष्णवर्ण भस्म बनकर लगजाय उस भस्मको लेकर हलदीके रसमें खरल करै पीछे एक दिन कच्छप यंत्रमें पचानेसे तत्काल पारे-

की भस्म होजाती है और वह भस्म सर्व रोगोंमें प्रयोग करने योग्य है । आठ तोले शुद्ध पारा और चार तोले शुद्ध गंधक इनको एकत्र कर पारेके मारनेवाले द्रव्योंके रसमें एकदिन खरल करकै पुटके द्वारा एकदिन भूधर यंत्रमें पचावै तो पारेकी भस्म होजातीहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथ रसमारणे वज्रमूषाभा. ।

तुषदग्धस्यभागौद्वावेकंवल्मीकमृत्तिका ।
लोहकिट्टस्यभागैकंश्वेतपाषाणभागकम् ॥ ४३ ॥
नरकेशसमंकिंचिच्छागीक्षीरेणपेषयेत् ।
यामद्वयंदृढंमर्द्यंतेनमूषान्धसंपुटात् ॥ ४४ ॥
शोषयित्वाथसंलिप्त्वातत्कल्कैःसंनिरुध्यच ।
वज्रमूषासमाख्यातासम्यक्पारदमारिका ॥ ४५ ॥
श्वेतंपीतंतथारक्तंकृष्णञ्चेतिचतुर्विधम् ।
लक्षणंभस्मसूतस्यश्रेष्ठंस्यादुत्तरोत्तरम् ॥ ४६ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे रसशोधन-मारणाधिकारो नाम द्वितीयोपदेशः ॥ २ ॥

अर्थ–भूसीकी राख दोभाग, बाँबीकी मट्टी एकभाग, लोहेका मैल एकभाग, सफेद पत्थर एक भाग और सबकी बराबर मनुष्यके केश लेकर कुछेक बकरीके दूधमें पीसै, फिर दोप्रहर पर्यन्त दृढ मर्दनकर मूषासम्पुट बनाकै सुखादे और उपरोक्त कल्कसे लेपन करै और उपरोक्त कल्कसे मुखकोभी बंदकरै, इसप्रकार वज्रमूषा बनता है और इसमें उत्तम प्रकारसे पारेकी भस्म होजाती है । पारेकी भस्म सफेद, पीत, लाल और कृष्ण भेदोंसे चार प्रकारकी है इनमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ जाननी अर्थात् सफेदसे पीली, पीलीसे लाल, और लालसे काली, श्रेष्ठ है ॥ ४३ । ४४ । ४५ । ४६ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्-शालग्रामकृतायां रसशोधनमारणाधिकारो नाम द्वितीयो-पदेशः समाप्तः ॥ २ ॥

अथ पारदमारणम् ।

अथातोज रणात् र्वबीजंमारणमुच्यते ।
अजीर्णंचाप्य बीजं सूतकंयस्तुमारयेत् ॥ १ ॥
ब्रह्महासदुराचारोममद्रोहीमहेश्वरि ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनजारितं मारयेद्रसम् ॥ २ ॥
संस्थाप्यगोमयंभूमौपक्वमूषांततोपरि ।
तन्मध्येकटुतुम्ब्युत्थंतैलंदत्त्वारसंक्षिपेत् ॥ ३ ॥
काकमाचीरसंदेयंतैलतुल्यंततः पुनः ।
गन्धकंव्रीहिमात्रंचक्षिप्त्वातंचनिरोधयेत् ॥ ४ ॥
तत्पृष्ठेपावकोदेयः पूर्णंवावह्निखर्परम् ।
स्वांगशीतलतांज्ञात्वाजीर्णेतैलेचगंधकम् ॥ ५ ॥
काकमाचीद्रवंचाग्नौदत्त्वादत्त्वाचजारयेत् ।
मूषाधोगोमयंचात्रदत्त्वाचोर्द्ध्वंचपावकम् ॥ ६ ॥
षड्गुणंगंधकंजार्यंसूतस्यैवंमुखंभवेत् ।
तंसूतंमर्द्दयेन्नीरैर्जम्बीरोत्थैः पुनःपुनः ॥ ७ ॥
चतुःषष्ट्यंशकैःपूर्वैर्द्वात्रिंशांशंततःपुनः ।
षोडशांशंशुद्धहेमपत्रंसूतेषुनिक्षिपेत् ॥ ८ ॥
शिखिपित्तेनसंपिष्टंतैलैश्चसर्षपोद्भवैः ।
लिप्त्वाहेमक्षिपेत्सूतंयामंजम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ९ ॥
मर्द्यंतंपूर्ववत्पच्यान्मूषायांजाम्बिरद्रवैः ।
पूरयेद्रोधयेच्चाग्निंदत्त्वायत्नेनजारयेत् ॥ १० ॥
ग्रासेग्रासेचतन्मर्द्यंजम्बीराणांद्रवैर्दृढम् ।
मूलिकालवणंगंधमभावेपिच तैलयोः ॥ ११ ॥
पिष्ट्वाजम्बीरनीरेणहेमपत्रंप्रलेपयेत् ।
इत्येवंजारणाकार्याततःसूतञ्चमारयेत् ॥ १२ ॥

अथवानिर्मुखंसूतंविडयोगेनमारयेत् ।
विडमथप्रवक्ष्यामिसाधयेद्भिषजांवरः ॥ १३ ॥

अर्थ—अथानंतर जारणपूर्वक और बीजसहित पारेका मारण कहतेहैं—महादेव बोले कि, हे देवि! जो मनुष्य अजीर्ण (जारणरहित) और अबीज पारेकी भस्म करता है वह मनुष्य ब्रह्मघाती, दुराचारी और मेरा द्रोही होता है, इसकारण अत्यंत यत्नकर जारित पारेको मारना चाहिये । भूमिपै गोबरको रख उसके ऊपर पक्वमूषा स्थापनकरै उसमें कड़वी तोंबीका तेल और पारा तथा तेलकी समान मकोयका रस और व्रीहिप्रमाण गंधकका चूरण डाल मूषाके मुखको बंद करदेवै, उसके ऊपर अग्नि जलावै,जब स्वयं शीतल होजाय तब पुराने तेलमें गंधक और मकोयका रस बार२ डालकर जारण करै,उपरोक्त मूषाके तले गोबर रक्खै और ऊपर अग्नि जलादेवै वा अग्निसे भरेहुए पात्रको रखदेवै, छैगुने गंधकका जारणकरै, इसप्रकार पारेके मुख उत्पन्न होता है, फिर उक्त पारेको जम्बीरी नींबूके रसमें बारबार खरलकर पीछे चौंसठवें भाग सुद्धसुवर्णके पत्र मिलाकर पारेको खरलकरै, फिर सोलहमें भाग शुद्ध सुवर्णके पत्र मिलाकर पारेको खरलकरै, फिर मयूरके पित्त और सरसोंके तेलमें सुवर्णको पीस पारेके ऊपर लेपकरै, फिर एकप्रहर पर्यन्त जम्बीरी नींबुओंके रसमें मर्द्दन करके मूषामें रखकर पूर्ववत् यंत्रके द्वारा पकावै और ग्रास ग्रासमें जम्बीरके रसमें दृढ़ मर्द्दन करताजाय । मयूरके पित्त और तेलके अभावमें मूलिका, लवण और गंधक लेना चाहिये, फिर जाम्बीरीके रसमें मर्दनकर सुवर्णके पत्रोंपै लेपकरै, इसप्रकार जारणकार्य संयुक्त करके पीछे पारेको भस्म करै, अथवा निर्मुख पारेको विडके संयोगसे मारना चाहिये। अब विड़को कहतेहैं और यह विड़ वैद्योंको सिद्ध करना चाहिये॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥

शंखचूर्णंरविक्षीरैश्चातपेभावयेद्दिनम् ।
तद्वज्जम्बीरजैर्द्रावैर्दिनैकंधूमसारकम् ॥ १४ ॥
सु[illegible]मूत्रैःक्वाथ्यंयामचतुष्टयम् ।
कण्टकारीश्चसंक्वाथ्यदि[illegible]रमूत्रकैः ॥ १५ ॥
साजीक्षारतिन्तिडीकंकाशीशश्चशिलाजतुम् ।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्भाव्यंपृथग्यामचतुष्टयम् ॥ १६ ॥
जैपालबीजंत्वग्घीनंमूलकानांद्रवैर्दिनम् ।
सैन्धवंटङ्कणंगुंजाशिग्रुमूलद्रवैर्दिनम् ॥ १७ ॥

गतत्सर्वंसमांशन्तुमर्द्यंजम्बीरजैर्द्रवैः ।
तद्गोलंरक्षयेद्यत्नाद्विडोऽयंवाडवानलः ॥
अनेनमर्दयेत्सूतंग्रासतैंतप्तखल्वके ॥ १८ ॥

अर्थ–शंखके चूनेको एकदिन आकके दूधमें और वज्रखारको एकदिन जम्वीरी नींबुओंके रसमें भावना देवे ॥ १४ ॥ फिर कालेलोनको बकरीके मूत्रमें चार प्रहर और कटेरीको मनुष्यके मूत्रमें एकदिन औटालेवे ॥ १५ ॥ फिर सज्जी, इमलीका खार, कसीस, और शिलाजीत, इनको अलग अलग चार प्रहरतक जम्बीरी नींबूके रसमें भावना देवे ॥ १६ ॥ और जमालगोटेके बीजोंको छालसे अलग करके एकदिन मूलीके रसमें खरल करै सेंधानोनको एकदिन चौंटलीकी जड़के रसमें और सुहागेको एकदिन सेजिनके जड़के रसमें खरल करलेवै । पीछे इन सबको बराबर लेकर जम्बीरी नींबूके रसमें खरल करके ॥ १७ ॥ गोला बनालेवै, इसको विड़ कहते हैं इस विड़के साथ पारेको तप्तखरलमें मर्दन करै ॥ १८ ॥

स्वर्णाभ्रसर्वलोहानियथेष्टानिचजारयेत् ।
मारयेत्पूर्वयोगेनमारणंचात्रकथ्यते ॥ १९ ॥
कुम्भींसमूलामुद्धृत्यगोमूत्रेणसुपेषयेत् ।
तद्द्रवैर्मर्दयेत्सूतंदिनैकंकान्तसंपुटे ॥ २० ॥
लिप्त्वानियमकादेयाऊर्ध्वश्चाधस्तदन्वयेत् ।
मृद्वग्निनादिनैकन्तुपचेच्चुल्यांमृतोभवेत् ॥ २१ ॥
गोघृतंगंधकंसूतंपिष्ट्वापिण्डींप्रकल्पयेत् ।
कुमारीदलमध्यस्थंकृत्वासूत्रेणवेष्टयेत् ॥ २२ ॥
तंकान्तंसंपुटंरुद्ध्वात्रिभिर्लघुपुटैःपचेत् ।
ततोध्मातेभवेद्भस्मचान्धमूषेक्षयंध्रुवम् ॥ २३ ॥
शाकवृक्षस्यपक्वानिफलान्यादायशोधयेत् ।
पेषयेद्द्रविदुग्धेनतेनमूषांप्रलेपयेत् ॥ २४ ॥
आदिप्रसूतगोजातजरायोश्चूर्णपूरितः ।
तन्मध्येसूतकंरुद्ध्वाध्मातोभस्मत्वमाप्नुयात् ॥ २५ ॥

कर्कोटींकाकमाचींचकंचुकींकटुतुम्बिकाः।
काकजंघाकाकतुण्डीकाकिनीकाकमंजरीः॥ २६॥
पिष्ट्वैतान्वज्रमूषास्तैर्लेपंकृत्वारसंक्षिपेत्।
मर्दितंदिनमेकन्तुतैरेवार्द्रोत्थितैरसैः॥ २७॥
रुद्धाथभूधरेपच्यादष्टवारंपुनःपुनः।
मर्दयेल्लिप्तमूषास्तारुद्धाध्मातोमृतोभवेत्॥ २८॥

अर्थ-फिर सोना, अभ्रक, और सर्व प्रकारके लोह, इन सबको यथेष्ट प्रमाण जारण करके पूर्वोक्तयोगके द्वारा अथवा निम्नोक्त प्रकारसे मारण करै॥१९॥ मूलसहित जलकुम्भीको उखाडकर गोमूत्रमें पीसे, फिर इसी रसमें एक दिन पारेको खरलकर पीछे कान्तसंपुटमें रख लेपकरकै निम्नलिखित सर्पाक्षी आदि पारेको बांधनेवाली औषधी उसके चारों ओर देकर एकदिनतक चूले पै रख मृदुअग्निके द्वारा पकानेसे पारेकी भस्म होजातीहै॥ २०॥ २१॥ गायका घी, गंधक और पारा इनको एकत्र पीसकर पिण्डा बनाकै घीकुवारके पत्तोंके बीचमें रखकर सूत्रसे बांधै, फिर कान्तसंपुटरख अवरोधकरके तीन लघुपुट देकै पचावै, पीछे अंधमूषामें रखकै अग्निको धोंकनेसे पारेकी भस्म होजातीहै॥ २२॥ २३॥ शाकवृक्षके पके हुए फलोंको शोधकर आकके दूधमें पीस करकै मूषाको लीपलेवै, पीछे पहिलीवार ब्याईहुई गायकी जरायु (जेर) के चूर्णसे मूषाको भर उसमें पारेको रख संपुटित दे मुख बंदकर आगमें रख धोंक-नेसे भस्म होजातीहै॥ २४॥ २५॥ ककोडा, मकोय, कंचुकी, कड़वीतोंवी, काकजंघा, कौआठोडी, चोंटली और काकमंजरी (काकनासा) इन सबको वारीक पीस वज्रमूषाके भीतर लेप करकै उसमें पारेको डालकर रखदेवै, किन्तु पहिले पारेको अदरखके रसमें खरल करै पीछे रोधनकर भूधरयंत्रके द्वारा वारंवार इसीप्रकार आठबेर पचावै, फिर लिपटेहुए द्रव्यको मूषामेंसे खुर-चकर खरलकरके फिर मूषामें रख मूषाके मुखको बंदकर आगबाल धोंकनेसे पारेकी भस्म होजातीहै॥ २६॥ २७॥ २८॥

रसोनियामकैर्मार्योहृढंयामचतुष्टयम्।
द्विगुणैर्गन्धतैलैश्चपचेन्मृद्वग्निनाशनैः॥ २९॥
यावत्खोटोभवेत्तत्तद्रोधयेल्लोहसंपुटे।

हरीतकींजलेपिष्ट्वालोहकिट्टेनमूषिकाः ॥ ३० ॥
कृत्वातन्मध्यतःक्षिप्त्वासंपुटंचान्धयेत्पुनः ।
तस्योर्ध्वंस्रावकाकारंद्दत्वानागंद्रुतंक्षिपेत् ॥ ३१ ॥
कठिनेनधमेत्तावद्यावन्नागोद्रुतोभवेत् ।
नधमेच्चपुनस्तावद्यावत्कठिनतांव्रजेत् ॥ ३२ ॥
एवंपुनःपुनर्ध्मातस्त्रियामैर्म्रियतेरसः ।
नियामकास्ततोवंगसूतस्यमारकर्मणि ॥ ३३ ॥

अर्थ—निम्नलिखित नियामकद्रव्य और दुगुनेगंधक तथा तेलके साथ चार प्रहर मर्दनकर मृदुअग्निसे पारेको धीरे धीरे पचावे ॥ २९ ॥ जब खोट अर्थात् जमजावै, तब लोहेके सम्पुटमें रख मुख बंद करदेवे, फिर हरड़ोंको जलमें पीस कर उसमें लोहेकी कीट मिलाके मूषा बनालेवे ॥ ३० ॥ उसके बीचमें उक्त पारेको रख आग देवै और तिसके उपरान्त उसके ऊपरके भागमें कृष्णवर्ण लेपनद्रव्यादि फैलाकर शीघ्रही उसके ऊपर रांगको छोडै, जबतक रांग गल कर फिर कठिन न होजावे तबतक आंच देतारहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ इसप्रकार वारंवार तीनप्रहर पर्यन्त अग्नि धोंकनेसे पारा भस्मरूप होता है । अब निम्नोक्त सर्पाक्षीआदि नियामक द्रव्य वंग और पारेके मारण कर्म्ममें कहे-जाते हैं ॥ ३३ ॥

सर्पाक्षीक्षीरिणीवन्ध्यामत्स्याक्षीशरपुंखिका ।
काकजंघाशिखिशिखाब्रह्मदण्डयांखुपर्णिका ॥३४॥
वर्षाभूकंचुकीमूर्वापट्टकोत्पलचिंचिका ।
शतावरीवज्रलतावज्रकन्दात्रिकर्णिका ॥ ३५ ॥
मण्डूकपर्णीपाटलीचित्रकोग्रीष्मसुन्दरः ।
काकमाचीमहाराष्ट्रीहरिद्रातिलपर्णिका ॥ ३६ ॥
श्वेतार्कशिग्रुधत्तूरमृगदूर्वाहरीतकी ।
गुडूचीमूषलीपुंखाभृंगराड्रक्तचित्रकः ॥ ३७ ॥

तगरंशूरणंमुण्डीमलंकापोतको [illegible] ।
सैन्धवंश्वेतवर्षाभूसाम्बरंहिंगुमाक्षिकम् ॥ ३८ ॥
विष्णुक्रान्तासोमवल्लीव्रणघ्नीयक्षलोचनम् ।
व्याघ्रपादीहंसपादीवृश्चिकालीकुरण्टकम् ॥ ३९ ॥
स्वयम्भूकुसुमंकुञ्चीहस्तिशुण्डीन्द्रवारुणी ।
बीजान्यहस्करस्यादिसर्वत्रैतेनियामकाः ॥ ४० ॥
एताःसमस्ताव्यस्तावादेयाह्यष्टदशाधिकाः ।
मारणेमूर्च्छनेबन्धेरसस्यैतानियोजयेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ–सर्पाक्षी (गंडिनी) खिरनी, बाँलककोडा, मछेली, शरपुंखा, काकजंघा (मसी), मयूरशिखा, ब्रह्मदण्डी, मूषापर्णी ॥ ३४ ॥ पुनर्नवा, कंचुकी (औषधिविशेष), मूर्वा (चुरनहार). पित्तपापडा, कमल, इमली, शतावर, हडसंवारी, वज्रकन्दा, त्रिकर्णिका (गोखरू) ॥ ३५ ॥ ब्रह्ममाण्डुकी, कठपाढल, चीता, ग्रीष्मसुन्दर, मकोय, जलपीपल, हलदी, तिलकर्णिका (तिलकन्द) ॥ ३६ ॥ सफेद आक, सौंजिना, धतूरा, मृगदूर्वा (इन्द्रायण), हरड़, गिलोय, मूषली, नील, भाँगरा, लालचीता ॥ ३७ ॥ तगर, जिमीकन्द, गोरखमुण्डी, कठूमर, करंज, तालमखाना, सैंधानोन, विषखपरा, साभर नोन, हींग, मधु ॥ ३८ ॥ कोयल, सोमवल्ली, विकङ्कत, हंसपदी, वृश्चिकाली, पियावांसा ॥ ३९ ॥ शिवलिंगीका फूल, कलौंजी, हाथीशुण्डी, इन्द्रायन और आकके बीज, इन सबको नियामकगण कहते हैं । यह सर्वद्रव्य पारेके मारनेमें, मूर्च्छित करनेमें और बद्ध करनेमें व्यवहारमें लायेजाते हैं ॥ ४० ॥ ४१ ॥

अप्रसूतगवांमूत्रैःपिष्ट्वापूर्वनियामकाः ।
तद्द्रवैर्मर्दयेत्सूतंयथापूर्वोदितंक्रमात् ॥ ४२ ॥
इत्येवंजारणंप्रोक्तंमारणंपरिकीर्त्तितम् ।
परीक्षामारितेसूतेकर्त्तव्याचयथोदिता ॥ ४३ ॥
अधस्तुषाग्निनातप्तोह्यक्षीणास्तिष्ठतेयदा ।
तदाभस्मविजानीयाच्[illegible]ल्यांयामंनिरीक्षयेत् ॥ ४४ ॥

मृत्तिकामारितंसूतंसर्वयोगेषुयोजयेत् ।
जारितोमारितःसूतोजरादारिद्र्यरोगनुत् ॥ ४५ ॥
मूर्च्छितोव्याधिनाशायबद्धंसर्वत्रयोजयेत् ॥ ४६ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखंडे मारणाधिकारो नाम तृतीयोपदेशः ॥ ३ ॥

अर्थ–अप्रसूता गाय (बछिया) के मूत्रमें उपरोक्त नियामक औषधियोंको पीसकर पूर्वोक्त अनुक्रमसे उसके द्वारा पारेको मर्दन करके पीछे जारण और मारण करै । पारेकी निश्चय भस्म हुई है या नहीं इस सन्देहको दूर करनेके लिये पारेकी परीक्षा करै, भूसीकी अग्निके ऊपर पारेकी भस्मको धरै, जो वह भस्म एक प्रहरमें कम न होवै तो उसको उत्तम भस्म जाननी । अथवा चूलेपै आग बाल उसपै तवा रख उसके ऊपर पारेकी भस्म एकप्रहर पर्यन्त धरी रहने देवै, जो वह भस्म उडे नहीं तो जानो कि पारा मरगयाहै । मृत्तिका अर्थात् नियामक द्रव्योंसे माराहुआ पारा सर्वरोगोंमें देना चाहिये । प्रथम पारेको जारणकर पीछे मारै । माराहुआ पारा जरा और दरिद्रता नाशक है । मूर्च्छित पारेको रोगके दूरकरनेके लिये और बद्ध पारेको सर्वत्र देना चाहिये ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतमारणाधिकारनामकस्तृतीयोपदेशः समाप्तः ॥ ३ ॥

अथ पारदमूर्च्छा ।

अथातःशुद्धसूतस्यमूर्च्छनाविधिरुच्यते ।
मेघनादोवचाहिंगुशूरणैर्मर्दयेद्रसम् ॥ १ ॥
नष्टपिष्टन्तुतद्गोलंहिंगुनावेष्टयेद्बहिः ।
पचेल्लवणयन्त्रस्थंदिनैकंचण्डवह्निना ॥ २ ॥
ऊर्ध्वलग्नंसमादायदृढंवस्त्रेणबन्धयेत् ।
ऊर्ध्वाधोगंधकंतुल्यंदत्त्वासौम्यानलेपचेत् ॥ ३ ॥
जीर्णेगंधेपुनर्देयंपड्भिर्वारैःसमंसमः ।
षड्गुणेगंधकंजीर्णेमूर्च्छितोरोगहाभवेत् ॥ ४ ॥

६)

अर्थ—अनंतर शुद्धपारेकी मूर्च्छाविधि कहतेहैं—चौलाई, वच, हींग और जिमीकन्द इनके रसमें पारेको मर्दन करके गोला बना लेवै, जब वह गोला सूखजावै तब उसके ऊपर हींगसे लेप करदेवै, फिर लवणयंत्रके द्वारा प्रचण्ड अग्निसे एकदिन पचावै, पीछै ऊपरके लगे हुए द्रव्यको लेकर गाढ़ेवस्त्रमें बाँध देवै फिर नीचे और ऊपर समान भाग गंधकका चूर्ण देकर मृदु अग्निसे पचावै, जीर्ण गंधक होजानेपर बराबर गंधक देतारहै, इसप्रकार छैवार गंधकका जारण होनेसे पारा मूर्च्छित होजाताहै, यह पारा सर्वरोगनाशक है ॥ १ । २ । ३ । ४ ॥

गंधकंमधुसारश्चशुद्धसूतसमंसमम् ।
यामैकंपाचयेत्खल्वेकाचकुप्यांनिवेशयेत् ॥ ५ ॥
रुद्ध्वाद्वादशयामन्तंवालुकायन्त्रगंपचेत् ।
स्फोटयेत्स्वांगशीतंतंतदूर्द्ध्वंगंधकंत्यजेत् ॥ ६ ॥
अधस्तंरसमादायसर्वरोगेषुयोजयेत् ।
शुद्धसूतंद्विधागंधंसूतार्द्धंसैन्धवंक्षिपेत् ॥ ७ ॥
द्रवैःसितजयन्त्याश्चमर्द्दयेद्दिवसत्रयम् ।
कृत्वागोलश्चसंशोष्यक्षिप्त्वामूषांनिरुन्धयेत् ॥ ८ ॥
शोषयित्वाधमेत्किंचित्सुतप्तांतांजलेक्षिपेत् ।
तस्माद्रसंसमुद्धृत्यात्रिकण्टरसभावितम् ॥ ९ ॥
योजयेत्सर्वरोगेषुधमेद्वाभूधरेपचेत् ।
रसार्द्धंगंधकंमर्द्यघृतैर्युक्तन्तुगोलकम् ॥ १० ॥
कृत्वातंबन्धयेद्वस्त्रेदोलायंत्रगतंपचेत् ।
गोमूत्रान्तकृतंयामंनरमूत्रैर्द्दिनत्रयम् ॥ ११ ॥
शोषयेच्च्[illegible]नर्वस्त्रेबद्धावेष्टयंसदादृढम् ।
शुष्कंनिरुध्यमूषायांततस्तुषाग्निनापचेत् ॥ १२ ॥
ऊर्ध्वभागमधःकृत्वाअधोभागंचऊर्ध्वगम् ।
इत्यादिपरिवर्[illegible]नस्वेदयेद्दिवसत्रयम् ॥ १३ ॥
पश्चादुद्धृत्यतंसूतंयो[illegible] ॥ १४ ॥

अर्थ–गंधक, मोम और शुद्धपारा, यह सर्व समान भाग लेकर एकपहर पर्यन्त खरलमें खरलकरके एक काँचकी शीशीमें रस डेढ़दिन बालुकायंत्रमें पकावे फिर शीतल होनेपर शीशीको फोड़ ऊपरके गंधकको छोड़ नीचेके पारेको ग्रहणकर सर्वरोगोंमें प्रयोगकरे । दोभाग पारा, चारभाग गंधक और एकभाग सेंधानोन, इन सबको तीनदिन श्वेतजयन्तीके रसमें मर्दनकर गोला बनालेवे उसगोलेको सुखाकर मूषामें रख रोधनकरे, फिर सुखाकर कुछेक फूँके फिर गरमकर जलमें छोडे, शीतल होनेपर उसमेंसे पारेको निकालकर कटेरी, वडीकटेरी और गोखरूके रसमें भावना देकर भूधरयंत्रमें पकाले इसको सब योगोंमें योजना चाहिये । एकभाग गंधक और दोभाग पारा,इन दोनोंको घृतमें मर्दन करके गोला बनालेवे, उसगोलेको वस्त्रमें बाँधकर दोलायंत्रमें पचाले, फिर उसको एकप्रहर गोमूत्रमें और तीन दिन नरमूत्रमें खरलकरके सुखालेवें, फिर वस्त्रमें बाँधकर मूषामें रखके तुषाग्निसे पकाले, तदनंतर नीचेके भागको ऊपरकी ओर और ऊपरके भागको नीचेकी ओर करै, इसप्रकार परिवर्तन करके तीनदिन पर्यन्त स्वेदन करे, फिर पारेको ग्रहण करे, वह पारा योगवाही और सर्व रोग नाशक जानना ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

सद्योजातस्यबालस्यविष्ठापालाशबीजकम् ।
चण्डालीरुधिरंसूतंसूतपादंचटंकणम् ॥ १५ ॥
जयन्त्यामर्दयेद्द्रावैर्दिनकंतन्तुगोलकम् ।
पेषयेत्सहदेव्याथलेपयेत्ताम्रसंपुटम् ॥ १६ ॥
तन्मध्येगोलकंक्षिप्त्वाद्वियामंस्वेदयेल्लघु ।
वालुकायंत्रमध्येतुसमुद्धृत्यततःपुनः ॥ १७ ॥
चित्रकैःसहदेव्याचगंधकैर्लेपयेद्बहिः ।
संपुटंबन्धयेत्तद्वन्मृदालेप्यचशोषयेत् ॥ १८ ॥
तंरुद्ध्वाअन्धमूषायांध्मातेसंपुटमाहरेत् ।
सूक्ष्मचूर्णंहरेद्रोगान्योगवाहीमहारसः ॥ १९ ॥
संपुटंसूततुल्यंस्यच्छास्त्रदृष्टेनकर्म्मणा ॥ २० ॥

अर्थ—तत्कालके उत्पन्नहुए बालककी विष्ठा, ढाकके बीज, चण्डालीका रुधिर, पारा और पारासे चौथाभाग सुहागा इनसबको एकत्र करके जयन्तीके रसमें एकदिन खरलकरै, फिर उसका गोला बनालेवै, फिर सहदेईको पीस उसके रससे ताम्रसंपुटमें लेपकरकै तिसके बीचमें गोलारख वालुकायंत्रमें दोपहर-पर्यंत अग्निदेवे, तदनंतर, चीता सहदेवी और गंधकका वाहर लेप करै, फिर संपुटको वस्त्रमें बांधकर मट्टीके गारेका लेप कर सुखादेवै, फिर उस संपुटको अंधमूषामें रख धोंकके पकावै, फिर पारेको निकाल उसका सूक्ष्म चूर्णकर सब रोगोंमें व्यवहार करै। शास्त्रके मतसे संपुट पारेके समान होना चाहिये ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

धत्तूरकद्रवैर्मर्द्यंदिनंगंधंससूतकम् ।
अन्धमूषेदिनंस्वेद्यंभूधरेमूर्च्छितोभवेत् ॥ २१ ॥
कृत्वाषडंगुलांमूषांसुपक्वांमृन्मयींदृढाम् ।
मूषागर्भेविलेप्याथमूलैर्बहुलपत्रकैः ॥ २२ ॥
तन्मध्येसूतकंक्षिप्त्वामूषांपूर्यात्तुतद्द्रवैः ।
रुद्ध्वासलवणैर्यन्त्रैश्चुल्ल्यांदीप्ताग्निनापचेत् ॥ २३ ॥
सप्ताहान्तेसमुद्धृत्ययवमात्रंज्वरापहम् ।
काशीशंसैन्धवंसूतंतुल्यंतुल्यंविमर्दयेत् ॥ २४ ॥
काशीशस्यास्यभागेनदातव्याफुल्वतूरिका ।
स्तोकंस्तोकंक्षिपेत्खल्वेत्रियामश्चैवमूर्च्छयेत् ॥ २५ ॥
प्रत्येकंशतनिष्कंस्यादूनंनैवाधिकंभवेत् ।
स्थालीसंपुटयंत्रेणदिनंचंडाग्निनापचेत् ॥ २६ ॥
ऊर्द्ध्वलग्नंतत्श्चुल्ल्यांमूर्च्छितंचाहरेत्सुतम् ।
कुरण्टकरसैर्भाव्यमातपेमर्द्दयेद्रसम् ॥ २७ ॥
लताकरंजपत्रैर्वाअंगुष्ठेनविमर्द्दयेत् ।
दिनैकंमूर्च्छितंसम्यक्सर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ २८ ॥
अथ सूतस्य शुद्धस्यमूर्च्छितस्य प्ययांविधिः ।

मूततुल्यंघृतंजीर्णंद्वाभ्यांतुल्यंचगंधकम् ॥ २९ ॥
रविक्षीरैर्दिनंमर्द्यमंधयित्वातुभूधरे ।
पुटकेनभवेत्सिद्धोरसोहैरण्यगर्भकः ॥ ३० ॥

अर्थ–समानभाग गंधक और पारेको लेकर धतूरेके रसमें एक दिन खरल करै फिर अन्धमूषामें डाल भूधरयंत्रके द्वारा पचानेसे पारा मूर्च्छित होजाताहै छै अंगुल प्रमाण उत्तममट्टीकी मूषा (घडिया) बनाकर अग्निमें पका तैय्यार करले, उस मूषाके मध्यभागको लाल सैंजिनेके और मूलीके पत्तोंके रससे लेप देवै, फिर मूषामें पारेको डाल सैंजिनेके रससे मूषाको भर मुखको बंदकर चूलेपे धर सातदिन दीप्ताग्निद्वारा लवणयंत्रमें पकावै, फिर संपुटमेंसे निकाल जौकी बराबर देनेसे यह पारा सबप्रकारके ज्वरोंको हरता है । हीराकासीम, सेंधानोन, फुल्वतुरिका और पारा, यह प्रत्येक दोसै दोसै तोले लेकर सबको एकत्र करके तीन प्रहर पर्यन्त खरल करै, फिर स्थाली संपुटयंत्रमें प्रचण्ड अग्निसे पकावै, फिर यंत्रके ऊपरके पात्रमें उड़के लगेहुए पदार्थ छुटालेवै, इस प्रकार पारा मूर्छित होताहै । सूर्यकी धूपमें कटसरैयाके रसमें पारेको भावना देकर मर्दन करै, अथवा करंजुवाके पत्तोंके रसमें अंगूठेसे मर्दन करै, इसप्रकार एकदिन भलेप्रकार मूर्छित किये हुए पारेको सर्व रोगोंमें देना चाहिये । एक भाग पारा, एक भाग पुरानाघी, और दो भाग गंधक, इन सबको एकत्र करके आकके दूधमें एक दिन खरल करै, फिर घड़ियामें डाल भूधरयंत्रमें पुटपाक करै तो हैरण्यगर्भरस सिद्ध होजाताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

अथ रसबंधनं यथा ।

कटुतुम्ब्युद्भवेकन्देवंध्यायाःक्षीरकन्दके ।
अपक्वैकंसमादायतद्गर्भेपिण्डिकाततः ॥ ३१ ॥
दशनिष्कंशुद्धसूतंनिष्कैकंशुद्धगंधकम् ।
स्तोकंस्तोकंक्षिपेद्गन्धंपाषाणेतुचकुट्टयेत् ॥ ३२ ॥
[illegible]मात्रेभवेत्पिण्डीरसकन्देविनिक्षिपेत् ।
अधोर्ध्वंभस्मवैक्रान्तंदत्त्वानिष्कार्द्धमात्रकम् ॥३३॥

ततःकन्दस्यमज्जाभिर्मुखंबद्धामृदादृढम् ।
लिप्तामंगुलमानेनसर्वतःशोष्यगोलकम् ॥ ३४ ॥
पाचयेद्भूधरेयन्त्रेतथोद्धृत्यपुनःपचेत् ।
ऊर्द्धभागमधःकुर्यादित्येवंपरिवर्तयेत् ॥ ३५ ॥
क्रमेणचालयेदूर्द्धंबहिर्युग्मोत्पलैःपचेत् ।
ततोभिन्नस्तुसंग्राह्योबद्धःस्याद्दाडिमोपमम् ॥
नाम्नावैक्रान्तबद्धोऽयंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३६ ॥

अर्थ—कडवीतोंबीका कन्द, वा बाँझककोडोका कन्द अथवा विदारी कन्दके बीचमें २० वीसतोले शुद्धपारा और दोतोले शुद्धगंधक देकर पत्थरके ऊपर होले होले एकप्रहर पर्यन्त कूटे, फिर उसका गोला बनाले, उस गोलेको लाल प्याजके भीतर फिर नीचेको और ऊपर एक तोला वैक्रान्तमणिकी भस्म देवै, फिर पूर्वोक्तकन्दकी मज्जासे उसके मुखको बंदकर मट्टीके गारेका एक अंगुल ऊंचा लेपकर सुखादेवै, फिर भूधर यंत्रमें पकावै, फिर पकाकर निकाललेवै और फिर इसी प्रकारसे पकावै, फिर उसके ऊर्ध्वभागको नीचे और नीचेके भागको ऊपर करै इस प्रकार क्रमसे परिवर्त्तन करके दो उपलोंकी अग्निके द्वारा पकावै, इस प्रकार करनेसे पारा अनारकी समान बद्ध होजाताहै और इसको वैक्रान्तबद्ध कहते हैं, यह सर्वरोगोंमें देना चाहिये ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथवा गन्धपीठीनांवस्त्रेबद्धातुगन्धकम् ।
तुल्यंदत्त्वानिरुन्ध्याथसंपुटेलोहजेदृढे ॥ ३७ ॥
पुटयेद्भूधरेतावद्यावज्जीर्यतिगन्धकम् ।
एवंपुनःपुनर्देयंयावद्गन्धस्तुपड्गुणम् ॥ ३८ ॥
इत्येवंगंधकेबद्धःसूतःस्यात्सर्वरोगजित् ।
मूषाजम्बीरविस्ताराद्दैर्घ्येणषोडशांगुला ॥ ३९ ॥
अपक्वासुदृढाकार्यासिकताभाण्डमध्यगा ।
त्रिभागंबालुकालग्नापादांशेनबर्हिःस्थिता ॥ ४० ॥
पलैकंचूर्णितंगंधं[illegible]मध्येविनिक्षिपेत् ।

शुद्धसूतंसमंपश्चात्क्षिपेद्गन्धपलंततः ॥ ४१ ॥
भाण्डमारोपयच्चुल्ल्यांमूषामाच्छाद्य यत्नतः ।
मन्दाग्निनापचेत्तावद्यावन्निर्धूमतांव्रजेत् ॥ ४२ ॥
गन्धधूमेगतेपूर्याकाकमाचीद्रवैस्तुसा ।
द्रवेजीर्णेपुनःपूर्यानागवल्लीदलद्रवैः ॥ ४३ ॥
यावज्जीर्यतितद्गन्धंःकाकमाच्यादिभिःपुनः ।
दत्त्वादत्त्वापचेत्तद्वद्धत्तूरादिक्रमाद्रसम् ॥ ४४ ॥
भित्त्वामूषांसमादायज्वरव्याधिहरोरसः ।
योजयेद्गन्धबद्धोऽयंयोगवाहेषुसर्वतः ॥ ४५ ॥

अर्थ–अथवा समानभाग पारा और गंधकको वस्त्रमें दृढ बाँध पोटलीबना लोहके सम्पुटमें रख भूधरयंत्रमें पचावे, जबतक गंधक जीर्ण हो तबतक वारंवार गंधक देवै, और जारणकरै इसप्रकार छैगुने गंधकको जारण करनेसे गंधकबद्ध पारा बनताहै, यह पारा सर्वरोगनाशकहै, । जम्वीरी नींबूके समान चौड़ी, सोलह अंगुल लम्बी, कच्ची और दृढ ऐसी घडिया बनावे, उसको रेतेसे भरेहुए वरतनमें धरदेवै और उसके भीतर तीन भाग रेता लगरहा हो, एक भाग रेता बाहिर लगाहो, उस घडियामें प्रथम आठ तोले गंधकका चूरन, और आठतोले शुद्धपारा तथा तिसके ऊपर आठतोले गंधकका चूरण डाले, फिर बरतनको चूल्हे पै धर मूषाको यत्नपूर्वक ढककर जबतक धुआँ न निकले तबतक मृदुअग्निसे पकावै, जब गन्धकका धुआँ निकलजाय तब मकोयके रससे मूषाको भरदेवै फिर जब मकोयका रसभी जल जावै, तब पानोंके रससे मूषाको भरदेवै, जब पकनेसे पानोंका रसभी जल जावै तब धतूरेका रस मूषामें भरदेवै और फिर जब धतूरेका रसभी जलजावै तब फिर मकोयादिके रसोंसे मूषाको भरता रहे, इसप्रकार क्रमसे वारंवार धतूरेआदिके रससे भरकर पचावै फिर पकनेपर मूषाको तोड़ उसमेंसे पारेको ग्रहण करै, यह गंधबद्धपारा ज्वरादि सर्वरोगोंको नाश करै है और सर्वकार्योंमें देना चाहिये ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

कज्जलाभोयदासूतोविहायघनचापलम् ।
मूर्च्छितःसतदाज्ञेयोरसोपज्ञानविन्नरैः ॥ ४६ ॥

माधुर्यगौरवोपेतस्तेजसाभास्करोपमः ।
वह्निमध्येयदातिष्ठेत्तदावृक्षस्यलक्षणम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—जब पारा कज्जलकी समान होजावै, घन अर्थात् भारीपन और चपलताको छोड देवै तब वह मूर्च्छित कहा जाता है। यह मूर्छित पारा मधुरता और गौरवयुक्त, सूर्यकी समान तेजस्वी और अग्निमें रखनेसे वृक्षके लक्षणों को करनेवाला होता है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

दीपिका ।

सजयतिरसराजोमृत्युशंकापहारी
सकलगुणनिधानःकायकल्पाधिकारी ।
वलिपलितविनाशंसेवनाद्वीर्यवृद्धिं
स्थिरमपिकुरुतेयःकामिनीनांप्रसंगे ॥ ४८ ॥
इत्येतेमारिताःसूतामूर्च्छिताबद्धमागताः ।
प्रत्येकंयोगवाहःस्यात्तत्तद्योगेषुयोजयेत् । ४९ ॥
मारितंदेहसिद्ध्यर्थंमूर्च्छितंव्याधिनाशनम् ।
रसभस्मक्वाचिद्रोगेदेहार्थेमूर्च्छितंक्वचित् ॥ ५० ॥
बद्धंद्वाभ्यांप्रयुंजीतशास्त्रदृष्टेनकर्म्मणा ।
दन्तेशृंगेऽथवावंशेरक्षयेत्साधितंरसम् ॥ ५१ ॥
पारदंक्रिमि[illegible]घ्नंबल्यमायुष्यदृष्टिदम् ।
सेवनात्सर्वरोगघ्नंरुच्यंगुरुकषायकम् ॥ ५२ ॥
सूतेगुणानांशतकोटिवज्रे
चाभ्रेसहस्रंकनकेशतैकम् ।
तारेगुणाशीतितदर्द्धकान्ते
तीक्ष्णेचतुःषष्टिरथौतदर्द्धम् ॥ ५३ ॥
रसादिभिर्याक्रियतेचिकित्सा
दैवीतिसद्भिः परिकीर्त्तितासा ।

...मंत्रह्रताशिफाद्यैः
साराक्षसीशस्त्रकृतादिभिर्या ॥ ५४ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे
रसखण्डे चतुर्थोपदेशः ॥ ४ ॥

अर्थ—मूर्च्छितपारा मृत्युनाशक, सकलगुणजनक, कल्पकालपर्यन्त कायकी रक्षा करनेवाला, वलि (शरीरमें वलपडने) व पलित (विना समयही वालोंका श्वेत होजाना)का विनाशक, वीर्यवर्द्धक और स्त्रीसंगमें वीर्यको स्थिर करनेवालाहै।४८॥ मारित, मूर्च्छित और बद्ध, यह तीनों पारे योगवाहक हैं; इनको अनेक प्रकारके योगोंमें योजना चाहिये ॥ ४९॥ तहाँ मारित पारा देहकी सिद्धिके लिये और मूर्च्छित पारा रोगोंको दूरकरनेके लिये सेवनकरना चाहिये । और कहीं पारेकी भस्म रोगोंको नाश करनेके लिये और कहीं मूर्च्छित पारा देहकी सिद्धिके लिये प्रयोग किया जाता है ॥ ५० ॥ और बद्ध पारा रोगोंको हरनेके और देहकी सिद्धि इनदोनोंके लिये दिया जाता है । सिद्ध कियेहुए पारेको हाथीआदिके दांतोंमें, भैंस आदिके सींगोंमें अथवा वांसके भीतर रखना चाहिये. पारेको सेवन करनेसे कृमिरोग और कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं. बल और आयुकी वृद्धि होतीहै, दृष्टिको बढानेवाला, रुचिकारक, भारी, कषैला और सर्वरोगनाशक है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ पारेमें सौकरोड गुणहैं, हीरे और अभ्रकमें हजारगुण हैं, सुवर्णमें सौ गुणहैं, चान्दीमें ८० अस्सी, कांतलोहमें चालीस, तीक्ष्ण लोहमें चौसठ, और तांबेमें बत्तीस गुण रहतेहैं ॥ ५३ ॥ रसादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जाती है उसको दैवी, मंत्रमूलादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जातीहै उसको मानुषी और शस्त्रादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जातीहै उसको राक्षसी चिकित्सा कहतेहैं ॥ ५४ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे प्रदीपिकाभाषाटीकायां भिषक्‌शालिग्राम-
वैश्यकृतचतुर्थोपदेशः समाप्तः ॥ ४ ॥

अथात उपरसशोधनमारणमाह ।

गंधकंवज्रवैक्रान्तंवज्राभंतालकंशिला ।
खर्परंशिखितुत्थंचविमलाहेममाक्षिकम् ॥ १ ॥
...षिकंकान्तपाषाणंवराटीमथहि...लम् ।

कंकुष्ठंशंखभूनागंटंकणंचशिलाजतु ॥ २ ॥
एतेऽ'रसाःशोध्यामार्याद्राव्याःपुटेक्कचित् ॥ ३ ॥

• अर्थ–गंधक, हीरा, वैक्रान्त, सफेदअभ्रक, हरताल, मैनशिल, खपरिया, नीलाथोथा, रूपामाखी, सोनामाखी, गूगल, [illegible]ण, कौड़ी, सिंग्रफ, कंकुष्ठ, शंख, भूनाग, सुहागा, और शिलाजीत, इनसबको उपरस कहतेहैं। इनको शोधन, मारण और द्रावण करना ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ गंधकमारणमाह ।

अपक्वगंधंकुरुतेऽतिकुष्ठंतापंभ्रमंपित्तरुजांकरोति ।
रूपंसुखंवीर्यबलंचहन्तितस्मात्सुशुद्धंविधियोजनीयम् ॥४॥

अर्थ–अशुद्धगंधक कुष्ठ, ताप, भ्रम, पित्तरोग,इनको उत्पन्न करैहै तथा रूप, सुख, वीर्य और बलको हरैहै. इसकारण गंधकको शुद्ध करकै सेवन करना चाहिये ॥ ४ ॥

अथ गंधकशुद्धिः ।

साज्यंभाण्डेपयःक्षिप्त्वा[illegible]खंवस्त्रेणबंधयेत् ।
तत्पृष्ठेचूर्णितंगंधंक्षिप्त्वास्रावेणशोधयेत् ॥ ५ ॥
भाण्डंनिक्षिप्यभूम्यन्तेऊर्ध्वेदेयंपुटंलघु ।
ततःक्षीरेद्रुतंगंधंशुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ ६ ॥
अथवार्कस्नुहीक्षीरैर्वस्त्रंलेप्यंश्चसप्तधा ।
गंधकंनवनीतेन पिष्ट्वावस्त्रंप्रलेपयेत् ॥ ७ ॥
तद्वर्त्तिज्वलितादेशेहत्वाधार्याह्यधोमुखा ।
तैलंपतेदधोभांडेग्राह्यंयोगेषुयोजयेत् ॥ ८ ॥
शुद्धोगन्धोहरेद्रोगान्कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ।
अग्निकारीमहानुष्णोवीर्यवृ[illegible]करोतिच ॥ ९ ॥

अर्थ–घृतसंयुक्त दूधको एक पात्रमें करलेवै,उस पात्रके मुखको कपडेसे बन्द करदेवै, फिर उस कपडेपै गंधकका चूरन रख, उसपै सरैया रखदेवै फिर पृथ्वी में गड्ढा खोद उस गड्ढेमें बरतनको रखदेवै, ऊपर लघु पुट देनेसे गंधक झर कर दूधमें गिरे, इसप्रकार गंधककी शुद्धि होतीहै । यह शुद्धगंधक सर्वयोगोंमें

देना चाहिये। अथवा आकका दूध और सेहुण्डका दूध इन दोनों दूधोंमें वस्त्रको लेपितकर फिर गंधकको माखनमें पीस, उक्तवस्त्रको सातवार लेपे, फिर उसकी वत्ती बनालेवै फिर उन बत्तियोंमें अग्नि लगा नीचेको मुख करदेवै,उन जलतीहुई बत्तियोंसे गिरते हुये तेलकी बूँदोंको पात्रमें लेताजावै, पात्रमें तेलके जमजानेपर शुद्धगंधक बनजाताहै, यह गंधक सर्व योगोंमें योजना चाहिये। शुद्ध गंधक कुष्ठ, मृत्यु और ज्वरादिक रोगोंको हरैहै, अग्निजनक, अत्यन्तगरम और वीर्यवर्धकहै ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ वज्रमारणमाह।

व्याघ्रीकन्दयुतंवज्रंदोलायंत्रेणपाचितम् ।
सप्ताहात्कोद्रवक्काथेकौलत्थेविमलंभवेत् ॥ १० ॥
त्रिःसप्तकृत्वस्तत्तप्तं[illegible]सेचयेत् ।
षड्गुणैस्तालकंपिष्ट्वातद्गोलेकुलिशंक्षिपेत् ॥ ११ ॥
प्रध्मातंवाजिमूत्रेणसिक्तं पूर्वोदितक्रमैः ।
भस्मीभवतितद्वज्रंवज्रवत्कुरुतेतनुम् ॥ १२ ॥
ऊर्णासुशृंगंपरिपिष्यपिण्डमेतस्यमध्येतुनिधायवज्रं[illegible] ।
पिण्डेऽथवाधायचवज्रवल्याःपुटत्रयंतस्यरसेविदध्यात् १३॥
मृत्युरेवंभवेदस्यवज्राख्यस्यनसंशयः ॥ १४ ॥

अर्थ–व्याघ्रीकन्दके साथ हीरेको दोलायंत्रमें पकाके सातदिन कोदोंके क्काथमें और कुलथीके क्काथमें भिजोवै, फिर इक्कीसवार आगमें गरम करके इक्कीसबार गधेके मूत्रमें बुझाव तौ हीरा भस्मरूप होजायगा, हीरेसे छैगुनी हरताल ले उसका गोल बना उस गोलेमें हीरेको रख दोलायंत्रमें पकावै और घोडेके मूत्रमें बुझालेवै, फिर अग्निमें गरमकर पूर्वोक्त कोद्रवादिके क्काथमें भिजोवै, इसप्रकार करनेसे हीरेकी उत्तम भस्म बनजाती है और इस भस्मको सेवन करनेसे शरीर वज्रकी समान होजाता है। मेढासिंगीको पीस उसका गोलाबना उसमें हीरेको रखकर अथवा हडसंघारीके गोलेमें हीरेको रखकर उनके रसमें तीनपुट दे, दोलायंत्रमें पकावै, इसप्रकार हीरेकी निःसन्देह भस्म होजाती है ॥ १४ ॥

विशेषमाह ।

अशुद्धवज्रमायुर्घ्नंपीडांकुष्ठंकरोतिच ।
पाण्डुतापगुरुत्वंचतस्माच्छुद्धन्तुमारयेत् ॥ १५ ॥
श्वेतरक्तपीतकृष्णाद्विजाद्यावज्रजातयः ।
रसायनेभवेद्विप्रःश्वेतःसिद्धिप्रदायकः ॥ १६ ॥
क्षत्रियोमृत्युजिद्रक्तोवलीपलितरोगहा ।
द्रवकारीभवेद्वैश्यःपीतोदेहस्यदाहकृत् ॥ १७ ॥
कृष्णःशूद्रोरुजांहन्तिवयःस्थैर्यंकरोतिच ।
पुंस्त्रीनपुंसकाश्चैतेलक्षणेनतुलक्षयेत् ॥ १८ ॥
वृत्ताःफलकसंपूर्णातेजस्वान्ताबृहद्द्रवाः ।
पुरुषास्तेसमाख्यातारेखाबिन्दुविवर्जिताः ॥ १९ ॥
रेखाबिन्दुसमायुक्ताःषट्कोणास्तास्त्रियःस्मृताः ।
त्रिकोणापत्तनादीर्घाविज्ञेयास्तानपुंसकाः ॥ २० ॥
पूर्वः[illegible]वंमिमेशस्ताःपुरुषाबलवत्तराः ।
शरीरकान्तिजनकाभोगदावज्रयोषितः ॥ २१ ॥
नपुंसकास्त्वल्पवीर्याःकामुकाःसत्त्ववर्जिताः ।
स्त्रीतुस्त्रीणांप्रदातव्याक्लीबंक्लीबेतथैवच ॥ २२ ॥
सर्वेषांसर्वदायोज्याःपुरुषाबलवत्तराः ॥ २३ ॥

अर्थ–अशुद्धहीरा आयुनाशक, तथा पीडा, कोढ़, पांडु, दाह और भारीपन, इनको उत्पन्न करैहै, इसकारण प्रथम शोधकर फिर मारना चाहिये ॥ १५ ॥ सफेद, लाल, पीत और कृष्ण, यह चारों प्रकारके हीरे क्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रजातिके जानने । अर्थात् सफेद रंगका हीरा ब्राह्मण, लाल रंगका हीरा क्षत्रिय, पीले रंगका हीरा वैश्य और कालेरंगका हीरा शूद्र जानना । रसायनकर्ममें सफेद रंगका ब्राह्मण हीरा लियाजाताहै और यह सिद्धिदायक है ॥१६॥ लालरंगका क्षत्रिय हीरा मृत्यु और वलीपलितनाशकहै । [illegible] वैश्य हीरा द्रवजनक और देहको दृढ़ करैहै ॥१७॥ और कालेरंगका शूद्र हीरा

रोगोंको हरनेवाला और अवस्थाको स्थापन करनेवाला है । अब हीरेके स्त्री,पुरुष और नपुंसक, इन तीन लक्षणोंको कहतेहैं ॥ १८ ॥ जो हीरा गोलकार, गट्टेदार, कान्तियुक्त, बडेआकारवाला और रेखा तथा बिन्दुओंसे रहितहो उसको पुरुष जानना ॥ १९ ॥ जो हीरा रेखा और बिन्दुसहितहो और षट्कोनवालाहो, उसको स्त्री जानना । तीनकोनवाला और लंबाहो, उसको नपुंसकहीरा कहतेहैं ॥ २० ॥ यह तीनोंप्रकारके हीरे पूर्वानुक्रमसे उत्तम जानने, अर्थात् नपुंसकहीरेसे स्त्रीहीरा और स्त्रीहीरेसे पुरुषहीरा उत्तमहै । पुरुषहीरा–अत्यंतबलकारक और कान्तिजनक है । स्त्रीहीरा भोगदायकहै । और नपुंसक हीरा–अल्पवीर्यवाला, कामुक और सत्ववर्जितहै । स्त्रीहीरा स्त्रियोंको, नपुंसकहीरा नपुंसकोंको और पुरुषहीरा सब मनुष्योंको सर्वकालमें सेवन करना चाहिये ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

गृहीत्वातुशुभंवज्रंव्याघ्रीकन्दोदरेक्षिपेत् ।
महिषीविष्ठयालेप्यंकरीषाग्नौविपाचयेत् ॥ २४ ॥
निशायान्तुचतुर्यामंनिशान्तेवाश्वमूत्रके ।
सेचयेत्तानिप्रत्येकंसप्तरात्रेणशुध्यति ॥ २५ ॥
मेघनादाशमीश्यामाशृंगीमदनकोद्रवम् ।
कुलत्थंवेतसंचाथअगस्त्यंसिन्धुवारकाः ॥ २६ ॥
एतेषांसज्जलैःक्वाथैर्वज्रंजम्बीरमध्यगम् ।
दोलायन्त्रेत्र्यहंपाच्यमेवंवज्रंविशुद्ध्यये ॥ २७ ॥
कुलत्थकोद्रवक्काथेदोलायंत्रेविपाचयेत् ।
व्याघ्रीकन्दमतंवज्रंसप्ताहाच्छुद्धिमिच्छति ॥ २८ ॥
व्याघ्रीकन्दगतं वज्रंमृत्पालिप्तंपुटेपचेत् ।
अहोरात्रात्समुद्धृत्यहयमूत्रेणसेचयेत ॥ २९ ॥
वज्रीक्षीरेणवासिंचेदेवंशुद्धमारयेत ॥ ३० ॥

अर्थ–उत्तमहीरेका लेकर व्याघ्रीकंदके बीचमें रख भैंसके गोबरका लेपकर अन्यउपलोंकी आगसे रात्रिमें चारप्रहर पका रात्रिके अन्तमें घोडेके मूत्रमें बुझालेवे, इसप्रकार सातरात्रि पकानेसे हीरा शुद्ध होजाता है । जम्बीरी नींबूके

बीचमें हीरेको रख दोलायंत्रमें पकाकर चौलाई,शमी, कौयावासाँऊ, काकड़ाशिंगी, मैनफल, कोदों, कुलथी, वैंत, अगस्तिया और सहलुके क्राथमें झालेतो हीरा शुद्ध होजावै। कटेरीके कन्दके बीचमें हीरेको रख फिर कुलथी और कोदोंके क्राथमें दोलायंत्रके द्वारा सातदिन पकानेसे हीरा शुद्ध होजाताहै।कटेरीकन्दमें हीरेको स्थापितकर मट्टीके गारेसे लेपकर गजपुटमें एकरात्रिपर्यन्त पचा फिर घोडेके मूत्रमें अथवा सेहुंडके दूधमें सेवनकरनेसे हीरा शुद्ध होजाताहै. इस प्रकार हीरेको प्रथम शुद्धकर पीछे मारना ॥ २४ ॥२५॥२६। ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

विप्रजात्यादिवज्राणांमारणंकथ्यतेपुनः ।
अश्वत्थबदरीझिण्टीमाक्षिकंकर्कटास्थिच ॥ ३१ ॥
तुल्यंस्नुहीपयःपिष्ट्वाक्त्रंतद्गोलकेक्षिपेत् ।
रुद्ध्वागजपुटेपच्याद्विप्रजातिर्मृतोभवेत् ॥ ३२ ॥
करवीरंमेषशृंगंबदरञ्चउदुम्बरम् ।
अर्कदुग्धंसमंपिष्ट्वाविप्रवन्मारयेन्नृपम् ॥ ३३ ॥
बलांचातिबलांगंधंपेषयेत्कच्छपास्थिच ।
एतैर्वावारुणीदुग्धैर्म्रियेद्वैश्योपिविप्रवत् ॥ ३४ ॥
सूरणंलशुनंशंखंसमंपेष्यंमनःशिलाम् ।
वटक्षीरेणमूषान्तर्विप्रवच्छूद्रमारणम् ॥ ३५ ॥
स्त्रियस्तेषांम्रियन्तेचतत्तदौषधयोगतः ।
नपुंसकमृतिस्तेषांचतुर्णामौषधैःसमम् ॥ ३६ ॥

अर्थ—अब ब्राह्मणजाति आदिके हीरोंका मारण कहतेहैं—पीपल, बेरी, कटसरैया, सोनामाखी, केकडेकी हड्डी और थूहरकादूध, इन सबको समान भागलेकर खरलकरै फिर उसका गोलाबनाकर उसमें ब्राह्मणजातिका हीरा रख गजपुटमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। कनैर, मेढाशिंगी, बेर और गूलर, इन सबको समानभाग लेकर आकके दूधमें खरलकर गोला बनालेवै,उस गोलेमें क्षत्रियहीरेको रख गजपुटमें पकानेसे हीरेकी भस्म होजाती है। खिरैटी, कंघी, गंधक और कछुवेकी हड्डी इन सबको समान भागलेकर इन्द्रायनके दूधमें खरलकर गोलाबनालेवै उसगोलेमें वैश्यहीरेको रख गजपुटमें पचानेसे भस्म होजा-

तीहै। जमीकन्द, लशुन, शंख और मैनशिल, इनसबको समान भागलेकर वडके दूधमें पीसकर खरल करै, फिर उसका गोलाबनाकर उसगोलेमें शूद्रहीरेको रख गजपुटमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। स्त्रीजातिका हीरा उन्हीं उन्हीं औषधोंके योगसे और नपुंसकजातिका हीरा चारो प्रकारकी औषधोंसे माराजाताहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथ समुदायेन वज्रमारणमाह।

द्विवर्षरूढकार्पासैर्मूलंकान्तमुखैःसह।
नारीस्तन्येनसंपिष्यपिष्ठाध्मातंसुतंभवेत् ॥ ३७ ॥
मेषशृंगभुजंगास्थिकूर्मपृष्ठाम्लवेतसैः।
गजदन्तसमंपिष्ट्वावज्रीदुग्धेनगोलकम् ॥ ३८ ॥
कृत्वातन्मध्यगंवज्रंम्रियतेधमनेनच।
त्रिवर्षनागवंध्यास्तुकार्पासस्याथमूलिका ॥ ३९ ॥
पिष्ट्वातन्मध्यगंवज्रंकृत्वामूषांनिरोधयेत्।
पचेद्गजपुटेतश्चम्रियतेसप्तधापुटैः ॥ ४० ॥
मत्कुणानान्तुरक्तेनसप्तधातपशोषितम्।
कुलिशंभावितंतद्वच्चूर्णितापिमनःशिला ॥ ४१ ॥
लिप्त्वाचबदरीपत्रैर्वेष्टयित्वापुटेपचेत्।
पुनर्लेप्यंपुनःपाच्यंसप्तधाम्रियतेऽपिच ॥ ४२ ॥
वज्रंमहानदीशुक्तौक्षिप्रंभाव्यंमुहुर्मुहुः।
स्नुह्यर्कोन्मत्तकन्यानांद्रवेणैकेनचाह्निकम् ॥ ४३ ॥
कृष्णकर्कटमांसेनापिष्टितंवेष्टयेद्बहिः।
भूनागस्यमृदासम्यग्ध्मातेभस्मत्वमाप्नुयात् ॥ ४४ ॥
रक्तोत्पलस्यमूलैश्चमेघनादस्यकुड्मलैः।
पिण्डितैर्वेष्टितंध्मातंवज्रंभस्मभवत्यलम् ॥ ४५ ॥
वज्रमायुर्बलंरूपंदेहसौख्यंकरोतिच ॥
सेवितोहन्तिरोगांश्चमृतोवज्रोनसंशयः ॥ ४६ ॥

अर्थ—दोवर्षकी कपासकी जड़,और घीकुवार इन दोनोंको स्त्रीके दूधमें पीस गोला बना उसगोलेमें हीरेको रख आगजलानेसे हीरा मरजाताहै। मेढ़ाके सींग, सांपकी हड्डी, कछुएकी पीठ, हाथीके दांत, और अमलवेंत यह सब समान भाग लेकर सेहुंडके दूधमें बारीक पीस गोला बनालेवै, उसगोलेके बीचमें हीरेको रख अग्नि जलानेसे हीरा मरजाताहै। तीनबरसकी नागदमन वा कपासकी जड़को पीसकर गोलावना, उसगोलेमें हीरेको रख गजपुटमें सातबार पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। मच्छरोंके रुधिरमें हीरेको सातवार भिगोकर धूपमें सुखादेवै, फिर मैनशिलका चूरणकर उसके ऊपर लेपकर बेरीकेपत्तोंसे बाँधदेवे, फिर सातवार गजपुटमें पकानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। बड़ी नदीमें उत्पन्नहुई सीप,उसमें थूहरका दूध, आकका दूध,धतूरेका रस और घीकुवारका रस, इनोंमें हीरेको एकदिन पर्यन्त वारंवार भिगोवै,फिर ककेड़ाको चीर मांस निकाल उसमांसकी पिठीसे लेपकरै फिर उसके ऊपर गिंडोयाकी मट्टीछिड़ादेवै,फिर अग्निमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। लालकमलकी जड़ और चौलाईके शाककी वालको पीसकर गोलाबनालेवै, उसगोलेमें हीरेको रख अग्निदेनेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। हीरेकी भस्म—आयु, बल, रूप, देह और सुखकी वृद्धि करैहै और सर्वप्रकारके रोगोंका नाशकरैहै इसमें सन्देह नहींहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

अथ वैक्रान्तशोधनमारणमाह।

वैक्रान्तंवज्रवच्छोध्यंनीलंवालोहितञ्चवा।
हयमूत्रेणतत्सेव्यंतप्तंतप्तंत्रिसप्तधा ॥ ४७ ॥
ततश्चोत्तरवारुण्यापंचाङ्गेगोलकेक्षिपेत्।
रुद्ध्वामूषापुटेपच्यादुद्धृत्यगोलकेपुनः ॥ ४८ ॥
क्षिप्त्वारुद्ध्वापचेदेवंसप्तधाभस्मतांव्रजेत्।
भस्मीभूतश्चवैक्रांतंवज्रस्थानेनियोजयेत् ॥ ४९ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे वज्रवैक्रान्तशोधनमारणोनाम पंचमोपदेशः ॥ ५ ॥

अर्थ—नीलेरंगकी अथवा लाल रंगकी वैक्रान्तमणिको हीरेकी समान शोधना चाहिये। फिर वैक्रान्तको अग्निमें गरम कर घोडेके मूत्रमें इक्कीसवार बुझावै, इसके उपरान्त बडीइन्द्रायणके पत्ते, मूल, छाल, फल और फूल पीसकर गोला

वनालेवै, उसगोलेमें वैक्रान्त रख मूषापुटमें पकावै. इसप्रकार सातवार पकानेसे वैक्रान्तकी भस्म होजातीहै । वैक्रान्तकी भस्म हीरेके अभावमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखंडे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतवज्रवैक्रान्तशोधनमारणंनाम पंचमोपदेशः ॥ ५ ॥

अथाभ्रशोधनमारणमाह ।

अशुद्धाभ्रंनिहन्त्यायुर्वर्द्धयेन्मारुतंकफम् ।
अहतंछेदयेद्देहंमन्दाग्निक्रिमिदायकम् ॥ १ ॥
कृष्णंपीतंसितंरक्तंयोज्यंयोगेरसायने ।
पिनाकदर्दुरंनागंवज्रश्चेतिचतुर्विधम् ॥ २ ॥
पिनाकाद्यास्त्रयोवर्ज्यावज्रंयत्नात्समाहरेत् ।
मुंचत्यग्नौविनिक्षिप्तेपिनाकोदलसंचयम् ॥ ३ ॥
अज्ञानाद्भक्षणन्तस्यमहाकुष्ठप्रदायकम् ।
दर्दुरोनिहितोह्यग्नौकुरुतेदार्दुरध्वनिम् ॥ ४ ॥
नागश्चाग्निगतःशब्दंफूत्कारंचविमुंचति ।
सचदेहगतोनित्यंव्याधिंकुर्याद्भगन्दरम् ॥ ५ ॥
वज्राभ्रकंवह्निसंस्थंनकिंचिद्विकृतिंव्रजेत् ।
तस्माद्वज्राभ्रकंयोज्यंव्याधिवार्द्धक्यमृत्युजित् ॥ ६ ॥

अर्थ—अशुद्धअभ्रक—आयुनाशक तथा वात और कफवर्द्धक है। और बिना मारा अभ्रक—देहनाशक तथा मंदाग्नि और कृमिरोगको उत्पन्न करैहै ॥ १ ॥ काला, पीला, सफेद, लाल, इनरंगोंके भेदोंसे अभ्रक चार प्रकारकाहै, और यह रसायनयोगमें प्रयोग करना चाहिये तथा पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र इन भेदोंसे अभ्रक चारप्रकारकाहै और इनमें पिनाकादि तीन अभ्रक त्यागनेचाहिये और वज्र अभ्रकलेना चाहिये ॥ (अथ पिनाकअभ्रकका लक्षण) ॥ जिस अभ्रकको अग्निमें डालनेसे बहुतसे परत होजाय उसको पिनाकअभ्रक जानना । इस अभ्रकको जो मनुष्य अज्ञानसे भक्षण करलेते हैं उनके महाकुष्ठरोग उत्पन्न होताहै ॥ (अथ दर्दुरअभ्रकलक्षण) ॥ दर्दुरअभ्रकको अग्निमें

डालनेसे दर्दुर अर्थात् मेडककैसा शब्द करता है॥ (अथ नागअभ्रकका लक्षण)॥ नागअभ्रकको अग्निमें डालते ही सर्पकी समान फुंकार करताहै, और इसको जो प्राणी विनाविचारे भक्षण करलेतेहैं, उनके भगन्दर रोग उत्पन्न होताहै॥ (अथ वज्राभ्रकका लक्षण)॥ वज्राभ्रक अग्निमें डालनेसे कुछभी विकारको नहीं प्राप्त होताहै, इसकारण वज्राभ्रक लेना चाहिये और यह व्याधि, बुढापा तथा मृत्युनाशकहै॥ २॥ ३॥ ४॥ ५॥ ६॥

धमेद्वज्राभ्रकंवह्नौततःक्षीरेनिषेचयेत्।
भिन्नपत्रंतुतंकृत्वामेघनादद्रवाम्लयोः॥ ७॥
भावयेदष्टयामन्तन्धान्याभ्रंकारयेत्सुधीः।
अथवाभ्रस्यभागौद्वौटंकश्चैकंजलैःसह॥ ८॥
द्विदिनंस्थापयेत्पात्रेसूक्ष्मंकृत्वाप्रपेषयेत्।
बद्ध्वाधान्ययुतंवस्त्रेमर्द्दयेत्कांजिकैःसह॥ ९॥
अधोयद्गालितंसूक्ष्मंशुद्धंधान्याभ्रकंभवेत्॥ १०॥

अर्थ—वज्राभ्रकको लेकर अग्निमें तपावे, फिर दूधमें बुझावे फिर इसके अलग अलग परत करले, पीछे चौंलाईके रसमें और कांजीमें आठ प्रहर भावना देकर धान्याभ्रक बनालेवै। अथवा दोभाग वज्राभ्रक और एकभाग सुहागा, जलमें भिगोकर अत्यंत बारीक पीसलेवै, फिर धान्योंके साथ वस्त्रमें बाँधकर काँजीके साथ मर्दन करै, फिर छानलेवै उसको धान्याभ्रक कहते हैं॥ ७॥ ॥ ८॥ ९॥ १०॥

अथ शुद्धस्यमारणमाह।

पुनर्नवामेघनादद्रवैर्धान्याभ्रकंदिनम्।
मर्द्यंगजपुटेपच्यात्पुनश्चिचाथशूरणैः॥ ११॥
द्रवैर्मुस्तभवैर्मर्द्यंपृथग्देयंपुटत्रयम्।
एवमर्कदलैर्वेष्टंदेयंवामोचसंपुटे॥ १२॥
निश्चन्द्रंजायतेह्यभ्रंयथादोषेषुयोजयेत्।
गोघृतैस्त्रिफलाक्वाथैःपक्त्वाचपूर्ववत्पचेत्॥ १३॥

पंचविंशत्पुटैरेवंकासमर्दाद्रवैःपचेत् ।
देयंपुटत्रयंक्षीरसंज्ञंप्रपुटेपुटे ॥ १४ ॥
निश्चन्द्रंजायतेह्यभ्रंजरामृत्युरुजापहम् ।
धान्याभ्रकस्यभागैकंद्वौभागौटंकणस्यतु ॥ १५ ॥
पिष्ट्वातदन्धमूषायांरुद्ध्वातीव्राग्निनापचेत् ।
स्वभावशीतलंचूर्णंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ १६ ॥

अर्थ—धान्याभ्रकको एकदिन पुनर्नवा और चौलाईके रसमें मर्दनकर गजपुटमें पचावे, फिर उसको इमली, जमीकंद और नागरमोथेके रसमें अलग अलग तीनवार पुटपाककर आकके पत्तोंमे लपेट मोचसंपुटमें पचानेसे निश्चन्द्र अभ्रक बनजाता है और वह सर्व रोगोंमें देना चाहिये । धान्याभ्रकको नागरमोथेके रसमें मर्दनकर पाँचवार पुटपाक करै, फिर गायके घी और त्रिफलाके काढेमें पकाकर पचीसवार पुटपाक करे, फिर कसौंदीके रसमें मर्दन करके पचीसवार पुटपाक करै, फिर इसको दूधमें मर्दन करके तीनवार पुटपाक करै, इस प्रकार करनेसे निश्चन्द्रअभ्रक होजाताहै, और यह जरा, मृत्यु और रोगनाशक है ॥ धान्याभ्रक एकभाग और सुहागा दोभाग इन दोनोंको एकत्र पीसकर अंधमूषामें रख मूषाका मुख बंदकर तीव्राग्निसे पचावे,जब स्वयं-शीतल होजाय तब उस चूर्णको ग्रहणकरै । यह चूर्ण—सर्वरोगोंमें देना चाहिये ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

धान्याभ्रकमम्लपिष्टंपुटेतप्तेऽम्लसेचनम् ।
तत्पिष्ट्वाधारयेत्खल्वेभाव्यमम्लारनालकैः ॥ १७ ॥
तप्तंतप्तंचारनालैःपाच्यंशोध्यंपुनःपुनः ।
पुटेवाधमनेपाच्यंविंशद्वारंपुनःपुनः ॥ १८ ॥
ततन्तप्तंक्षिपेद्दुग्धेपिष्ट्वाथशोषयेत्पुनः ।
दुग्धतप्तंपुटंपच्यात्तप्तंदुग्धेनसेचयेत् ॥ १९ ॥
एवंत्रिसप्तवाराणिशोष्यंपेष्यंपुटेपचेत् ।
पेषयित्वापचेत्स्थाल्यांलोहदार्व्याविचालयेत् ॥ २० ॥
दुग्धस्थंचततोदुग्धैःपुटेपच्यात्पुनःपुनः ।

एवंसप्तदिनंपच्यादिवाचैकंपुटंनिशि ॥ २१ ॥
तण्डुलीवज्रवल्लीचतालमूलीपुनर्नवा ।
चाङ्गेरीमरिचंचैवबलायाःपयसासह ॥ २२ ॥
एभिश्चपेषयेच्चाभ्रंप्रत्येकंतंत्र्यहंत्र्यहम् ।
स्थित्वाततेपुटेपश्चात्प्रत्येकेनपुनःपुनः ॥ २३ ॥
पिष्टापुनःपुटेघृष्टंकज्जलाभंमृतंभवेत् ॥ २४ ॥

अर्थ–धान्याभ्रकको काँजीमें पीस पुटपाककरे, जब गरम होजावे तब काँजी में बुझावे, फिर खरलमें डाल बारीक पीस अम्लरस और काँजीमें भिगोवे, फिर पुटपाककर जब गरम होजावे तब काँजीमें बुझावे, ऐसे वारंवार काँजीमें बुझावे, और पुट वा धमनद्वारा पकावे । इसप्रकार वीसवार पकाकर फिर दूधमें पीस पुटपाककर दूधमें बुझावे । इसप्रकार इक्कीस वार करे फिर पीस कढ़ाईमें डालकर पकावे, और लोहकी करछीसे चलाताजावे, फिर दूधके साथ एक पुट दिनमें और एक रात्रिमें ऐसे सात दिन पर्यन्त पकावे, तदनंतर चौंलाई, हडसंघारी, मुसली, पुनर्नवा, चाँगेरी, कालीमिर्च और खिरैटी तथा दूध, इन सबके साथ अलग अलग अभ्रकको तीन तीन दिन खरल करे और हरेक मर्दनके साथ पुटदेताजावे, अर्थात् जितनीबार खरल करै उतनीहीबार पुटपाक- करै । इसप्रकार करनेसे अभ्रककी निश्चय कज्जलकी समान भस्म बनजातीहै ॥ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

धान्याभ्रकस्यशुद्धस्यदशांशंमरिचंक्षिपेत् ।
पेषयेदम्लवर्गेणचाम्लेभाव्यंदिनत्रयम् ॥ २५ ॥
तंशुष्कंसंपुटेधान्यंखदिरांगारकैर्दृढम् ।
ऊर्द्ध्वपात्रंनिरूप्याथसेचयेदम्लकेनतम् ॥ २६ ॥
अगस्त्यशिग्रुवर्षाभूमूलैस्तं पत्रजैरसैः ।
पिष्ट्वाभ्रंसेचयेत्तेनषड्वान्याम्लरसेनच ॥ २७ ॥
सितामध्वाज्यगोक्षीरैर्दध्नाम्लंपेष्यमभ्रकम् ।
मत्स्याक्ष्याःकरवीरायाद्रवैःपिष्ट्वात्रिधापचेत् ॥ २८ ॥
ततोगजपुटेपाच्यंनिश्चन्द्रंजायतेऽभ्रकम् ।

धान्याभ्रकंद्रवैर्मर्द्यमत्स्याक्षीतुलसीद्रवैः ॥ २९ ॥
मूलजैःकोकिलाक्षस्यकुमारीश्वेतदूर्वयोः ।
व्याघ्रीकन्दपुनर्नव्यादिनमेतैर्विमर्दयेत् ॥ ३० ॥
कुंजराख्यैःपुटैःसप्तपिष्ट्वापिष्ट्वापचेत्पुनः ।
तद्वत्पंचामृतैःपाच्यंपिष्ट्वापिष्ट्वातुसप्तधा ॥ ३१ ॥
एवंनिश्चन्द्रतांयातिसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३२ ॥

अर्थ–धान्याभ्रकसे दशमा भाग मिरचोंका चूरन मिला अम्लवर्गके रसमें खरलकर तीनदिनपर्यन्त कांजीमें भिगोवै, फिर सूखने पर सम्पुटमें रख खैरके अंगारोंकी प्रचंड अग्निसे पचावै और उसके ऊपर पात्ररख अम्लरसमे सींचता जावै, फिर अगस्तिया, सैंजिना और पुनर्नवा इनकी जड़ तथा पत्तोंके रसमें पीसके पकावै, फिर काँजीमें भिगोलेवै, फिर मिश्री, मधु, घृत, दूध और दही-के साथ पीसकर एकवार मछेछीके रसमें खरलकर, और एकवार कनेरके रसमें खरलकर, तीनवार पुट देकर पचावै, फिर गजपुटमें फूँकदेवै तो अभ्रककी निश्च-न्द्र और उत्तम भस्म बनजातीहै । मछेछी, तुलसी, तालमखानेकी जड़, घीकु-वार, सफेददूव, व्याघ्रीकंद और पुनर्नवा, इन सबके रसमें धान्याभ्रकको एक दिन खरलकरे, फिर गजपुटमें सातवार पकावै तो अभ्रकका निश्चन्द्रभस्म होजा-तीहै, और इसका सर्वरोगोंमें प्रयोग करना योग्यहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

धान्याभ्रंटंकणंतुल्यंगोमूत्रैस्तुलसीदलैः ।
वाकुच्याःसूरणैरल्पैर्दिनंपिष्ट्वापुटेपचेत् ॥ ३३ ॥
जयन्त्याश्चद्रवैःपश्चान्मर्द्यंमर्द्यंत्रिधापुटेत् ।
चतुर्गजपुटैनैवंनिश्चन्द्रंसर्वरोगजित् ॥ ३४ ॥
धान्याभ्रकंरविक्षीरैरविमूलद्रवैश्चवा ।
मर्द्यंमर्द्यंपुटेपश्च त्सप्तधाम्रियतेध्रुवम् ॥ ३५ ॥
धान्याभ्रकंतुपाम्लाम्लैरातपेस्थापयेद्दिनम् ।
यामंमर्द्यचतुर्गोलंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ ३६ ॥
एवंगोक्षीरमध्यस्थंस्थाप्यंमर्द्यंपुटेपचेत् ।

एवंकार्पासतोयेनस्थाप्यंपेष्यंपुटेपचेत् ॥ ३७ ॥
ततोम्लैश्चैवकार्पासैर्गवांक्षीरैःपुनःपुनः ।
घर्मपाकंमर्दनंचपुटश्चैवमनुक्रमात् ॥ ३८ ॥
एकविंशत्पुटेप्राप्तेमृतोभवतिनिश्चितम् ॥ ३९ ॥

अर्थ–धान्याभ्रक और सुहागा समानभाग लेकर गोमूत्र तुलसीपत्र वापची और जमीकंदके रसमें एकदिन खरलकर गजपुटमें पकावै, फिर जयन्तीके रसमें खरलकर तीनबार पुटमें पकावै, इसप्रकार चारबार गजपुट देनेसे अभ्रककी निश्चन्द्रभस्म बनजातीहै और यह सर्वरोगनाशकहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ धान्याभ्रकको आकके दूधमें अथवा आककी जड़के रसमें खरलकर पुटदेताजावै, इसबार सातवार पुटदेनेसे अभ्रककी भस्म होजातीहै ॥ ३५ ॥ धान्याभ्रकको जोकि काँजी और अम्लरसमें डाल एकदिन धूपमें धरदेवै, फिर चारप्रहर खरलकर गोला बना लेवै, उस गोलेको संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसीप्रकार गायके दूधमें डाल खरलकर गजपुटमें पचावै, इसीप्रकार कपासकी जडके रसमें डाल खरलकर गजपुटमें पचावै, फिर अम्लरसमें, गायके दूधमें तथा कपासकी जडके रसमें स्थापनकर वारंवार सूर्यकी धूपमें धर, मर्दनकर गजपुटमें पकाता जाय, इसप्रकार इक्कीस पुट देनेसे अभ्रक निश्चय मरजाताहै॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥

सर्वेषांघातिताभ्राणाममृतीकरणंश्रृणु ।
त्रिफलोत्थकषायस्यपलान्यादायषोडश ॥ ४० ॥
गोमूत्रस्यपलान्यष्टौमृताभ्रस्यपलान्दश ।
एकीकृत्यलोहपात्रेपाचयेन्मृदुवह्निना ॥ ४१ ॥
द्रवेजीर्णसमादायसर्वरोगेषुयोजयेत् ।
अनुपानंविनाह्यभ्रंजरामृत्युरुजापहम् ॥ ४२ ॥
योजयेदनुपानैर्वातत्तद्रोगहरंक्षणात् ।
मृतंचाभ्रंहरेद्रोगाञ्जरामृत्युमनेकधा ॥ ४३ ॥
सेवितंदेहदार्ढ्यंचरूपंवीर्यंविवर्द्धयेत् ॥ ४४ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे
रसखंडे अभ्रकमारणं नाम षष्ठोपदेशः ॥ ६ ॥

अर्थ-अब सर्वप्रकारके मृताभ्रकोंका अमृतीकरण कहतेहैं-त्रिफलाका क्वाथ चौंसठतोले, गोमूत्र बत्तीसतोले और मृताभ्रक चालीसतोले, इन सबको एकत्र करके लोहेके पात्रमें मृदु अग्निसे पकावै,जब द्रवहीन होजाय तब लेकर सर्वरोगोंमें प्रयोग करै। विना अनुपानकेही यह अभ्रक-जरा, मृत्यु और रोगोंका नाश करताहै। और अनुपानोंके साथ इसका सेवन करनेसे क्षणभरमें सर्वप्रकारके रोग दूर होजातेहैं। मारित अभ्रक अर्थात् अभ्रककी भस्म ज्वरादिरोग, जरा और मृत्युनाशकहै, देहको दृढ करनेवाली, तथा रूप और वीर्यको बढानेवालीहै ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्राम-वैश्यकृतायामभ्रकमारणं नाम षष्ठोपदेशः ॥ ६ ॥

अथ तालकशुद्धिमाह।

अशुद्धतालमायुर्घ्नंकफमारुतमेहकृत्।
तापशेफाङ्गसंकोचंकुरुतेतेनशोधयेत् ॥ १ ॥
तालकंकणशःकृत्वादशांशेनचटंकणम्।
जम्बीराणांद्रवैःक्षाल्यंकाञ्जिकैःक्षालयेत्पुनः ॥ २ ॥
वस्त्रैश्चतुर्गुणैर्बद्ध्वादोलायंत्रेदिनंपचेत्।
संयुक्तेचारनालेनदिनंकूष्माण्डजैरसैः ॥ ३ ॥
तिलतैलैःपचेद्यामंयामश्चत्रिफलाजलैः।
त्रिवारंतालकंभाव्यंपिष्ट्वामूत्रैश्चकांजिकैः ॥ ४ ॥
तत्फलैर्दशभिर्देयंरुद्ध्वापुटंचपेषयेत्।
एवंद्वादशधापाच्यंशुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ ५ ॥
तालकंपोटलीबद्धंसप्ताहंकांजिकेपचेत्।
दोलायंत्रेणयामैकंततःकूष्माण्डजैरसैः ॥ ६ ॥
तिलतैलेपचेद्यामंयामश्चत्रिफलाजलैः।
एवंयंत्रेचतुर्यामंपाच्यंशुद्ध्यतितालकम् ॥ ७ ॥
तालकोहरतेरोगान्कुष्ठमृत्युज्वरापहः।
शोधितःशान्तिवीर्येचकुरुतेवायुवर्द्धनम् ॥ ८ ॥

अर्थ–अशुद्ध हरताल–आयुनाशक, तथा कफ, वात, प्रमेह, दाह, लिंगसंकोच और अंगसंकोचको उत्पन्न करैहै । इसकारण हरतालको शुद्ध करना चाहिये ॥ १ ॥ हरितालके छोटे छोटे कण करके उसमें दशमाभाग सुहागा मिलालेवै, फिर उसको जम्भीरी नींबुओंके रसमें एकबार और कांजीमें एकबार धोकर चौगुने वस्त्रमें बाँध दोलायंत्रमें एकदिन पचावै, फिर कांजीमें पीसके एकदिन पेठेके रसमें, एकप्रहर तिलोंके तेलमें और एकप्रहर त्रिफलाके काढेमें पकाकर गोमूत्र और कांजीमें तीनवार भावना देवै फिर त्रिफलाके काढेमें दशवार भावना देकर संपुटमें रख मुख बंदकर पुट देवै, इसप्रकार बारह पुट देनेसे हरिताल शुद्ध होजातीहै । और यह सर्व योगोंमें योजनी चाहिये ॥ २ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ५ ॥ हरितालको पोटलीमें बाँध कांजीमें सातदिन दोलायंत्रके द्वारा पकावै । इसीप्रकार पेठेके रसमें एकप्रहर, तिलोंके तेलमें एकप्रहर और त्रिफलाके काढेमें एकप्रहर दोलायंत्रके द्वारा पचावै, इसप्रकार चारप्रहर दोलायंत्रमें पचानेसे हरिताल शुद्ध होजाताहै ॥ ६ ॥ ७ ॥ शुद्धहरिताल–मृत्यु, कुष्ठ और ज्वरादि रोग नाशक है. तथा शांति, वीर्य और वायुवर्द्धक है ॥ ८ ॥

अथ शिलाशुद्धिमाह ।

अश्मरीमूत्रहृद्रोगमशुद्धाकुरुतेशिला ।
मन्दाग्निमलबंधंचशुद्धासर्वरुजापहा ॥ ९ ॥
अजामूत्रेत्र्यहंपाच्यादोलायंत्रेमनःशिला ।
सप्तधातैरजापित्तैर्घर्मेभाव्यंविशुद्धये ॥ १० ॥
जयन्तीभृंगराजोत्थरक्तागस्त्यरसैःशिला ।
दोलायंत्रेदिनंपाच्यायामंछागस्यमूत्रके ॥ ११ ॥
क्षारयेदारनालेनसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ–अशुद्धमनाशिल–अश्मरी (पथरीरोग), मूत्ररोग, हृदयरोग, मंदाग्नि और मलबद्धताको उत्पन्न करै है और शुद्धमनशिल सर्वरोगनाशकहै ॥ ९ ॥ मनशिलको बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रके द्वारा तीन बार पकावै, फिर बकरीके पित्तकी धूपमें सात भावना देवै, इसप्रकार करनेसे मनशिल शुद्ध होजाताहै ॥ १० ॥ मनशिलको एकदिन दोलायंत्रमें जयन्ती, भांगरा और अगस्तियाके पत्तोंके रसमें तथा एक प्रहर बकरेके मूत्रमें पचाकर काँजीसे धोलेवै, ऐसे मैनशिल शुद्ध होजाती है और इसका सर्व रोगोंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ खर्परशुद्धिः ।

नरमूत्रैश्चगोमूत्रैःसप्ताहंरसकंपचेत् ।
दोलायंत्रेणसम्यक्तच्छुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ १३ ॥

अर्थ–नरमूत्र और गोमूत्रमें दोलायंत्रके द्वारा सातदिन पकानेसे खपरिया शुद्ध होजाती है ॥ १३ ॥

अथ तुत्थकशुद्धिमाह ।

विष्ठयामर्द्दयेत्खल्वेमार्जारककपोतयोः ।
दशांशंटंकणंदद्यात्पाच्यंमृद्वग्निनाततः ॥ १४ ॥
पुटंदध्नापुटंक्षौद्रैर्देयंतुत्थविशुद्धये ॥ १५ ॥

अर्थ–बिलावकी विष्ठा और कबूतरकी विष्ठाके साथ नीलेथोथेको खरल कर फिर उसमें दशमाभाग सुहागा मिलाय मृदु अग्निसे पकावै, फिर एकवार दहीमें भिगो पुटदेकर और एकवार मधुमें भिगो पुटदेनेसे नीला थोथा शुद्ध होजाताहै ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ विमलाशुद्धिः ।

विमलात्रिविधापाच्यारम्भातोयेनसंयुता ।
अम्लवेतसधान्याम्लमेषीमूत्रेणपेषयेत् ॥ १६
दोलायंत्रेचतुर्यामंशुद्धिरेषामहोत्तमा ।
कर्कटीमेषशृंग्युत्थद्रवैर्जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ १७ ॥
भावयेदातपेतीव्रेविमलाशुध्यतिध्रुवम् ॥ १८ ॥

अर्थ–रूपामाखीको केलेके जलमें तीनवार पकाकर अमलबैंत, कांजी और भेडके मूत्रमें पीसलेवै फिर दोलायंत्रमें चारप्रहर पकावे तो शुद्ध होजातीहै ॥ काकडाशिंगी, मेढाशिंगी, और जम्भीरी नींबू इन सबके रसमें रूपामाखीको तेज धूपमें भावनादेनेसे शुद्ध होजाती है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ माक्षिकशुद्धिः ।

मंदाग्निंबलहानिंचव्रणविष्टम्भनेत्ररुक् ।
[illegible]रुतेमाक्षिकोमृत्युमशुद्धोनात्रसंशयः ॥ १९ ॥

माक्षिकंनरमूत्रेणक्काथयेत्कोद्रवैर्द्रवैः ।
वेतसेनाम्लवर्गेणटंकणेनकटुत्रिकैः ॥ २० ॥
दोलायंत्रेदिनंपाच्यंसूरणस्यैवमध्यगम् ।
दिनंरम्भाद्रवैःपच्यात्तद्धृत्वापेषयेद्घृतैः ॥ २१ ॥
एरण्डतैलसंयुक्तंपुटेपश्चाद्विशुद्धये ।
माक्षिकस्यत्रयोभागाभागैकंसैन्धवस्यच ॥ २२ ॥
मातुलुंगद्रवैर्वाथजम्बीरोत्थद्रवैःपचेत् ।
लोहपात्रेपचेत्तावद्यावत्पात्रंसुलोहितम् ॥ २३ ॥
ताम्रवर्णमयोयातितावच्छुध्यतिमाक्षिकम् ।
अगस्तिपुष्पनिर्यासैःशिग्रुमूलंविघर्षयेत् ॥ २४ ॥
द्रवैःपाषाणभेद्याश्चपश्चादेभिश्चमाक्षिकम् ।
तद्वटीचान्धमूषायांविंशाद्भिरुपलैःपचेत् ॥ २५ ॥
पुनःपिष्ट्वाथरुन्ध्याच्चपुटेषड्भिर्विशुध्यति ॥ २६ ॥
मेघनादपाषाणभेदींपिष्ट्वातत्पिण्डमध्येमा-
क्षिकंकाणशःकृत्वानिक्षिपेत् । तद्गोलकंवस्त्रे
बद्धादोलायंत्रेकुलत्थक्काथेदिनमेकंपचेत् ।
एतच्छुद्धलोहानांयुक्तास्थानेमारणेयोज्यम् ॥ २७ ॥
भंगेसुवर्णसंकाशोमनाकृष्णोबहिश्छविः ।
बृहद्वर्णइतिख्यातोमाक्षिकश्रेष्ठउच्यते ॥ २८ ॥

अर्थ–अशुद्ध सोनामाखी–मंदाग्नि, बलहानि, व्रण, विष्टम्भ, नेत्ररोग और मृत्युको करतीहै ॥ १९ ॥ सोनामाखीको मनुष्यकेमूत्रमें पकाके जमीकंदके भीतर रखदेवै, फिर कोदों, अमलवैंत, अमलवर्ग, सुहागा और त्रिकटु (सोंठ, मिरच, पीपल) इन सबके क्काथके साथ एकदिन दोलायंत्रमें पकाके फिर एकदिन केलेके जलमें पकाकर, फिर घीमें पीसकर अंडीके तेलमें मिलाकर पुटपाक करनेसे सोनामाखी शुद्ध होजातीहै । तीनभाग सोनामाखी और एकभाग सेंधानोन इनको बिजोरेके रसमें अथवा जम्भीरी नींबूके रसमें

डालकर लोहेके पात्रमें पकावै, जब लोहेका पात्र लाल होजावै और सोना-माखी तांबेकी रंगकी होजावे, तब शुद्ध होजाती है । अगस्तके फूलोंका गोंद, सैंजिनेकी जड और पाषाणभेदका रस इनमें सोनामाखीको खरलकर गोला बनालेवै उस गोलेको अंधमूषामें रख बीस उपलोंके द्वारा पकाकर, फिर पूर्ववत् पीसके सम्पुटमें रख मुखबंदकर छैवार पुट देनेसे सोनामाखी शुद्ध होजाती है । चौलाई और पाषाणभेदको पीसकर गोलाबनालेवै,उस गोलेमें चूरण कीहुई सोना-माखी रख गोलेको वस्त्रमें बाँध कुलथीके क्काथमें दोलायंत्रके द्वारा एकदिन पकावै तौ सोनामाखी शुद्ध होजाती है ॥ (अथ परीक्षा) जो माखी तोडनेमें भीतरसे सुवर्णकी समान प्रकाशवाली हो और ऊपरसे किंचित् काली दीखै, तथा गहरे रंगवाली हो ऐसी सोनामाखी श्रेष्ठ होती है ॥ २० ॥ २१ ॥२२॥ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथोपरसानां समुदायेन शुद्धिमाह ।

व्यापयत्यङ्गमङ्गानितैलबिन्दुरिवाम्भसि ।
नविनाशोधनंसर्वेधातवःप्रबलादयः ॥ २९ ॥
रोगोपशमकर्त्तारःशोधनंतेनवक्ष्यते ॥ ३० ॥
प्रवालानांस्त्रीदुग्धेनभावनापश्चा-
द्धंण्डिकामध्येस्थापयित्वानिरुध्यो-
परिशरावकंदत्त्वालेपयेत् ।
वह्निसंदीपनंकृत्वाप्रहरद्वयेनाविद्रुमंम्रियते ॥ ३१ ॥
कुलत्थस्यपचेद्द्रोणंवारिद्रोणेनबुद्धिमान् ।
तेनपादावशेषेणक्काथेष्टौमणयःशिला ॥ ३२ ॥
आतपेत्रिदिनंशुष्कंक्काथसिक्तंपुनःपुनः ।
मुक्ताचूर्णंसमादायकरकाम्बुविभावितम् ॥ ३३ ॥
आतपेत्रिदिनंभाव्यंचूर्णितंमृत्युमाप्नुयात् ॥ ३४ ॥

(अत्रवर्षोपलंकरका ।)

अर्थ–जैसे जलमें तेलकी बूंद गेरनेसे फैलजाताहै तैसेही विनाशोधित प्रवा-लादिक धातु देहमें फैल रोगोंको शांति नहीं करती है इसकारण उनको

शोधना चाहिये । मूँगेको स्त्रीके दूधमें भावना देकर हाँडीमें रख सरैयासे ढक मट्टीके गारेको लेप करै, फिर दोप्रहर अग्नि देवै तो मूँगेकी भस्म होजाती है । आठसेर कुलथीको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै जब चौथाभाग जल शेष रहै तब उसमें वैदूर्यादि आठ प्रकारकी मणि और मैनशिलको बुझाकर वारंवार धूपमें सुखावै तो मणि और मुक्ता शुद्ध होजाते हैं । मोतियोंके चूर्णको ओलोक पानीमें डालके धूपमें तीनवार भावना देवे तो मोतीकी भस्म होजाती है ॥२९॥ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

शंखनीलांजनश्चैवपूर्ववच्छोधयेद्दिने ।
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्काथैर्भृंगराजद्रवैर्जतुम् ॥ ३५ ॥
मर्दयेदायसेपात्रेदिनाच्छुद्धिःशिलाजतोः ।
मेषीक्षीरेणदरदमम्लवर्गैश्चभावितम् ॥ ३६ ॥
सप्तवारंप्रयत्नेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ।
सूर्यावर्त्तवज्रकन्दंकदलीदेवदालिका ॥ ३७ ॥
शिग्रुकोषातकीवन्ध्याकाकमाचीचवायसी ।
आसामेकरसेनैवत्रिक्षारैर्लवणैर्युतम् ॥ ३८ ॥
भावयेदम्लवर्गेणदिनमेकंप्रयत्नतः
सौवीरंकान्तपाषाणंशुद्धभूनागमृत्तिका ॥ ३९ ॥
शंखोनीलाञ्जनंचैवसर्वेउपरसाश्चये ।
पृथग्भाव्यंविधानेनशुद्धिंयान्तिदिनेदिने ॥ ४० ॥
ततःपश्चात्तुतद्द्रावैर्दोलायंत्रेदिनंसुधीः ।
शुध्यन्तेनात्रसंदेहःसर्वेषुपरमाअमी ॥ ४१ ॥
मुंचंतिद्रुतसत्वांश्चमतंसाधारणंस्मृतम् ॥ ४२ ॥

अर्थ—शंख और सुरमेको मोतियोंकी समान एक दिनमें शोधना चाहिये । शिलाजीतको लोहेके पात्रमें डाल उसमें गोमूत्र, त्रिफलाका क्काथ और भांगरेका रस मिलाकर एकदिन खरलकरै तो शिलाजीत शुद्ध होजाताहै । सिंग्रफको भेड़के दूध और अम्लवर्गमें सातवार भावना देनेसे शुद्ध होजाताहै । सूर्यावर्त्त (हुलहुल), वज्रकन्द, केला, सोनैया, कड़वीतोरई, वनककोड़ा, मकोय

और काकादनी इनमेंसे किसीएकके रसमें जवाखार, सज्जी, सुहागा, पंचलवण और अम्लवर्ग मिलाले उससे एक एक दिनमें पृथक् पृथक् भावना देवै तो सुर्मा, कांतपाषाण, शुद्धभूनागमृत्तिका, शंख और कालासुर्मा आदि सर्व उपरस शुद्ध होजातेहैं। फिर इन पूर्वोक्त औषधियोंके रसमें दोलायंत्रके द्वारा पकानेसे एकदिनमें उपरोक्त सर्वप्रकारके उपरस शुद्ध होजातेहैं और सर्व सतको छोड़नेवाले होजातेहैं, यह साधारण मतहै ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथ सत्त्वपातनमारणमाह ।

गुग्गुलुंटंगणंलाक्षामज्जासर्जरसंपुनः ।
ऊर्णागुंजाक्षेत्रमीनमस्थीनिशशकस्यच ॥ ४३ ॥
गुडमध्वाज्यपिण्याकंतुत्थंपेष्यमजाजलैः ।
सर्वतुल्यंचधान्याभ्रंभूनागमृत्तिकापिच ॥ ४४ ॥
कान्तपाषाणचूर्णञ्चकठिन्युपरसाश्चये ।
मेलयेन्माहिषैःपंचदध्यादिगोमयान्तिकैः ॥ ४५ ॥
दृढंमर्द्यवटींकुर्यात्कर्षमात्रन्तुशोषयेत् ।
गोष्ठीयंत्रेधमेद्गाढमंगारैश्चचिरोद्भवैः ॥ ४६ ॥
त्रिवारंधमनादेवंसत्त्वंपततिनिर्मलम् ।
असाध्यान्मोचयेत्सत्त्वान्मृत्तिकादेश्चकाकथा ॥ ४७ ॥
लाक्षाआज्यंतिलाःशिग्रुटंगणंलवणंगुडम् ।
तालकार्द्धेनसंयोज्यच्छिद्रमूषांनिरोधयेत् ॥ ४८ ॥
पुटेपातालयंत्रेणसत्त्वंपततिनिश्चितम् ।
तालकंचूर्णयित्वातुच्छागीक्षीरेणभावयेत् ॥ ४९ ॥
वारत्रयंततोविद्धिमूलंपिष्ट्वातुमिश्रितम् ।
कृत्वाचगुडकंशुष्कंसत्त्वंग्राह्यंचपूर्ववत् ॥ ५० ॥

अर्थ—गूगल, सुहागा, लाखकीमींग, राल, ऊन, चोटली, खेतकी मछली, खरगोशकी हड्डी, गुड़, मधु, घृत, खल और तूतिया, इन सबको समानभाग लेकर बकरीके मूत्रमें पीसलेवे, तदनंतर इन सब औषधियोंकी समान धान्या-

भ्रक, गेमेकीमट्टी, कान्तपाषाण और खेलखडी आदि उपरस ले एकत्रकर भैंसके पंचामृतम दृढ मर्दनकर दोतोलेभरकी गोली बनाकर धूपमें सुखादेवै फिर पुराने कोयलोंकी आगसे गोष्ठीयंत्रमें तीनबार पकानेसे निर्मलसत्त्व पतित होता- है। इसके द्वारा असाध्य उपरसोंकाभी सत्त्व निकलजायहै, और मृत्तिका आदिकी तो क्या कथा ? ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ लाख, घी, तिल, सैंजिना, सुहागा, सैंधानोन और गुड यह सब समानभाग और इनसे आधाभाग हरिताल लेकर सबको एकत्रकर छिद्रमूषामें रख पातालयंत्रके द्वारा पकानेसे निश्चय सत्त्व पतित होताहै। हरितालके चूर्णको बकरीके दूधमें तीनबार भावनादेवै फिर पाढकी जडको पीस चूरन बना उस चूरनको हरिता- लमें मिला बडी बनालेवै, उन बडियोंको सुखाकर पूर्ववत् अग्निमें जलानेसे सत्त्व पतित होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अन्यमतम ।

तालकंमर्दयेद्दुग्धैःसर्पाक्षीवाथमूलकैः ।
पूर्ववद्ग्राहयेत्सत्त्वंछिद्रमूषांनिरुध्यच ॥ ५१ ॥
तालवच्चशिलासत्त्वंग्राह्यंतैरेवचौषधैः ।
तुल्येनटङ्गणेनैवध्मान्तंसत्त्वंचतुर्थकम् ॥ ५२ ॥
गोक्षीरैश्चतुत्थक्षीरैर्भाव्यमेरण्डतैलकैः ।
माक्षिकंदिनमेकन्तुमर्दितंवटकीकृतम ॥ ५३ ॥
अभ्रवद्धमनेकत्वंसम्यगस्याप्ययंविधिः ।
जयन्तीत्रिफलाचूर्णंहरिद्रागुडटंगणम् ॥ ५४ ॥
पादांशंटंगणस्येदंपिष्ट्वामूषांविलेपयेत् ।
नालिकासंपुटंबद्धाशोषयेदातपेखरे ॥ ५५ ॥
ग्राह्यंपातालयंत्रेचसत्त्वंध्मातंपुटेनच ॥ ५६ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रानित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे सर्वोपरसानां सत्वपातनं नाम सप्तमोपदेशः॥ ७ ॥

अर्थ–हरितालको दूध अथवा सर्पाक्षीकी जडके रसमें मर्दनकर छिद्रमूषामें रख पूर्ववत् पातालयंत्रमें पकानेसे सत्त्व निकलताहै ॥ ५१ ॥ पूर्वोक्त हरिता- लकी औषधी और समान भाग सुहागेको मनशिल साथ [illegible]

लकी समान पाक करनेसे मनाशिलका सत्त्व पतित होता है ॥ ५२ ॥ सोनामाखीको गायके दूधमें तूतियाके रसमें और अंडके तेलमें भावनादे, फिर एकदिन खरल कर बड़ी बना अभ्रकवत् पातालयंत्रमें पकानेसे सत्त्व पतित होताहै। जैती, त्रिफला, हलदी, गुड और सुहागा, इन सबका चूरन कर और उस चूरनसे चौगुना सुहागा मिला व बारीक पीस तिसके द्वारा मूषाका मध्यभाग लेप नलिकासम्पुटमें बद्ध कर तेजधूपमें सुखा पातालयंत्रके द्वारा पकानेसे सब उपरसोंका सत्त्व पतित होताहै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतसर्वोपरससत्त्वपातनं नाम सप्तमोपदेशः समाप्तः ॥ ७ ॥

अथ सर्वलौहानांशोधनमारणमाह ।

स्वर्णंतारंताम्रनागंवंगंकान्तंचतीक्ष्णकम् ।
मुण्डान्तमष्टधालौहंकाश्यारंघोषकंत्रिधा ॥ १ ॥
उपलौहाःसमाख्यातामण्डुरोलौहकिट्टकम् ।
एतेद्वादशधाशोध्यामार्याद्राव्याःपुटादिषु ॥ २ ॥
तैलेतक्रेगवां मूत्रेह्यारनालेकुलत्थकेः ।
क्रमात्प्राप्तंतथाततंद्रावेद्रावेतुसप्तधा ॥ ३ ॥
स्वर्णादिलौहपात्राणांशुद्धिरेषाप्रकीर्तिता ।
हेम्नःपादंमृतंसूतंपिष्टमम्लेनकेनचित् ॥ ४ ॥
पत्रेलिप्त्वापुटेपच्यादष्टाभिर्म्रियतेध्रुवम् ।
शुद्धानांसर्वलौहानांमारणेरीतिरीदृशी ॥ ५ ॥

अर्थ—सोना, रूपा, ताँबा, सीसा, राँग, कान्तलौह, तीक्ष्णलोह (ईसपात) और मुण्डलोह, पीतल तथा काँसी ऐसे लोहा दश प्रकारके हैं, मण्डूर और लोहेकी कीट ऐसे उपलोहा दोप्रकारकेहैं, और सर्व मिलकर यह बारहहैं, यह सर्वशोधन, मारण और पुटमें द्रावण करने चाहिये । तेल, तक्र, गोमूत्र, काँजी और कुलथीके काढेमें स्वर्णादि बारह लोहोंको क्रमसे सातसातबार बुझाता जाय, इसप्रकार स्वर्णादि लोहे शुद्ध होजातेहैं । सोनेमें चौथाभाग माराहुआ पारा मिलाकर काँजीमें खरलकरे, फिर उससे सुवर्णादिकोंके पत्रोंपै लेपकर

गजपुटमें पकावै, इसप्रकार आठबार पुट देनेसे सर्वप्रकारके लोहे मरजातेहैं । सर्वप्रकारके शुद्धलोहोंके मारनेकी यही रीतिहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ स्वर्णशोधनमाह ।

सौख्यंवीर्यंबलंहन्तिनानारोगंकरोतिच ।
अशुद्धंनसूतंस्वर्णतस्माच्छुद्धंतुमारयेत् ॥ ६ ॥
वल्मीकमृत्तिकाधूम्रगैरिकंचेष्टकापुटे ।
इत्याद्यामृत्तिकाःपंचजम्बीरैरारनालकैः ॥ ७ ॥
पिष्टालेप्यंस्वर्णपत्रंश्रेष्ठंपुटेनशुध्यति ।
भावयेन्मातुलुंगाम्लैस्त्रिदिनंपंचमृत्तिकाः ॥ ८ ॥
सैन्धवंभूमिभस्मापिस्वर्णशुध्यतिपूर्ववत् ॥ ९ ॥
नागैःसुवर्णरजतञ्चताप्यैर्गन्धेनताम्रंशिलयाचनागम् ।
तालेनवंगंत्रिविधंचलौहंनारीपयोहन्तिचहिंगुलेन १०॥

अर्थ—अशुद्धसुवर्णकीभस्म सेवनकरनसे—सुख, वीर्य, और बलका नाश होता है, तथा नानाप्रकारके रोग उत्पन्न होतेहैं, इसकारण प्रथम सुवर्णको शोध पीछे मारणा चाहिये । बँबँईकी मट्टी, धूम्रगेरु और ईंट आदिक पाँचप्रकारकी मट्टियोंको जम्भीरी नीबूका रस और काँजीमें खरलकर उसके द्वारा स्वर्णोंके पत्तोंपै लेपकर पुटपाककरनेसे सुवर्ण भले प्रकारसे शुद्ध होजाताहै । पाँचप्रकारकी मट्टी, सैंधानोन और भूमिभस्मको बिजोरेके रस और काँजीमें तीनदिन पर्यन्त भावनादे पश्चात् खरल कर फिर उसकेद्वारा स्वर्णके पत्रोंपर लेपकर स्वर्णको पुटमें पकानेसे शुद्धहोजाताहै । राँगके द्वारा सुवर्ण, सोनामाखीके द्वारा रूपा. गंधकके द्वारा ताँबाँ, मैनाशिलके द्वारा सीसा, हरितालके साथ वंग, स्त्रीके दूधके और सिंग्रफके साथ तीनोंप्रकारके लोहे मरजातेहैं ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

माक्षिकंनागचूर्णञ्चपिष्टमर्करसेनतु ।
हेमपत्रंपुटेनैवम्रियतेक्षणमात्रतः ॥ ११ ॥
स्वर्णार्द्धंपारदंदत्त्वाकुर्याद्यत्नेनपीठिकाम् ।
दत्त्वोर्द्ध्वाधोनागचूर्णंपुटनान्म्रियतेध्रुवम् ॥ १२ ॥
नागचूर्णंशिलावज्रीक्षीरेणपरियोजितम् ।

तेनालिप्यसुवर्णस्यकल्कश्चम्रियतेपुटात् ॥ १३ ॥
मृतंनागंस्नुहीक्षीरैरथवाम्लेनकेनचित् ।
पिष्ट्वालेप्यंस्वर्णपत्रंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ १४ ॥
आदायपेषयेदम्लैर्मृन्नागंचाष्टमांशकम् ।
बद्ध्वागजपुटेपच्यात्पूर्वनागयुतंयुतम् ॥ १५ ॥
एवंपुनःपुनःपच्यादष्टधाम्रियतेध्रुवम् ।
शुद्धसूतसमंगंधंमाक्षिकंचमहाम्लकैः ॥ १६ ॥
अष्टाभिश्चपुटैर्हेम्नोम्रियतेपूर्ववत्क्रियाम् ।
शुद्धसूतंसमंस्वर्णंखल्वेकुर्याच्चगोलकम् ॥ १७ ॥
अधोवैगंधकंदत्त्वासर्वतुल्यंनिरुध्यच ।
त्रिंशद्वनोपलैर्देयंपुटान्येवंचतुर्दश ॥ १८ ॥
निरुत्थंजायतेभस्मगंधंदेयंपुटेपुटे ।
स्वर्णस्यद्विगुणंसूतं याममम्ले॰ मर्दयेत् ॥ १९ ॥
अधोर्द्ध्वंमाक्षिकंपिष्ट्वामूषायांस्वर्णतुल्यकम् ।
तत्पृष्ठेमर्दितंहेमतत्पृष्ठेहेममाक्षिकम् ॥ २० ॥
देयंस्वर्णसमंतच्चपृष्ठेगंधंचतत्समम् ।
षड्वारंचूर्णितंदत्त्वारुद्ध्वामूषांधमेद्दृढम् ॥ २१ ॥
स्वभावशीतलंग्राह्यंतद्भस्मभागपंचकम् ।
टंगणंश्वेतकाचश्चभागैकश्चप्रयोजयेत् ॥ २२ ॥
त्रितयंमधुना॰॰नमिलितंगोलकीकृतम् ।
धान्याभ्रकस्यभागैकमधश्चोर्द्ध्वेश्चदापयेत् ॥ २३ ॥
निरुध्यतद्धमेद्गाढंमूषायांघटिकाद्वयम् ।
निरुत्थंजायतेभस्मतत्तद्योगेषुयोजयेत् ॥ २४ ॥
शुद्धमाक्षिकभागैकंभागंचावोटमाक्षिकम् ।
त्रिभागं॰तकंक्षिप्त्वात्रयमम्लेनमर्दयेत् ॥ २५ ॥

तद्गोलं तालयंत्रे तदायामत्रयं पचेत् ।
इत्येवंम्रियते स्वर्णं निरुत्थं नात्र संशयः ॥ २६ ॥
तथैवचराजवृक्षभल्लातैष्टङ्कणेनच ।
लिप्त्वा स्वर्णस्य पत्राणि रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥ २७ ॥
तैर्द्रवैश्च पुनः पिष्ट्वा म्रियते दशधा पुटे ।
हेममारभ्य तोलैकं मासैकं शुद्धनागकम् ॥ २८ ॥
लिप्त्वा देयन्तु तं चूर्णं तच्छुद्धैर्गन्धमाक्षिकैः ।
अम्लेन मर्दयेद्यामं लघुपुटे पचेत् ॥ २९ ॥
गंधं पुनः पुनर्देयं म्रियते दशभिः पुटैः ।
सुवर्णञ्च भवेच्छीतं तिक्तं स्निग्धं हिमं गुरु ॥ ३० ॥
बुद्धिविद्यास्मृतिकरं विषहारि रसायनम् ॥ ३१ ॥

अर्थ–सोनामाखी और वंगका चूरन आकके रसमें खरल करै, उसके द्वारा स्वर्णके पत्रोंके पुटमें पकानेसे सोनेकी तत्काल भस्म होजातीहै ॥ ११ ॥ एक भाग पारा और दोभाग सोना लेकर दोनोंको बारीक पीस पिट्टी बना उसके ऊपर और नीचे वंगका चूरन रख गजपुटमें पचानेसे सोनेकी भस्म होजातीहै॥ ॥ १२ ॥ राँगके चूर्ण और मैनशिलको थूहरके दूधमें खरल कर कल्क बनाले, उस कल्कसे सुवर्णके पत्रोंको लेपकर पुटपाक करनेसे सोनेकी भस्म होजातीहै॥ ॥ १३ ॥ जारितवंगको थूहरके दूधमें अथवा काँजीमें खरलकर कल्क बना उस कल्कके द्वारा सुवर्णके पत्रों पै लेपकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पकानेसे सोनेकी भस्म होजातीहै ॥ १४ ॥ सुवर्णसे आठमा भाग गेसेकी मृत्तिकाले अम्लरसमें खरलकर गजपुटमें पकावै, इसप्रकार आठपुट देनेसे सुवर्ण मरजाताहै ॥ शुद्ध-पारा, शुद्धगंधक और सोनामाखीको समानभाग लेकर नीबूके रसमें खरलकरै फिर आठबार गजपुटमें पकानेसे सोना मरजाताहै ॥ शुद्धपारा और सोना समानभाग लेकर खरलमें खरल कर गोला बनालेवै, फिर गोलेकी बराबर गंध-कका चूरन गोलेके नीचे धर गोलेको मूषामेंरख ३० उपलोंके द्वारा चौदहवार पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म बनजातीहै और हरेक पुटमें गंधकका चूरन देता जाय॥ एकभाग सुवर्ण और दोभाग पारा इनदोनोंको एकप्रहर काँजीमें खरल करै, फिर सुवर्णकी बराबर सोनामाखीका पीसकर मूषामें ऊपर और नीचे धर उस

के ऊपर सोनेको और सोनेके ऊपर सोनामाखीका और सोनामाखीके ऊपर गंधकका चूरन धरै इस प्रकार छैवार चूर्ण रख मूषाको बंदकर तेज अग्निसे पचावै, जब स्वयं शीतल होजावै तब उस भस्मको पांचभाग लेवै और सुहागा तथा सफेद कांच एक एक भाग लेवै पश्चात् इनको मधु और घीके साथ खरल कर गोला बनालेवै, तदनंतर धान्याभ्रक एक भाग लेकर मूषामें रखदेवै, उसके ऊपर गोला धर फिर उसके ऊपर धान्याभ्रक धर मूषाके मुखको वंदकर दोघड़ी पर्यंत तेज अग्निके द्वारा पकावै तो उत्तम भस्म बनजाय और यह भस्म सर्वयोगोंमें प्रयोगकरनी योग्य है ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ २४ ॥ शुद्धसोनामाखी एकभाग, कच्ची सोनामाखी दोभाग और पारा तीनभाग ले कांजीमें मर्दनकर गोला बनालेवै, उस गोलेको स्वर्णके पत्रोंपै लेपकर तीन प्रहर पातालयंत्रमें पकावै तो निःसन्देह सोनेकी भस्म बनजातीहै ॥ ॥ २५ ॥ २६ ॥ अमलतास, भिलावा और सुहागा इनसबको एकत्र खरल करै, उसको सुवर्णके पत्रोंपै लेपकर पश्चात् सम्पुटमें रख सातबार गजपुटमें पकावै तो सुवर्णकी भस्म बनजातीहै । एकतोला सोना, एकमासा वंग, एकमासा गंधक और एकमासा सोनामाखीको ले काँजीमें एकप्रहरपर्यन्त खरलकर सम्पुटमें रख दशवार लघुपुटमें पकानेसे सुवर्णकी भस्म बनजातीहै और हरेकपुटमें गंधक देताजावै । सोनेकी भस्म-शीतल, कड़वी, चिकनी, शीतवीर्य, भारी तथा बुद्धि, विद्या और स्मरणशक्तिको बढानेवाली है, एवं विषविनाशक और रसायन है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

अथ तारशोधनमारणमाह ।

आयुःशुक्रंबलंहन्तिरोगवंगंकरोतिच ।
अशुद्धममृतंतारंशुद्धमार्यमतोबुधैः ॥ ३२ ॥
नागेनटंकणेनैवद्रवितंशुद्धिमिच्छति ।
माक्षिकंगंधकंचैवमर्कक्षीरेणमर्दयेत् ॥ ३३ ॥
तेनलिप्तंरूप्यपत्रंपुटेनम्रियतेध्रुवम् ।
तारंत्रिवारनिक्षिप्तंतैलेज्योतिष्मतीभवेत् ॥ ३४ ॥
स्नुक्क्षीरैःपेषयेत्ताम्रंतारपत्राणिलेपयेत् ।
रुद्ध्वागजपुटेपच्यात्पूर्वोक्तैःपेषयेत्पुनः ॥ ३५ ॥

भूधात्रीमाक्षिकंतुल्यंपिप्पलीसैन्धवाम्लकैः ।
लिप्त्वातारस्यपत्राणिरुद्धासप्तपुटेपचेत् ॥ ३६ ॥
द्रवैःपुनःपुनःपिष्ट्वाम्रियतेनात्रसंशयः ।
तारपत्रैस्त्रिभिर्भागोभागैकंशुद्धमाक्षिकम् ॥ ३७ ॥
मर्द्यंजम्बीरजैर्द्रावैस्तारपत्राणिलेपयेत् ।
शोषयेद्रन्धयेत्तश्चत्रिंशद्वनोपलैःपचेत् ॥ ३८ ॥
चतुर्दशपुटैनैवंनिरुत्थंम्रियतेध्रुवम् ।
रौप्यपत्रचतुर्भागाद्भागैकंमृतवंगकम् ॥ ३९ ॥
अथवागंधतालेनलेप्यंजम्बीरपेषितम् ।
रुद्धात्रिःपुटैःपच्यात्पंचविंशद्वनोपलैः ॥ ४० ॥
म्रियतेनात्रसंदेहोगन्धोदयःपुटेपुटे ।
रसगंधौसमौकृत्वाकाकतुंडस्यमूलकम् ॥ ४१ ॥
मर्दयेन्महिषीक्षीरैःपिष्ट्वातंक्षालयेज्जलैः ।
हरिद्रागोलकेक्षिप्त्वागोलंहयपुरीषके ॥ ४२ ॥
क्षिप्त्वादिनैकविंशन्तंतद्गोलमुद्धरेत्पुनः ।
तत्पिष्ट्वातारपत्राणिलेप्यान्यम्लेनकेनचित् ॥ ४३ ॥
पुटैर्विंशतिभिर्भस्मजायतेनात्रसंशयः ।
भस्मनाचाम्लपिष्टेनमेलयेत्तालकंपुटैः ॥ ४४ ॥
जायतेतद्विधानेनसर्वरोगापहारकम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–अशुद्ध और अमारित रूपा–शुक्रनाशक, बलविनाशक, आयुविनाशक और रोगोंको उत्पन्नकरनेवालाहै, इस कारण रूपेको प्रथम शोध पीछे मारना चाहिये ॥ ३२ ॥ रूपा, वंग और सुहागेके साथ गलानेमे शुद्ध होजाता है । सोनामाखी और गंधकको आकके दूधमें खरल करै, उस खरलकिये हुए द्रव्यसे चाँदीके पत्रोंपै लेपकर गजपुटमें पकानेसे चाँदीकी भस्म होजातीहै । रूपेको गलाकर मालकाँगनीके तेलमें तीनवार बुझालेवै, फिर थूहरके दूधमें ताँबेको खरल कर तिसके द्वारा रूपाके पत्रोंपर लेपकर संपुटमें स्थापन कर

गजपुटमें पचावे, तदनंतर पूर्ववत् फिर भुईआँवला, सोनामाखी, पीपल, सैंधानोन और काँजीको एकत्र पीसकर तिस पिसेहुए द्रव्यके द्वारा चाँदी (रूपा) के पत्रोंपै लेपकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै इसप्रकार सातपुट देनेसे चाँदीकी भस्म होजाती है । तीनभाग चाँदीके पत्र और एक भाग शुद्ध सोनामाखी लेवै, सोनामाखीको जम्भीरी नीबुओंके रसमें खरल कर उसके द्वारा चाँदीके पत्रोंपै लेपकर धूपमें सुखादेवै, फिर तीस उपलोंकी अग्निके द्वारा चौदह पुट देनेसे निःसंदेह चांदीकी भस्म होजातीहै । चार भाग चांदीके पत्र और एकभाग वंगकी भस्म लेवै, फिर वंगकी भस्मको अथवा हरिताल और गंधकको जम्भीरी नीबुओंके रसमें खरल कर चांदीके पत्रोंपै लेपकरै,फिर सम्पुटमें रख पचीस उपलोंकी अग्निके द्वारा हरेकपुटमें गंधक देकर तीनवार पुटपाक करै तो निःसन्देह रूपेकी भस्म होजायगी । पारा, गंधक और कौआठोडीकी जड समान भागले भैंसके दूधमें पीस पानीसे धोडाले, फिर हलदीके गोलेमें और घोडेकी लीदके गोलेमें इक्कीसदिन रक्खे, फिर उसमेंसे निकाल काँजीमें पीसके चाँदीके पत्रोंपर लेप करै, फिर बीसवार पुटमें पकावै तो रूपेकी भस्म होजातीहै । और इसी भस्मको हरिताल तथा काँजीके साथ पीसकर पुटपाक करनेसे सर्व रोगोंको हरनेवाली भस्म बनजातीहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अथ ताम्रशोधनमारणमाह ।

अपक्वताम्रमायुर्घ्नंकान्तिघ्नंसर्वधातुहा ।
वान्तिमूर्च्छाभ्रमोत्क्लेशंनानारुक्कुष्ठशूलकृत् ॥ ४६ ॥
स्नुह्यर्कक्षीरलवणकांजिकैस्ताम्रपत्रकम् ।
लिप्त्वाप्रताप्यनिर्गुण्डीरसैःसिंच्यात्पुनःपुनः ॥ ४७ ॥
वारद्वादशदाहत्वंलेपनात्ताम्रसिंचनात् ।
खटिखालवणंतक्रैरारनालैश्चपेषयेत् ॥ ४८ ॥
तेनलिप्त्वाताम्रपत्रंततप्तंनिषेचयेत् ।
षड्वारमम्लपिष्टेननिर्गुण्ड्याशुविशुद्धये ॥ ४९ ॥
गोमूत्रेणपचेत्ताम्रपत्रंयामंदृढाग्निना ।
शुद्धंतेनात्रसंदेहोमारणंकथ्यतेऽधुना ॥ ५० ॥

गंधेनताम्रतुल्येन [illegible]म्लपिष्टेनलेपयेत् ।
कण्टकवेधिकृतंपत्रंसिद्धयित्वापुटेपचेत् ॥ ५१ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेत्तस्मिन्पादांशंगंधकंक्षिपेत् ।
जम्बीरै[illegible]लैर्वा[illegible]द्रवैर्वाथवाद्रवैः ॥ ५२ ॥
पिष्ट्वापिष्ट्वापचेत्तद्वत्सगंधंचचतुष्पुटे ।
मातुलुंगरसैःपिष्ट्वापुटमेकंप्रदापयेत् ॥ ५३ ॥
अनेनैवविधानेनताम्रपत्रंभवेद्ध्रुवम् ।
ताम्रस्यद्विगुणं[illegible]तंजम्बीराम्लेनमर्द्दयेत् ॥ ५४ ॥
सितशर्करयाप्येवंपुटत्रयेमृतंभवेत् ।
पाषाणभेदीमत्स्याक्षीद्रवैर्द्विगुणगंधकैः ॥ ५५ ॥
ताम्रस्यलेपयेत्पत्रंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ।
सप्तांशेनपुनर्गन्धंदत्त्वाद्रावैश्चपेषयेत् ॥ ५६ ॥
एवंसप्तपुटेपक्वंताम्रभस्मभवेद्ध्रुवम् ।
ताम्रस्यद्विगुणंसूतंजम्बीराम्लेनमर्द्दयेत् ॥ ५७ ॥
आदौमूषान्तरेक्षिप्त्वाधत्तूरस्यतुपत्रकम् ।
तत्पृष्ठेताम्रतुल्यन्तुगंधकंचूर्णितंक्षिपेत् ॥ ५८ ॥
तत्पृष्ठेमर्द्दितंताम्रंपूर्वतुल्यन्तुगंधकम् ।
आच्छाद्यंधत्तूरपत्रेरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ ५९ ॥
स्वांगशीतन्तुतच्चूर्णंभस्मीभवतिनिश्चितम् ।
किंचिद्गन्धेनचाम्लेनक्षालयेत्ताम्रपत्रकम् ॥ ६० ॥
तेनगंधेनसूतेनताम्रपत्रंप्रलेपयेत् ।
गंधेनपुटितंपश्चान्म्रियतेनात्रसंशयः ॥ ६१ ॥
ताम्रद्विगुणगंधेनचाम्लपिष्टेनतत्पुनः ।
क्षिप्त्वाह्यधोर्द्ध्वभागेनदेयापिष्टाम्लकैर्बुधः ॥ ६२ ॥
तत्पिण्डंभांडगर्भेतुरुद्ध्वा[illegible]ल्यांविपाचयेत् ।

यामैकंतीव्रपाकेनभस्मीभवतिनिश्चितम् ॥ ६३ ॥
सूतमेकंद्विधागंधंयामंकृत्वाविमर्दितम् ।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपत्रंस्थाल्यांगर्भेनिधापयेत् ॥ ६४ ॥
सम्यग्लवणयंत्रस्थंपार्श्वेभस्मनिधापयेत् ।
चतुर्यामंपचेच्चुल्ल्यांपात्रमुद्रेसुमयम् ॥ ६५ ॥
जलंपुनःपुनर्देयंस्वाङ्गशैत्यंविचूर्णयेत् ।
म्रियतेनात्रसंदेहःसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ६६ ॥
नानाविधंमतंताम्रंशुद्धयर्थंभागपंचकम् ।
भागैकंश्वेतकाचश्चभागपंचैकटंगणम् ॥ ६७ ॥
मूषायांमिश्रितंकृत्वाभागैकंताम्रपत्रकम् ।
ऊर्ध्वंदत्त्वानिरुध्याथध्मातैर्ग्राह्यंसुशीतलम् ॥ ६८ ॥
निर्दोषन्तुभवेत्ताम्रंसर्वरोगहरंभवेत् ।
अथवामारितंताम्रमम्लेनैकेनमर्दयेत् ॥ ६९ ॥
तद्गोलंशूरणस्यान्तेरुद्ध्वारुद्ध्वातुलेपयेत् ।
शुष्कंगजपुटेपच्यात्सर्वदोषहरोभवेत् ॥ ७० ॥
वान्तिभ्रान्तिविरेकश्चनकरोतिकदाचन ।
ताम्रंतीक्ष्णोष्णंमधुरंकषायंशीतलंसरम् ॥ ७१ ॥
कफपित्तक्षयपांडुकुष्ठंचरसायनम् ।
परिणामशूलमर्शांसिमंदाग्निंश्चविनाशयेत् ॥ ७२ ॥

अर्थ–कच्चाताँबा– आयु, कान्ति और सर्वधातुओंका नाश करैहै, तथा वमन, मूर्च्छा, भ्रम, उत्क्लेश, अनेकप्रकारके रोग, कुष्ठ और शूलको उत्पन्न करैहै ॥ ४९ ॥ थूहरकादूध, आककादूध, सैंधानोन और काँजीके साथ ताँबेके पत्रोंको लेपकर अग्निमें तपा बारहबार सम्हालूके रसमें बुझालेवै, फिर खडिया और सैंधानोनको तक्र और काँजीमें पीसकर उसको ताँबेके पत्रोंपै लेपकर बारंबार आगमें तपाकर छैवार काँजी एवं सम्हालूके रसमें बुझावै, इसप्रकार करनेसे ताँबा शुद्ध होजाताहै। ताँबेके पत्र गोमूत्रमें मिलाकर तेज अग्निमें एक-

प्रहर पचानेसे तांबा शुद्ध होजाताहै ॥ अब तांबेका मारण वर्णन करते हैं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ताँबेकी बराबर गन्धक ले कांजीमें खरल कर उसको उन ताँबेके पत्रोंपर लपेटै फिर उस कंटकबेधी ताँबेके पत्रोंको गजपुटमें पचावै, फिर उसको महीनपीस चूरण करले, इसके उपरान्त उसमें चौथाभाग गंधक मिला जम्भीरी नीबू काँजी और इन्द्रायनकी जडके रसमें अलग अलग पीसकर गंधक मिला चार पुट दे और बिजोरे नीबूके रसमें पीसकर एक पुटदे इसप्रकार पुटपाक करनेसे ताँबेकी भस्म होजाती है, एकभाग ताँबा और दोभाग पारा, इनको जम्भीरीके रसमें खरल कर खाँड-मिला, तीनबार पुटपाक करनेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै, पाषाणभेद, ब्राह्मी-घासका रस और दुगुना गंधक इन सबको खरल करके ताँबेके पत्रोंपर लपेटै, फिर उनको संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, फिर उसमें सातवाँ भाग गंधक मिला उपरोक्त औषधियोंके रसमें खरल करै, फिर सातबार पुटपाक करनेसे ताँबेकी राख होजातीहै, ताँबेसे दूनाभाग पारा लेकर नीबूकेरसमें खरल करै, फिर उसको मूषासम्पुटमें रख, ऊपरसे धतूरेके पत्ते रख, तिसके ऊपर ताँबेकी समान गंधक रख, उसपर मर्द्दन कियाहुआ ताँबा स्थापित कर, तिसके ऊपर ताँबेकीसमान गंधक रख, धतूरेके पत्तोंसे ढककर गजपुटमें पचावै, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले तो ताँबेकी भस्म बनजाती है ॥५०॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ किंचित् गंधक और काँजीके द्वारा ताँबेके पत्रोंको क्षालनकर, फिर उसी गंधक और पारेसे उपरोक्त ताँबेके पत्रोंको लेपकर गंधकके साथ गजपुटमें पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै । ताँबेसे दुगुना गंधक लेकर काँजीमें पीसलेवै, फिर तिसको ताँबेके नीचे तथा ऊपर रख हाँडीमें स्थापन कर, और उस हाँडीका मुख बंद कर चूल्हेपै चढा तीव्राग्निके द्वारा एकप्रहर पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै । एकभाग पारा और दोभाग गन्धक इन दोनोंको एकप्रहर मर्द्दनकर, फिर इनदोनोंके समान भाग ताँबेके पत्र ले एक स्थालीके बीचमें धर, भलेप्रकारसे लवणयंत्रमें स्थापन कर, दोनों पसलियोंपै राख धर चारप्रहर पर्यन्त चूल्हेपै चढाकर पचावै और उसकी पीठपै गोबर रख बारंबार जल देताजाय, फिर स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण-करले, इसप्रकार करनेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै; और यह ताँबेकी भस्म सर्वरोगोंमें प्रयोग करनी योग्यहै; अनेकप्रकारसे शुद्धकियाहुआ ताँबा पांच-भाग, श्वेतकाँच एकभाग, सुहागा पाँचभाग और ताँबेके पत्र एकभाग, इन सबको एकत्र मिला मूषामें रख मूषाको बंदकर पुटपाक करै, जब शीतल

होजाय तौ ग्रहण करले, इसप्रकार निर्दोष और सर्वरोगोंको हरनेवाली भस्म होजातीहै। ताँबेकी भस्मको काँजीमें पीस गोला बनाले, उस गोलेको जमीकंदके बीचमें धर गजपुटमें पचानेसे सर्वरोगोंको हरनेवाली भस्म होजातीहै। ताँबेकीभस्म—वमन, भ्रम और विरेचनको कभीभी नहीं करतीहै। तथा तीक्ष्ण गरम, मधुर, कषेली, शीतल, भेदक और कफ, पित्त, क्षय, पांडु, कुष्ठ, परिणामशूल, बवासीर और मंदाग्निको नष्ट करै है और रसायन तथा सारक है ॥ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

अथ नागशोधनमाह।

गवक्षीदो नागवंगौ कुष्ठगुल्मरुजाकरौ।
मेहपाण्डूदरवातकफमृत्युकरौ किल ॥ ७३ ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णेन मार्कदुग्धेन लेपयेत्।
नागपत्रन्तुतंशुष्कंद्रावयित्वानिषेचयेत् ॥ ७४ ॥
निर्गुण्डीद्रवमध्येतुततःपत्रन्तुकारयेत्।
लिप्त्वाभाव्यंपुनःसेच्यंसप्तवारांविशुद्धये ॥ ७५ ॥
निशातुम्बुरुबीजानिकोकिलाक्षंकुठारिकाम्।
गौरीफलाम्लिकाचण्डीक्षुद्राब्राह्मीसजीरकम् ॥ ७६ ॥
यथालाभेनभस्मैकंवज्रीक्षीरेणभावयेत्।
तन्मध्येभावितंनागंशुद्धेसेकन्तुसप्तधा ॥ ७७ ॥
अश्वत्थचिंचात्वग्भस्मनागस्यचतुरंशतः।
क्षिप्त्वाचुल्ल्यांपचेत्पात्रेचालयेल्लोहचट्टके ॥ ७८ ॥
यावद्भस्मभवेत्तच्चभस्मतुल्यंमनःशिलाम्।
जम्बीरैरारनालैर्वापिष्ट्वारुद्ध्वापुटेपचेत् ॥ ७९ ॥
स्वांगशीतंपुनःपिष्ट्वाविंशत्यंशैःशिलाम्लकैः।
एवंषष्टिभिःपुटेपाकोनागस्यप्रपिनिरुत्थितः ॥ ८० ॥
अथवानागपत्राणिचूर्णलिप्तानिखर्परे।
अतस्त्रौपाचयेद्यामंतद्भस्माचित्रकद्रवैः ॥ ८१ ॥

भर्जयेल्लौहजेपात्रे चालयमर्जुनदण्डकैः ।
यामषोडशपर्यन्तं द्रवंदेयंपुनःपुनः ॥ ८२ ॥
ण्डेनमर्दयेत्क्राथ्य मुद्धृत्यचित्रकद्रवैः ।
गोलयित्वानिरुध्याथषट्पुटेमारयेल्लघु ॥ ८३ ॥
चिंचाक्षमिक्षुभल्लातबलावज्रलताभवैः ।
अपामार्गार्जुनाश्वत्थभस्मभिर्भर्जयेद्दृढम् ॥ ८४ ॥
लोहपात्रेतुसप्ताहंतुल्यंभस्मानिचाशुच ॥
दण्डेपलाशकेचैवम्रियतेनात्रसंशयः ॥ ८५ ॥
पिष्ट्वागस्तिचभूनागंलिप्त्वापादंविशोधयेत् ।
तद्भाण्डेद्रावयेद्यामंदृढेभाण्डेविनिक्षिपेत् ॥ ८६ ॥
वासाचिंचिटयोःक्षीरंवासादलेविघट्टयेत् ।
यामैकंपाचयेच्चुल्ल्यांसमुद्धृत्यविमिश्रयेत् ॥ ८७ ॥
तच्चूर्णन्तुशिलाताप्यैर्वासकक्षारसंयुतैः ।
तच्चतुल्यंपूर्वनागाविंशदेकपुटेपचेत् ॥ ८८ ॥
द्विपुटंचिंचिटाक्षारैर्देयंवासारसैःसह ।
नागःसिन्दूरवर्णाभोम्रियतेसर्वकार्यकृत् ॥ ८९ ॥
कुलटामाक्षिकञ्चैवसमभागन्तुकारयेत् ।
अर्कपर्णेनतत्पिष्ट्वासीसपत्राणिमारयेत् ॥ ९० ॥
सतिक्तमधुरोनागो मृतोभवतिभस्मसात् ।
आयुष्कीर्तिवीर्यवृद्धिंकरोतिसेवनात्सदा ॥ ९१ ॥

अर्थ–कच्चाशीशा और वंग–कुष्ठ, गुल्म, प्रमेह, पाण्डु, उदररोग, वात, कफ और मृत्युको करतेहैं, सम्हालूकी जड़के चूर्णको भाँगरेके रसमें खरल करके शीशेके पत्रोंपे लेपकरके सुखादे, फिर उन पत्रोंको अग्निमें तपाकर सम्हालूके रसमें बुझादेवै; इसप्रकार सातवार अग्निमें तपाकर सम्हालूके रसमें बुझानेसे शीशा शुद्ध होजाताहै । हलदी, तोंबीके बीज, तालमखाना, कुठारिका, कुलथी, इमली, असवण, छोटीब्राह्मी और जीरा, इन सबकी भस्मकर थूहरके दूधमें भावना दे,

उसमें शीशेको गर्म करके सात भावनादे, इसप्रकार सातभावना देनेसे शीशा शुद्ध होजाताहै, पीतल और इमलीकी राख चौगुना शीशा मिला पात्रमें रख चूल्हे पर धरकर पचावै, और लोहेकी करछीसे चलातारहै, भस्म होनेपर भस्मकी बराबर मैनशिल मिलाकर जम्भीरी नीबू अथवा कॉंजीमें पीसकर संपुटमें रख गजपुटमें पकावै, स्वांगशीतल होनेपर बीसवाँ भाग मैनशिल और कॉंजीमें खरल कर छैबार गजपुटमें पकानेसे शीशेकी भस्म होजातीहै. शीशेके पत्रोंको चूनेसे लेपकर मट्टीकी कढ़ाईमें एकप्रहरपर्यंत पकाकर भस्म करले, उस भस्मको चीतेके रसमें डाल लोहेकीकढ़ाईमें सोलहप्रहरतक पचावै और अर्जुनवृक्षके दंडेसे सहज सहज चलातारहै, फिर चीतेके रसमें खरल कर गोला बना छै पुट देनेसे शीशा मरजाताहै । इमली, बहेड़ा, ईख, भिलावा, खिरेंटी, अस्थिसंहार, चिरचिटा, अर्जुन और पीपलवृक्ष, इन सबकी भस्मसे शीशेको भून लोहेके पात्रमें रख, ढाकके सोटेसे घोटनेसे शीशेकी भस्म होजातीहै । अगस्तियेके पत्तोंको पीस शीशेके ऊपर चौथाभाग लेप करे, फिर सुखाकर पात्रमें रख अग्निसे एक पहर द्रावण कर दृढ़ पात्रमें रखदे, फिर अडूसा और चिंचोटकतृणके खारको बाँसेके पत्तोंपर लपेटकर एक प्रहर चूल्हेपर चढ़ाकर पचावै, तदनन्तर उक्तचूर्णको मैनशिल, रूपामाखी, और अडूसेके खारमें मिलाकर इक्कीस पुटमें पकावै । फिर चिंचोटकतृणका खार और अडूसेका रस इनकी दो पुट देनेसे शीशेकी सिंदूरकी समान भस्म होजातीहै और यह भस्म सब कार्योंको सिद्ध करनेवाली है. मैनशिल और सोनामाखी समानभाग लेकर आकके पत्तोंमें खरलकरके शीशेके पत्रोंपै लेप करनेसे शीशेकी भस्म होजातीहै. शीशेकीभस्म—कड़वी, मधुर तथा आयु, कीर्त्ति और वीर्य वर्द्धक है ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥

अथ वंगमारणमाह ।

माक्षिकंहरितालञ्चपलाशस्वरसेनच ।
हृतकल्केनसंलिप्यवंगपत्राणिमारयेत् ॥ ९२ ॥
नागवच्छोधयेद्वंगंतद्वदश्वत्थचिंचयोः ।
[illegible]स्महरितालंचतुल्यमम्लेनकेनचित् ॥ ९३ ॥
पालाशोत्थद्रवैर्वाथगोलयित्वान्धयेत्पुटे ।

उद्धृत्यदशमांशेनतालेनसहमर्दयेत् ॥ ९४ ॥
पूर्वद्रावैःसह[illegible]गजपुटेपचेत् ।
एवंविंशत्पुटेपक्त्वामृतंभवतिभस्मसात् ॥ ९५ ॥
वंगपादेनसूतेनवंगपत्राणिलेपयेत् ।
चिंचावृक्षस्यसंगृह्यचान्तश्छन्नश्चतण्डुलैः ॥ ९६ ॥
पिष्ट्वातत्पिण्डमध्येतुवंगपत्राणिमिश्रयेत् ।
शिरीषरजनीचूर्णैःकुमार्याःशुभगोलकम् ॥ ९७ ॥
सूतलिप्तंवंगपत्रंगोलकेसमलेपितम् ।
रुद्ध्वागजपुटेपक्वंपूर्वसंख्यामृतोभवेत् ॥ ९८ ॥
अक्षभल्लातकंतोयैःपिष्ट्वातानिविलेपयेत् ।
ततस्तिलखलीमध्येक्षिप्त्वारुद्ध्वापुटेपचेत् ॥ ९९ ॥
गजाख्यंजायतेभस्मचत्वारिंशतिवंगकम् ।
सतिक्तलवणंवंगंपाण्डुघ्नंक्रिमिमेहजित् ॥ १०० ॥
लेखनंपित्तलंकिंचित्सर्वदेहभयापहम् ॥ १०१ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे स्वर्णादिवंगांतानां मारणं नामाष्टमोपदेशः ॥ ८ ॥

अर्थ–सोनामाखी और हरितालको ढाकके पत्तोंके रसमें खरल कर कल्क बनाले उस कल्कके द्वारा वंगके पत्रोंपै लेप करे, फिर गजपुटमें पकानेसे वंगकी भस्म होजातीहै, वंगको शीशेकी समान शोधना चाहिये । पीपल और इमलीका खार तथा हरिताल इन सबको नीबूके रसमें खरल करै अथवा ढाकके पत्तोंके रसमें खरलकर गोला बनावै, फिर पुटपाक कर दशमाभाग हरिताल मिला उपरोक्तद्रावमें पीस सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै; इस प्रकार बीस पुट देनेसे वंगकी भस्म होजातीहै । चौथाभाग पारा लेकर वंगके पत्रोंपै लेप करे, फिर इमलीके बीजोंको चावलोंके साथ बारीक पीस गोला बनालेवै, उस गोलेमें वंगके पत्रोंको रक्खै फिर सिरसके बीज, हलदी और घिकुवारके पट्ठेका चूरण मिला संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार बीस पुट देनेसे राँगकी भस्म होजातीहै । बहेड़ा और भिलावा इनको जलमें पीसकर वंगके पत्रोंपै लेप करै,

फिर उनको तिलकी खलमें रख गजपुटमें पकावै, इसप्रकार चालीस पुट देनेसे वंगकी भस्म होजातीहै ॥ वंगकी भस्म–कड़वी, नमकीन, लेखन, पित्तजनक तथा पाण्डु,प्रमेह, कृमि और सर्वरोग नाशक है ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

इति श्रीशालिग्रामवैश्यकृतरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां स्वर्णादिमारणंनामाष्टमोपदेशः समाप्तः ॥ ८ ॥

अथ कान्तलौहशोधनमारणमाह।

अशुद्धममृतंलौहमायुर्हानिरुजाकरम् ॥
हृत्पीडाश्वतृषांजाड्यंतस्माच्छुद्धंचमारयेत् ॥ १ ॥
पात्रेयस्मिन्प्रसरतिनचेत्तैलबिन्दुर्विसृष्टः।
हिंगुर्गन्धंविसृजतिनिजंतिक्ततांनिम्बकश्च ॥
पाकेदुग्धंभवतिशिखराकारतानैवभूमौ।
कान्तंलौहंतदिदमुदितंलक्षणोक्तंनचान्यत् ॥ २ ॥
कान्तंमृदुतरंताक्षररुक्माभंतिमिरंकरम्।
स्वादुर्यतोभवेन्निम्बकल्कोरात्रिर्निवेशितः ॥ ३ ॥
कान्तंतदुत्तमंयच्चरूप्येनावर्त्तितंमिलेत्।
सर्वरोगहरंह्येतत्सर्वकुष्ठहरंपरम् ॥ ४ ॥

अर्थ–अशुद्ध और कच्चा लोहा–आयुनाशक, रोग, हृदयरोग, पीड़ा, तृषा और जड़ताको उत्पन्नकरैहै, इसकारण ईसको प्रथम शोध फिर मारना चाहिये ॥ १ ॥ जिसके पात्रमें तेलकी बूँदें डालनेसे फैलें नहीं, और जिसके पात्रमें हींग रक्खी हुई अपनी गंधको छोड़देवे, जिसके पात्रमें नीमका रस रखनेसे कड़वेपनको त्यागदेवे और जिसकेपात्रमें दूध औटानेसे दूध शिखरके आकार ऊँचा होजावे, परन्तु पृथ्वीमें नहीं गिरे उसको कान्तलोहा कहतेहैं ॥ २ ॥ जो कान्तलोहा अत्यन्त मृदु (नरम) चाँदी और सुवर्णकी कान्तिवालाहो, तथा जिसके वरतनमें रात्रिको नीमका कल्क रखनेसे प्रातः–काल मीठा होजाय और जो रूपासे आवर्तित हो, वह कान्तलोहा उत्तम होताहै। कान्तलोहेकी भस्म सर्व प्रकारके कुष्ठ और सर्व प्रकारके रोग नाशक है ॥ ३ ॥ ४ ॥

छागशशरक्तसंलिप्तंत्रिवारंचाग्नितापितम् ।
कान्तादिमुण्डपर्यन्तंसर्वरोगहरंपरम् ॥ ५ ॥
त्रिफलाष्टगुणैस्तोयैस्त्रिफलाषोडशंपलम् ।
तत्क्काथेपादशेषेतुलौहस्यपलपंचकम् ॥ ६ ॥
कृत्वापत्राणितप्तानिसप्तवाराणिसेचयेत् ।
एवंप्रलीयतेदोषोगिरिजोलौहसम्भवः ॥ ७ ॥
त्रिविधंलौहचूर्णवागोमूत्रैःषड्गुणैःपचेत् ।
प्रक्षालयेदारनालेशोष्यंशुद्धिमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥
रक्तमालाहंसपादीगोजिह्वात्रिफलामृता ।
गोपालीतुम्बुरुर्दन्तीतुल्यगोमूत्रपेषितम् ॥ ९ ॥
अस्मिन्मध्येलौहपत्रंतप्तंतप्तंद्विसप्तधा ।
सेचयेत्कान्तमुण्डान्तंसर्वदोषापनुत्तये ॥ १० ॥
सर्वेष्वौषधकल्पानांलोहकल्पंप्रशस्यते ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनलौहमादौविमारयेत् ॥ ११ ॥
अयःपंचपलादूर्ध्वंयावत्पलत्रयोदशात् ।
आदौमंत्रस्ततःकर्मयथाकर्त्तव्यमुच्यते ॥ १२ ॥

मर्द्दनमंत्रः ।

"ओं अमृतोद्भवोद्भवाय स्वाहा ।"

बलिदानमन्त्रः ।

" ओं अमृतोद्भवाय हुँ स्वाहा ।"

"ओंनमश्चण्डवज्रपाणयेमहायक्षासनाधिपत-
यसुरुसुरुस्वाहा यक्षविद्याबलायस्वाहा ॥"

अर्थ—बकरेके रुधिर और खरगोशके रुधिरका तीनबार लोहेपै लेपकर तीनबार अग्निमें तपावै तौ कान्तादिमुण्डपर्यन्त सर्वप्रकारके लोहे सर्व प्रकारके रोगोंको हरनेवाले होजातेहैं। सोलहपल त्रिफलाको आठगुने जलमें क्काथ करै

जब जलकर चौथाभाग शेषरहै तौ पाँचपल लोहेके पत्र अग्निमें तपाकर उस क्राथमें सातबार बुझावै, इसप्रकार करनेसे लोहेका गिरिजदोष दूर होजाताहै ॥ तीनों प्रकारके लोहेके चूर्ण छैगुने गोमूत्रमें पकाकर काँजीमें धोनेसे लोहा शुद्ध होजाताहै । रक्तमाला (कन्दविशेष), हंसपदी, गोभी, त्रिफला, गिलोय, गोपालककडी, कड़वी तोंबी और दन्ती, इनसबको बराबर लेकर बराबरके गोमूत्रमें पीसे, फिर लोहेके पत्रोंको अग्निमें चौदह बार तपाकर इसमें चौदह-बार बुझावै, इसप्रकार करनेसे कांतादि लोहोंके सर्व दोष दूर होजातेहैं । सर्व-प्रकारके औषधकल्पोंमें लोहकल्प श्रेष्ठहै, इसकारण सर्वयत्नोंसे प्रथम लोहेको मारना चाहिये । पाँच पलसे तेरह पल पर्यन्त लोहेको लेकर "ॐ अमृतो-द्भवोद्भवाय स्वाहा" इस मंत्रको पढ़कर मर्दन करे "ॐ अमृतोद्भवाय विद्या-बलाय स्वाहा" इसमंत्रसे बलिदानकरै ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

हिंगुलस्यपलान्पंचनारीस्तन्येनपेषयेत् ।
तेनलोहस्यपत्राणिलेपयेत्पलपंचकम् ॥ १३ ॥
रुद्धागजपुटेपच्यात्कषायैस्त्रैफलैःपुनः ।
जम्बीरैरारनालैर्वाविंशत्यंशेनहिंगुलम् ॥ १४ ॥
पिष्ट्वारुद्धापुटेल्लोहंतथैवंपाचयेत्पुनः ।
चत्वारिंशत्पुटैरेवंकान्तंतीक्ष्णञ्चमुंडकम् ॥ १५ ॥
म्रियतेनात्रसन्देहोदत्त्वादत्त्वाचहिंगुलम् ।
अर्जुनस्यत्वचापेष्याकांजिकेनातिलोहिता ॥ १६ ॥
तन्मध्येलोहचूर्णञ्चकांस्यपात्रेविनिक्षिपेत् ।
दिनैकंभावयेद्घर्मेद्रवैःपूर्यपुनःपुनः ॥ १७ ॥
अर्जुनैःसारनालैर्वात्रिविधंमारयेदयः ।
दन्तीपत्रंद्रवंयच्चलोहचूर्णंविलोडयेत् ॥ १८ ॥
दिनैकंधारयेद्घर्मेद्रवंदेयंपुनःपुनः ।
रुद्धारात्रौपुटेपच्यादेभिर्द्रावैश्चभावयेत् ॥ १९ ॥
एवमष्टदिनंकुर्यात्त्रिविधंम्रियतेह्ययः ।

चिंचापत्रनिभंकुर्यात्रिविधंलोहपत्रकम् ॥ २० ॥
मृत्पात्रस्थंक्षिपेद्घर्मेदन्त्याद्रावैःप्रपूरयेत् ।
पत्रंपुनःपुनस्तावद्यावज्ज्वरतिवैत्वयः ॥ २१ ॥
म्रियतेतीव्रघर्मेणचूर्णीकृत्यनियोजयेत् ।
कान्तंतीक्ष्णंतथामुण्डचूर्णमत्स्याक्षजैर्द्रवैः ॥ २२ ॥
आतपेत्रिदिनंभाव्यंद्विदिनंचित्रकद्रवैः ।
त्रिकण्टकद्रवैरुयहंसहदेव्याद्रवैरुयहम् ॥ २३ ॥
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्काथेभावयेच्चत्र्यहंत्र्यहम् ।
धातक्याश्चततोमर्द्यंक्रमादेयंपुटंपुटम् ॥ २४ ॥
रुद्धागजपुटेनैवंमृतंयोगेषुयोजयेत् ।
द्रवैःकुरंटपत्रोत्थैर्लोहचूर्णंविमर्दयेत् ॥ २५ ॥
दिनैकमातपेतीव्रेद्रवैर्मर्द्यंत्रिकण्टकैः ।
वन्ध्याभृंगीपुनर्नव्योगोमूत्रैश्चदिनंपुनः ॥ २६ ॥
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्काथ्यातत्कषायेणभावयेत् ।
त्रिसप्ताहंप्रयत्नेनदिनैकंमर्दयेत्ततः ॥ २७ ॥
रुद्धागजपुटेपच्यादिदंक्काथेनमर्दयेत् ।
दिवामर्द्यंपुटंरात्रावेकविंशदिनानिवै ॥ २८ ॥
एकविंशदिनेनैवम्रियतेत्रिविधंह्ययः ।
माक्षिकंचशिलाह्यम्लैर्हरिद्रामरिचानिच ॥ २९ ॥
पिष्ट्वामर्द्यंलोहपत्रंतप्ततप्तंनिषेचयेत् ।
सप्तधात्रिफलाक्काथेजलेनक्षालयेत्पुनः ॥ ३० ॥
कुट्टयेल्लोहदण्डेनपेषयेत्रिफलाजलैः ।
षोडशांशेनलोहस्यदातव्यंमाक्षिकंशिला ॥ ३१ ॥
अम्लेनलोडितंरुद्धागजान्धकपुटेपचेत् ।
निरुत्थंजायतेभस्मकान्तंतीक्ष्णादिमुंडकम् ॥ ३२ ॥

तिन्दुफलस्यमज्जाभिर्लिप्त्वास्थाप्यातपेखरे ।
धारयेत्कांस्यपात्रस्थंदिनैकेनपुटत्यलम् ॥ ३३ ॥
लेप्यंपुनःपुनःकुर्याद्दिनान्तान्तंप्रलेपयेत् ।
त्रिफलाक्काथसंयुक्तंदिनैकेनमृतम्भवेत् ॥ ३४ ॥
स्थाल्यांवालोहपात्रेवालौहदार्व्याविलोडयेत् ।
पाचयेत्रिफलाक्काथेदिनैकंलोहचूर्णकम् ॥ ३५ ॥
तत्पिंडंत्रिफलातोयैःपिष्ट्वारुद्ध्वापुटेपचेत् ।
षोडशांशेनमूषायांनिर्वातेहर्निशंपचेत् ॥ ३६ ॥
एवंत्रिधाप्रकर्त्तव्यंस्थालीपाकंपुटान्तरम् ।
भृंग्याद्रावंतालमूलीहस्तीकर्णस्यमूलकम् ॥ ३७ ॥
शतावरीविदार्याश्चमूलक्काथेचत्रैफले ।
पिष्ट्वातत्पूर्ववत्स्थाल्यांपाच्यंपेष्यंपुटेत्रिधा ॥ ३८ ॥
ततःपुनर्नवातोयैर्दशमूलकषायकैः ।
बृहत्याश्चकषायैर्वाबीजपूरस्यतोयतः ॥ ३९ ॥
ब्रह्मबीजस्तथाशिग्रुक्काथेगोपयसापिवा ।
प्रत्येकेनप्रपेष्यादौपूर्वंगर्भपुटेपचेत् ॥ ४० ॥
भावयेत्तद्रवेणैवपुटान्तेयाममात्रकम् ।
प्रत्येकेनक्रमादेवपिष्ट्वापुटैश्चभावयेत् ॥ ४१ ॥
म्रियतेनात्रसंदेहःकान्तंतीक्ष्णंचमुण्डकम् ।
सर्वमेतत्स्मृतंलौहंध्मातव्यंमित्रपंचकैः ॥
यद्येवंस्यान्निरुत्थानंसेव्यंवारितरंभवेत् ॥ ४२ ॥

अर्थ–पाँचपल अर्थात् बीसतोले सिंग्रफको स्त्रीके दूधमें खरल करै, उससे पाँचपल लोहेके पत्र लपेटकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावे, फिर बीसभाग सिंग्रफको त्रिफलेके काढ़ेमें, जम्भीरी नीबुओंके रसमें अथवा काँजीमें पीसे, इससे पूर्वोक्तलोहेको लेपकर संपुटमें रख गजपुटमें पकावै, इसप्रकार चालीस पुट देनेसे

कान्तादि तीनोंप्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै और हरएकपुटमें सिंग्रफ देता-जावै। अर्जुनवृक्षकी छालको काँजीमें पीस उसमें लोहेका चूरनडाल काँसेके पात्रमें करके एकदिन धूपमें धरकर अर्जुन तथा काँजीके रसमें बारंबार भावनादेवै, फिर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचानेसे लोहे मरजातेहैं। दन्तीके पत्तोंके रसमें लोहेका चूरन खरलकर तीनदिन धूपमें रक्खे जब लोहा मरजाय तब शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार आठदिनपर्यंत करनेसे लोहे मरजातेहैं। इमलीके पत्तोंकी समान लोहेके पतले पत्रकर मिट्टीके बरतनमें धर दंतीका रस मिलाकर धूपमें रख बारंबार भावनादेवै, इसप्रकार तेज धूपमें रखनेसे लोहा मरजाताहै इसका चूरन करके काममें लाना चाहिये। कान्तलोह, तीक्ष्णलोह और मुण्डलोहका चूरनकर मछेछीके रसमें तीनदिन भिजोके धूपमें रक्खै फिर चीतेके रसमें दोदिन भिजो धूपमें धरै; फिर कटाई, कटेरी और गोखरूके रसमें तीन दिन भिजो धूपमें धरै, फिर सहदेईके रसमें तीन दिन भिजो धूपमें रक्खे, फिर गोमूत्रमें तीनदिन भिजो धूपमें धरै, तदनन्तर त्रिफलेके काढ़ेमें तीनदिन भिजो धूपमें धरै, फिर धायके फूलोंके रसमें खरल कर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार अनेकपुटदेनेसे तीनों प्रकारके लोहे मरजातेहैं, इनकी भस्म सर्वकर्म्मोंमें प्रयोग करनी चाहिये। लोहेके चूरणको कटसरैयाके रसमें मर्दन करै फिर कटाई, कटेरी औ गोखरूके रसमें धूपमें धरके खरल करै फिर बांझखखसा, भृंगी, पुनर्नवा और गोमूत्रमें एकदिन भावना देकर फिर गोमूत्रमें त्रिफलेको औटाकर काढाबना उसमें भावना देकर फिर इक्कीसबार मर्दनकर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, फिर एकदिन त्रिफलेके काढ़ेमें भावनादेकर खरल करै, इसप्रकार दिनमें तौ खरल करै और रात्रिमें पुट देताजाय, इस प्रकार इक्कीस दिन पर्यन्त करनेसे तीनों प्रकारके लोहे मरजातेहैं। सोनामाखी, मैनशिल, हलदी और मिरच, इन सबको नींबूके रसमें खरलकर तिसके द्वारा लोहेके पत्रोंपै लेपकरै, फिर अग्निमें तपाके त्रिफलेके काढ़ेमें बुझाताजाय, इस प्रकार सातवार बुझाकर पानीसे धोवै, फिर लोहेके दंडेसे कूटकर त्रिफलेके रसमें खरल करै, फिर लोहेसे सोलहवाँभाग सोनामाखी और मनशिल मिला नीबूके रसमें मर्दनकर अंधमूषामें रख मुख बंदकर गजपुटमें पचानेसे तीनों प्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै। तेंदूकी मींगसे लोहेके पत्रोंको लेपकर काँसेके बरतनमें धर धूपमें सुखावै, फिर एकदिन पुटपाककरै फिर इसीप्रकार बारंबार तेंदूकी मींगसे लेपकर पुटपाककरके त्रिफलेके काढ़ेमें मिलानेसे एकदिनमें लोहेकी भस्म होजातीहै। लोहेके चूरनको कढ़ाईमें अथवा लोहेके बासनमें डाल त्रिफलेके काढ़ेमें

पकावै, और लोहेकी करछीसे चलाताजाय, फिर उसका गोलाबनाकर उस गो-
लेको त्रिफलेके काढेमें खरलकर सुखादे, फिर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै
और इसका सोलहवाँ भाग मूषामें रख रात्रिदिनमें तीनबार स्थालीपाक करै,
फिर भृंगीका रस, मूसली, हस्तिकर्णपलाशकीजड़, शतावर, विदारीकंद, और
त्रिफलेके काढ़ेमें खरलकर पूर्ववत् तीनबार स्थालीपाक करै, फिर पुनर्नवेके रसमें
दशमूलके काढ़ेमें, बृहतीके काढ़ेम, बिजोरे नीबूके रसमें ढाकके बीजोंके क्काथमें,
सौंजिनेके काढेमें और गोमूत्रमें पीसपीसकर एकदिन पुटद्वारा स्थालीपाक कर
नेसे कान्तादितीनोंप्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै। सर्वप्रकारके मृतलोहोंको
मित्रपंचकेसाथ अग्निमें फूँकनेसे पानीपै पैरनेवाली सुन्दरभस्म होजातीहै ॥१३॥
॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥
॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥
॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

मतान्तरम्।

मध्वाज्यंमृतलौहञ्चसरूप्यंसंपुटेक्षिपेत् ॥
रुद्ध्वा[illegible]रूप्यञ्चपूर्वमानकम् ॥ ४३ ॥
तदालोहंमृतंविद्यादमृतंमारयेत्पुनः ॥ ४४ ॥

अर्थ–सहत, घृत और मृतलोहेको रूपाके सम्पुटमें रख मुख बन्दकर अग्नि
जलानेसे लोहेकी भस्म होजातीहै, यदि एकबारमें भस्म न हो तो फिर पुटपाक
करै ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अथ शोधनमाह।

गंधकंतुमृतंलौहंतुल्यंखल्वेविमर्दयेत्।
दिनैकंकन्यकाद्रावैरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ ४५ ॥
इत्येवंसर्वलोहानांकर्त्तव्योऽयंनिरुत्थितः ॥ ४६ ॥

अर्थ–गंधक और मृतलोहेको खरलमें डालकर एक दिन घीकुवारके रसमें
मर्दनकरै, फिर उसका गोला बना उस गोलेको सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावे,
इस प्रकार करनेसे सर्वप्रकारके लोहे शुद्ध होजातेहैं ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

अथ सिद्धमते लौहमारणमाह।

शुद्धसूतंद्विधागंधंकृत्वाखल्वेतु[illegible]लीम्।
द्वयोःसमंलोहचूर्णंमर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ ४७ ॥

यामद्वयात्समुद्धृत्यतद्गोलंताम्रपात्रके ।
आच्छाद्यैरण्डपत्रैश्चयामार्द्धेनोष्णतांव्रजेत् ॥ ४८ ॥
धान्यराशौन्यसेत्पश्चात्रिदिनान्तेसमुद्धरेत् ।
संपिष्यगालयेद्वस्त्रेसद्योवारितरंभवेत् ॥ ४९ ॥
कान्तंतीक्ष्णंतथामुंडंनिरुत्थंजायतेमृतम् ।
स्वर्णादीन्मारयेदेवंचूर्णीकृत्यतुलोहवत् ॥ ५० ॥
सिद्धयोगमिदंख्यातंसिद्धानांसंमुखागतम् ।
अन्नभूतमायसाद्यंसर्वरोगज्वरापहम् ॥ ५१ ॥
त्रिफलारससंयुक्तंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ५२ ॥
मृतानिलोहानिवशीभवन्ति
निघ्नंतियुक्त्याह्यखिलामयानि ।
अभ्यासयोगाद्दृढयोगसिद्धं
कुर्वन्तिरुङ्मृत्युजराविनाशनम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—एकभाग शुद्धपारा और दोभाग गंधकको मर्दन कर कजली बनावै, फिर इनदोनों समान लोहेका चूरन मिश्रितकर दोप्रहर घीकुवारके रसमें खरलकरके गोला बनावै, फिर उस गोलेको ताँबेके पात्रमें रख उसके ऊपर अंडीके पत्तोंको ढक जब वह गरम होजाय तब धानोंके ढेरमें तीन दिन रक्खै, फिर उसमेंसे निकाल बारीकपीस कपड़ेमें छान लेवै इसप्रकारकरनेसे जलमें तिरनेवाली लोहेकी भस्म होजातीहै । इसीप्रकार सर्व लोहे और स्वर्णादिकी भस्म होजातीहै । इसको सिद्धयोग कहतेहैं, और यह सिद्धोंके मुखसे सुनाहै । अन्नके कोठेमें रक्खा हुआ मृतलोहा सर्वप्रकारके ज्वरादि रोगोंको हरैहै । लोहेकी भस्म त्रिफलेके साथ सर्वरोगोंमें देनी चाहिये । ऐसे सर्वप्रकारके मारेहुए लोहे वशीभूत, और सर्वप्रकारके रोगोंको हरनेवाले होतेहैं, तथा इनको अभ्याससे सदैव सेवन करै तो जरा और मृत्यु तथा रोगोंको हरैहै ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथ मृतलोहस्यामृतीकरणम् ।

तोयाष्टभागशेषेणत्रिफलापलपंचकम् ।
घृतंक्वाथस्यतुल्यंस्याच्चूर्णतुल्यंमृतायसम् ॥ ५४ ॥

पाचयेत्ताम्रपात्रेचलौहदार्व्याविचालयेत् ।
मृद्वग्निनापचेत्तावद्यावज्जीर्यतिगंधकम् ॥ ५५ ॥
लौहतुल्याशिवायोज्यासुपक्कमेवतारयेत् ॥
योगवाहमिदंख्यातंमृतलौहंमहामृतम् ॥ ५६ ॥
एवंकान्तस्यतीक्ष्णस्यमुण्डस्यापिविधिक्रमः ।
गुडस्यकुडवेपक्कंलौहभस्मपलान्वितम् ॥ ५७ ॥
कोलप्रमाणंरोगेषुतच्चयोगेनयोजयेत् ।
घृतंतुल्यंमृतंलौहंलौहपात्रेगतंपचेत् ॥ ५८ ॥
जीर्णेघृतंसमादाययोगवाहेषुयोजयेत् ॥ ५९ ॥
ओंअमृतेनभक्षयायनमः । अनेनमनुनालौहंभक्षयेत् ।
आयुर्वीर्यंबलंदत्तेपाण्डुमेहादिकुष्ठजित् ।
आमवातहरंलौहंवलीपलितनाशनम् ॥ ६० ॥

अर्थ—पाँचपलत्रिफलाको आठभाग जलमें पचावे, जब आठवाँ भाग बाकी रहे तब उसके समान घृत और मृतलोहेका चूरन मिलाकर गंधकके साथ ताँवेके पात्रमें पकावे और लोहेकी करछीसे चलाताजावे, जबतक गंधक जीर्ण न हो, तबतक मृदुअग्निसे पचावे, फिर लोहेकी समान हरड़ मिलाले, जब भलेप्रकार पकजावे तब उतार लेवे, इसप्रकार मृतलोहा अमृतरूप होजाताहै, और यह योगवाहीहै । इसीप्रकार कान्तलोह, तीक्ष्णलोह और मुण्डलोहकी विधिका क्रम जानना । बत्तीस तोले गुडको पका उसमें चार तोले लोहेकी भस्म मिला बेरकी बराबर प्रयोग करनेसे सर्वरोगोंको दूर करताहै । घृत और लोहेकी भस्मको बराबर लेकर लोहेके बासनमें पकावे, जब घृत जीर्ण होजाय तब उतारले, यह योगवाही योगोंमें प्रयोगकरना योग्यहै । " ओं अमृते भक्षाय नमः " इसमंत्रको पढकर भक्षण करै । लोहेकीभस्म—आयु, वीर्य, और बलको देनेवालीहै, तथा पाण्डु, प्रमेह, कोढ, आमवात और वली पलित रोगों को हरनेवाली है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

अथोपलोहानांशोधनमारणमाह ।

त्रिक्षारंपंचलवणंसप्तधाम्लेनभावयेत् ।
कांस्यावघोषपत्राणितिलकल्केनलेपयेत् ॥ ६१ ॥

रुद्ध्वागजपुटेपच्याच्छुद्धिमायान्तिनान्यथा।
ताम्रवन्मारणंतेषांकृत्वासर्वत्रयोजयेत् ॥ ६२ ॥
कांस्यंकषायमुष्णंचलघुरूक्षंचतिक्तकम्।
कफपित्तरुजंहन्तिदृढदेहायुवर्द्धनम् ॥ ६३ ॥
वीतिकाचगलंरूक्षमतिक्तलवणंसरम्।
शोधनंसर्वरोगघ्नंबलवीर्यायुवर्द्धनम् ॥ ६४ ॥

अर्थ–सज्जी, सुहागा, जवाखार, सेंधानोन, कालानोन, खारी और सांभर इन सबको कांजीमें सातवार भावना देवै, फिर इसमें तिलकल्क मिलाके, काँसी और पीतलके पत्रों पै लेप करै फिर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै तो कांसी और पीतल शुद्ध होजावे। इनकी तांबेकी भस्मकर सर्व रोगोंमें देनी चाहिये। कांसीकी भस्म–कषेली, गरम, हलकी, रूखी, कडवी, कफपित्तरोगनाशक, देहको दृढकरनेवाली और आयुको बढानेवाली है। पीतलकी भस्म–रूखी, किंचित् कड़वी, लवणरसान्वित, सारक, शोधन, तथा बल, वीर्य और आयुको बढानेवाली है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

अथ मंडूरसंस्कारः।

अल्पाङ्गारेधमेत्किट्टंलोहजंचगवांजलैः।
सेचयेदक्षपत्रैश्चसप्तवारंपुनःपुनः ॥ ६५ ॥
मण्डूरोऽयंसमाख्यातःशुद्धंश्लक्ष्णंनियोजयेत्।
किट्टाच्छतगुणंमुण्डंमुण्डात्तीक्ष्णंशताधिकम् ॥ ६६ ॥
तीक्ष्णाल्लक्षगुणंकान्तंभक्षणात्कुरुतेगुणम्।
तस्मात्कान्तंसदासेव्यंजरामृत्युहरंपरम् ॥ ६७ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे कान्तादिकिट्टमारणं नाम नवमोपदेशः ॥ ९ ॥

अर्थ–लोहेकी किट्टको अंगारोंमें तपाके सातवार गोमूत्रमें और सातवार बहेड़ेके पत्तोंके रसमें बुझावै, इसप्रकार करनेसे मण्डूर बनजाताहै। यह शुद्धमंडूर सर्वकर्मोंमें योजना चाहिये। लोहेकी किट्टसे सौगुण मंडूरमें, मण्डूरसे सौगुण

अधिक तीक्ष्ण लोहेमें, और तीक्ष्णलोहेसे अधिक लक्षगुण कान्तलोहेमें हैं । ये गुण भक्षणकरनेमें हैं । इसकारण जरा और मृत्युनाशक कान्तलोहा सदैव सेवन-करना चाहिये ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्राम-वैश्यकृतकान्तादिकिट्टमारणं नाम नवमोपदेशः समाप्तः ॥ ९ ॥

नानाविधानि तैलपातनान्याह ।

तैलानांपातनंवक्ष्येसूर्यपाकेऽप्यथानले ।
यंत्रयोगेनयत्तैलंग्राह्यंयोगेषुयोजयेत् ॥ १ ॥
धत्तूरबीजचूर्णानिवस्त्रपूतानिकारयेत् ।
आलिप्यकांस्यपात्रन्तुधारयेदातपेखरे ॥ २ ॥
सुतप्तंवस्त्रपूतंचपातयेत्तैलमाहरेत् ।
शिग्रुपुष्करबीजानांबीजस्यमाकुजस्यच ॥ ३ ॥
ग्राह्यंधत्तूरवत्तैलमेकैकस्यपृथक्पृथक् ।
यथाधत्तूरजंतलंक्काथाद्धर्मेसमुद्धृतम् ॥ ४ ॥
तथासर्वत्रतैलानिसंग्राह्यान्यौषधान्तरैः ।
अंकोटस्यापितैलंस्यात्काकतुण्डचासमूलया ॥ ५ ॥
बाकुचीदेवदाल्याश्चककोंटीमूलतोभवेत् ।
अपामार्गकषायेणतैलंस्याद्विषतुण्डजम् ॥ ६ ॥
मूलक्काथैःकुमार्यास्तुतैलंजैपालजंभ्भवेत् ।
क्काथेनरक्तमार्गस्यबाकुचीतैलमाहरेत् ॥ ७ ॥
क्काथेनचेन्द्रवारुण्यास्तैलमारग्वधंभवेत् ।
काकतुण्डचापामार्गोत्थक्काथात्तैलंसमाहरेत् ॥ ८ ॥
बीजानिकटुतुम्ब्याश्चगोमथनेनविलोडयेत् ।
शुष्कंधान्यतुषैःसार्द्धंकुट्टयेच्चउलूखले ॥ ९ ॥
निस्तुषंतंविचूर्ण्याथ भृंगराजरसैःसह ।
मर्दयित्वातपेतैलंगृह्णीयात्पीडनेसति ॥ १० ॥

कृष्णायाःकाकतुण्डयाश्चबीजंचूर्णानिकारयेत् ।
कान्तपाषाणचूर्णञ्चएकीकृत्यनिरोधयेत् ॥ ११ ॥
...शिगतंपक्त्वाउद्धृतेतैलमाहरेत् ।
धात्रीफलरसैर्भाव्यंचूर्णपाषाणबीजकम् ॥ १२ ॥
दिनैकंचततोयन्त्रेतैलंग्राह्यञ्चतैलके ।
गुंजाकरञ्जफलञ्चनरमूत्रेणभावयेत् ॥ १३ ॥
सप्तवारंततोघर्मेलेपयेत्कांस्यभोजनम् ।
उद्धृत्यधारयेद्घर्मेतैलंपततिपीडनात् ॥ १४ ॥
वर्द्धमानारनालेनपिष्ट्वाचूर्णविभावयेत् ।
ज्योतिष्मत्युत्थबीजानिआतपेतैलमाहरेत् ॥ १५ ॥
पुत्रंजीवस्यबीजानांचूर्णमगस्तिबीजजम् ।
आम्रातवत्प्रकर्त्तव्यंततस्तैलंपृथक्पृथक् ॥ १६ ॥
नारिकेलाम्बुनाभाव्यंबिल्वबीजस्यचूर्णकम् ।
दिनैकंतैलयंत्रेणतैलमाकृष्ययोजयेत् ॥ १७ ॥
निस्तुषांकोलबीजानांसुखंकिंचिद्विघर्षयेत् ।
प्रलेपयेत्कांस्यपात्रेपिष्ट्वाचणकलेपने ॥ १८ ॥
तन्मुखेटंकणंचूर्णकिञ्चित्किंचित्प्रलेपयेत् ।
धारयेदातपेतीव्रेमुखात्तैलंसमाहरेत् ॥ १९ ॥
शमीचूर्णसमंपिष्ट्वाछिद्रभाण्डेनिवेशयेत् ।
छिद्राधःस्थापयेद्भाण्डंछिद्रेकेशंचदापयेत् ॥ २० ॥
जलेनसेचयेद्द्रव्यंछिद्राधोग्राहयेच्चतम् ।
तन्मध्येघृतकेशस्यक्षिपेदूर्ध्वंपुटंशनैः ॥ २१ ॥
तत्क्षणाद्द्रवरूपञ्चकेशतैलमिदंभवेत् ।
अपक्वभानुपत्राणांरस...भावयेत् ॥ २२ ॥

समस्तंबीजचूर्णञ्चउक्तानुक्तंपृथक्पृथक् ।
आतपेमुच्यतेतैलंसाध्यासाध्यंनसंशयः ॥ २३ ॥
तथैवोत्तरवारुण्याःकषायेणसमाहरेत् ।
तैलंसमस्तबीजानांग्राहयेदातपेखरे ॥ २४ ॥
सर्वबीजास्थिमांसानांशुष्कंपिष्ट्वाह्यनेकधा ।
सर्वबीजेषुवातैलंग्राह्यंपातालयन्त्रके ॥ २५ ॥
वंशादिसर्वकाष्ठानांनारिकेलकपालकम् ।
तुषधान्यादिबीजानांगर्भयंत्रेणतैलकम् ॥ २६ ॥
ग्राहयेत्सर्वबीजानांतच्चयोगेषुयोजयेत् ॥ २७ ॥

अर्थ—सूर्यकी धूपमें और अग्निके योगसे तैलोंका पातन वर्णन करते हैं, जो यंत्र (कोल्हू) के योगसे तेल निकाला जाय वह तेल सब योगोंमें योजना चाहिये ॥ १ ॥ धतूरेके वीजोंको वारीक पीस चूरन करले, उस चूरनको वस्त्रमें छान कर जड़सहित इन्द्रायनके क्वाथमें बिलोवे, फिर इसको कांसीके पात्रमे लेपकर धूपमें धरदेवे, जब गरम होजाय तब वस्त्रमें छानकर तेलको ग्रहण करे । सैंजिनेके वीज, पोहकरमूलके बीज, और भांगरेके बीज, इन सबका तेल अलग अलग धतूरेके बीजोंकी समान निकाले, जिसप्रकार धतूरेके वीजोंको धूपमें धर तेल निकालाहै, उसी प्रकार सर्व औषधियोंका तेल निकाले, मूलसहित कौआठोड़ीके क्वाथके साथ अंकोलका तेल, बाँझककोड़की जड़के द्वारा देवदाली और बापचीका तेल अपामार्ग (चिरचिटा) के क्वाथसे, विषतुण्डीका तेल घीकुवारकी जड़के क्वाथसे, जमालगोटेका तेल लालचिरचिटेके द्वारा वापचीका तेल इन्द्रायणके क्वाथके द्वारा, अमलतासका तेल और चिरचिटेके क्वाथसे काकजंघाका तेल निकलताहै । कड़वीतोंबीके बीज गोबरमें सानकर सुखावे, फिर धानोंकी भूसीके साथ ओंखलीमें कूट तुषरहित कर चूरन करले, उस चूरनको भाँगरेके रसमें खरल कर धूपमें वस्त्रके द्वारा तेलको ग्रहणकरे । पीपल और कौआठोड़ीके बीजोंको एकत्र पीसकर चूरन करले, फिर उसमें कान्तपाषाणका चूरन मिला पात्रमें रख मुख बंदकर धानोंके ढेरमें धरदेवे, फिर कुछेक दिनोंमें निकालकर तेल निकाले । पाषाणबीजके चूरनको आमलेके रसमें भावना देकर एकदिन यंत्रमें डाल तेलको ग्रहणकरे । चोंटली और करंजके फलोंको

बारीक पीसकर चूरन करले उस चूरनको मनुष्यके मूत्रमें सातवार भावना देकर काँसीके पात्रपै लेपकर धूपमें धर पीड़न करनेसे तेल निकलताहै । अंडके बीज और मालकांगनीके बीजोंको काँजीमें भावना देकर धूपमें धरनेसे तेल निकलताहै । जियापोता और अगस्तियेके बीजोंका तेल आम्रातकके तेलकी समान निकलताहै । बेलके बीजोंको नारियलके जलमें भावनादे एकदिन तैलयंत्रमें पेल तेल ग्रहणकरना चाहिये । निस्तुष अंकोलके बीजोंका मुख किंचित् घिसकर कांसीके पात्रमें रख तिसपै चनोंके चूरनका लेप करै फिर उसके मुखपै कुछ कुछ सुहागेके चूरनका लेप करै, फिर धूपमें धरनेसे सुखपूर्वक तेल निकलताहै । समीके बीजोंका चूरनकर छिद्रयुक्तभाण्डमें रक्खै, और उसभाण्डके छिद्रमें बालोंको रक्खै, और छिद्रके नीचे एकभाण्ड और धरै, उसद्रव्यको जलसे सींचताजाय, जो छिद्रमेंसे निकल दूसरे पात्रमें जावै, उसको लेकर बालोंयुक्तपात्रमें धीरे २ पुटदेवै, इसप्रकार पुटपाक करनेसे तत्क्षण जो द्रव्य निकले उसको केशतेल कहतेहैं । सर्व प्रकारके बीजोंका चूरन अलग अलग कच्चे आकके पत्तोंके रसमें भावना देकर धूपमें धरनेसे निःसन्देह तेल निकलताहै । इन्द्रायनके क्काथमें सबद्रव्योंके बीजोंको भावना देकर तेज धूपमें धरनेसे तेल निकलताहै । सर्वप्रकारके बीज, अस्थि और मज्जादिको सुखाकर अनेकबार पीस पातालयंत्रके द्वारा तेल निकालना चाहिये । वंशादि सर्व काष्ठ, नारियलकी खोपरी और तुपधान्यादिके बीज, इन सबका तेल गर्भयंत्रके द्वारा निकालना चाहिये । इसप्रकार सब बीजादिकोंका तेल निकालकर सर्वयोगोंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथान्यमूलिकाविधिमाह ।

वत्सनाभंविषंस्वादुदीपनंकफवातजित् ।
त्रिदोषशमनंयोगयुक्तंसुधामयंभवेत् ॥ २८ ॥
बृंहणंबलवीर्यस्यवाडवाग्निशतोपमम् ।
सन्निपातेप्रतीकारेप्रभवःप्रभवोऽस्यहि ॥ २९ ॥
उद्धृतंफलपाकान्तेनवंस्निग्धंघनंगुरु ।
अव्यापकंविषहरंवातातपविशोषितम् ॥ ३० ॥

रक्तसर्षपतैलेनलिप्तवाससिधारयेत् ।
अथवापियथाप्राप्तं विषंगोमूत्र संयुतम् ॥ ३१ ॥
आतपेत्रिदिनंशुष्कंनिहितंवीर्यधृग्भवेत ।
मृतंसूताभ्रकंलोहंविषञ्चतुल्यवीर्यकम् ॥ ३२ ॥
तस्माद्विषंयोगवाहेयोज्यंयोगेरसायने ।
तानिचैवतुमानानि अष्टौपड्वाचतुर्थकान् ॥ ३३ ॥
मात्रात्रयंसमाख्यातमुत्तमाधममध्यमम् ।
दातव्यंसर्वरोगेषुघृताशिनेहिताशिने ॥ ३४ ॥
क्षीराशिनेप्रदातव्यंरसायनवतेनरे ।
नक्रोधितेनपित्ताढ्येनक्लीबेराजयक्ष्मणि ॥ ३५ ॥
क्षुत्तृष्णाश्रमकर्माध्वशोषिणेक्षयरोगिणे ।
गर्भिणीबालवृद्धेषुनविषंराजमंदिरे ॥ ३६ ॥
नद तव्यंनभोक्तव्यंविसंवादेकदाचन ।
आचार्येणतुभोक्तव्यंशिष्यप्रत्ययकारकम् ॥ ३७ ॥
अनेनमंत्रेणमर्दयेद्धूमौनस्थापयेत् ।
अमृतमितिवदेदितिक्रमोऽयम् ।
ओं सिद्धगुरुभ्योनमः । परमगुरुभ्योनमः ।
परात्परगुरुभ्योनमः । परमेष्ठिगुरुभ्योनमः ।

नवरंजनी कालगंजनी झङ्कारे वेसजव आनिमंत्रे वडवा-भि[illegible]डहुंभक्षन्ततोनृजामि नागलोक, उत्थाकालकुट्ट-तथा ऊपजिना एवघट्टया हिरे विपमार्चाहोः जाहिरे विप्रोबटहोः ईश्वर महादेवकी आज्ञायो वा भक्ति गुरुकी शक्ति ॥ वारत्रयंपठितव्यम् ।

ततोद्रव्यान्तरेणमेलकम् । इतिप्रज्ञासरस्वतीमतम् ।

अर्थ—वत्सनाभविष (मीठा)—मधुर, अग्निप्रदीपक, कफवातनाशक, त्रिदोषनिवारक और योगमें मिला हुआ अमृतकी समान गुण करनेवालाहै ॥ २८॥ पुष्टिकारक, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, १०० वडवाग्निकी समान दीपन और सान्निपातरोगमें विशेष उपकारी है ॥ २९ ॥ फलके पकजानेपर उखाड़ा हुआ, नवीन चिकना, घन, अव्यापक, विषको हरनेवाला, पवन और पसे सूखाहुआ ऐसा वत्सनाभ विष ग्रहणकरना चाहिये । लालसरसोंके तेलसे लिप्त कियेहुए वस्त्रमें विषको धारण करना चाहिये । अथवा विषको गोमूत्रमें मिलाकर तीन दिन धूपमें सुखावै तो निस्तेज और वीर्यको धारणकरनेवाला होजाताहै ॥

मारा हुआ पारा, अभ्रक, लोहा और विष, यह सब समानवीर्यवालेहैं । इसकारण सर्वप्रकारके योगवाहकयोगोंमें और रसायनयोगोंमें विषप्रयोग करना योग्यहै । इसकी उत्तम मात्रा आठ चावलकी, मध्यम छै चावलकी और अधम चार चावलकी है । घृत और दूध सेवन करनेवाले तथा रसायन मनुष्योंके लिये यह सर्व रोगोंमें हितकारीहै । क्रोधी, पित्तकी प्रकृतिवाला, नपुंसक, राजरोगवाला, क्षुधासे व्याकुल, तृषासे घबडाया हुआ, परिश्रमसे और मार्गके चलनेसे थकाहुआ, क्षयरोगवाला, गर्भिणी, बालक और वृद्ध इन सबमनुष्योंको तथा राजमंदिरमें और विषके वादमें कभीभी विषका सेवन करना, वा कराना तथा देना नहीं चाहिये ॥

शिष्यके निश्चयके लिये गुरुको विषका सेवनकरना चाहिये । अमृतमिति० की शक्ति, इसमंत्रको तीनबार पढकर विषको मर्दन करै परन्तु भूमिमें न रक्खै । अन्यद्रव्योमें मिलावै ॥

सक्तुकंमुस्तकंशृंगीवालकंसर्षपाह्वयम् ।
वत्सनाभश्चकूर्म्मश्चश्वेतशृंगीतथाष्टमम् ॥ ३८ ॥
इत्यष्टौयोजयेद्योगेकालकूटादिवर्जयेत् ।
कालकूटंमेषशृंगीहलहलंचदर्दुरम् ॥ ३९ ॥
कर्कटंमर्कटंग्रन्थिहारिद्रंरक्तशृंगकम् ।
केशवंदशमश्चेतिवर्जनीयंभिषग्वरैः ॥ ४० ॥
सक्तुकाद्यान्प्रयुञ्जीतसर्वरोगेरसायने ।
एतद्विषंजातिचतुष्टयंचविचार्ययोज्यंभिषगुत्तमेन॥४१॥

यथा—विप्रोरक्षतियौवनंनरपतिस्तद्भूतलेपालतां
वैश्यःकुष्ठविनाशनेचकुशलःशूद्रोहरेज्जीवनम् ॥
तस्माच्चापिभिषग्वरेणनिपुणैस्तद्वेदिनाभावयेत्
कुर्यादेवततोविषंनृपवरोमृत्युंजयायक्षितौ ॥ ४२ ॥
श्वेतावायदिवापिङ्गामधुराउषरापिवा।
लोमशाब्रह्मजातिःस्यात्क्षत्रजातिस्तुलोहिता ॥ ४३ ॥
पीतावामधुराकिंचिद्वैश्यजातिस्तुधूसरा।
कृष्णाशूद्रस्यदृश्येतएतेषांचभिषग्वरैः ॥ ४४ ॥
क्षीरंसंपूर्यभाण्डेपिविषंदत्त्वाविचिन्तयेत्।
जायतेपियदावर्णंतदाजातिंविनिर्दिशेत् ॥ ४५ ॥
शुक्लंरक्तंतथापीतंकृष्णञ्चेतिचतुर्विधम्।
ब्रह्मक्षत्रविट्शूद्राणांज्ञातव्योजातिनिर्णयः ॥ ४६ ॥
क्षिप्तंदुग्धेविषंवैद्योजानीयात्क्रमशोयदि।
श्वेतंरक्तंतथापीतंकृष्णंचोष्णत्वमेवच ॥ ४७ ॥

अर्थ—सक्तुक, मुस्तक, शृंगी, वालक, सर्षपाह्वय, वत्सनाभ, कूर्म और श्वेतशृंगी यह आठप्रकारके विष सर्वयोगोंमे व्यवहार करने चाहियें। और कालकूटादिविषोंको वर्जना चाहिये। कालकूट, मेषशृंगी, हलाहल, दर्दुर, कर्कट, मरकट, हारिद्र, रक्तशृंगक, ग्रंथि और केशव यह दशप्रकारके विष सर्वयोगोंमें त्यागने चाहिये। सक्तुकादि आठप्रकारके विष सर्वप्रकारके रोगोंमें और रसायनकर्ममें व्यवहार करने योग्यहैं। यह विष ब्राह्मणादि जातिभेदसे चारप्रकारकेहैं, इसकारण वैद्यको जातियोंका विचारकर विषका व्यवहार करना चाहिये। ब्राह्मणविष यौवनकी रक्षा करैहै, क्षत्रियविष शरीरको पुष्ट करैहै, वैश्यविष कुष्ठनाशक और शूद्रविष प्राणनाशक है ॥ जो विष सफेद, पिंगलवर्ण, मधुर, उषर और रोमयुक्त हो उसको ब्राह्मणजातिका जानना। जो विष लालरंगका, पीलेरंगका, और किंचित् मधुरहो उसको क्षत्रिय कहतेहैं। धूसररंगके विषको वैश्य और कालेरंगके विषको शूद्रजातिका जानना। किसीबरतनमें दूध भर और उसदूधमें विषको डालदेवै, कुछकालके उपरान्त जो दूध सफेद रहजाय

तौ ब्राह्मण, लाल होजाय तौ क्षत्रिय, पीला पडजाय तौ वैश्य और काला होजाय तौ शूद्रजातिका विष जानना । दूधमें विष मिलाकर दही जमावै; सफेद, लाल, पीला और काला इनमेंसे जिसरंगका दही जमके होजाय, उसही जातिका विष जानना चाहिये ॥ ३८–४७ ॥

ग्रन्थान्तरे ।

तुल्येनटंगणेनैवम्रियतेपेषणाद्विषम् ।
विषेषुजंगमाख्येषुविषंनागभवंहितम् ॥ ४८ ॥
इदमेवमहाश्रेष्ठंत्रिदोषक्षपणंक्षणात् ।
दीपनंकुरुतेसद्योवडवाग्निशतोपमम् ॥ ४९ ॥
सन्निपातप्रतीकारेप्रभावःप्रभवोहिसः ॥ ५० ॥

अर्थ–विषके समानभाग सुहागा मिलाकर खरल करै तौ विष मरजाताहै । जंगमविषोंमें सर्पका विष हितकारीहै, सर्वश्रेष्ठ, त्रिदोषनाशक, दीपन और सौ वडवाग्निकी समान जठराग्निको करदेताहै तथा सन्निपातके नाशकरनेमं अत्युत्तम औषधिहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

रसेन्द्रचूडामणौ ।

नागोद्भवंयथाप्राप्तंविषंगोमूत्रसंयुतम् ।
आतपेत्रिदिनंशुष्कंनिहितंवीर्यधृग्भवेत् ॥ ५१ ॥
अतिमात्रंयदाभुङ्क्तेतदाज्यंटंगणंपिबेत् ।
रजनीमेघनादावासर्पाक्षीवाघृतान्विता ॥ ५२ ॥
लिहेद्वामधुसर्पिर्भ्यांचूर्णितामर्जुनत्वचम् ।
पुत्रंजीवकमज्जांवापिबेद्वानिम्बकद्रवम् ॥ ५३ ॥
एवंविषविधिःख्यातःप्रयोगंचवदाम्यहम् ।
विषंत्रिकटुकंमुस्तंहरिद्रानिंबपत्रकम् ॥ ५४ ॥
विडंगमष्टमंचूर्णंछागमूत्रैःसमंसमम् ।
चणकाभावटीख्यातास्याज्जयायोगवाहिका ॥ ५५ ॥
विषंपाठाश्वगंधाश्वनल्वनालीशपत्रकम् ।
मरिचंपिप्पलीनिम्बमजामूत्रेणतुल्यकम् ॥ ५६ ॥

वटिकापूर्ववत्कार्यावटिकायोगवाहिका।
निद्रांतन्द्रांक्लमंदाहंसफेनंलोमहर्षणम् ॥ ५७ ॥
शोषंचैवातिसारश्चकुरुतेजंगमंविषम्।
स्थावरन्तुज्वरंहिक्कांदन्तहर्षंगलग्रहम् ॥ ५८ ॥
फेनच्छर्द्यरुचिश्वासंमूर्च्छांचकुरुतेविषम्।
नजानातियदामंत्रीविषंभक्षेच्चिकित्सितम् ॥ ५९ ॥
विषमेवतदादायमज्जत्यम्बुनिधाविव।
तस्माद्यत्नेनसंरक्षेद्राजाविषचिकित्सकम् ॥ ६० ॥
प्रथमंवह्निखर्परिकायांमनागृदृष्ट्वावक्ष्यमाण-
मन्त्रेणनिर्विषंविधायगृह्णीयादिति ॥

अमृतशुद्धिः।

भगवन् शिवाधिकारिन् विषन्नास्ति।
अनेनएकादशवाराभिमन्त्रितंकुर्यात् ॥
'चरीधरेविषमाटीहोइ' अनेनसप्ताभिमंत्रितंकुर्यात् ॥

अर्थ—सर्पके विषको गोमूत्रमें तीन दिन रखनेसे वीर्यवान् होजाताहै। जब विष मात्रासे अधिक भक्षण कियाजाय तब घृतमें सुहागा मिलाकर पीवै, अथवा हलदी, चौलाई, और सर्पाक्षीको घृतमें मिलाकर पीवै, अथवा उपरोक्त, तीनों औषधियोंके रसमें सहत और घी युक्तकर अवलेहकी समान बनाकर चाटै अथवा अर्जुनकी छालके चूरनको सहत और घृतमें मिलाकर चाटै, तथा जिया-पोताकी मज्जाको पीसकर सहत और घीमें मिलाकर चाटै, अथवा नीबके रसको पीवै तौ विषके वेग शान्त होजातेहैं। इसप्रकार विषकी विधि कही अब विषके प्रयोग कहताहूं ॥

विष, त्रिकुटा, नागरमोथा, हलदी, नीबके पत्ते और वायविडंग, इन आठ औषधियोंको बकरेके मूत्रमें खरल कर चनेकी बराबर गोली बनालेवै इसको योगवाहिका जयावटी कहतेहैं। अथवा यह जयावटी सर्वरोगोंको जीतनेवाली है।

विष, पाढ, गंधक, खिरैटी, तालीसपत्र, मिरच, पीपल, और नीमके पत्ते इन सबको समानभाग लेकर बकरीके मूत्रमें खरल करके चनेकी बराबर गोली बनालेवै, यह योगवाहिका वटीहै। जंगमविष—निद्रा, तन्द्रा, क्लम, दाह, फेनयु

क्तवमन, लोमहर्षण, शोष और अतिसार रोगको उत्पन्न करैहै । स्थावरविष—ज्वर, हिक्का, दन्तहर्ष, गलवेदना, फेनयुक्तवमन, अरुचि, श्वास और मूर्च्छाको उत्पन्न करताहै । और जो मनुष्य विषको भक्षण करै और विषकी चिकित्सा नहीं जानै वह मनुष्य समुद्रमें डूबने योग्य है । इसकारण बुद्धिमान् प्रथम विषकी चिकित्सा जान तदनन्तर विषके भक्षण करनेकी इच्छा करै । प्रथम विषको अग्निके द्वारा कढाईमें डाल पछि वक्ष्यमाणमंत्रको पढ़कर निर्विष कर ग्रहण करै। (भगवन् इत्यादि) इसमंत्रको ११ बार पढकर विषको अभिमंत्रितकरै और (चरीधरे विषमाटी होइ) इसमंत्रको सातबार पढकर विषको अभिमंत्रित करना चाहिये ॥

अथ पित्तशुद्धिः ।

निम्बद्रवेपित्तंवारत्रयंविभाव्यप्रक्षाल्यसंशोष्यगृह्णीयादिति ।

अर्थ—पित्तको नीमके पत्तोंके रसमें तीनबार भावना दे,पानीमें धोकर सुखालेवें तौ पित्त शुद्ध होजाताहै ।

शिलाजतुशुद्धिः ।

हेमाद्याःसूर्यसन्तप्ताःस्रवन्तिगिरिधातवः ।
जत्वाभंमृदुमृत्स्नाभंयन्मलंतच्छिलाजतु ॥ ६१ ॥
अनम्लंचाकषायञ्चकटुपाकेशिलाजतु ।
नात्युष्णशीतंधातुभ्यश्चतुर्भ्यस्तस्यसम्भवः ॥ ६२ ॥
हेम्नोऽथरजतात्ताम्राद्वरंकालायसादपि ।
मधुरंचसतिक्तंचजपापुष्पनिभंचयत् ॥ ६३ ॥
विपाकेकटुशीतंचतत्सुवर्णस्यानिःसृतम् ।
राजतंकटुकंश्वेतंशीतंस्वादुविपच्यते ॥ ६४ ॥
ताम्राद्बर्हिणकण्ठाभंतीक्ष्णोष्णंपच्यतेकटु ।
यच्चगुग्गुलुसंकाशंसतिक्तंलवणान्वितम् ॥ ६५ ॥
विपाकेकटुशीतंचसर्वश्रेष्ठंतदायसम् ।
गोमूत्रगंधःसर्वेषांसर्वकर्मसुयौगिकाः ॥ ६६ ॥
रसायनप्रयोगेषुपश्चिमन्तुविशिष्यते ।

यथाक्रमंवातपित्तश्लेष्मपित्तेकफेत्रिषु ॥ ६७ ॥
विशेषेणप्रशस्यन्तेमलाहेमादिधातुजाः ।
लोहःकिट्टायतेवह्नौविधूमंदह्यतेऽम्भसि ॥ ६८ ॥
तृणाद्यग्रेकृतंश्रेष्ठमधोगलतितन्तुवत् ।
(तदेवपरीक्षितस्यशोधनं यथा-)
दंशदष्टौषधादिदोषहरणार्थंमेषशृंगंभूर्जपत्रेणधूप-
येत् । क्वाथद्रव्यंशिलाजतुसमंचतुर्गुणेनजलंदत्त्वा
चतुर्भागावशेषेणभावयेदित्येकःपक्षः । वाग्भटस्तु-
अष्टगुणजलदानेनाष्टावशेषेपूर्ववदुभयथैवव्यवहारः ।
भद्रशिलाजतुत्रिफलादशमूलउष्णक्वाथेननिक्षि-
प्यकेवलोष्णोदकेनवास्थितेऊर्द्ध्वीभूतेपद्मपत्रवत्
सर्वंग्राह्यंततःशिवागुडिकोक्तक्रमेणभावनांदत्त्वा
विशोध्यसालसारादिनाभावयेद्यथा-
सालयुग्मौकरंजौद्वौखदिरंचन्दनद्वयम् ।
गर्दभाण्डोऽर्जुनश्चेहलोध्रयुग्मधवासनाः ॥ ६९ ॥
शिरीषागुरुकालीयपूगपूतीककर्कटाः ।
सालसारादिरप्येषगणःश्लेष्मगदापहः ॥ ७० ॥
मेहगुल्मार्शकुष्ठादिमेदःपाण्डुरुजापहः ।
एभिर्दिवातपेशोष्यंरात्रौरात्रौचभावयेत् ॥ ७१ ॥
द्रवेणयावताद्रव्यमेकीभूयार्द्रतांव्रजेत् ।
भवेत्प्रमाणंनिर्दिष्टंभिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ ७२ ॥
भवेद्द्रव्यंसमंक्वाथ्यंक्वाथंचाष्टावशेषितम् ।
तेनार्द्रसमकृद्द्रव्यंशोषयेत्प्रबलातपे ॥ ७३ ॥

अर्थ-सुवर्णादि सर्व पर्वतकी धातु सूर्यकी उष्णनामे नमहोके झिरतीहैं, उसको शिलाजित कहतेहैं । लाखकी समान रंगवाला और मृदुमट्टीकी समान

कोमल सुवर्णादिकके मैलको शिलाजीत कहतेहैं । शिलाजीत–पापनाशक, अल्पकषेला, पचनेमें चर्परा, न अत्यंत गरम और न अत्यंत शीतलहै । सोना, चाँदी, ताँबा, कान्तलोह इन चारप्रकारकी धातुओंसे शिलाजीत उत्पन्न होता है । जो शिलाजीत–मधुर, कडवा, जवाके फूलकी समान लाल, पचनेमें चर्परा और शीतलहो उसको सुवर्णसे उत्पन्न हुआ जानना । जो शिलाजीत–चर्परा, सफेद, शीतल और पचनेमें मधुर हो उसको चाँदीसे उत्पन्न हुआ जानना । जो शिलाजीत–मोरके कंठकी समान कांतिवाला, तीक्ष्ण, उष्ण और पचनेमें चर्परा हो उसको ताँबेसे और जो शिलाजीत गूगलकी समान रंगवाला, कडवा, नमकीन, पचनेमें चर्परा और शीतल हो उसको लोहेसे उत्पन्न हुआ वा सर्वमें श्रेष्ठ शिलाजीत जानना । सर्वप्रकारके शिलाजीतोंमें गोमूत्रकी गंध आती है और यह सर्वकर्मोंमें प्रयोग करने चाहियें और लोहेसे उत्पन्न हुआ शिलाजीत रसायनकर्ममें विशेषकर लेना चाहिये । पूर्वोक्त स्वर्णादि चारप्रकारके शिलाजीत क्रमसे वातपित्त, श्लेष्मपित्त, कफ और त्रिदोषमें प्रयोग करने चाहियें । जो शिलाजीत अग्निमें डालनेसे लोहेकी किट्टकी समान जलजाय और धुआं न उठे तथा पानीमें तृणके ऊपर रखकर उठानेसे ताँतकी समान गलजावे, ऐसा शिलाजीत उत्तम होताहै । अब शिलाजीतकी शुद्धि कहते हैं,–सर्पादिके दंश और अन्य औषधादिकके संयोगसे उत्पन्न हुए दोषोंको दूर करनेके लिये मेंढेके सींगके चूर्णसे और भोजपत्रसे धूप देकर शिलाजीतको शुद्ध करै । क्वाथद्रव्य शिलाजीतकी समान लेकर चौगुने अथवा आठगुने जलमें पकावे; जब चौथाभाग अथवा आठवाँ भाग शेष रहे तो उसमें शिलाजीतको भावना देवै । उत्तम शिलाजीतको त्रिफला और दशमूलके उष्णक्काथमें अथवा केवल गरमजलमें गेरे जब वह कमलके पत्तोंकीसमान ऊपरको आजावै तब ग्रहण कर-लेवें, फिर शिवागुटिकाके क्रमसे भावना देकर शोधन करे, पश्चात् सालसारादिगणके क्काथमें भावना देवे । साल, पियासाल, करंज, घृतकरंज, लालचन्दन, सफेदचन्दन, गर्दभाण्ड, अर्जुन, धव, भोजपत्र, लोध, पठानीलोध, अगन, सिरस, अगर, पीलाचन्दन, सुपारी, पूतीक और काकड़ाशिंगी इन सबको सालसारादि कहतेहैं । यह कफरोग, प्रमेह, गुल्म, बवासीर, कोढ़ और मेद, तथा पांडुरोग नाशकहै । इसके क्काथमें शिलाजीतको रात्रिमें भावनादेवै, और दिनमें सुखावे. इसप्रकार द्रव वस्तुमें भावनायोग्यपदार्थ मग्न होकर आर्द्र होताहै उसकी वही भावनाविधि जाननी । क्काथ्यद्रव्य भावनाद्रव्यकी समान तथा

क्वाथ आठवां भागशेष जानना । तिसके द्वारा गीलाकर धूपमें सुखालेवै, इसप्रकार शिलाजीत शुद्ध होजाताहै ॥

अथ दग्धहीरकशुद्धिः ।

दग्धहीरकंयोज्यंनिक्षिप्याग्नौधमापयित्वानिर्गुण्डी-
रसेनसप्तवारान्निर्वाप्यप्रक्षाल्यगृह्णीयादिति ॥ ७४ ॥

अर्थ–दग्धहीरेको अग्निमें तपाके सातबार सम्हालूके रसमें भावना देकर धोलेवै तौ दग्धहीरा शुद्ध होजाताहै ।

अथ गुग्गुलुपरीक्षा ।

जायन्तेवामरुकावथोजनपदेग्रीष्मेऽर्कतापोर्दिताः
शीतोष्णेशिशिरेचगुग्गुलुरसंमुञ्चन्तितेपंचधा ॥
हेमाभंमहिषाक्षतुल्यमपरंतत्पद्मरागोपमं
भृंगाभंकुमुदद्युतिश्चविधिनाग्राह्यापरीक्षाततः ॥ ७५ ॥
वह्नौज्वलन्तितपनेविलयंप्रयान्ति
क्लिद्यन्तिकोष्णसलिलेपयसासमानाः ।
ग्राह्याःशुभाःपरिहरेच्चिरकालजाता-
नङ्गात्स्फुटंखपरगन्धिकतुल्यवर्णान् ॥ ७६ ॥
स्वादेस्वादुकषायतिक्तकटुकोवीर्येविपाकेकटुः
वृष्योमार्गविशोधनेऽतिविशदस्तीक्ष्णोविकारीसरः ।
सायुष्यःसुरदस्त्रिदोपशमनोमेधास्मृतिश्रीकरो
धन्यःपापनिपूदनोऽग्निजननोहृत्कण्ठशोधीपुनः॥७७॥

तद्देवं परीक्षितस्य शोधनमाह ।

दशमूलक्काथेउष्णेपूतेगुग्गुलुंपरिक्षिप्यालोड्यच
वस्त्रपूतंविधायचण्डातपेविशोध्यघृतंदत्त्वापिण्डितम् ॥

अर्थ–मरुदेश (मारवाड) जनपदमें तथा ग्रीष्मकालके सूर्यकी उष्णतासे तप्त होकर गूगलके वृक्ष, शीतोष्ण तथा शिशिरऋतुमें सोनेकी समान कांतियुक्त, महिषाक्ष, पद्मरागमणिकी सदृश, भाँगरेकी समान और कुमुदिनीकी

कान्तिकी सदृश पाँचप्रकारके रसको छोडतेहैं। जो गूगल अग्निमें डालनेसे जल-जाय, धूपमें धरनेसे पिघल जाय, और गरम पानीमें डालनेसे घुलकर दूधकी समान होजाय ऐसा गूगल उत्तम होताहै । इसको ग्रहण करना चाहिये और जो पुरानाहो तथा जिसमें दुर्गन्ध आतीहो और अग्निमें रखनेसे जिसकी खीली होजाय ऐसा गूगल त्यागना चाहिये ।

गूगल–मधुर, कषेला, चरपरा, कडवा, वीर्य और विपाकमें चरपरा, वीर्यवर्द्धक, शरीरके मार्गको शोधनेवाला, अतिविशद, तीक्ष्ण विकारोंको हरनेवाला, सारक, आयुको बढ़ानेवाला, स्वरको सुन्दर करनेवाला, त्रिदोषनाशक, मेधाकारक, स्मरणशक्तिको करनेवाला, श्रीजनक, धन्य, पापनाशक, अग्निप्रदीपक, तथा हृदय और कण्ठको शुद्धकरनेवालाहै । दशमूलके काढ़ेको वस्त्रमें छानकर तिसमें गूगलको डाल फिर वस्त्रमें छान तेज धूपमें सुखावे, तदनंतर तिसमें घी मिलाकर गोला बनावे तो गूगल शुद्ध होजाता है ॥

अथशंखनाभिशुद्धिमाह ।

शंखनाभिस्तथाम्लेनसप्तवारंविभावयेत् ।
रौद्रेमलादिकंत्यक्त्वाप्रक्षाल्यग्राहयेदिति ॥ ७८ ॥

अर्थ–शंखनाभिको काँजीमें सातबार भावना देकर धूपमें रखदे, फिर उसमेंसे मलादिकको निकाल धोकर ग्रहणकर लेवै तो शंखनाभि शुद्ध होजायगी ॥७८॥

अथ वराटीशुद्धिमाह ।

वराटींतक्रचांगेरीजम्बीराणांरसेशुभे ।
प्रक्षिप्यभावयेत्तावद्यावच्छुक्लांनपश्यति ॥ ७९ ॥
पश्चादुद्धृत्यगृह्णीयाद्वराटींशुद्धिमागताम् ॥ ८० ॥

अर्थ–तक्र, चाङ्गेरी और जम्भीरी नींबूके रसमें कौडीको भावना देवै जबतक सफेद न होवै तबतक भावना देतारहै, फिर सफेद होनेपर ग्रहण करै तो शुद्ध होजातीहै ॥ ७९ ॥ ८० ॥

अथ मुक्ताशुद्धिमाह ।

भौमिकंजलमासाद्यमुक्तांचव्युषितामपि ।
त्यक्त्वामलादिकांताञ्चप्रक्षाल्यग्राहयेदिति ॥ ८१ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखंडे तैलपातनं नाम दशमोपदेशः ॥ १० ॥

अर्थ-मोतियोंको पृथ्वीके जलमें भिजोकर दूसरे दिन मैल आदिको दूरकर पानीसे धोकर ग्रहण करले ॥ ८१ ॥

इति श्रीमदायुर्वेदोद्धारकभिषक्शालिग्रामवैश्यमुरादाबादनिवासिकृतरसरत्नाकरे रसखण्डे प्रदीपिकानामभाषाटीकायां तैलपातनं नाम दशमोपदेशः समाप्तः ॥१०॥

अथ चरकमतमाह।

आयुरारोग्यदातारंभववैद्यंजगद्गुरुम्।
आधिव्याधिहरंवन्देपरंशक्तियुतंशिवम् ॥ १ ॥
आयुर्हिताहितंव्याधेर्निदानंशमनंतथा।
विद्यतेयत्रधीमद्भिःसआयुर्वेदउच्यते ॥ २ ॥
श्रुतेःपर्यवदातत्वंबहुशोदृष्टकर्मता।
दाक्ष्यंशौचमितिज्ञेयंवैद्येगुणचतुष्टयम् ॥ ३ ॥
वैद्योव्याध्युपसृष्टश्चभेषजंपरिचारकः।
एतेपादाश्चिकित्सायाःकर्मसाधनहेतवः ॥ ४ ॥
प्रत्युत्पन्नमतिःश्रीमान्व्यवसायीविशारदः।
सत्यधर्मपरोयश्चसभिषक्पादउच्यते ॥ ५ ॥
आयुष्मान्सत्यवान्साध्योद्रव्यवान्मित्रवानपि।
उच्यतेव्याधितःपादोवैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥ ६ ॥
प्रशस्तदेशसम्भूतंप्रशस्तेऽहनिचोद्धृतम्।
अल्पमात्रंमहावीर्यंगंधवर्णरसान्वितम् ॥ ७ ॥
दोषघ्नमम्लाग्निकरमविकारिविपर्यये।
समीक्ष्यकालेदत्तञ्चभेषजंपादउच्यते ॥ ८ ॥
स्निग्धोऽजुगुप्सुर्बलवान्युक्तोव्याधितरक्षणे।
वैद्य-[illegible]श्चपादःपरिचरःस्मृतः ॥ ९ ॥
मातरंपितरंपुत्रंबान्धवानपिचातुरः।
अप्येतान्शंकतेनित्यंवैद्येविश्वासमेतिच ॥ १० ॥

कारणंषोडशगुणंसिद्धेःपादचतुष्टयम्।
विज्ञाताशासितायोक्ताप्रधानंभिषगत्रतु ॥ ११ ॥
पक्तयेकारणंपक्तुर्यथापात्रेन्धनानलाः।
विजेतुर्विजयेभूमिश्चमूःप्रहरणानिच ॥ १२ ॥
आतुराद्यास्तथापादाःसिद्धेःकारणसंज्ञिताः।
वैद्यस्यतेचिकित्सायांप्रधानंकारणंभिषक् ॥ १३ ॥
मृत्कुण्डचक्रसूत्राद्याःकुम्भकाराहृतेयथा।
नावहन्तिगुणंवैद्याद्दतेपादत्रयन्तथा ॥ १४ ॥
तस्माच्छास्त्रेषुविज्ञातेप्रवृद्धेकर्मदर्शने।
भिषक्चतुष्टयेउक्तःप्राणाभिशवउच्यते ॥ १५ ॥
हेतौलिंगेप्रशमनेरोगानामपुनर्भवे।
ज्ञानंचतुर्विधंयस्यसराजार्होभिषग्वरः ॥ १६ ॥
विद्यावितर्कोविज्ञानंस्मृतिस्तत्परताक्रिया।
यस्यैतेषड्गुणास्त्वस्यनसाध्यमपिवर्त्तते ॥ १७ ॥
यस्यह्येतेगुणाःसर्वेसन्तिविद्यादयःशुभाः।
सवैद्यशब्दसंभूतोजनप्राणसुखप्रदः ॥ १८ ॥
भिषग्जितश्चतुष्पादंपादंपादंचतुर्विधः।
भिषक्प्रधानंपादेभ्योयस्माद्वैद्यश्चतुर्गुणः ॥ १९ ॥
साध्यासाध्यविभागज्ञोज्ञानपूर्वंचिकित्सकः।
कालेचारभतेकर्मयत्तत्साधयतिध्रुवम् ॥ २० ॥
अल्पविद्यायशोग्लानिमपत्रपत्वसंग्रहम्।
प्राप्नुयान्नियतंवैद्योयोऽसाध्यंसमुपाचरेत ॥ २१ ॥
गतिरेकानवत्वञ्चरोगस्योपद्रवेणच।
दोषश्चैकःसमुत्पत्तौदेहःसर्वौषधक्षमः ॥ २२ ॥

चतुष्पादोपपत्तिश्चसुखसाध्यस्यलक्षणम् ।
भिषजाप्राक्परीक्ष्यैवंविकाराणांसुलक्षणम् ॥ २३ ॥
ंचकर्मसमारंभःकार्यःसाध्येतुधीमता ।
यस्तुरोगमविज्ञायकर्माण्यारभतेभिषक् ॥ २४ ॥
अप्यौषधविधानज्ञस्तस्यसिद्धिर्यदृच्छया ।
यस्तुरोगविशेषज्ञःसर्वभैषज्यकोविदः ॥ २५ ॥
देशकालप्रमाणज्ञस्तस्यसिद्धिरसंशयः ॥ २६ ॥

अर्थ—आयु और आरोग्यको देनेवाले. संसारके वैद्य जगत्के गुरु, आधि व्याधिनाशक, सर्वमें श्रेष्ठ, और परमशक्तियुक्त ऐसे श्रीमहादेवको प्रणाम करूँ हूं ॥ १ ॥ आयुका हिताहित, रोगका निदान, और व्याधिके शमनका उपाय जिसके द्वारा जानाजाय उसको आयुर्वेद कहते हैं ॥ २ ॥ श्रुतिज्ञता (शास्त्रोंका जानना) बहुदृष्टकर्मता (गुरुके समीप बहुतसी वैद्यककी क्रियायें देखना) दक्षता, और पवित्रता, यह चार गुण वैद्यमें होने चाहिये ॥ ३ ॥ वैद्य, रोगी, औषध और परिचारक यह ४ चिकित्साके उपकरण जानने ॥ ४ ॥ चमत्कारबुद्धिवाला लक्ष्मीवान्, व्यवसायी, विशारद और सत्यधर्ममें प्रीति करनेवाला, ऐसा वैद्य होना चाहिये ॥ ५ ॥ आयुष्मान्, सत्यवान्, साध्य, द्रव्यवान्, मित्रवान्, वैद्यके वचनोंके अनुसार चलनेवाला और आस्तिक, ऐसा रोगी होना चाहिये ॥ ६ ॥ उत्तमदेशमें उत्पन्न हुई, शुभदिनमें उखाडी हुई, अल्पमात्र, महावीर्यवान्, गंध वर्ण और रससंयुक्त, सातदोष नाशक, ग्लानिको नहीं करनेवाली, विकारवर्जित, और यथासमयमें देनी ऐसी औषधि होनी चाहिये॥७॥८॥स्निग्ध, निन्दारहित. बलवान, रोगीकी रक्षा और सेवाकरनेमें तत्पर, वैद्यके वचनोंके अनुसार चलनेवाला ऐसा परिचारक (सेवक) चिकित्साका पाद कहलाताहै ॥ ९ ॥ माता, पिता, पुत्र और भ्राता, इनके वचनोंमें भी शंका करनेवाला रोगी वैद्यके वचनोंमें शंका नहीं माने अर्थात् वैद्यके वचनोंका विश्वास करे ॥ १० ॥ सिद्धि (चिकित्सा) के षोडश गुणे पादचतुष्टय कारण हैं, विज्ञाता, शासिता, भोक्ता और प्रधान इनमें प्रधान वैद्य होताहै ॥ ११ ॥ जैसे कि—रसोईकरनेके- लिये पात्र, इंधन और अग्नि कारण हैं. तथा जैसे विजयलाभके लिये, जय भूमि सेना और अस्त्रादि कारणहैं ॥ १२ ॥ तैसेही रोगी आदि चारपाद सि- द्धिके कारणहैं किन्तु चारों पादोंमें प्रधान वैद्य है । जैसे चाक, मट्टी, डोरा

और दण्डा, यह चारों पात्रबनानेमें कारणहैं । परन्तु बिना कुम्हारके पात्रको उत्पन्न नहीं करसक्तेहैं, तैसेही रोगी, औषध और सेवक यह तीनों पाद बिना वैद्यके फलदेनेको समर्थ नहीं होते । इसकारण सब चिकित्साके पादोंमें प्रधान वैद्यहै । वैद्यशास्त्रमें प्रवीण, ज्ञानी और अनेक प्रकारके वैद्यकके कर्मोंको देखे हुएहों ऐसे वेद्यको वैद्य कहाहै । रोगका हेतु, रोगका लक्षण, रोगकी शान्ति और फिर रोगोंका उत्पन्न होना, यह चार प्रकारका रोगोंके विषयका ज्ञान जिसमें हो उसको राजार्हभिषक् अर्थात् राजवैद्य कहतेहैं ॥ विद्या, तर्क, ज्ञान, स्मृति, तत्परता और क्रिया, इन छेगुणोंसे युक्त वैद्य सर्व प्रकारके रोगियोंको सुखदेनेवाला होता है । चारोंपादोंमें वैद्य प्रधानहै ॥ साध्य और असाध्य रोगको जानकर वैद्य चिकित्साकर्ममें प्रवृत्तहोवै तौ निश्चय फलकी प्राप्ति अर्थात् रोगी आराम होजाँयगे ॥ और जो चिकित्सक असाध्यरोगीकी चिकित्सा करताहै । वह सदैव अल्पविद्या, अपयश, ग्लानि, लाजहीनता संग्रहको प्राप्त होता है । एकगति, नूतनता, उपद्रवहीनता, एकदोषसे रोगका उत्पन्न होना, रोगीका शरीर सर्वऔषधियोंके सहनेको समर्थ, और चारोंपादोंका होना यह सब रोगके सुखसाध्य लक्षण हैं । बुद्धिमान् चिकित्सक प्रथम विकारोंके लक्षणों को जानकर पश्चात् चिकित्सा करै ॥ जो वैद्य रोग और औषधिको नहीं जानता और चिकित्सा करने लगै तिसको सिद्धिकी प्राप्ति ईश्वराधीन जाननी । रोगोंको जाननेवाला और सर्वप्रकारकी औषधियोंमें प्रवीण और देश तथा कालको जानने वाला ऐसा वैद्य निःसन्देह सिद्धिको प्राप्त होताहै ॥ ऐसा चरकमें लिखाहै १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथ ज्वरचिकित्सामाह ।

पक्षाभिघातगलगंडगलग्रहाश्च
दण्डापतानकसमीरणशोणिताद्याः ।
इत्यामयाःस्युरपरत्रधनापहारा-
द्गुर्वङ्गनागमनविप्रवधादिभिर्ये ॥ २७ ॥
दुष्कर्मभिस्तनुभृतामिहकर्मजास्ते

नोपक्रमेणभिषजामुपयांतिशान्तिम् ।
दानैर्दयाभिरतिथिद्विजदेवतागो-
गुर्वर्चनाप्रणतिभिश्चजपैस्तपोभिः ॥ २८ ॥
इत्युक्तपुण्यनिचयैरुपचीयमाना
प्राक्पापजायदिरुजःप्रशमंप्रयान्ति ॥ २९ ॥
स्वहेतुदुष्टैरनिलादिदोषै-
रुपद्रुतैःखेपरितःस्त्रनाड्िः ।
भवन्तियेप्राणभृतांविकारा-
स्तेदोषजाभेषजसिद्धिसाध्याः ॥ ३० ॥
दानादिभिःकर्मभिरोषधीभिःकर्मक्षयेदोषपरिक्षयेच ।
सिध्यन्तियेयत्नवतांकथंचित्तेकर्मदोषेप्रभवाविकाराः ३१
निवृत्तोऽपिमहाव्याधिःस्वल्पेनायातिहेतुना ।
क्षीणेमंदीकृतेदोषेशेषःसूक्ष्मइवानलः ॥ ३२ ॥
नास्तिरोगोविनादोषैर्यस्मात्कस्माच्चिकित्सकः ।
अनुक्तमपिदोषाणांलिंगैर्व्याधिंसमुच्चरेत् ॥ ३३ ॥
वायुरायुर्बलंवायुर्धातावायुःशरीरिणाम् ।
वायुर्विश्वमिदंसर्वंप्रभुर्वायुश्चकीर्तितः ॥ ३४ ॥
सर्वाहिचेष्टावातस्यसप्राणःप्राणिनांस्मृतः ।
तेनैवजायतेरोगस्तेनचैवोपशाम्यति ॥ ३५ ॥
पित्तादुष्मोष्मणःपक्तिर्नराणामुपजायते ।
पित्तंचैवप्रकुपितंविकारान्कुरुतेबहून् ॥ ३६ ॥
प्राकृतस्तुबलंश्लेष्माविकृतोमलउच्यते ।
जाठरोयःस्मृतःकायेसचपाप्मोपदिश्यते ॥ ३७ ॥
एकःप्रकुपितोदोषःसर्वानेवप्रकोपयेत् ॥ ३८ ॥

अंगस्यगौरवमपाटवमन्तराग्ने-
रुत्क्लेदिताचहृदयस्यमुखप्रसेकः ।
आलस्यमास्यमधुरत्वमपाककण्डूः
सापाण्डुतानयनयोरितिरोमहर्षः ॥ ३९ ॥
प्रज्ञाप्लुतिर्वमथुवेपथुकाशनिद्रा-
तन्द्रादयश्चलुचुलायनमुल्बणेच ।
स्यादोष्ठकर्णरसनागलतालुमूल-
घ्राणेक्षणश्रवणशष्कुलिकान्तरेषु ॥ ४० ॥
श्लेष्मोद्भवेभवतिलिंगमिदंविकार-
संसर्गजेषुचगदेषुभवेद्विदोषः ।
जन्तोरिदंपवनपित्तकफप्रकोप-
लिंगाद्विदोषजरुजेप्रविभज्ययोज्यः ॥ ४१ ॥
उद्देशमात्रमपिलक्षणमेतदुक्तं
युक्त्याव्यनक्तिपवनादिगदांतराणाम् ॥ ४२ ॥

अर्थ–पक्षाघात, गलगण्ड, गलग्रह, दण्डापतानक, और वातरक्त आदि रोग चोरी करनेसे, गुरुकी स्त्रीके साथ मैथुन करनेसे, और ब्राह्मणादिको मारनेसे और दुष्टकर्म करनेसे उत्पन्न हुए यह सब केवल चिकित्सा करनेसेही शमन नहीं होते दान, दया, अतिथिपूजा, ब्राह्मणपूजा, देवपूजा, गौपूजा और गुरुकी पूजा और प्रणति तथा जप, तप आदि पुण्यकर्म करनेसे पूर्वोक्त रोग दूर होयँ तो उनको पापजरोग जानना. अपने कारणोंसे दूषित हुए, शरीरमें फैलेहुए वातादिसे उत्पन्न हुए रोग औषधिके द्वारा शान्त होनेसे वातादि दोषज, तथा दानादिकर्म और औषधके द्वारा दोष और कर्मका नाश होकर शान्त होनेसे कर्मजरोग कहेजातेहैं । क्षीण तथा दोषकी मंदताके होनेपर निवृत्त हुआ रोगभी अल्पकारणसेही फिर उत्पन्न होजाता है, जैसे अग्निका चैंकाभी पवन और ईंधनके संयोगसे चैतन्य होताजाहै, तैसेही और दोषोंके कोप विना रोग नहीं उत्पन्न होताहै, इसकारण चतुरवैद्य प्रथम दोषोंके चिह्नोंसे रोगका निदान करै । आयु, स्वरूप और बलरूप

और प्राणियोंको जिलानेवाली, समस्त विश्व वायुमय, वायु प्रभुस्वरूप, वायुके द्वाराही संपूर्ण कार्य सिद्ध होतेहैं तथा प्राणियोंके प्राणरूप इसकारण वायुसे उत्पन्न हुए रोग वायुसे ही शमन होतेहैं। मनुष्योंके देहमें पित्तसे उष्णोष्णक्रिया पकती है और यही पित्त कुपित होनेपर अनेकप्रकारके रोगों-को उत्पन्न करता है। प्राकृत बल कफ कहाजाताहै और यही विकृत हुआ मल कहाजाताहै, इसलिये मनुष्योंके जो उदरमें मल है वह पापहै। एक दोषभी कुपित हुआ सब दोषोंको कुपित करदेवैहै, और कुपित कफ प्राणियोंके देहमें अंगका भारीपन, जठराग्निकी मंदता, हृदयमें ग्लानि, मुखसे कफका गिरना, आलस्य, मुखमें मधुरता, अन्नका नहीं पचना, शरीरमें खुजलीका होना, नेत्रोंमें पीलापन, रोमावलीका खड़ाहोना, बुद्धिभ्रष्ट होजानी, वमन, कम्प, खाँसी, निद्रा और तन्द्राका उत्पन्न होना तथा ओष्ठ, जिह्वा, गल, तालूकीजड़, नाक, नेत्र, कान, और कनपटी इन अंगोंमें चुलचुला-पनको उत्पन्न होना। यह सब लक्षण कफसे उत्पन्न हुए रोगोंमें होते और दो दोषोंसे उत्पन्नहुए ज्वरादिरोगोंमें दो दोषोंके चिह्न उत्पन्न होते हैं और तीन दोषोंसे उत्पन्नहुए ज्वरादि रोगोंमें तीन दोषोंके चिह्न उत्पन्न होतेहैं। ऐसे उद्देशमात्र लक्षण कहते हैं। सुचिकित्सक युक्तिद्वारा भले प्रकार वातादिसे उत्पन्न हुए रोगोंका निर्णय करै॥ २७॥ २८॥ २९॥ ॥ ३०॥ ३१॥ ३२॥ ३३॥ ३४॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥ ३९॥ ॥ ४०॥ ४१॥ ४२॥

पित्तंप्रावृषिचीयतेशरदिचप्राप्नोतिकोपंपुनः
शांतिंयातिहिमेकफस्यतुहिनेसञ्जायतेसंचयः॥
कोपश्चास्यमधौप्रशान्तिरपिचग्रीष्मेसमीरःपुनः
ग्रीष्मेसंचितवान्प्रकुप्यति पयःकालेशरत्तंहरेत्॥ ४३॥
वायुःपित्तंकफश्चेतित्रयोदोषाःसमासतः।
विकृताविकृता देहंघ्नन्तिसंवर्त्तयन्तिच॥ ४४॥
निसर्गादानविक्षेपैःसोमसूर्यानिल यथा।
धारयन्तिज गद्देहंकफपित्तानिलास्तथा॥ ४५॥
विभुत्वादाशुकारित्वाद्बलित्वादन्यकोपनात्।
स्वातंत्र्याद्बहुरोगत्वाद्दोषाणांप्रभवोऽनिलः॥ ४६॥

सर्वाहिचेष्टावातेनसप्राणःप्राणिनांमतः ।
पित्तंपङ्गुकफःपंगुःपङ्गवोमलधातवः ॥ ४७ ॥
वायुनायत्रनीयन्तेतत्रवर्षन्तिमेघवत् ।
शरीरेकर्मभिस्तैस्तैःपंचधातेपृथक्पृथक् ॥ ४८ ॥
पक्वाशयकटीसक्थिश्रोत्राक्षिस्पर्शनेन्द्रियम् ।
स्थानंवातस्यतत्रापिपक्वाधानंविशेषतः ॥ ४९ ॥
स्थानंप्राणस्यमूर्द्धोरःकेचिज्जिह्वास्यनासिका ।
ष्ठीवनंक्षवथूद्गारःश्वासहासादिकर्मच ॥ ५० ॥
उरःस्थानमुदानस्यनासानाभिगलम्भवेत् ।
वाक्प्रवृत्तिश्चजनयेद्बलवर्णस्मृतिक्रियः ॥ ५१ ॥
समानोऽग्निसमीपस्थःकोष्ठेचरतिसर्वतः ।
अन्नंपचतिगृह्णातिविरेचयतिमुंचति ॥ ५२ ॥
अपानोऽपानगःश्रोणिबस्तिमेढ्रोरुगोचरः ।
शुक्रार्त्तवशकृन्मूत्रगर्भनिष्क्रमणक्रियः ॥ ५३ ॥
व्यानोहृदिस्थितःकृत्स्नदेहधारीमहाबलः ।
गतिप्रक्षेपणाक्षेपनिमेषोन्मेषणादिकः ॥ ५४ ॥
प्रायःसर्वाःक्रियास्तस्मिन्प्रतिबद्धाःशरीरिणाम् ॥५५॥

अर्थ–पित्त प्रावृट्काल (वर्षाऋतु) में संचित होकर शरद्ऋतुमें कुपित होताहै, और शीतऋतुमें शान्त होताहै । कफ शिशिरऋतुमें संचित होकर वसन्तऋतुमें कुपित होताहै. और ग्रीष्मऋतुमें शांत होताहै । और वात ग्रीष्मऋतुमें संचित होकर वर्षाऋतुमें कुपित होतीहै, और शरत्कालमें शान्त होतीहै । वात, पित्त और कफ, यह तीनों दोष विकृत होनेसे देहको नष्ट करदेतेहें, और अपनी प्रकृतिमें स्थित होनेपर शरीरकी रक्षा करतेहैं । जैसे–चन्द्रमा, सूर्य और वायु क्रमसे विसर्ग, आदान और विक्षेपके द्वारा जगत्को धारण कररहेहैं, तैसे ही कफ, पित्त और वात यह तीनों मनुष्यके शरीरको धारण कररहेहैं । सामर्थ्य, शीघ्रकारी, बलवान्, अन्यकोपनता, स्वतंत्र, और बहु वेगवाली होनेसे

वायु तीनों दोषोंमें प्रधानहै और सर्वप्रकारकी चेष्टा शरीरमें वायुसेही होतीहै. तथा प्राणियोंके प्राणस्वरूप है ।

पित्त, कफ, मल, धातु, यह सब पंगुकी समान गमनकरनेमें समर्थ नहीं हैं इनको वायु जिसस्थानमें लेजातीहै उसी जगह मेघकी समान जातेहैं । वात, पित्त और कफ यह त्रिदोष शरीरमें भिन्न भिन्न कर्मयुक्त पाँचविभागोंमें विभक्तहैं । पक्काशय, कटि, सक्थि, कर्ण, चक्षु और चर्म इनोंमें रहतेहैं, किन्तु पक्काशय इनका प्रधान स्थान जानना ।

प्राणवायु–मस्तक, वक्ष, जिह्वा, मुख और नासिकामें रहतीहै, तथा ष्ठीवन, हुचकी, उद्गार, श्वास और हास्यादि उसका कर्म है ।

उदानवायु–कक्ष, नासा, नाभि, और गलमें रहतीहै, तथा वाक्य, बल, वर्ण और स्मृति उसका कार्यहै ।

समानवायु–जठराग्निके समीपमें बसती हुई कोठेके चारोंओर विचरतीहै । अन्नको पचावै, ग्रहण करै, विरेचन और त्यागकार्य करैहै ।

अपानवायु–गुह्यदेशमें बसतीहुई नितम्ब, बस्ति, मेढ्र (लिंग) और उरुदेशमें विचरती हुई शुक्र, आर्त्तव, विष्ठा, मूत्र और गर्भको अधोनयन करैहै ।

महाबलवान् व्यान वायु–हृदयमें होकर समस्त शरीरमें चलाचलपूर्वक रक्षा करके गति, प्रक्षेप, आक्षेप, निमेष और उन्मेषादि सर्वकर्मोंको सम्पादन करतीहै॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

पित्तादुष्णोष्मणःपक्तिर्नराणामुपजायते ।
पित्तञ्चैवप्रकुपितंविकारान्कुरुतबहून् ॥ ५६ ॥
दुस्पर्शनञ्चपित्तस्यस्थानंनाभिर्विशेषतः ।
पचत्यन्नं विभजतेसाराकिट्टेपृथक्तथा ॥ ५७ ॥
तत्रस्थमेवपित्तानांशेषाणामप्यनुग्रहम् ।
करोतिबलदानेनपाचकंभ्राजकंतथा ॥ ५८ ॥
प्राकृतस्तु बलंश्लेष्माविकृतोमलउच्यते ।
उरःकण्ठशिरःक्लोमपर्वाण्यामाशयोरसः ॥ ५९ ॥
मेदोघ्राणञ्चजिह्वाचकफस्थानमुरःपरम् ।

सचापिपंचधोरस्थःश्लेष्मणादिषुकर्मसु ॥ ६० ॥
कफधाम्लाश्चशेषाणांयत्करोत्यवलंबनम् ।
अतोऽवलंबनःश्लेष्मायश्चामाशयसंश्रयः ॥ ६१ ॥
उत्साहोच्छ्वासनिश्वासचेष्टाधातुगतिःसमा ।
समोमोक्षोगतिमतांवायोःकर्माविकारजम् ॥ ६२ ॥
दर्शनंपंक्तिरूष्माचक्षुत्तृष्णादेहमार्दवम् ।
प्रभाप्रसादोमेधाचपित्तकर्माविकारजः ॥ ६३ ॥
स्नेहोबन्धःस्थिरत्वंचगौरवंवृषतावलम् ॥
क्षमाधृतिरलोभश्चकफकर्माविकारजः ॥ ६४ ॥
आममन्नरसंकेचित्केचिच्चमलसंचयम् ।
प्रथमंदोषदुष्टश्चआमइत्यभिधीयते ॥ ६५ ॥
अविपक्वंशकृद्दुष्टंदुर्गन्धंबहुपिच्छिलम् ।
सादनंसर्वगात्राणामामइत्यभिधीयते ॥ ६६ ॥

अर्थ–उष्णोष्मगुणयुक्तपित्तके द्वारा मनुष्यके शरीरमें अन्नआदि पचते हैं, और यही कुपित होनेपर नानाप्रकारके रोगोंको उत्पन्न करताहै, पित्तका स्थान दुस्पर्शन है, और विशेषकरके पित्त नाभिमेंही रहताहै। अन्नको पचाताहै. और अन्नकेसार तथा मैल अलग अलग करदेताहै। पाचक तथा भ्राजक पित्त अन्यान्यपित्तोंको अपना वल देकर सहाय देनेवालेहैं। प्राकृत वल कफ कहाताहै। और यही कफ विकृतहुआ मल कहाजाताहै। वक्ष, कण्ठ, मस्तक, क्लोम, पर्वस्थान, आमाशय, रस, मेद, नासिका और जिह्वा यह एक एक कफका स्थानहै। तहाँ वक्ष इन सब स्थानोंमें प्रधानहै। वक्षस्थानोंमें पाँचप्रकारका वसताहुआ कफ शेषरहे कफके स्थानोंमें अवलंवन करताहै। उत्साह, उच्छ्वास, निश्वास, चेष्टा, धातुगति और मोक्ष यह सर्व निर्विकारवायुके कार्य हैं। निर्विकारपित्त–दर्शन, परिपाक, ऊष्मा, क्षुधा, तृष्णा, देहकी मृदुता, कान्ति, प्रसन्नता और मेधाको करता रहताहै। स्नेह, बंध स्थिरता, गौरव, वृषता, वल, क्षमा, धृति और अलोभ यह सब निर्विकार कफके कार्य हैं। आमको कोई कोई वैद्य अन्नरस और कोईकोई मलसंचय कहते हैं। प्रथम आमको दोषदूषित तथा द्वितीयआमको अपक दुर्गंध दूषित वहुपिच्छिल सम्पूर्ण शरीरकी अवस-

न्नताजनक मलको जानना ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

वायुःसामोविबद्धाग्निमान्द्यतंद्रान्त्रकूजनैः ।
वेदनाशोफनिस्तोदैःक्रमशोङ्गानिपीडयेत् ॥ ६७ ॥
विचरेद्युगपच्चापिगृह्णातिकुपितोभृशम् ।
स्नेहाद्यैर्वृद्धिमायातिमेघेसूर्योदयेनिशि ॥ ६८ ॥
दुर्गन्धंहरितंश्यामंपीतमम्लंस्थिरंगुरुम् ।
अम्लिकाकण्ठहृद्दाहंसामंपित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ६९ ॥
आताम्रंपीतमत्युष्णंरसेकटुकमस्थिरम् ।
पक्वंविबन्धंविज्ञेयंरुचिपक्तिबलप्रदम् ॥ ७० ॥
आविलस्तन्तुलःस्त्यानःकण्ठदेशेऽव्यवस्थितः ।
सामोबलासोदुर्गन्धःक्षुधोद्गारविघातकृत् ॥ ७१ ॥

अर्थ–सामवायु–विबद्धता, मन्दाग्नि, तन्द्रा, अन्त्रकूजन, वेदना, सूजन, इन सबको उत्पन्नकर क्रमसे अंगोंको पीडित करे है, तथा एकसमयही अत्यन्त कुपित होकर देहमें विचरण, ग्रहणादिकार्य करै है, वह स्नेहादिद्वारा मेघकाल, सूर्योदय और रात्रिमें वृद्धिको प्राप्त होतीहै । दुर्गन्ध, हरित, श्याम, पीत, अम्ल, स्थिर, गुरु, अम्लिका और कण्ठदाह तथा हृदयमें दाह उत्पन्नकरनेवाले पित्तको सामपित्त कहते हैं । तथा ताँबेके रंगकी समान पीला, अत्यन्तगरम, रसमें चरपरा, अस्थिर, विबन्ध, रुचि, पाक, और बलजनक पित्तको पक्वपित्त कहतेहैं । आविल, तंतुल, स्त्यान, कण्ठस्थ, दुर्गन्ध तथा क्षुधा और डकारके दूर करनेवालेको साम कफ कहते हैं ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥

दिवास्वप्नंव्यवायंचव्यायामंशिशिरंजलम् ।
क्रोधप्रवातभोज्यानिकषायांश्चविवर्जयेत् ॥ ७२ ॥
व्यायामाज्ज्वरसंवृद्धिर्व्यायामात्स्तम्भमूर्च्छनम् ।
मरणं॰ ॰ानतःस्नेहाच्छर्दिमूर्च्छामहारुचिः ॥ ७३ ॥
गुर्वन्नभोजनाच्चापिविष्टम्भोदोषकोपनः ।
शीतवारिकषायाश्चदोषविष्टम्भिनोऽहिताः ॥ ७४ ॥

अग्निसादःखरत्वञ्चस्रोतसाञ्चाप्रवर्त्तनम् ।
तस्मान्नवज्वरीसर्वान्विषवत्परिवर्जयेत् ॥ ७५ ॥
स्वधातुवैषम्यनिमित्तजाये
विकारसंहारहराःशरीरे ।
नतेपृथक्पित्तकफानिलेभ्य
आगन्तवस्तेतुततोऽवशिष्टाः ॥ ७६ ॥
देशकालवयोवह्निसात्म्यप्रकृतिभेषजम् ।
देहसत्वबलव्याधीन्दृष्ट्वाकर्मसमाचरेत् ॥ ७७ ॥
नाभिरोजोगुदंशुक्रंशोणितंशंखकौतथा ।
मूर्धांसबस्तिकण्ठहृदयंप्राणस्यायतनंदश ॥ ७८ ॥
ज्वरितोहितमश्नीयाद्यद्यपिस्यादरोचकः ।
बलमायुर्बलंलक्ष्मीर्बलायत्तंहिजीवनम् ॥ ७९ ॥
बलेप्रतिष्ठितंकर्मतस्माद्रक्षेद्बलंबुधः ।
मनःप्रियंप्रदातव्यंहितंत्यक्त्वातदिच्छया ॥ ८० ॥
हितमेवप्रदातव्यमहितंव्यपदेशकृत् ।
संशोधयतियद्दोषान्समानुदीरयत्यपि ॥ ८१ ॥
समीकरोतिसंक्रुद्धांस्तत्संशमनमुच्यते ।
तच्चनित्यंप्रयुंजीतस्वास्थ्यंयेनोपपद्यते ॥ ८२ ॥
अजातानांविकाराणामनुत्पत्तिकरंचयत् ।
संचयंचप्रकोपंचप्रशमंकालसंश्रयम् ॥ ८३ ॥
व्यक्तिभेदञ्चदोषाणांयोवैवेत्तिसवैभिषक् ॥ ८४ ॥

अर्थ—दिनमें सोना, मैथुन, व्यायाम (कसरत) शीतलजल, क्रोध, पवनका सेवन, भारीअन्न, और कषाय, यह सब नवीनज्वरमें त्यागदेवै; कारण यहहै कि—व्यायाम करनेसे ज्वरकी वृद्धि होतीहै, मैथुन करनेसे स्तम्भ, मूर्च्छा और मरण होताहै, स्नेहपान करनेसे वमन मूर्च्छा और अरुचि उत्पन्न होतीहै, भारी अन्न सेवन करनेसे विष्टम्भ और दोषोंका कोप होताहै, शीतलजल

और कषाय सेवन करनेसे विष्टंभ दोष, मंदाग्नि, ज्वरका तीक्ष्णवेग, शरीरमें जड़ता और स्रोत बन्द हो जातेहैं, इस कारण नवीनज्वरवाला इनसबको त्याग देवै, अपने धातुओंकी विषमताके निमित्तसे जो शरीरमें विकार उत्पन्न होते हैं, वह पित्त, कफ, और वातसे पृथक् नहीं होते हैं इनसे अवशिष्ट रहे रोगोंको आगन्तुक रोग कहते हैं । देश, काल, अवस्था, अग्नि सात्म्य, प्रकृति, देह, सत्त्व, बल, और व्याधि इन सबको भले प्रकारसे विचार कर वैद्य चिकित्सा करे । नाभि, ओज, गुह्य, शुक्र, रुधिर, कनपटी, मस्तक, कटि, कण्ठ और हृदय यह प्राणोंके रहनेके दश स्थानहैं । ज्वरवाला मनुष्य हितकारकद्रव्योंको सेवन करता रहै जिससे उसके शरीरमें बल बना-रहै, क्योंकि बलही आयुहै, बलही लक्ष्मीहै, बलही जीवनहै, और सर्व कार्योंका आधारस्वरूपहै, इसकारण बुद्धिमान् मनुष्य बड़े यत्नोंसे बलकी रक्षा करता रहे । जो द्रव्य रोगीको प्रियहो और हितकारकहो, वह द्रव्य रोगीको देवै, किन्तु अहितकारक द्रव्य कभी रोगीको न देवै, जो औषध त्रिदोषको संशोधित करे, समदोषको उदीरण करे और कुपितदोषोंको शान्त करतीहै, उसको संशमन औषधि कहतेहैं । यह नित्यप्रति रोगीको देनी चाहिये, इससे रोगीके आरोग्य उत्पन्न होताहै जो विकारोंकी उत्पत्तिको नहीं होनेदेवे तथा दोषोंका संचय, प्रकोप, शमन, कालसंश्रय, दोषोंका विभाग इनको जाने वह उत्तम भिषक् कहा जाताहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

अस्थिचर्मनखमांसरोमाणिपृथिवीगुणाः ।
शुक्रशोणितमूत्रञ्चमज्जामेदःपयोगुणाः ॥ ८५ ॥
तेजसस्तृट्क्षुधानिद्राआलस्यंमैथुनंगुणाः ।
प्रसाराकुञ्चनस्तम्भबन्धनञ्चावरोधनम् ॥ ८६ ॥
वायोर्गुणाःखस्यकामःक्रोधलोभौसमोहकौ ।
रूपञ्चैतेपंचपंचपंचानांपरिकीर्तिताः ॥ ८७ ॥
आजानुपादतःपृथ्वीआनाभिजानुतोजलम् ।
नाभेराहृदयंतेजआभ्रूणहृदयान्मरुत् ॥ ८८ ॥
आमस्तंघ्राणतःस्वर्गमित्येषस्थानपंचकम् ॥ ८९ ॥

अर्थ-अस्थि, चर्म, नख, मांस और रोम, यह पृथिवीके गुणहैं। शुक्र, रुधिर, मूत्र, मज्जा और मेद यह सब जलके गुण हैं। तृष्णा, क्षुधा, निद्रा, आलस्य और मैथुन यह सब तेजके गुणहैं। प्रसारण, आकुञ्चन, स्तम्भन, बंधन और अवरोधन, यह सब वायुके गुणहैं, और काम, क्रोध, लोभ, मोह और रूप, यह सब आकाशके गुणहैं, इस प्रकार पंचभूतोंके यह पांच पांच गुण जानने।

पृथिवी पांवसे लेकर घुटनों पर्यन्त, जल घुटनोंसे लेकर नाभिपर्यंत, अग्नि नाभिसे लेकर हृदयपर्यन्त, वायु हृदयसे लेकर नासिकापर्यन्त, और आकाश नासिकासे लेकर मस्तकपर्यन्त रहताहै। इसप्रकार पाँच तत्त्वोंके पाँचस्थान शरीरमें कहेहैं ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

गुडूचीनागरक्वाथंसमभागंविपाचयेत् ।
एवञ्चपाचनंकुर्यात्पिबेयुस्तरुणज्वरे ॥ ९० ॥
रोगराट्सर्वभूतानामन्तकृद्दारुणोज्वरः ।
तस्माद्विशेषतस्तस्यप्रशान्तौयत्नमाचरेत् ॥ ९१ ॥
देहेन्द्रियमनस्तापीसर्वरोगवरोबली ।
ज्वरःप्रधानंरोगाणामुक्तोभगवतापुरा ॥ ९२ ॥
जन्मादौनिधनेचायंभवतीहनसंशयः ।
अतःसर्वविकाराणांज्वरोराजाप्रकीर्तितः ॥ ९३ ॥
ज्वरेलंघनमेवादावुपदिष्टमृतेज्वरात् ।
क्षयानिलभयक्रोधकामशोकश्रमोद्भवात् ॥ ९४ ॥
क्षयोधातुक्षयोयक्ष्माक्षयात्प्रकुपितोऽनिलः ।
उष्णंपित्तंयथासामंलंघनेनाविपच्यते ॥ ९५ ॥
आमक्षयात्प्रशमितोवायुर्नसहतेक्षणम् ।
आमाशयस्थोहत्वाग्निंसामोमार्गान्पिधापयन् ॥ ९६ ॥
निदधातिज्वरंदोषस्तस्माल्लंघनमाचरेत् ।
अनवस्थितदोषाग्नेर्लंघनंदोषपाचनम् ॥ ९७ ॥
ज्वरघ्नंदीपनंकांक्षारुचिलाघवकारकम् ।

प्राणाविरोधिनाचैनंलंघनेनोपपादयेत् ॥ ९८ ॥
बलाधिष्ठानमारोग्यंयदर्थोयंक्रियाक्रमः।
तच्चमारुतक्षुत्तृष्णामुखशोषभ्रमान्विते ॥ ९९ ॥
कार्यंनबालेवृद्धेवानगुर्विण्यांनदुर्बले।
वातमूत्रपुरीषाणांविसर्गेगात्रलाघवे ॥ १०० ॥
हृदयोद्गारकण्ठस्यशुद्धौतंद्राक्लमेगते।
स्वेदेजातेरुचौचापिक्षुत्पिपासासहोदये ॥ १०१ ॥
कृतंलंघनमादेश्यंनिर्व्यथेचान्तरात्मनि।
पर्वभेदोऽङ्गमर्दश्चकासःशोषोमुखस्यच ॥ १०२ ॥
क्षुत्प्रणाशोऽरुचिस्तृष्णादौर्बल्यंश्रोत्रनेत्रयोः।
मनसःसम्भ्रमोऽभीक्ष्णमूर्द्ध्ववातस्तमोहृदि ॥ १०३ ॥
देहाग्निबलहानिश्चलंघनेऽतिकृतेभवेत् ॥ १०४ ॥

अर्थ–गिलोय और सोंठको समान भाग लेकर काढा बनावे, यह पाचन तरुणज्वरमें पीनेसे आमदोषका परिपाक होताहै। ज्वर सबरोगोंका राजा, सर्व प्राणियोंके प्राणोंको हरनेवाला और अत्यंत भयानक है, इसकारण अनेक यत्नोंसे ज्वरके शान्तहोनेकी चेष्टा करनी चाहियें। ज्वर देह, इन्द्रिय और मनको तपानेवालाहै और सर्वरोगोंका राजा बलवान् तथा सर्व रोगोंमें श्रेष्ठ, ऐसे पूर्वकालमें भगवान्ने कहाहै। प्राणियोंके जन्मकी आदि और मरणसमयमें निश्चय ज्वर उत्पन्न होताहै, इसकारण सर्वरोगोंका राजा ज्वर कहाहै। क्षय, वात, भय, क्रोध, काम, शोक और श्रम इन सबको छोड़कर अन्यकारणोंसे उत्पन्न हुए ज्वरमें प्रथम लंघन करने चाहियें। क्षयशब्दका अर्थ यहाँ धातुक्षय और यक्ष्मारोगका है, इस क्षयमें वायु अत्यन्त कुपित होतीहै। उष्ण आमसहित पित्त लंघन करनेसे पकजाताहै, आमके नाश होनेपर वायु शान्त होजातीहै, और रोगी क्षणभरभी क्षुधाको नहीं सहन करसक्ताहै। आमाशयमें स्थित हुआ सामदोष अग्निको नष्ट करके स्रोतोंको आच्छादनकर रोगोंको उत्पन्न करताहै, इसकारण ज्वरमें प्रथम लंघन कराना चाहिये। जिनके वातादि दोष और अग्नि यथास्थलमें अवस्थित नहींहै, उनको लंघन दोषोंको पचानेवाला, ज्वरको हरनेवाला, अग्निप्रदीपक और रुचि तथा देहकी लघुताकारक होताहै।

इसप्रकार लंघन करावै कि जिससे मनुष्य निर्बल न होय, क्योंकि बल आरोग्यका प्रधान आश्रयहै, जिसके लिये यह क्रियाक्रम कहाहै। वात, क्षुधा, तृषा, मुखशोष और भ्रमयुक्त मनुष्य, तथा बालक, वृद्ध, गर्भवती, और दुर्बलमनुष्यको कभीभी लंघन नहीं कराने चाहियें। अधोवात, मूत्र, विष्ठा इन सबके त्यागमें, शरीरकी लघुतामें, हृदय, डकार, कंठ और मुखकी शुद्धि, तन्द्रा, ग्लानि, पसीना, रुचि इनमें क्षुधा और तृषा यह एकबार उत्पन्न होवे इन सबमें लंघन कराना चाहिये और अन्तरात्मा वेदनारहित होनेपर लंघन कराने योग्य है। पर्वभेद कास, अंगमर्द, मुखशोष, क्षुधानाश, अरुचि, तृष्णा, कर्ण और नेत्रोंकी दुर्बलता, बारबार मनमें भ्रम, अत्यन्तडकार, अंधकारदर्शन, देह, अग्नि और बलहानि यह सब अत्यंत लंघनकरनेसे उत्पन्न होतेहैं ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ ॥१०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

सद्योभुक्तस्यवाजातोज्वरेसन्तर्पणोत्थिते।
वमनंवमनार्हस्यशस्तमित्याहवाग्भटः ॥ १०५ ॥
कफप्रधानानुत्क्लिष्टान्दोषानामाशयस्थितान्।
बुद्ध्वाज्वरकरान्कालेवम्यानांवमनैर्हरेत् ॥ १०६ ॥
उत्क्लिष्टानितिउपस्थितवमने
उद्युक्तान्वमनैर्वमनाध्यायोक्तैः ॥ १०७ ॥
अनुपस्थितदोषाणांवमनंतरुणेज्वरे।
हृद्रोगंश्वासमानाहंमोहञ्चकुरुतेभृशम् ॥ १०८ ॥
तृष्यतेसलिलंचोष्णंदद्याद्वात॰ ॰फज्वरे।
मद्योत्थेपैत्तिकेवाथशीतलंतिक्तकैःशृतम् ॥ १०९ ॥
दीपनंपाचनंचैवज्वरघ्नमुभयञ्चयत्।
स्रोतसांशोधनंबल्यंरुचिस्वेदप्रदंशिवम् ॥ ११० ॥
अविरेच्याबालवृद्धश्रान्तभीरुनवज्वराः।
तथाभ्यामेवयोगाभ्यांकषायंपिप्पलीबलाम् ॥ १११ ॥
शृतशीतांपिबेच्चापित्रिवृच्चूर्णावचूर्णिताम्।

आमेज्वरेकफेरक्तेएतत्स्रंसनमुच्यते ॥ ११२ ॥
यवक्षारान्वितोयद्वाक्वाथोधान्यपटोलयोः ॥ ११३ ॥

अर्थ-तत्काल भोजन करनेसे उत्पन्न हुए ज्वरमें और सन्तर्पणसे उत्पन्न हुए ज्वरमें वमन करने योग्य मनुष्यको वमन करानी चाहिये, यह वाग्भट आचार्यका मतहै । कफप्रधान, और अत्यन्त क्लेशकारक अर्थात् जिनसे वमन होनेकोहो, आमाशयमें स्थित ज्वरकारक दोषोंमें वमनयोग्य मनुष्यको वमनकारक औषधिको सेवन कराय दोषोंको दूर करै । तरुणज्वरमें निर्दोषमनुष्यको वमन करावे तो हृदयरोग, श्वास, आनाह और मोह उत्पन्न होयहै, ज्वररोगीको तृष्णा होवै तौ कफज्वरमें गरम और पित्तज्वरमें तथा मद्यपानजनकज्वरमें कड़वी औषधियोंके रसके साथ औटे हुए जलको शीतल कर पीनेको देवै, यह दोनों जलकी विधि-अग्निदीपक, पाचक, ज्वरनाशक, स्रोतोविशोधक, बलकारक तथा रुचि और पसीनेको उत्पन्न करैहै । बालक, वृद्ध, श्रान्त, भीरु और नवीनज्वरवाले मनुष्यको कभी भी विरेचन नहीं करावे । कफ और रक्त सहित आमज्वरमें पीपल और खरैटीका काढा शीतलकर उसमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पीवे, यह स्रंसन है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥

औषधंहेमरजतमृद्भाजनपरिस्थितम् ।
पिबेत्प्रसन्नवद्भक्त्यापीत्वापात्रमधोमुखम् ॥ ११४ ॥
निक्षिप्यचाननेतस्यताम्बूलानुप्रयोजयेत् ।
ॐह्रींह्रींविद्युताननह्रंह्रंफट्स्वाहा ॥ ११५ ॥
एतन्मंत्रंतालुस्थानेचूर्णमृक्षितेलिखित्वादिन-
त्रयंखादितंदेयंज्वरोपशमनंभवति ।
ॐ ब्रह्मरुद्रप्रभुर्मुन्दविष्णुवायुहुताशनाः ।
रक्षन्तुज्वरितंबालंमुञ्चमुञ्चइमंतथा ॥ ११६ ॥
ग्रहेस्वाहा ।
अनेनसर्षपंमंत्रयित्वानिर्मुञ्चयेत् ।
ओं ह्रीं ह्रीं हुं फट् स्वाहा ।

अनेननिर्गुण्डीपत्रचूर्णधूपंदद्यात् ।
विषमज्वरोनश्यतिडाकिन्यादयोनप्रभवन्ति ।
कृष्णाम्बरदृढाबद्धगुग्गुलूलूकपुच्छजः ॥
धूपश्चातुर्थिकंहन्तितमःसूर्योदयेयथा ॥ ११७ ॥
केशराजभृंगराजरसेनवस्त्रंकृष्णंविधाय ।
तेनापिगुग्गुलुपेचकपुच्छपक्षंबद्धाधूपः ॥ ११८ ॥
ब्रह्मात्वमेवविष्णुश्चरुद्रस्त्वंसहदुर्गया ।
आर्तस्यरोगनाशायप्रत्यक्षोभवपावकः ॥ ११९ ॥
अनेनधूपयेत् ।
अगस्त्यपुष्पस्वरसेननस्यं
निहन्तिचातुर्थिकमुग्रवीर्यम् ॥ १२० ॥
अगस्त्यपुष्पंवाकूसाना ।
कर्मसाधारणंकुर्यात्तृतीयकचतुर्थके ।
प्रायशःसन्निपातेनदृष्टःपंचविधोज्वरः ॥ १२१ ॥
आगन्तोरनुबन्धोहिप्रायशोविषमज्वरः ।
सन्निपातेततोभूयान्नदोषःपरिकीर्त्तितः ॥ ११२ ॥
ज्वराःपंचमयोक्तायेपूर्वंसन्ततकादयः ।
चत्वारःसन्ततंहित्वाज्ञेयास्तेविषमज्वराः ॥ १२३ ॥
इदं ग्रन्थान्तरे ।

अर्थ—औषधिको सुवर्णके बरतनमें वा चाँदीके बरतनमें, अथवा मट्टीके बरतनमें करके प्रसन्नमनसे भक्तिपूर्वक पीकर बरतनको उलटा करके गेर देवै, और फिर पान भक्षण करै । (ओं ह्रीं ह्रीं विद्युतानन हं हं फट् स्वाहा) इस मंत्रको चूरनकी टिकियापै लिख रोगीके तालूपै धरदेवै, इस प्रकार तीनदिन इस मंत्रको लिखकर उस टिकियाको पकाकर खवानेसे ज्वर शान्त होताहै । (ओं ब्रह्मरुद्रप्रभुर्मुन्दविष्णुवायुहुताशनाः । रक्षन्तु ज्वरितं बालं मुञ्च मुञ्च इमं तथा ॥ ग्रहे स्वाहा) इस मंत्रसे सरसोंको पढ़कर रोगीके चारों-

और बखेरै, फिर (ओं ह्रीं ह्रीं हुं फट् स्वाहा) इस मंत्रको पढ़कर सम्हालुके पत्तोंके चूर्णकी धूप रोगीके देहमें देवै, इससे विषमज्वर और डाकिनी आदिग्रह दूर होतेहैं ।

कालेवस्त्रमें गूगल और उल्लूके पंखको खेंचकर बाँध धूपदेनेसे चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर नष्ट होताहै । जैसे सूर्योदयसे अंधकार दूर होताहै । कुकुरभाँगरा और, भाँगरा इनके रसमें वस्त्रको कालाकर उस वस्त्रमें उल्लूके पंख और गूगलको दृढ़ बाँधकर (ब्रह्मा त्वमेव विष्णुश्च रुद्रस्त्वं सह दुर्गया। आर्त्तस्य रोगनाशाय प्रत्यक्षो भव पावकः॥) इसमंत्रको पढ़ धूपदेनेसे अथवा अगस्तियाके फूलोंके रसका नास देनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होताहै । तृतीयक और चातुर्थिकज्वरमें साधारण चिकित्सा करनी चाहिये । विषमज्वरमें प्रायः आगन्तुकज्वरका अनुबन्ध होताहै । संततकादि पाँचप्रकारके ज्वरोंमें त्रिदोषका संभव होताहै, और उनमें सन्ततको छोड़ और चारप्रकारके ज्वरोंको विषमज्वर कहतेहैं ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ ॥ १२० ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥

अथ रसरत्नाकरोक्तं यथा ।

कुर्याद्भूतज्वरेनस्यंव्योपाम्बुतुलसीरसैः ।
गोपालपुत्रिकामूलंसहदेवीबलाथवा ॥ १२४ ॥
गलेबद्धाज्वरंहन्तिविष्णुक्रान्ताथकर्णयोः ।
सूर्यावर्तस्यमूलन्तुकर्णेभूतज्वरापहम् ॥ १२५ ॥
कर्कटस्यरसेभूतमृदातुतैलकेकृते ।
एकाहिकंज्वरंहन्तिनस्येनगिरिकर्णिका ॥ १२६ ॥
भूतकर्कटधूपेन सद्यः शीतज्वरं हरेत् ।
काकमाच्याश्च मूलं तु कर्णे बद्धं निशिज्वरम् ॥१२७॥
निहन्तिनात्रसंदेहोयथासूर्योदयेतमः ।
श्मशानसहदेव्यावादूर्वायावाथमूलिका ॥ १२८ ॥
सूत्रेणवेष्टिताबद्धाहस्तेसर्वज्वरापहा ।
वृक्षेपुनर्वसौग्राह्यामन्दारस्यचबंधकम् ॥ १२९ ॥

तद्दक्षिणकरेबद्धंशीतज्वरहरंपरम् ।
चन्द्रस्यग्रहणेग्राह्यासर्पाक्ष्यामंत्रिताशिफा ॥ १३० ॥
वामेकरेचतांबद्धाकृष्ण सूत्रैर्ज्वरंहरेत् ।
तामेवबन्धयेत्कर्णेकृष्णसूत्रेणदक्षिणे ॥ १३१ ॥
त्र्याहिकंतुज्वरंहन्तिनात्रकार्याविचारणा ।
ऊर्णनाभस्यजालेनवर्तिंकृत्वाप्रयत्नतः ॥ १३२ ॥
क्षालयेत्तिलतैलेनकज्जलंग्राहयेच्छनैः ।
अञ्जयेन्नेत्रयुगलंत्र्याहिकन्तुज्वरंहरेत् ॥ १३३ ॥
श्मशानजातसर्पाक्ष्यारवौमूलंसमुद्धरेत् ।
घृतैःपिष्ट्वाललाटेषुतिलकत्र्याहिकप्रणुत् ॥ १३४ ॥
अपामार्गस्यमूलन्तुपुष्येचातुर्थिकप्रणुत् ।
बृहत्यौचापिपुष्येणसमुद्धृत्यतुमूलिकाम् ॥ १३५ ॥
धूपाच्चातुर्थिकंहन्तिवासागोपालपुत्रिका ।
श्वेतार्ककरवीरस्यअश्विन्यांमूलमुद्धरेत् ॥ १३६ ॥
तण्डुलोदकपानेनपृथक्चातुर्थनाशनम् ।
त्रिवन्यायाश्चमूलन्तुछुछुन्दर्याःसमायुतम् ॥ १३७ ॥
चातुर्थिकंज्वरंहन्तितत्क्षणाद्धूपनाज्ज्वरः ।
चन्द्रस्यग्रहणेग्राह्यासर्पाक्षायाश्चमूलिका ॥ १३८ ॥
अन्तर्धूमेनसादग्धाच्छागीमूत्रेणचाञ्जनम् ।
चातुर्थिकहराश्रेष्ठासद्यःप्रत्ययकारिणी ॥ १३९ ॥

अर्थ—त्रिकुटेके काढेमें तुलसीका रस मिलाकर नास देनेसे भूतज्वर शान्त होताहै । गोपालककडी पियाबाँसा वा खिरैंटीकी जडको गलेमें अथवा अपराजिता वा सूर्यावर्त्तकी जडको कानमें बाँधनेसे भूतज्वर नष्ट होताहै । केकडाजन्तुके रसमें तेलको पकाकर नास लेनेसे, अथवा कोयलीके रसके द्वारा नास लेनेसे ऐकाहिकज्वर दूर होताहै, केकडा जन्तुके मांसके द्वारा धूप देनेसे तत्काल शीतज्वर नाश होताहै । और मकोयकी जडको कानमें बाँधनेसे रात्रिज्वर दूर

होताहै । श्मशानभूमिमें उत्पन्न हुई सहदेवी अथवा दूबकी जडको सूतके द्वारा हाथमें बाँधनेसे सर्व ज्वर नष्ट होतेहैं । पुनर्वसुनक्षत्रमें मन्दारकी शिफा लाकर दाहिने हाथमें बाँधनेसे शीतज्वर शमन होताहै । चन्द्रग्रहणके समय मंत्रपाठपूर्वक सर्पाक्षीकी जडको ले सूतसे बांधे हाथमें बांधनेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होतेहैं, और दाहिने कानपै बांधनेसे तृतीयक ज्वर शान्त होताहै । मकडीके जालेकी बत्ती बनाकर तिलके तेलमें भिजो दीपकमें जला कज्जल ग्रहणकरै, फिर इस कज्जलको दोनों नेत्रोंमें लगावै तो त्र्याहिक ज्वर दूर होजाताहै । रविवारके दिन श्मशानभूमिमें उत्पन्न हुई सर्पाक्षीकी जडको उखाडलेवै, फिर उसको घीके साथ पीसकर ललाटमें तिलक लगानेसे त्र्याहिकज्वर शांत होताहै । चिरचिटेकी जडको पुष्यनक्षत्रमें उखाडकर हाथपै बांधनेसे चातुर्थिकज्वर नष्ट होताहै । बृहती कटेरी अथवा गोपालकाकडीकी जडको पुष्यनक्षत्रमें उखाडकर धूपदेनेसे चातुर्थिकज्वर नाश होता है। सफेद आक और कनेरकी जडको अश्विनीनक्षत्रमें उखाडकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे चातुर्थिक ज्वर दूर होवै। त्रिशुनीकी जडको छुछुन्दरीके साथ धूप देनेसे चातुर्थिक ज्वर दूर होताहै । चन्द्रग्रहणमें सर्पाक्षीकी जडको उखाडकर इसप्रकार जलावै कि–जिससे उसमें धुआँ न निकले, फिर उसको बकरीके मूत्रमें घिस अंजन लगावै तौ चातुर्थिकज्वर शीघ्रही शांत होजाता है ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

ह्रंह्रींह्रींफः न्द्रूंफट्नमः ।

अनेनउलूकादि सर्वेयोगाअष्टोत्तरशत-
मंत्रितेनासिद्धिःऔषधोत्पाटनमाह ।
स्वभावारण्यएकान्तेप्रभातेमंत्रयुक्तितः ।
संग्राह्यमौषधंसिद्धंनोचेद्भवतिकाष्ठवत् ॥ १४० ॥
ओंनमस्तेऽमृतसंभवेरसवीर्यविवर्द्धिनि ।
बलमा[illegible]श्चमेदे[illegible]न्मेजहिदूरतः ॥ १४१ ॥
येनत्वांखनतेब्रह्मायेनत्वांखनतेभृगुः ।
येनवे[illegible]ऽथव[illegible]णस्तेनत्वामुपचक्रमे ॥ १४२ ॥

तेनाहंखनयिष्यामिमंत्रपूतेनपाणिना ।
ओंआतप्तेतेमात्रियतेतेजोवीर्योऽन्यथाभवेत् ॥ १४३ ॥
अत्रैवातिष्ठकल्याणि ममकार्यकरीभव ।
ममकार्यभूतेसिद्धेततःस्वर्गेगमिष्यासि ॥ १४४ ॥
ॐ ह्रींचण्डेन्द्रूंफट्स्वाहा ।
अनेनमंत्रेणनाणुसंयुतमातपेत्रिदिनंशुष्कं
निहितंवीर्यधृग्भवेत् ।
अर्कपुष्येसर्वाऔषध्यउत्पाट्यन्ते ।
उत्पाटितेसातिमूलिकायांछेदनबन्धनमाह ।
ओंरक्तेचामुण्डेओरुओरुअमुकस्यसर्वज्वरं
कचेवत्वंद्रुंफट्स्वाहा ।
अनेनमंत्रेणमूलिकाछेदनं क्रियते ।
अपरमंत्रेणवेष्टयित्वाउक्तस्थानेबंधयेत् ॥
मण्डूरंदेवदारुश्चनराविष्टातुकुंकुमम् ॥
नरकेशसमायुक्तंधूपंज्वरविनाशनम् ॥ १४५ ॥
उलूकस्यतुपक्षाणिमहिपाक्षन्तुगुग्गुलुम् ।
ज्वरार्त्तंधूपयेत्तेनछादितंकृष्णकम्बलैः ॥ १४६ ॥
इमंमंत्रंपठेद्यस्तुज्वरंसर्वंहरेत्परम् ॥ १४७ ॥
ओंनमोभगवतेरुद्रायओंक्षिप्रकारिणिकपालमालिनि
जटिलेदुर्गन्धदीर्घनखश्मश्रुरोमविकटाननधारिणि
ज्वरमैकाहिकंद्व्याहिकंत्र्याहिकंचातुर्थिकंमौहूर्त्तिकं
दिनज्वरंसन्ध्याज्वरंसर्वेषांनराणाम् उत्सादयउत्सा-
दयआरोग्यकरीभगवतीसर्वदेतिस्वाहा ।
अनेनमंत्रेणसर्वधूपादेयाः ।
मूषिकस्यपुरीषेणतथाचर्मचटस्यतु ।

सर्षपामाहिषाक्षश्चमन्त्रैर्धूपोज्वरापहः ॥ १४८ ॥
ओंपित्तज्वरवातज्वरकफज्वराथब्रह्मज्वरमाहेन्द्रज्वरा-
मजातज्वरसह पातालजा श्रीराम तोहाकारे हऊसि-
द्धिगुरुरूपा।

अनेनमंत्रेणमार्जयेदिति।

अथ ज्वरपत्रिका यथा।

ओंज्वरहृदयज्वरमार्त्तयिष्यामि।

भोभोज्वरश्शृणुशृणुहनहनगर्ज्जगर्ज्जैकाहिकं
द्व्याहिकंत्र्याहिकंचातुर्थिकंसाप्ताहिकमर्द्धमासि-
कंनैमिपिकमटपटन्हुंफट्चक्रपाणिराज्ञापयति
ओंधृट्शिवोमुञ्चयाद्रुंमुञ्चकचंमुञ्चउरुमुञ्च
कटिंमुञ्चजंघांमुञ्चपादंमुञ्चभूम्यांगच्छस्वाहा।
शृणुशृणुवज्रपाणिराज्ञापयति।
अमुकस्यज्वरंहनहनह्रुंफट्स्वाहा।
एतदलक्तकेनपत्रिकांलिखित्वाचाण्डालप्रोत्सा-
दनंविधायबलिपूर्वकंसवस्त्रंशिरसिबद्ध्वादक्षिण-
स्यांदिशिप्रस्थापयेदिति॥
ओंह्रींसःअमृतंकुरुअमृतेश्वरभैरवायनमः।
अनेनसप्ताभिमंत्रितंकृत्वासर्वरोगाययोज्यम्॥
तुल्यांशंचूर्णयेत्खल्वेपिप्पलींहिंगुलंविषम्।
त्रिगुंजंमधुनापेयंवातज्वरविनाशनम्॥ १४९ ॥
भोजनान्तेज्वरेजातेकुर्यात्पूर्वामिवक्रियाम्।
दिनान्तेदापयेत्पथ्यंसज्वरेविज्वरेऽपिच॥ १५० ॥
मुस्तपर्पटमेरण्डकषायैर्भस्मसूतकम्।
गुंजमात्रंमूर्च्छितंवादेयंवातज्वरापहम्॥ १५१ ॥

अर्थ-(ओं ह्रीं ह्रीं फः न्द्रूं फट् नमः) इसमंत्रको एकसौआठवार पढ़नेसें सम्पूर्ण उलूकादियोग सिद्ध होजातेहैं। स्वभावसे अरण्यके एकान्तमें प्रभातके समय जाकर मंत्रयुक्तिके साथ औषधको ग्रहणकरै, इसप्रकार करनेसे सिद्धि होती है, नहीं तो औषधि काठके समान जाननी । 'ओं नमस्तेऽमृतसंभवे' इत्यादि । इस मंत्रको पढकर औषधिको उखाड़ लावै, फिर तीन दिन धूपमें सुखानेसे अत्यन्तवीर्यधारक होजातीहै । सर्वप्रकारकी औषधि पुष्यार्कनक्षत्रमें उखाड़नी चाहिये । आगे औषधिका मूलच्छेदन और बंध कहते हैं । 'ओं रक्ते चामुण्डे ओरु ओरु अमुकस्य सर्वज्वरं कचेवत्वं द्रूं फट् स्वाहा' इसमंत्रको पढ़ कर औषधिका मूल छेदन करे और दूसरे मंत्रसे उक्तस्थानमें बाँधै, मण्डूर, देव दारु, नरविष्ठा, केशर और मनुष्यके बाल इनसवको एकत्र करके धूपदेनेसे अथवा उल्लूके पंख और महिषाक्ष गूगलको काले कम्बलमें बाँधकर धूपदेनेसे सर्वप्रका-रके ज्वर दूर होते हैं । 'ओं नमो भगवते रुद्राय' इत्यादि । इस मंत्रको पढ़कर सर्व प्रकारकी धूप देनी चाहिये । चूहे और चिमगादरकी विष्ठा, सरसों और महिषाक्षगूगल, इन सबकी धूप देवैतो सर्व प्रकारके ज्वर दूर होवैं । 'ओं पित्त ज्वरवातज्वर कफज्वराय०' इत्यादि । इसमंत्रके द्वारा मार्जन करै । 'ओं ज्वर हृदय' इत्यादि । इस मंत्रकी लाखसे पत्री लिखकर बलिदानपूर्वक चण्डालप्रो च्छादन विधानकर रोगीके मस्तकमें बाँध दक्षिण दिशामें स्थापन करनेसे ज्वर दूर होजाताहै । 'ओं ह्रीं सः अमृतं कुरु अमृतेश्वर०' इत्यादि । इस मंत्रसे औष धिको सातबार पढ़कर सबरोगोंमें प्रयोग करनी चाहिये । पीपल, सिंग्रफ और विष इन सबको समान भाग लेकर खरलसे पीस तीन रत्ती प्रमाण दहीके पानीके साथ सेवन करै तौ वातज्वर नष्ट होय । भोजनके अन्तमें ज्वर होवै तौ पूर्वोक्तक्रिया करनी चाहिये । ज्वरयुक्त अथवा विनाही ज्वरवाले मनुष्यको दिनान्तमें पथ्य सेवनकरना चाहिये । नागरमोथा, पित्तपापड़ा, और अरंड इनका काढ़ा बना उसमें मूर्च्छित पाराकी भस्म एकरत्ती प्रमाण मिलाकर सेवन करनेसे वातज्वर नाश होताहै ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ १५० ॥ १५१ ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंमरिचंटंगणन्तथा ।
त[illegible]सितायोज्य मत्स्यपित्तेनभावयेत् ॥ १५२ ॥
त्रिदिनंमर्द[illegible]ऽयञ्चन्द्रशेखरः ।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्दद्यंशीतोदकंनु ॥ १५३ ॥

ततःपटोलमुद्गश्चपथ्यंतत्रप्रदापयेत् ।
त्रिदिनात्पित्तश्लेष्मोत्थमत्युग्रंनाशयेज्ज्वरम् ॥ १५४ ॥

अर्थ–शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगंधक दोतोले, कालीमिरच एकतोला और सुहागा एकतोला, तथा सबकी बराबर मिश्री मिलाकर मत्स्यपित्तमें भावना देकर तीन दिन खरल करनेपर चन्द्रशेखररस बनजाताहै । अनुपान अदरखके रसके साथ दोगुंजाप्रमाण सेवन करै, पश्चात् शीतलजल पीवै. पथ्य परवल और मूँग-की दाल देवै । यह चन्द्रशेखररस पित्त और कफसे उत्पन्न हुए ज्वरको तीन दिनमें नष्ट करैहै ॥ १५२ ॥ १५३ ॥ १५४ ॥

त्रिफलालोहम् ।

त्रिफलामृतलोहञ्चभृंगराजंचचूर्णितम् ।
चूर्णमर्जुनपत्रस्यत्रिजातकशिलाजतु ॥ १५५ ॥
त्र्यूषणंतुल्यतुल्यांशंसर्वेषाञ्चसमांशतः ।
क्षौद्रेणवटिकाकार्याकर्षमात्रन्तुभक्षयेत् ॥ १५६ ॥
सर्वज्वरहरःश्रेष्ठोह्यनुपानंप्रकल्पयेत् ॥ १५७ ॥

अर्थ–हरड़, बहेडा, आमला, विष, लोहा, भाँगरेके पत्तोंका चूर्ण, दालचीनी, अर्जुनवृक्षके पत्तोंका चूर्ण, इलायची, तेजपात, शिलाजीत, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सबको समानभाग लेकर सहतमें गोली बनावे, उन गोलियोंको दो तोले प्रमाण भक्षण करै, इससे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होजातेहैं । इसपै यथायोग्य अनु-पान करना चाहिये ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥

ज्वरारिरसः ।

मेषीक्षीरेणदरदमम्लवर्गैश्चभावितम् ।
सप्तवारंप्रयत्नेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ॥ १५८ ॥
दरदघनरसानांशुद्धनागाभ्रकाणां
सुभगविडशिलानांसर्वमेकत्रयोज्यम् ।
विपिननृपदलोत्थैःशोषयेन्मर्दयेच्च
दिवससदशसमाप्तेवर्तिकाकारणीया ॥ १५९ ॥
गुंजाप्रमाणतोनित्यंभक्षयेदार्द्रकेणवै ।

सर्वशूलविनाशार्थंकफशोथविनाशनम् ॥ १६० ॥
दत्तमात्रंज्वरंहन्तिज्वरारिश्चनिगद्यते ॥ १६१ ॥

अर्थ–सिंग्रफको भेड़के दूधमें सातबार भावना दे. फिर अम्लरसमें सातबार भावना देवै, इसप्रकार करनेसे सिंग्रफ शुद्ध होजाताहै, ऐसा शोधाहुआ सिंग्रफ, लोहा, पारा, शुद्धसीसा, अभ्रक, सुहागा, विड़लवण और मैनशिल इन सबको समान भाग लेकर अमलतासके पत्तोंके रसमें मर्दन कर सुखावै. इसप्रकार दश-दिन मर्दन और सुखाकर रत्तीके प्रमाण गोली बनावै, एक गोली अदरखके रसके साथ खावै, इससे सर्वप्रकारके शूल, कफ और सूजन दूर होजाते हैं और यह ज्वराररिस एकहीबार देनेसे ज्वरको दूर करताहै ॥१५८॥१५९॥१६०॥१६१॥

ज्वरांकुशः ।

सूतार्कगंधचपलाजयपालतिक्ता
पथ्यात्रिवृद्विषकतिन्दुकजंसमांशम् ।
सम्मर्द्यवज्रिपयसामधुनाद्विगुंजं
त्रैलोक्यडम्बरभवोऽभिनवज्वरघ्नः ॥ १२६ ॥

अर्थ–पारा, ताँबा, गन्धक, सोनामाखी, जमालगोटा, कुटकी, हरड़, निसोथ और कुचला इन सबको समानभाग लेकर थूहरके दूधमें खरल करके दो रत्तीप्रमाण गोली बनाले, एक गोली सहतके साथ खावै तो नवीनज्वर दूर होताहै । यह त्रिलोकमें आश्चर्यकारक ज्वरांकुश है ॥ १६२ ॥

रसस्यद्विगुणंगंधंगंधतुल्यन्तुटंगणम् ।
रसतुल्यंविषंयोज्यंमरिचंपंचधाविषात् ॥ १६३ ॥
कट्फलंदन्तिबीजञ्चप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ।
ज्वरांकुशरसोह्येषचूर्णयेद्याममात्रकम् ॥ १६४ ॥
मासैकेननिहन्त्याशुज्वरंजीर्णत्रिदोषजम् ॥ १६५ ॥

अर्थ–पारा एकभाग, गंधक दोभाग, सुहागा दोभाग, विष एकभाग, मिरच पाँच भाग, तथा कायफल और जमालगोटा दो दो तोले प्रमाण लेकर चूर्ण कर ले, इस चूर्णको सेवनकरनेसे एक महीनेमें जीर्णज्वर और सन्निपातज्वर दूर होता है ॥ १६३ ॥ १६४ ॥ १६५ ॥

जयन्तीवाजयापीताविषमज्वरशान्तये ।
चन्दनस्यकषायेणरक्तपित्तज्वरापहा ॥ १६६ ॥

अर्थ–जयन्ती अथवा जया औषधिको पीनेसे विषमज्वर शान्त होताहै । चन्दनके काढ़ेको पीनेसे रक्तपित्तज्वर दूर होता है ॥ १६६ ॥

महाज्वरांकुशः ।

सूतंगंधंविषंतुल्यंधूर्तबीजंत्रिभिःसमम् ।
चतुर्णांद्विगुणंव्योपंचूर्णंगुंजाद्वयंहितम् ॥ १६७ ॥
जम्बीरकस्यमज्जायामार्द्रकस्यद्रवैर्युतम् ।
ज्वरांकुशोरसोनाम्नाज्वरान्सर्वान्निकृन्तयेत् ॥ १६८ ॥
एकाहिकंद्व्याहिकंचत्र्याहिकंवाचतुर्थकम् ।
विषमश्चत्रिदोषोत्थंहन्तिसद्योनसंशयः ॥ १६९ ॥

अर्थ–एकभाग पारा, एकभाग गंधक, एकभाग विष, तीनभाग धतूरेके बीज और बारहभाग त्रिकुटा, इन सबका चूर्ण बनावे, उस चूर्णको दोगुंजा प्रमाण लेकर जम्भीरी नींबूकी मज्जाके साथ और अदरखके रसके साथ सेवन करे, यह महाज्वरांकुश नामवाला रस,–सर्वप्रकारके ज्वरोंको हरैहै, तथा एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, विषमज्वर, त्रिदोषज्वर, इन सबको निःसन्देह तत्काल नष्ट करैहै ॥ १६७ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥

पारदंहिंगुलंताम्रंमाक्षिकंतुत्थमेवच ।
वंगंसूतश्चगंधश्चखर्परश्चमनःशिला ॥ १७० ॥
तालकंघनपाषाणोगैरिकंटंगणंतथा ।
दन्तीबीजश्चसर्वाणिचूर्णयित्वाविभावयेत् ॥ १७१ ॥
जयन्तीविजयाचिंचातुलसीशालपर्णिका ।
प्रत्येकंचरसंदत्त्वानिर्जलेवाथभूगृहे ॥ १७२ ॥
चणमात्रांवटींकृत्वाछायाशुष्कन्तुकारयेत् ।
महाग्निकारकश्चैवज्वराणांकुलनाशनः ॥ १७३ ॥
द्वन्द्वजंसर्वजंचैवचिरकालसमुद्भवम् ।
एकाहिकंद्व्याहिकंचतथात्रिदिवसज्वरम् ॥ १७४ ॥

चातुर्थिकंतथात्युग्रंजलदोषसमुद्भवम् ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥ १७५ ॥
महाज्वरांकुशोनामदेयंगुंजाचतुष्टयम् ॥ १७६ ॥
घनपाषाणमभ्रकम् ।

अर्थ–पारा, सिंग्रफ, ताँबा, सोनामाखी, तूतिया, राँग, पारा, गंधक, खपरिया, मैनशिल, हरताल, अभ्रक, गेरू, सुहागा और जमालगोटा इन सबको समानभाग लेकर चूर्णकरे, फिर उस चूर्णको जयन्ती, भाँग, इमली, तुलसी और शालपर्णी इन सबके निर्जलरसमें अलग अलग भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना छायामें सुखादे, यह महाज्वरांकुशरस अत्यन्त अग्निको दीपन करनेवाला, ज्वरोंके कुलको विध्वंस करनेवाला, तथा द्वन्द्वज, त्रिदोषज्वर, जीर्णज्वर, एकाहिकज्वर, द्व्याहिकज्वर, तृतीयज्वर, चातुर्थिकज्वर, अत्युग्रज्वर, जलदोषज्वर, और सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करै है, जैसे सूर्य अंधकारको दूर करैहै । इस महाज्वरांकुशकी मात्रा चार गुंजाकी है ॥ १७० ॥ ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥

कफज्वरादौ ।

लाजासक्तुकपथ्यंस्यात्सैन्धवेनविचूर्णयेत् ।
पचेज्जीर्यत्यविघ्नेनज्वरीजीवेत्तदाध्रुवम् ॥ १७७ ॥
रक्तपित्तहरत्वेनदाहज्वरकृतेतथा ।
सक्तवःशीतवीर्याःस्युर्लाजामण्डःकफोत्थके ॥ १७८ ॥
तेनादौकेवलानहितान् ।
पाचनोदीपनोलाजमण्डस्तेनोष्णइष्यते ।
मुस्तपर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ॥ १७९ ॥
शृतशीतजलंदद्यात्पिपासाज्वरशान्तये ।
शुण्ठीबलाहकोशीरैःपिबेत्तोयंप्रसाधितम् ॥ १८० ॥
दाहशीतज्वरहरंपाचनंचतृषापहम् ॥ १८१ ॥
बलाहको मुस्तकम् ।

दोषावस्थांसमालोच्यप्रयुक्तःसन्निपातिनः ।
लंघनेदशमूलादिकषायोनविरुध्यते ॥ १८२ ॥

कषायोऽत्रार्द्धशृतंनवज्वरेमुख्यकषायनिषेधात ।

मुख्यभेषजसम्बन्धोनिषिद्धस्तरुणज्वरे ॥ १८३ ॥
तोयपेयादिसंस्कारेनिर्दोषस्तेनभेषजम् ।
यःकषायैःकषायःस्यात्सवर्ज्यस्तरुणेज्वरे ॥ १८४ ॥
कषायेणाकुलीभूतादोषाजेतुंसुदुस्तराः ।
उद्यन्तेचविमुच्यन्तेकुर्वतेविषमज्वरम् ॥ १८५ ॥
कर्षैकमात्रंतद्द्रव्यंसाधयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि ।
अर्द्धशृतंप्रयोक्तव्यंपानेपेयादिसंविधौ ॥ १८६ ॥

अर्द्धशृतमर्द्धावशेषितम् ।

वमितंलंघितंकालेयवागूभिरुपाचरेत् ।
यथार्ह्यौषधसिद्धाभिर्मण्डापूर्वाभिरादितः ॥ १८७ ॥
धन्याकपिप्पलीविश्वदशमूलीजलंपिबेत् ।
पेयांसर्वज्वरहरांसैन्धवेनावचूर्णिताम् ॥ १८८ ॥
मृद्वीकापिप्पलीमूलचव्यामलकनागरैः ।
यवागूःस्यात्त्रिदोषघ्नीव्याघ्रीदुष्पर्शगोक्षुरैः ॥ १८९ ॥
यावज्ज्वरमृदूभावात्षडहंवाविचक्षणः ।
श्वदंष्ट्राकण्टकारीभ्यांसिद्धांज्वरहरांपिबेत ॥ १९० ॥
कुलत्थपंचमूलाभ्यांधान्यपिप्पलीनागरैः ।
पेयाश्लेष्मज्वरहरासैन्धवेनावचूर्णिता ॥ १९१ ॥

अर्थ—खीलोंके सतुओंमें सेंधानोन मिलाकर ज्वररोगीको सेवन करानेसे हित करैहै, तथा ज्वर, रक्तपित्त और दाहको दूर करैहै । खीलोंके सत्तू शीतवीर्यहैं । खीलोंका मोड़— [illegible] हितकारीहै, पाचक और अग्निप्रदीप-

कहै, इसकारण कुछ गरमभीहै । नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लालचन्दन, सुगंधवाला और सोंठ, इन सबको समानभाग लेकर काढा बनावै, जब ठंढा होजाय तौ पीवै, इससे—तृषा, ज्वर शान्त होजाता है । सोंठ, नागरमोथा, और खस समानभाग लेकर काढा बना पीवै तौ दाह, शीतज्वर, और तृषा दूर होतीहै, तथा पाचक है । सन्निपातज्वरमें दोषोंकी अवस्थाको विचारकर लंघन होनेपर भी दशमूलका काढ़ा देना चाहिये । तरुणज्वरमें आधा जल-जावै तो क्काथ देना चाहिये, क्योंकि —तरुणज्वरमें सम्पूर्णलक्षणोंवाला क्काथ वर्ज्य है । मुख्य औषधीकाभी देना तरुणज्वरमें निषेध है । किन्तु तोयपेया-दिमें संस्कारित कीहुई औषधी तरुणज्वरमें निषिद्ध नहींहै । तरुणज्वरमें यथार्थ कषाय वर्ज्य है, क्योंकि कषायसे त्रिदोष कुपित होकर विषमज्वरको उत्पन्न करतेहैं, इसकारण दोसेर जलमें २ दो तोले औषधिको डालकर पकावै, जब आधा अर्थात् सेरभर जल शेष रहै तब उतारले, इसको तृषालगनेपर पीतारहै । वमन और लंघन करायेहुए मनुष्यको औषधि और मण्डा-दिसे सिद्ध कियाहुआ यवागू देनाचाहिये । धनियां, पीपलामूल, सोंठ, और दशमूल इनसबकी पेया बना उसमें सैंधेनोनका चूर्ण मिला सेवन कर-नेसे सर्व प्रकारके ज्वर नष्ट होतेहैं । दाख, पीपलामूल, चव्य, आमला, सोंठ, कटेरी, जवासा और गोखरू इन सबका बनाया हुआ यवागू त्रिदोषनाशक है और जबतक मृदुज्वर रहै तबतक छै दिन पर्यन्त गोखरू और कटे-रीकी यवागू बनाकर पीवै तौ ज्वरनाश होताहै । कुलथी, पंचमूल, धनियां, पीपल और सोंठ इनका यवागू बना तिसमेंसे सैंधेनोनका चूर्णमिलाकर पीनेसे कफज्वरका नाश होताहै ॥ १७७ ॥ १७८ ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥ ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ ॥ १९० ॥ १९१ ॥

वातज्वरादौ ।

एषाचैवयवागूस्तुसचपित्तेऽप्ययंक्रमः ।
ज्वरापहैःफलरसैर्युक्तंसमधुशर्करम् ॥ १९२ ॥

तत्रमदात्ययादौ ।

द्राक्षादाडिमखर्ज्जूरपियालैःसपरूषकैः ।
तर्पणार्हेषुकर्त्तव्यंतर्पणंज्वरनाशनम् ॥ १९३ ॥

छर्द्यर्दितंतथाक्षीणंविशुद्धंतृष्णयान्वितम् ।
शर्करामधुसंयुक्तंपाययेल्लाजतर्पणम् ॥ १९४ ॥
उपवासश्रमकृतेज्वरेवाताधिकेतथा ।
दीप्ताग्निंभोजयेत्प्राज्ञोनरंमांसरसौदनम् ॥ १९५ ॥
मुद्गयूषौदनश्चापिदेयःकफसमन्विते ।
स एवसितयायुक्तःशीतपित्तज्वरेहितः ॥ १९६ ॥
मुद्गामलकयूषस्तुवातपित्तज्वरेहितः ।
निम्बमूलकयूषस्तुहितःपित्तकफाधिके ॥ १९७ ॥
निम्बपत्रंपटोलञ्चवार्ताकुंकारवेल्लकम् ।
कर्कोटकंपर्पटकंगोजिह्वावालमूलकम् ॥ १९८ ॥
पत्रंगुडूच्याःशाकाद्यैर्ज्वरितायप्रदापयेत् ।
अरुचौमातुलुंगस्यकेशरंसाज्यसैन्धवम् ॥ १९९ ॥
धात्रीद्राक्षासितानांवाकल्कमास्येनधारयेत् ।
धारयेत्सर्वथैवनगिलेत् ।
शर्करादाडिमाभ्याञ्चद्राक्षादाडिमयोस्तथा ॥ २०० ॥
तैरस्यधारयेदास्येगण्डूषञ्चयथाहितम् ।
ननक्तंनगुरुप्रायंभुंजीततरुणज्वरी ॥ २०१ ॥
वातपित्तज्वरेदेयमौषधंपंचमेदिने ।
सप्तमेश्लेष्मपित्तोत्थेतदूर्ध्वंकफवातजे ॥ २०२ ॥
नागरंदेवकाष्ठञ्चधन्याकंबृहतीद्वयम् ।
दद्यात्पाचनकंपूर्वंज्वरितायज्वरापहम् ॥ २०३ ॥
बिल्वादिपंचमूलस्यक्काथःस्याद्वातिकेज्वरे ।
पंचमूलीबलारास्नाकुलत्थैःसहपुष्करैः ॥ २०४ ॥
पर्वभेदशिरःकम्पतंहन्यान्मरुज्ज्वरम् ।

गुडूचीशारिवाद्राक्षाशतपुष्पापुनर्नवा ॥
सगुडोयंकषायःस्याद्वातज्वरविनाशनः ॥ २०५ ॥

अर्थ-पित्तज्वरमेंभी उपरोक्तक्रिया करनी चाहिये । ज्वरनाशक फलोंके रसमें मधु और शर्करा मिलाकर पीवै । तथा दाख, अनार, खजूर, चिरोंजी, और फालसा इनोंके रसमें सहत और चीनी मिलाकर तर्पण करै, यह तर्पण ज्वरनाशकहै । वमनसे पीड़ित, क्षीण, विबन्धरोगी और तृषावान्‌मनुष्यको खीलोंके मांड़में सहत और चीनी मिलाकर तर्पण बनाकर पिलाना योग्यहै । उपवास तथा परिश्रमसे और उत्पन्न हुए ज्वरमें और वातज्वरमें दीप्ताग्निवाले मनुष्यको मांसरससंयुक्त भात भक्षण कराना चाहिये। कफज्वरमें मूँगके यूषके साथ भात सेवन कराना चाहिये । शीत और पित्तज्वरमें मूँगके यूषमें चीनी मिलाकर भातके साथ सेवन कराना चाहिये, वातपित्तज्वरमें मूँग और आमलेके यूषके साथ भात सेवन कराना चाहिये, नीम और मूलीका यूष पित्तश्लेष्मज्वरमें देना चाहिये। नीमकेपत्ते, परवल, वेंगुन करेला, ककोडा, पित्तपापडा, गोभी, कच्चीमूली और गिलोयके पत्ते, यह ज्वरवाले मनुष्यको शाकके लिये देने चाहियें । ज्वररोगीको अरुचि होनेपर बिजोरेकी केशरके साथ संधानोंन और घृत अथवा आमला, दाख और चीनी एकत्र मिलाकर सेवन करानी चाहिये । आमला, दाख और मिश्री इनका कल्क मुखमें रखनेसे अरुचि दूर होतीहै । इस कल्कको एकसाथ न निगले किन्तु मुखमें रख थोडा थोडा रस पीतारहै । शर्करा और अनारका रस अथवा दाख और अनार इनका गण्डूष ग्रहण करनेसे ज्वरमें उत्पन्नहुई अरुचि नष्ट होती है । तरुणज्वरवाला रोगी रात्रिमें भोजन और भारीपदार्थ भक्षण नहीं करै । वातपित्तज्वरमें पांचमें दिन, पित्तश्लेष्मज्वरमें सातमें दिन और वातकफज्वरमें सातमें दिनके भी पीछे औषधि देनी चाहिये । सोंठ, देवदारु, धनियाँ, बृहती और कटेरी इनका काढा कर ज्वरकी प्रथम अवस्थामें देना चाहिये । यह पाचन ज्वरनाशक है । बिल्वादिपंचमूलका क्वाथ वातज्वरमें देना चाहिये । स्वल्पपंचमूल, खिरैंटी, रास्ना, कुलथी और पोहकरमूल इनका काढा, पर्वभेद और शिरकम्पयुक्तवातज्वरनाशकहै । गिलोय, शारिवा, दाख, सोंफ और पुनर्नवा इनका काढा गुडके साथ पीनेसे वातज्वर नाश होताहै ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ १९८ ॥ १९९ ॥ २०० ॥ २०१ ॥ ॥ २०२ ॥ २०३ ॥ २०४ ॥ २०५ ॥

पित्तज्वरादौ ।

सक्षौद्रंपाचनंपित्तेतिक्तासेन्द्रयवैः कृतम् ।
पाठेन्द्रयवतिक्ताभिःकट्फलैर्वासशर्करम् ॥ २०६ ॥
क्काथःपित्तज्वरंहन्यादथवापर्पटोद्भवः ।
पटोलयवधन्याकमधुकानांमधुप्लुतः ॥ २०७ ॥
क्काथःपित्तज्वरंदाहंहन्तितृष्णांचदारुणाम् ॥ २०८ ॥

मधुकंयष्टीमधु ।

एकःपर्पटकःश्रेष्ठःपित्तज्वरविनाशकः ।
किंपुनर्यदियुज्येतचन्दनोदीच्यनागरैः ॥ २०९ ॥
वनचन्दनपर्पटकंकटुकं समृणालपटोलदलंसजलम् ।
शृतशीतसितायुतपित्तहरं
ज्वरछर्दितृषारुचिदाहहरम् ॥ २१० ॥
द्राक्षाभयापर्पटकाम्लतिक्ता-
क्काथंसशम्याकफलंविदध्यात् ।
प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहशोष-
तृष्णान्वितेपित्तभवज्वरेतु ॥ २११ ॥
विदारीदाडिमंलोध्रंकपित्थंबीजपूरकम् ।
एभिःप्रलिह्यान्मूर्द्धानंतृड्दाहार्त्तस्यदेहिनः ॥ २१२
करवीरस्यपत्राणिचन्दनंशारिवास्तिलाः ।
तृष्णादाहेशिरोलेपआरनालेनपेषितः ॥ २१३ ॥
कालेयचन्दनानन्तायष्टीबदरकांजिकैः ।
सघृतःस्याच्छिरोलेपस्तृष्णादाहार्त्तिशान्तये ॥ २१४ ॥
चन्दनोदकशीतेषुदाहार्त्तिःसंविशेन्सुखम् ।
हिमाम्बुपूर्णेसदनेशीतधारागृहेऽपिवा ॥ २१५ ॥
पौष्करेऽम्भसिसामीप्येसुप्तव्यंसहआदिशेत ॥ २१६ ॥

सरःसमीप इत्यर्थः ।

हेमशंखप्रवालानांमणीनांमौक्तिकस्यच ।
चन्दनोदकपीतानिसंस्पर्शात्तरसाभवेत् ॥ २१७ ॥
हरीतकीप्रियंगुश्चपिप्पलीलोध्रमेवच ।
चव्यंदार्वीहरिद्राचसक्षौद्रंमुखधारणम् ॥ २१८ ॥

अर्थ—कुटकी और इन्द्रजौ इनका काढ़ा सहतके साथ, अथवा पाढ़, इन्द्रजं कायफल और कुटकी इनका काढ़ा चीनीके साथ, या पित्तपापड़ेका काढ़ा पीने पित्तज्वर नाश होताहै । कड़वेपरवल, इन्द्रजौ, धनियाँ और मुलैठी, इनका का पीनेसे पित्तज्वर, दाह और तृषा दूर होतीहै । केवल एकही पित्तपापड़ा पि ज्वरको नाश करसक्ता है, और जो यदि इनमें चन्दन, सुगंधबाला और सों मिलाके देवै तब तौ क्याही कहनाहै । नागरमोथा, लालचन्दन, पित्तपापड़ कुटकी, कमलकी नाल और पटोलपत्र, इनका काढ़ा, शीतलकर खाँडके सा पीनेसे पित्तज्वर वमन, तृषा, अरुचि, और दाह दूर होतीहै । दाख, हरड़, पि पापड़ा, इमली और कुटकी इनका काढ़ा बना उसमें अमलतासका गूदा मिलाव पीनेसे प्रलाप, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, शोप और तृष्णा इनसे युक्त पित्तज्वर न होताहै । विदारीकन्द, अनार, लोध, कैथ और विजोरेकी केशर इनका कल्क, अथ कनेरके पत्ते, चंदन, शारिवा और तिल इनको काँजीमें पीस शिरपै लेप करने तृषा और दाह दूर होतीहै । अथवा दारुहलदी, चन्दन, शारिवा, मुलैठी औ बेरीके पत्ते इनसबको काँजीमें पीस घी मिला शिरपै लेप करनेसे तृषा और दा शान्त होजातीहै । लालचन्दनको शीतलजलमें घिसकर मुखमें धारण करने दाह दूर होतीहै । शीतलजलसे भरे हुए बागमें, शीतलजलकी धारा पड़ती हो ऐसे घरमें, और कमलयुक्तसरोवरके समीपमें वास करै, चन्दनोदक पीवे, तथ सोना, शंख, मूँगा, मणि और मुक्तादि धारण करनेसे दाह दूर होतीहै । हरड़ फूलप्रियंगू, पीपल, लोध, चव्य, दारुहलदी, और हलदी इनसबको सहत पीसकर मुखमें धारणकरनेसे दाह दूर होतीहै ॥ २०६ ॥ २०७ ॥ २०८ ॥ २०९ ॥ २१० ॥ २११ ॥ २१२ ॥ २१३ ॥ २१४ ॥ २१५ ॥ २१६ ॥ २१७ ॥ २१८ ॥

पिप्पल्यादिगणः ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचव्यचित्रकनागरम् ।
मरिचैलाजमोदेन्द्रपाठावेल्लकजीरकम् ॥ २१९ ॥

भार्ङ्गीमहानिम्बफलंहिंगुरोहिणीसर्षपम् ।
विडंगातिविषामूर्वाचेत्ययंकीर्त्तितोगणः ॥ २२० ॥
पिप्पल्यादिःकफहरःप्रतिश्यायानिलापहः ।
निहन्यादीपनोगुल्मशूलघ्नस्त्वामपाचनः ॥ २२१ ॥
रविगुप्तोविनापाठामुस्तकोऽथचपाटला ।
पठत्यत्रगणेकिन्तुप्रचारोलिखितेनतु ॥ २२२ ॥
अजमोदा-वनयवानी । इन्द्र-इन्द्रयव ।

अर्थ-पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, मिरच, इलायची, अजमोद, इन्द्रजौ. पाठ, गजपीपल, जीरा, भारंगी, हींग, बकायन, कुटकी, सरसों, वायविडंग, अतीस और मूर्वा, इनसबको पिप्पल्यादि गण कहते हैं। यह पिप्पल्यादिगण-कफ, प्रतिश्याय (जुकाम,) वात, गुल्म और शूलको दूर करैहै। तथा अग्निदीपक और आमपाचक है । इस पिप्पल्यादिगणमें रविगुप्तवैद्यके मतसे पाठाको निकाल नागरमोथा या पाटला मिलाना चाहिये ॥ २१९ ॥ २२० ॥ ॥ २२१ ॥ २२२ ॥ अजमोद-बडीअजवाइन, इन्द्र-इन्द्रजौ

चातुर्भद्रावलेहिका ।

कट्फलंपौष्करंशृंगीकृष्णाचमधुनासह ।
कासश्वासज्वरहरः श्रेष्ठोलेहःकफान्तकृत् ॥ २२३ ॥

अर्थ-कायफल, पोहकरमूल, काकड़ाशिंगी, और पीपल इनका चूरण कर उसमें सहत मिला चाटनेसे खाँसी, श्वास, ज्वर और कफ दूर होतीहै ॥२२३॥

कट्फलादिअवलेहिका ।

कट्फलंपौष्करंशृंगीमुस्तकंकटुकंशठी ।
सर्वान्पृथग्वासंचूर्ण्यलिह्यान्मध्वार्द्रकैर्द्रवैः ॥ २२४ ॥
कफानिलारुचिच्छर्दिकासश्वासरुजापहा ॥ २२५ ॥

अर्थ-कायफल, पोहकरमूल, काकड़ासिंगी, नागरमोथा, कुटकी और कचूर, इनसबको मिला अथवा पृथक् पृथक् चूर्ण कर मधु और अदरखके रसके साथ चाटनेसे-कफ, वात, अरुचि, वमन और खाँसी, श्वास दूर होताहै ॥ २२४ ॥ २२५ ॥

अथ कफजे ।

कासश्वासज्वरच्छर्दिप्लीहपाण्डूदरापहा ।
मधुनापिप्पलीलीढापाचनीदीपनीमता ॥ २२६ ॥
भिनत्तिश्लेष्मसंघातंवायुर्जलधरानिव ॥ २२७ ॥

अर्थ—पीपलको सहतके साथ चाटनेसे—खाँसी, श्वास, ज्वर, वमन, प्लीहा, पाण्डु और उदररोग नष्ट होते हैं । तथा यह चटनी—पाचन और दीपन है । जैसे पवनसे बादल दूर होजाते हैं उसी प्रकार इससे कफका समूह नष्ट होजाता है ॥ २२६ ॥ २२७ ॥

वातपित्ते ।

संसृष्टदोषेषुहितंसंसृष्टमथपाचनम् ।
संसृष्टसंयुतंवातहरपित्तहरादिभिः ॥ २२८ ॥
विश्वामृताब्दभूनिम्बैःपंचमूलीसमन्वितैः ।
कृतःकषायोहन्त्याशुवातपित्तोद्भवंज्वरम् ॥ २२९ ॥
पंचमूलीस्वल्पावातपित्तहन्तृत्वात् ॥ २३० ॥

अर्थ—वात पित्त और श्लेष्मपित्तादि मिले हुए दोषोंमें मिलीहुई औषधादि प्रयोग करनी चाहिये । सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चिरायता और स्वल्पपंच मूल, इनका क्वाथ पीनेसे वातपित्तज्वर नष्ट होताहै ॥ २२८ ॥ २२९ ॥ यहां स्वल्पपञ्चमूली लियाहै क्योंकि स्वल्पपंचमूली वातपित्तको दूर करती है ॥ २३० ॥

पंचांगः ।

गुडूचीपर्पटंमुस्तंकिरातंविश्वभेषजम् ।
वातपित्तज्वरेदेयंपंचभद्रमिदंशुभम् ॥ २३१ ॥
कफपित्तहरोमुद्गःकारवेल्लादिजारसाः ।
नदेयावातपित्तोत्थेज्वरेविष्टम्भकारकाः ॥ २३२ ॥

अर्थ—गिलोय, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, चिरायता और सोंठ, इन सबका क्वाथ पीनेसे वातपित्तज्वर नष्ट होताहै यह पंचभद्र है ॥ २३१ ॥ मूंगका यूष कफपित्तनाशक है और करेला आदिका यूष वातपित्तज्वरमें नहीं देना चाहिये। क्योंकि यह विष्टम्भकारकहै ॥ २३२ ॥

गुडूच्यादिः ।

गुडूचीनिम्बधन्याकंपद्मकंचन्दनानिच ।
एषसर्वज्वरान्हन्तिगुडूच्यादिस्तुदीपनः ॥ २३३ ॥
हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहनाशनः ॥ २३४ ॥

अर्थ–गिलोय, नीम, धनियाँ, पद्माख और लालचन्दन, इनका यह गुडूच्यादि काढ़ा सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करैहै, अग्निप्रदीपक है ॥ २३३ ॥ तथा हृल्लास, अरुचि, छर्दि, पिपासा और दाहनाशक है ॥ २३४ ॥

पटोलादिः ।

पटोलयवधन्याकमुद्गामलकचन्दनम् ।
पैत्तिकेश्लेष्मपित्तोत्थेतृट्छर्दिज्वरदाहनुत् ॥ २३५ ॥

अर्थ–परवल, इन्द्रजौ, धनियाँ, मूंग, आमला और लालचन्दन इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे–पित्तज्वर, कफपित्तज्वर, तृषा, वमन और दाहसंयुक्तज्वरका नाश होताहै ॥ २३५ ॥

कण्टकार्यादिः ।

कण्टकार्य्यमृताभार्ङ्गीनागरेन्द्रयवासकम् ।
भूनिम्बंचन्दनंमुस्तंपटोलंकटुरोहिणी ॥ २३६ ॥
कषायंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मज्वरापहम् ।
हृल्लासारोचकच्छर्दितृष्णादाहविबन्धनुत् ॥ २३७ ॥

अर्थ–कटेरी, गिलोय, भारंगी, सोंठ, इन्द्रजव, जवासा, चिरायता, लालचन्दन, नागरमोथा, परवल और कुटकी, इनका काढ़ा पित्तश्लेष्मज्वर, हृल्लास, अरुचि, वमन, तृषा दाह और विबन्धनाशक है ॥ २३६ ॥ २३७ ॥

चातुर्भद्रम् ।

किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजम् ।
चातुर्भद्रमिदंख्यातंवातश्लेष्मज्वरापहम् ॥ २३८ ॥

अर्थ–चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ यह सब मिले हुए चातुर्भद्र कहे जातेहैं । इनका काढ़ा–वातश्लेष्मज्वरनाशक है ॥ २३८ ॥

पंचकोलम् ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरम् ।
दीपनीयःस्मृतोवर्गःकफानिलगदापहः ॥ २३९ ॥
पाचनःशीतहारुच्योग्रहणीकण्ठरोगनुत् ॥ २४० ॥

क्वाथव्यंजनाभ्याम् ।

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता और सोंठ इनका काढा–कफवात रोग नाशक, अग्निप्रदीपक, पाचक, शीतनाशक, रुचिकारक तथा संग्रहणी और कंठरोगको दूर करै है ॥ २३९ ॥ २४० ॥

क्षुद्रादिः ।

क्षुद्रामृतापुष्करनागराह्वैः
कृतःकषायःकफमारुतोद्भवे ।
सश्वासकासारुचिपार्श्वरुक्करे
ज्वरेत्रिदोषप्रभवेऽपिशस्यते ॥ २४१ ॥

अर्थ–कटेरी, गिलोय, पोहकरमूल और सोंठ इनका क्वाथ पीनेसे कफ वात-ज्वर, श्वास, खाँसी, अरुचि और पसलीकी पीडायुक्त ज्वर दूर होताहै और यह क्षुद्रादिकषाय सन्निपातज्वरमेंभी हितकारीहै ॥ २४१ ॥

अथ सन्निपातचिकित्सामाह चरकः ।

अकस्माच्छीतविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तमः ।
अकस्मादिन्द्रियोत्पत्तिःसन्निपाताग्रलक्षणम् ॥ २४२ ॥
गीतनर्तनहास्यादिविकृतेहाप्रवर्त्तनम् ।
चिरात्पाकश्चदोषाणांसन्निपातज्वराकृतिः ॥ २४३ ॥
संगतानिचितादोषाःपातयन्तिकलेवरम् ।
ससन्निपातितायस्मात्सन्निपातःसउच्यते ॥ २४४ ॥
लंघनंवालुकास्वेदोनस्यंनिष्ठीवनंतथा ।
अवलेहोञ्जनश्चैवप्राक्प्रयोज्यंत्रिदोषजे ॥ २४५ ॥
श्लेष्मनिग्रहमेवादौकुर्याद्व्याधौत्रिदोषजे ।
पश्चाच्छ्लेष्मणिसंक्षीणेशमयेत्पित्तमारुतौ ॥ २४६ ॥

त्रिरात्रंपंचरात्रंवासप्तरात्रमथापिवा ।
लंघनंसन्निपातेषुकुर्यादारोग्यदर्शनात् ॥ २४७ ॥
दोषाणामेवसाशक्तिर्लंघनेयासहिष्णुता ।
नतुदोषक्षयेकश्चित्सहतेलंघनंमहत् ॥ २४८ ॥

अर्थ—अव सन्निपातकी चिकित्सा कहतेहैं । अकस्मात् शीत लगने लगे, अकस्मात् देह भारी होजाय और अकस्मात् इन्द्रियोंमें अधिक चेष्टा उत्पन्न होजावे यह सन्निपातके पूर्वलक्षण हैं ॥ २४२ ॥ जिसमें गीत, नृत्य, हास्यादि विकृत-क्रिया, पार्श्वपरिवर्त्तन और बहुत कालमें दोषोंका पाक हो उसको सन्निपातज्वर कहतेहैं ॥ २४३ ॥ संचित तथा बढेहुए त्रिदोष शरीरको पातन करदेते हैं इस कारण उसको सन्निपात कहतेहैं । ऐसा चरकसंहितामें लिखाहै ॥ २४४ ॥ लंघन, वालूका स्वेद, नस्य, निष्ठीवन, अवलेह और अंजन यह सब सन्निपातमें प्रथम प्रयोग करने चाहियें ॥ २४५ ॥ सन्निपातमें प्रथम कफको दूर कर जब कफ दूर होजावे तत्पश्चात् पित्त और वायुको दूर करना चाहिये ॥ २४६ ॥ तीन रात्रि या पाँचरात्रि अथवा सातरात्रि या आरोग्य होनेपर्यन्त सन्निपातमें लंघन करने चाहियें ॥ २४७ ॥ जितने दिनोंतक रोगी लंघन सहसके उतने दिनोंपर्यन्त दोषोंका वल जानना चाहिये, क्योंकि दोषोंके नाश होनेपर ऐसा कौन मनुष्य है लंघनको सहलेवे ॥ २४८ ॥

कवलग्रहः ।

आर्द्रकस्वरसोपेतंसैन्धवंसकटुत्रिकम् ।
आकण्ठंधारयेदास्येनिष्ठीवेच्चपुनःपुनः ॥ २४९ ॥
तेनास्यहृदयाच्छ्लेष्मामन्यापार्श्वशिरोगलात् ॥
निश्चितंकृष्यतेशुष्कोलाघवश्चास्यजायते ॥ २५० ॥
पर्वभेदोज्वरोमूर्च्छाकासश्वासज्वरामयाः ।
मुखाक्षिगौरवंजाड्यमुत्क्लेशश्चोपशाम्यति ॥ २५१ ॥

नस्यम् ।

मातुलुंगार्द्रकरसंकोष्णंत्रिलवणान्वितम् ।
अन्यद्वासिद्धिविहितंनस्यंतीक्ष्णंप्रयोजयेत् ॥ २५२ ॥
तेनप्रभिद्यतेश्लेष्माप्रभिन्नश्चप्रसिच्यते ।

शिरोहृदयकण्ठस्यपार्श्वरुक्चोपशाम्यति ॥ २५३ ॥
सैंधवंश्वेतमरिचंसर्षपंकुष्ठमेव च ।
बस्तमूत्रेणपिष्ट्वातुनस्यंतन्द्राविनाशनम् ॥ २५४ ॥
शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैंधवैः ।
अंजनंस्यात्प्रबोधायसरसोनशिलावचैः ॥ २५५ ॥
मातुलुंगरसस्तस्यहिंगुशुंठीयुतंमुखे ।
दद्यात्प्राबोधनंतीक्ष्णंकटुतिक्तोपसंहितम् ॥ २५६ ॥
कृतेक्रियावरेचास्मिन्यस्यसंज्ञानजायते ।
पादयोश्चललाटेवादाहंलोहशलाकया ॥ २५७ ॥

अर्थ–सैंधानोन, सोंठ, मिरच, पीपल इनका चूर्णकर अदरखके रसमें मिला मुखमें रख बारंबार थूकता रहै ॥ २४९ ॥ इसप्रकार करनेसे हृदयका श्लेष्मा तथा मन्या, पसली, शिर और गलेका कफ बाहर निकलजाता है, देहमें लघुता आजाती है ॥ २५० ॥ तथा संधियोंमें दर्द, ज्वर, मूर्च्छा, खाँसी, श्वास ज्वर के विकार, मुख और नेत्रोंकी गुरुता, शरीरकी जड़ता और ग्लानि दूर होजातीहै ॥ २५१ ॥ विजोरेका रस और अदरखका रस किंचित् गरम कर उसमें सैंधानोन और विरियासंचरनोन मिलाके कुल्ले करनेसे अथवा तीक्ष्ण नस्य लेनेसे कफ खंडित होकर शरीरसे बाहिर निकलजाताहै और शिर, हृदय, कंठ, मुख और पसलीकी पीड़ा शान्त होजाती है ॥ २५२ ॥ २५३ ॥ सैंधानोन, सफेदमिर्च, सरसों और कूठ, इनसबको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास लेनेसे तन्द्रा दूर होजातीहै ॥ २५४ ॥ सिरसके बीज, पीपल, कालीमिरच, सधानोन, लहसुन, मैनशिल और वच इनसबको गोमूत्रमें पीसकर अंजन बना आँखोंमें लगानेसे मूर्च्छा नष्ट होतीहै ॥ २५५ ॥ विजोरेके रसमें हींग और सोंठका चूरन मिलाकर मुखमें रखनेसे अथवा तीक्ष्ण, कटु और तिक्तपदार्थ मुखमें रखनेसे मूर्च्छा नष्ट होजाती है ॥ २५६ ॥ यदि उपरोक्त करनेसेभी मूर्च्छा नष्ट अर्थात् संज्ञा न उत्पन्न हो तब लोहेकी सलाईको अग्निमें तपा रोगीके दोनों पाँव अथवा ललाटमें दाग देवै ॥ २५७ ॥

१ श्वेतमरिचं शोभांनबीजम् । कंकोल मिर्च ।

किरातावलेहः।

किरातंसकणाशृंगीवासंकट्फलपौष्करम्।
मधुनासन्निपातघ्नोलेहःकार्यःपुनःपुनः ॥ २५८ ॥

अर्थ–चिरायता, पीपल, काकडाशिंगी, अरूसा, कायफल और पोहकरमूल इनसबका चूरण कर सहत मिलाके बारंबार चाटनेसे सन्निपात दूर होताहै २५८

अष्टांगावलेहिका।

कट्फलंपौष्करंशृंगीव्योषंयासश्चकारवी।
विचूर्ण्यलेहयेद्युक्त्याक्षौद्रेणार्द्ररसेनवा ॥ २५९ ॥
अष्टांगाख्यमिदंहन्तिसन्निपातंसुदुर्जयम्।
प्रमोहश्वासकासांश्चतन्द्राहिक्कागलग्रहान् ॥ २६० ॥
ऊर्द्धगश्लेष्महरणेउष्णेस्वेदादिकर्मणि।
निरुध्योष्णेमधुत्यक्त्वाकार्य्यैपार्द्रकजै रसैः ॥ २६१ ॥

अर्थ–कायफल, पोहकरमूल, काकडाशिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाँसा और कलौंजी इन सबको समानभाग लेकर चूरण बना तिसमें सहत या अदरखका रस मिलाके चाटनेसे दुर्जय सन्निपात, मोह, श्वास, कास, तन्द्रा, हिक्का और गलग्रह नष्ट होते हैं ॥ २५९ ॥ २६० ॥

ऊर्द्धगकफ हरनेके लिये तथा उष्ण उष्ण स्वेदादिकर्ममें मधुको त्याग अदरखके रसमें यह अष्टांगावलेह व्यवहार करना चाहिये ॥ २६१ ॥

आमलक्याद्यवलेहः।

स्विन्नमामलकंपिष्ट्वाद्राक्षाशुंठीसमन्वितम्।
म[illegible]नालेहयेन्मूर्च्छाकासश्वासोपशान्तये ॥ २६२ ॥

अर्थ–उबालेहुए आमले, दाख और सोंठ इन सबको पीस सहतके साथ चाटनेसे मूर्च्छा, खाँसी और श्वास शान्त होताहै ॥ २६२ ॥

दशमूलीकषायस्तुपौष्करेणावचूर्णितम्।
सन्निपातज्वरेदेयंकाशश्वासतृषान्विते ॥ २६३ ॥

अर्थ–दशमूलका क्वाथ [illegible]ष्करमूलके चूरनके साथ पीनेसे खाँसी, श्वास और तृषायुक्त सन्निपातज्वर नष्ट होताहै ॥ २६३ ॥

दशमूलम् ।

बिल्वस्योनाकगम्भारीपाटलागणिकारिका ।
दीपनंकफवातघ्नंपंचमूलमिदंमहत् ॥ २६४ ॥
शालपर्णीपृश्निपर्णीबृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
वातपित्तहरंवृष्यंकनीयःपंचमूलकम् ॥ २६५ ॥
उभयंदशमूलन्तुसन्निपातज्वरापहम् ।
कासेश्वासेचतन्द्रायांपार्श्वशूलेचशस्यते ॥ २६६ ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंकण्ठहृद्ग्रहनाशनम् ।
विशेषाच्छ्वासकासघ्नंमन्याकर्णाक्षिरोगनुत् ॥ २६७ ॥

अर्थ—बेल, सोनापाठा, खम्हराई, पाटल और अरणी इन पाँच मिली हुई औषधियोंको महत् पंचमूल कहतेहैं, इनका काढा अग्निप्रदीपिक और कफवात-नाशक है ॥ २६४ ॥ शरिवन, पिठवन, कटेरी दोनों, और गोखरू इन पाँचोंको स्वल्प पंचमूल कहतेहैं, इनका काढा—वातपित्तनाशक और वीर्यवर्द्धक ॥ ॥ २६५ ॥ यह दोनों बृहत्पंचमूल और स्वल्पपंचमूल मिलके दशमूल कहे जातेहैं । दशमूलका काढा सन्निपातज्वरनाशक है, तथा खाँसी, श्वास, तन्द्रा और पसवाडेकी पीडाको दूर करैहै ॥ २६६ ॥ और इस काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे कण्ठ और हृदयकी पीडा, तथा विशेषकरके श्वास, खाँसी, मन्या, कर्ण और नेत्ररोग दूर होताहै ॥ २६७ ॥

द्वादशांगः ।

दशमूलीकणाधान्यैःपित्तश्लेष्मोद्भवेज्वरे ।
दद्यात्पाचनकंपूर्वमामेस्तब्धेसनागरैः ॥ २६८ ॥

अर्थ—दशमूल, पीपल और धनियाँ इनका काढा पित्तश्लेष्मज्वरमें प्रथम देना चाहिये । तथा स्तब्ध और आमावस्थामें इसकाढेको सोंठके साथ देना चाहिये ॥ २६८ ॥

चतुर्दशांगः ।

चिरज्वरेवातकफोल्बणेवात्रिदोषजेवादशमूलमिश्रः ।
किराततिक्तादिगणःप्रयोज्यःशुद्धार्थिनेवात्रिवृताविमिश्रः २६९

अर्थ–दशमूल, चिरायता दिगण इनका काढा जीर्णज्वर, वातकफज्वर और सन्निपातज्वर नाशक है,तथा इसमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पीवै तौ कोष्ठ शुद्ध होजाताहै ॥ २६९ ॥

पंचदशाङ्गः ।

द्विपंचमूलीषड्ग्रन्थातथागृध्रनखीद्वयम् ।
कफवातहरःक्काथःसन्निपातहरःपरः ॥ २७० ॥

अर्थ–दशमूल, वच और दोनों प्रकारकी बेगीकी छाल इनका काढा कफवात नाशक और सन्निपातनिवारक है ॥ २७० ॥

दशमूलीशठीशृंगीव्योषंक्काथंपिबेन्नरः ।
सन्निपातज्वरंहन्यादित्याहकपिलोमुनिः ॥ २७१ ॥

अर्थ–दशमूल, नरकचूर, काकडाशिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल इनका काढा पीनेसे सन्निपातज्वरका नाश होताहै ऐसा कपिलमुनिने कहाहै ॥२७१॥

षोडशांगः ।

त्र्यूषणदशमूलशठीशृंगीभार्गीछिन्नोद्भवःक्काथः ।
पीतःशमयतिसहसाज्वरंचोग्रंसन्निपातभवम् ॥ २७२ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, दशमूल, कचूर, काकडाशिंगी, भारंगी और गिलोय इनका काढा कर पीनेसे शीघ्रही सन्निपातज्वर नष्ट होता है ॥ २७२ ॥

अष्टादशाङ्गः ।

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्द-
तिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः ॥
तन्द्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह-
श्वासादियुक्तमखिलंज्वरमाशुहन्ति ॥ २७३ ॥

अर्थ–चिरायता, देवदारु, दशमूल, कचूर,सोंठ, नागरमोथा, कुटकी,इन्द्रजौ, धनिया और गजपीपल इनका क्काथ तन्द्रा, प्रलाप, खाँसी, अरुचि, दाह, मोह और श्वासादियुक्त सर्वप्रकारके ज्वरोंका नाशक है ॥ २७३ ॥

---

१ षड्ग्रन्था वचा ।

वातश्लेष्महरोऽष्टादशांगः।

शठीपुष्करमूलंचव्याघ्रीश्रृंगीदुरालभा।
गुडूचीनागरंपाठाकैरातंकटुरोहिणी॥ २७४॥
अष्टादशांगइत्येषसन्निपातज्वरापहाः।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्त्तिश्वासहिक्कावमीहरः॥ २७५॥

अर्थ—नरकचूर, पोहकरमूल, कटेरी, काकडाशिंगी, जवासा, गिलोय, सोंठ, पाढ, चिरायता और कुटकी इनका काढ़ा पीनेसे सन्निपातज्वर, खाँसी, हृदयकीपीडा, पसलीकी वेदना, श्वास, हिचकी और वमन दूर होती है ॥ २७४॥ २७५॥

त्रिवृद्विशालाकटुकात्रिफलारग्वधैःकृतः।
संस्कारैर्भेदनःक्वाथःपेयःसर्वज्वरापहः॥ २७६॥

अर्थ—निसोत, इन्द्रायन, कुटकी, त्रिफला और अमलतास इनका काढ़ाबनाकर पीनेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होतेहैं, तथा यह काढ़ा भेदक है॥ २७६॥

अथ श्रृंग्यादिः।

श्रृंगीभार्ङ्गीचजयाजाजीकणाभूनिम्बपर्पटैः।
देवदारुवचाकुष्ठयासकट्फलनागरैः॥ २७७॥
मुस्तधन्याकतिक्तेन्द्रशठीपाठाहरेणुभिः।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकैः॥ २७८॥
निम्बारग्वधत्रायन्तीविशालासोमराजिभिः।
विडंगरजनीदार्वीयवानीद्वयसंयुतैः॥ २७९॥
समांशैःसाधितःक्वाथोहिंगार्द्रकरसान्वितः।
अभिन्यासंज्वरंघोरंहन्तितंद्राश्चतत्क्षणात्॥ २८०॥
सन्निपातंतथारौद्रंत्रयोदशविधंचतत्।
कर्णशूलश्चहिक्काश्चमूर्च्छाश्चैवविशेषतः॥ २८१॥

अर्थ—काकड़ाशिंगी, भारंगी, हरड, जीरा, पीपल, चिरायता, पित्तपापडा, देवदारु, बच, कूट, जवाँसा, कायफल, सोंठ ॥ २७७॥ नागरमोथा,

धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ, नरकचूर, पाढ, रेणुका, गजपीपल, चिरचिरा, पीपलामूल, चीता ॥ २७८ ॥ नीम, अमलतास, त्रायमान, इन्द्रायण, वापची, वायविडंग, हलदी, दारुहलदी, अजवायन, अजमोद ये सम भाग लेकर ॥ २७९ ॥ इन सबका काढा बना उसमें अदरखका रस और हींग मिलाकर पीनेसे अभिन्यासादि तेरह प्रकारके सन्निपात दूर होतेहैं ॥ २८० ॥ २८१ ॥

ग्रन्थान्तरोक्तः-कर्णशोथे ।

कर्णशूलोत्थशोथेतुशस्तंरक्तस्यमोक्षणम् ।
प्रलेपान्कफपित्तघ्नान्नस्यानिकवलग्रहान् ॥ २८२ ॥
लेहांश्चकफवातघ्नान्युञ्ज्याच्चत्रिफलाघृतम् ।
कुलत्थकट्फलेशुण्ठीकालाजाजीसमांशकैः ॥ २८३ ॥
कर्णशोथहरोलेपःसन्निपातज्वरेभृशम् ।
बीजपूरकमूलानिअग्निमन्थंतथैवच ॥ २८४ ॥
सनागरंदेवदारुरास्नाचित्रकपेषितम् ।
प्रलेपनमिदंश्रेष्ठंगलेश्वयथुनाशनम् ॥ २८५ ॥

अर्थ-सन्निपातरोगके विषय कर्णमूलमें सूजन होय तो रुधिर निकलवाना, कफपित्तनाशक प्रलेप करना, नस्य, कुल्ले, कफवातनाशक अवलेह और त्रिफला, घृत प्रयोग करना चाहिये । कुलथी, कायफल, सोंठ और कालाजीरा इन सबको समानभाग ले पीसकर लेपन करनेसे कर्णमूलज शोथ नष्ट होताहै । बिजौरे की जड, अरणी, सोंठ, देवदारु, रायसन और चीता इनको पीसकर लेप करनेसे गलेकी सूजन दूर होतीहै ॥ २८२ ॥ २८३ ॥ २८४ ॥ २८५ ॥

रसरत्नाकरोक्तः ।

सन्निपातभैरवोरसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंशुद्धताम्राभ्रटंकणम् ।
जम्बीररसमध्यस्थंदोलायंत्रेपचेद्दिने ॥ २८६ ॥

---

१ घोर अभिन्यासज्वर व तन्द्राको तत्काल दूर करदेताहै तथा १३ प्रकारके सन्निपात, और विशेषकर कर्णमूल हिचकी व मूर्च्छाको दूर करताहै ।

सर्पाक्षीविजयाब्राह्मीमीनाक्षीहंसपादिका ।
हस्तिशुण्डीरुद्रजटांधूर्त्तवातारिवायसी ॥ २८७ ॥
दिनैकंमर्द्दयेदेभिर्लोहसंपुटगंपचेत् ।
दिनैकंवालुकायंत्रेसमुद्धृत्यविचूर्णयेत् ॥ २८८ ॥
आमलक्यादिभिर्व्योषजैपालबीजचित्रकैः ।
समैःसमरसोन्मिश्र्यत्रिगुंजंभक्षयेत्सदा ॥ २८९ ॥
सन्निपातज्वरंहन्तिमुद्गयूषादिकंहितम् ।
क्षौद्रंजातीयुतापेयारसस्त्रिदोषभैरवः ॥ २९० ॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, ताँबा, अभ्रक और सुहागा इन सबको समानभाग लेकर जंभीरी नीबूके रसमें रखकर एकदिन दोलायंत्रमें पचावे फिर सर्पाक्षी, भाँग, ब्राह्मी, मत्स्याक्षी, हंसपदी, हाथीशुंडा, रुद्रजटा, धतूरा, अंड, और मकोयके रसमें एक दिन मर्दन करके लोहसंपुटमें रख वालुकायंत्रमें एकदिन पकावे, तदनंतर सम्पुटसे निकाल चूर्णकर आमलाआदि, सोंठ, पीपल, मिरच, जमालगोटा और चीतेका रस इसमें मिला तीनगुंजाप्रमाण खानेसे सन्निपातज्वर नाश होताहै । इसपै पथ्य मूंगका यूष, मधु, और आमलेयुक्त पेया पीनी चाहिये यह त्रिदोषभैरव रस है ॥ २८६ ॥ २८७ ॥ २८८ ॥ २८९ ॥ २९० ॥

सिंहनादो रसः ।

लोहपात्रगतेगन्धेद्रावितेतत्रनिक्षिपेत् ।
शुद्धंसूतंसमंचाभ्रंव्याघ्रीद्रावंद्वयोःसमम् ॥ २९१ ॥
निर्गुण्ड्याःस्वरसोत्थश्चतुल्यंतुल्यंरसंक्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निनातावद्यावच्छुष्कंद्रवद्वयम् ॥ २९२ ॥
विषंपादयुतंचूर्णंसिंहनादोरसोत्तमः ।
गुंजामात्रंप्रदातव्यंसन्निपातज्वरान्तकम् ॥ २९३ ॥
अनुपानंपिबेत्क्वाथंकण्टकार्याःसपुष्करम् ।
गुडूचीनागरारक्तमरुचिश्वासकासजित् ॥ २९४ ॥

अर्थ—लोहेके बरतनमें गंधक डालकर पिघलावे फिर उसमें शुद्धपारा और शुद्धअभ्रक समानभाग मिलादेवै, और दोनोंके समान कटेरीका रस

मिलावै, जबतक कटेरी और सम्हालूका रस न सूखजाय तबतक मृदुअग्निसे पचावै, फिर चौथाभाग विष मिलावै, इसप्रकार सिंहनादरस बनताहै । इस रसको एकरत्तीप्रमाण देना चाहिये, इससे सन्निपातज्वरका निःसन्देह नाश होताहै । अनुपान–कटेरीके काढेमें गिलोय, पोहकरमूल, और सोंठका चूरण डालकर इस रसके साथ पीवै, इससे अरुचि, श्वास, और कासयुक्त सन्निपातज्वरका नाश होताहै ॥ २९१ ॥ २९२ ॥ २९३ ॥ २९४ ॥

सन्निपातगजांकुशः ।

शुद्धसूतंमृतश्चाभ्रंशुद्धौतालकताम्रकौ ।
हिंगुञ्चतुल्यतुल्यांशंमर्दयेत्कटुकद्रवैः ॥ २९५ ॥
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीशुण्ठीगंधालिचित्रकैः ।
धत्तूरलांगलीपाठाभृंगीजम्बीरजद्रवैः ॥ २९६ ॥
त्रिदिनंमर्दयेदेभिश्चूर्णीकृत्यविमिश्रयेत् ।
त्रिक्षारसैन्धवंबोलंविषंमधुकमार्कवम् ॥ २९७ ॥
तुल्यंतुल्यंविचूर्ण्याथपूर्वोक्तंचइदंसमम् ।
एकीकृत्यभवेत्सद्यःसन्निपातगजांकुशः ॥ २९८ ॥
सन्निपातंनिहन्त्याशुमासमात्रंप्रयोजयेत् ॥ २९९ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, मृतअभ्रक, शुद्धहरिताल, शुद्धताँबा, और हींग इनसबको समानभाग लेकर त्रिकुटेके क्वाथमें मर्दन करै, फिर बाँगककोड़ा, परवल, सम्हालू, हाथीशुंडा, गंधालि (पसरन), चीता, धतूरा, कलिहारी, पाठ, भृंगराज और जम्भीरी नीबू, इनके रसमें तीनदिन मर्दन करके फिर जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, सेंधानोन, एलुवा विष, महुआ और भांगरा, इन सबका समानभाग चूर्णकर मिलादेवै, इस प्रकार सन्निपातगजांकुश रस तैय्यार होताहै, इसको एकमासा उड़दप्रमाण सेवन करनेसे सन्निपातरोगका नाश होताहै ॥ २९५ ॥ ॥ २९६ ॥ २९७ ॥ २९८ ॥ २९९ ॥

अथ सन्निपातविध्वंसनो रसः ।

सूतंगंधंसमंशुद्धंतालकंमाक्षिकंतथा ।
मृतताम्राभ्रकंबोलंविषंधत्तूरबीजकम् ॥ ३०० ॥
त्रिक्षाररविपत्रंचहिंगुपाठापटोलकम् ।

वन्ध्याभृंगद्रवंशुंठीकन्दंलांगलिकंसमम् ॥ ३०१ ॥
सिन्धुवारद्रवैःसर्वंमर्द्यंजम्बीरजैरपि ।
दिनैकंवटिकाकार्याचणकाभाञ्चभक्षयेत् ॥ ३०२ ॥
अत्युग्रंसन्निपातञ्चसर्वोपद्रवसंयुतम् ।
निहन्तिचानुपानेनदशमूलार्कजेनवा ॥ ३०३ ॥
कषायेणनसंदेहःपथ्यंदध्योदनंहितम् ।
रसोविध्वंसनोनामसन्निपातनिकृन्तनः ॥ ३०४ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहरिताल, शुद्ध सोनामाखी, मृततांबा, अभ्रक, एलुआ, विष, धतूरके बीज, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, आकके पत्ते, हींग, पाट, पटोल, बाँझ, ककोडा, भाँगरेका रस, सोंठ और कलिहारी इन सबको समानभाग लेकर सम्हालू और जम्भीरी नीबूके रसमें एकदिन मर्दन कर चनेकी सदृश गोली बनावै इन गोलियोंको खानेसे–अनेक उपद्रवों समेत और अत्युग्र सन्निपात नाश होजाताहै । इनका अनुपान–दशमूल और आकका काढ़ा है ! पथ्य–दहीके साथ भातहै। यह सन्निपातविध्वंसनरस–सन्निपातनाशक है॥ ३००॥ ॥ ३०१ ॥ ३०२॥ ३०३ ॥ ३०४ ॥

अथ पानीयकुमाररसः ।

अनाथनाथोजगदेकनाथ-
स्त्रिलोकनाथःप्रथमःप्रसिद्धः ।
जगादपानीयवटींसुपद्धीं
तामेववक्ष्यामिगुरुप्रसादात् ॥ ३०५ ॥
जयार्कस्वरसाचैवनिर्गुण्डीवासकंतथा ।
वात्यालकंकरंजञ्चसूर्यावर्त्तकचित्रकौ ॥ ३०६ ॥
ब्राह्मीचसर्षपंचैवभृंगराजंविनिक्षिपेत् ।
दन्तींचत्रिवृताञ्चैवतथारग्वधपत्रकम् ॥ ३०७ ॥
सहदेवामरंभण्डीतथात्रिपुटभण्टिका ।
शालमलीपिप्पलीचैवद्रोणपुष्पीचवायसी ॥ ३०८ ॥

गुंजाकिनींकेशराजंतथायोजनवल्लिकाम् ।
आशारमेतिविख्यातंधत्तूरकरसस्तथा ॥ ३०९ ॥
त्रैलोक्यविजयाश्चैवतथाश्वेतापराजिता ।
प्रत्येकंकार्षिकंचैवस्वरसंतत्रदापयेत् ॥ ३१० ॥
स्नुहीदुग्धमर्कदुग्धंवटदुग्धंतथैवच ।
प्रत्येकंकार्षिकंक्षीरंपुनर्दत्त्वातुमर्दयेत् ॥ ३११ ॥
नूनंसुमर्दितंज्ञात्वायदापिंडत्वमागतम् ।
द्रव्याण्येतानिसंचूर्ण्यवस्त्रपूतंविनिक्षिपेत् ॥ ३१२ ॥
दग्धहीरंचातिविपंकोचिनामाभ्रकंतथा ।
शोधितंपारदंचैवगंधकंविषमाह्वयम् ॥ ३१३ ॥
माक्षिकंशोधितंचैवप्रत्येकंमापकद्वयम् ।
नूनंसुमर्दितंदृष्ट्वाचांगेरीस्वरसेनवा ॥ ३१४ ॥
तथायंभिपजाद्दृष्ट्वातिलमात्रान्तुकारयेत् ।
गुटिकांसुदृढांचैवमतिमान्कुशलोभिषक् ॥ ३१५ ॥
त्रिदोषजेज्वरेवैद्यउक्तोवैद्यविचक्षणः ।
लंघनैर्वालुकास्वेदैःक्रान्तोऽतिदीपदर्शनः ॥ ३१६ ॥
प्रपूज्यकरुणाधानंप्रणम्यनाथसर्पणम् ।
शरावेवारिणाघृष्ट्वाविंशत्येकांपिबेन्नरः ॥ ३१७ ॥
पीत्वातंभेषजंपश्चाद्वस्त्रेवाच्छादयेन्नरः ।
रसशुद्धिषुप्रज्ञत्वादद्याद्वारिसुशीतलम् ॥ ३१८ ॥
शरावपरिमितंवारिपातव्यंचपुनःपुनः ।
सन्निपातस्वरंचैवदाहंहन्तिसुदुस्तरम् ॥ ३१९ ॥
कासंश्वासंज्वरंहिक्कांप्रमेहंचाश्मरींतथा ।
कफपित्तकृतश्चैवदाहंहन्तिनसंशयः ॥ ३२० ॥
मूत्रवेगविबन्धेतुपातव्यंक्षीरसंयुतम् ।

पंचतृणकृतंक्काथंपातव्यंचपुनःपुनः ॥ ३२१ ॥
पानीयवटिकाह्येषालोकनाथेननिर्मिता ।
लोकानामुपकारायवटिकाकथितापुरा ॥ ३२२ ॥

अर्थ—अनाथोंके नाथ, जगत्के नाथ और त्रैलोक्यके नाथ ऐसे प्रसिद्ध महेश्वरने प्रथम पानीयवटीको कहाहै, सो अब गुरुके प्रसादसे पानीयवटीका वर्णन करताहूं। अरणी, आक, तुलसी, घमिरा, सम्हालू, वासा, खिरैंटी, करंज, सूर्यमुखी, चीता, ब्राह्मी और सरसों इन सबके चूरनमें दन्ती, निसोत, अमलतासके पत्ते, सहदेवी, अमरभंडी, त्रिपुरभंडी, सेमल, पीपल, गूमा, मकोय, गुंजाकी जड, भाँगरा, योजन, आशारमा, धतूरा, भाँग, सफेद कोयल और नीलीकोयल, इन सबका एकएक ४ मासा भर रस मिश्रितकर मर्दन करै, फिर थूहरका दूध, आकका दूध और बडका दूध यह सब दूध चार २ मासा भर मिश्रितकर मर्दन करै, जब मर्दन करते करते पिंडकी तरह गोला बनजाय, तब इनचीजोंको वस्त्रमें छानकर पिलादेवै, फिर उसमें हीरेकी भस्म, अतीस, कोचीनअभ्रक, शुद्धपारा, गंधक, विष और शुद्धसोनामाखी यह प्रत्येक दो २ मासेलेवे, पश्चात् इन सबका चूर्णबना मिलादे, फिर लोनियां रसमें मर्दन कर तिलकी समान गोली बनाले, तदनन्तर चतुरवैद्य करुणासागरशिवजीको नमस्कार कर एक सिकोरेमें पानीभर उसमें २१ इक्कीस गोलियोंको विराकर पिलादेवै, फिर उस रोगीको वस्त्रसे ढकदे· और बत्तीसतोले पानी कईवार करके पिलादे; इस प्रकारकरनेसे सन्निपातज्वर, उग्रदाह, खाँसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्रमेह, पथरी और कफपित्तसे उत्पन्न दाहको निःसन्देह दूर करैहै । और मूत्रका वेग बन्द होजाय तौ इन गोलियोंको दूधमें घोलकर पीना चाहिये । और ऊपरसे पंचतृण (शाली, ईख, कुशा, काँस और रामसर) का क्काथ बारंवार पीवे, यह पानीयवटी शंकरने संसारके लिये निर्माण कीहै ॥ ३०५ ॥ ३०६ ॥ ३०७ ॥ ॥ ३०८ ॥ ३०९ ॥ ३१० ॥ ३११ ॥ ३१२ ॥ ३१३ ॥ ३१४ ॥ ३१५ ॥ ॥ ३१६ ॥ ३१७ ॥ ३१८ ॥ ३१९ ॥ ३२० ॥ ३२१ ॥ ३२२ ॥

अथ बृहत्कस्तूरीभैरवरसः ।

मृगमदशशिसूर्याधातकीशूकशिंबी
रजतकनकमुक्ताविद्रुमंलोहपाठा ।
क्रिमिरिपुघनविश्वावारितालाभ्रधात्री

रविदलरसपिष्टंकस्तुरीभैरवोऽयम् ॥ ३२३ ॥
कस्तूरीभैरवाख्यातःसर्वज्वरविनाशनः ।
आर्द्रकस्यरसैःपेयोविषमज्वरनाशनः ॥ ३२४ ॥
द्वन्द्वजान्भौतिकान्चापिज्वरान्कामादिसंभवान् ।
अभिचारकृतांश्चैवतथाशत्रुकृतान्पुनः ३२५ ॥
निहन्याद्भक्षणादेवडाकिन्यादियुतांस्तथा ।
बिल्वचूर्णजीरकाभ्यांमधुनासहपानतः ॥ ३२६ ॥
आमातीसारग्रहणीज्वरातीसारमेवच ।
अग्निदीप्तिकरःशान्तःकासरोगनिकृन्तनः ॥ ३२७ ॥
दुर्बलंदुर्ग्रहंवापिनाडीसूक्ष्मकृतंपुनः ।
दीपयेद्भक्षणादेवमेहरोगंमलीमकम् ॥ ३२८ ॥
जीर्णज्वरंनूतनंवाद्वैकालिकसन्ततम् ।
प्रक्षिप्तंभौतिकंव पिहन्तिसर्वान्विशेषतः ॥ ३२९ ॥
हरितंवातरोगंवापाण्डुरोगंगलग्रहम् ।
ऐकाहिकंद्व्याहिकंवात्र्याहिकंचातुराहिकम् ॥ ३३० ॥
पंचाहिकंषष्ठसंस्थंपाक्षिकंमासिकंपुनः ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशुभक्षणादार्द्रकद्रवैः ॥ ३३१ ॥

अर्थ—कस्तूरी, कपूर, ताँबा, धायके फूल, रूपा, सोना, मोती, मूंगा, लोहा, पाढ, वायविडंग, नागरमोथा, सोंठ, सुगंधवाला, हरिताल, अभ्रक और आमला इन सबको आकके पत्तोंके रसमें मर्दनकरनेसे बृहत्कस्तूरीरस तय्यार होता है। यह कस्तूरीभैरवनामवाला रस सर्वज्वरनाशकहै । इसको अदरखके रसके साथ पीनेसे विषमज्वर नाश होताहै, तथा द्वन्द्वजज्वर, भूतज्वर, कामादिसे उत्पन्नहुए ज्वर, अभिचारकृतज्वर, शत्रुकृतज्वर और डाकिनी आदि दोषोंयुक्त ज्वर नाश होताहै । बेलगिरी और जीरा इन दोनोंका चूर्णकर सहतमें मिला उसमें कस्तूरीभैरवरस मिलाकर चाटनेसे—आमातीसार, संग्रहणी, ज्वरातिसार और खाँसी दूर होतीहै, अग्निदीपन होताहै और कासरोग नष्ट होता है अदरखके साथ भक्षणकरनेसे दुर्बलता, दुर्ग्रह, नाड़ीव्रण, प्रमेह, हलीमक, जीर्ण-

ज्वर, नवीनज्वर, द्विकालिकज्वर, सन्ततज्वर, भूतज्वर, वातरोग, पाण्डुरोग, गलग्रह, ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, पंचाहिक, षष्ठाहिक, पाक्षिक और मासिक तथा सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करदेवैहै ॥ ३२३ ॥ ३२४ ॥ ३२५ ॥ ॥ ३२६ ॥ ३२७ ॥ ३२८ ॥ ३२९ ॥ ३३० ॥ ३३१ ॥

अथ बालरसवटिका ।

श्लक्ष्णपत्राणिताम्राणिअर्कक्षीरेणभावयेत् ।
ततोवज्रपयसिचकांजिकेलवणान्विते ॥ ३३२ ॥
पुटांश्चक्रमशोदत्त्वाद्रावयेत्पंचधापुनः ।
ताम्रंभागंभवेदेकंद्वौभागौगंधकस्यच ॥ ३३३ ॥
माक्षिकस्यार्द्धभागेनपुटेगजपुटेपचेत् ।
म्रियतेनात्रसन्देहःसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३३४ ॥
रसस्यगन्धकस्यापिप्रत्येकंमाषकद्वयम् ।
भृंगश्चकेशराजश्चग्रीष्मसुन्दरमेवच ॥ ३३५ ॥
मण्डूकपर्णिकाचैवसिन्धुवारस्तथैवच ।
श्वेतापराजितामूलंशालिश्चकालमाविषम् ॥ ३३६ ॥
सूयावर्त्ततथैपाश्चचतुर्म्माषकसम्मितैः ।
प्रत्येकंस्वरसेखल्वेशिलायामवधानतः ॥ ३३७ ॥
लेपयेत्ताम्रगुडिकाघृष्टंतत्कज्जलीयुतम् ।
क्षिप्त्वातच्चाक्षिपेच्चूर्णमाषकंस्वर्णमाक्षिकात् ॥ ३३८ ॥
मरिचाच्चूर्णमाषञ्चततोघृष्टंपुनःपुनः ।
राजीप्रमाणवटिकाछायाशुष्काविशेषतः ॥ ३३९ ॥
पानीयवटिकासेयंदेयावैद्यविवर्जिते ।
सम्यक्परीक्षिताऽसाध्येसान्निपातेप्रदीयते ॥ ३४० ॥

अर्थ–ताँबेके सूक्ष्मपत्रकर आकके दूधकी भावना देवै. फिर क्रमसे थूहरके दूधमें तथा लवणसंयुक्तकाँजीमें पाँचप्रकार द्रावित करै, इस प्रकार शुद्ध किया हुआ ताँबा एकभाग, गंधक दोभाग और सोनामाखी आधाभागलेकर गजपु-

टमें पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै, यह भस्म सर्वयोगोंमें प्रयोगकरनी योग्यहै । दोमासे पारा और दोमासे गन्धक इन: दोनोंकी कज्जली बना उस कज्जलीको लेकर भाँगरा, कुकुरभाँगरा, ग्रीष्मसुन्दर, मण्डूकपर्णी, सम्हालू, सफेदकोयलकी जड, शालिंचशाक, कालशाक और सूर्यावर्त्त इन हरेकका चार चार मासे रस ले उस रसमें पूर्वोक्त कज्जलीको मिला खरलमें खरलकर फिर उक्त तांबेपै कज्जलीका लेप करै, तत्पश्चात् चूर्णकर एकमासा सोनामाखी और एक मासा कालीमिरचका चूरन मिला बारंबार घिस राईकी बराबर गोली बनाकर छायामें सुखादेवै, यह पानीयवटिका बालकोंके सन्निपातमें और असाध्यसन्निपातमें दीजातीहै ॥ ३३२ ॥ ३३३ ॥ ३३४ ॥ ३३५ ॥ ३३६ ॥ ॥ ३३७ ॥ ३३८ ॥ ३३९ ॥ ३४० ॥

अथ बालरसः ।

शाणंशुद्धस्यसूतस्यगंधकस्यचतत्समम् ।
स्वर्णमाक्षिकस्यापिअर्द्धभागंप्रयोजयेत् ॥ ३४१ ॥
ततःकज्जलिकांकृत्वालोहपात्रेदृढेनवे ।
केशराजस्यभृंगस्यनिर्गुण्ड्याःपत्रसंभवम् ॥ ३४२ ॥
शुभेशिलामयेपात्रेलौहदंडेनमर्दयेत् ।
शुद्धमातपसंयोगाद्गुडिकांकारयेत्ततः ॥ ३४३ ॥
प्रमाणंसर्षपाकारंबालानाञ्चैवयोजयेत् ।
हन्तित्रिदोषजंभूतंज्वरंचैवसुदारुणम् ॥ ३४४ ॥
चिरज्वरञ्चकासंचशूलंसर्वगदन्तथा ।
शिशूनांरोगनाशायरसोऽयंशिवनिर्मितः ॥ ३४५ ॥

अर्थ—चारमासेपारा, चारमासेगंधक और दोमासे सोनामाखी, इन सबको लेकर लोहेके बरतनमें कज्जली बना फिर कुकुरभाँगरा, भाँगरा, और सम्हालूके पत्तोंके रसमें लोहेके दण्डसे पत्थरके वर्तनमें मर्दन कर, तदनन्तर धूपमें सुखाके सरसोंकी बराबर गोली बनाले । यह गोली बालकोंको देनी चाहिये, इससे सन्निपातज्वर, भूतज्वर, दारुणज्वर, जीर्णज्वर, खाँसी, शूल और सर्वप्रकारके रोग दूर होतेहैं । यह बालरस बालकोंके रोगोंको दूर करनेके लिये शिवजीने निर्माण कियाहै ॥ ३४१ ॥ ३४२ ॥ ३४३ ॥ ३४४ ॥ ३४५ ॥

अथ रसशोधनम् ।

त्रिक्षारैःपंचलवणैर्दिनैकंमर्दयेद्रसम् ।
राजिकानागरंहिंगुएभिर्मूषान्तुकारयेत् ॥ ३४६ ॥
मूषान्तर्वर्त्तितंसूतंरुद्ध्वावस्त्रेणबन्धयेत् ।
आरनालेनतत्पाच्यंदोलायंत्रेदिनत्रयम् ॥ ३४७ ॥
आदायमर्दयेत्खल्वेसूततुल्यैर्द्रवैःपृथक् ।
निर्गुण्डीभृंगधत्तूरशताह्वागिरिकर्णजैः ॥ ३४८ ॥
मण्डूरीकाकमाचीचकविकर्णार्द्रकद्रवैः ।
करवीराग्निपाठाभिरेभिर्मर्द्यःक्रमाद्रसः ॥ ३४९ ॥

अर्थ—जवाखार, सज्जी, सुहागा, सैंधानोन, कालानोन, कचियानोन, बिड-नोन और सामग्नोनके साथ पारेको एक दिन मर्दनकर फिर राई, सोंठ और हींग इनको पीस मूषा बनालेवै, उस मूषामें पारेको रख वस्त्रमें बाँध कांजीमें दोलायंत्रके द्वारा तीन दिन पचावै, तदनन्तर, सम्हालू, भाँगरा, धतूरा, सौंफ, कोयली, मण्डूरी, मकोय, हस्तिकर्ण, पलाश, अदरख, कनेर, चीता, पाढ इनके रसमें पारेको क्रमसे मर्दन करैतो पारा शुद्ध होजाताहै ॥ ३४६ ॥ ॥ ३४७ ॥ ३४८ ॥ ३४९ ॥

अथ कालाग्निरुद्ररसः ।

मरिचंगंधतुल्यंचक्षिप्त्वापित्तैर्विभावयेत् ।
मायूरमात्स्यवाराहच्छागमाहिषजैरपि ॥ ३५० ॥
समस्तैरथवाव्यस्तैर्दिनैकंभावयेद्रसम् ।
संयोज्यगरलंचापिवटिकांकारयेद्बुधः ॥ ३५१ ॥
रसःकालाग्निरुद्रोऽयंद्विगुंजंभक्षयेत्ततः ।
शर्करालघुतोयंचपाययेत्स्नापयेज्जलैः ॥ ३५२ ॥
दाडिमंचेक्षुदण्डश्चदध्यम्लंपथ्यमाचरेत् ।
सद्योपचारैरन्यैश्चसन्निपातंनिवारयेत् ॥ ३५३ ॥
सकंटा[illegible]ठिन।जि[illegible]ंकासश्वासातिजि[illegible]िताम् ।

सद्यःकरोतिसुस्निग्धांपूर्वेतारसमन्विताम् ॥ ३५४ ॥
सूतंबधिरसेवश्चस्वस्तिजिह्वामरोचकम् ।
असाध्यसन्निपातेचरोगिणांपटुतांनयेत् ॥ ३५५ ॥

अर्थ–काली मिरच और गंधकको बराबर लेकर मयूर, मच्छ, सुअर, बकरा, और भैंसा इनके पित्तमें भावना देवै, तदनन्तर इनसबमें एक वार अथवा अलग अलग पारेको भावना देवै, फिर सबको मिला तिसमें विषमिश्रित कर गोली बनालेवै। इस कालाग्निरुद्ररसकी मात्रा दोरत्तीकी है। अनुपान–शर्करा, मधु और जल है। पथ्य-शीतलजलसे स्नान, ईख, दधि, और अम्लरस है। यह सन्निपातको दूर करैहै तथा कण्टकयुक्त और कठोर जीभ इससे चिकनी होजातीहै और खाँसी, श्वास, जिह्वारोग, अरुचि और असाध्यसन्निपातरोग नष्ट होताहै ॥ ३५० ॥ ३५१ ॥ ३५२ ॥ ३५३ ॥ ३५४ ॥ ३५५ ॥

दोषोल्पोहितसंभूतोज्वरोत्सृष्टस्यवापुनः ।
धातुमन्यतमंप्राप्यकरोतिविषमज्वरम् ॥ ३५६ ॥
नमुंचतिज्वरोयस्यपक्षादूर्द्ध्वंशरीरिणः ।
मन्दवेगोऽनुबंधश्चसज्वरोजीर्णतांगतः ॥ ३५७ ॥
त्रिसप्ताहव्यतीतन्तुज्वरोयस्त्वणुतांगतः ।
प्लीहाग्निसादंकुरुतेसजीर्णज्वरउच्यते ॥ ३५८ ॥
जीर्णज्वरेकफेक्षीणेक्षीरंस्यादमृतोपमम् ।
तदेवतरुणेपीतंविषवद्धन्तिमानवम् ॥ ३५९ ॥
चतुर्गुणेनाम्भसावाशृतंज्वरहरंपयः ।
धारोष्णंवापयःसद्योवातपित्तज्वरंजयेत् ॥ ३६० ॥
कासाच्छ्वासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलात्सपीनसात् ।
मुच्यतेज्वरितःपीत्वापंचमूलीशृतंपयः ॥ ३६१ ॥
यःस्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यांतथैवच ।
वेगतश्चापिविषमःसज्वरोविषमःस्मृतः ॥ ३६२ ॥

अर्थ–ज्वरमुक्तमनुष्यके अलपदोषभी कुपथ्य आहारादिद्वारा कुपित होकर रक्तादि किसी धातुको प्राप्तहो विषमज्वरको उत्पन्न करैहै। जो ज्वर पंद्रह

दिनमेंभी न उतरे और मंदवेगयुक्तहो, उसको जीर्णज्वर कहते हैं, अथवा जो ज्वर इक्कीसदिनके पश्चात् मन्दवेगान्वित होकर प्लीहा और अग्निमान्द्यको उत्पन्न करै है, उसको जीर्णज्वर कहतेहैं । जीर्णज्वरमें कफ क्षीण होनेपर दूधका पीना अमृतकी समान गुणदायकहै । किन्तु तरुणज्वरमें वही दूध विषकी समान अपकारी जानना । चारभाग जलमें एक भाग दूध मिलाकर अग्निमें पकावै जब जल जलकर दूध शेष रहै तब उतार शीतलकर पीवै, इससे जीर्णज्वर नाश होताहै। धारोष्ण अथवा तत्कालका दूध—वातपित्तज्वरनाशकहै । पंचमूलके चूर्णके साथ औटायाहुआ दूध पीनेसे खाँसी, श्वास, शिरशूल, पसलीकी पीडा, और पीनसरोग दूर होजाताहै । और जो अकालमें शीत तथा उष्णतासे वेगवाला ज्वर उत्पन्न हो, उसको विषमज्वर कहतेहैं ॥ ३५६ ॥ ३५७ ॥ ३५८ ॥ ३५९ ॥ ॥ ३६० ॥ ३६१ ॥ ३६२ ॥

मुस्तादिः ।

मुस्तामलकगुडूचीविश्वौषधकंटकारिकाक्काथः ।
शीतःसकणाचूर्णःसमधुर्विषमज्वरान्हन्ति ॥ ३६३ ॥

अर्थ—नागरमोथा, आमला, सोंठ और कटेरी इनका क्काथ शीतलकर मधु और पीपलके चूर्णके साथ सेवनकरनेसे विषमज्वर दूर होता है ॥ ३६३ ॥

अजाजीगुडसंयुक्ताविषमज्वरनाशिनी ।
अग्निसादंजयेत्सम्यग्वातरोगांश्चनाशयेत् ॥ ३६४ ॥
रसोनकल्कंतिलतैलमिश्रं
योश्नातिनित्यंविषमज्वरार्त्तः ।
विमुच्यतेसोऽप्यचिराज्ज्वरेण
वातामयैश्चापिसुघोररूपैः ॥ ३६५ ॥
महौषधामृतामुस्तचन्दनोशीरधान्यकैः ।
क्काथस्तृतीयकंहन्तिशर्करामधुसंयुतः ॥ ३६६ ॥

अर्थ—जीरेको गुड़के साथ सेवन करनेसे विषमज्वर, मन्दाग्नि और वातरोगका नाश होताहै । लसुनको पीस तिलके तेलमें मिलाकर सेवनकरनेसे—विषमज्वर और वातरोग दूर होतेहैं। सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चन्दन, खस और धनियाँ इनका काढा चीनी और मधुके साथ सेवनकरनेसे तृतीयकज्वर आरोग्य होता है ॥ ३६४ ॥ ३६५ ॥ ३६६ ॥

निदिग्धिकादिः ।

निदिग्धिकानागरकामृतानां
क्काथंपिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यार्दितपीनसेषु ॥ ३६७ ॥

अर्थ–कटेरी, सोंठ और गिलोय इनके काढ़ेमें पीपलका चूर्ण बुरकाकर पीनेसे जीर्णज्वर, अरुचि, खाँसी, शूल, श्वास, मन्दाग्नि, अर्दित और पीनसादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३६७ ॥

वासाधात्रीस्थिरादारुपथ्यानागरसाधितः ।
सितामधुयुतःक्काथश्चातुर्थिकनिवारणः ॥ ३६८ ॥
विदारीक्षुरसंसर्पिर्मधुतैलश्शृतंपयः ।
पिबेच्चातुर्थिकश्वासकासवातरुजापहम् ॥ ३६९ ॥

अर्थ–विसोंठा, आमला, शरिवन, देवदारु, हरड और सोंठ इनका काढ़ा चीनी और मधुके साथ पीनेसे चातुर्थिकज्वर नाश होताहै ॥ ३६८ ॥ विदारीकन्द, ईखका रस, घृत, मधु और तेल, इनको दूधमें पकाकर पीनेसे चातुर्थिकज्वर, श्वास, खाँसी, और वातरोग नष्ट होताहै ॥ ३६९ ॥

अष्टांगधूपः ।

पलंकषानिम्बपत्रंवचाकुष्ठंहरीतकी ।
सर्षपाःसयवाःसर्पिर्धूपनंज्वरनाशनम् ॥ ३७० ॥

अर्थ–गूगल, नीमके पत्ते, वच, कूट, हरड़, सरसों, जौ और घृत इन सबको एकत्र कर धूप देनेसे ज्वर आराम होताहै ॥ ३७० ॥

ज्वराःकषायैर्वमनैःपानैर्वालघुभोजनैः ॥
रूक्षस्ययेनशाम्यन्तिसर्पिस्तेषांभिषग्जितम्[1] ॥ ३७१ ॥

अर्थ–रूखे मनुष्यके जो ज्वर कषाय, वमन, पाचन और लघुभोजनसे शांत नहीं होवे तो उसकी घृतके द्वारा वैद्य चिकित्सा करे ॥ ३७१ ॥

१ भिषग्जितंचिकित्सितं भैषज्यमिति ।

क्षीरषट्पलकं घृतम् ।

पंचकोलैःससिन्धूत्थैःपलिकैःपयसासमम् ।
सर्पिःप्रस्थंशृतंप्लीहविषमज्वरगुल्मनुत् ॥ ३७२ ॥
अत्रद्रवान्तरानुक्तौक्षीरमेवचतुर्गुणम् ।
द्रवान्तरेणयोगेनक्षीरंस्नेहसमंभवेत् ॥ ३७३ ॥

अर्थ—पंचकोल और सैंधानोन, चार चार तोले और इनसबकी बराबर दूध और चौंसठ तोले घी इनसबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। यह घृत विषम ज्वर, प्लीहा और गुल्म नाशक है ॥ ३७२ ॥ यहां अन्य कोई वस्तु नहीं कही है इसकारण दूधही चौगुना गेरना चाहिये। और जहां पानीमें क्काथ करै तौ घृतके समान दूध गेरना चाहिये ॥ ३७३ ॥

पिप्पलाद्यं घृतम् ।

पिप्पलीचन्दनंमुस्तमुशीरंकटुरोहिणी ।
कलिंगकास्तामलकींशारिवातिविषेस्थिरा ॥ ३७४ ॥
द्राक्षामलकबिल्वानित्रायमाणानिदिग्धिका ।
सिद्धमेभिर्घृतंसद्योज्वरंजीर्णंव्यपोहति ॥ ३७५ ॥
क्षयंकासंशिरःशूलंपार्श्वशूलमरोचकम् ।
अंगाभितापमाग्निश्चविषमंचनियच्छति ॥ ३७६ ॥
पिप्पलाद्यमिदंक्कापितंत्रेक्षीरेणपच्यते ।
यत्राधिकरणेनोक्तंगणेस्यात्स्नेहसंविधौ ॥ ३७७ ॥
तत्रैवकल्कनिर्यूहाविष्येतेस्नेहवेदिना ।
एतद्वाक्यबलेनैवकल्कसाध्यमिदंघृतम् ॥ ३७८ ॥

अर्थ—पीपल, चन्दन, नागरमोथा, खस, कुटकी, इन्द्रजव, भुईआवला, अनन्तमूल, अतीस, शालपर्णी, दाख, आमला, बेल, त्रायमान और कटेरी इन सबको समानभाग लेवै और यह सर्वतोलमें सेरभर हो, घृत चारसेर और दूध छै सेर लेवै (और किसीके मतसे दूध बिलकुल नहीं लेवै) फिर इन सबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। यह [illegible] हुआ घृत जीर्णज्वरको दूर करै है और नवीन ज्वरकोभी दूर करैहै, तथा क्षय, खाँसी शिरशूल, पार्श्वशूल,

अरुचि, अंगाभिताप और विषमाग्निको शमन करैहै । यह पिप्पल्यादि घृत किसी तंत्रमें तौ दूधमें सिद्ध होताहै और किसीके मतसे नहीं होताहै । और जिस अधिकरणमें तौ नहीं कहाहोवै और गणमें स्नेहविधि हो, उस जगह स्नेहके जाननेवाले वैद्योंको कल्क और निर्यूह (काढा) समझना चाहिये ॥ ३७४ ॥ ॥ ३७५ ॥३७६॥ ३७७ ॥ ३७८ ॥

दशमूलषट्पलकं घृतम् ।

दशमूलीरसैःसर्पिःसक्षीरैःपंचकोलकैः ।
सक्षारैर्हन्तितत्सिद्धंज्वरकासाग्निमन्दताः ॥ ३७९ ॥
वातपित्तकफव्याधीन्प्लीहानञ्चापिपांडुताम् ।
क्काथंचतुर्गुणंकार्यंक्षीरंचसममेवच ॥ ३८० ॥
चतुर्षष्टिपलंक्काथ्यंशरावास्तत्समाजलात् ।
पादशेषःकषायोऽत्रक्षीरंस्नेहसमंभवेत् ॥ ३८१ ॥

अर्थ–दशमूलके काढेमें–पीपलामूल, चव्य, चीता और सोंठ तथा जवाखारका कल्क मिला और घी,दूध समान भाग मिश्रित कर घृत सिद्ध करै, इसघृतको खानेसे–ज्वर, खाँसी, मन्दाग्नि, वात, कफ, पित्तरोग, प्लीहा, पाण्डुरोग यह सब दूर होतेहैं ॥ ३७९ ॥ ३८० ॥ ३८१ ॥

चन्दनाद्यं घृतम् ।

चन्दनंचित्रकंसिंहीमुस्तकंचसनागरम् ।
काकोलीत्रायमाणाचधात्र्युशीरद्विसारिवे ॥ ३८२ ॥
एतान्यर्द्धपलांशानिसौम्यवारेसमाहरेत् ।
क्षीराढकंसमायुक्तंसर्पिःसार्द्धतुलांपचेत् ॥ ३८३ ॥
चातुर्थिकज्वरेशस्तमुन्मादविषमज्वरम् ।
हृद्याहिकंश्वासकासौचसर्वापस्मारनाशनम् ॥ ३८४ ॥

अर्थ–चन्दन, चीता, कटेरी, नागरमोथा, सोंठ, काकोली, त्रायमाण, आमला, खस, अनन्तमूल और करियावासाऊ, इन सब औषधियोंको चार चार तोले सोमवारके दिन लेवै, तीनसौछप्पन तोले दूध और दोसौ तोले घृत लेवै, इनसबको मिलां घृत तय्यार करै, यह ज्वर, चातुर्थिकज्वर, उन्माद, विषमज्व ,

द्व्याहिकज्वर, श्वास, खाँसी और सर्वप्रकारके अपस्मार रोगोंको दूर करैहै ॥ ॥ ३८२ ॥ ३८३ ॥ ३८४ ॥

अंगारकतैलम् ।

मूर्वालाक्षाहरिद्रेद्वेमंजिष्ठासेन्द्रवारुणी ।
बृहतीसैन्धवंकुष्ठंरास्नामांसीशतावरी ॥ ३८५ ॥
आरनालाढकेनैवतैलप्रस्थंविपाचयेत् ।
तैलमंगारकंनामसर्वज्वरविनाशनम् ॥ ३८६ ॥
(अंगारको मंगलः)
इदं लोके मङ्गलतैलम् ।

अर्थ–मूर्वा, लाख, हलदी, दारुहलदी, मजीठ, कटेरी, सैंधानोन कूट, रास्ना. जटामांसी और सतावर, इन सबका कल्क एकसेर, काँजी छैसेर और तिलोंका तेल चारसेर लेवै फिर तेलको पका लगानेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होतेहैं ॥ ॥ ३८५ ॥ ३८६ ॥

पिप्पल्यादिर्यथा ।

शुक्तारनालंदधिमस्तुतक्रं
फलाम्लभागेनसमंहितैलम् ।
कृष्णादिकल्कैर्मृदुवह्निसिद्ध-
मभ्यंजनंवातकफज्वराणाम् ॥ ३८७ ॥
एकाहिकद्वित्रिचतुर्थकाणां
मासार्द्धमासद्वयमासकानाम् ।
निवारणं तद्विषमज्वराणां
स्नेहादिषट्कद्वरकंमहत्स्यात् ॥ ३८८ ॥
शुक्तं कांजिकम् । दधिमथिततक्रम् मातुलुंगरसः ।

अर्थ–शुक्तकाँजी, दहीका पानी,मट्ठा और बिजोरे नीबूका रस और इनमेंसे एककी बराबर तेल लेकर पिप्पल्यादि गणके कल्कमें मिलाकर मृदु अग्निसे तैल सिद्ध करै, यह तेल लगानेसे–वातकफज्वर, एकाहिक ज्वर, द्व्याहिकज्वर, त्र्याहिकज्वर, चातुर्थिकज्वर, पाक्षिकज्वर, मासिकज्वर, द्विमासिकज्वर, और विषमज्वरादिको दूरकरताहै ॥ ३८७ ॥ ३८८ ॥

अथ महालाक्षादितैलम् ।

लाक्षारसाढकेप्रस्थंतैलस्यविपचेद्भिषक् ।
मस्त्वाढकसमायुक्तंपिष्ट्वाचात्रसमावपेत् ॥ ३८९ ॥
शतपुष्पांहरिद्रांचमूर्वांकुष्ठंहरेणुकाम् ।
कटुकांमधुकंरास्नामश्वगंधांचदारुच ॥ ३९० ॥
मुस्तकंचन्दनञ्चैवपृथगक्षसमानकैः ।
द्रव्यैरेतैस्तुतत्सिद्धमभ्यंगान्मारुतापहम् ॥ ३९१ ॥
विषमाख्यान्ज्वरान्सर्वानाश्वेवप्रशमंनयेत् ।
कासंचप्रतिश्यायंचकण्डूंदौर्बल्यगौरवम् ॥ ३९२ ॥
त्रिकपृष्ठकटीशूलंगात्राणांस्फुटनंतथा ।
पापालक्ष्मीप्रशमनंसर्वग्रहनिवारणम् ॥ ३९३ ॥
अश्विभ्यांनिर्मितंसम्यक्तैलंलाक्षादिकंमहत् ॥ ३९४ ॥
अत्रदोलायंत्रविधानात्षड्गुणजलेनलाक्षामे-
कविंशतिवारान्परिस्राव्यलाक्षारसोग्राह्यइतिवृद्धाः ३९५

अर्थ-लाखकारस २५६ दोसौछप्पन तोले, दहीकापानी २५६ दोसौछप्पन तोले इनमें चौंसठतोले तिलके तेलको पकावे, फिर सौंफ, हलदी, मूर्वा, कूठ, रेणुका, कुटकी, महुआ, रास्ना, असगंध, देवदारु, नागरमोथा और चन्दन, यह सब औषधी एक एक तोले ले महीन पीस उसमें मिलाकर तेलको सिद्ध करे इस तेलको मलनेसे वातरोग, सर्वप्रकारके विषमज्वर, खाँसी, प्रतिश्याय, खुजली, दुर्बलता, शरीरकी गुरुता, त्रिकशूल, पृष्ठशूल, कटिशूल, शरीरमें दर्द, शरीरका फटजाना, पाप, अलक्ष्मी और सर्वग्रहदोष दूर होतेहैं । यह महालाक्षादितैल श्रीमान् अश्विनीकुमारने निर्माण कियाहै । यहाँ दोलायंत्रसे छैगुने जलमें लाखको इक्कीसबार टपकाके रस निकालकर ग्रहण कियाजाता है । इसप्रकार वृद्ध आचार्योंने कहाहै ॥ ३८९ ॥ ३९० ॥ ३९१ ॥ ३९२ ॥ ३९३ ॥ ॥ ३९४ ॥ ३९५ ॥

सुदर्शनचूर्णम् ।

कालीयकस्तुरजनीदेवदारुवचाघनम् ।
अभयाधन्वयासश्चशृंगीक्षुद्रमहौषधम् ॥ ३९६ ॥

त्रायन्तीपर्पटंनिम्बंग्रन्थिकंवालकंशठी ।
[illegible]ष्करंमागधंमूर्वा[illegible]टजंमधुयष्टिका ॥ ३९७ ॥
शिग्रू[illegible]लंचेन्द्रयवापाठादार्वी[illegible]चन्दनम् ॥
पद्मकंचबलोशीरत्वचंसौराष्ट्रमृत्तिका ॥ ३९८ ॥
यवान्यतिविषाबिल्वंमरिचंपत्रकंस्थिरा ।
आमलकंशिवाक्षश्चसचित्रकपटोलकम् ॥ ३९९ ॥
कलसीचैवसर्वाणिसमभागानिकारयेत् ।
सर्वद्रव्यस्यचार्द्धेनकैरातंसंप्रकल्पयेत् ॥ ४०० ॥
एतत्सुदर्शनंनामज्वरान्हन्तिनसंशयः ।
प्राकृतंवैकृतंचैवसौम्यंतीक्ष्णमथापिवा ॥ ४०१ ॥
अन्तर्गतंबहिष्कंचनिरामंसाममेवच ।
ज्वरमष्टविधंहन्यात्साध्यासाध्यमथापिवा ॥ ४०२ ॥
नानादोषोद्भवश्चैववारिदोषोद्भवन्तथा ।
विरुद्धभेषजभवंज्वरमाशुव्यपोहति ॥ ४०३ ॥

अर्थ–पीलाचन्दन, हलदी, देवदारु, वच, नागरमोथा, हरड, जवासा, काकड़ाशिंगी, कटेरी, सोंठ, त्रायमाण, पित्तपापडा, नीम, पीपलामूल, सुगन्धवाला, नरकचूर, पोहकरमूल, पीपल, चूरनहार, कूडा, मुलैठी. सैंजिना, कमल, इन्द्रयव, पाढ़, दारुहलदी, लालचन्दन, पद्माख, खिरैंटी, खस, दालचीनी, सोरठकी मिट्टी, अजवायन, अतीस, बेल, मिरच, तेजपात, शालपर्णी, आमला, भुईआमला, बहेडा, चीता, परवल और पृश्निपर्णी, इन सब औषधियोंको समान भाग लेवे और इन सबसे आधाभाग चिरायता मिला चूरन करै यह सुदर्शन नामवाला चूरन–निःसन्देह सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करताहै । तथा प्राकृत ज्वर, वैकृतज्वर, सौम्यज्वर, तीक्ष्णज्वर, अंतर्गतज्वर, बहिर्गतज्वर, निरामज्वर, आमज्वर, आठप्रकारका ज्वर, साध्यज्वर, असाध्यज्वर, नानाप्रकारके दोषोंसे उत्पन्नहुआ ज्वर, पानीके दोषसे उत्पन्नहुआ ज्वर और विरुद्धऔषधियोंसे उत्पन्नहुआ ज्वर दूर होताहै ॥ ३९६ ॥ ३९७ ॥ ३९८ ॥ ३९९ ॥ ४०० ॥ ॥ ४०१ ॥ ४०२ ॥ ४०३ ॥

चंदनादिलोहम्।

रक्तचंदनह्रीबेरपाठोशीरकणाशिवा।
नागरोत्पलधात्रीभिस्त्रिमदेनसमन्वितः॥ ४०४॥
लोहानिहन्तिविविधान्समस्तान्विषमज्वरान्॥४०५॥
मुथाचिताविडंगइतित्रिमदम्।
सर्वचूर्णसमंलोहचूर्णंग्राह्यम्।

अर्थ—लालचन्दन, सुगंधवाला, पाढ़, खस, पीपल, हरड़, सोंठ, कमल, आमला, नागरमोथा, चीता और वायविडंग इन सब औषधियोंको समान भाग लेवै और सबकी बराबर लोहा मिलावै, यह चन्दनादिलौह—सर्वप्रकारके विषमज्वरोंको दूर करताहै॥ ४०४॥ ४०५॥

इति ज्वराधिकारः।

अथज्वरातिसारचिकित्सामाह।

ग्रन्थान्तरे-

पैत्तेज्वरेपित्तभवोऽतिसार-
स्तथातिसारेयदिवाज्वरःस्यात्।
दोषस्यदूष्यस्यसमानभावो
ज्वरातिसारःकथितोभिषग्भिः॥ ४०६॥
पृथक्छुभनिदानेनज्वरातीसारनिर्णयः।
ज्वरातिसारिणामादौकुर्याल्लंघनपाचने॥ ४०७॥
प्रायस्तस्यामसम्बन्धंविनानभवतोयतः।
ज्वरातिसारयोरुक्तंभेषजंयत्पृथक्पृथक्॥ ४०८॥
नतस्मिन्द्वितयंकार्यमन्योऽन्यंवर्द्धयेद्यतः।
प्रायोज्वरहरंभेदिस्तम्भनञ्चातिसारनुत्॥ ४०९॥
अतोऽन्योन्यंविरुद्धत्वाद्वर्द्धनंततपरस्परम्।
व्यवसंज्वरोत्थ मुपेक्ष्यअनिलोबली॥ ४१०॥

पक्कोपिहिप्रकुर्वीतदोषःकोष्ठकृतेयतः ।
अतिसंवृतमानंवापाचनंसंग्रहंनयेत् ॥ ४११ ॥

अर्थ—अब ग्रन्थान्तरोंके मतसे ज्वरातिसारकी चिकित्सा कहतेहैं। पित्तज्वरमें पित्तसे उत्पन्नहुआ अतिसार, अथवा अतिसारमें ज्वर होजाय; तिसको दोष और दूष्यके समानभाव होनेसे भिषक्राज ज्वरातीसार कहते हैं। ज्वर और अतिसार इन दोनोंका पृथक् पृथक् निदानद्वारा ज्वरातीसार रोगका निर्णय करना। ज्वरातीसाररोगमें प्रथम लंघन और पाचन कराना चाहिये। कारण यह है कि–बिना आमके ज्वरातीसार उत्पन्न नहीं होताहै। ज्वर और अतिसारमें कहीहुई औषधि कभी भी ज्वरातिसारमें प्रयोग नहीं करनी चाहिये। कारण यहहै कि–ज्वरनाशक औषधी प्रायः भेदक और अतीसारनाशक औषधी मलस्तम्भक होतीहै। इसलिये दोनों परस्परमें रोगको बढानेवाली हैं ॥ ४०६ ॥ ॥ ४०७ ॥ ४०८ ॥ ४०९ ॥ ४१० ॥ ४११ ॥

नागरादिः ।

नागरातिविषामुस्तभूनिम्बामृतवासकैः ।
सर्वज्वरहरःक्काथःसर्वातीसारनाशनः ॥ ४१२ ॥

अर्थ—सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और अडूसा इनका क्काथ सर्वप्रकारके ज्वर और सर्वप्रकारके अतीसारोंको दूर करता है ॥४१२॥

पाठादिः ।

पाठेन्द्रयवभूनिम्बमुस्तपर्पटकामृताः ।
जयन्त्यामतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१३ ॥
प्रक्षेपार्थंशुण्ठीचूर्णम् ।

अर्थ—पाढ, इन्द्रजौ, चिरायता, नागरमोथा, पित्तपापरा, गिलोय, इनका काढा बना उसमें सोंठका चूर्ण बुरकाकर पीनेसे ज्वरयुक्त और बिना ज्वरका आमातीसार दूर होता है ॥ ४१३ ॥

ह्रीबेरादिः ।

ह्रीबेरातिविषामुस्तबिल्वधन्याकमागधैः ।
पिबेत्पिच्छाविबन्धघ्नंशूलद्दोषामपाचनम् ॥ ४१४ ॥
सरक्तंहन्त्यतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१५ ॥

अर्थ-सुगंधबाला, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, धनियाँ और पीपल इनका क्वाथ-विबन्ध, शूलदोष और झागोंयुक्तआमको पाचन करै है। तथा ज्वर सहित अथवा ज्वररहित रक्तातिसारको हरै है ॥ ४१४ ॥ ४१५ ॥

बृहद्ह्रीबेरादिः ।

ह्रीबेरातिविपामुस्तबिल्वधन्याकवत्सकैः ।
समंगाधातकीलोध्रंविश्वंदीपनपाचनम् ॥ ४१६ ॥
हन्त्यरोचकपिच्छामंविबन्धंसातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१७ ॥
सरक्तेतिदृष्टफलः ।
अत्रप्रक्षेपशिमलिआठा ।

अर्थ-सुगंधबाला, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, धनियाँ, कुड़ा, मजीठ, धायके फूल, लोध और सोंठ इनका काढा-दीपन और पाचनहै। तथा अरुचि, झागोंयुक्तआम, वेदनासहितविबंध, रक्तातिसार, ज्वरसहित अतीसार, अथवा विनाज्वरके अतीसार दूर करै है ॥ ४१६ ॥ ४१७ ॥ यह रक्तातिसार मेरा कई वार अजमाया हुआ है ॥

उशीरादिः ।

उशीरंबालकंमुस्तंधन्याकंविश्वभेषजम् ।
समंगाधातकीलोध्रंबिल्वंदीपनपाचनम् ॥ ४१८ ॥
हन्त्यरोचकपिच्छामंविबन्धंसातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१९ ॥
धन्याकस्थानेभूनिम्बइतिपाठान्तरे ।
ज्वराधिकेयोज्यमिति ।

अर्थ-खस, सुगंधवाला, नागरमोथा, धनियाँ, सोंठ, मजीठ, धायके फूल, लोध और बेलगिरी इनका काढ़ा-दीपन और पाचन है। तथा अरुचि, झागोंयुक्त आम,वेदनासहित विबन्ध, रक्तातीसार, ज्वरातीसार और ज्वररहित अतिसारको भी दूर करै है ॥४१८॥ ४१९ ॥ और कोई कोई वैद्य धनियेंके स्थानमें चिरायता डालते हैं ॥

जम्ब्वादिः ।

जम्ब्वाम्रपल्लवोशीरवटशुंगारविच्छदः ।
रसःक्काथोऽथवाचूर्णमधुनासहयोजितः ॥ ४२० ॥
छर्दिज्वरातिसारश्चतृष्णांमूर्च्छांश्चदुर्जयाम् ।
नियच्छत्यचिर द्रक्तस्रुतिश्चानेकहेतुजाम् ॥ ४२१ ॥

इति ज्वरातीसाराधिकारः समाप्तः।

अर्थ—जामन और आमके पत्ते, खस, बडके अंकुर, इनका रस क्काथ वा चूर्णको मधुके साथ सेवन करनेसे—वमन, ज्वरातीसार, तृषा, दुर्जयमूर्च्छा और अनेककारणोंसे रुधिरका गिरना दूर होताहै ॥ ४२० ॥ ४२१ ॥

इति ज्वरातीसाराधिकारः समाप्तः ।

अथातीसारचिकित्सामाह ।

शकृद्दुर्गन्धिसाटोपविष्टम्भार्त्तिप्रसेकिनः ।
विपरीतंनिरामन्तुकफात्पक्कन्तुमज्जति ॥ १ ॥
आमेविलंघनंशस्तमादौपाचनमेववा ।
कार्यश्चानशनस्यास्तेप्रद्रवंलघुभोजनम् ॥ २ ॥
योतिद्रवंप्रभूतश्चपुरीषमतिसार्यते ।
तस्यादौवमनंकुर्यात्पश्चाल्लंघनमाचरेत् ॥ ३ ॥
नामेसंग्रहणंदद्यादतीसारेकदाचन ।
अकालेसंगृहीतोऽपिविकारान्कुरुतेबहून् ॥ ४ ॥
शोथपांड्वामयप्लीहकुष्ठगुल्मोदरज्वरान् ।
दण्डकालसकाध्मानग्रहणार्शोगदास्तथा ॥ ५ ॥
क्षीणधातुबलार्त्तस्यबहुदोषातिविस्रुतः ।
आमोपिस्तम्भनीयःस्यात्पाचनान्मरणंभवेत् ॥ ६ ॥
स्थविराणांचबालानांबहुवेगोऽतिविस्रुतः ।
आमोऽपिस्तम्भनीयःस्यान्नतुपाचनमाचरेत् ॥ ७ ॥
वर्जयेद्द्विदलंशूलीकुष्ठीमांसंक्षयीस्त्रियम् ।

द्रवमन्नमतीसारीसर्वश्चतरुणज्वरी ॥ ८ ॥
स्तोकंस्तोकंविबंधंवासशूलंयोऽतिसार्यते ।
अभयापिप्पलीकल्कैःसुखोष्णैस्तंविरेचयेत् ॥ ९ ॥
दीप्ताग्निर्बहुदोषोऽपिविबन्धमतिसार्यते ।
विडंगत्रिफलाकृष्णाकषायैस्तंविपाचयेत् ॥ १० ॥

अर्थ–दुर्गन्धयुक्तमल उतरे, पेटमें गुड़गुड़ शब्द होय, विष्टम्भ, वेदना और प्रसेकसंयुक्त हो उसको आमातीसार कहतेहैं । इससे विपरीत होय तौ पक्वातिसार कहते हैं । कफके संयोगसे पक्कमल जलमें डूबजाताहै । आमातिसारमें प्रथम लंघन अथवा आमपाचक औषध देनी चाहिये । लंघनके अंतमें पतला और लघु भोजन देना योग्य है । और जिस अतिसारवाले रोगीके अत्यंत पतला और अधिक मल उतरे, उसको प्रथम वमन और पश्चात् लंघन कराने चाहियें। आमातीसारमें कभीभी मलरोधक औषधि नहीं देनी चाहिये, कारण यह है कि-अकालमें संग्राहक औषधि देनेसे--सूजन, पांडुरोग, प्लीहा, कोढ, गुल्म, उदररोग. ज्वर, दंडक, अलसक, आध्मान, संग्रहणी और अर्शरोग उत्पन्न होताहै । धातुक्षीण, बलहीन, बहुतदोषोंसे पीडित, वृद्ध, बालक और अत्यन्त अतिसारके वेगोंसे युक्त रोगीके आमातीसार उत्पन्न होय तौ मलरोधक औषधि देनी-चाहिये, कभीभी इनको पाचक औषधि नहीं देनी चाहिये । कारण यह है कि--आमके पचनेसे दुर्बल होकर मृत्युको प्राप्त होजातेहैं । शूलरोगी बैदल अन्न,कुष्ठरोगी मांस, क्षयरोगी स्त्रीप्रसंग, अतिसाररोगी पतला भोजन और तरुणज्वरवाला रोगी इनसभी उपरोक्त अपथ्योंको त्यागदेवे, कुछ कुछ विबन्ध और शूलसंयुक्त मल उतरे तौ हरड और पीपलका कल्क बनाकर उष्णजलके साथ भक्षण करै । इससे दस्त होजायँगे । दीप्ताग्नि और बहुतदोषयुक्त अतीसारवाले रोगीके विबन्धसहित मल उतरे तौ वायविडंग, त्रिफला और पीपल, इनका क्वाथ पिलाना चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७॥ ८ ॥९॥१०॥

धान्यपंचकम् ।

धन्याकंनागरंमुस्तंबालकंबिल्वमेवच ।
आमशूलविबन्धघ्नंपाचनंवह्निदीपनम् ॥ ११ ॥

अर्थ–धनियाँ, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धवाला और बेलगिरी, इनका क्वाथ, आमशूल और विबंध नाशक है तथा पाचक और अग्निप्रदीपक है ॥ ११ ॥

नागरातिविषामुस्तैरथवाधान्यनागरैः ।
तृष्णाशूलातिसारघ्नंपाचनंदीपनंलघु ॥ १२ ॥
हरीतकीसातिविषंहिंगुसौवर्चलान्वितम् ।
सैन्धवश्चसुचूर्ण्येदंपाययेदुष्णवारिणा ॥ १३ ॥
आमातिसारयोगेनयद्यनेननशाम्यति ॥
नतंयोगशतेनापिचिकित्स्योहिचिकित्सकैः ॥ १४ ॥
पाठावत्सकबीजानिहरीतक्योमहौषधम् ।
एतदामसमुत्थानमतीसारंसवेदनम् ॥ १५ ॥
कफात्मजंसपित्तश्चवर्चोबध्नातिहिध्रुवम् ॥ १६ ॥
क्काथेनचूर्णेनवा ।
कुलत्थस्वरसोदेयोऽर्जुनस्यसमाक्षिकः ।
जयत्याममतीसारंक्काथोवाकुटजत्वचः ॥ १७ ॥

इति आमातीसारः ।

अर्थ–सोंठ, अतीस और नागरमोथा, अथवा धनियाँ और सोंठ, इनका क्काथ तृषा, शूल और अतीसारनाशक है तथा पाचक, दीपन और हलका है ॥ १२ ॥ हरड़, अतीस, हींग, कालानोन और सैंधानोन इनका चूर्णकर गरम जलके साथ पीनेसे आमातीसार निःसन्देह दूर होताहै और जो इसयोगसे आमातीसार दूर न होवै तौ सैंकडों योगोंसे भी दूर न होगा ॥ १३ ॥ १४ ॥ पाढ़, इन्द्रजौ,हरड़ और सोंठ इनका क्काथ अथवा चूर्ण करनेसे वेदनायुक्त आमातीसार दूर होताहै तथा कफ और पित्तसे उत्पन्नहुआ पतला मल सख्त होता है ॥ १५ ॥ १६ ॥ कुलथी और अर्जुनकी छालका रस मधुके साथ अथवा कुड़ेकी छालका क्काथ पीनेसे आमातीसार नष्ट होताहै ॥ १७ ॥

इति आमातीसारचिकित्सा समाप्ता ।

अथ रक्तातीसारे ।

ग्राह्यंघटप्ररोहाग्रंतण्डुलोदकपेषितम् ।
पिबेद्धातक्रसंयुक्तंकर्षैकंरक्तदाहनुत् ॥ १८ ॥
तण्डुलोदकवासोत्थद्रवैरक्तोत्पलंपिबेत् ।

मेघनादस्यमूलंवामधुनासितयायुतम् ॥ १९ ॥
तण्डुलोदकपानेनसर्वरक्तातिसारजित् ॥ २० ॥

अर्थ-वड़के अंकुरोंको चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे अथवा वड़के अंकुरोंका एक तोलाभर रस पीनेसे-रक्तस्राव और दाह दूर होती है॥ १८ ॥ लाल कमल और चौलाईकी जड़को पीसकर तण्डुलोदक और अडूसेके रसके साथ तथा मधु और चीनीके साथ पीनेसे-अथवा केवल चावलोंके जलको ही पीनेसे सर्वप्रकारके रक्तातीसार नाश होतेहैं ॥ १९ ॥ २० ॥

यवान्यादिचूर्णम् ।

यवानींद्रयवापाठाबिल्वशुंठीरसांजनैः ।
चूर्णंचापिहरेद्गुल्मंसततंचातिशोणितम् ॥ २१ ॥

अर्थ-अजवायन, इन्द्रजौ, पाढ़, बेलगिरी, सोंठ और रसौत इनका चूर्ण भक्षण करनेसे गुल्म और रक्तातीसार नष्ट होताहै ॥ २१ ॥

पाठामोचरसंमुस्तंधातकीबिल्वनागरम् ।
गुडतक्रयुतंपानेअसाध्यमपिसाधयेत् ॥ २२ ॥
काकमाचीरसंक्षौद्रंशुक्ताछागीपयःपिबेत् ।
रक्तातीसारशोथांश्चअतिरक्तक्षयंजयेत् ॥ २३ ॥
रक्तसूत्रैःकटिंबद्धासर्पाक्षिकस्यमूलकम् ।
स्नुह्यावासहदेवस्यमूलैःस्यादतिसारजित् ॥ २४ ॥
बिल्वचूतास्थिनिर्यूहःपीतःसक्षौद्रशर्करः ।
निहन्याच्छर्द्यतीसारंवैश्वानरइवाहुतिम् ॥ २५ ॥
कुलत्थस्वरसःपीतोहिज्जलस्यसमाक्षिकः ।
जयत्याममतीसारंक्काथोवाकुटजत्वचः ॥ २६ ॥
कल्कःकृष्णतिलानाञ्चशर्करापंचभागिकः ।
आज्येनपयसापीतःसद्योरक्तंनियच्छति ॥ २७ ॥

अर्थ--पाढ, मोचरस, नागरमोथा, धायके फूल, बेलगिरि और सोंठ इनसबको गुड और मट्ठेके साथ पीनेसे असाध्यरक्तातीसारभी दूर होजाताहै ॥ २२ ॥ मकोयके रसको सहतमें मिलाकर सफेद बकरीके दूधके साथ पीनेसे रक्ताती-

सार, सूजन और अतिरक्तक्षयंका क्षय होताहै ॥ २३ ॥ सर्पाक्षीकी जडको लालसूतसे कटिपै बाँधनेसे अथवा सेहुंडकी जडको लालसूतसे कटिपै बाँधनेसे वा सहदेईकी जडको लालसूतसे कटिपै बांधनेसे अतिसार दूर होताहै ॥ ॥ २४ ॥ बेलगिरी और आमकी गुठलीका क्काथ मधु और चीनीके साथ सेवन करनेसे वमन और अतीसार दूर होताहै ॥२५॥ कुलथी वा हिज्जलका रस मधुके साथ अथवा कुडेका क्काथ पीनेसे अतीसार दूर होताहै ॥ २६ ॥ एकभाग कालेतिलोंका कल्क और पाँचभाग चीनी इनदोनोंको मिलाकर घृत और दूधके साथ सेवन करनेसे तत्काल रक्तातीसार दूर होताहै ॥ २७ ॥

धातक्यादिः ।

धातक्यतिविषामुस्तसमंगाबिल्ववत्सकम् ।
अजाक्षीरोदकेसिद्धंशर्करामाक्षिकंपिबेत् ॥ २८ ॥
रक्तातिसारशूलघ्नंदाहशोथज्वरारुचा ॥ २९ ॥

अर्थ--धायके फूल, अतीस, नागरमोथा, मजीठ, बेलगिरी और कुडा इनसबको बकरीके दूधमें औटाकर शर्करा और सहत मिलाकर पीनेसे रक्तातीसार, शूल, दाह, सूजन, ज्वर और अरुचि दूर होतीहै ॥ २८ ॥ २९ ॥

जम्ब्वाम्रामलकीनान्तुपल्लवोत्थरसंपिबेत् ।
अजाक्षीरसमंक्षौद्रंयुक्त्यारक्तातिसारजित् ॥ ३० ॥
शल्लकीबदरीजम्बूपियालार्जुनकत्वचः ।
पीताःक्षीरेणमध्वाज्येपृथक्शोणितवारणः ॥ ३१ ॥
पीत्वासशर्करंक्षीरंचन्दनंतण्डुलाम्बुना ।
दाहंतृष्णांप्रमोहञ्चसद्योरक्तंनियच्छति ॥ ३२ ॥
रसांजनंसातिविषं[illegible]जस्यफलत्वचम् ।
धातकीशृंगवेरंचपिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ ३३ ॥
सक्षौद्रेणप्रनुदातरक्तातिसार[illegible]णम् ।
मन्दञ्चदीपयेच्चाग्निंशूलंचाशुनिवर्त्तयेत् ॥ ३४ ॥
गुडेनखादयेद्बिल्वंरक्तातीसारनाशनम् ।
आमशूलविबन्धघ्नंकुक्षिरोगहरंपरम् ॥ ३५ ॥

स्विन्नंबालबिल्वम् ।

सुस्विन्नंकंचटंबालबिल्वंसनवनीतकम् ।
लिह्याद्रक्तातिसारघ्नंसशूलंग्रहणीप्रणुत् ॥ ३६ ॥

अर्थ–जामन, आम और आमला इनके पत्तोंका रस बराबरके बकरीके दूधमें और सहतके साथ पीनेसे रक्तातीसार नष्ट होताहै ॥ ३० ॥ शालई, बेरी, जामन, चिरोंजीका वृक्ष और अर्जुन इनमेंसे एक किसीकी छालको बकरीके दूध, मधु और घृतकेसाथ सेवन करनेसे रक्तातीसार दूर होताहै ॥ ३१ ॥ चन्दन, बूरा, दूध और तण्डुलोदक मिलाकर पीनेसे दाह, तृषा, मोह और तत्काल रक्तातीसार दूर होताहै ॥ ३२ ॥ रसोत, अतीस, कुडेकी छाल, इन्द्रयव, धायके फूल और सोंठ इनको चावलोंके जलके साथ पीसकर मधु मिलाकर सेवन करनेसे रक्तातीसार, अग्निमान्द्य और शूलको हरैहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ कच्चे बेलको पानीमें उसेकर गुडके साथ भक्षण करनेसे रक्तातीसार, आमशूल, विबन्ध और कोखके दर्दमें आराम होताहै ॥ ३५ ॥ उसीजा हुआ कंचक शाक और बेल इनको नवनीतमें मिलाकर खानेसे–रक्तातीसार, शूल और संग्रहणी दूर होजातीहै ॥ ३६ ॥

गुदभ्रंशचिकित्सा ।

गुदपाकन्तुपित्तेनयस्यस्यादहिताशिनः ।
तस्यपित्तहराःसर्वाअभीष्टाश्चानुवासनाः ॥ ३७ ॥
सेकशौचादिकंचात्रपटोलमधुवारिभिः ।
अत्रान्तरे[illegible]वादिकंचचिकित्सितम् ॥ ३८ ॥
गुदेऽतिरक्तंस्रवतिघृतैर्हिप्रतिसारयेत् ।
धातकीलोध्रमांसानांचूर्णैर्वापंचवल्कलैः ॥ ३९ ॥
घृताक्तैर्गु[illegible]दौशीतैःस्रावेऽतिसेचयेत् ।

पंचवल्कलं यथा ।

न्यग्रोधोदुम्बरप्लक्षसपिप्पलकपीतनाः ॥ ४० ॥
क्षीरवृक्षाः पंचानांवल्कलंपंचवल्कम् ॥
क्वचित्कपीतनस्थानेशिरीषोबेतसोऽपिच ॥ ४१ ॥

अर्थ–[illegible]जसमनुष्य[illegible] आहित सेवनसे पित्तकरकै गुदा पकजावै उसके लिये पित्तको हरनेवाली और अनुवासनक्रिया तथा पटोलका रस, मधु और जलसे गुदाको सेकना और शौच हितकारक है । जो गुदासे अत्यन्त रुधिर गिरै तौ घृतका लेप करना चाहिये । तथा धायके फूल, लोध और उड़दोंका चूर्ण अथवा पंचवल्कलोंके चूर्णको घृतमें मिला गुदा आदिको सींचनेसे रक्तस्राव बन्द होजाताहै ॥ (पंचवल्कल) बड़, गूलर, पाखर, पीपल और पारिस-पीपल, इनपांच क्षीरवृक्षोंके वल्कलोंको पंचवल्कल कहतेहैं, और कितनेक वैद्य पारिसपीपलके स्थानमें सिरस और बेंतको मिलातेहैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

अथसर्वातीसारमाह ।

लवंगचतुःसमम् ।

जातीफलंत्रिदशपुष्पसमन्वितेन
जीरंचटंगणयुतंचरकैःप्रयुक्तम् ।
चूर्णानिमाक्षिकसितासहितानिलीढ्वा
सामातिसारमखिलंगुरुहन्तिशूलम् ॥ ४२ ।

अर्थ–जायफल, लोंग, जीरा और सुहागेकी खीलें, इन सबका चूर्ण कर सहत और चीनीके साथ खानेसे सर्वप्रकारके अतीसार और शूल नष्ट होतेहैं ॥ ४२ ॥

कंचटादिः ।

कंचटजम्बुदाडिमशृंगाटकपत्रबिल्वह्रीबेरम् ।
जलधरनागरसहितंगंगामपिवेगिनींरुंध्यात् ॥ ४३ ॥

अर्थ–जलपीपल, जामन, अनार, सिंघाडेके पत्ते, बेल, सुगंधबाला, नागरमोथा और सोंठ इनका क्काथ गंगाके समान वेगवाले अतिसारको रोकदेताहै ॥ ४३ ॥

वाते ।

दशमूलीबलाबिल्वधान्यकोत्पलविश्वजा ।
वातातीसारणेदेयातक्रेणान्यतमेनवा ॥ ४४ ॥

क्काथश्चूर्णोवा ।

क्काथ[illegible]जलंदेयम् ।
अन[illegible]जिकजला[illegible]ना ॥

अर्थ–दशमूल, खिरैंटी, बेलगिरी, धायके फूल, कमल और सोंठ इनका क्वाथ अथवा चूर्ण, तक्र वा काँजी इत्यादिकेसाथ सेवन करनेसे वाताद्यतीसार नष्ट होताहै ॥ ४४ ॥

पित्ते ।

किराततिक्तकंमुस्तंवत्सकंसरसांजनम् ।
पिबेत्पित्तातिसारघ्नंसक्षौद्रंवेदनापहम् ।
म[illegible]कंकट्फलंलोध्रंदाडिमस्यफलत्वचौ ॥ ४५ ॥
रक्तपित्तातिसारेषुयोजयेत्तण्डुलाम्बुना ।

चूर्णेन ।

अजाक्षीरप्रयोगेणबलंवर्णस्तुवर्द्धते ॥ ४६ ॥

अर्थ–चिरायता, नागरमोथा, कुडेकी छाल और रसौत इनका क्वाथ मधुके साथ पीनेसे पित्तातीसार और वेदनाका नाश होताहै ॥ मुलेठी, कायफल, लोध और अनारके फलकी छाल, इनका चूर्ण चावलोंके जलके साथ रक्तातीसार और पित्तातीसारमें देना चाहिये । और यहही चूर्ण बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे बल और वर्णको बढावै है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

कफे ।

श्लेष्मातिसारेप्रथमंहितंलंघनपाचनम् ।
योज्यंचामातिसारघ्नंयथोक्तंपूर्वमौषधम् ॥ ४७ ॥
सविडंगःसमरिचःसकपित्थःसनागरः ।
चांगेरीतक्रकोलाम्लःखडःश्लेष्मातिसारनुत् ॥ ४८ ॥

अर्थ–कफातीसारमें प्रथम लंघन और पाचन कराना चाहिये । पश्चात् पूर्वोक्त आमातीसारको दूरकरनेवाली औषधि प्रयोग करनी योग्य है ॥ ४७ ॥ बायविडंग, कालीमिरच, कैथ, सोंठ, चांगेरी, तक्र और बेरके द्वारा बनायाहुआ खड्‌यूष कफातीसार विनाशक है ॥ ४८ ॥

वातश्लेष्मे ।

[illegible]टजातिविषा[illegible]स्तहरिद्रापर्णनीद्वयम् ।
सक्षौद्रंशर्करं[illegible] ॥ ४९ ॥
कुटजत्वक्फलं[illegible]स्तंक्वाथं यत्वाजलंपिबेत् ।

अतीसारंजयेदाशुशर्करामधुयोजितम् ॥ ५० ॥
कलिंगकवचामुस्तंदारुसातिविषंघनम् ।
कल्कंतण्डुलतोयेनपिबेत्पित्तानिलामयी ॥ ५१ ॥

अर्थ–कुडेकी छाल, अतीस, नागरमोथा, हलदी, शरवन, और पिठवन, इनका काढ़ा मधु और खाँडकेसाथ पीनेसे पित्तकफातीसार दूर होताहै ॥ ॥ ४९ ॥ कुडेकी छाल इन्द्रजौ और नागरमोथा, इनका काढ़ा शर्करा और मधुके साथ मिलाकर पीनेसे–शीघ्रही अतीसारको दूर करै है ॥ ५० ॥ इन्द्रजव, वच, नागरमोथा, देवदारु, अतीस और मोथा, इनका कल्क बनाकर चावलोंके पानीके साथ पीनेसे–वातपित्तातीसार दूर होताहै ॥ ५१ ॥

वत्सकादिः ।

सवत्सकः सातिविषः सबिल्वः सोदीच्यमुस्तश्चकृतः कषायः ।
सामेसशूलेसहशोणितेच चिरप्रवृद्धेपिहितोऽतिसारे ॥५२॥

अर्थ–कुड़ेकी छाल, अतीस, बेलगिरी, सुगंधवाला और नागरमोथा. इनका क्काथ–आमातीसार, शूलातीसार, रक्तातीसार और जीर्णरक्तातीसारको दूर करै है ॥ ५२ ॥

लोकनाथरसः ।

रसभस्मस्यभागैकंचत्वारःशुद्धगंधकम् ।
पिष्ट्वावराटिकापूर्याटंकणेननिरुध्यच ॥ ५३ ॥
भाण्डंरुद्ध्वापुटेपच्यात्स्वांगशीतंविचूर्णयेत् ।
लोकनाथोरसोनाम्नाक्षौद्रैर्गुंजाचतुष्टयम् ॥ ५४ ॥
नागरातिविषामुस्तदेवदारुवचान्वितम् ।
कषायमनुपानंस्याद्वातातीसारनाशनम् ॥ ५५ ॥

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, शुद्धगंधक चारभाग, इन दोनोंकी कज्जली करै, उस कज्जलीको पीलीकौड़ीमें भरे और कौड़ीके मुखको सुहागेमे बन्दकरै, फिर भाण्डमें रख मुखको बन्दकर अग्निका पुट देवै, शीतल होनेपर निकाल लेवे, पश्चात् बारीक चूर्ण करै तौ लोकनाथरस बनजाताहै. इस लोकनाथरसको चार रत्ती प्रमाण मधुके साथ चाटै, पश्चात् सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु और वचका क्काथ पीवै, इससे सर्वप्रकारके वातातीसार नष्ट होतेहैं॥५३॥५४॥५५॥

कनकसुंदररसः ।

शुद्धंसूतंसमंगंधंमरिचंटंकणंतथा ।
स्वर्णबीजंसमंसर्वंभार्गींद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥ ५६ ॥
सूततुल्यंमृतंचाभ्रंरसःकनकसुन्दरः ।
योगंगुंजाद्वयंहंतिपित्तातीसारमद्भुतम् ॥
दध्यन्नंदापयेत्पथ्यमाजंवाथगवांदधि ॥ ५७ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, मिरच, सुहागा और धतूरेके बीज, यह सब समानभाग लेवै, फिर सबको दोप्रहर भारंगीके रसमें घोटै पीछे पारेकी बराबर अभ्रककी भस्म मिलावे तो कनकसुन्दररस सिद्धहो । दोगुंजाप्रमाण खानेसे पित्तातीसारको निःसन्देह दूर करै इसके ऊपर गायके दहीके साथ भात तथा बकरीके दहीके साथ भात पथ्य है ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

रसायनामृतम् ।

कर्षंगंधकमर्द्धपारदमुभेकुर्याच्छुभांकज्जलीं
त्र्याक्षंत्र्यूषणकंचपंचलवणात्सार्द्धंचकर्षंपृथक् ।
सार्द्धाक्षंद्विपलंविचूर्ण्यसकलंशक्राशनान्मिश्रयेत्
खादेच्छाणमतोनुकांजिकपलंमंदाग्निसंदीपनम् ॥ ५८ ॥
स्वेच्छाभोजनतोरसायनमिदंघूर्णादिकोपज्वरे
पेयंचात्रतुकांजिकंवदतिसानारीमहाभैरवी ।
हन्याद्वातंचपित्तंकफकृतकमतीसारदोषंग्रहण्याः
श्वासंकासञ्चशूलंज्वरमुदररुजौराजयक्ष्माणमुग्रम् ॥ ५९ ॥
प्लीहानंचामवातंषडपिचगुदजांकुष्ठरोगंसमग्रम्
वातास्त्रंकंठरोगानिदमिहकथितंदीपनंजाठराग्नेः ।
दीर्घायुःकाममूर्तिर्जितवलिपलितोधीरगंभीरनादो
मेधावीसत्त्ववीर्यस्मृतिबलसहितोमानवोऽस्यप्रसादात् ६० ॥

अर्थ–दोतोले गन्धक, एकतोला पारा, इनदोनोंकी सुन्दर, कज्जली, करै, पश्चात् सोंठ दो तोले, मिरच, दो तोले, पीपल दोतोले संधानोन तीनतोले,

कालानोन तीनतोले, विडनोन तीनतोले, खारीनोन तीनतोले और सांभरनोन तीनतोले एवं भाँग १८ तोले लेकर सबका चूर्ण करले, इसचूर्णको पूर्वोक्त [illegible]ज्जलीमें मिलाकर चारमासे प्रमाण चार तोले काँजीके साथ खानेसे मन्दाग्नि दीपन होजायहै। इसमें मनोवांछित भोजन करै। यह रसायन घूर्णादिकोपज्वरमें हितकारीहै तथा वातातीसार, पित्तातीसार, कफातीसार, संग्रहणी रोग, श्वास, खाँसी, शूल, ज्वर उदररोग, घोर राजयक्ष्मारोग. प्लीहा, आमवात, छै प्रकारका अर्शरोग, सर्वप्रकारके कुष्ठरोग, वातरक्त, कंठरोग और मंदाग्निको नष्ट करैहै। और इसके प्रसाद अर्थात् सेवन करनेसे दीर्घायु, कामस्वरूप, बलीपलितरहित, धीर, गंभीरशब्दवाला शुद्धबुद्धिमान, सत्त्वगुण,वीर्य्य स्मरणशक्ति और बलसंयुक्त मनुष्य होजाताहै ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शोथंशूलंज्वरंतृष्णांश्वासंकासमरोचकम् ।
छर्दिंमूर्च्छांचहिक्कांचतृष्णातीसारिणंत्यजेत् ॥ ६१ ॥
सुप्तेपार्श्वद्वयेयस्यअतिरुक्शब्दउत्कटः ।
तृषार्त्तश्चबलैःक्षीणोऽप्यसाध्योग्रहणीगदी ॥ ६२ ॥
द्वित्रिपंचदशाहाद्वापक्षान्मासाच्चवाकदा ।
आमंस्रावंसपैच्छिल्यंस्निग्धंशुभ्रंघनंस्रवेत् ॥
दिवाकोपोनिशाशांतिःकटिभेदःसकृद्भवेत् ॥ ६३ ॥
[illegible]तेनदुश्चिकित्स्याभिषग्वरैः ॥ ६४ ॥
अथापिपाचनैःसम्यग्दीपनैस्तामुपाचरेत् ॥ ६५ ॥

अर्थ–सूजन, शूल, ज्वर, तृषा, श्वास खाँसी, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, और हिक्कासंयुक्त अतीसाररोगवाले रोगीको त्यागदेवै। जिस संग्रहणीवाले रोगीके सोनेके समय दोनों पसलियोंमें पीड़ा और उत्कट शब्द होवै, तृषा करकै पीडित होवै, और बलकरके क्षीण होवै, उसको असाध्य जानना। जो कभी २–३-४–५–१०–१५–अथवा ३० दिनपर्यन्त पिच्छिल, स्निग्ध, शुभ्र, और घन आमयुक्तमल गिरै, तथा दिनमें कुपितहो और रात्रिमें शान्त होजावै और मल उतरनेके समय कमरमें दर्द हो ऐसा आमवातयुक्त संग्रहणीरोग असाध्य जानना यद्यपि यहरोग तो असाध्यहै तथापि इसकी पाचन और दीपन औषधियोंसे चिकित्सा करै ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

इति आमातीसारचिकित्सा समाप्ता।

अथग्रहणीचिकित्सामा॰ ।

अतीसारेनिवृत्तेऽपिमंदाग्नेरहिताशिनः ।
भूयःसंदूषितोवह्निर्ग्रहणीमभिदूषयेत् ॥ १ ॥

अर्थ-अतीसारके निवृत्तहोनेपरभी मंदाग्नियुक्त और अहितसेवन करनेवाले पुरुषके जठराग्नि दूषित होकर ग्रहणीकलाको अभिदूषित कर संग्र॰णीरोगको उत्पन्न करै है ॥ १ ॥

नायिकाचूर्णम् ।

चित्रकस्त्रिफलाव्योषंविडंगंरजनीद्वयम् ।
भल्लातकंयवानीचहिंगुर्लवणपंचकम् ॥ २ ॥
गृहधूमवचाकुष्ठंघनमभ्रंचगंधकम् ।
क्षारत्रयाजमोदाश्वपारदोगजपिप्पली ॥ ३ ॥
अमीषांगुण्डकंयावत्समंचूर्णंविमर्दितम् ।
शक्राशनस्यचूर्णन्तुतत्तुल्यंतत्रदापयेत् ॥ ४ ॥
बिडालपदमात्रन्तुभक्षयेदस्यगुण्डकम् ।
अभ्यर्च्यनायिकांप्रातर्योगिनींकामरूपिणीम् ॥ ५ ॥
मन्दाग्निकासदुर्नामप्लीहपाण्डुरुचिज्वरान् ।
प्रमेहशोथविष्टम्भसंग्रहग्रहणीगदान् ॥ ६ ॥
उपयुक्तोविधानेननाशयत्यचिरादिमान् ।
नानातीसारशमनःकृमिकण्डूविनाशनः ॥ ७ ॥
आमवातमदच्छेदी सूतिकातंकनाशनः ॥ ८ ॥
रजनीद्वयोःस्थानेकेऽपिजीरकद्वयंपठन्ति ।
कांजिकाम्लंसदापथ्यंदग्धमीनन्तथादधि ।
तस्मादसौसदासेव्योगुण्डकोनायिकामतः ॥ ९ ॥
काष्ठमप्युदरेयस्यभक्षणाद॰ ातिजीर्णताम् ।
नतेऽस्मिन्व्याधयःसन्तिवातपित्तकफोद्भवाः ॥ १० ॥

सर्वांस्तान्नाशयत्याशुगुण्डकोनायिकाकृते ।
वार्यन्नश्चव्यवायंचमांसपिष्टकभक्षणम् ॥ ११ ॥

अर्थ—चीता, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, बायविडंग, हलदी, दारुहलदी, भिलावा, अजवायन, हींग, सैंधानोन, कालानोन, विड़नोन, खारीनोन, साँभरनोन, गृहधूम (घरकाधुआँ) वच, कूट, नागरमोथा, अभ्रक. गन्धक, जवाखार, सज्जी, सुहागा, अजमोद. पारा और पीपल इनसबको समानभागलेकर बारीक चूर्ण करे और सब चूर्णकी बराबर भांगका चूर्ण मिलावे. इस नायिकानामवाले चूर्णको कामरूपिणी योगिनीका पूजन करके दोतोले प्रमाण प्रातःकालमें भक्षणकरे, यह चूर्ण—मन्दाग्नि, खांसी, बवासीर, प्लीहा, पाण्डुरोग, अरुचि, ज्वर, प्रमेह, सूजन, विष्टम्भ, मलरोध और संग्रहणीरोगको उपयुक्त विधानसे खानेपर शीघ्रही दूर करेहै । और नानाप्रकारके अतीसारोंको शमन करै है । तथा कृमि, कण्डू. आमवात और सूतिकारोगको नष्ट करेहै । और कितनेक वैद्य इसयोगमें दोनो हल्दियोंकी जगह दोनो जीरे डालते हैं । इसपे काँजी, भुनीहुई मछली और दही पथ्यहै । इस चूर्णको भक्षणकरनेसे जिसके पेटमें काष्ठभी हो तो जरजाताहै । इस कारण यह नायिकाचूर्ण सदैव सेवनकरना चाहिये, वात, पित्त और कफसे उत्पन्नहुए रोगोंको यह नायिकानामवाला चूर्ण शीघ्रही नष्ट करदेताहै ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

अभ्रवटिका ।

अथसूतस्यशुद्धस्यगन्धकस्याभ्रकस्यच ।
प्रत्येकंकर्षमेकन्तुग्राह्यंरसगुणैषिणा ॥ १२ ॥
ततःकज्जलिकांकृत्वाव्योपचूर्णंप्रदापयेत् ।
केशराजस्यभृंगस्यनिर्गुण्डयाश्चित्रकस्यच ॥ १३ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथजयन्त्याःस्वरसन्तथा ।
मण्डूकपर्ण्याःस्वरसंतथाशक्राशनस्यच ॥ १४ ॥
श्वेतापराजितायाश्चस्वरसंपर्णसम्भवम् ।
दापयेत्तत्रतुल्यंचविधिज्ञःकुशलोभिषक् ॥ १५ ॥
रसतुल्यंप्रदातव्यंचूर्णंमरिचसम्भवम् ।
ेयंरसार्द्धभागेनचूर्णंटंकणसम्भवम् ॥ १६ ॥

शुभेशिलामयेपात्रेघर्षणीयंप्रयत्नतः ।
शुष्कमातपसंयोगाद्वटिकांकारयेद्भिषक् ॥ १७ ॥
कलायपरिमाणन्तुखादेत्तान्तुप्रयत्नतः ।
हन्तिकासंक्षयंश्वासंवातश्लेष्मभवंरुजम् ॥ १८ ॥
वरंवाजीकरःश्रेष्ठोबलवर्णाग्निदीपनः ।
ज्वरेचैवातिसारेचसिद्धएपप्रयोगराट् ॥ १९ ॥
नातःपरतरंकिंचिद्विद्यतेऽभ्ररसायनात् ।
चातुर्थिकज्वरेश्रेष्ठंसूतिकातंकनाशनम् ॥ २० ॥
भोजनेशयनेपानेनास्त्यत्रनियमःक्वचित ।
दधिचावश्यकंभक्ष्यंप्राहनागार्जुनोमुनिः ॥ २१ ॥

अर्थ–शुद्धपारा दो तोले, गंधक दोतोले और अभ्रक दो तोले इन तीनोंकी कज्जली करे, पश्चात् सोंठ, मिरच और पीपलका चूर्ण कज्जलीमें मिलाकर कुकुरभांगरा, भांगरा, सम्हालू, चीता, ग्रीष्मसुन्दर, अरनी, ब्रह्ममण्डूकी, भांग, सफेदकोयलके पत्ते इन प्रत्येकको दोदो तोले रसमें पृथक् पृथक् भिजोवे, फिर पारेकी बराबर मिरचोंका चूर्ण और पारेसे आधाभाग सुहागेका चूर्ण मिलावे, तत्पश्चात् पत्थरके खरलमें खरलकर धूपमें सुखाकर मटरकीसमान गोली बनावे–यह गोली खाँसी, क्षय, श्वास वातश्लेष्मोद्भवरोग, इनको दूर करैहै। श्रेष्ठ, उत्तम वाजीकरण, तथा बल, वर्ण और अग्निको दीपन करैहै। ज्वर और अतिसाररोगमें यह प्रयोगराज सिद्ध है। इससे परे और कोई दूसरी अभ्ररसायन नहीं है। यह चौथिया ज्वरमें हितकारीहै और सूतिकारोगनाशक है। इसपे भोजनका, सोनेका और पीनेका कुछ नियम नहीं है परन्तु दही इसपे अवश्य खाना चाहिये। यह नागार्जुनमुनिने कहाहै ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

कणानागरपाठाभिस्त्रिवर्गैद्वितयेनच ।
बिल्वचन्दनह्रीबेरैःसमंलोहंप्रदापयेत् ॥ २२ ॥
सर्वातीसारशमनःसंग्रहग्रहणीहरः ।

सर्वोपद्रवसंयुक्तामपिहन्यात्प्रवाहिकाम् ॥ २३ ॥
नानेनसदृशोलो ोविद्यतग्रहणीगदे ॥ २४ ॥

अर्थ—पीपल, सोंठ, पाठ, त्रिफला, चीता, बायविडंग, नागरमोथा, वेलगिरी चन्दन और सुगंधवाला, इन सबको समानभाग लेवै और सबकी बराबर लोहा लेवै, फिर सबको मिलाकर चूर्ण करले, यह सर्वप्रकारके अतिसारोंको शान्त करैहै और संग्रहणीरोगको हरै है तथा सर्वोपद्रवयुक्त प्रवाहिकारोगको नष्ट करै है। इसके समान संग्रहणीरोगको हरनेवाला और लोहा नहीं है। इसको कणादिलोह कहते हैं ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

अथ रसांजनादिचूर्णम्।

रसांजनंसातिविषंकुटजस्यफलत्वचम्।
धातकीशृंगवेरंचपिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ २५ ॥
क्षौद्रेणयुक्तंतुदतिरक्तातीसारमद्भुतम्।
मन्दंदीपयतेचाग्निंशूलंचाशुनियच्छति ॥ २६ ॥

अर्थ—रसोत, अतीस, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल और सोंठ इनका चूर्ण तण्डुलोदक और मधुके साथ सेवन करनेसे रक्तातीसार, मन्दाग्नि और शूल दूर होता है ॥ २५ ॥ २६ ॥

रसस्यशाणंसंगृह्यकांजिकेनतुशोषयेत्।
चित्रकस्यरसेचापित्रिफलायाश्चबुद्धिमान् ॥ २७ ॥
रसार्द्धंगंधकंशुद्धंभृंगराजरसेनवै।
द्वाभ्यांसंमूर्च्छनंकृत्वास्वरसैःशाणसंमितैः ॥ २८ ॥
खल्लयेच्चशिलाखल्वेक्रमशोवक्ष्यमाणजैः।
निर्गुण्डीमण्डुकीश्वेताकुचेलाग्रीष्मसुन्दरैः ॥ २९ ॥
भृंगाह्वकेश[illegible]शनोत्कटैः।
सर्षपाभ्यांवटींकृत्वादद्यात्तांग्रहणीगदे ॥ ३० ॥
आमवाताग्निमान्द्येचज्वरेप्लीहोदरेषुच।
वातश्लेष्मविकारेषुतथाश्लेष्मग[illegible]च ॥ ३१ ॥

अम्लंतक्रादिसेवांचकुर्वीतस्वेच्छयाबहु ।
क्रियतेवैद्यनाथेनलोकानुग्रहकारिणा ॥ ३२ ॥
स्वप्रान्तेब्राह्मणस्येयंभाषितालिखितानतु ॥ ३३ ॥

अर्थ–चारमासे पारेको काँजीमें और चीतेके रसमें तथा त्रिफलाके काढ़ेमें भावना देकर शोषणकरै, पश्चात् दोमासे गंधकको भाँगरेके रसमें मर्दन करै, इस प्रकार शुद्धकियेहुए गंधकको मिलाकर कज्जलीकरै, फिर सह्मालू, मण्डूकपर्णी, सफेदकोयल, पाढ़, भांगरा, कुकुरभाँगरा, जयन्ती, भाँग, और दालचीनी, इन प्रत्येकको चार चार मासे रसमें खरलकर सरसोंकी समान गोली बनावै । यह गोली–संग्रहणीरोगमें, आमवातमें, मन्दाग्निमें ज्वरमें प्लीहा और उदररोगमें, वातकफविकारोंमें और कफरोगमें देनी चाहिये । पथ्य–अम्लरस और बहुतसा तक्र जितना जी चाहै उतनाही पीना चाहिये । यह गोली वैद्यनाथकी कही हुई है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

ग्रहण्यादौ ताम्रयोगः ।

जयारुवुककाकमाचीशृंगवेररसैःपृथक् ।
सप्तधामूर्च्छितःशैलेरसोभवतिनिर्मलः ॥ ३४ ॥
सूक्ष्मपत्रीकृतंताम्रंगंधचूर्णेनयोजितम् ।
पुटयित्वाऽन्धमूषायांचूर्णंतक्रेणयोजयेत् ॥ ३५ ॥
तच्चूर्णंत्रिकटूपेतंयोजयेन्मधुसर्पिषा ।
ग्रहणीक्षयरोगेषुहितःसोपद्रवेषुच ॥ ३६ ॥
अम्लपित्तेचकुष्ठेचज्वरेमेहेचकामले ॥ ३७ ॥

अर्थ–अरणी, अरंड, मकोय और अदरखके रसमें सातबार मूर्च्छित किया हुआ पारा, ताँबेके बारीक कियेहुए पत्र और गंधकका चूर्ण इन तीनोंको मिलाकर मूषामें धरै, फिर गजपुटमें फूँक देवे, तत्पश्चात् तिसमें सोंठ, मिरच, और पीपलका, चूर्ण मिलाकर छाँछके साथ अथवा मधु और घृतकेसाथ खानेसे–उपद्रवयुक्तसंग्रहणी, क्षय, अम्लपित्त, कोढ़, ज्वर, प्रमेह, और कामलारोग दूर होताहै ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथताम्रयोगः ।

रसगंधकयोःकर्षंप्रत्यकंशोधयेद्भिषक् ।

ततःकज्जलिकांकृत्वानैपालंताम्रपत्रकम् ॥ ३८ ॥
कण्टवेध्यंविधातव्यंसर्वमेकत्रकारयेत् ।
पात्रेहिमृत्तिकोद्भूतेपरंदद्याद्रसंशुभम् ॥ ३९ ॥
पंचजम्बीरसंभूतंयथाप्लावितमेवतत् ।
आतपेस्थापयेत्पश्चाद्यावत्पंकोपमंभवेत् ॥ ४० ॥
पाणिनामर्दयित्वातुवटिकांकारयेत्ततः ।
विशोष्यभक्षयेद्रक्तिद्वयंतस्मान्महौषधात् ॥ ४१ ॥
दिनत्रयान्तरेणैवरक्तिरक्तिविविर्द्धयेत् ।
परिहारविधिस्तेनधान्यजीरानुपानतः ॥ ४२ ॥
प्रातरेतद्विधातव्यंहन्तिपित्ताम्लसंभवम् ।
ग्रहण्यामुद्भवंशूलमम्लपित्तञ्चदारुणम् ॥ ४३ ॥
अजीर्णंरक्तपित्तंचक्षयंकुष्ठंविशेषतः ॥ ४४ ॥

अर्थ—पारा—दोतोले, गंधक दोतोले, इन दोनोंको अलग अलग शोधे, फिर दोनोंकी कज्जली करे, तदनंतर ताँबेको कण्टकवेधी बनाकर कज्जली मिलादेवे, फिर मट्टीके बरतनमें रख पकेहुए जम्भीरी नींबुओंके रसमें भिजोवे, तत्पश्चात जबतक गारेकीसमान न होजावे तबतक धूपमें रक्खा रहनेदेवे, फिर हाथसे मलकर गोली बनावे और उन गोलियोंको छायामें सुखादेवे, फिर दो रत्ती प्रमाण भक्षण करे और तीन तीन दिनके पश्चात् एक एक रत्ती बढ़ाता जाय और इसीप्रकार बहुतकालके बाद एकएकरत्ती घटाता जावे। इसका अनुपान—धनियाँ और जीरा है। इसको प्रातःकाल सेवन करे। यह ताम्रयोग—अम्लपित्त, संग्रहणी, शूल, अम्लपित्तोद्भवशूल, अजीर्ण, रक्तपित्त, क्षय और कुष्ठको नष्ट करै है॥ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अथ बृहल्लवंगादिचूर्णम् ।

(ग्रन्थान्तरे)

लवंगातिविषामुस्तंपिप्पलीमारिचानिच ।
सैन्धवंहपुषाधान्यंकट्फलंपौष्करंतथा ॥ ४५ ॥

जातिकोषफलाजाजीसौवर्चलरसांजनम् ।
धातुमोचरसंपाठापत्रंतालीसकेशरम् ॥ ४६ ॥
चित्रकंचविडंचैवतुम्बुरुबिल्वमेवच ।
त्वगेलापिप्पलीमूलमजमोदायवानिका ॥ ४७ ॥
समंगावत्सकंविश्वंदाडिमंयावशूकजम् ।
भूनिम्बंसर्जिकाक्षारंसामुद्रंटंकणाभ्रकम् ॥ ४८ ॥
ह्रीबेरंकुटजंचैवअम्लकंकटुरोहिणी ।
एतानिसमभागानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ ४९ ॥
अनुपानंप्रदातव्यंबुद्ध्वादोषबलाबलम् ।
सर्वदोषभवंचैवग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥ ५० ॥
वातिकंपैत्तिकंचैवश्लैष्मिकंसान्निपातिकम् ।
सर्वातिसारशमनंसर्वशूलनिषूदनम् ॥ ५१ ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहसूतिकारोगनाशकम् ।
आमवातंतथाजीर्णंसंग्रहग्रहणीगदम् ॥ ५२ ॥
लवंगादिबृहच्चेदंधन्वंतरिप्रकाशितम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—लौंग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, कालीमिरच, सेंधानोन, दाऊचीर, धनियाँ, कायफल, पोहकरमूल, जायफल, जीरा, कालानोन, रसौत, धायकेफूल, मोचरस, पाठ, तेजपात, तालीशपत्र, नागकेशर, चीता, वायविडंग, तुम्बुरु, बेल, दालचीनी, इलायची, पीपरामूल, अजमोद, अजवायन, लज्जावंती, कुडेकीछाल, सोंठ, अनारदाना, जवाखार, चिरायता, सज्जी, समुद्रफेन, सुहागा, मोथा, सुगंधबाला, इन्द्रजव, अमलबेंत, और कुटकी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर कूट, बारीकचूर्ण करले, इससे बलाबलका विचारकर अनुपानदेवे, यह चूर्ण—सर्वदोषोंसे उत्पन्नहुई अत्यन्तदुस्तर संग्रहणी, वातातिसार, पित्तातीसार, कफातीसार, त्रिदोषजअतिसार, सर्वप्रकारके अतिसार, सर्वप्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, सूतिकारोग, आमवात, अजीर्ण और संग्रहणीरोगको नष्ट करताहै । यह बृहल्लवंगादिचूर्ण श्रीमान् धन्वन्तरिजीने प्रकाशित किया है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथ ग्र.णीकपाटः रसरत्नाकरे ।

टंकणक्षारगन्धाश्मरसंजातीफलानिच ।
बिल्वंखदिरसारंचजीरकंश्वेत नकम् ॥ ५४ ॥
कपिहस्तकबीजंचतथैवावाक ष्पिका ।
एषांशाणंसमादायश्लक्ष्णचूर्णञ्चकारयेत् ॥ ५५ ॥
बिल्वपत्रककार्पासफलंशालिंचदुग्धिका ।
शालिञ्चमूलं टजत्वचंकंचकपत्रकम् ॥ ५६ ॥
सर्वेषांस्वरसेनैववटिकांकारयेद्भिषक् ।
रक्तिकैकप्रमाणेनखादयेद्दिवसत्रयम् ॥ ५७ ॥
दधिमण्डस्ततःपेयःपलमात्रप्रमाणतः ।
अपियोगशताक्रान्तांग्रहणीमुद्धतांत्यजेत् ॥ ५८ ॥
आमशूलंज्वरंकासंश्वासंशोथंप्रवाहिकाम् ।
रक्तस्रावकरंद्रव्यंकार्यनैवात्रयुक्तितः ॥ ५९ ॥
कृष्णावार्त्ताकुमत्स्यञ्चदधितैलंचशस्यते ।
ज्ञात्वावायोर्गतिस्तत्रजलंतैलंप्रदापयेत् ॥ ६० ॥
ग्रहणीकपाटनामाऽयंकवाटघटनादिव ॥ ६१ ॥

अर्थ-सुहागा, गन्धक, शिलारस, जायफल, बेल, खैरसार, जीरा, सफेदराल, कौंछकेवीज, और सोंफ, इनसब औषधियोंको चारचार मासे लेकर बारीक चूर्ण करले, पीछे उस चूर्णको बेलपत्र, कपासकेफल शालिंच, दुद्धी, शालिंचमूल, कुडेकी छाल और कंचकशाकके पत्तोंके रसमें भावना देकर एक रत्तीभरकी गोली बनावै, प्रतिदिन एक गोली खाय इसप्रकार तीनदिन पर्यन्त खावै और ऊपरसे चारतोले दहीका पानी पी लेवै । यह ग्रहणीकपाटरस-जिस संग्रहणीको सैकड़ों योगोंसे आराम न हुआ होय उसको, आमशूल, ज्वर, खाँसी, श्वास, सूजन, और प्रवाहिकारोगको दूरकरैहै । इसके ऊपर रक्तस्राव (रुधिरको गिरानेवाली) औषधी नहीं खानी चाहिये । कालेबैंगन, मछली, दही और तेल इसपै पथ्यहै, किंतु वैद्यको चाहिये कि,वायुकी गतिको जानकर तेल देवै । जिस प्रकार मनुष्योंको किवाडैं रोक देतीहैं, उसीप्रकार यह ग्रहणीकपाटरस संग्रहणीरोगको रोकदेताहै ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

अथ लवंगादिचूर्णम् ।

लवंगातिविषामुस्तंबिल्वंपाठाथशाल्मली ।
जीरकंधातकीपुष्पंलोध्रेन्द्रयवबालकम् ॥ ६२ ॥
धान्यकंसर्जकंशृंगीपिप्पलीविश्वभेषजम् ।
समंगायावशूकंचसैन्धवंसरसांजनम् ॥ ६३ ॥
समभागानिचैतानिभक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
शमयेदग्निमान्द्यश्चसंग्रहग्रहणीगदम् ॥ ६४ ॥
नानावर्णमतीसारंसशोथंपाण्डुकामलम् ।
अष्ठीलिकांहन्तिकुष्ठंकोष्ठगतंज्वरम् ॥ ६५ ॥

अर्थ-लौंग, अतीस, नागरमोथा, बेल, पाढ़, सेमल, जीरा, धायके फूल, लोध, इन्द्रयव, सुगंधबाला, धनियाँ, राल, काकड़ासिंगी, पीपल, सोंठ, लज्जावंती, जवाखार, सैंधानोन और रसोत समानभाग लेकर पीस चूर्ण करले, इस चूर्णको प्रातःकाल उठकर खावै। यह चूर्ण मंदाग्नि, संग्रहणी, नानावर्णका अतिसार, शोथातीसार, पाण्डुरोग, कामला, अष्ठीलिकावात, कुष्ठ और कोष्ठगत ज्वरको नष्ट करै ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

अथ ग्रहणीकपाटरसः ।

रसगंधकयोश्चैवजातीफलविडंगकः ।
प्रत्येकंशाणमात्रन्तुश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥ ६६ ॥
सूर्यावर्त्तरसैश्चैवबिल्वपत्ररसैस्तथा ।
शृंगाटकस्यपत्राणां रसैःप्रत्येककंपलैः ॥ ६७ ॥
चण्डातपेनसंशोध्यवटिकांकारयेद्भिषक् ।
बिल्वपत्ररसेनैवभक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥ ६८ ॥
दध्नापिभोजनीयश्चग्रहणीरोगनाशनम् ।
पाण्डुरोगमतीसारंशोथदुर्नामनाशनम् ॥ ६९ ॥
ग्रहणीकपाटनामाऽयंकपाटघटनादिव ॥ ७० ॥

अर्थ-पारा, गंधक, जायफल और बायविडंग, इन प्रत्येकको चार चार मासे लेवै फिर सबको एकत्रकर बारीक चूर्ण करले, पीछे हुलहुल, बेलपत्र और सिंघा-

ड़ेके पत्ते, इन प्रत्येकको चार चार तोले रसमें भिजोवै, पश्चात् दोदो रत्तीकी गोली बनाकर तीक्ष्णधूपमें धरदे, एक गोली बेलपत्रके रसकेसाथ भक्षण करै, और दहीभातका भोजनकरै तो संग्रहणीरोग, पाण्डुरोग, अतीसार, सूजन, और बवासीर दूर होजावै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथ जातीफलाद्या वटिका ।

विशुद्धसूतस्यचगंधकस्यप्रत्येकशोमासचतुष्टयंच ।
विधायशुद्धोपलपात्रमध्येसुकज्जलींवैद्यवरःप्रयत्नात्७१
जातीफलंशालमलिवेष्टमुस्तंसटंकणंसातिविषंसजीरम् ।
प्रत्येकमेतन्मरिचस्यशाणप्रमाणमेकंविषमासकञ्च७२
विचूर्ण्यसर्वैरवमर्द्यपश्चाद्विभावयेत्पत्ररसैरमीपाम् ।
वंशाम्रभद्रोत्कटकद्रवाणामिन्द्राणिकेन्द्राशनकंसजम्बु॥
जयन्तिकांदाडिमकेशराजंसावित्रकर्णोपिचभृंगराजः ।
विभाव्यसम्यग्वटिकाविधेया
कोलास्थिमानाथयथानुपानम् ॥ ७४ ॥
सोमंनिहंत्यत्रबहुप्रकारंसूतीविकारंश्वयथुंसमग्रम् ।
कासंचपंचात्मकमम्लपित्तामियंनिहन्याद्ग्रहणींप्रवृद्धाम् ।
अभ्यस्यजीयाद्गुदजानसाध्यानामानुबंधंह्यतिसारमुग्रम्
श्वासंतथापाण्डुगदंनिहन्ति चिरोद्भवांचग्रहणींप्रदुष्टाम् ॥
जयेद्गुदशंयोगशतैरसाध्यांविवर्जनीयाइहदुष्टमत्स्याः ।
मत्स्यास्तथापाण्डववर्णकाश्चरम्भाफलंमूलमथोदलंच॥
बुधैर्विधेयंनकदाचिदत्रजातीफलाद्यावटिकाचहृद्या ।
यशोर्थिनोवैद्यवरस्यविद्याह्यनेकसंभावितमर्त्यलोके७८
नानाविधव्याधिपयोधिनौका ।
जातीफलाद्यावटिकाप्रसिद्धा ॥ ७९ ॥

अर्थ—पारा चार मासे, गंधक चार मासे, इन दोनोंकी उत्तम खरलमें कज्जली करै, पश्चात् जायफल, मोचरस, नागरमोथा, सुहागा, अतीस, जीरा और

कालीमिरच यह सब चार चार मासे लेवै, विष एक मासा लेवै फिर इन सबका चूर्णकर कज्जलीमें मिला, बाँसके पत्ते, आमके पत्ते, नीमके पत्ते, जलपीपलके पत्ते, सम्हालू, भाँग, जामन, अरणी, अनार, कुकुरभाँगरा, पाढ़ और भाँगरा, इन सबके रसमें भावना देकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बनावै, यह गोली अनुपानके साथ खानेसे बहुतप्रकारके सोमरोग, सूतिकारोग, सर्वप्रकारकी सूजन, पांच प्रकारकी खाँसी, अम्लपित्त, उग्र संग्रहणी, उग्र अतीसार, श्वास, पाण्डुरोग, प्राचीन संग्रहणी और असाध्यसंग्रहणीरोग दूर होते हैं। इसपै पाण्डुवर्णकी मछली, केलेकीफली, केलेकी जड और पत्र शाक भक्षण करना निषेधहै। यह जातीफलादिवटिका वैद्योंको यशदेनेवाली है, और यह नानाप्रकारके रोगरूपसमुद्रमें नौकारूप होकर रोगीको पार करदेतीहै ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

अथ मृतसंजीवनो रसः।

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतपादंविषंक्षिपेत्।
सर्वतुल्यंमृतञ्चाभ्रंमर्द्यंधुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ ८० ॥
सर्पाक्ष्याश्चद्रवैर्यामंकषायेणाथभावयेत्।
धातक्यतिविषामुस्ताशुण्ठीजीरकबालकम् ॥ ८१ ॥
यवानीधनिकाबिल्वंपाठापथ्याकणान्विता।
कुटजस्यत्वचंबीजंकपित्थंदाडिमंवचा ॥ ८२ ॥
प्रत्येकंकर्षमात्रंस्यात्कल्कितंक्राथयेज्जलैः।
कल्कंचतुर्गुणंग्राह्यंकषायंपादमात्रकम् ॥ ८३ ॥
अनेनत्रिदिनंभाव्यंपूर्वोक्तादिकृतंरसम्।
रुद्ध्वातंबालुकायंत्रेक्षणंमृद्वग्निनापचेत् ॥ ८४ ॥
मृतसंजीवनोनामरसोगुंजाचतुष्टयम्।
दातव्योह्यनुपानेनअसाध्यंसाधयेद्ध्रुवम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, गंधक, यह दोनो समानभाग लेवे, विष पारेसे चौथा भाग लेवे और सबकी समान अभ्रककी भस्म लेवे, फिर इन सबको मिलाकर धतूरेके रसमें और सर्पाक्षीके रसमें एक प्रहर खरल करे, फिर धायके फूल, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, जीरा, सुगंधवाला, अजवायन, धनियाँ, बेलगिरी, पाढ़,

हरड़, पीपल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रयव, कैथा, अनार और बच प्रत्येक दोदो तोले लेकर कल्क अथवा क्राथ बनावै, कल्कमें ता पानी चारगुणा ग्रहण करै आर क्राथमें एकगुणा ग्रहण करै, पीछे इसमें पूर्वोक्तचूर्णको तीन दिन भावना देकर वालुकायंत्रमें रख मुख बन्द करै, क्षणभर मृदुअग्निसे पचावै । इस मृतसंजीवन रसको चार रत्तीभर अनुपानकेसाथ देनेसे असाध्यसंग्रहणी आदि रोगोंको दूर करैहै ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

अथ मृतसंजीवनरसोऽपरः ।

नागरातिविषामुस्तदेवदारुकणावचा ।
यवानीबालकोधान्यंकुटजस्यत्वचाभया ॥ ८६ ॥
धातकीन्द्रयवंबिल्वंपाठामोचरसंसमम् ।
चूर्णैःसमधुनालेह्यमनुपानंसुखावहम् ॥ ८७ ॥

अर्थ—सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, बच, अजवायन, सुगंधबाला, धनियाँ, कुड़ेकीछाल, धायकेफूल, इन्द्रयव, वेलगिरी, पाढ़, और मोचरस, इन सबको समानभाग लेकर चूर्णकरै, इस चूर्णको सहतकेसाथ खानेसे संग्रहणीरोग दूर होताहै ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

अथ पंचामृतपर्पटी ।

अष्टौगन्धकतोलकान्रसपलंलोहंतदर्द्धंशुभं
लोहार्द्धंबकुलाभ्रकंसुविमलंशुल्बस्यमासद्वयम् ।
पात्रेलोहमयेचमर्द्दनविधौचूर्णीकृतंचैकतो-
दार्व्याबादरवह्निनाचमृदुनापक्वंविदित्वादले ॥ ८८ ॥
रंभायालघुचालयेत्[illegible]टैरियंपंचामृतापर्पटी
ख्याताक्षौद्रघृतान्विताप्रतिदिनंगुंजात्रयंवृद्धितः ।
लोहेमर्द्दनयोगतःसुविमलंभक्ष्यंक्रियालो[illegible]व-
द्गुंजा[illegible]धिकंत्रिकचतुःसप्तद्वयंयुग्मतः ॥ ८९ ॥
न[illegible]नावर्णातिसारग्रहणिपरिगदेदु[illegible]रेऽग्निमान्द्ये
छर्द्यांचैवाम्लपित्तेप्रबल[illegible]दगदेरक्तपित्तेक्षयेच ।

श्रेष्ठापुष्टिप्रदायावलिपलितहरानेत्ररोगैक .न्त्री
तीक्ष्णंदीप्तिंस्थिराग्निंपुनरपिचनरंदिव्यदेहंकरोति॥९०॥

अर्थ–गंधक आठ तोले, पारा चार तोले, लोहा दो तोले, अभ्रक एक तोला और ताँबा दो मासे, इन सबको लोहेके पात्रमें एकत्र मर्दन करे, पश्चात् इसको लोहेके बरतनमें रख चूल्हेपै चढा बेरीकी लकडियोंसे मंदमन्द पकावै, और लोहेकी करछीसे चलावै, पकजानेपर बरतनमेंसे लौटकरके केलेकेपत्तेपर ढाललेवै इसप्रकार पंचामृतपर्पटी बनती है। मात्रा तीन रत्तीकी है. इसको लोहेके बरतनमें पीस सहत और घृतके साथ सेवनकरै, तीन रत्तीसे आठ रत्तीतक बढावै, आठ रत्तीसे अधिक एकदिनमें नहीं खाय. इसप्रकार इस पंचामृतपर्पटीको सेवनकरनेसे अनेकरंगका अतीसार, नानाप्रकारकी संग्रहणी, असाध्यमंदाग्नि, वमन, अम्लपित्त, प्रबल गुदरोग, रक्तपित्त और क्षयरोगका नाश होताहै, यह पंचामृतपर्पटी–पुष्टिकारक, बलि (शरीरमें बलि पड़ने) पलित (विनाही अवस्था बालोंका धवल होजाना) नाशक, नेत्र रोगोंको दूर करने वाली, तीक्ष्णता, दीप्ति, जठराग्निको स्थिर और देहको दिव्यस्वरूप करती है॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

अथ ग्रन्थान्तरोक्ता पंचामृतवटी।

कृष्णाभ्रलोहमलशुद्धविडंगसारं
प्रत्येकमेकपलिकंविधिवद्विधाय।
चव्यंकटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलानलघण्टकर्णाः॥ ९१ ॥
मानोरुबूकबृहतीत्रिवृताथसूर्या-
वर्त्तपुनर्नविकयासहितस्त्वमीपाम्।
चूर्णं प्रतिप्रतिसुशोधितमक्षमेकं
चूर्णात्तदर्द्धरसगंधकमेकसंस्थम्॥ ९२ ॥
संपिष्यतस्यगुटिकाविधिवत्कृतासा
हन्त्यम्लपित्तम [illegible]णीमसाध्याम्।
दुर्नामक मलभगन्दरशोथगुल्मान्
शूलश्चपाकजनितंसततान्गिमान्द्यम्॥ ९३ ॥

सद्यःकरोत्युपचितंचिरमन्दमग्निं
कुष्ठंनिहन्तिपलितञ्चवलींप्रवृद्धाम् ।
श्वासंचकासमपिपाण्डुगदंनिहन्ति
वार्यन्नमांसदधिकांजिकमत्स्यमांसम् ॥ ९४ ॥
वृक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजोयथेष्टं
शृंगाटबिल्वगुडकंचटनारिकेलम् ।
दुग्धादिसर्वविदलानिविवर्जयेच्च ।
मुद्गमकुष्ठचणककलायाढकीभिराख्यातः ।
वैदलइतिवर्गोयंविष्टम्भीपवनशूलकरः ॥ ९५ ॥

अर्थ--कृष्णाभ्रक, लोहमल और विडंगसार, यह प्रत्येक चार चार तोले लेवे चव्य, त्रिकुटा, त्रिफला, कुकुरभाँगरा, दन्ती, नागरमोथा, पीपल, चीता, घंट- कर्ण, मानकन्द, अरंड, कटाई, निसोत, हुलहुल और पुनर्नवा, इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले लेवे, और शुद्धपारा, शुद्धगन्धक चूर्णसे आधाभाग लेवे, इनसबको मिला बारीक पीसकर विधिपूर्वक गोली बनावे, इन गोलियोंको सेवनकरनेसे-- अम्लपित्त, अरुचि, असाध्यसंग्रहणी, बवासीर, कामला, भगन्दर, सूजन, गुल्म, पाकजनितशूल, मन्दाग्नि, कोढ, वलिपलित, श्वास, खाँसी और पांडुरोग, नष्ट होते हैं । जल, अन्न, माँस, दही, कांजी, मछलीका मांस, विषांबिल नीबू और तैलसे बना हुआ भोजन यह सब इसपै पथ्य हैं । सिंघाडे, बेल, गुड, कंचटशाक नारियल दूध और वैदल अन्नादि अपथ्यहैं । मूंग, बनमूंग, चनें, मटर, अरहर, इन सबको वैदल अन्न कहतेहैं, यह वैदल अन्न विष्टम्भकारक, वात और शूलको उत्पन्न करैहै ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

अथ लोहपर्पटी ।

रसगंधकयोःकृत्वाकज्जलंसमभागयोः ।
लौहचूर्णंरससमंदत्त्वासंश्लिष्यपर्पटी ॥ ९६ ॥
कार्यासाविधिनासेव्यारोगिभिःपथ्यभोजिभिः ।
अनुपानंशृतंक्वाथ्यंधान्यजीरकनागरः ॥ ९७ ॥
लौहेनपर्पटीचैवसिद्धालोकस्यसिद्धिदा ।
रक्तिकैकंसमारभ्यवर्द्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ ९८ ॥

सप्ताहैकंद्वयंवापियावदारोग्यदर्शनात्।
ग्रहणींदुस्तरांहन्तिशूलातीसारसूतिकाम् ॥ ९९ ॥
अंगमर्दोज्वरःकम्पःपिपासागुरुगात्रता।
शोथःशूलातिसारौचसूतिकारोगलक्षणम् ॥ १०० ॥
प्लीहाग्निमान्द्यशोथार्शःपाण्डूदावर्त्तकामलाः।
तथामवातकुष्ठानिरोगाण्येवंविधानिच ॥ १०१ ॥
भवेत्सचायसवपुर्निर्वलीपलितोऽनया।
पथ्यापथ्यविधिश्चात्रसर्वलोहविधानवत् ॥ १०२ ॥
गणाध्यायोक्तचरकोक्तवर्चःसंग्रहगणेन।
तथालोहोक्तसंग्रहग्रहणीहरः।
जम्ब्वादिविशेषभेषजैःपुटितंलोहंग्राह्यमेवम्।
ग्रहाणांसर्वतस्मादिदमपिपुटनीयम्।

अर्थ—पारा और गन्धकको समानभाग लेकर कज्जली करै, पश्चात् पारेकी समान उस कज्जलीमें लोहेका चूर्ण मिलाकर पूर्ववत् पर्पटी बनाले। यह लोह-पर्पटी--पथ्यसेवनकरनेवाले मनुष्यको सेवनकरनी चाहिये, इस पर्पटीको धनियाँ, जीरा और सोंठके क्काथके साथ सेवनकरनी उचित है। इसको एक एक रत्तीसे बढावे सात वा चौदह अथवा जबतक आरोग्य नहो तबतक सेवन करै। यह पर्पटी घोरसंग्रहणी, शूल, अतीसार, सूतिकारोग, अंगमर्द, ज्वर, पियास, शरीरकी गुरुता, प्लीहा, मन्दाग्नि, सूजनयुक्त बवासीर, पाण्डुरोग, उदावर्त्त, कामला, आमवात, और कुष्ठरोगको नष्ट करैहै, तथा नानाप्रकारके रोगोंको हरैहै, शरीरको लोहेके समान दृढकरनेवाली, वलिपलितनाशकहै। इसमें लोहेकी समान पथ्यापथ्य सेवन करै और इस लोहपर्पटीमें पुटपाकसे पकाया हुआ लोहा मिलाना चाहिये ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

अथ कंचटाद्यवलेहः।

क्काथेपचेत्कंचटतालमूल्योःसितार्द्धप्रस्थःशृतपादशेषे।
ततोऽक्षमानेनसमंप्रदद्याच्चूर्णानिधीरोविधिवत्तथैषाम् १०३
समंगाधातकीपाठाबिल्वंमुस्ताथपिप्पली।

शक्रकातिविषाक्षारसौवर्चलरसांजनम् ॥ १०४ ॥
शाल्मलीवेष्टकंचैवसर्वंसिद्धेनिधापयेत् ।
शीतेचमधुनश्चात्रकुडवार्द्धंक्षिपेत्ततः ॥ १०५ ॥
अस्यमात्रांप्रयुञ्जीतयथाकालप्रमाणवित् ।
अम्लपित्तकृतंदोषमौदरंसर्वरूपिणम् ॥ १०६ ॥
सर्वातीसारशमनंसंग्रहग्रहणींजयेत् ।
एकजंद्वन्द्वजंचैवदोषत्रयकृतंचयत् ॥ १०७ ॥
विकारंकोष्ठजंचैवहन्याच्छूलमरोचकम् ।
एषकंचटकोलेहोविधेयोगुडपाकवत् ॥ १०८ ॥

अर्थ—कंचट (जलचौलाई) बत्तीस तोले, मुसली बत्तीस तोले, इन दोनों को १६ सेर जलमें पकावै, जब जल जलकर चारसेर बाकी रहे तब उतारले पश्चात् इस क्राथमें बत्तीसतोले मिश्री मिलावै, फिर मजीठ, धायके फूल, पाठ, बेलगिरी, नागरमोथा, पीपल, इन्द्रयव, अतीस, जवाखार, कालानोन, रसोत और मोचरस, इन प्रत्येकका दोदो तोले चूर्ण मिलावै, शीतल होनेपर आधसेर सहत मिलावै, इस अवलेहको समय विचारकर खावै तौ—अम्लपित्तविकार, सर्व-प्रकारके उदररोग, सर्व प्रकारके अतीसार, संग्रहणी, एकदोषसे उत्पन्नहुआ विकार, दो दोषोंका विकार, तीन दोषोंसे उत्पन्नहुआ विकार, कोष्ठगत विकार, शूल और अरुचि दूर होवै । यह कंचटावलेह गुडपाककी तरह बनाना चाहिये ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

अथ ग्रन्थान्तरोक्तं ग्रहणीमिहिरतैलम् ।

धान्यकंधातकीलोध्रसमंगातिविषाशिवा ।
उशीरंमुस्तकंचै जलमोचरसांजनम् ॥ १०९ ॥
बिल्वंनीलोत्पलंपत्रंकेशरंपद्मकेशरम् ।
गुडूची[illegible]द्रयवश्यामापद्मकंकटुरोहिणी ॥ ११० ॥
तगरंजटिलाभृंगकेशराजंपुनर्नवा ।
आम्रजम्बूकदम्बानांत्वचंकुटजवल्कलम् ॥ १११ ॥
यवानीजीरकंचैवकार्षिकाणिप्रकल्पयेत् ।

तैलप्रस्थंपचे(द्वे)नतक्रेणान्यतमेनवा ॥ ११२ ॥
कुटजत्वक्कषायेणधन्याकंक्काथितंनवा ।
बुद्धादोषगतिंवैद्योयथास्वौषधवारिणा ॥ ११३ ॥
एतद्रसायनंतैलंवलीपलितनाशनम् ।
हन्तिसर्वानतीसारान्ग्रहणींसर्वजामपि ॥ ११४ ॥
ज्वरंतृष्णांतथाश्वासंतथाहिक्कांवमिंभ्रमिम् ।
सोपद्रवांकोष्ठरुजंनाशयेत्सद्यएवहि ॥ ११५ ॥
ग्रहणीमिहिरंनामतैलंभुवनदुर्लभम् ॥ ११६ ॥

अर्थ–धनियाँ, धायके फूल, लोध, मजीठ, अतीस, हरड, खस, नागरमोथा सुगंधवाला, मोचरस, रसौत, बेल, नीले कमलके पत्ते, नागकेशर, कमलकेशर गिलोय, इन्द्रजौ, अनन्तमूल, पद्माख, कुटकी,तगर, जटामांसी, भाँगरा, कुकुरभाँगरा, पुनर्नवा, आमकी छाल, जामनकीछाल, कदम्बकी छाल, कुडेकीछाल, अजवायन, और जीरा, ये प्रत्येक दो दो तोले लेवै, पीछे इन सबका कल्क करे, इस कल्कको और चौंसठतोले तेलको तक्रमें अथवा काँजीमें वा कुडेकी छालके क्राथमें अथवा धनियेंके क्राथमें मिलाके दोषोंका बलाबल विचार तेलको सिद्ध करे। यह ग्रहणीमिहिरतेल रसायन, वलिपलितनाशक, तथा सर्व प्रकारके अतीसार, सर्व प्रकारकी संग्रहणी, ज्वर, तृषा, श्वास, हिचकी, वमन, भ्रम और उपद्रवयुक्तकोष्ठरोगको दूर करे है। यह ग्रहणीमिहिरतेल त्रैलोक्यदुर्लभ है। १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥

अथ कल्याणगुड ।

प्रस्थत्रयेणामलकीरसस्यशुद्धस्यदत्त्वार्द्धतुलांगुडस्य ।
चूर्णीकृतैर्ग्रन्थिकजीरचव्यव्योपेभकृष्णाहपुपाजमोदैः ११७
विडंगसिन्धुत्रिफलायवानीपाठाग्निधान्यैश्चपलप्रमाणैः ।
दत्त्वात्रिवृच्चूर्णपलानिचाष्टावष्टौचतैलस्यपचेद्यथावत् ११८
तंभक्षयेदक्षफलप्रमाणंयथेष्टचेष्टंत्रिसुगन्धियुक्तम् ।
अनेनसर्वंग्रहणीविकाराःसश्वासकासस्वरभेदशोथाः ११९॥
शाम्यन्तिचायंचिरमन्दवह्नेर्हतस्य पुंस्त्वस्यचवृद्धिहेतुः ।

स्त्रीणांचवन्ध्यामयमाहहन्यात्कल्याणकोनामगुडःप्रदिष्टः
त्रिवृतांभर्ज्जयन्त्यत्रमनाक्केचिच्चिकित्सकाः ।
अत्रोक्तमानसाधर्म्यात्त्रिसुगंधिपलंपृथक् ॥ १२१ ॥

अर्थ–अडतालीसपल आमलेके रसमें पचास पल शुद्ध गुड मिलावै, पीछे पीपरामूल, जीरा, चव्य, त्रिकुटा, गजपीपल, हाऊबेर, अजमोद, वायविडंग. सेंधानोन, त्रिफला, अजवायन, पाढ, और धनियाँ, इन प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले मिलावै, तदनंतर निसोतका चूर्ण बत्तीस तोले और तिलका तेल बत्तीस तोले लेकर सबको मिला गुड सिद्ध करै, सिद्ध होजानेके पश्चात् त्रिसुगंधका चूर्ण मिलाकर बहेडेके फलकी समान भक्षण करै तौ–सर्वप्रकारके संग्रहणीरोग, श्वास, खाँसी स्वरभेद और सूजन दूर होय । तथा बहुतदिनोंकी मन्दाग्नि दीपन होतीहै, पुंस्त्वता बढतीहै और स्त्रियोंका वन्ध्यापन नष्ट होताहै। इस कल्याणगुडमें कितनेक भिषक् निसोतको भूनकर डालतेहैं, और यहाँ त्रिसुगंधि अर्थात् इलायची, दालचीनी और तेजपात, इन प्रत्येकका चार चार तोले अलग अलग चूर्ण मिलाना चाहिये ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ ॥ १२० ॥ १२१ ॥

अथ चांगेरीघृतम् ।

नागरंपिप्पलीमूलंचित्रकोहस्तिपिप्पली ।
श्वदंष्ट्रापिप्पलीधान्यंबिल्वंपाठायवानिका ॥ १२२ ॥
चांगेरीस्वरसेसर्पिःकल्कैरेतैर्विपाचितम् ।
चतुर्गुणेनदध्नाचतद्घृतंकफवातनुत् ॥ १२३ ॥
अर्शांसिग्रहणीदोषंमूत्रकृच्छ्रंप्रवाहिकाम् ।
गुदभ्रंशार्तिमानाहंघृतमेतद्व्यपोहति ॥ १२४ ॥
हन्तिपिप्पलीचाविकातन्त्रान्तरात् ।
दधिसाहचर्याच्चांगेरीस्वरसोपिचतुर्गुणः ॥ १२५ ॥

अर्थ–सोंठ, पीपरामूल, चीता, गजपीपल, गोखरू, पीपल, धनियाँ, बेल, पाढ, और अजवायन, इन सबका चूर्ण चार चार तोले लेवै, और घृत चौंसठ पल और चांगेरी (नोनिया) का रस दोसौछप्पन पल लेवै और दोसौछप्पन पल दही लेवै, फिर सबको यथाविधिसे मिलाकर घृत सिद्ध करै, यह घृत–

वात, कफ, सर्वप्रकारका अर्श (बवासीर) रोग, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, गुदभ्रंश और आनाहरोगको दूर करै है॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४॥ १२५॥

अथ ग्रहणीगजेन्द्रवटिका।

रसगंधकलोहानिशंखटंकणरामठाः
शठीतालीशमुस्तानिधान्यजीरकसैन्धवाः ॥ १२६ ॥
धातक्यतिविषाशुण्ठीगृहधूमंहरीतकीम्।
भल्लातंतेजपत्रञ्चजातीफललवंगके॥ १२७॥
त्वगेलावालुकंबिल्वंमेथीशक्राशनंसमम्।
छागीदुग्धेनवटिकारसवैद्येनकारिता॥ १२८॥
गहनानन्दनाथेनभाषितेऽयंरसायने।
ग्रहणीगजेन्द्रसंज्ञोऽयंश्रीमतालोकरक्षणे ॥ १२९॥
ग्रहणींविविधांहन्तिज्वरातीसारनाशिनी।
शूलगुल्माम्लपित्तानिकामलांचहलीमकम् ॥ १३० ॥
बलवर्णाग्निजननीसेविताचचिरायुषी।
कुष्ठंकण्डूंविसर्पञ्चगुदभ्रंशंकृमिंजयेत् ॥ १३१ ॥
मासद्वयंवटीभक्ष्याछागीदुग्धानुपानतः।
बलाऽग्निबलमावेक्ष्ययुक्त्यावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ १३२॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहा, शंखचूर्ण, सुहागा, हींग, कचूर, तालीसपत्र, नागरमोथा, धनियाँ, जीरा, सेंधानोन, धायकेफूल, अतीस, सोंठ, गृहधूम, हरड़, भिलावा, तेजपात, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, सुगंधवाला, बेल और भाँग, इन सबको समानभाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर गोली बना लेवे। यह गोली गहनानन्दनाथने रसायनप्रकरणमें कही है। इसको ग्रहणीगजेंद्रवटिका कहते हैं। यहगोली-अनेकप्रकारकी संग्रहणी, ज्वरातीसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला, और हलीमकरोगको नष्ट करै है। बल वर्ण-और अग्निजनक है, तथा कोढ, कण्डू, विसर्प, गुदभ्रंश और कृमिरोगको दूर करै है। इसको सेवन करनेसे मनुष्य दीर्घायु होते हैं। यह दो दो मासेकी गोली बनाकर बकरीके

दूधके साथ सेवनकरनी चाहिये, और अग्नि तथा बलको विचारकर मात्राको घटानी बढानी भी चाहिये ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ ॥ १३१ ॥ १३२ ॥

इति ग्रहणीरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथार्शश्चिकित्सा ।

दुर्नाम्नांसाधनोपायश्चतुर्धापरिकीर्तितः ।
भेषजक्षारशस्त्राग्निसाध्यत्वादाद्यउच्यते ॥ १ ॥
यद्वायोरनुलोम्याययदग्निबलवृद्धये ।
अनुपानौषधंद्रव्यंतत्सेव्यंनित्यमर्शसैः ॥ २ ॥
शालिषष्टिकगोधूमयवान्नसंस्कृतैर्घृतैः ।
दद्यात्क्षीरेणवानित्यंपटोलानांरसेनवा ॥ ३ ॥
मांसैर्मांसरसैर्वापिकन्दवार्ताकुमूलकैः ।
जीवन्त्युपोदिकाशाकैस्तण्डुलीयकवास्तुकैः ॥ ४ ॥
क्षारचित्रकबिल्वानांतैलेनाभ्यज्यबुद्धिमान् ।
यवकोलकुलत्थानांतक्राम्लनवनीतयोः ॥ ५ ॥
शस्त्रैर्वाथजलौकाभिस्तेषांरक्तंचनिर्हरेत् ।
शुष्कार्शसांप्रलेपादिक्रियातीक्ष्णाविधीयते ॥ ६ ॥
स्राविणांरक्तमालोक्यक्रियाकार्यास्रपैत्तिकी ।
स्नुक्क्षीररजनीयुक्तंलेपाद्दुर्नामनाशनम् ॥ ७ ॥
अर्कक्षीरंस्नुहीक्षीरंतिक्ततुम्ब्याश्चपल्लवाः ।
करंजो[1]स्तमूत्रेणलेपनंश्रेष्ठमर्शसाम् ॥ ८ ॥
ज्योत्स्निका[2]मूलकल्केनलेपोवाताऽर्शसांहितः ।
जम्बीरजमौद्भिदं[3]तुकांजिकपिष्टंगुटीत्रयम् ॥ ९ ॥

१ अत्र करंजपदेन करंजत्वचो ग्रहणम् । २ ज्योत्स्निका घोषकः । ३ औद्भिदं साम्भार-लवणम् ।

अर्शोहरंगुदस्थंस्याद्दधिमा[illegible]षमश्नतः ।
शिरीषस्य[illegible]मूला[illegible]लांगलक्यास्तथैवच ॥ १० ॥
एतेननाभिले[illegible]नसर्वतश्चतुरंगुलात् ।
पतन्त्यर्शांसिसर्वाणिसप्तरात्रान्नसंशयः ॥ ११ ॥
नृकेशाःसर्पनिर्मोकावृषदंशस्यचर्मच ।
अर्कमूलंशमीपत्रंधूपोऽर्शःशूलशान्तये ॥ १२ ॥
विड्विबन्धेहिंगुतक्रंयवानीविडसंयुतम् ।
वातश्लेष्मार्शसांतक्रात्परंनास्तीहभेषजम् ॥ १३ ॥
पित्तश्लेष्मप्रशमनीकण्डूकच्छूरुजापहा ।
गुदजान्नाशयत्याशुयोजितासगुडाभया ॥ १४ ॥
तिलभल्लातकंपथ्यागुडश्चेतिसमांशिकम् ।
दुर्नामश्वासकासघ्नंप्लीहपाण्डुरुजापहम्॥ १५ ॥

अर्थ–औषध, क्षार, शस्त्र, और अग्नि, इन चार प्रकारसे अर्शरोगकी चिकित्सा करनी कहीहै, तहाँ साध्य और सरल होनेसे औषधका उपाय कहतेहैं । जो औषध वायुको अनुलोमनकरनेवाली, तथा अग्निके बलको बढानेवालीहै वह अर्शरोगीको सेवनकरनी चाहिये । शालिधान्य, साँठीधान्य, गेहूँ और जौ इनका भोजन घीके साथ, दूध, पटोलरस, मांस, मांसरस, जिमीकन्द, बेंगन, मूली, जीवंतिका शाक, पोईका शाक, चौलाईका शाक बथुएका शाक, जवाखार, चीता, बेल, तेलसे पकायेहुए द्रव्य, जौ, बेर, कुलथी, तक्र और माखन, यह सब अर्शरोगीके लिये हितकारक जानने । अर्शांकुर होनेपर शस्त्र अथवा जोंकके द्वारा रुधिर निकलवाना चाहिये । शुष्क अर्शरोगमें प्रलेपादि तीक्ष्णक्रिया प्रयोगकरनी योग्यहै। रक्तबहनेवाले अर्शरोगमें रुधिरका विचारकर रक्तपित्तनाशक क्रिया करनी चाहिये । थूहरके दूधमें हलदी मिलाकर लेपकरनेसे बवासीर दूर होतीहै । आकका दूध, थूहरका दूध, कडवीतोंबीके पत्ते, और करंजकी छालको बकरेके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अर्शरोग आराम होताहै । तोरईकी जडको पीसकर लेपकरनेसे बादीकी बवासीर दूर होतीहै । जंभीरी नींबू और सामरको काँजीमें पीसकर तीन गोली बनावै, एकगोली भैंसके दहीके साथ रोज खानेसे बवासीर दूर

१ वृषदंशो बिडालः ।

होतीहै । शिरसकी जड और कलिहारीकी जड़को पीसकर नाभिपर चार अंगुल चारोंओर लेपकरनेसे निःसन्देह सातदिनमें सर्वप्रकारकी बवासीरके मस्से गिर जातेहैं । मनुष्यके बाल, साँपकी कैंचली, बिलावकी खाल, आककी जड और छीकरके पत्ते इन सबको एकत्र कर धूप देनेसे अर्शरोगका शूल शांत होताहै । मलबद्ध अर्शरोगमें अजवायन, हींग, बिड़नोन, इनको तक्रमें मिलाकर पीना चाहिये, वात तथा कफकी बवासीरमें तक्रसे उत्तम औषध नहीं है,गुडके साथ हरड़को भक्षणकरनेसे पित्तकफार्श, कण्डू, कच्छू और वेदना नाश होतीहै । तिल भिलावा, हरड और गुड़, इन सबको समान भाग लेकर सेवनकरनेसे बवासीर, श्वास, खाँसी, ज्वर, प्लीहा और पाण्डुरोग दूर होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ व्योषादि चूर्णम् ।

व्योषाग्न्यरुष्करविडंगतिलाभयानां
चूर्णगुडेनसहितंतुसदोपयोज्यम् ॥
दुर्नामशोथगरकुष्ठविकृद्विबन्धा-
नर्शोजयत्यबलतांक्रिमिपाण्डुताञ्च ॥ १६ ॥
चूर्णेचूर्णसमोदेयोमोदकेद्विगुणोगुडः ।

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, भिलावा, वायविडंग, तिल और हरड़, इन सबका चूर्ण बनावे, उस चूर्णमें गुड़ मिलाकर खानेसे बवासीर, सूजन, विषविकार, कोढ, मलविबन्ध, बवासीर, निर्बलता, कृमि और पांडुरोग नाश होताहै ॥ १६ ॥ चूर्णमें समानभाग और मोदकमें दुगुना गुड़ मिलाना चाहिये।

अथ श्रीबाहुशालोगुडः ।

त्रिवृत्तेजोवतीदन्तीश्वदंष्ट्राचित्रकंशठी ।
गवाक्षीमुस्तविश्वाब्दविडंगानिहरीतकी ॥ १७ ॥
पलोन्मितानिचैतानिपलान्यष्टावरुष्करात् ।
षट्पलंवृद्धदारस्यसूरणस्यतुषोडश ॥ १८ ॥
जलद्रोणद्वयेक्काथ्यंचतुर्भागावशेषितम् ।
पूतन्तुतद्रसंभूयःक्काथ्यंस्यात्रिगुणोगुडः ॥ १९ ॥
पचेल्लेहन्तुतंतावद्यावद्दर्वीप्रलेपनम् ।

अवतार्यततःपश्चच्चूर्णानीमानिदापयेत् ॥ २० ॥
त्रिवृत्तेजवतीकन्दचित्रकान्द्विपलांशकान् ।
एलात्वङ्मरिचंचापिगजाह्वश्चापिषट्पलम् ॥ २१ ॥
द्वात्रिंशच्चपलान्येवंचूर्णंदत्त्वानिधापयेत् ।
ततोमात्रांप्रयुंजीतजीर्णेक्षीररसाशनः ॥ २२ ॥
पंचगुल्मान्प्रमेहांश्चपाण्डुरोगंहलीमकम् ।
जयेदर्शांसिसर्वाणितथासर्वोदराणिच ॥ २३ ॥
दीपयेद्ग्रहणींमन्दांयक्ष्माणंचापकर्षति ।
पीनसेचप्रतिश्यायेआढ्यवातेतथैवच ॥ २४ ॥
अयंसर्वगदेष्वेवकल्याणोलेहउत्तमः ।
दुर्नामारिरयंनाम्नादृष्टोवारसहस्रशः ॥ २५ ॥
भवत्येनंप्रयुञ्जानःशतवर्षंनिरामयः ।
आयुष्योदैर्घ्यजननोवलीपलितनाशनः ॥ २६ ॥
रसायनवरश्चैवमेधाजननउत्तमः ।
गुडःश्रीबाहुशालोऽयंदुर्नामारिःप्रकीर्त्तितः ॥ २७ ॥

अर्थ—निसोत, तेजवल, दन्ती, गोखुरू, चीता, नरकचूर, इन्द्रायण, नागरमोथा, सांठ,मोथा वायविडंग और हरड, यह सब चार चार तोले लेंवे, भिलावा बत्तीस तोले, विधारा चौबीस तोले, और जमीकन्द चौंसठतोले लेंवे, पीछे इन सबको ६४ चौंसठ सेर अर्थात् ५१२ पांचसौ बारह पल, जलमें पकावे, जब चौथाभाग अर्थात् १६ सोलह सेर (१२८ एकसौ अट्ठाईसपल) जलकर शेष रहै तब उतार लेवै, पश्चात् क्वाथको वस्त्रमें छान रसका फिर चूल्हेपै चढादेवै और उसमें तिगुना गुड़ मिलाकर पकावे, जब लेहवत् अर्थात् करछीसे चिपटने लगजाय तब उतारकर निसोत, तेजवल, जमीकन्द और चीता, यह प्रत्येक आठ आठ तोले और इलायची, दालचीनी, कालीमिरच और गजपीपल यह प्रत्येक चौबीस चौबीस तोले लेवै, पीछे इन सबका चूर्णकर मिलादे, इसको अनुमानमाफिक भक्षण करै । औषधिके जीर्णहोनेपर दूध और मांसरस (सोरुआ) का भोजन करै, यह गुड—पाँचप्रकारके गुल्म, सर्व प्रकारके प्रमेह,

पांडुरोग, हलीमक, सर्वप्रकारकी बवासीर, सर्व प्रकारके उदररोग, संग्रहणी, राजयक्ष्मा, पीनस, प्रतिश्याय, और आढचवातको नष्ट करैहै । यह सर्वप्रकारके रोगांमें हितकारीहै । और बवासीरको विशेषकरके विध्वंस करैहै, ऐसे हजारां-वार अजमायाहै । इसको सेवन करनेसे–मनुष्य रोगोंसे छूट १०० सौवर्ष पर्यन्त जीताहै । तथा यह गुड आयुको बढानेवाला, वलीपलितनाशक, अवस्थास्थापक रसायनमें श्रेष्ठरसायन, मेधाजनक और उत्तम है । इसको श्रीबाहुशाल गुड कह-तेहैं और इसका दूसरा नाम 'दुर्नामारि' भी है ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथ कुटजलेहः ।

कौटजंकल्कमादायपिष्ट्वातक्रेणबुद्धिमान् ।
पीत्वारक्तार्शसोरक्तस्रुतिमाशुनियच्छति ॥ २८ ॥
कुटजत्वक्पलशतंजलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ॥ २९ ॥
वस्त्रपूतंपुनःक्वाथ्यंपचेल्लेहत्वमागतम् ।
भल्लातकविडंगानित्रिकटुत्रिफलास्तथा ॥ ३० ॥
रसांजनंचित्रकंचकुटजस्यफलानिच ।
वचामतिविषांबिल्वंप्रत्येकंचपलंपलम् ॥ ३१ ॥
गुडात्पलानित्रिंशच्चचूर्णीकृत्यनिधापयेत् ।
मधुनःकुडवंदद्याद्घृतस्यकुडवन्तथा ॥ ३२ ॥
लेहोऽयंशमयत्यर्शांयस्यरक्तसमुद्भवम् ।
वातिकंपैत्तिकश्चैवश्लैष्मिकंसान्निपातिकम् ॥ ३३ ॥
येचदुर्नामजारोगास्तान्सर्वान्नाशयत्यपि ।
अम्लपित्तमतीसारंपाण्डुरोगमरोचकम् ॥ ३४ ॥
ग्रहणीमार्दवंकार्श्यंश्वयथुंकामलाम पे ।
अनुपानंघृतंदध्यान्मः तक्रंजलंपयः ॥ ३५ ॥
रोगानीकविनाशायकौटजोलेहउच्यते ॥ ३६ ॥

पलस्थानेफलमपिकेचित्पठन्तिअतस्त्वक्फल-
यो[illegible]लशतम् । फलन्तुरक्तेतियोगिकं दृष्टफलञ्च ।

अर्थ-कुडेकी छालको पीसकर मट्ठेके साथ सेवनकरनेसे-रक्तार्श (खूनी बवासीर) दूर होतीहै ॥ २८ ॥ कुडेकी छाल सौपल लेकर चौंसठसेर (५१२ तोले) जलमें पकावै, जब जलकर आठवाँ भाग अर्थात् सोलहसेर क्वाथ शेष रहै तब उतारले, पीछे वस्त्रमें छानकर फिर चूल्हेपै चढादेवे, जब पकते पकते लेहकी समान हो जावे, तब भिलावा, बायविडंग, त्रिकुटा, त्रिफला, रसौत, चीता, इन्द्रजो, वच, अतीस, बेलगिरी, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर चूर्ण बनाकर मिलादेवें, फिर गुड़ तीसपल, सहत बत्तीसतोले, और घृत बत्तीसतोले इन सबको मिलादेवें तो कुटजलेह सिद्ध होजाताहै । यह कुटजलेह-रुधिरकी बवासीर, वातज बवासीर, पित्तज बवासीर, कफज बवासीर, सन्निपातकी बवासीर, सर्वप्रकारकी बवासीर अम्लपित्त, अतीसार, पाण्डुरोग, अरुचि, संग्रहणी, मृदुता, कृशता, सूजन और कामलारोगको दूर करैहै। इसको घृत, मधु, तक्र, जल और दूधके साथ सेवनकरना चाहिये । यह रोगोंके विनाशके अर्थ कुटजलेह कहाहै ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

इसमें कोई कोई वैद्य पलके स्थानमें फल पढतेहैं इसकारण कुडेकी छाल फलको मिलाकर चारसौ तोले लेते हैं ॥

अथ अर्शःकुठारकोरसः ।

शु[illegible]लैकन्तुद्विपलंशुद्धगंधकम् ।
[illegible]तंताम्रंमृतंलौहंप्रत्येकञ्चपलत्रयम् ॥ ३७ ॥
[illegible]यूषणंलांगलीदन्तीचित्रकं[illegible]ष्करन्तथा ।
प्रत्येकंद्विपलंयोज्यंयवक्षारंचटंकणम् ॥ ३८ ॥
उभौपंच[illegible]लौयोज्यौसैन्धवंपलपंचकम् ।
द्वात्रिंशत्पलगोमूत्रंस्नुहीक्षीरंचतत्समम् ॥ ३९ ॥
मृद्वग्निनापचेत्सर्वंयावत्तच्चसुपिण्डितम् ।
मासद्वयंसदा[illegible]देद्रसोह्यर्शःकुठारकः ॥ ४० ॥

अर्थ-शुद्धपारा चार तोले, शुद्धगंधक आठ तोले, ताँबेकी भस्म बारह तोले, लोहेकी भस्म बारह तोले त्रिकुटा, कलिहारी, दन्ती, चीता, पोहकरमूल,

यह प्रत्येक आठ आठ तोले, जवाखार, सुहागा और सैंधानोन, यह प्रत्येक बीस बीस तोले, गोमूत्र बत्तीस पल और थूहरका दूध बत्तीस पल, इन सबको एकत्र कर मृदुअग्निसे पकावै, जब पकते २ पिंडकी समान गाढा होजाय तब दोमासेभर सदैव सेवन करै, इससे सर्व प्रकारकी बवासीर नष्ट होती है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथ चक्रेश्वररसः ।

मृतमूतस्यचत्वारिपंचगंधकटंकणम् ।
त्रिदिनंमर्दयेत्सर्वंद्रवैःश्वेतपुनर्नवैः ॥ ४१ ॥
मूषायांगोलकंतन्तुक्षिप्त्वाताम्रस्यचक्रिके ।
रसगन्धसमोरुद्ध्वाचान्धमूषापुटेपचेत् ॥ ४२ ॥
चक्रिकांचूर्णयेत्पश्चादभयाभृंगजैर्द्रवैः ।
दिनैकंभावयेत्तस्मिन्सिद्धश्चक्रेश्वरोरसः ॥ ४३ ॥
द्विगुंजंभक्षयेन्नित्यंजयेद्वातार्शसांक्षणात् ।
सिन्धूत्थंमागधंवह्निशुण्ठीतक्रैःपिबेदनु ॥ ४४ ॥
भोजनंस्निग्धमुष्णञ्चमर्दनञ्चप्रशस्यते ।
संजातेह्यतिविष्टम्भेस्नुहीक्षीरेणभावयेत् ॥ ४५ ॥
मरिचात्सततंयुक्तान्निशायाञ्चप्रयोजयेत् ।
विडंगंत्रिफलाव्योषंत्रिवृन्मूषिकपर्णिका ॥ ४६ ॥
कम्पिल्लंनलिनीचूर्णंतुल्यंक्षौद्रेणमेलयेत् ।
गुडेनसितयावाथवातरोगाणिवैजयेत् ॥ ४७ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म चारभाग, गंधक और सुहागा पाँचभाग, इन सबको एकत्र कर तीन दिन सफेद पथरचटाके रसमें खरल करै, पश्चात् गोला बनाकर मूषामें रख ताम्रचक्रिकामें मूषाको धर, अंधमूषापुटमें पकावै, फिर चूर्णकर हरड़ और भाँगरेके रसमें एकदिन भावना देवै तो चक्रेश्वररस सिद्ध होवै, इस रसको दो गुंजा प्रमाण नित्यप्रति, भक्षण करनेसे वादीकी बवासीर दूर होतीहै । सैंधानोन, पीपल, चीता और सोंठका चूर्ण तक्रमें मिलाकर पीना इसका अनुपान है । इसमें स्निग्ध और उष्णभोजन तथा मर्दनकरना हितकारी है । जो

यह रस अत्यन्त विष्टम्भ होजाय तो थूहरके दूधमें भिजोकर भक्षण करै, और बायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटा, निसोत, मूषाकर्णी, कबीला और कमलिनीका चूर्ण सहतके साथ अथवा गुड़के साथ वा मिश्रीके साथ खानेसे वातार्शरोग दूर होता है ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अथ तीक्ष्णमुखरसः ।

मृतसूताभ्रहेमाह्वतीक्ष्णमुण्डञ्चगंधकम् ।
मण्डूरस्यसमंताप्यंमर्द्यंकन्याद्रवैर्दिनम् ॥ ४८ ॥
अंधमूषागतंपश्चात्त्रिदिनन्तुतुषाग्निना ॥ ४९ ॥
चूर्णितंसितयामासंखादेत्पित्तार्शसांजयेत् ।
रसस्तीक्ष्णमुखोनामअनुस्यान्मधुरत्रयम् ॥ ५० ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, अभ्रक, सोना, तीक्ष्णलोहा, मुंडलोहा, गंधक और मण्डूर तथा सोनामाखी इन सबको समानभाग लेकर घीकुवारके रसमें एक दिन मर्दन करै, पीछे अंधमूषापुटमें भूमीकी आगसे तीन दिन पर्यन्त पकावै, फिर चूर्णकरै, उसको एकमासाभर मिश्रीके साथ खावे तो पित्तकी ववासीर दूरहो, इस तीक्ष्णमुखरसका अनुपान-मिश्री, घृत और सहत है ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथ अर्शोहररसः ।

रसवैक्रान्तशुद्धाभ्रकान्तभस्मसगंधकम् ।
तुल्यांशंमर्दयेच्चार्द्रदाडिमोत्थैरसैस्ततः ॥ ५१ ॥
भक्षयेन्मापमेकन्तुअर्शसांनाशनोरसः ।
अपामार्गस्यबीजानिवह्निशुंठीहरीतकी ॥ ५२ ॥
मुस्ताभूनिम्बतुल्यांशंसर्वतुल्यंगुडम्भवेत् ।
कर्षैकंभक्षयेच्चानुजीर्णान्नंभक्तभोजनम् ॥ ५३ ॥

अर्थ-पारा, वैक्रान्तमणि, शुद्धअभ्रक, कान्तलोहेकी भस्म, और गंधक यह प्रत्येक समानभाग लेकर अदरख और अनारके रसमें मर्दन करै । इसकी मात्रा एकमासेकी है । अनुपान-चिरचिटेके बीज, चीता, सोंठ, हरड, नागरमोथा, चिरायता, यह प्रत्येक समानभाग और सबकी समान गुड मिलाकर दो तोले प्रमाण देनेसे सर्वप्रकारकी ववासीर दूर होती है । पथ्य-पुराना अन्न और भात है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथ कनकावती वटी ।

शुद्धसूतंसमंगन्धंतालसिन्धूत्थलाङ्गली ।
फलंतुम्बीफलैकैकंलशुनश्चचतुष्पलम् ॥ ५४ ॥
कारवेल्याद्रवैर्मर्द्यंदिनैकंवटकीकृतम् ।
गुंजामात्रंसदाखादेत्पायुजश्चापिनाशयेत् ॥ ५५ ॥
रक्तवातकफोत्थानिअर्शांसिनाशयेद्ध्रुवम् ।
वटीकनकवतीनामअनुपानंचकथ्यते ॥ ५६ ॥
भल्लातत्रिफलादन्तीवह्निचूर्णसमंसमम् ।
सैन्धवंसर्वतुल्यंस्या[illegible]त्खर्परेचिरम् ॥ ५७ ॥
मृद्वग्निनाभवेत्सिद्धंकर्षंतक्रंपिबेन्नरः ॥ ५८ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, हरिताल, सैंधानोन, कलिहारीका फल, और तुम्बी, यह प्रत्येक एक एक पल लेवै और लहसुन चार पल लेवै पीछे इनसबको करेलेके रसमें एक दिन मर्दन कर एक एक रत्तीभरकी गोली बनावे, एक गोली नित्य खानेसे गुदाके रोग, रुधिरकी बवासीर, वातकी बवासीर और कफकी बवासीर दूर होतीहै । भिलावा, त्रिफला, दन्ती, और चीता, इनसबका चूर्ण समानभागले और सबकी बराबर सैंधानोन लेवैं, पीछे सबको एकत्र कर खपड़ेमें मृदुअग्निसे बहुतसमयतक भूनकर सिद्ध करै, पश्चात् दो ताल प्रमाण इसको तक्रके साथ भक्षण करै यह अनुपान है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

अथ पंचामृतरसः ।

शुद्धसूताभ्रलौहानांमृतगन्धार्कसंयुताम् ।
सर्वेषांसमभागन्तुभल्लातंसर्वतुल्यकम् ॥ ५९ ॥
[illegible]लमकंसमाद[illegible]द्रवैःसूरणकन्दजैः ।
मर्दयेद्दिनयुग्मञ्चमाषमात्रंदिनेदिने ॥ ६० ॥
भक्षणाद्धन्तिसर्वेषामर्शांसिचनसंशयः ।
असाध्यान्याशुसर्वाणिरसःपंचामृतात्मकः ॥ ६१ ॥

कुष्ठरोगंनिहन्त्याशुमृत्युरोगकुलान्तकः ।
मरिचंपिप्पलीशुण्ठीवह्निक्रमगुणोत्तरम् ॥ ६२ ॥
सर्वेषांद्विगुणंयोज्यंसूरणंपेषयेद्दृढम् ।
सर्वतुल्योगुडोयोज्यःकर्षैकंभक्षयेदनु ॥ ६३ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, अभ्रक, लोहा, गंधक, और ताँबा, यह सब समान भागलेवै, और भिलावेके बीज सबकी बराबर लेवै, पीछे सबको जमीकन्दके रसमें दो दिन खरल करै, इसको एकमासेभर प्रतिदिन खानेसे सर्वप्रकारके अर्शरोग निःसन्देह दूर होतेहैं। तथा यह पंचामृतरस असाध्य बवासीर, कोढ और मृत्युरोगकोभी दूर करै है। इस औषधिके भक्षण करनेके बाद एक भाग कालीमिरच, दो भाग पीपल, तीन भाग सोंठ, चार भाग चीता और बीस भाग जमीकन्द लेकर खूब मर्दन करै, पीछे चालीस भाग गुड़ मिलाकर सेवन करै। यह अनुपानहै ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

अथ चन्द्रप्रभावटिका ।

कृमिरिपुदहनव्योषत्रिफलामरदारुचव्यभूनिम्बम् ।
मागधिमूलंमुस्तंशठीवचाधातुमाक्षिकंचैव ॥ ६४ ॥
लवणक्षारनिशायुक्कुस्तुम्बुरुगजकणातिविषा ॥ ६५ ॥
कार्षांशिकान्येवसमानिकुर्यात्पलाष्टकंचाश्मजतोर्विदध्यात्
निष्पत्र[illegible]द्धस्यपुरस्यधीमान्पलद्वयंलौहरजस्तथैव ॥ ६६ ॥
शिलाचतुष्कंपलमत्रवास्यान्त्रिकुम्भकुम्भत्रिसुगन्धियुक्तम् ।
चन्द्रप्रभेयंगुटिकाप्रयोज्याअर्शांसिनिर्णाशयतिषडेव॥६७॥
भगन्दरंपाण्डुचकामलाश्चनिर्णष्टवह्नेःप्रकरोतिदीप्तिम् ।
हन्त्यामयान्पित्तकफानिलोत्थान्नाडीगतेमर्मगतेव्रणेच ६८॥
ग्रन्थ्यर्बुदेविद्रधिराजयक्ष्मणोर्मेहभगाख्येप्रबलेचयोज्या ।
शुक्रक्षयेचाश्मरिमूत्रकृच्छ्रेशुक्रप्रवाहेऽप्युदरामयेच ॥ ६९ ॥
भक्तस्य[illegible]वंसततंप्रयोज्यातक्रा[illegible]त्वथमस्तुपानम् ।
[illegible]लिकोरसोवापयोथवाशीतजलानुपानम् ७०
बलेनन ग[illegible]रगोजवे[illegible]सुपर्णःश्रवणैर्वराहः ।

नपानभोज्येपरिह र्यमांस्तनशीतवातातपमैथुनेच ॥ ७१ ॥
शम्भुंसमभ्यर्च्यकृतप्रणामंप्राप्ता टीचन्द्रमसःप्रसादात् ७२
शुक्रदोषान्निहंत्यष्टौप्रमेहानपिविंशतिम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तोवृद्धोऽपितरुणायते ॥ ७३ ॥

शिलाजतुशोधनं यथा ।

दशमूलक्काथउष्णेनालोड्य चण्डातपेप्रस्तरभाज-
नेकांस्येवास्थापयेत् । ऊर्द्धभूतंद म-
स्तालिकाग्रहणंकर्त्तव्यम् । तदनुशिवागुटिको-
क्तकाकोल्याद्यष्टविंशतिद्रव्यक्काथेभावनीयम् ।
तदनुसालसारादिगणक्काथेभाव्यम् ।
तदनुत्रिफलाक्काथेभाव्यम् ।
तदनुधान्यपटोलादिक्काथेभाव्यम् ।
तदनुगुलञ्चक्काथेभाव्यम् । तदनुयष्टीमधुक्काथेभाव्यम् ।
तदनुलोहचूर्णशिलाजतुगुग्गुलुमिश्रयित्वा
काकोल्यादिशालसारादिक्काथे । तदनुवि-
डंगादिचूर्णैःसंयोज्यधान्यपटोलक्काथेविसृ-
ज्यशिलायांपिष्ट्वाछायाशुष्कावटिकाकार्या ।
भक्षणंरक्तिकापंचक्रमशःमाषकद्वयंयावत् ॥ ७४ ॥

अर्थ—वायविडंग, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला देवदारु, चव्य, चिरायता, पीपरामूल, नागरमोथा, अमियाहलदी, बच, सोनामाखी, सैंधानोन, जवाखार, हलदी, दारुहलदी, धनियाँ और अतीस, यह प्रत्येक दोदो तोले ले, शिलाजीत बत्तीस तोले, शुद्धगूगल आठ तोले, लोहेका चूर्ण आठ तोले मिश्री सोलह तोले, वंशलोचन चार तोले, दन्ती, निसोत और त्रिसुगंधि, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवै, पीछे सबको एकत्रकर गोली बनावे, इन गोलियों को चन्द्रप्रभा कहतेहैं । यह चन्द्रप्रभावटिका छैप्रकारकी बवासीर, भगन्दर, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि, पित्तरोग, कफरोग, वातरोग, नाडीव्रण, मर्मगतव्रण,

ग्रंथिरोग, अर्बुदरोग, विद्रधि, राजयक्ष्मा, प्रमेह, योनिरोग, शुक्रक्षय, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रप्रवाह और उदररोगको दूर करैहै। इसको भोजनसे प्रथम भक्षण करै और भक्षणकरनेके बाद ऊपरसे तक्र तथा दहीका पानी पीवै, वा बकरीका सोरुआ, अथवा जांगलदेशके जीवोंके मांसका रस, या दूध, अथवा शीतलजलका अनुपान करै इसको सेवन करनेसे–मनुष्य बलमें हाथीकी समान, वेगमें घोडेकी समान; दृष्टिमें गरुडकी समान और सुननेमें वराहकी समान, होजाताहै । इसपै भोजन तथा पीनेका कुछ परहेज नहींहै तथा शीतपवन, आतप और मैथुनकाभी कुछ परहेज नहींहै ।

यह गोली–आठ प्रकारके शुक्रदोष, बीस प्रकारके प्रमेह और वली पलित रोगको दूर करैहै, और इसको सेवन करनेसे वृद्धमनुष्यभी तरुण होजाताहै ॥६४॥ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१॥ ७२ ॥ ७३ ॥ अब शिलाजीतके शोधनेकी विधि कहतेहैं । शिलाजीतको दशमूलके काढेमें आलोडनकर तीक्ष्णधूपमें पत्थरके अथवा कांसीके बरतनमें करके रखदेवै, जब दहीकी मरकी समान ऊपरको उठकर आजाय तब ग्रहण करै, पीछे काकोली आदि अट्ठाईस औषधियोंके क्राथमें सातदिन भावना देवै, तदनंतर सालसारादि गणके क्राथमें भावना देवै, पश्चात् त्रिफलेके क्राथमें भावनादेवै, तदनंतर धनियाँ और परवलके क्राथमें भावना देवै, फिर गुलकन्दके क्राथमें भावना देवै, तत्पश्चात् मुलैठीके क्राथमें भावना देवै, फिर लोहेका चूर्ण और गूगल मिलाकर काकोल्यादि और सालसारादिगणके क्राथमें भावनादेकर बायबिडंगका चूर्ण मिलाले, पीछे धनियाँ और परवलके क्राथमें भावना देकर सिद्ध करै, इसप्रकार शिलाजीतको शुद्धकर उपरोक्त चन्द्रप्रभावटीमें मिलावै, शिलाजीतको शिलापै पीसकर छायामें सुखाकर गोली बनावै, इन गोलियोंको पाँच रत्तीसे लेकर दो मासे तक भक्षण करै ॥ ७४ ॥

अथ शंकरमतं लोहम् ।

प्रणम्यशंकरंरुद्रंदण्डपाणिंमहेश्वरम् ।
जितरोगंमनुष्यस्यनारदःपृच्छतेगुरुम् ॥ ७५ ॥
[illegible]नाथ शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना ।
दुर्बलानांच[illegible]चिकित्सांवक्तुमर्हसि ॥ ७६ ॥
तच्छिष्यवचनंश्रुत्वालोकानां[illegible] ।
अर्शसांनाशनंश्रेष्ठंभैषज्यमिदमीरितम् ॥ ७७ ॥

ण्डवज्रादिलोहानांलोहमन्यतमंशुभम् ।
कृत्वानिर्मलमादौतुकुनट्यामाक्षिकेणच ॥ ७८ ॥
पत्तूरमूसकल्केनस्वरसेनाहतस्ततः ।
वह्नौनिक्षिप्यविधिवच्छालांगारेणनिर्धमेत् ॥ ७९ ॥
ज्वालाचतस्यबोद्धव्यात्रिफलायारसेनच ।
ततोविज्ञायगलितंशंकुनोर्द्धंविनिक्षिपेत् ॥ ८० ॥
त्रिफलायारसेपूतेतदाकृष्यविनिर्वपेत् ।
नसम्यग्गलितंयच्चतेनैवविधिनापुनः ॥ ८१ ॥
ध्मातंनिर्वापयेत स्मिँल्लोहंतत्रिफलारसे ।
ततःसंशोष्यविधिवच्चूर्णयेल्लोहभाजने ॥ ८२ ॥
लोहेनैवतथापिस्याद्दृशादिश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
कृत्वालोहमयेपात्रेमार्गेवालिप्तरंध्रके ॥ ८३ ॥
रसैःपंचोपमंकृत्वापाचयेद्गोमयाग्निना ।
पुटानिक्रमशोदद्यात्पृथगेषांविधानतः ॥ ८४ ॥
त्रिफलार्द्रकभृंगाणांकेशराजस्यबुद्धिमान् ।
कन्दमाणकभल्लातवह्नीनांसूरणस्यच ॥ ८५ ॥
हस्तिकर्ण लाशस्यकुलिशस्यतथैवच ।
पुटेपुटेचूर्णयित्वालोहात्षोडशिकंपलम् ॥ ८६ ॥
तन्मानंत्रिफलायाश्चपलेनाधिकमाहरेत् ।
अष्टभागावशिष्टेतुरसेतस्याःपचेद्बुधः ॥ ८७ ॥
उ [illegible] त्वाचसर्पिषोलोहभाजने ।
ताम्रे [illegible] व्यांतुचालयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ८८ ॥
ततःपाकविधानज्ञःस्वच्छेचोर्द्ध [illegible] र्पिपि ।
मृदुमध्वादिभेदेनगृह्णीयात्पाकमानतः ॥ ८९ ॥
अभिमंत्र्यविधानेनकृतकौतुकमंगलम् ।

भ्रामरंघृतसंयुक्तंलिहेद्वारक्तिकाक्रमात् ॥ ९० ॥
वर्द्धमानानुपानंचगव्यंक्षीरोत्तमंमतम् ।
गव्याभावेऽप्यजायाश्चस्निग्धवृष्यादिभोजनम् ॥९१॥
सद्योवह्निकरंचैवभस्मकञ्चनियच्छति ।
हन्तिवातंतथापित्तंकुष्ठानिविषमज्वरान् ॥ ९२ ॥
गुल्माक्षिपाण्डुरोगांश्चतन्द्रालस्यमरोचकम् ।
शूलंसपरिणामञ्चप्रमेहमपबाहुकम् ॥ ९३ ॥
श्वयथुंरक्तस्रावञ्चदुर्नामादिविशेषतः ।
बलकृद्बृंहणंचैवभ्रान्तिदंस्वरवर्द्धनम् ॥ ९४ ॥
लाघवंचमनोज्ञञ्चआरोग्यंपुष्टिवर्द्धनम् ।
आयुष्यंश्रीकरञ्चैववयस्तेजस्करस्तथा ॥ ९५ ॥
सश्रीकपुत्रजननंवलीपलितनाशनम् ।
दुर्नामारिरयंनाम्नादृष्टोवारसहस्रशः ॥ ९६ ॥
निर्मूलंदह्यतेशीघ्रंयथातूलञ्चवह्निना ।
सौकुमार्यंस्वकायत्वान्मद्यसेवीसदानरः ॥ ९७ ॥
जीर्णमद्यानियुक्तानिभाजनैःसहपाययेत् ॥ ९८ ॥
लावश्चतित्तिरिर्गोधामयूराःशशकादयः॥ ९९ ॥
चटकःकलविंकश्चवर्त्तकोहारितालकः ।
श्येनकश्चबृहल्लावोवनाविष्किरकादयः ॥ १०० ॥
पारावतमृगादीनांमांसंजांगलजंतथा ।
मद्गुरोरोहितःश्रेष्ठःशकुलश्चविशेषतः ॥ १०१ ॥
मत्स्यराजाइमेप्रोक्ताहितमत्स्याश्चयेनवाः ।
प्रशस्तंवात[illegible]कफलंपटोलं[illegible]हतांफलम् ।
प्रलम्बाभीरुवेत्राग्रंतातकंतण्डुलीयकम् ।
वा[illegible]शाकश्चकर्णालुकपुनर्नवम् ॥ १०२ ॥

नारिकेलंचखर्जूरंदाडिमंलवलीफलः ।
शृंगाटकञ्चपक्काम्रंद्राक्षातालफलानिच ॥ १०३ ॥
जातीकोषंलवंगंचपूगंताम्बूलपत्रकम् ।
नाश्नीयाल्लकुचंकोलकर्कन्धुबदराणिच ॥ १०४ ॥
जम्बीरंबीजपूरंचकरमर्दकतिन्तिडी ।
आनूपानिचमांसानिकुवरःपुत्तदादयः ॥ १०५ ॥
हंससारसदात्यूहमद्गुकाकबलाहकाः ।
मकन्दकरवीराणिचणकञ्चकलम्बुकम् ॥ १०६ ॥
कूष्माण्डकञ्चकर्कोटंकेवुकञ्चविशेषतः ।
कञ्चटञ्चकदलकंकशेरुंकर्कटीन्तथा ॥ १०७ ॥
विदलानिचसर्वाणिककारादींश्चवर्जयेत् ।
लोहराजस्तथाचायंस्वयंरुद्रेणभाषितः ॥ १०८ ॥
जनानामुपकारायदुर्नामारिरयंध्रुवम् ।
स्थानादपैतिमेरुश्चपृथ्वीपर्येतिवापुनः ॥ १०९ ॥
पतन्तिचन्द्रताराश्चमिथ्यानैववदाम्यहम् ।
ब्रह्मघ्नाश्चकृतघ्नाश्चक्रूराश्चासत्यवादिनः ॥ ११० ॥
वर्जनीयाविदग्धेनभैषज्यगुरुनिन्दकाः ।
रक्तीद्वादशकादूर्द्ध्वंवृद्धिरस्यभयप्रदा ॥ १११ ॥
अत्रजारितस्थालीपुटपाकादिसिद्धंलोहचूर्णं ग्राह्यम् ॥

अर्थ—एकसमय कल्याणरूप खलोंको रुलानेवाले, दण्डधारी मनुष्योंके रोगोंके हरनेवाले, जगद्गुरु, महेश्वर ऐसे श्रीमान् शिवजीको नारदजी प्रणामकर पूछते हुए कि—हेनाथ! शस्त्रक्रिया, क्षारकर्म और अग्निको छोड़कर सुखसहित उपायसे दुर्बल और भीरु (भयभीत) अर्शरोगवाले रोगियोंकी चिकित्सा कृपाकरके कहिये, तब शिष्य (नारदजी) के वचनोंको सुनकर संसारके प्राणियोंपै अनुग्रहकर शिवजीने अर्शरोगको दूरकरनेवाली यह औषधि कहीहै। मुण्डादि लोहोंमेंसे एक कोईसा लोहा लेवै उसको सोनामाखी तथा मैनशिलके द्वारा शुद्ध और

निर्मल करै, पीछे शालिंचशाककी जडके कल्कके स्वरसमें भिजोकर मारे, फिर आगमें रख सालके अंगारोंसे फूंके, पश्चात् फूंककर त्रिफलेके रसमें बुझावे, फिर आगमें रख सालके अंगारोंसे फूंके, पश्चात् फूंककर त्रिफलेके रसमें बुझावे, इसप्रकार बारंबार आगमें रखकर फूंके और बारंबार बुझाता जाय, जब गल-जाय, तब शंकुसे ऊपरको उठाकर त्रिफलेके रसमें छोडदेवै, जो अच्छे प्रकार नहीं गले तौ फिर इसी विधिसे बारंबार गलावै, और त्रिफलेके रसमें बुझावै, पीछे, भलेप्रकार सुखाकर लोहेके बरतनमें चूर्ण करै और जो लोहेके बरतनमें अच्छेप्रकार चूर्ण न बनै तौ पत्थरपै पीसकर चूर्ण करै, पश्चात् लोहेके बरतनमें रख मुख बंदकर बरतनको मिट्टीके गारेसे लीप सुखावे, फिर उपलोंकी अग्निसे गजपुटमें पचावे, तदनंतर त्रिफला, अदरख, भांगरा, कुकुरभांगरा मानकन्द, भिलावा, चीता, जमीकन्द, हस्तिकर्ण, पलाश और थूहर इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग भावना देकर गजपुटमें पकावे, और प्रतिपुट चूर्ण बनाता जाय, और सोलह पल लोहेके चूर्णको सोलह पलसे अधिक त्रिफलेके रसमें पुटदेवै, आठ भाग बाकी रहे हुए उस त्रिफलेके क्काथमें फिर इस लोहेको पकावै, फिर इस लोहेके चूर्णको लोहेकी कढाई अथवा तांवेकी कढाईमें चढाकर और उस कढाईमें बत्तीस तोले घी डालके पकावे, और लोहेकी करछीसे चलाता रहै,इस-प्रकार पाकको जाननेवाला वैद्य अच्छेप्रकारसे पकावे, जब तैरकर स्वच्छ घी ऊपरको आजाय तब सिद्ध जानकर उतारलेवै, इसप्रकार जब लोहा सिद्ध हो-जाय तब मंत्र पढकर और अनेकप्रकारके मंगलरूप उत्सवादि कार्य करके सहत और घीमें मिलाय एक रत्तीभरके क्रमसे वढाता हुआ खावै और ऊपरसे गायके दूधको पीवै, यह अनुपान है। और जो गायका दूध न मिले तौ बकरीके दूधको पीवे और वृष्य तथा स्निग्ध भोजन करै। यह लोह—मन्दाग्नि, भस्मकरोग, वात-पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, नेत्ररोग, पाण्डुरोग, निद्रा, आलस्य अरुचि, शूल, परिणामशूल, प्रमेह, अपवाहुक, वात, सूजन, रक्तस्राव, और विशेषकरके ववासीरको दूर करैहै। तथा बलको करनेवाला, पुष्टिको करनेवाला, शरीरको हलका करनेवाला, आरोग्य और पुष्टिको वढानेवाला, आयुवर्द्धक, लक्ष्मीदायक, तेजजनक, कांतियुक्तपुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, बली और पलित को हरैहै। यह दुर्नामारि लोह हजारोंबार अजमायाहुआहै। इससे ववासीर ऐसे नाश होतीहै जैसे आगसे रुई जलजाती है। इसके ऊपर मद्यपान करना निषेधहै परंतु जो मद्यको सदैव सेवन करतेहैं और सुकुमार तथा अल्पशरीरवालेहैं वह जीर्णमादि-राको भोजनके साथ सेवनकरतेरहैं। लवा, तीतर, गोधा, मोर, शशक, चटक,

कलविंक, बत्तक, हरियल, श्येणक, बडालवा और बनमें रहनेवाले विष्किरपक्षी परेवा, जंगलीजीवोंका मांस, मदगुरु, रोहित, शकुल, बैंगन, परवल, कटेरीका-फल, लंबाकद्दू, शतावर, बैंतका अग्रभाग, देवदारु, चौलाईका शाक, बथुवा, कालशाक, कर्णाल, पुनर्नवा, नारियल, खजूर, अनार, हरफारेवडी, सिंघाडे, पक्केआम, दाख, ताडके फल, जायफल, लौंग, सुपारी, और पान, यह सर्व प-दार्थ लोहेके सेवनकरनेवाले मनुष्यको हितकारीहैं, और बडहर, बेर, बडेबेर (पोंडे), झडबेर, जम्भीरीनीबू, बिजोरानीबू, करोंदा, इमली, कुरव और पुत्त-दाको आदि लेकर अनूपदेशके जीवोंका मांस, हंस, सारस, दात्यूह, मद्गु, काक बलाहक, मानकन्द, कनेर, चने, कलम्बुक, पेठा, ककोडा, केबुक, कंचट, केला, कशेरु, ककडी, सर्वप्रकारके विदल अन्न, और सर्वप्रकारके ककारादि अन्न यह सब द्रव्य इस लोहेका सेवनकरनेवालेको त्यागने चाहियें। यह दुर्नामारिलोह-राज लोकोंके कल्याणकरनेके लिये श्रीमान् शिवजीने स्वयं कहाहै । श्रीमहादेव-जी कहतेहैं कि–अपने स्थानसे सुमेरुपर्वत हटजाय, पृथ्वी लौटजाय, चन्द्रमा और नारायण आकाशसे पतित होजायँ, जो इस लोहेके सेवनकरनेसे ववासीर दूर न होवै तो । ब्रह्मघाती, कृतघ्नी, क्रूर, असत्यवादी और गुरुनिन्दक ऐसे मनुष्योंको यह लोहा कदापि नहीं देना चाहिये । वारह रत्तीसे अधिक इस लोहेको सेवन करनेसे भय उत्पन्न होताहै, इसकारण यह वारह रत्तीसे कम सेवन करना चाहिये, इसमें स्थालीपुटपाकमें सिद्धकिया तथा जारितकिया लोहा लेना चाहिये ॥७५॥७६॥७७॥७८॥७९॥८०॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥८६॥ ॥८७॥८८॥८९॥९०॥९१॥९२॥९३॥९४॥९५॥९६॥ ॥९७॥९८॥९९॥१००॥१०१॥१०२॥१०३॥१०४॥१०५॥ ॥१०६॥१०७॥१०८॥१०९॥११०॥१११॥

अथ अग्निमुखलोहम् ।

त्रिवृच्चित्रकनिर्गुण्डीस्नुहीमुंण्डितिकाजटाः ।

---

१ मुण्डितिका भण्डीरी जटातस्याःभूम्यामलकी।त्रिवृदादीनां रसेनापि व्यवहारः क्काथः पादा-वशिष्टत्वात् पाकावतारणकाले प्रक्षेपार्थे विडंगादीनां चूर्णम्।त्रिफलाया मिलित्वा पंचपलानि। शिलाजतु शिवागुटिकोक्तविधाशोधितम् । दिव्यौषधिः स्वर्णमाक्षिकमनःशिले । शार्ङ्गिचाशूक-शिम्बी वैकङ्कतो वनपालंकः रुक्मलौहं वज्रपाण्ड्वादितश्च रसायनोक्तक्रमेण जारणपुटनादिसू-क्ष्मचूर्णितम् । घृताच्चतुर्विंशतिपलानि मधुशर्करयोश्चतुर्विंशतिमिलित्वा तप्तघृते लौहं दत्त्वा पश्चात् शर्करासहितंक्काथंदत्त्वापाकः । अवतारणसमयेविडंगादिचूर्णप्रक्षेपः । पर्युषितेमधु दत्त्वाविसृज्यलौहपात्रेघृतपात्रेवास्थाप्यम् ततोविश्राम्यपश्चादुपविश्यअमृतसारतत्त्वप्रयोज्यमिति निश्चलकरः ॥

प्रत्येकशोऽष्टपलिकाजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ११२ ॥
पलत्रयंविडंगस्यव्योषंकर्षत्रयंपृथक् ।
त्रिफलायाःपलंपंचशिलाजतुपलंन्यसेत् ॥ ११३ ॥
दिव्यौषधिहतस्यापिवैकङ्कतहतस्यवा ।
पलद्वादशकंदेयंरुक्मलौहस्यचूर्णितम् ॥ ११४ ॥
घृताच्चतुर्विंशतिभिर्मधुशर्करयोरपि ।
घनीभूतेषुशीतेचदापयेदवतारिते ॥ ११५ ॥
एतदग्निमुखन्नामदुर्नामान्तकरंपरम् ।
मन्दमग्निंकरोत्याशुकालाग्निसमतेजसः ॥ ११६ ॥
पर्वताअपिजीर्यन्तिप्राशनादस्यदेहिनः ।
गुरुवृष्यानुपानानिपयोमांसरसोघृतम् ॥ ११७ ॥
दुर्नामपाण्डुश्वयथुकुष्ठप्लीहोदरापहम् ।
अकालपलितंचैवआमवातगुदामयम् ॥ ११८ ॥
नसरोगोऽस्तियश्चापिनहिहन्यादिदंक्षणात् ।
करीरकांजिकादीनिककारादींश्चवर्जयेत् ॥ ११९ ॥
स्रवत्यतोऽन्यथालोहंलोहात्किट्टंचदुर्जयम् ॥ १२० ॥

अर्थ-निसोत, चीता, निर्गुण्डी, थूहर, गोरखमुण्डी और भुईआमला यह प्रत्येक आठपल लेवे, पीछे चौंसठसेर जलमें पकाकर चतुर्थांश क्वाथ बनावे, फिर वायबिडंग १२ बारह तोले, सोंठ ६ छः तोले, मिरच छः तोले, पीपल छः तोले, त्रिफला २०बीस तोले, शिलाजीत ४चार तोले, सोनामाखी वा मैनशिलसे माराहुआ तथा विकंकतके रससे माराहुआ तीक्ष्ण लोह १२ बारह पल लेवे, घृत२४ चौबीसपल, चीनी २४चौबीसपल और सहत चौबीसपल लेवे। अब इसके बनानेकी विधि कहतेहैं। प्रथम घृतको कड़ाहीमें गरम करे, पीछे उसमें लोहा मिलाकर पकावै, फिर निसोतादिके क्वाथमें चीनी मिलाकर उपरोक्त लोहेकी कड़ाहीमें छोड़देवै, पीछे चूल्हेपसे उतारकर वायबिडंगादिका चूर्ण मिलादेवै, जब बहुतदेर रखनेसे शीतल होजाय तब सहत मिलादेवे तदनन्तर इसको लोहेके बरतनमें अथवा मिट्टीके चिकने बरतनमें भरके रख देवै, इसप्रकार यह अग्निमुख

लोह बनताहै। यह लोह–बवासीरको विशेषकरके विध्वंस करताहै, मन्दाग्निको दीपन करताहै, पत्थरको भी जीर्ण करदेवै । इसपै भारी, वृष्य, दूध, मांसरस और घृत यह भोजनकरने चाहियें । यह लोह–बवासीर पाण्डुरोग, सूजन, कोढ, प्लीहा उदररोग, अकालमें बालोंका सफेद होजाना, आमवात और गुदारोगको दूर करैहै । संसारमें ऐसा कोईभी नहीं है जो इसके सेवनकरनेसे शांत नहीं होवै। इसपै करीर (बाँसकी कोंपल), काँजी और ककारादि सर्वपदार्थ त्यागने चाहियें ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ॥ ११९ ॥ १२० ॥

अथ चव्यादिलोहम्।

चव्याःपलाष्टकंदेयंखदिरंचार्द्धमेवच ।
चित्रकस्यपलंपंचतालमूलीचतत्समा ॥ १२१ ॥
त्रिफलाप्रस्थसंयुक्तंजलद्रोणेविपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषेणकषायमवतारयेत् ॥ १२२ ॥
आज्यात्पलाष्टकंदेयंरुक्मलौहस्यषोडश ।
पचेत्ताम्रमयेपात्रेसुशीतेचावतारयेत् ॥ १२३ ॥
त्रिवृद्दन्तीविडंगानिपथ्याचामलकानिच ।
शुण्ठीविभीतकीकृष्णाएषांदेयंपलार्द्धकम् ॥ १२४ ॥
शर्करामधुचत्वारिस्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ।
गुरुवृष्यान्नपानानिपयोमांसरसोहितः ॥ १२५ ॥
दुर्नामकुष्ठश्वयथुपाण्डुप्लीहोदरापहम् ।
हृच्छूलेऽग्रशूलेचपरिणामकृतेहितम् ॥ १२६ ॥
लवणंकरंवृष्यमग्निसन्दीपनंपरम् ।
करीरकांजिकंचैवकाकमाचींविवर्जयेत् ॥ १२७ ॥

अर्थ–चव्य बत्तीस तोले, खैर सोलह तोले, मुसली बीस तोले और त्रिफला चौंसठतोले लेवै, पश्चात् बत्तीससेर जलमें पकावै, जब जलकर क्वाथ आठसेर बाकी रहै तब उतारले, फिर इस क्वाथको तांबेके बरतनमें करले, तिसमें बत्तीसतोले घी और चौंसठ तोले तीक्ष्णलोह मिलाकर पकावै, जब पककर शीतल

होजाय तब उतारले, पीछे निसोत, दन्ती, बायबिडंग, हरड़, आमला, सोंठ, बहेड़ा और पीपल, इन प्रत्येकका चूर्ण दोदो तोले, बूरा सोलह तोले, और सहत सोलह तोले मिलादेवै, पश्चात् चिकने बरतनमें भरके रखदेवै। इसके ऊपर भारी वृष्यभोजन, पान, दूध, और मांसरस (सोरुआ,) हितकारीहै। यह लोह, बवासीर, कोढ, सूजन, पाण्डु, प्लीहा, उदर रोग, हृदयशूल, गुदशूल, और परिणामशूलको निर्मूल करैहै, तथा बल, वर्ण और वीर्यको उत्पन्न करैहै, और अग्निको दीपन करै है। इसपै करीर, काँजी और काकमाची (मकोय) त्यागनी चाहिये ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥१२६ ॥ १२७॥

अथ विद्याधरलोहम् ।

स्वच्छपत्रीकृतंलोहंलिप्तंलिप्तंचनिर्वपेत् ।
लवणैर्माक्षिकोपेतैस्त्रिफलाकार्षिकोदके ॥ १२८ ॥
सुसिक्तंलोहमादायपूतंसंचूर्णयेत्ततः ।
पुटैर्यथाव्याधिहरंद्रव्यंसंपादितैःपचेत् ॥ १२९ ॥
पिण्डेनशर्कराक्काथःकलम्ब्याबहुपत्रतः ।
करिकर्णपलाशकलवणैरप्यरुष्करैः ॥ १३० ॥
चतुर्गुणेफलरसेलोहार्द्धघृतयोजितम् ।
पाचयेन्निपुणस्तावद्यावत्सर्पिर्विमुंचति ॥ १३१ ॥
षोडशांशंक्षिपेत्तत्रततःसंशोधितंरसम् ।
राजिकापिण्डमध्येतुव्योषपिंडस्यमध्यगम् ॥ १३२ ॥
गवांमलतुषाग्नौचवस्त्रवत्त्वश्चकांजिकैः ।
सिद्धंसप्ताहमेवन्तुततःसंचूर्णयेत्पुनः ॥ १३३ ॥
चिञ्चाकषायज्येष्ठाम्बुक्षीरनिर्वापितेनतु ।
द्विगुणेनगंधकशिलासुश्लक्ष्णरजसापुनः ॥ १३४ ॥
पादंविडंगमुस्ताग्नित्रिफलाव्योषजंरसः ।
लोहादेकीकृतंपिष्टमत्रप्तंनिधापयेत् ॥ १३५ ॥
ततोमात्रांप्रयुंजीतयथादोषंयथावयः ।

आहारपरिहारौचलौहान्तरसमानवित् ॥ १३६ ॥
कुलत्थश्चकपोतश्चकरमर्दककांजिके ।
करीरंकारवेल्लंचषट्ककाराणिवर्जयेत् ॥ १३७ ॥
विद्याद्विद्याधरमतंलौहंसर्वगदापहम् ।
नसोऽस्थिरोगःकुक्षिस्थोयमिदंननिहन्तिच ॥ १३८ ॥
नलोपकारान्यर्शांसिसर्वोपद्रववन्तिच ।
अम्लकंग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥
गुरुपादप्रसादेनख्यातंभुविरसायनम् ॥ १३९ ॥

(श्लोकव्याख्या)

अत्रस्वच्छमितिशाणादिनिर्मलीकृतम्। लवणैरितिसैन्धवादिभिः। रसशोधनमाह ।राजिकेत्यादि । अयमर्थः । आदौपिष्टौषधमापिपिण्डमध्येगोलकःकर्त्तव्यः । तदनुबाह्यतोराजिकापिण्डकल्केनवेष्टयित्वागुडकःकर्त्तव्यः तच्चवस्त्राच्छादितमितिवस्त्रेणवेष्टयित्वावस्त्रेणपोटलं कुर्यात् । तदनुशरावेकृत्वातुषानलेमन्दपाकेपचनीयः। उष्णःसन्पुनःकांजिकयापाचनीयः । एवंसप्ताहंशोधनंकृत्वाशोधितश्लक्ष्णगंधकरजसारसान् द्विगुणेनसहितंमूर्च्छयेत् ।

कज्जलिकांकृत्वाइत्यर्थः । गंधकशोधनप्रकारमाह । चिंचेत्यादि । अयमर्थः । तत्रगंधकंचूर्णयित्वालौहपात्रेकृत्वाबदरीकाष्ठनिर्धूमाङ्गारेविधृत्यभावयित्वाप्रथमंतिन्तिडीकषायेतदनुकांजिकेतदनुगव्ये गधे निर्वाप्य नरातपतद्गन्धकंशिलायां श्लक्ष्णरजः त्वात-

नरजसामूर्च्छयेदि ति[illegible]धः । तदनुतंकज्जलिकावस्थी-कृतरसंप्रक्षिपेत् । विडंगादिनवद्रव्याणाम् ।

अर्थ—लोहेके स्वच्छ पत्र बनाकर नोन और सहतका लेप करके त्रिफलेके रसमें बारंबार बुझावे, इस प्रकार शुद्धकिया लोहा लेकर चूर्णकरै, उस चूर्णको पुटके द्वारा पकावे, पश्चात् बूराका क्वाथ, कलंबी, सतोना और हस्तिकर्ण, पलाशके पत्ते, नोन और भिलावेके रसमें भावना देकर बारंबार पुटदेवै, फिर चौगुने त्रिफलेके रसमें लोहेसे आधा घी मिलाकर पकावे, जबतक लोहा घृतको न छोड़दे तबतक पकाताही रहै, तदनन्तर उसमें शुद्धपारा सोलहभाग डालकर गोला बनाले, उस गोलेमें राई और त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर वस्त्रमें बाँध सम्पुटमें रख आरणे उपले और भूसीकी आगसे पकावे, फिर काँजीमें पकावे, इसप्रकार सातदिनतक पकावे, पश्चात् इसका चूर्णकर और गंधकका चूर्ण इसमें मिला लोहेके पात्रमें रख बेरीकी लकडीकी अग्निसे पकाकर प्रथम इमलीके काढ़ेमें बुझावे, पश्चात् काँजीमें बुझावै फिर दूधमें बुझावे, पश्चात् धूपमें सुखाकर शिलापे पीस पारेके साथ कज्जली करै, फिर इसमें वायविडंग, नागरमोथा, चीता, त्रिफला और त्रिकुटेका चूर्ण मिलादेवै, दोषोंका बलाबल विचारकर इसको देवै । इसपै कुलथी, कबूतर, करोंदा, काँजी, करीर, करेला यह छः प्रकार त्यागने चाहियें । यह विद्याधरलोहा सर्व प्रकारके रोगोंको दूर करैहै और ऐसा मनुष्यकी कुक्षिमें स्थित कोईभी रोग नहीं है जो इससे दूर नहीं होता है । इससे सर्वउपद्रवयुक्त बवासीर, अम्लपित्त, संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म और आठप्रकारके उदररोग दूर होते हैं । यह गुरुके चरणकमलोंके प्रसादसे उत्तमरसायन पृथिवीमें प्रसिद्ध है ॥ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

इति अर्शोरोगचिकित्सासमाप्ता ।

अथमन्दाग्निचिकित्सा ।

मन्दस्तीक्ष्णोऽथविषमःसमश्चेतिचतुर्विधः ।
कफपित्तादिना[illegible]त्साम्याज्जाठरोऽनलः ॥ १ ॥
जाठरइतिधात्वग्निभूताग्निनिरासार्थम् ।
विषमेवातजोरोगास्तीक्ष्णःपित्तनिमित्तजान् ॥ २ ॥

करोत्यग्निस्तथा मन्दो विकारान्कफसम्भवान् ।
समा समाग्नेराशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते ॥ ३ ॥
स्वल्पापि नैव मन्दाग्नेर्विषमाग्नेस्तु देहिनः ।
कदाचित्सम्यक्पचते कदाचिच्च न पच्यते ॥ ४ ॥
मात्रातिमात्राप्यशिता सुखं यस्य विपच्यते ।
तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यात्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ५ ॥
समस्य रक्षणं कार्य्यं विषमे वातनिग्रहः ।
तीक्ष्णे पित्तप्रतीकारो मन्दे श्लेष्मविशोधनम् ॥ ६ ॥
ग्लानिर्गौरवसाटोपभ्रममारुतमूर्च्छिता ।
विष्टम्भोऽतिप्रवृत्तिर्वा सामान्याजीर्णलक्षणम् ॥ ७ ॥
प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णं जायते नृणाम् ।
तन्मूलो रोगसंघातस्तद्विनाशाद्विनश्यति ॥ ८ ॥

अर्थ—कफकी अधिकतासे मन्दाग्नि, पित्तकी अधिकातासे तीक्ष्णाग्नि, वातकी अधिकतासे विषमाग्नि, और वात, पित्त, कफकी समतासे जठराग्नि-सम अर्थात् समाग्नि होतीहै; ऐसे चार प्रकारकी जठराग्नि जाननी । विषमाग्नि वातके रोगोंको, तीक्ष्णाग्नि पित्तके रोगोंको और मन्दाग्नि कफके रोगोंको उत्पन्न करैहै और समाग्निवाले मनुष्यके भक्षण की हुई समान मात्रा भलेप्रकार पचजातीहै । मन्दाग्निवाले मनुष्यके भक्षण की हुई अल्पमात्राभी नहीं पचतीहै । विषमाग्निवाले मनुष्यके खाईहुई मात्रा कभी पचतीहै और कभी नहीं पचतीहै और तीक्ष्णाग्निवाले मनुष्यके अधिक भक्षण कीहुई भी मात्रा तत्काल पचजातीहै । इन सबमें समाग्निश्रेष्ठहै, समाग्निकी सदैव रक्षा करनी चाहिये, विषमाग्निमें वातको दूरकरना उचितहै, तीक्ष्णाग्निमें पित्तको प्रशमनकरना चाहिये और मन्दाग्निमें कफको दूरकरना चाहिये । ग्लानि, शरीरभारी, पेटमें गुडगुड शब्द, भ्रम, वात, मूर्च्छा, विष्टम्भ और डकारका बहुत आना यह सब अजीर्ण-रोगके साधारण लक्षण जानने । आहारकी विषमतासे अजीर्णरोग उत्पन्न होताहै और अजीर्णरोगसे अनेक प्रकारके रोगोंका समूह उत्पन्न होताहै और उस अजीर्णके शांतहोनेसे सर्वरोग नष्ट होजातेहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ हिंग्वष्टकम्।

त्रिकटुकमजमोदासैन्धवं जीरके द्वे समधरण धृतानाष्टमो-
हिंगुभागः प्रथमकवलभुक्तंसर्पिषाचूर्णमेतज्जनयतिजठ-
राग्निंवातरोगांश्चहन्ति ॥ ९ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल अजमोद सैंधानोन, जीरा, कालाजीरा, भुनीहुई हींग इन सबको समानभाग लेकर चूर्ण करे, उस चूर्णको घीमें मिलाकर भोजनके प्रथमग्रासमें खावै, इससे जठराग्नि दीपन होतीहै और वातरोग नाश होतेहैं ॥ ९ ॥

अथ हिंगुमंडः।

अन्नमण्डंपिबेदुष्णंहिंगुसौवर्चलान्वितम्।
विषमोऽपिसमस्तेनमन्दोदीप्येतपावकः ॥ १० ॥
क्षुद्बोधनोबस्तिविशोधनश्चप्राणप्रदःशोणितवर्द्धनश्च।
ज्वरापहारीकफपित्तहन्तावातंजयेदष्टगुणोहिमंडः॥११॥

अर्थ–भातके माँडमें हींग और कालानोन मिलाकर गरम गरम पीनेसे विषमाग्नि और मन्दाग्नि दीपन होजातीहै। तथा यह माँड–भूखको बढानेवाला, वस्तिशोधक, प्राणरक्षक, रक्तवर्द्धक, ज्वरनाशक, कफपित्तनिवारक और वातको दूर करेहै, इसप्रकार इसमें यह आठ गुण हैं ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ अग्निदीपनचूर्णम्।

भोजनाग्रेहितंहृद्यंदीपनंलवणार्द्रकम्।
हरीतकीभक्ष्यमाणानागरेणगुडेनवा ॥ १२ ॥
सैन्धवोऽपिहितोवापिसातत्येनाग्निदीपनः।
हरीतकी कणा शुंठीत्रिसमंसमुदाहृतम् ॥ १३ ॥
अग्निसन्दीपनंनृणांत्रिदोषामयनाशनम् ॥ १४ ॥

अर्थ–भोजनकेपूर्व सैंधानोन और अदरखका खाना अग्निदीपन करैहै। हरडको सोंठके साथ अथवा गुडके साथ वा सेंधवनोनके साथ सेवन करनेसे जठराग्नि दीपन होतीहै। हरड, पीपल और सोंठ इन तीनोंको समानभाग लेकर चूर्ण करे, उस चूर्णको भक्षण करनेसे अग्निदीपन और त्रिदोष दूर होवे ॥१२॥१३॥१४॥

अथ सैन्धवादिचूर्णम् ।

सिन्धूत्थपथ्यमगधोद्भववह्निचूर्ण-
मुष्णाम्बुनापिबतियःखलुनष्टवह्निः ।
तस्यामिषेणसघृतेनवरंनवान्नं
भस्मीभवत्यशितमात्रमपिक्षणेन ॥ १५ ॥

अर्थ—सैंधानोन, हरड, पीपल, और चीता इनका चूर्ण समानभाग लेकर गरमपानीके साथ पीवे, मांस घृतके साथ नवीन अन्नका भोजन करे । इससे नष्टअग्नि दीपन होजातीहै और भारी भोजन भस्म होजाताहै ॥ १५ ॥

अथाग्निवर्द्धिनी अभया ।

अभयानिम्बसंयुक्ताभक्षितानलवृद्धिकृत् ।
दद्रुविस्फोटकांश्चैवनाशयत्याशुदेहिनाम् ॥ १६ ॥

अर्थ—हरड़को नीमके साथ सेवनकरनेसे—जठराग्नि बढतीहै, तथा दाह, और विस्फोटक दूर होते हैं ॥ १६ ॥

अथ स्वल्पाग्निमुखचूर्णम् ।

हिंगुभागोभवेदेकोवचाचद्विगुणाभवेत् ।
पिप्पलीत्रिगुणाचैवशृंगवेरंचतुर्गुणम् ॥ १७ ॥
यवानिकापंचगुणाषड्गुणाचहरीतकी ।
चित्रकंसप्तगुणितंकुष्ठंचाष्टगुणम्भवेत् ॥ १८ ॥
एतद्वातहरंचूर्णंपीतमात्रंप्रसन्नया ।
पिबेद्दध्नामस्तुनावासुरयाकोष्णवारिणा ॥ १९ ॥
[illegible]मजीर्णन्तुप्लीहानमुदरन्तथा ।
अंगानियस्यशीर्य्यन्तिविषंवायेनभक्षितम् ॥ २० ॥
अर्शोहरं[illegible]पनंचश्लेष्मघ्नंगुल्मनाशनम् ।
कासंश्वासंनिहन्त्याशुतथैवक्षयनाशनम् ॥ २१ ॥
[illegible]र्णमग्निमुखन्नामनक्वचित्प्रतिहन्यते ॥ २२ ॥

अर्थ—हींग एकभाग, बच दो भाग, पीपल, तीनभाग, अदरख चारभाग अजवायन पांचभाग, हरड छैभाग, चीता सातभाग और कूट आठ भाग लेवै, पीछे

इनसबको कूट पीस चूर्ण बनावे । इस वातनाशक अग्निमुखचूर्णको प्रसन्नानामक मदिराके साथ, अथवा दहीके साथ वा दहीके पानीके साथ, वा सुराके साथ अथवा किंचित् गरमजलके साथ, पीनेसे दोषोंसे उत्पन्नहुआ अजीर्णरोग, प्लीहा, उदररोग, गलतेहुए शरीरको, विषका भक्षणकरना, बवासीर, कफ, गुल्म, खाँसी, श्वास और क्षयरोगको दूर करैहै तथा अग्निको दीपन करैहै ॥ १७ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

अथ बृहदग्निमुखचूर्णम् ।

द्वौक्षारौचित्रकंपाठाकरंजंलवणानिच ।
सूक्ष्मैलापत्रकंभार्ङ्गींक्रिमिघ्नंहिंगुपुष्करम् ॥ २३ ॥
शठीदार्वीत्रिवृन्मुस्तंवचाचेन्द्रयवास्तथा ।
धात्रीजीरकवृक्षाम्लंश्रेयसाचोपकुंचिका ॥ २४ ॥
अम्लवेतसमम्लीकायवानीसुरदारुच ।
अभयातिविषेश्यामाहपुषारग्वधंसमम् ॥ २५ ॥
तिलमुष्ककशिग्रूणांकोकिलाक्षपलाशयोः ।
क्षाराणिलोहकिट्टञ्चतप्तंगोमूत्रसेवितम् ॥ २६ ॥
समभागानिसर्वाणिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
मातुलुंगरसेनैवभावयेच्चदिनत्रयम् ॥ २७ ॥
दिनत्रयन्तुशुक्तेनआर्द्रकस्वरसेनवा ।
अत्यग्निकारकंचूर्णंप्रदीप्ताग्निसमप्रभम् ॥ २८ ॥
उपयुक्तंविधानेननाशयत्यचिराद्गदान् ।
अजीर्णकमथोगुल्मंप्लीहानंगुदजानिच ॥ २९ ॥
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्चअष्ठीलांवातशोणितम् ।
प्रणुदत्युल्बणान्रोगान्नष्टंवह्निञ्चदीपयेत् ॥ ३० ॥
समस्तव्यञ्जनोपेतंभक्तंदत्त्वासुभाजने ।
दापयेदस्यचूर्णस्यबिडालपदमात्रकम् ॥ ३१ ॥
गोदोहमात्रात्तत्सर्वंद्रवीभवतिसोष्मकम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—सज्जी, जवाखार, चीता, पाढ, करंज, पंचलवण, छोटीइलायची, तेजपात, भारंगी, बायविडंग; हींग, पोहकरमूल, कचूर, दारुहलदी, निसोत, मोथा, बच, इंद्रजौ, आमला, जीरा, विषाविल, रास्ना, कलौंजी, अमलबेत, इमली, अजवायन, देवदारु, हरड़, अतीस, पीपल, हाऊबेर, अमलतास, तिलोंकाखार, मोखेकाखार, सैंजिनेका खार तालमखानेका क्षार, ढाकका खार और गोमूत्रमें शुद्ध की हुई लोहेकी कीट इन सबको समानभाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें, पीछे इस चूर्णको बिजोरा नींबूके रसमें तीनदिन भावना देवे, फिर तीनदिन काँजी अथवा अदरखके रसमें भावना देवे, तो बृहदग्निमुखचूर्ण बनजाताहै। यह बृहदग्निमुखचूर्ण—अत्यन्त अग्निकारक है। इसको उपयुक्त मात्राके अनुसार सेवनकरनेसे बहुतदिनोंके रोग नष्ट होतेहैं, तथा अजीर्ण, गुल्म, प्लीहा, गुदाके रोग, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, अष्ठीला और वातरक्तरोग दूर होतेहैं और नष्टअग्निको दीपन करैहै। सम्पूर्णव्यञ्जनोंसे युक्त भातको बरतनमें रख पश्चात् उसमें दोतोले भर इस चूर्णको डालकर खानेसे गोदोहनकाल अर्थात् शीघ्र खाया भोजन द्रवी अर्थात् पचजाताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथ भास्करलवणम् ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंधान्यकंकृष्णजीरकम् ।
सैन्धवंचविडंचैवपत्रंतालीशकेशरम् ॥ ३३ ॥
एषांद्विपलिकान्भागान्पंचसौवर्चलस्यच ।
मरीचाजाजीशुंठीनामेकैकस्यपलंपलम् ॥ ३४ ॥
त्वगेलाचार्द्धभागेनसामुद्रात्कुडवद्वयम् ।
दाडिमात्कुडवश्चैवद्वेपलेचाम्लवेतसात् ॥ ३५ ॥
एतच्चूर्णीकृतंसूक्ष्मंगन्धाढ्यममृतोपमम् ।
लवणंभास्करन्नामभास्करेणविनिर्मितम् ॥ ३६ ॥
जगतान्तुहितार्थायवातश्लेष्मभयापहम् ।
वातगुल्मंनिहन्त्येतद्वातशूलानियानिच ॥ ३७ ॥
तक्रमस्तुसुरासीधुशुक्तकांजिकयोजितः ।
जांगलानान्तुमांसेनरसेषुविविधेषुच ॥ ३८ ॥

अर्शांसिग्रहणीदोषंकुष्ठामयभगन्दरान्।
हृद्रोगमामदोषांश्चविविधानुदरस्थितान् ॥ ३९ ॥
प्लीहानमश्मरीञ्चैवश्वासकासोदरकृमीन्।
विशेषतःशर्करादीन्रोगान्नानाविधानपि ॥ ४० ॥
पाण्डुरोगांश्चविविधान्नाशयत्यशनिर्यथा ॥ ४१ ॥

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, धनियाँ, कालाजीरा, सेंधानोन, विडनोन, तेजपात, तालीशपत्र, नागकेशर, यह प्रत्येक आठ आठ तोले, कालालोन बीस तोले, कालीमिरच, जीरा, सोंठ यह प्रत्येक चार चार तोले, दालचीनी और इलायची दो दो तोले, समुद्रनोन बत्तीस तोले, अनारदाना सौ तोले और अमलबेंत आठ तोले इन सबको महीन पीसकर चूर्ण बनावे तो भास्करलवण सिद्धहो। यह भास्करलवण श्रीमान् भास्कराचार्य्यजीने संसारके उपकारार्थ निर्माण कियाहै। यह भास्करलवण–वातरोग, कफरोग, वातगुल्म और वातशूलको नष्ट करैहै। इसपै तक्र, दहीकापानी, सुरा, सीधु, शुक्त और कांजी, तथा जांगलदेशके जीवोंके मांसका रस यह अनुपानहै।

यह लवणभास्कर-सर्वप्रकारकी ववासीर, संग्रहणीरोग, कोढ़रोग, भगन्दर, हृदयरोग, आमदोष, अनेकप्रकारके उदररोग, प्लीहा, पथरी, श्वास, खाँसी, उदररोग, कृमि, विशेषकरके शर्करादिरोग और पाण्डुरोगको दूर करैहै ॥ ३३–४१ ॥

अथ समशर्करचूर्णम्।

शुंठीकणामरिचनागदलत्वगेलं
चूर्णीकृतंक्रमविवर्द्धितमूर्द्धमन्त्यात्।
खादेदिदंसमशितंगुदजाग्निमान्द्य-
कासारुचिश्वसनकण्ठहृदामयेषु ॥ ४२ ॥

अर्थ–सोंठ सातभाग, पीपल छे भाग, कालीमिरच पांचभाग, नागकेशर चार भाग, तेजपात तीनभाग, दालचीनी दोभाग और इलायची एकभाग लेवे पीछे सबको एकत्र कूट पीसकर चूर्णकरे, फिर सबचूर्णकी समान खांड़ मिलाकर खानेसे–मंदाग्नि, खाँसी, अरुचि, श्वास, कण्ठरोग और हृदयरोग दूर होताहै ॥ ४२ ॥

अथाजीर्णनाशकचूर्णम्।

हरीतकीधान्यतुषोदसिद्धासपिप्पलीसैन्धवहिंगुयुक्ता ।
सोद्गारधूमंभृशमप्यजीर्णंविजित्यसद्योजनयेत्क्षुधाञ्च ४३
विष्टम्भेस्वेदनंपथ्यंपेयञ्चलवणोदकम् ।
रसशेषेदिवास्वप्नोलंघनंवातवर्द्धनम् ॥ ४४ ॥
व्यायामप्रमदाऽध्ववाहनवतःकान्तानतीसारिणः
शूलश्वासवतस्तृषापरिगतान्हिक्कामरुत्पीडितान् ।
क्षीणान्क्षीणकफान्हिशूलजमदान्वृद्धान्रसाजीर्णितान्
रात्रीजागरितान्नरान्निरशनान्कामंदिवास्वापयेत् ॥४५॥
आलिप्यजठरंप्राज्ञोहिंगुसैन्धवत्र्यूपणैः ।
दिवास्वप्नंप्रकुर्वीतसर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥ ४६ ॥
धान्यनागरसिद्धञ्चतोयंदद्याद्विचक्षणः ।
आमाजीर्णप्रशमनंदीपनंबास्तिशोधनम् ॥ ४७ ॥
पथ्यापिप्पलिसंयुक्तंचूर्णंसौवर्चलंपिबेत् ।
मस्तुनोष्णोदकेनाथबुद्ध्वादोषगतिंभिषक् ॥ ४८ ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्चमन्दानलमथारुचिम् ।
आध्मानंवातशूलंचगुल्मंचाशुनियच्छति ॥ ४९ ॥
भवेदजीर्णंप्रतियस्यशंका स्निग्धस्यजन्तोर्बलिनोन्नकाले ।
पूर्वंसशुंठीमभयामशंकोभुंजीतसंप्राश्यहितंहितार्थी ॥ ५० ॥
सिन्धूत्थहिंगुत्रिफलायवानीव्योषैर्गुडांशैर्गुटिकान्प्रकुर्य्यात्।
तैर्भक्षितैःसुप्तिमवाप्नुवन्वा भुञ्जीतमन्दाग्निरपिप्रभूतम्५१॥
विडंगभल्लातकचित्रकामृताःसनागरास्तुल्यगुडेनसर्पिषा ।
निहन्तियेमन्दहुताशनान्वाभवन्तितेव डवतुल्यवह्नयः ५२

अर्थ—हरडको धान्यतुषोदक नामवाली काँजीमें सिद्धकर भक्षणकरनेसे अथवा पीपल, सैंधानोन और हींग इन तीनोंका एकत्र चूर्णकर खानेसे डकार और धुँआयुक्त अजीर्ण दूर होता है और भूँख उत्पन्न होतीहै । विष्टम्भाजीर्णमें स्वेद

और लवणोदक प्रयोगकरना योग्यहै। रसशेषाजीर्णमें दिनमें सोना, लंघन और वातवर्द्धक द्रव्य सेवनकरने चाहिये, व्यायाम (दंडकसरत) स्त्रीप्रसंग, मार्गचलने और वाहन (सवारी) के दौडानेसे थके हुए मनुष्यको, अतिसार, शूल, श्वास, तृषा, हिक्का और वातपीडित मनुष्यको, तथा क्षीण, क्षीणकफ, शूल और मदसे पीडित, वृद्ध, रसाजीर्णरोगी, रात्रिका जगाहुआ और लंघितमनुष्यको दिनमें सोना चाहिये। हींग, सैंधानोन, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सबको बारीक पीस पेटपै लेपकरे और दिनमें सोवे तो सबप्रकारके अजीर्ण दूर होतेहैं—धनियाँ और सोंठ डालकर औटाया हुआ जल पीनेसे आमाजीर्ण शांत होता है और यह जल दीपन और बस्तिशोधक है। हरड, पीपल और कालानोन इनको कूट पीस कर चूर्णकरे, पीछे उस चूर्णको दहीके पानीके साथ अथवा गरमजलके साथ दोषोंकी गतिको जानकर पीनेसे चारों प्रकारके अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि, आध्मान, वातशूल और गुल्मरोग दूर होता है। स्निग्ध और बलवान् मनुष्यके अन्नकालमें जो अजीर्णकी शंका होवे तो प्रथम सोंठ, हरड इनके चूर्णको शीतलजलके साथ पीकर पश्चात् हितकारी भोजन करे तो कुछ भय नहीं है। सेंधवलवण, हींग, त्रिफला, अजवायन, त्रिकुटा, इनका चूर्ण बनावे, पीछे उसको गुडमें मिलाकर गोली बनाकर खानेसे अजीर्ण और मन्दाग्नि दूर होती है। बायविडंग, भिलावा, चीता, हरड और सोंठ इनके चूर्णको गुड और घीके साथ भक्षण करनेसे मन्दाग्नि नष्ट होकर वडवानलकी समान जठराग्नि होजाती है॥ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अथ रसरत्नाकरोक्ताग्निकुमाररसः।

शुद्धसूतंविषंगंधंप्रतिनिष्कंत्रयंत्रयम्।
मरिचंसर्वतुल्यंस्यात्कण्टकारिफलद्रवैः॥ ५३ ॥
मर्दयेद्भावयेत्तेनभावनाचैकविंशतिः।
देयागुंजाद्वयंखादेत्सर्वाजीर्णप्रशान्तये॥ ५४ ॥
विषूचिकांनिहन्त्याशुरसोह्यग्निकुमारकः॥ ५५ ॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, विष, यह प्रत्येक बारह बारह मासे लेवे और कालीमिरच सबकी बराबर लेवे, पीछे कटेरीके फलोंके रसमें २१ भावना देकर मर्दन करे तो अग्निकुमाररस सिद्धहो, इसको दोरत्तीभर भक्षण करे, इससे सब प्रकारके अजीर्णरोग और विषूचिका रोग नाश होती है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

अथ वारिभक्तवटिका ।

रसगंधकमभ्रञ्चगुडूचीसत्त्वमेवच ।
विडंगमरिचंचैवसर्वमेकत्रकारयेत् ॥ ५६ ॥
आर्द्रकस्यरसेनापिगुटिकांकारयेद्बुधः ।
भक्षयेन्माषमात्रन्तुअम्लतोयानुपानतः ॥ ५७ ॥
अग्निश्चकुरुतेदीप्तंसामाजीर्णप्रणाशनम् ॥ ५८ ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अभ्रक, गिलोयका सत्व, बायबिडंग और कालीमिरच इन सबका एकत्र चूर्ण करे, पीछे अदरखके रसमें मर्दनकर गोली बनावे। इसको एकमासेभर खावे और ऊपर कांजी पीलेवै तो अग्नि दीपनहो और आमाजीर्ण नष्ट होवे ॥ ५३–५८ ॥

अथ क्षुधावतीवटिका ।

रसगंधकमभ्रंचत्र्यूषणंत्रिफलात्वचम् ।
यवानीशतपुष्पाचचविकाजीरकद्वयम् ॥ ५९ ॥
प्रत्येकंपलमेकन्तुघण्टाकर्णपुनर्नवा ।
मानकंग्रन्थिकन्दंचकेशराजःसुदर्शनः ॥ ६० ॥
दण्डोत्पलंत्रिवृद्दंतीसूर्य्यावर्त्तकचित्रकैः ।
भृंगापामार्गकुलिशमण्डूराणांपलार्द्धकम् ॥ ६१ ॥
आर्द्रकस्यरसेनाथगुटिकाःसंप्रकल्पयेत् ।
षण्माषप्रमिताश्चैकांभक्षयित्वाभजेदनु ॥ ६२ ॥
वारिभक्तजलंचैवप्रातरुत्थायमानवः ।
वटीक्षुध वतीनामसर्वव्याधिविनाशिनी ॥ ६३ ॥
अग्निश्चकुरुतेदीप्तंभस्मकंचनियच्छति ।
अम्लपित्तश्चशूलश्चपरिणामकृतंचयत् ॥ ६४ ॥
तत्सर्वंनाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥ ६५ ॥

अर्थ—पारा, गंधक, अभ्रक, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल,) त्रिफला (हरड, बहेडा, आमला) दालचीनी अजवायन, सोंफ, चव्य, जीरा, कालाजीरा यह प्रत्येक एक एक पल अर्थात् चार चार तोले, घण्टाकर्ण, पुनर्नवा, मानकंद,

ग्रन्थिकंद, कुकुरभांगरा, सुदर्शन, दण्दोत्पल, निसोत, दंती, सूर्य्यावर्त्त, चीता, भांगरा, चिरचिटा, हाडजोडा और मण्डूर यह प्रत्येक दो दो तोले लेवे, पीछे इन सबको एकत्रकर अदरखके रसमें मर्दनकरके छे छे मासेकी गोली बना-लेवे । इसको नित्यप्रति प्रातःकाल उठकर सेवनकरे । पश्चात् इसके ऊपर भातका माँड पीवे ।

यह क्षुधावतीनामवाली वटी—सर्वव्याधिविनाशक, अग्निको दीपनकरनेवाली, भस्मकरोगको हरनेवाली, तथा अम्लपित्त, शूल और परिणामशूलको नष्ट करै है. जैसे सूर्य्य अंधकारको नष्ट करैहै ॥ ५९–६५ ॥

अथ अग्निकुमाररसः ।

शुद्धसूतंमृतंगंधंत्रिक्षारंपटुपंचकम् ।
दशकंतुल्यतुल्यांशंभर्जितंविषयापिच ॥ ६६ ॥
दशानांतुल्यभागानांतस्यार्द्धंशिग्रुमूलकम् ।
तत्सर्वंविजयाद्रावैःशिग्रुचित्रकभृंगजैः ॥ ६७ ॥
द्रवैर्दिनद्वयंमर्द्यंरुद्ध्वाभांडेपचेल्लघु ।
दीप्ताग्निनातुयामैकंशुद्धंपाच्यंसमुद्धरेत् ॥ ६८ ॥
सप्तधाचार्द्रकद्रावैश्चित्रकैर्भावयेद्भिपक् ।
दीप्यकोऽग्निकुमारोयंनिष्कैकंमधुनालिहेत् ॥ ६९ ॥
प्रतिकर्षंगुडंशुंठीमनुस्यादग्निदीपनः ॥ ७० ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्धगंधक, सज्जी, जवाखार, सुहागा, कालानोन, सैंधानो-न. साँभरनोन, विड़नोन, खारीनोन, यह प्रत्येक एक एक भाग, अतीस दश भाग और सैंजिनेकी जड़ पांचभाग लेवै, पीछे सबको एकत्र कर भांगके रसमें सैंजनेके रसमें चीतेके रसमें, और भांगरेके रसमें दोदो दिन खरलकरे, फिर लघुपुटमें दीप्ताग्निके द्वारा एक प्रहर पकावे, फिर उसमेंसे निकालकर अदरखके रसमें सातबार भावनादेवे और सातभावना चीतेके रसमें देवे तो अग्निकुमाररस तैय्यार हो । इसको चार मासे भर लेकर सहतके साथ चाटे, इससे सर्वप्रकारकी मन्दाग्नि आदि दोष नष्ट होतेहैं । इसके अन्तमें दो तोले गुड और दो तोले सोंठ दोनों मिलाकर खाने चाहिये ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथ वैरोचनरसः ।

मृतसूतंचतुर्भागंभागैकंमृतहेमकम् ।
अष्टभागंशुद्धगन्धंदिनैकंचित्रकैर्द्रवैः ॥ ७१ ॥
मर्दितंशोधितंचूर्णंवराटींतेनपूरयेत् ।
टंकणेनमुखंरुद्ध्वाभाण्डमध्येनिरोधयेत् ॥ ७२ ॥
शुष्कंगजपुटेपच्यात्स्वांगशैत्यंविचूर्णयेत् ।
चतुर्गुञ्जाकणाक्षौद्रंलेह्यमग्निप्रदीपनम् ॥ ७३ ॥
समंक्षौद्रार्द्रकद्रावैःपलार्द्धंपाययेदनु ।
वैरोचनोरसोनामसर्वरोगकुलान्तकृत् ॥ ७४ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म चारभाग, सोनेकी भस्म एकभाग, आठभाग शुद्ध गंधक इन तीनोंको एकदिन चीतेके रसमें मर्दन कर कौड़ीमें भरदेवे और कौड़ीका मुख सुहागेसे बंदकर देवे, पश्चात् उस कौड़ीको भांडमें रख मुखबंदकर धूपमें सुखा गजपुटमें पचावे, शीतलहोनेपर चूर्ण करले । इसको चाररत्ती भर लेकर पीपलका चूर्ण और सहत मिला चाटे, इससे अग्नि दीपन होतीहै । इसके अंतमें सहत दो तोले और अदरखकारस दो तोले मिलाकर पीवे, यह अनुपान है । यह वैरोचननामवाला रस सर्वरोगनाशकहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

अथापरोऽग्निकुमाररसः ।

रसेन्द्रगंधौसहटंकणेनसमंविषंयोज्यमिहत्रिभागम् ।
कपर्दकंशंखमिहत्रिभागंमरीचमत्राष्टगुणंप्रदेयम् ॥ ७५ ॥
सुपक्वजम्बीररसेनघस्रंसिद्धोभवेदग्निकुमारएषः ।
विषूचिकाजीर्णसमीरणार्त्तेदद्याद्विबन्धेग्रहणीगदेच ॥ ७६ ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सुहागा, यह सब एक २ भागले, विष तीनभागले, कौड़ीकी भस्म और शंखकी भस्म तीनभागले, कालीमिरच आठभागलेवे, पश्चात् सबको एकत्रकर पके हुए जम्भीरीनींबुओंके रसमें खरल करे तो अग्निकुमाररस तय्यार होताहै । यह अग्निकुमाररस–विषूचिका, अजीर्ण, वातरोग, विबन्ध और संग्रहणीरोगमें देनाचाहिये ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

अथापरोऽप्यग्निकुमाररसः।

शुद्धसूतंविषंगंधमजमोदाफलत्रयम्।
स्वर्जिकाक्षारंयवक्षारंवह्निसैन्धवजीरकम् ॥ ७७ ॥
सुवर्चलंविडंगानिसामुद्रंत्र्यूषणंसमम्।
विषमुण्डीसर्वतुल्यंजम्बीराम्लेनपेषयेत् ॥ ७८ ॥
मरीचाभांवटींखादेद्वह्निमान्द्यप्रशान्तये।
पथ्याशुंठीगुडंचानुपलार्द्धंभक्षयेत्सदा ॥ ७९ ॥
कणामूलंकण वह्नित्रिवृद्दन्तीपलंपलम्।
सर्वतुल्यामृताशुण्ठीगुडेनकृतमोदकम् ॥ ८० ॥
कर्षैकंगोलकंखादेद्दीपनंकुरुतेक्षणात।
रसभस्मसमंगन्धंधात्रीद्विगुणटंकणम् ॥ ८१ ॥
दिनंजम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्यंपूर्य्यावराटिका।
रुद्धागजपुटेपच्याद्यथावैरोचनोरसः ॥ ८२ ॥
तथाकुर्य्याच्चरोगाणांफलंतद्वन्नसंशयः।
कुमारीसैन्धवश्चानुलेहयेदग्निदीपनम् ॥ ८३ ॥
पलैकंमूर्च्छितंसूतंमरीचंहिंगुजीरकम्।
प्रतिकर्षंवचाशुंठीतत्सर्वंभृंगजैर्द्रवैः ॥ ८४ ॥
दिनंमर्द्यंलिहेन्मापंमधुवह्निर्दिनोपिबेत्।
कर्पैकंभक्षयेच्चानुदाडिमंनागरंगुडम् ॥ ८५ ॥
कणामूलंकणाशुंठीचव्यवह्निसमंसमम् ॥
सर्वतुल्यांपचेल्लाजांपेयांमन्दाग्निशूलनुत ॥ ८६ ॥
मुस्तधान्याककर्पैकंपचेल्लाजाःपलैर्जलैः।
दीपनीयाच ग्याचपथ्यंस्यादग्निमान्द्यके ॥ ८७ ॥
द्विपलंशुद्धताम्रन्तुशुद्धसूतंपलत्रयम्।
पिष्टंजम्बीरजैर्द्रावैः्य्यात्खल्वेभिपग्वरः ॥ ८८ ॥

गन्धकश्चमृतंतत्रप्रत्येकंपलपंचकम् ।
कज्जलीकृत्यसर्वञ्चभावयेन्निम्बकद्रवैः ॥ ८९ ॥
चूर्णितंपिष्टिकापृष्ठेक्षिपेच्चनिम्बकद्रवैः ।
घर्मेदिनाष्टकंभाव्यंद्रवंदेयंपुनःपुनः ॥ ९० ॥
भृंगद्रावैरुयहंभाव्यंत्रिवारस्याद्रकद्रवैः ।
त्रिधामृतारसेभाव्यंरसमग्निकुमारकम् ॥ ९१ ॥
रसंगुञ्जात्रयंखादेदग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ९२ ॥

अर्थ—शुद्धपारा, विष, गंधक, अजमोदा, त्रिफला, सज्जी, जवाखार, चीता, सैंधानोन, जीरा, कालानोन, वायविडंग, समुद्रनोन और त्रिकुटा यह सब समान भाग और कुचिला सबकी बराबर लेवे, पीछे सबको एकत्र कर जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करे, काली मिरचकी बराबर गोली बनावे, प्रतिदिन एक गोली खानेसे मंदाग्नि नष्ट होतीहै । इसके अंतमें हरड, सोंठ, और गुड मिलाकर दोतोलेभर खाय यह अनुपानहै । पीपलामूल, पीपल, चीता, निसोत, और दंती यह प्रत्येक चार चार तोले, गिलोय बीसतोले और सोंठ बीस तोले लेवे, पीछे सबको एकत्र कूट पीसकर चूर्ण करे, इस चूर्णमें गुड़ मिलाकर दोदो तोले भरके लड्डू बनावे, एक लड्डू प्रतिदिन खानेसे अग्नि प्रदीप्त होतीहै । पारेकी भस्म, गंधक एक एकभाग, आमला, सुहागा दोदो भागलेवे, पीछे इन सबको एकत्रकर जम्भीरी नींबूके रसमें एकदिन मर्दन करके कौडीमें भरदेवे, पश्चात् जिसप्रकार वैरोचनरसको पकावे उसीप्रकार इसको गजपुटमें पकावे, इसको सेवनकरनेसे अनेकप्रकारके रोग निःसन्देह दूर होतेहैं । इसके अन्तमें घीकुवारके रसमें सेंधानोन मिलाकर लेहकी तरह बनाकर चाटे, यह अनुपानहै । इससे अत्यन्त अग्निदीपन होतीहै । मूर्च्छितपारा चार तोले, कालीमिरच, हींग, जीरा, वच और सोंठ प्रत्येक दो दो तोले लेवै, पीछे इन सबको भांगरेके रसमें एकदिन मर्दन करे । इसको मासेभर लेकर चीतेके चूर्णके और मधुके साथ लेहकी तरह बनाकर चाटे । इस औषधिके अन्तमें अनार, सोंठ और गुड मिलाकर दो तोले खावे । इससे अग्निदीपन होतीहै । पीपलामूल, पीपल, सोंठ, चव्य, चीता, यह सब समानभाग लेवे, और खीलें सबकी बराबर लेवै, पश्चात् सबको मिलाकर पेया बनावे, इसको पीनेसे मंदाग्नि और शूल नष्ट होताहै । नागरमोथा, धनियाँ यह प्रत्येक दोदो तोले, खीलें चार तोले इन सबको आठतोलेभर पानीमें मिलाकर पेया

वनावे, यह पेया अग्निप्रदीपक और मन्दाग्निरोगमें हितकारी है । आठतोले शुद्ध तांबा, बारहतोले शुद्ध पारा इन दोनोंको जम्भीरीनींबुओंके रसमें खरलकर पश्चात् बीसतोले मृतगंधक मिलाकर कज्जलीको बनावे, फिर उस कज्जलीको कागजी नींबूके रसमें खरलकर आठदिनतक नींबूके रसमें भावना देता जाय और प्रतिभावना धूपमें सुखाता जाय, फिर तीनदिन भांगरेके रसमें भावना देवै, पश्चात् तीनबार अदरखके रसमें भावना देवे, फिर तीनबार गिलोयके रसमें भावनादेवे तो अग्निकुमाररस सिद्ध होता है । इसको तीनरत्तीभर खानेसे मन्दाग्नि दूर होती है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

अथ पंचामृतचूर्णम् ।

पारदंगन्धकंलौहंताम्रमभ्रकमेवच ।
एषांमाषकमेकैकंजम्बीरद्रवभावितम् ॥ ९३ ॥
देयंत्रिकटुनातुल्यंसम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तप्ततोयानुपानेनवह्निमान्द्यहरंपरम् ॥ ९४ ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहा, तांबा, अभ्रक, यह प्रत्येक एकएक मासे लेकर जम्भीरी नींबूके रसमें भावना देवे, पश्चात् इसमें बराबर त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर चार रत्तीभर खावै और ऊपरसे गरमजल पीलेवै, इससे मन्दाग्नि नष्ट होता है ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

अथ पंचामृतवटी ।

अभ्रकंपारदंताम्रंगन्धकंमरिचान्वितम् ।
समभागमिदंसर्वंचांगेरीरसभावितम् ॥ ९५ ॥
मर्दितन्तुरसेभूयोजयन्तीसिन्धुवारयोः ।
मर्दनेनैवकर्तव्यागुञ्जापरिमितावटी ॥ ९६ ॥
तप्ततोयेनसंयुक्ताश्चतस्रस्तिस्रएववा ।
अग्निमान्द्येप्रदातव्यावट्यःपंचविधामताः ॥ ९७ ॥

अर्थ-अभ्रक, पारा, ताँबा, गंधक और कालीमिरच यह सब समान भाग लेवे, पश्चात् इन सबको चांगेरी (छोटीनोनिया) के रसमें भावना देकर खरलकरे, फिर जयंती और सम्हालूके रसमें खरलकर एकरत्तीभरकी गोलीबनावे

तीन ३ वा चार ४ गोलीखावे, ऊपरसे गरमपानी पीलेवै, इससे मन्दाग्नि नष्ट होतीहै ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

अथ वडवानलचूर्णम् ।

करञ्जफलमज्जाथपथ्यावह्निविडंगकम् ।
कणाशुंठीसमंचूर्णंसर्वतुल्यासिताभवेत् ॥ ९८ ॥
अग्निदीप्तिकरंकर्षंभक्षयेद्वडवानलम् ॥ ९९ ॥

इत्यजीर्णाधिकारः ।

अर्थ—करंजके फलकी मींग, हरड, चीत, बायबिडंग, पीपल और सोंठ इन सबको समानभाग लेकर चूर्ण करे और सब चूरणकी बराबर मिश्री मिलालेवे, इसबडवानल चूर्णको दो तोलेभर खानेसे अत्यन्त अग्नि दीपन होतीहै॥९८॥९९॥

इति अजीर्णाधिकारसमाप्त ।

अथ कृमिचिकित्सा ।

अजीर्णभोजीमधुराम्लनित्योद्रवप्रियः पिष्टगुडोपभोक्ता ।
व्यायामवर्जीचदिवाशयानोनिरुद्धभुक्संभ्रमतेकृमींश्च ॥१॥
क्षीराणिमांसानिघृतानिचैवदधीनिशाकानिचपर्णवन्ति ।
समासतोऽम्लान्मधुरान्रसांश्चकृमीञ्जिघांसुःपरिवर्जयेत्तु॥२॥
अरुचिःस्यादबलत्वंपाण्डुत्वंछर्दनंभ्रमः ।
ज्वरातीसारकृच्छूलंकृमिकोपेनजायते ॥ ३ ॥
अपकर्षणमेवादौकृमीणांभेषजंमतम् ।
ततोदोषचयंबुद्ध्वानिदानंपरिवर्जयेत् ॥ ४ ॥
विडंगपिप्पलीमूलशिग्रुभिर्मरिचेनवै ।
तक्रसिद्धायवागूःस्यात्कृमिघ्नाचसुवर्चिका ॥ ५ ॥
विडंगतंडुलव्योषयुक्तंमण्डंपिबेन्नरः ।
दीपनंकृमिनाशायवह्निंचकुरुतेभृशम् ॥ ६ ॥
मुस्ताखुपर्णीसुरदारुशिग्रु-
क्काथःसकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः ।

मार्गद्वयेनापिचिरप्रवृत्ता-
न्कृमीन्निहन्यात्कृमिजांश्चरोगान् ॥ ७ ॥
रसेन्द्रेणसमायुक्तोरसोधत्तूरपत्रजः ।
ताम्बूलपत्रजोवापिलेपःकृमिविनाशनः ॥ ८ ॥

अर्थ–अजीर्णमें भोजनकरनेसे, मधुर, अम्ल, द्रव, पिट्ठी और गुड़ आदि द्रव्य सदैव सेवनकरनेसे, तथा कसरत आदिको नहीं करनेसे, दिनमें सोनेसे और विरुद्धभोजन करनेसे मनुष्योंको कृमिरोग उत्पन्न होताहै । दूध, मांस, घृत, दही, पत्रशाक, अम्लपदार्थ और मधुरद्रव्य यह सब वस्तु कृमिरोगी त्याग देवे । अरुचि, दुर्बलता, पाण्डुता, वमन, भ्रम, ज्वर, अतीसार, और शूल यह सबलक्षण कृमिके कोपमें होतेहैं । कृमिरोगमें प्रथम अपकर्षण, औषधियोंके द्वारा दोषोंकी गतिको जान निदानको त्यागकर चिकित्सा करनी चाहिये । वायविड़ंग, पीपलामूल, सैंजिना, कालीमिरच और सज्जीखार इनके चूर्णको तक्रसे बनाई हुई यवागूमें मिलाकर पीवे तो कृमिरोग दूर होय, बायविड़ंग, सोंठ, मिरच और पीपल इनके चूर्णको मांड़में मिलाकर पीनेसे कृमिरोग दूर होताहै और अग्नि दीपन होतीहै । नागरमोथा, मूसाकानी, देवदारु और सैंजिना इनके काढेमें पीपल और बायबिडंगका चूर्ण मिलाकर पीनेसे कृमिरोग और कृमिरोगसे उत्पन्न हुए और रोग दूर होतेहैं । पारेको धतूरेके पत्तोंके रसमें और पानके रसमें खरलकर लेपकरनेसे कृमिरोग दूर होताहै ॥ १–८ ॥

अथ विड़ंगाद्यतैलम् ।

सविडंगगंधकशिलासिद्धंगोमूत्रजलेनकटु ।
तैलमाजन्मनयतिनाशंलिख्यासहिताश्चयूकाश्च ॥ ९ ॥

अर्थ–बायविडंग, गंधक, मैनशिल इनके कल्कमें तथा गोमूत्रमें सरसोंके तेलको सिद्धकरे, फिर इस तेलके लेपकरनेसे जूँएँ और लीखें दूर होतीहैं ॥९॥

अथ कृमिहरचूर्णम् ।

पारसीययवानीपीतापर्य्युषितबारिणाप्रातः ।
गुडपूर्वाकृमिजातंकोष्ठगतंपातयत्याशु ॥ १० ॥
क्वाथंखर्जूरपत्राणांसक्षौद्रमुषितंनिशि ।
पीतंनिवारयत्याशुकृमीन्निरवशेषतः ॥ ११ ॥
लिह्यात्क्षौद्रेणवैडंगंचूर्णंवाकृमिनाशनम् ॥ १२ ॥

अर्थ-खुरासानी अजवायनको बासी जलमें भिजोकर प्रातःकालमें गुड़ मिलाकर पीनेसे कोष्ठगत कृमिरोग दूर होताहै । खजूरके पत्तोंके बासी क्वाथको रात्रिमें सहतके साथ पीनेसे सर्वप्रकारके कृमिरोग दूर होतेहैं । बायबिडंगके चूर्णको सहतकेसाथ चाटनेसे कृमिरोग दूर होताहै ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ त्रिफलाघृतम् ।

त्रिफलात्रिवृतादंतीवचाकम्पिलकस्तथा ।
सिद्धमेभिर्गवांमूत्रेसर्पिःकृमिविनाशनम् ॥ १३ ॥
सर्वान्कृमीन्प्रणुदतिचक्रंमुक्तमिवासुरान् ॥ १४ ॥

अर्थ-त्रिफला, निसोत, दंती, वच, कबीला इन सब औषधियोंका कल्क सेरभर, गायका घी चारसेर और गोमूत्र छे सेर लेवे, पीछे घृतको सिद्धकरे, इससे सर्वप्रकारके कृमिरोग दूरहोते हैं ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथ धूपः ।

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिफा ।
अर्जुनस्यफलंपुष्पंविडंगंसर्जगुग्गुलु ॥ १५ ॥
एभिःकृतेनधूपेनशाम्यन्तिनियतंगृहे ।
भुजंगमूषिकालूताःपलायन्तेगृहात्सदा ॥ १६ ॥

अर्थ-लाख, भिलावा, श्रीवास (जिसके अभावमें लोबान लेतेहैं) सफेदकोयलकी जड, अर्जुनवृक्षकेफल और फूल, वायाबिड़ंग, राल, गूगल इन सबको एकत्रकर धूप बना घरमें रखनेसे-साँप, मूषा, मकडी, यह सब भागजातेहैं ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथ कृमिरोगहरणम् ।

शुद्धसूतंचेन्द्रयवमजमोदामनःशिला ।
पलाशबीजतुल्यांशंदेवदाल्याद्रवैर्दिनम् ॥ १७ ॥
मर्दयेद्भक्षयेन्निष्कंमुद्गपर्णीकषायकम् ।
सितायुक्तंपिबेच्चानुकृमिपातोभवत्यलम् ॥ १८ ॥
अत्रशुद्धसूतंगंधकेनमूर्च्छितमपियवंरसयोगः ।

अर्थ-शुद्धपारा, इन्द्रजौ, अजमोदा, मैनाशिल, और ढाकके बीज इन सबको समानभाग लेकर देवदालीके रसमें एकादिन खरल करे । इसको चारमासेभर

खावे और ऊपरसे बनमूँगके काढेमें मिश्री मिलाकर पीलेवे तो कृमिरोग दूर हो ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ कीटभद्ररसः।

शुद्धसूतंशुद्धगंधमजमोदाविडंगकम्।
विषमुंडीब्रह्मबीजंक्रमोत्तरगुणंभवेत् ॥ १९ ॥
चूर्णयेन्मधुनालेह्यंनिष्कैकंकृमिजिद्भवेत्।
कीटभद्ररसोनाममुस्तातोयंपिबेदनु ॥ २० ॥

इति कृमिरोगाधिकारः।

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अजमोदा, वायविडंग, कुचिला, और ढाकके बीज, यह सब एकोत्तर वृद्धिसे अर्थात् पारा एकभाग, गंधक दोभाग, अजमोदा तीनभाग, वायविडंग चारभाग, कुचिला पांचभाग और ढाकके बीज छेभाग लेकर चूर्ण करे, पश्चात् चूर्णमें सहत मिलाकर चार मारो भर चाटे और ऊपरसे नागरमोथेका क्वाथ पीवे तो कृमिरोग दूर होताहै, इसको कीटभद्ररस कहते हैं ॥ १९ ॥ २० ॥

इति कृमिरोगाधिकारसमाप्त।

अथ पाण्डुरोगचिकित्सा।

साध्यन्तुपाण्ड्वामयिनंसमीक्ष्यस्निग्धंघृतेनोर्द्धमधश्चशुद्धम्।
सम्पादयेत्क्षौद्रघृतप्रगाढैर्हरीतकीचूर्णमयैःप्रयोगैः ॥ १ ॥
विधिःस्निग्धस्तुवातोत्थेतिक्तशीतन्तुपैत्तिके।
श्लेष्मकेकटुरूक्षोष्णाःकार्य्योमिश्रस्तुमिश्रके ॥ २ ॥
द्विशर्करंत्रिवृच्चूर्णपलार्द्धंपैत्तिकेपिबेत्।
कफपाण्डुस्तुगोमूत्रयुक्तांस्विन्नांहरीतकीम् ॥ ३ ॥
नागरंलौहचूर्णंवाकृष्णापथ्यामथाश्मजम्।
गुग्गुलुंक्काथमूत्रेणकफपाण्ड्वामयीपिबेत् ॥ ४ ॥
नागरंलौहचूर्णंवाकृष्णापथ्याशिलाजतु ॥ ५ ॥
गग्गुलुनागोमूत्रेणयुक्ताश्चत्वारोयोगाःप्रकीर्तिताः।
लौहंपुटादिशब्दंतदभावेलौहपातिकापिशोधिताग्राह्या।

एवंसर्वत्रसकलंकफजेपाण्डौदशमूलीजलंपिबेत् ॥ ६ ॥
लोहपात्रेशृतंक्षीरंसप्ताहंपथ्यभोजनम् ।
पिबेत्पाण्ड्वामयीशोषीग्रहणीदोषपीडितः ॥ ७ ॥
शृतंचतुर्गुणजलेन ।
सप्तवारंगवांमूत्रेभावितंवाप्ययोरजः ।
पाण्डुरोगप्रशान्त्यैवपयसाथपिबेन्नरः ॥ ८ ॥

अर्थ–प्रथम साध्यपांडुरोगीको विचारकर पीछे घीके द्वारा स्निग्ध करे, फिर वमन और विरेचनद्वारा शुद्ध करे, तदन्तर हरडके चूर्णमें घी और सहत मिलाकर सेवन करावे । वातज पाण्डुरोगमें स्निग्ध क्रिया, पित्तज पांडुरोगमें तिक्त और शीतल क्रिया, कफजपाण्डुरोगमें कटु, रूक्ष, उष्णक्रिया और मिश्रितपाण्डुरोगमें मिश्रितक्रिया करे । पित्तजपांडुरोगमें दोभाग बूरा और एकभाग निसोतका चूर्ण मिलाकर भक्षण करे, कफज पांडुरोगमें हरडको गोमूत्रके द्वारा उबालकर देवे, अथवा सोंठ और लोहेका चूर्ण गोमूत्रके साथ तथा पीपल, हरड, शिलाजीत और गूगुलको गोमूत्रके साथ, और सोंठ, लोहेका चूर्ण, पीपल, हरड, शिलाजीत, गूगल, इन सबको गोमूत्रके साथ सेवनकरनेसे कफजपांडुरोग दूर होताहै । दशमूलका क्काथ पीनेसे, कफजपांडुरोग दूर होताहै । लोहेके वरतनमें चौगुने जलसे युक्त दूधको औटाकर सात दिनपर्यंत पीवे, और हितकारी भोजन करे तो पांडु, शोष, और संग्रहणीरोग दूर होय । लोहेके चूरणको गोमूत्रमें सात भावना देवे, इसको दूधके साथ सेवन करनेसे पांडुरोग शांत होता है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ फलत्रिकादिक्काथः ।

फलत्रिकामृतावासातिक्ताभूनिम्बनिम्बजः ।
क्काथःक्षौद्रयुतोहन्यात्पांडुरोगंसकामलम् ॥ ९ ॥

अर्थ–त्रिफला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता, और नीमकी छाल इनका क्काथ बना तिसमें सहत मिलाकर पीवे तो पांडुरोग और कामला रोग दूर हो ॥ ९ ॥

अथायोमलचूर्णम् ।

अयोमलं[illegible] सन्तप्तंभूयोगोमू[illegible]षेचितम् ।
म[illegible] सर्पिर्युतंचूर्णंसहभक्तेनयोजयेत् ॥ १० ॥

दीपनं भोजनं शोथपाण्ड्वामयापहम् ॥ ११ ॥
अयोमलंपुराणलोहमलम् ।

अर्थ—पुराने लोहेको बारंबार आगमें तपाकर बारंबार गोमूत्रमें बुझावे, फिर चूर्णकर मधु और घीमें मिला भातके साथ सेवन करनेसे अग्निदीपन होतीहै, जठराग्नि उत्पन्न होतीहै तथा सूजन और पाण्डुरोग दूर होता है ॥१०॥ ११ ॥

अथ सिन्दूरभूषणरसः ।

शुद्धसूतंससिन्दूरंपलैकैकंविमर्दयेत् ।
वासारसेनयामैकंतैलेकुर्य्याच्चपिष्टिकाम् ॥ १२ ॥
अपक्कांकारयेन्मूषामुन्नतांद्वादशाङ्गुलाम् ।
तन्मध्येगंधकंशुद्धंक्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १३ ॥
पूर्वोक्तांश्चक्रियांचक्रेदत्त्वारुद्ध्वापुटेल्लघु ।
जीर्णगंधेसमुद्धृत्यचक्रिकांतांविचूर्णयेत् ॥ १४ ॥
चूर्णाद्दशगुणंयोज्यंमृतलोहंचमर्दयेत् ।
लशुनस्यदशांशेनचणमात्रावटीकृता ॥ १५ ॥
वातपाण्डुहरःसिद्धोरसःसिन्दूरभूषणः ।
पिबेच्चानुह्यपामार्गरुबुकस्यचमूलिकाम् ॥ १६ ॥
तक्रैःपिष्ट्वाचकर्षैकंहन्तिपाण्डुंसकामलम् ॥ १७ ॥

अर्थ—शुद्धपारा चार तोले, सिन्दूर चार तोले इन दोनोंको वासाके रसमें एक प्रहर खरलकर तेलमें पिट्ठी बनावे,पश्चात् बारह अंगुलकी कच्ची घडिया बनाकर तिसके बीचमें चारपल शुद्धगंधक रक्खे, फिर पूर्वोक्त द्रव्य रक्खे, पश्चात् लघुपुटमें फूंकदेवे,जब गंधककी भस्म होजावे तब उस द्रव्यको निकाल कर चूर्ण करले, फिर इस चूर्णसे दशगुनी लोहेकी भस्म मिलाकर लहसुनके रसमें मर्दन कर चनेकी बराबर गोलीबनावै तो वातजपांडुरोगनाशक सिन्दूरभूषणरस सिद्धहो । इसको खाकर फिर ऊपरसे चिरचिटा और अरंडकी जडको छाँछमें पीसकर एक तोलेभर पीवे तो कामलासंयुक्तपांडुरोग दूर होवे ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथ मण्डूरवज्रम्।

पंचकोलंसमरिचंदेवदारुफलत्रिकम्।
विडंगमुस्तयुक्ताश्चभागास्त्रिपलसम्मिताः॥ १८॥
यावन्त्येतानिचूर्णानिमण्डूरद्विगुणंततः।
पक्त्वाचाष्टगुणेमूत्रेघनीभूतेतदुद्धरेत्॥ १९॥
तत्कर्षमात्रांवटिकांपिबेत्तक्रेणतक्रभुक्।
पाण्डुरोगंजयत्येषामन्दाग्नित्वमरोचकम्॥ २०॥
अर्शांसिग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापिवा।
कृमीन्प्लीहानमुदरंगलरोगंचनाशयेत्॥ २१॥
मण्डूरवज्रनामेदंरोगानीकप्रणाशनम्॥ २२॥

अर्थ—पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, कालीमिरच, देवदारु, त्रिफला, बायबिडंग, और नागरमोथा, यह प्रत्येक बारह बारह तोले लेवे, फिर सबका चूर्ण कर चूर्णसे दुगुना मंडूर (लोहेकामल) मिलावे, तदनन्तर इसको आठ-गुने गोमूत्रमें पकावे, जब पकने २ गाढा होजावे तब उतारकर एक २ तोलेभर-की गोली बनालेवे, एक गोली मट्ठेके साथ खावै और मट्ठेहीको भोजनके साथ खावे तो पांडुरोग, मंदाग्नि, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, ऊरुस्तम्भ, कृमि, प्लीहा, उदररोग और गलरोग दूर होवे। यह मंडूरवज्रनामवाला रस रोगोंके समूहोंको दूर करताहै॥ १८–२२॥

अथ पूनर्नवामंडूरः।

पुनर्नवात्रिवृच्छुण्ठीपिप्पलीमरिचानिच।
विडंगंदेवकाष्ठश्चचित्रकंपुष्कराह्वयम्॥ २३॥
त्रिफलाद्वेहरिद्रेचदन्तीचचविकातथा।
कुटजस्यफलंतिक्तापिप्पलीमूलमुस्तकम्॥ २४॥
एतानिसमभागानिमंडूरंद्विगुणंततः।
गोमूत्रेऽष्टगुणेपक्त्वास्थापयेत्स्निग्धभाजने॥ २५॥
पाण्डुशोथोदरानाहशूलार्शःकृमिगुल्मनुत्॥ २६॥

अर्थ-पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, बायबिडंग, देवदारु, चीता, पोहकरमूल, त्रिफला, हलदी, दारुहलदी, दंती, चव्य, इन्द्रजव, कुटकी, पीपलामूल और नागरमोथा यह सब समानभाग और इन सबसे दुगुना मंडूर लेवे, पश्चात् सबको आठगुने गोमूत्रमें औटाकर चिकने बरतनमें भरके रखदेवे। यह रस-पाण्डु, सूजन, उदररोग, आनाह, शूल, बवासीर कृमि और गुल्मको दूर करहै ॥ २३-२६ ॥

अथ नवायसंलौहम् ।

त्र्यूषणत्रिफलामुस्तविडंगचित्रकाःसमाः ।
नवायोरजसोभागास्तच्चूर्णंमधुसर्पिषा ॥ २७ ॥
भक्षयेत्पाण्डुहृद्रोगक्षयार्शःकामलापहम् ॥ २८ ॥

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा,बायबिडंग और चीता यह सब समानभाग लेवे, और नवीन लोहेका चूर्ण आठभाग लेवे, पश्चात् सबको एकत्रकर शहदके और घीके साथ खानेसे पांडुरोग, हृदयरोग,क्षय, बवासीर और कामलारोग दूर होता है ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथ योगराजलोहम् ।

त्रिफलायास्त्रयोभागास्त्रयस्त्रिकटुकस्यच ।
भागाश्चित्रकमूलस्यविडङ्गस्यतथैवच ॥ २९ ॥
पंचाश्मजतुनोभागास्तथारूप्यमलस्यच ।
माक्षिकस्यचशुद्धस्यलोहस्यरजसस्तथा ॥ ३० ॥
अष्टौभागाःसितायाश्चतत्सर्वंश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
माक्षिकेणाप्लुतिस्थाप्यमायसेभाजनेशुभे ॥ ३१ ॥
उदुम्बरसमांमात्रांततःखादेद्यथाग्निना ।
दिनेदिनेप्रयोक्तव्यंजीर्णभोज्यंयथेप्सितम् ॥ ३२ ॥
वर्जयित्वाकुलत्थांश्चकाकमाचीकपोतकान् ।
योगराजइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥ ३३ ॥
रसायनमिदंश्रेष्ठंसर्वरोगहरंपरम् ।
पाण्डुरोगंविषंकासंयक्ष्माणंविषमज्वरम् ॥ ३४ ॥

कुष्ठान्यजरकंमेहंश्वासंहिक्कामरोचकम् ।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारंकामलांगुदजानिच ॥ ३५ ॥
त्रयोभागामिलित्वारूप्यमलम् ।
रजतनिर्गतशिलाजतु केचिदाहुः ॥
इतिनिश्चलकरः ।
तल्लक्षणंरसायनेबोध्यम् । त्रिविक्रमदेवस्त्वाह ।
रूप्यमलाभावेलौहमलस्यव्यवहारः । तदुक्तं-
सुवर्णमथवारूप्यंयोगयुक्तंनसम्भवेत् ।
तत्रलोहेनकार्यंचभिषक्कुर्याद्विचक्षणः ।
इति ॥ रूप्याभावेलौहम् ।
तदातन्मलाभावेतन्मलंग्राह्यम् । माक्षिकस्यसुवर्णमाक्षिकस्य।
उदुम्बरंकर्षःमधूनान्तुमाषकचतुष्टयंभक्ष्यम् । नापुरुषः ।

अर्थ-तीनभाग त्रिफला, तीनभाग त्रिकुटा, चीतेकी जड़ तीनभाग, तीनभाग बायाबिडंग, शिलाजीत, रूपेका मैल, शुद्धसोनामाखी और लोहेका चूर्ण प्रत्येक पांच भाग, और सफेद बूरा आठ भाग, सबको एकत्र पीस बारीक चूर्ण बनावे। पीछे इस चूर्णमें सहत मिलाकर उत्तमलोहके बरतनमें भरके रखदेवे, फिर एकतोलाभर प्रतिदिन अग्निका बलाबलविचारकर भक्षण करे, और जीर्ण होजानेपर यथेष्ट भोजन करे, इसपै कुलथी, मकोय और कबूतरका मांस न खावे, यह योगराज अमृतकी समानहै, रसायन सर्वरोगनाशक, तथा पाण्डुरोग, विष, खाँसी, राजयक्ष्मा, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, श्वास, हुचकी, अरुचि, विशेषकरके अपस्मार, कामला और बवासीरको दूर करैहै ॥२९-३५॥

अथ मूर्वाद्यंघृतम् ।

मूर्वातिक्तानिशायासकृष्णचन्दनपर्पटैः ।
त्रायन्तीवत्सभूनिम्बपटोलाम्बुददारुभिः ॥ ३६ ॥
अक्षमात्रेघृतप्रस्थःसिद्धःक्षीरचतुर्गुणः ।
पाण्डुताज्वरविस्फोटश्वोत्राशोंरक्तपित्तनुत् ॥ ३७ ॥

अर्थ–मूर्वा (चुरनहार), कुटकी, हलदी, जवासा, पीपल, चंदन, पित्तपापडा, त्रायमाणा, कुडेकीछाल, चिरायता, परवल, नागरमोथा और देवदारु यह सब समान भागलेवे, पश्चात् सबका कल्क बनावे, परंतु कल्क तोलमें सेरभरहो घृतचारसेर, और दूध १६ सोलह सेर लेवे, फिर घृत सिद्ध करे । यह घृत–पांडुरोग,ज्वर,विस्फोटक, कर्णबवासीर और रक्तपित्तको दूर करैहै ॥३६॥३७॥

अथ दार्व्यादिलोहम् ।

दार्वीसत्रिफलाव्योषविडंगान्ययसोरजः ।
मधुसर्पिर्युतंलिह्यात्कामलापांडुरोगवान् ॥ ३८ ॥
सर्वचूर्णसमंलोहंसर्वंनवायसादिवत् ॥ ३९ ॥

अर्थ–दारुहलदी, त्रिफला, त्रिकुटा, बायविडंग और लोहेका चूर्ण इन सबको एकत्रकर चूर्णकरै, पश्चात् सहत और घृत मिलाकर चाटे तो कामला और पाण्डुरोग दूरहो । इसमें सर्वचूर्णकी बराबर लोहेका चूर्ण डाले ॥ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अथ धात्रीलोहम् ।

धात्रीलोहरजोव्योषसिताक्षौद्राज्यशर्करा ।
लीढानिवारयत्याशुकामलामुद्धतामपि ॥ ४० ॥
मधुघृतमवलेह्यंदार्व्यादिलौहवत् ॥

अर्थ–आमला, त्रिकुटा, शिलाजीत और शर्करा यह प्रत्येक एक एकभाग और लोहेका चूर्ण छे भाग लेवे, पीछे सबका चूर्णकर सहत और घृत मिलाके चाटनेसे घोरकामलारोग दूर होताहै ॥ ४० ॥

अथ विडंगादिलौहगुटिका ।

विडंगमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः ॥ ४१ ॥
तुल्यमात्रमयश्चूर्णंगोमूत्रेऽष्टगुणेपचेत् ॥ ४२ ॥
तैरक्षमात्रांगुटिकांकृत्वाखादेद्दिनेदिने ।
कमलापाण्डुरोगार्तःसुखमाप्यतेचिरात् ॥ ४३ ॥
लोहात्सर्वत्रचूर्णादेवगोमूत्रमष्टगुणम् ।
सिद्धेचूर्णप्रक्षेपइतिनिश्चलः ।
दत्त्वाच[illegible]कइतित्रिविक्रमः । लोहान्तरवत्कवलम् ।

अर्थ—बायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपलमूल, चव्य, चीता, यह सब समानभाग लेवे और इनसबकी समान लोहेका चूर्णलेवे, पश्चात् सबको मिलाकर, आठगुने गोमूत्रमें पकावे, जब सिद्ध होजाय तो दोदो तोलेभरकी गोली बनालेवे, एकगोली प्रतिदिन खावे। यह गोली कामला और पांडुरोगको दूर करैहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

अथ पंचाननवटी।

शुद्धसूतंसमंगन्धंमृतताम्रञ्चगुग्गुलुम् ।
मृतायसञ्चगंधञ्चमृतताम्राभ्रगुग्गुलुम् ॥ ४४ ॥
जैपालबीजतुल्यांशंघृतेनगुटिकांकुरु ।
भक्षयेद्बदराण्डाभांशोथपांडुप्रशान्तये ॥ ४५ ॥
पंचाननावटीख्याताअनुपानञ्चपूर्ववत् ॥ ४६ ॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, मृततांबा, गूगुल, मृतलोहा यह सब समानभाग लेवे और सबकी बराबर जमालगोटा लेवे, पश्चात् सबको घीमें खरलकरके गोली बनालेवे। इन गोलियोंको खानेसे सूजन और पांडुरोग दूर होता है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

अथ लोहामृतम्।

मुस्तामृताकणायष्टीवह्निशुण्ठीफलत्रयम् ।
विडंगंचसमंचूर्णंसर्वांशंमृतलोहकम् ॥ ४७ ॥
मधुनाभक्षयेन्निष्कंपाण्डुरोगहरंपरम् ।
इदंलोहामृतंनामस्वयमग्निरसोपिवा ॥ ४८ ॥

अर्थ—नागरमोथा, गिलोय, पीपल, मुलेठी, चीता, सोंठ, त्रिफला और बायविडंग इन सबका चूर्ण समानभाग और सब चूर्णकी बराबर मृतलोहा लेवे, फिर सबको एकत्रकर मधुके साथ चारमासेभर खावे तो पांडुरोग दूर होता है, इसको लोहामृत और स्वयमग्निरस कहते हैं ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अथ पाण्डुरोगहरक्काथः ।

कोकिलायाश्चबीजानिगुडूचीनागरैःसह ।
पयसाक्कथितंरात्रौपाचनंपांडुरोगिणाम् ॥ ४९ ॥

अर्थ-तालमखानेके बीज, गिलोय और सोंठ इनको दूधमें औटाकर रात्रिमें पीनेसे पांडुरोग आराम होताहै ॥ ४९ ॥

अथ हंसमंडूरः ।

मण्डूरंचूर्णितंश्लक्ष्णंगोमूत्रेऽष्टगुणेपचेत् ।
त्र्यूषणंत्रिफलामुस्तंविडङ्गञ्चव्यचित्रकम् ॥ ५० ॥
दार्वीग्रन्थिदेवदारुतुल्यंसर्वंविचूर्णयेत् ।
चूर्णंमण्डूरतुल्यंचपाककालेविमिश्रयेत् ॥ ५१ ॥
भक्षयेत्कर्षमात्रञ्चजीर्णान्तेतक्रभोजनम् ।
हलीमकंपांडुशोथमुरुस्तम्भञ्चकामलाम् ॥ ५२ ॥
अर्शांसिहन्तिशीघ्रञ्चहंसमण्डूरकोह्ययम् ॥ ५३ ॥

अर्थ-मंडूरको आठगुने गोमूत्रमें पकावे, जब पकते २ गाढा होजाय तब इसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, चव्य, चीता, दारुहलदी, पीपलामूल और देवदारु इनसबका चूर्ण समानभाग और सब चूर्ण मंडूरकी समान मिलादेवे, दो तोलेभर खावे और इसके जीर्ण होजाने पर तक्रके साथ भोजनकरे । यह हंसमण्डूर-हलीमक, पाण्डु, सूजन, ऊरुस्तम्भ कामला और बवासीरको दूर करैहै ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथ कामेश्वररसः ।

मुस्तैलापत्रकाणाञ्चप्रतिसार्द्धंपलंक्षिपेत् ।
त्र्यूषणांपिप्पलीमूलंविषंचैवपलंपलम् ॥ ५४ ॥
नागकेशरकर्षैकमेरण्डस्यपलन्तथा ।
पुरातनगुडेनैवतुल्येनैवविमिश्रयेत् ॥ ५५ ॥
मर्द[illegible]द्रावैर्यामैकंवाघृतान्वितम् ।
गुटिकां[illegible]कारयेद्भक्षयेन्निशि ॥ ५६ ॥
शोथपाण्डुहरःसोऽयंरसःकामेश्वरःस्वयम् ॥ ५७ ॥

अर्थ-नागरमोथा, इलायची और तेजपत्र प्रत्येक छै छै तोले, पीपल, सोंठ, मिरच, पीपलामूल, और विष प्रत्येक चार चार तोले, नागकेशर दो तोले और अरंडकी जड चार तोले लेवे, सबको एकत्रकर चूर्ण बना सब चूर्णकी

बरावर पुरानागुड़ मिलाकर एकप्रहर धतूरेके रसमें अथवा घृतमें मर्दनकरके बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बनालेवे। इस कामेश्वररसको रात्रिमें खानेसे सूजन और पांडुरोग विनष्ट होताहै ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

अथ सिद्धमण्डूरः।

मंडूरस्यपलान्यष्टौगोमूत्रेऽष्टगुणेपचेत्।
पुनर्नवात्रिवृद्व्योषंविडंगंदेवदारुकम् ॥ ५८ ॥
द्वेनिशेपुष्करंवह्निर्दन्तीचव्यंफलत्रिकम्।
कुटजस्यफलंतिक्तापिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ ५९ ॥
विषश्चप्रतिकर्षंस्याच्चूर्णयित्वाविमिश्रयेत्।
मण्डूरस्यचपाकान्तेअक्षमात्रावटीकृता ॥ ६० ॥
पांडुशोथज्वरानाहशूलार्शःकृमिगुल्मनुत्।
इत्येवंसिद्धमण्डूरंसर्वरोगविनाशकृत् ॥ ६१ ॥

अर्थ-आठपल मंडूरको आठगुने गोमूत्रमें पकावे जब गाढा होजाय तब पुनर्नवा निसोत, सोंठ, मिरच, पीपल, बायविडंग, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, पोहकरमूल, चीता, दंती, चव्य, हरड, बहेड़ा, आमला, इंद्रजव, कुटकी. पीपलामूल, नागरमोथा और विष प्रत्येक दोदो तोले लेवै, फिर सवका एकत्र-चूर्णकर मिलादेवे, जब सिद्ध होजाय तो दोदो तोलेभरकी गोली बनालेवे, प्रतिदिन एकगोली खावे यह सिद्धमंडूर-पाण्डु, सूजन, ज्वर, आनाह, शूल. बवासीर, कृमि, गुल्म और सर्वरोगनाशक है ॥ ५८-६१ ॥

अथ पाण्डुरोगचिकित्सा।

विण्मूत्रनयनादीनांरूक्षकृष्णारुणाभता।
वातपाण्ड्वामयेकम्पस्तोदानाहभ्रमादयः ॥ ६२ ॥

इतिवाते।

पीतमूत्रशकृन्नेत्रदाहतृष्णाज्वरान्वितः।
भिन्नविट्कोऽतिपीताभःपित्तपाण्ड्वामयीनरः ॥ ६३ ॥

इतिपित्ते।

कफप्रसेकःश्वयथुस्तन्द्रालस्यातिगौरवैः ।
पाण्डुरोगीकफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥ ६४ ॥

इतिकफे ।

ज्वरारोचकहृल्लासतृष्णाछर्दिक्लमान्वितः ।
पाण्डुरोगीत्रिभिर्दोषैस्त्याज्यःक्षीणोहतेन्द्रियः ॥ ६५ ॥
पाण्डुदन्तनखोयस्तुपांडुरोगःसुदुःसहः ।
जायतेकृमिकुष्ठश्वसातिसारंकफंभ्रमम् ॥ ६६ ॥
शूनाक्षिकुटगंडभ्रूःशूनपान्नाभिमेहनः ।
कृमिकोष्ठोतिसार्य्येतमलंसास्रकफान्वितः ॥ ६७ ॥

अर्थ-विष्ठा, मूत्र और नेत्र रूखे, काले और लालरंगकेहों, कम्प, पीड़ा, आनाह और भ्रम इत्यादि विकारोंकी उत्पत्तिहो तो वातजपांडुरोग जानना । विष्ठा, नेत्र और मूत्र यह सब पीलेरंगके होजाँय, दाह, तृष्णा, ज्वर और भेदहो, तथा शरीर पीतवर्णहो तो पित्तजपांडुरोग जानना । कफस्राव, सूजन, तन्द्रा, आलस्य, शरीर भारीहो, और चर्म्म, मूत्र, नेत्र. और मुख श्वेतवर्णहो तो कफजपांडुरोग जानना । और ज्वर, अरुचि, हृल्लास, तृषा, वमन, ग्लानि, दुर्बलता और इन्द्रियें कमजोर होजावें तो असाध्य त्रिदोषजपांडुरोग जानना । जिस पांडुरोगीके नख और दाँत पांडुरंगके होजावें, कोठेमें कृमि पड़जायँ, कफ और रुधिरसंयुक्त बारंबार पतला, मल उतरे, भ्रमहो, नेत्रोंपे सूजनहो, कपोल और भृकुटी टेढी होजावें, पांव, नाभि, और लिंगपै सूजनहो ऐसा पांडुरोगी असाध्य जानना ॥ ६२-६७ ॥

अथ कालविध्वंसनोरसः ।

शुद्धसूतंहेमतारंताम्रंतुल्यञ्चमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरसंयुक्तमातपेमर्दयेद्दिनम् ॥ ६८ ॥
सर्वतुल्यंपुनःसूतंलिप्त्वापिष्टिंप्रकल्पयेत् ।
धत्तूरफलमध्यस्थंदोलायंत्रेत्र्यहंपचेत् ॥ ६९ ॥
धत्तूर[illegible]वभांडेचूर्णप्रपाचयेत् ॥
आदायबन्धयेद्वस्त्रेइष्टिकायंत्रगंपचेत् ॥ ७० ॥

जम्बीरैर्गंधकंपिष्ट्वाअधऊर्द्धेप्रदापयेत् ।
तुल्यंतुल्यंपुनर्देयंरुद्ध्वालघुपुटेपचेत् ॥ ७१ ॥
शतधागंधकेजीर्णेतदुद्धृत्यविचूर्णयेत् ।
लौहभस्मसमांशंचदत्त्वामर्द्यंद्रवैर्दिनम् ॥ ७२ ॥
कण्टकार्य्याबृहत्याश्चतथाग्नीनांद्रवैरपि ।
प्रतिद्रवैर्दिनंमर्द्यंपुटेत्पंचभिरोपलैः ॥ ७३ ॥
एवंनवपुटंदेयंद्रावेद्रावेत्रिधात्रिधा ।
वह्न्यर्कचिरबिल्वानांद्रवैर्द्वित्रिपुटेपचेत् ॥ ७४ ॥
अन्धमूषागतंपच्यादादायचूर्णयेत्पुनः ।
दशांशेनविषंयोज्यंगुंजामात्रंप्रयोजयेत् ॥ ७५ ॥
कालविध्वंसनोनामरसःपाण्डामयापहः ॥ ७६ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, सोना, रूपा, ताँबा यह सब समानभाग लेकर खरल करे, फिर धूपमें धरके एकदिन जम्भीरी नींबूके रसमें खरल करे, पश्चात् इन सबकी बराबर पारा मिलाकर पिट्टी बनालेवे, फिर धतूरेके फलके बीचमें इस पिट्टी-को रख दोलायंत्रमें तीनदिन पकावे, पश्चात् चूर्णकर धतूरेके रसमें खरलकरके भांड़में रख पकावे, फिर वस्त्रमें बाँधकर इष्टिकायंत्रमें पकावे, पीछे जम्बीरी-नींबूके रसमें गंधकको मर्दनकर मूषाके ऊपर और नीचे रख उसके बीचमें उप-रो[illegible]व्यको रक्खे, तदनन्तर मूषाका मुख बंदकर लघुपुटमें पकावे, जब सौवार गंधक जीर्णहोजावे तब उस मूसामेंसे निकालकर चूर्ण करले, पश्चात् इस चूर्णमें बराबर लोहेकी भस्म मिलाकर कटेरी, कटाई और चीतेके रसमें एक एक दिन खरल करे, फिर पांच उपलोंकी पुटमें पकावे, ऐसी नौपुट देवे, तदनन्तर चीता, आक, करंज, और बेलके पत्तोंके रसमें खरलकर तीन पुट देवे, फिर अंधमूषामें पकावे, पश्चात् मूषामेंसे निकालकर चूर्ण बना लेवै, चूर्णमें दशवां-भाग विष मिला देवे । मात्रा १ एक रत्तीकीहै । यह कालविध्वंसन रस–पाण्डु-रोगको नष्ट करैहै ॥ ६८–७६ ॥

अथ त्रिनेत्राख्यो रसः ।

टंकणंजारितंस्वर्णंशुल्बंशंखं[illegible]तंरसम् ।
दिनैकंचार्द्रकद्र[illegible]द्ध्वापुटेपचेत् ॥ ७७ ॥

त्रिनेत्राख्योरसोनामअसाध्यंश्वयथुंजयेत् ।
शूलगुल्ममथार्शांसिनाशयत्याशुदेहिनाम् ॥ ७८ ॥

अर्थ–भुनाहुवा सुहागा, सोना, ताँबा, शंख और मराहुवा पारा इन सबको समानभाग लेकर एकदिन अदरखके रसमें खरलकर पुटपाक करे तो त्रिनेत्राख्यरस सिद्धहो, यह रस–असाध्य शोथ, शूल, गुल्म और बवासीरको दूर करेहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथ ग्रन्थान्तरोक्ता कामलाहलीमकयोश्चिकित्सा ।

निशागैरिकधात्रीभिरंजनंकामलापहम् ।
अपामार्गशमीमूलंपिष्ट्वातक्रेणपाचयेत् ॥ ७९ ॥
कामलांश्वयथुंपांडुंकर्षमात्रंनिहन्त्यलम् ।
शिलाजतुसगोमूत्रंमंडूरंवाथमाक्षिकम् ॥ ८० ॥
सुलोहभस्मनिष्कंवासेवयेत्कुम्भकामली ॥ ८१ ॥
अंकोटमूलमर्कमूलंवातंडुलोदकेनपिष्ट्वानस्यंदेयं
कामलानश्यति । घोषफलेनवा । देवदाल्युदकं
रात्रौकार्य्यंप्रभातेनस्यंतत्कामलांहरति ।
कुमारीकंदकंपिष्ट्वानस्यंशीतलवारिणा ।
एवंसप्तदिनंकार्य्यंकामलांहन्तिदुस्तराम् ॥ ८२ ॥

अर्थ–हलदी,गेरू और आमला इनतीनोंका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे कामला रोग दूर होताहै । चिरचिटेकी जड और शमीकी जडको तक्रमें पीसकर पीनेसे कामला, सूजन और पांडुरोग नष्ट होताहै, इसकी मात्रा दोतोलेकी है । शिलाजीतको गोमूत्रके साथ, अथवा मंडूरको सहतके साथ वा लोहेके चार मासे भस्मको सेवनकरनेसे कुम्भकामलारोग दूर होताहै । अंकोलकी जडको अथवा आककी जडको चावलोंके जलमें पीसकर नाश लेनेसे कामलारोग शांत होताहै । देवदालीके रसको रात्रिमें रखकर प्रभातके समय नास लेनेसे कामलारोग दूर होताहै । घीकुवारको शीतलजलमें पीसकर सातदिनतक नाश लेनेसे घोरकामला रोग दूर होताहै ॥ ७९–८२ ॥

अथ हरमेखलोक्तकामलारोगापायः ।

विडंगंत्रिफलांव्योषंशुद्धंलोहमलस्यच ।
पुरातनगुडेनात्रलेहयेद्दिनपूर्वकम् ॥ ८३ ॥
श्वयथुंनाशयेत्क्षिप्रंपांडुरोगंहलीमकम् ।
मूलंसंगृह्यकाश्मर्य्याःपिष्टातण्डुलवारिणा ॥ ८४ ॥
पानंतेनोदकेनैवकामलांहन्तिसज्वराम् ॥ ८५ ॥

अपामार्गमूलंतक्रेणपानात्कामलांहन्ति ॥
श्वेतापराजितामूलंमधुदुग्धेनपिष्टापानात्कामलांहन्ति ।
विच्छातीमूलंपूर्वदिक्स्थंशनौनिमंत्र्यरवौआनीयरक्तसूत्रेणशिरसिबंधनाच्छोथकामलांहन्ति । त्रिफलामधुगुडं आर्द्रकरसेनपानाच्छोथकामलांहन्ति ।
गोरोचनाद्रोणपुष्पेणचक्षुरञ्जनात्तथा
विष्णुक्रान्तामूलपानात्सप्ताहेनकामलांहन्ति ॥

अर्थ–वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटा और शुद्ध लोहेका मैल इनको पुराने गुडमें मिलाकर खानेसे–सूजन, पांडु और हलीमकरोग दूर होता है । कुम्भेरकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे ज्वरयुक्त कामलारोग दूर होताहै । चिरचिटेकी जडको तक्रके साथ पीनेसे कामला रोग दूर होताहै । सफेदकोयलकी जडको सहत और दूधमें पीसकर पीनेसे कामलारोग नष्ट होताहै । पूर्वदिशामें स्थित विछाती (वंगभाषामें विछाटी) की जडको शनैश्चरके दिन नोतआवे और रविवारके दिन जाकर उखाडलावे, फिर लालसूतके द्वारा शिरपै बांधे तो सूजनसंयुक्त कामलारोग दूर होजाय । त्रिफला, मधु और गुडको अदरखके रसमें मिला कर सेवनकरनेसे सूजनसहित कामलारोग शांत होताहै । गोरोचन और गूमाको पानीमें पीसकर आंखोंमें लगानेसे कामलारोग आराम होताहै । अथवा कोयलकी जडको सातदिनपर्य्यंत पानीके साथ पीनेसे कामलारोग नाश होताहै ॥ ८३–८५ ॥

अथ पंचास्यरसः ।

मृतसूतार्ककान्ताभ्रतीक्ष्णंतालंसमाक्षिकम् ॥ ८६ ॥
देवदालीद्रवैःपिष्टंदिनैकंतत्समंसमम् ॥ ८७ ॥

पाचयेद्वालुकायंत्रेत्रिदिनान्तेसमुद्धरेत् ।
अमृतोत्पलकन्दातिबलाक्षेत्रफलंयुतम् ॥ ८८ ॥
पिष्टंयष्ट्यम्भसायामंयामंक्षौद्रसितासमम् ।
रसःपंचास्यनामायंसेवयेत्कुम्भकामली ॥ ८९ ॥

अर्थ–पारेकीभस्म, तांबा, कान्तलोहा, अभ्रक, ईस्पात, हरिताल और सोनामाखी इन सबको एकदिन देवदालीके रसमें पीसकर तीन दिन वालुकायंत्रमें पकावे, फिर इसमे गिलोय, कमलकी जड, खिरेंटी और गूगलका चूर्ण मिलाकर मुलेठीके रसमें एकपहर मर्दनकरे, पीछे समानभाग मिश्री और सहत मिलालेवे, इस पंचास्यरसको सेवनकरनेसे–कुम्भकामलारोग दूर होताहै ॥ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

इति पांडुरोगाधिकारसमाप्त ।

अथ रक्तपित्तचिकित्सा ।

नोतिक्रमादौसंग्राह्यंबलिनोऽप्यश्नतश्चयत् ।
हृत्पांडुग्रहणीदोषप्लीहगुल्मज्वरादिकृत् ॥ १ ॥
क्षीणमांसबलंबालंवृद्धंशोथानुबन्धिनम् ।
अवश्यमविरेच्यञ्चस्तम्भनैःसमुपाचरेत् ॥ २ ॥
ऊर्द्ध्वंप्रवृत्तदोषस्यपूर्वंलोहितपित्तिनः ।
अक्षीणबलमांसाग्नेःकर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥ ३ ॥
विनाशुण्ठींपडंगेनदद्याच्चार्द्धश्रृतंजलम् ।
केवलंश्रृतशीतंवादद्यात्तोयंपिपासवे ॥ ४ ॥
ऊर्द्ध्वगेतर्पणंपूर्वंकर्त्तव्यञ्चविरेचनम् ।
प्रागधोगमनेपेयावमनञ्चयथाबलम् ॥ ५ ॥
तर्पणंसघृतंक्षौद्रंलाजचूर्णैःप्रदापयेत् ।
ऊर्द्ध्वगंरक्तपित्तन्तुपीतंकालेव्यपोहति ॥ ६ ॥
जलंखर्जूरमृद्वीकामधुकैःसपरूपकैः ।
श्रृतंशीतंप्रयोक्तव्यंतर्पणार्थंसशर्करम् ॥ ७ ॥

आरग्वधेनधात्र्यावात्रिवृतापथ्ययाथवा ।
[illegible]योक्तव्यंशर्करामाक्षिकोद्भवम् ॥ ८ ॥
त्रिवृतात्रिफलाश्यामापिप्पलीशर्करामधु ।
मोदकःसन्निपातोर्द्ध्वरक्तपित्तज्वरापहः ॥ ९ ॥
वमनंमदनोन्मिश्रंमन्थःसक्षौद्रशर्करः ।
शालियष्टिकनीवारकरदूषप्रशान्तिका ॥ १० ॥
श्यामाकश्चप्रियंगुश्चभोजनंरक्तपित्तिनाम् ।
मसूरमुद्गचणकाःसमकुष्टाढकीफलाः ॥ ११ ॥
प्रशस्तासूपयूषार्थंकल्पितारक्तपित्तिनाम् ।
शाकंपटोलवेताग्रतण्डुलीयादिकंहितम् ॥ १२ ॥
मांसंलावकपोतादिशशैणहरिणादिजम् ।
वृषपत्राणिनिष्पीड्यरसंसमधुशर्करम् ॥ १३ ॥
पिबेत्तेनशमंयातिरक्तपित्तंसुदारुणम् ।
शतपर्व्यारसंक्षौद्रंखण्डश्चैवसमंसमम् ॥ १४ ॥
आज्येनपयसापीतंरक्तपित्तनिबर्हणम् ॥ १५ ॥
वासाकषायोत्पलमृत्प्रियंगुलोध्राञ्जनाम्भोरुहकेशराणि।
पीत्वासिताक्षौद्रयुतानिहन्यात्पित्तासृजोवेगमुदीर्णमाशु १६
प्रक्षेपणार्थंनीलोत्पलादीनांचूर्णानांमधु-
शर्करयोश्चमिलित्वा ४ माषकाः ।
तालीशचूर्णसंयुक्तःपेयःक्षौद्रेणवासकःस्वरसः ।
कफपित्ततमकश्वासस्वरभेदास्रपित्तहरः ।
अभयामधुसंयुक्तादीपनीपाचनीमता ॥ १७ ॥
श्लेष्माणंरक्तपित्तंचहन्तिशूलातिसारनुत् ॥ १८ ॥

अर्थ—रक्तपित्तरोगमें बलवान् मनुष्यकोभी प्रथम तिक्तद्रवोंका सेवन नहीं करावे. कारण यहहै कि तिक्तपदार्थोंके सेवनकरनेसे हृद्रोग, पांडु, संग्रहणी,

प्लीहा, गुल्म और ज्वरादिरोग उत्पन्न होतेहैं । क्षीणमांस, दुर्बल, बालक, वृद्ध और शोथसंयुक्त रक्तपित्तवाले रोगीको कदापि विरेचन (जुल्लाव) नहीं करावे, स्तम्भनक्रियाके द्वारा चिकित्सा करे । बल, मांस और अग्नियुक्त ऊर्ध्वगदोषसंयुक्त रक्तपित्तवाले रोगीको प्रथम लंघन करावे और तृषा लगे तो सोंठके विना अर्द्धशृत षडंगजल देवे, अथवा अर्द्धावशिष्ट पकाया हुवा जलदेवे । ऊर्ध्वगत रक्तपित्तरोगमें प्रथम तर्पण और पश्चात् विरेचन कराना चाहिये । अधोगतरक्तपित्तरोगमें प्रथम पेया और पश्चात् वमन कराना चाहिये । खीलोंका चूर्ण, घृत और सहत मिलाकर बनाया हुवा, अथवा पिंडखजूर, मुलेठी, दाख और फालसा इनके काढेमें बूरा डालकर बनाया हुवा तर्पण, ऊर्ध्वगतरक्तपित्तरोगमें देना चाहिये । अमलतास और आमलेके काढेमें बूरा और सहत डालकर अथवा निसोत, और हरड़के काढेमें बूरा और सहत मिलाकर तैय्यार किया हुवा विरेचन देना चाहिये । निसोत, त्रिफला, कालीमर और पीपल इनके चूर्णमें बूरा और सहत मिला मोदक बनाकर खानेसे सान्निपातिक ऊर्ध्वगतरक्तपित्त और ज्वर नष्ट होताहै । मंथमें मैनफल, सहत और बूराको मिलाकर सेवन करनेसे वमन होकर रक्तपित्त दूर होजाताहै । शालिधान (साठीधान्य), नीवार, कोदों, प्रशान्तिका, समा और कंगनी इनसबका भात, मसूर, मूँग, चने, मोठ, अरहर इनकी दाल वा यूष, परवल, बेंतका अग्रभाग और चौलाई आदि शाक, लवा, कबूतर, खरगोश, हिरन और एणमृगादिका मांस रक्तपित्तरोगमें हितकारीहै । अडूसेके रसमें बूरा और सहत मिलाकर पीनेसे रक्तपित्तरोग शांत होताहै । दूबके रसमें बूरा और सहत डालकर बकरीके दूधके साथ पीनेसे रक्तपित्तरोग शांत होताहै । दूबके रसमें बूरा और सहत डालकर बकरीके दूधके साथ पीनेसे रक्तपित्तरोग दूर होताहै । अडूसेके काढेमें कुमुद, (बघूला) गोरटकीमट्टी, फूलप्रियंगु, लोध, रसोत और कमलकेशरका चूर्ण मिला पश्चात् शर्करा और सहत डालकर पीनेसे रक्तपित्तरोग शमन होताहै । अडूसेका काढा, तालीसपत्रके चूर्णके साथ और मधुके साथ पीनेसे–कफ, पित्त, तमक श्वास, स्वरभेद और रक्तपित्तरोग आराम होताहै । हरडके चूर्णमें सहत मिलाकर खाना–दीपन, पाचन, कफ, रक्तपित्त, शूल और अतिसार निवारकहै ॥ ॥ १–१८ ॥

अथैलादिगुटिका ।

एलापत्रत्वचोद्राक्षाःपिप्पल्यर्द्धपलंतथा ।
सितामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्चपलोन्मिताः ॥ १९ ॥

संचूर्ण्यमधुनायुक्तांगुटिकांकारयेद्भिषक् ।
अक्षमात्रांततश्चैकांभक्षयेन्नादिने दिने ॥ २० ॥
कासंश्वासंज्वरंहिक्कांछर्दिंमूर्च्छांमदंभ्रमम् ।
रक्तनिष्ठीवनंतृष्णांपार्श्वशूलमरोचकम् ॥ २१ ॥
शोषंप्लीहामवातांश्चस्वरभेदंक्षतक्षयम् ।
शोषंप्लीहामवातांश्चस्वरभेदंक्षतक्षयम् ।
गुटिकातर्पणीवृष्यारक्तपित्तञ्चनाशयेत् ॥ २२ ॥

अर्थ—इलायची, तेजपत्र, दालचीनी, दाख और पीपल यह प्रत्येक दो दो तोले, मिश्री, महुवा, खजूर, और किसमिस यह प्रत्येक चार चार तोले लेवे, पीछे सबका चूर्णकर सहत मिलाके दो दो तोलेभरकी गोली बनालेवे, एकगोली रोज खानेसे—खाँसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, वमन, मूर्च्छा, मद, भ्रम, रुधिरका थूकना, तृषा, पार्श्वशूल, अरुचि, शोष, प्लीहा, आमवात, स्वरभेद, क्षतक्षय, और रक्तपित्तरोग विनष्ट होताहै । और यह गोली—तृप्तिकारक और वृष्यहै ॥ १९–२२ ॥

अथ नासादिरुधिरस्तंभनोपायः ।

नासाप्रवृत्तंरुधिरंघृतमृष्टंश्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिवतोयवेगंनिरुणद्धिमूर्ध्निलेपेन ॥ २३ ॥
काञ्जिकेनपिष्टामलकामिति ।
नस्यंदाडिमपुष्पोत्थोरसोदूर्वाभवोथवा ।
आम्रास्थिजःपलाण्डोर्वानासिकास्रुतरक्तजित् ॥ २४ ॥
मेढ्रगेतिप्रवृत्तेतुबस्तिरुत्तरसंज्ञितः ।
शृतंक्षीरंपिबेद्वापिपंचमूल्यातृणाह्वया ॥ २५ ॥
रक्तातिसारिणंकर्म्मरक्तंस्यात्पायुगामिनम् ।
पित्तप्रायेऽधिकंसर्वमेढ्रगेचनियोजयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ—घीमें भुनेहुवे आमलेको काँजीमें बारीक पीसकर मस्तकपै लेपकरनेसे नासिकासे रुधिरका निकलना बंद होजाताहै, जैसे पुलसे जलका वेग बंद होजाताहै । अथवा अनारके फूलकारस, वा दूबकारस, अथवा आमलेकी गुठलीका

रस. या प्याजके रसके द्वारा नास लेनेसे नासिकासे रुधिरका गिरना बंद हो-जाताहै। लिंगसे रुधिर निकलताहै ऐसे रक्तपित्तरोगमें उत्तर बस्तिकर्म्म कराना चाहिये। तृण पंचमूलीको दूधमें औटाकर पनिसे अथवा रक्तातिसारोक्त चिकित्सा करनेसे गुदासे निकलताहुवा रुधिर बंद होजाहै। मेढ़ (लिंग) गत रक्तपित्तरोगमें पित्तनाशक चिकित्सा करनी कहीहै ॥ २३-२६ ॥

अथ शतावरीघृतम्।

शतावर्य्यास्तुमूलानांरसंप्रस्थद्वयंमतम्।
तत्समंचभवेत्क्षीरंघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २७ ॥
जीवकर्षभकौमेदामहामेदास्तथैवच।
काकोलीक्षीरकाकोलीमृद्वीकामधुकस्तथा ॥ २८ ॥
मुद्गपर्णीमाषपर्णीविदारीरक्तचंदनम्।
शर्करामधुसंयुक्तंसिद्धंविस्रावयेद्भिषक् ॥ २९ ॥
रक्तपित्तविकारेषुवातरक्तगदेषुच।
क्षीणशुक्रेषुदातव्यंवाजीकरणमुत्तमम् ॥ ३० ॥
अंगदाहंशिरोदाहंज्वरंपित्तसमुद्भवम्।
योनिशूलंचदाहंचमूत्रकृच्छ्रंचपैत्तिकम् ॥ ३१ ॥
एतान्रोगान्निहन्त्याशुच्छिन्नाभ्राणीवमारुतः।
शतावरीसर्पिरिदं बलवर्णाग्निदीपनम् ॥ ३२ ॥
स्नेहःपादःशृतःकल्कःकल्कवन्मधुशर्करे।
इतिवाक्यबलात्स्नेहप्रक्षेप्यंपादिकंभवेत् ॥ ३३ ॥

अर्थ—शतावरकी जड़का रस ४ सेर, दूध ४ सेर, घी ४ सेर, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, दाख, मुलैठी, मुगवन, मषवन, विदारीकंद और लालचंदन इन सबका कल्क १ सेर सहत और घृत मिलाहुवा सेरभर लेवे, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरे। इस घृतको रक्तपित्त, वातरक्त, और शुक्रकी क्षीणतामें देना चाहिये, यह अत्युत्तम वाजीकरण है। तथा यह घृत अंगदाह, शिरोदाह, पित्तज्वर, योनिशूल, दाह और पित्तोद्भवमू-

त्रकृच्छ्र रोगको दूर करैहै । यह शतावरीघृत बल, वर्ण और अग्निको दीपन करैहै ॥ २७–३३ ॥

अथ बिन्दुसारोक्तोरसः ।

वासादाडिमपुष्पस्यदूर्व्वारससमन्वितः ।
अलक्तकरसोपेतःपथ्यारससमन्वितः ॥ ३४ ॥
योजितोनस्यतःक्षिप्रंत्रिदोषमपिदेहिनाम् ।
नासारक्तप्रवृत्तन्तुहन्यादितिकिमद्भुतम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–अडूसा, अनारका फूल,दूब, लाख और हरड इनसबके रसको मिलाकर नास लेनेसे त्रिदोषसे उत्पन्न हुवा नासागत रक्तपित्त दूर होताहै॥३४–३५॥

अथ बृहद्वासाघृतम् ।

वासकस्वरसेसर्पिःपयसासहपाचयेत् ।
कल्कैर्भूनिम्बकुटजमुस्तयष्टयाह्वचंदनैः ॥ ३६ ॥
उदीच्यमधुकानन्ताशिरीषोशीरपद्मकैः ।
त्रायन्त्युत्पलमूर्वाभिर्मदयन्त्याश्चपल्लवैः ॥ ३७ ॥
सिताक्षौद्रयुतोहन्याद्रक्तपित्तंसुदारुणम् ।
पित्तंकासंचशूलंचस्वरभेदंहलीमकम् ॥ ३८ ॥
रक्तपित्तकफोद्भूतान्रोगानन्यांश्चनाशयेत् ॥ ३९ ॥
स्वरसचतुर्गुणंपयःस्नेहसमम् ।

अर्थ–घृत ४ सेर, अडूसेका रस १६ सेर, दूध ४ सेर, चिरायता, कुडेकी छाल, नागरमोथा, मुलैठी, चंदन, सुगंधवाला, महुवा, अनन्तमूल, सिरस, खस, पद्माख, त्रायमाणा, कमल, मूर्वा, और मोतियाके पत्ते इनसबका मिलाहुवा कल्क सेरभर, बूरा आधसेर,और सहत आधसेर लेवे, पश्चात् इन सबको मिलाकर विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरे । इस घृतको सेवन करनेसे दारुण रक्तपित्त, पित्त, खाँसी, शूल स्वरभेद, हलीमक, रक्तपित्त और कफसे उत्पन्न हुए औरभी रोग विनष्ट होते हैं ॥ ३६–३९ ॥

अथ कामदेवघृतम् ।

अश्वगंधापलशतंतदर्द्धंगोक्षुरस्यच ।
शतावरीविदारीचशालपर्णीबलातथा ॥ ४० ॥

अश्वत्थस्यचशुंगानिपद्मबीजंपुनर्नवा।
काश्मरीफलमेतच्चमाषबीजन्तथैवच ॥ ४१ ॥
पृथग्दशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत्।
चतुर्भागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ॥ ४२ ॥
मृद्वीकापद्मकंकुष्ठंपिप्पलीरक्तचन्दनम्।
बालकंनागपुष्पञ्चशूकशिम्बीफलंतथा ॥ ४३ ॥
नीलोत्पलंशारिवेद्वेजीवनीयंविशेषतः।
पृथक्कर्षसमंचैवशर्करायाःपलद्वयम् ॥ ४४ ॥
रसस्यपौण्ड्रकेक्षूणामाढकेतत्रदापयेत्।
चतुर्गुणेनपयसाघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ४५ ॥
रक्तपित्तक्षतक्षीणकामलावातशोणितम्।
हलीमकंतथाशोथंवर्णभेदंस्वरक्षयम् ॥ ४६ ॥
अरोचकंमूत्रकृच्छ्रंपार्श्वशूलंचनाशयेत्।
एतद्राज्ञांप्रयोक्तव्यंबह्वन्तःपुरचारिणाम् ॥ ४७ ॥
स्त्रीणाञ्चैवह्यपत्यानांदुर्बलानांचदेहिनाम्।
क्लीबानांनष्टशुक्राणांजीर्णानामल्परेतसाम् ॥ ४८ ॥
श्रेष्ठंबल॰रंहृद्यंवृष्यंपेयंरसायनम्।
ओजस्तेजःकरञ्चैवआयुःप्राणविवर्द्धनम् ॥ ४९ ॥
संवर्द्धयतिशुक्रञ्चपुरुषंदुर्बलेन्द्रियम्।
सर्वरोगविनिर्मुक्तस्तोयसिक्तोयथाद्रुमः ॥ ५० ॥
कामदेवइतिख्यातःसर्वर्त्तुषुप्रशस्यते ॥ ५१ ॥

जीवनीयंजीवनीयदशकम्।

अर्थ—असगंध १०० पल, गोखुरू ५० पल, शतावर, विदारीकंद, शरिवन, खिरैटी, पीपलकी कोपल, कमलगट्टा, पुनर्नवा, कुम्भेरका फल और मापबीज यह प्रत्येक ४० तोले भर ले पश्चात् इनसबको ४ द्रोण अर्थात् १२८ सेर जलमें

पकावे जब जलकर चौथाभाग बाकी रहे तब उतार ले, फिर इसमें दाख, पद्माख, कूठ, पीपल, लालचंदन, सुगंधबाला, नागकेशर, कौंछके बीज, नीलोत्पल (जिसके अभावमें "नीलोफर" गेरतेहैं) शारिवा (गौरसिर, गौरियावासाऊ इं०सालशापरेला) श्यामलता कालीसर, करियावासाऊ, अनन्तमूल, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुँगवन, मषवन यह प्रत्येक एक २ तोले, बूरा आठ ८ तोले, पुंड्रकईखकारस ८ सेर, दूध ८ सेर डाले, तदनन्तर इन सबमें दो २ सेर घी डाल अच्छेप्रकार घृतको सिद्धकरे । यह घृत–रक्तपित, क्षतक्षीण, कामला, वातरक्त,हलीमक,सूजन, वर्णभेद, स्वरक्षय, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र और पार्श्वशूल (पसलियोंमें दर्द) को नष्ट करैहै । और यह राजाओंके सेवने योग्यहै । तथा वंध्यास्त्री, दुर्बलमनुष्य, नपुंसक, नष्टशुक्रवाले, वृद्ध और अल्पवीर्य्यवाले मनुष्योंको अत्यन्त हितकारीहै, बलकारक, हृदयको हितकारी है वीर्य्यवर्द्धक, रसायन, ओजजनक, तेजवर्द्धक, आयु और प्राणवर्द्धक, और दुर्बलइन्द्रियोंवाले पुरुषको पुष्टिकारक और सर्वरोगनाशकहै । यह कामदेवघृत–सर्वऋतुओंमें सेवन करना श्रेष्ठहै ॥ ४०–५१ ॥

अथ खण्डकूष्माण्डः ।

कूष्माण्डकात्पलशतंसुस्विन्नंनिष्कुलीकृतम् ।
पचेत्तप्तेघृतप्रस्थेशनैस्ताम्रमयेदृढे ॥ ५२ ॥
यदामधुनिभःपाकस्तदाखण्डशतंन्यसेत् ।
पिप्पलीशृंगवेराभ्यांद्विपलेजीरकस्यच ॥ ५३ ॥
त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानांपलार्द्धकम् ।
न्यसेच्चूर्णीकृतंतत्रदर्व्यासंघट्टयेत्ततः ॥ ५४ ॥
तत्पक्वंस्थापयेद्भाण्डेदत्त्वाक्षौद्रंघृतार्द्धकम् ।
तद्यथाग्निबलंखादेद्रक्तपित्तीक्षतक्षयी ॥ ५५ ॥
कासश्वासतमश्छर्दितृष्णाज्वरनिपीडितः ।
वृष्यंपुनर्नवकरंबलवर्णप्रसादनम् ॥ ५६ ॥
उरःसन्धानकृद्बल्यंबृंहणंस्वरशोधनम् ।
अश्विभ्यांनिर्मितंसिद्धंकूष्माण्डकरसायनम् ॥ ५७ ॥

खण्डामलकमानानुसारात्कूष्माण्डकद्रवात् ।
पात्रंपाकायदातव्यंयावानत्ररसोभवेत् ॥ ५८ ॥
अत्रापिमुद्रयापाकोनिस्त्वचंनिष्कुलीकृतम् ॥ ५९ ॥

अर्थ—प्रथम पेठेको लेकर उबाल लेवे फिर उसको छीलकर टुकडे कर लेवे, वह टुकडे तोलमें १०० पललेवे, पश्चात् उत्तम तांबेके बरतनमें ६४ तोले घृतको डालकर चूलेपै चढादेवे, जब घी खूब गरम होजाय तब उसमें वह पेठेके टुकडे गेरदेवे, फिर धीरे धीरे पकावे, जब वह पकने २ सहतकी समान होजाय तब उसमें १००फल बूरा मिला देवे, पश्चात् पीपल, सोंठ, और जीरा यह प्रत्येक आठ तोले, दालचीनी, इलायची, कालीमिरच, और धनियाँ यह प्रत्येक दो २ तोले लेवे, इन सबका चूर्ण कर मिलादेवे, करछी चलातारहे, जब भले प्रकारसे पकजावे तब उत्तमपात्रमें करके ३२ तोले सहत मिलादेवे, इसको अग्निका बलाबल विचारकर भक्षणकरे । यह रक्तपित्त, क्षतक्षय, खाँसी, श्वास, तम, वमन, तृषा और ज्वरसे पीडित मनुष्योंको सेवन करना चाहिये । वृष्य, शरीरको फिरसे नवीन करनेवाला, बलकारक, वर्णको प्रसन्न करनेवाला, फटीहुई छातीको जोड़नेवाला पुष्टिकारक, स्वरशोधक यह कूष्मांडरसायन श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने निर्माण की है, इसको खण्डकूष्माण्ड कहतेहैं ॥ ५२–५९ ॥

अथ वासाखण्डकूष्माण्डः ।

पञ्चाशच्चपलंस्विन्नंकूष्माण्डात्प्रस्थमाज्यतः ।
ग्राह्यंपलशतंखंडंवासाक्काथाढकेपचेत् ॥ ६० ॥
मुस्ताधात्रीशुभा[1]भार्ङ्गीत्रिसुगन्धैश्चकार्षिकैः ।
ऐलेय[2]विश्वधन्याकमरिचैश्चपलांशिकैः ॥ ६१ ॥
पिप्पलीकुडवञ्चैवमधुनार्नोप्रदापयेत् ।
कासंश्वासंक्षयंहिक्कांरक्तपित्तंहलीमकम् ॥ ६२ ॥
हृद्रोगमम्लपित्तञ्चपीनसंचव्यपोहति ॥ ६३ ॥
कूष्माण्डरसोऽत्रदेयः ॥

अर्थ—प्रथम पेठेको उबालकर छीललेवे, फिर चक्रसे बनाकर टुकडे करलेवे, ऐसे टुकडे २०० पल घृत ६४ तोले, बूरा १०० पल, पेठकारस २५६ तोले,

१ शुभा वंशलोचना । २ ऐलेयकमेलवालुकम् ।

अडूसेका क्वाथ २५६ तोले लेवे, पश्चात् इन सबको विधिपूर्वक मिलाकर पकावे, फिर नागरमोथा, आमला, वंशलोचन, भारंगी, तेजपात, इलायची, दालचीनी, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवे, एलुआ, सोंठ, धनियाँ, कालीमिरच यह प्रत्येक चार तोले, पीपल १६ तोले लेवे, फिर इनसबका चूर्णकर मिलादेवे और सहत ३२ तोले मिलादेवे, यह खाँसी, श्वास, क्षय, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त, और पीनसरोगको दूर करै है ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३॥

अथ मृगजरसः ।

मृतंसूतंमृतंतीक्ष्णंतुल्यवासाद्रवैर्दिनम् ।
मर्दितंमासमात्रन्तुभक्षयेन्मृगजंरसम् ॥ ६४ ॥
सर्पाक्षीमधुनालेह्याअनुस्याद्रक्तपित्तके ॥ ६५ ॥

अर्थ—पारेकी भस्म और ईस्पातकी भस्मको समानभाग लेकर अडूसेके रसमें एकदिन खरल करै । एक मासाभर खानेसे रक्तपित्तरोग दूर होताहै और इसके ऊपर सर्पाक्षीकी जड़को सहतके साथ भक्षणकरे, यह अनुपानहै ॥६४ ॥६५॥

अथ रक्तपित्तहरोपायाः ।

नीलोत्पलंशिलाक्षौद्रंतुल्यांशंपद्मकेशरम् ।
तण्डुलोदकपानेनरक्तपित्तहरम्भवेत् ॥ ६६ ॥
शृंगाटकस्यमज्जायाःपलैकंशीतवारिणा ।
पीतंवाथगवांक्षीरैरक्तपित्तरुजापहम् ॥ ६७ ॥
नवनीतंसितालाजाद्राक्षयासहभक्षयेत् ।
मुस्तकेनघृतंदद्याद्रक्तपित्तहरंपरम् ॥ ६८ ॥
द्राक्षावासायुतंक्वाथंपिबेच्चशर्करान्वितम् ।
वासारसंसिताक्षौद्रैर्वासावाशर्करासमा ॥ ६९ ॥
भक्षयेद्रक्तपित्तार्त्तस्तृष्णादाहज्वरंहरेत् ।
धात्रीचूर्णंसितातुल्यंभक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ ७० ॥
काकमाचीरसंक्वाथ्यंक्षीरैश्चतुर्गुणेनतत् ।
पिबेन्मधुसिताभ्यांचद्वन्द्वोत्थंरक्तपित्तनुत् ॥ ७१ ॥

अर्थ–नीलोत्पल (फा० नीलोफर), मैनशिल, कमलकेशर और सहत इन सबको समानभागलेकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे–रक्तपित्तरोग दूर होता है । चारतोले सिंघाडेकी मींगको लेकर शीतलजलके साथ अथवा गायके दूधके साथ पीवे तो–रक्तपित्तरोग नाश होय । नवनीत (माखन), मिश्री, खील और दाख इन सबका एकत्र चूर्णकर खानेसे, अथवा नागरमोथेके चूर्णको घृतके साथ मिलाकर चाटनेसे, तथा दाख और अडूसेके काथमें बूरा मिलाकर पीनेसे, वा विसोटेके रसमें सहत और मिश्री डालकर पीनेसे, अथवा अडूसेके रसमें बराबरकी बूरा मिलाकरपीनेसे–रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर दूर होता है । आमलेके चूर्णमें बराबरकी मिश्री मिलाकर खानेसे रक्तपित्त नष्ट होताहै । सोंठके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसे–कफोत्पन्न रक्तपित्तरोग दूर होता है । मकोयके रसको चौगुने दूधमें औटाकर सहत और मिश्री मिलाके पीनेसे दो दोषोंसे उत्पन्नहुआ रक्तपित्तरोग दूर होना है ॥ ६६–७१ ॥

अथ कपर्दकरसः ।

मृतंवामूर्च्छितंसूतंकार्पासपुष्पजैर्द्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तुतेनपूर्य्यावराटिका ॥ ७२ ॥
निरुध्यचान्धमूषायांभांडेरुद्धापुटेपचेत् ।
उद्धृत्यचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंमरिचैर्द्विगुणैःसह ॥ ७३ ॥
गुञ्जैकैकंघृतैर्लेह्यंरक्तपित्तंनियच्छति ।
कपर्दकरसोनामसाध्यंचसाधयत्यलम् ॥ ७४ ॥
उदुम्बरफलंपक्वंघृतैःपाच्यंसितायुतम् ।
भक्षयेन्मरिचैर्युक्तमनुस्याद्रक्तपित्तनुत् ॥ ७५ ॥

अर्थ–मृत वा मूर्च्छित पारेको कपासके फूलोंके रसमें एकदिन खरल करके फिर कौडीमें भरदेवे, और कौडीका मुख बंदकर देवे, पश्चात् अंधमूषामें रख गजपुटमें फूँक देवे, जब अपने आप शीतल होजावे तब निकालकर दुगुनी कालीमिरचोंके साथ पीसलेवे । एक गुंजाभर इसको घीके साथ चाटनेसे–रक्तपित्त रोग दूर होताहै । यह कपर्दकरस असाध्यरक्तपित्तरोगको भी साधताहै । इसपै पके हुए गूलरोंको घी और बूरामें पकाकर फिर कालीमिरचोंको चूर्ण मिलाके भक्षण करै, यह अनुपानहै ॥ ७२–७५ ॥

अथ माहेश्वरघृतम् ।

वासानिम्बपटोलंचत्रायमाणादुरालभा ।
धातकीपर्पटंमुस्तमुशीरंकटुरोहिणी ॥ ७६ ॥
निशादारुनिशातुल्यंतोयैर्दशगुणंपचेत् ।
पादशेषेहरेत्क्वाथंगोघृतंक्वाथपादकम् ॥ ७७ ॥
त्रिफलात्रिकटुनिम्बंचन्दनञ्चपलोन्मितम् ।
कल्कंतंनिक्षिपेत्तत्रघृतशेषंविपाचयेत् ॥ ७८ ॥
घृतंमाहेश्वरंनामरक्तपित्तहरंपिबेत् ॥ ७९ ॥

अर्थ-अडूसा, नीम, परवल, त्रायमाणा, जवासा, धायकेफूल, पित्तपापडा, नागरमोथा, खस, कुटकी, हलदी और दारुहलदी यह सब समान भाग लेकर दशगुने पानीमें पकावे, जब पकते २ चौथाभाग शेषरहजाय तब क्वाथसे चौथा भाग गायका घी, त्रिफला, त्रिकुटा, नीम और चंदन इन सबका कल्क चार चार तोले मिलाकर घृतको सिद्धकरे । यह माहेश्वर घृत-रक्तपित्तनाशक है ॥ ७६-७९ ॥

अथ समशर्करलोहम् ।

लोहाच्चतुर्गुणंक्षीरमाज्यंद्विगुणमुत्तमम् ।
चूर्णपादन्तुवैडंगंदद्यान्मधुसितेसमे ॥ ८० ॥
ताम्रपात्रेशुभेपक्त्वास्थापयेद्घृतभाजने ।
माषकादिक्रमेणैवभक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ८१ ॥
अनुपानंप्रयुंजीतनारिकेलजलादिकम् ।
रक्तपित्तंजयेत्तीव्रमम्लपित्तंक्षतक्षयम् ॥ ८२ ॥
पुष्टिदंकान्तिजननमायुष्यंवृष्यमुत्तमम् ॥ ८३ ॥

अर्थ-एकभाग लोहा, चारभाग दूध, दोभाग घी, लोहेसे चौथा भाग बायबिडंगका चूरन लेवे, पहिले लोहेकी भस्म, दूध और घृतको तांबेके बरतनमें पकाकर फिर बायविडंगका चूरन मिलादेवे, शीतल होजाय तब समान भाग सहत और मिश्री मिलाकर घीके बरतनमें भरकेधर देवे, क्रमसे माषादि बढाकर विधिपूर्वक सेवन करे । और ऊपरसे नारियलका जल पीवे, यह-तीव्र रक्त-

पित्त, अम्लपित्त, क्षतक्षय, इनको दूरकरे, पुष्टिको करे, कान्तिजनक, आयुवर्द्धक, और वीर्य्यवर्द्धक है ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

अथ खण्डखाद्यलोहम् ।

शतावरीछिन्नरुहावृषमुण्डतिकाबला ।
तालमूलीचगायत्रीत्रिफलायास्त्वचातथा ॥ ८४ ॥
भार्ङ्गीपुष्करमूलन्तुपृथक्पंचपलानिच ।
जलेद्रोणेविपक्तव्यमष्टभागावशेषितम् ॥ ८५ ॥
दिव्यौषधिहतस्यापिमाक्षिकेणहतस्यवा ।
पलद्वादशकन्देयंरुक्मलोहस्यचूर्णितम् ॥ ८६ ॥
खंडतुल्यंघृतंदेयंपलषोडशिकंबुधैः ।
पचेत्ताम्रमयेपात्रेगुडपाकोयथामतः ॥ ८७ ॥
प्रस्थार्द्धंमधुनोदेयंशुभाश्मजतुकंत्वचम् ।
शृंगीविडंगकृष्णेचशुण्ठ्यजाजीपलंपलम् ॥ ८८ ॥
त्रिफलाधान्यकंपत्रंत्र्यक्षंमरिचकेशरम् ।
चूर्णंदत्त्वासुमथितंस्निग्धभाण्डेनिधापयेत् ॥ ८९ ॥
यथाकालंप्रयुंजीतबिडालपदकन्तुतत् ।
गवांक्षीरानुपानंचसेव्यंमांसरसंपयः ॥ ९० ॥
गुरुवृष्यानुपानानिस्निग्धमांसादिभोजनम् ।
रक्तपित्तंक्षयंकासंपक्तिशूलंविशेषतः ॥ ९१ ॥
वातरक्तंप्रमेहश्चशीतपित्तंवमिंक्रमीन् ।
श्वयथुंपाण्डुरोगश्चकुष्ठंप्लीहोदरंतथा ॥ ९२ ॥
आनाहंरक्तसंस्रावमम्लपित्तंनियच्छति ।
चक्षुष्यंबृंहणंवृष्यंमांगल्यंप्रीतिवर्द्धनम् ॥ ९३ ॥
आरोग्यपुष्टिदंश्रेष्ठंकामाग्निबलवर्द्धनम् ।
श्रीकरंलाघवकरंखण्डखाद्यंप्रकीर्त्तितम् ॥

छागंपारावतंमांसंतित्तिरिःक्ककराःशशाः ॥ ९४ ॥
कुरंगाःकृष्णसाराश्चतेषांमांसानियोजयेत् ।
नारिकेलपयःपानंसुनिषण्णकवास्तुकम् ॥ ९५ ॥
शुष्कमूलकबीजाख्यंपटोलंबृहतीफलम् ।
फलंवार्त्ताकुपक्काम्रंखर्ज्जूरंस्वादुदाडिमम् ॥ ९६ ॥
ककारपूर्वकंयच्चमांसञ्चानूपसम्भवम् ।
वर्जनीयंविशेषेणखण्डखाद्यंप्रकुर्वता ॥ ९७ ॥
दिव्यौषधिर्मनःशिलाजीवाख्यंशाकंमारिपम् ।
एतच्चपूर्वंयुक्तिप्रयोगादिदानीन्तुत्रिचतुः—
पंचरक्तिकाद्यारभ्यरक्तिवृद्धचलोहान्तरवत् ।

अर्थ—शतावर, गिलोय, अडूसा, गोरखमुंडी, खिरैंटी, मुशली, खैर, त्रिफला. भारंगी, पोहकरमूल, यह प्रत्येक २० बीस बीस तोले लेकर ३२ सेर जलमें पका जब आठवाँ भाग काढा शेष रहे तब मैनशिलसे अथवा सोनामाखीसे माग-हुआ तीक्ष्णलोहा ४८ तोले खांड ६४ तोले, घृत ६४ तोले लेवे, फिर सबको मिलाकर तांबेके बासनमें, जिसप्रकार गुडका पाक बनताहै उसीप्रकार इसको पकावे, शीतलहोनेपर ३२ तोले सहत मिलावे और वंशलोचन, शिलाजीत, दाल-चीनी, काकडासिंगी, वायविडंग, पीपल, सोंठ, और जीरा प्रत्येक चार चार तोले, त्रिफला, धनियाँ, तेजपात, कालीमिरच और नागकेशर प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबका चूर्णकर मिलादेवे. और चिकने बासनमें भरके रखदेवे. इसको एक तोलेभर भक्षणकरै, और ऊपरसे गायका दूध पीवे, तथा मांसका रस (सोरुआ) दूध, भारीपदार्थ. वृष्यपदार्थ, स्निग्ध पदार्थ. और मांसादिका भोजन करे। यह—रक्तपित्त. क्षय, खाँसी, पक्तिशूल, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन. कृमि, सूजन पांडुरोग, कोढ. प्लीहा उदररोग. आनाह, रक्तसंस्राव और अम्लपित्तको दूर करैहै । नेत्रोंको हितकारी, पुष्टिकारक. वीर्य्यवर्द्धक मंगलजनक. प्रीतिवर्धक. आरोग्यदायक, पुष्टिजनक, श्रेष्ठ, कामाग्नि और बलवर्द्धक, लक्ष्मीकारक और लघुताकारकहै । इसको खंडखाद्य कहतेहैं । इसपै बकरा, परेवा तीतर, कुक्कर. शशक, कुरंग, और कृष्णसारादि जीवोंका मांस खाना चाहिये और नारियलकादूध, शिरिआरीशाक. बथुआ. सूखी मूलीके बीज, परवल, बृहतीके फल,

बैंगन. पक्के आम, खजूर, मीठा अनार, और जिन शाकोंके आदिमें ककारहै वह सब, और अनूपदेशमें होनेवाले जीवोंका मांस यह सब. खंडखाद्य सेवनकरनेवाला त्याग देवे ॥ ८४–९७ ॥

अथामृताख्यलोहम् ।

अमृतात्रिवृतादंतीश्रावणीखदिरीवृषम् ।
चित्रकोभृंगराजश्चकोकिलाक्षःसपुष्करः ॥ ९८ ॥
पुनर्नवाबलाकाशशिग्रुमोरटदारका[1]: ।
गवाक्षीवरुणैःकन्दश्चविकातालमूलिका ॥
नागबलाकणामूलंकुष्ठंब्राह्मणयष्टिका ।
पलोन्मितानिचैतानिजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ९९ ॥
अष्टभागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ।
त्रिफलायास्तथाप्रस्थंजलाष्टगुणपाचितम् ॥ १०० ॥
तस्मादष्टावशेषन्तुकषायंसुपरिस्रुतम् ।
माक्षिकेणहतस्यापिपुटितस्ययथाविधि ॥ १०१ ॥
अयसश्चूर्णितंपूतंपलषोडशसम्मितम् ।
पलान्यभ्रस्यचत्वारितावन्तिगंधकस्यच ॥ १०२ ॥
द्वेद्वेपलेरसस्यापिखल्लितस्यविधानतः ।
गुडस्यचपलान्यष्टौसितायाश्चाथपैत्तिके ॥ १०३ ॥
रक्तपित्तेतुखंडेनमत्स्यण्डीवापिकासके ।
गुग्गुलोर्द्विपलंदत्त्वाप्रस्थमेकन्तुसर्पिषः ॥ १०४ ॥
एवंपाकविधिज्ञस्तुपचेल्लोहंसमाहितः ।

१ दारकोवृद्धदारकः । गवाक्षी गोरक्षकर्कटी नागबलागोरक्षतंडुला कुष्ठपुष्कराभ्यां काण्ड-ग्रन्थिभेदेनग्रहणम् । अथवाभागद्वयग्रहणमेवम् । माक्षिकस्यहतस्यनिरुत्थमारितस्येत्यर्थः । पुटितस्यसामान्यविशेषपुटितस्य । पलान्यभ्रस्येत्यत्रापिपुटितस्येतिसम्बध्यते । तेनप्रथमपरिच्छे-दोक्तक्रमेणरसायनाधिकारेवक्ष्यमाणवृहदमृतसारप्रोक्तलोहाभ्रसमभिहितविधिनैव वा चूर्णितपुटि-तस्येत्यर्थः । तावन्ति गंधकस्येतिचत्वारि पलानीत्यर्थः ।

शीतेवताय्यँमधुनःक्षिपेदष्टपलंभिषक् ॥ १०५ ॥
माक्षिकस्यविशुद्धस्यद्विपलंरजसःक्षिपेत् ।
शिलाजतुतथाचूर्णंपलार्द्धंसम्मितंभिषक् ॥ १०६ ॥
तथैषांप्रक्षिपेच्चूर्णंपलमात्रंपृथक्पृथक् ।
एषलोहवरःश्रीमान्सर्वव्याधिप्रणाशनः ॥ १०७ ॥
यत्रयत्रप्रयुज्येततत्तदाशुविनाशयेत् ।
रक्तपित्तेह्यम्लपित्तेक्षयेकुष्टेज्वरेऽरुचौ ॥ १०८ ॥
दुर्नाम्निचोदरेशूलेग्रहण्यामामवातके ।
वातरक्तेमूत्रकृच्छ्रेप्रमेहेशर्करागदे ॥ १०९ ॥
अस्योपयोगान्मनुजस्तारुण्यमधिगच्छति ।
ब्रह्मचर्य्येणकुर्वीतघृतंमाक्षिकसर्पिषा ॥ ११० ॥
मानकंरक्तिकारभ्ययावदष्टौचमापकान् ।
संवर्ज्यवैदलंसूपंमांसञ्चानूपसम्भवम् ॥ १११ ॥
ककारपूर्वकंसर्वंयत्नेनपरिवर्जयेत् ।
अमृताख्योवरोलोहःसर्वत्रैवोपयुज्यते ॥ ११२ ॥
अनेनसर्वथास्वस्थाजन्तवःसन्तिनान्यथा ॥ ११३ ॥

इतिरक्तपित्ताध्यायः ।

अथ प्रसंगतो गंधकशुद्धिविधिः ।

गंधकन्तुसमानीयनवनीतामलच्छवि ।
तत्सर्पिषिविपक्कव्यंयावत्तैलनिभंभवेत् ॥ १ ॥
वस्त्रेणान्तारितंकृत्वाढालयेत्त्रिफलाम्भसि ।
एवंगंधाश्मसंशुद्धंतत्तत्कर्म्मसुयोजयेत् ॥ २ ॥

अथरसस्येतिपारदरसस्यपलद्वयं खल्लितस्यमूर्च्छितस्ये-
त्यर्थः । मूर्च्छनंखल्वशिलादिष्वौषधचूर्णरसंवादत्त्वा

विमर्द्योनिर्मलीकरणमभिधीयते । तत्रतावत्पारदेसिद्ध-
दोषत्रयनिवारणार्थंत्रिभिर्द्रवैःप्रत्येकंसप्तधामूर्च्छनंकार्य्यं
तदुक्तंरसहृदये । मलशिखिविषनामानोरसस्यनैसर्गि-
कास्त्रयोदोषाः ।

मूर्च्छांमलेनकुरुतेशिखिनादाहंविषेणमरणंहि ।
ग्रहकन्याहरतिमलंत्रिफलावह्निश्चचित्रकंचविषम् ॥ ३ ॥
तस्मादेभिर्वारान्संमूर्च्छयेत्सप्तसप्तैवेति ।
अत्रग्रहकन्याघृतकुमारी तथायोगरत्नाकरेऽप्युक्तम् ।
इष्टकाराजिकापटुनागारधुमालम्बुपकिण्वगुडार्द्रकैः ॥४॥
इष्टकादिरयंख्यातःसूतदोषहरोगणःइति ॥
एतैरितियथासम्भवंयथायोगंचमूर्च्छनंकार्यम् । अत्र
पटुलवणम् । अलम्बुपःकुलाहलःकिण्वंसुराबीजम् ।
तच्चउत्तमजात्यादिषुनप्रयोज्यंतस्यचरसस्यमूर्च्छितमात्र-
त्वात्पाकसमाप्तौप्रवेशः ।

तदुक्तंयोगरत्नाकरे ।

मूर्च्छितोयदिसूतःस्यात्क्षिपेत्पाकोत्तरन्तदा-

एतदुक्तमेवप्रथमपरिच्छेदे ।

माक्षिकस्यविशुद्धस्येतिस्वरूपतःशोधिततयाज्ञेयम् ।

तदुक्तंयोगरत्नाकरे ।

भंगेसुवर्णसंकाशोमनाक्कृष्णच्छविर्बहिः ।
बृहद्वर्णइतिख्यातोमाक्षिकोत्रप्रशस्यते इति ।

उक्तश्चान्यत्रशोधनमस्य ।

कालमारिपशालिंचक्काथेदोलाविधानतः ॥
तदधःपतितंग्राह्यमेवंशुद्ध्यतिमाक्षिकम् ॥

इत्यादिप्रथमपरिच्छेदेप्रोक्तम् । एषांचस्वर्णमाक्षिकशिला-जतुचूर्णादीनांलोहपाकसमाप्तौविश्राम्यमनाक्तत्तत्त्व-दशायांप्रक्षेपः ।

तदुक्तं योगरत्नाकरसमुच्चये ।

अवतार्य्यथयदादर्व्यापरिघट्टचपुनःपुनः ।
यदापाणिसहोभूतोनिक्षिपेदौषधन्तदेति ॥ ९ ॥
तावत्तच्छुतमितिवस्त्रच्छानितमित्यर्थः ।
चित्रकान्तचूर्णानिप्रत्येकंपलमात्राणि ।
चातुर्जातकादीनांप्रत्येकमर्द्धपलसम्मितत्वम् ।
व्यक्तमन्यत् ।

अर्थ–गिलोय, निसोत, दंती, गोरखमुंडी, खैर, अडूसा, चीता, भांगरा, तालमखाना, पोहकरमूल, पुनर्नवा, खिरैटी, काँस, सँजिना, अंकोलकेफूल, विधारा, इन्द्रायन, बरना, कमलकंद, चव्य, मुसली, गंगेरन, पीपरामूल, कूट, भारंगी, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर ३२ सेर जलमें पकावे, जब आठवां भाग अर्थात् ४ सेर शेष रह जाय तब उतारले फिर त्रिफलेको आठगुने जलमें पकावे जब आठवाँ भाग शेषरहै तब उतारकर पूर्वोक्तमें मिलादेवे, तदनन्तर सोनामाखीसे माराहुवा और अच्छेप्रकारसे पुटित किया लोहेका चूरन १६ पल लेवे, अभ्रक १६ तोले, गंधक १६ तोले शुद्धपारा आठ ८ तोले. गुड ८ पल, जो पित्तकी अधिकता हो तो बूरा मिलावे, रक्तपित्तके लिये इसमें खांड मिलावे, खाँसीकेलिये मिश्री. गूगल ८ तोले, घी ६४ तोले इनसबको मिलाकर विधिपूर्वक पाककरे, शीतल होनेपर ३२ तोले सहत, शुद्धसोनामाखीका चूर्ण ८ तोले, शिलाजीत दो२तोले मिलावे, चीतादि औषधियोंका चूर्ण चार २ तोले और दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशरादिका चूर्ण दो २ तोले मिलावे, तो अमृताख्य लोह बने । यह सर्वलोहोंमें उत्तम और सर्वरोगनाशकहै । जिस २ रोगपर इसको देवे उसी उसी रोगको दूर करे, रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षय, कुष्ठ, ज्वर, अरुचि, बवासीर, उदररोग, शूल, संग्रहणी, आमवात, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह और शर्करारोगको हरैहै, इसको सेवनकरनेसे मनुष्य तरुण होजाताहै । इसको सेवनकरनेवाला ब्रह्मचर्य्यसे रहै । इसलोहेको घृत और सहतके साथ

सेवनकरे । इसकी एकरत्तीसे लेकर आठमासे पर्य्यंत परम मात्राहै । इसपै विदल अन्न, दाल, आनूपदेशमें उत्पन्नहोनेवाले जीवोंका मांस तथा ककार जिनके आदिमेंहै ऐसे सबपदार्थ छोडदेवे, यह अमृताख्यलोह सर्वयोगोंमें प्रयोगकरना योग्यहै, इससे मनुष्य रोगहीन होजातेहैं ॥ १--५ ॥

इति रक्तपित्ताधिकारः समाप्तः ।

अथ रोगराजचिकित्सा ।

अनेकरोगानुगतोबहुरोगपुरःसरः ।
दुर्विज्ञेयोदुर्निवारःशोषोव्याधिर्महाबलः ॥ १ ॥
सुशोषणाद्रसादीनांशोषइत्यभिधीयते ।
क्रियाक्षयकरत्वाच्चक्षयइत्युच्यतेबुधैः ॥ २ ॥
राज्ञश्चन्द्रमसोयस्मादभूदेषकिलामयः ।
तस्मात्तंराजयक्ष्मेतिकेचिदाहुर्मनीषिणः ॥ ३ ॥
शुक्रायत्तंबलंपुंसांमलायत्तञ्चजीवनम् ।
तस्माद्यत्नेनसंरक्षेद्यक्ष्मिणोमलरेतसी ॥ ४ ॥
नित्यंस्वदेहपूजीभक्तोभैषज्यदेवतागुरुषु ।
छागलमांसप्राशीजीवतियक्ष्मीपरंधृतिकृत् ॥ ५ ॥
बलिनोबहुदोषस्यपंचकर्म्माणिकारयेत् ।
यक्ष्मिणःक्षीणदोषस्यकृतंतत्स्याद्विषोपमम् ॥ ६ ॥
दोषाधिकानांवमनंशस्यतेसविरेचनम् ।
स्नेहस्वेदोपपन्नानांसस्नेहंयत्त्वकर्षणम् ॥ ७ ॥
कर्षणंदौर्बल्यकरंशुद्धकोष्ठस्ययुञ्जीत । विधिवद्बृंहणंदीपनम् ।
शालिषष्टिकगोधूमयवमुद्गादयःशुभाः ।
मद्यानिजांगलाःपक्षिमृगाःशस्ताविशुष्यतः ॥ ८ ॥
शुष्यतांक्षीणमांसानांकल्पितानिविधानवित् ।
दद्यात्क्रव्यादमांसानिबृंहणानिविशेषतः ॥ ९ ॥
छागमांसंपयश्छागंछागंसर्पिःसशर्करम् ।

छागोपसेवाशयनंछागमध्येचयक्ष्मनुत् ॥ १० ॥
सपिप्पलीकंसयवंसकुलत्थंसनागरम् ।
दाडिमामलकोपेतंस्निग्धमाजरसंपिबेत् ॥ ११ ॥
तेनषड्विनिवर्त्तन्तेविकाराःपीनसादयः ।
शतपुष्पाचमधुकंकुष्ठंतगरचन्दने ॥ १२ ॥
आलेपनंस्यात्सघृतंतच्चपार्श्वांसशूलनुत् ॥ १३ ॥

अर्थ—यह शोषरोग अनेकरोगानुगत, बहुतरोगोंमें श्रेष्ठ, दुर्ज्ञेय, महाबलवान् और दुर्निवार अर्थात् असाध्यहै, शरीरकी रसादिधातुओंको शोषण करैहै इस-कारण इसको शोष कहतेहैं, क्रियाओंको क्षय करनेसे इसको क्षय कहतेहैं, और प्रथम राजा चन्द्रमाके यह उत्पन्न हुवाथा इस कारण इसको राजयक्ष्मा कहतेहैं। वल शुक्रके अधीन और जीवन मलके अधीनहै, इसकारण राजयक्ष्मावाले रो-गीके यत्नपूर्वक वीर्य्य और मलकी रक्षा करनी योग्यहै । सदैव देहकी पूजाक-रनेवाला औषध, देवता और गुरुमें भक्तिकरनेवाला और बकरेके मांसको सेव-नकरनेवाला तथा धैर्य्यको धारण करनेवाला, ऐसा राजयक्ष्मारोगी आरोग्य होजाताहै । बहुतदोषोंसे युक्त बलवान् राजयक्ष्मावाले रोगीके पंचकर्म्म (वमन, विरेचन, नस्य, निरूहबस्ति और अनुवासनबस्ति) कराने चाहिये, परन्तु क्षीणदोषवाले राजयक्ष्मा रोगीके यह पंचकर्म्म विषकी समान अपकारी होतेहैं । दोषोंकी अधिकतावाले राजयक्ष्मा रोगीको वमन और विरेचन कराना हितका-रीहै । स्नेह और स्वेदयुक्त राजयक्ष्मा रोगीको स्नेहयुक्त अकर्षण (अदौर्बल्य-कारक सेवन कराना चाहिये । शुद्धकोठेवाले मनुष्यको अग्निप्रदीपक और पुष्टिकारक द्रव्य सेवन करने चाहिये ।

शालि और साठीधान, गेहूं, जौ, और मूंग आदि अन्न, तथा मदिरा, और जांगलदेशके पशुपक्षियोंका मांस यह सब राजयक्ष्मा रोगीको हितकारी है । मांसहीन शोषरोगीको मांसको खानेवाले पशुपक्षियोंका मांस तथा बृंहण पथ्य देना चाहिये । बकरेका मांस, बकरीका दूध, और बकरीका घी बूरा मिला-कर खाना, तथा बकरे, बकरियोंकी टहल करनी, और बकरे, बकरियोंके बीच-में सोनेसे राजयक्ष्मारोग दूर होताहै । पीपल, जव, कुलथी, सोंठ, अनार और आमले युक्त बकरी (रा) के मांसरस (सोरुआ) को पीनेसे—पीनसादि छः प्रकारके रोग दूर होते हैं । सोआ, मुलैठी, कूठ, तगर और चंदनको घृतके साथ पीसकर लेपकरनेसे—पार्श्वशूल और स्कन्धशूल नष्ट होताहै ॥ १-१३ ॥

अथ त्रयोदशाङ्गक्काथः ।

धन्याकपिप्पलीविश्वदशमूलीजलम्पिबेत् ।
पार्श्वशूलज्वरश्वासपीनसादिनिवृत्तये ॥ १४ ॥
क्काथस्त्रयोदशांगस्यचातुर्जातकसंयुतः ।
कासज्वरादिशमनोबलपुष्टिविवर्द्धनः ॥ १५ ॥

अर्थ–धनियाँ, पीपल, सोंठ और दशमूल इनका क्काथ बनाकर पीवे तो पार्श्वशूल, ज्वर, श्वास और पीनसादि रोग नष्ट होतेहैं. और इसत्रयोदशांग क्काथमें, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात इनका चूर्ण बुरककर पीनेसे खांसी और ज्वरादिरोग शांत होतेहैं, तथा बल और पुष्टिकी वृद्धि होती है॥१४॥१५॥

अथ क्काथनयोगः ।

दशमूलीबलारास्नापुष्करसुरदारुनागरैःक्कथितम् ।
पेयंपार्श्वांसशिरोरुक्क्षतकासादिशान्तयेसलिलम् ॥ १६ ॥
अश्वगंधामृताभीरुदशमूलीबलावृषाः ।
पुष्करातिविषेघ्नंतिक्षयंक्षीररसाशिनः ॥ १७ ॥
ककुभत्वङ्नागबलावानरीबीजादिचूर्णितंपयसि ।
पक्कं घृतमधुयुक्तंससितंयक्ष्मादिकासहरम् ॥ १८ ॥
पारावतकपिच्छागंकुरङ्गाणांपृथक्पृथक् ।
मांसचूर्णमजाक्षीरंपीतंक्षयहरंपरम् ॥ १९ ॥
दिनकरदीधितिशोधितपारावतमांसमनुदिनंनियतः ।
योलेढिमधुघृताभ्यां सजयतियक्ष्माणमत्युग्रम् ॥ २० ॥
शर्करामधुसंयुक्तंनवनीतंलिहन्क्षयी ।
क्षीराशीलभतेपुष्टिमंगुल्येचाज्यमाक्षिके ॥ २१ ॥

अर्थ–दशमूल, खिरैटी, रसायन, पोहकरमूल, देवदारु और सोंठ इनका क्काथ पार्श्वशूल, स्कन्धशूल, शिरोरोग, क्षतकासादिरोगोंको दूर करेहै । असगंध, गिलोय सतावर, दशमूल, खिरैटी, अडूसा, पोहकरमूल और अतीस इनका काढा पीवे और ऊपरसे दूध, मांसरस खावे तो क्षयरोग नाशहोवे। अर्जुनवृक्षकी छाल, गंगेरन, और कौंछके बीजोंका चूर्ण, इनको दूधमें पकाकर घृत, मधु और बूरा

मिलाके खानेसे खाँसी, यक्ष्मादिरोग विनष्ट होतेहैं। परेवा, वानर, बकरा, हिरन, इन प्रत्येकके मांसका चूर्ण अलग २ बकरीके दूधमें मिलाकर पीनेसे क्षयरोग नाश होताहै। परेवाके मांसको धूपमें सुखाकर चूर्णबना प्रतिदिन मधु और सहतके साथ खानेसे अत्युग्रराजयक्ष्मारोग दूर होताहै। क्षयरोगी शर्करा और मधुसंयुक्त मक्खनको खावे। दूध, घृत और मधुको खानेसे—राजयक्ष्मा वाले रोगीके पुष्टि बढती है ॥ १६–२१ ॥

अथैलादिचूर्णम्।

एलात्वङ्मरिचंशुंठीपिप्पलीनागकेशरम्।
यथोत्तरंभागवृद्ध्याचूर्णन्तुसितयासमम् ॥ २२ ॥
यक्ष्मार्शोग्रहणीगुल्मरक्तपित्तक्षयापहम्।
कण्ठरोगारुचिहरंप्लीहरोगहरंपरम् ॥ २३ ॥

अर्थ—इलायची एकभाग, दालचीनी दोभाग, कालीमिरच तीनभाग, सोंठ चारभाग, पीपल पांचभाग, नागकेशर छेभाग, इन सबको एकत्र पीसकर चूर्ण करै और चूर्णकी बराबर बूरा मिलावे, पश्चात् इस चूर्णको खानेसे राजयक्ष्मा, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, क्षय, कंठरोग, अरुचि, और प्लीहारोगको दूर करैहै ॥ २२ ॥ २३ ॥

अथ सितोपलादिलेहः।

सितोपलतुगाक्षीरीपिप्पलीबहुलात्वचः[1]।
अन्त्यादूर्द्ध्वंद्विगुणितंलेहयेत्क्षौद्रसर्पिषा ॥ २४ ॥
चूर्णितंप्राशयेद्वापिश्वासकासक्षयापहम्।
हस्तपादांशदाहेषुज्वरेरक्तेतथोर्द्ध्वगे ॥ २५ ॥
सुप्तजिह्वारोचकिनंमन्दाग्निंपार्श्वशूलिनम् ॥ २६ ॥

अर्थ—मिश्री १६ भाग, वंशलोचन ८ भाग, पीपल ४ भाग, छोटीइलायची २ भाग और दालचीनी १ भाग लेवे, सबका चूरन कर सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे श्वास, खांसी, क्षय, हाथ, पांव और कन्धोंकी दाह, ज्वर, ऊर्ध्वगतरक्त, सुप्तजिह्वा, अरुचि, मंदाग्नि और पार्श्वशूल दूर होता है ॥ २४–२६ ॥

१ बहुला एलाबीजम्।

अथ लवंगादिचूर्णम् ।

लवंगकंकोलमुशीरचंदनंनतंसनीलोत्पलजीरकद्वयम् ।
त्रुटिःसकृष्णागुरुभृंगकेशरंकणासविश्वानलदंसहाम्बुदम् २७
अहीन्द्रजातीफलवंशलोचनासिताष्टभागंसमश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
अरोचकंतर्पणमग्निदीपनंबलप्रदंवृष्यतमंत्रिदोषनुत् ॥ २८ ॥
उरोविबन्धंतमकंगलग्रहंसकासहिक्कारुचियक्ष्मपीनसम् ।
ग्रहण्यतीसारभगन्दरार्बुदंप्रमेहगुल्मांश्चनिहन्तिसत्वरम् २९
वातपित्ताधिकेवह्निबलेसर्वचूर्णापेक्षयाशर्कराष्टगुणा ।
कफाधिकेचाग्निमान्द्येचएकभागापेक्षयाष्टगुणेति ।

अर्थ-लौंग, शीतलचीनी, खस, चंदन, तगर, नीलाकमल, जीरा, छोटी इलायची, कालीअगर, दालचीनी, नागकेशर, पीपल, सोंठ, बालछड, नागरमोथा, अनन्तमूल, जायफल, वंशलोचन, यह प्रत्येक समान भाग और मिश्री ८ भागलेकर बारीक चूर्णकरे । यह लवंगादि चूर्ण रुचिको करनेवाला अग्निको दीपन करनेवाला, तृप्तिकारक, बलप्रदायक वृष्य, त्रिदोषनाशक, तथा छातीका दर्द, विबन्ध, तमक, गलग्रह, खाँसी, हुचकी, अरुचि, पीनस, राजयक्ष्मा, संग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, अर्बुद, प्रमेह और गुल्मरोगको दूर करैहै ॥ २७-२९ ॥

अथ तालीशाद्योमोदकः ।

तालीशपत्रंमरिचंनागरंपिप्पलीशुभा ।
यथोत्तरंभागवृद्धयात्वगेलाचार्द्धभागिका ॥ ३० ॥
पिप्पल्यष्टगुणाचात्रप्रदेयासितशर्करा ।
कासश्वासारुचिहरंतच्चूर्णंदीपनंपरम् ॥ ३१ ॥
हृत्पांडुग्रहणीरोगप्लीहाशोषज्वरापहम् ।
छर्द्यतीसारशूलघ्नंमूढवातानुलोमनम् ॥ ३२ ॥
कल्पयेद्गुटिकाश्चैतच्चूर्णपक्त्वासितोपलाम् ।

---

१ त्रुटिरेलाबीजम् । २ भृंगंगुडत्वक् । ३ नलदं जटामांसी । ४ सहाम्बुदंसमुस्तकम् ।
५ अहीन्द्रमनन्तमूलम् ।

गुटिकाह्यग्निसंयोगाच्चूर्णाल्लघुतरास्मृता ॥ ३३ ॥
पैत्तिकेग्राहयन्त्येकेशुभायावंशलोचना ॥

अर्थ—तालीशपत्र ९ भाग, कालीमिरच ४ भाग, सोंठ ३ भाग, पीपल २ भाग, वंशलोचन १ भाग, दालचीनी और इलायची आधा २ भाग, और मिश्री १६ भाग लेवे, पश्चात् सबको एकत्रकर मोदक बनावे. यह लड्डू खाँसी, श्वास, अरुचि हृदयरोग, पांडु, संग्रहणी, प्लीहा, शोष, ज्वर, वमन, अतीसार, शूल और मूढवातको हरैहै, तथा दीपन है। इन उपरोक्त औषधियोंका चूर्ण भी यही गुण करता है, जो चूरन बनाना हो तो कूट पीसकर बनाले और जो गुटिका (मोदक) बनानी हो तो पाककर बनावे ॥ ३०—३३ ॥

अथ च्यवनप्राशः।

बिल्वाग्निमन्थश्योनाककाश्मर्यःपाटलीबला।
मुद्गपर्ण्यश्चापिप्पल्यःश्वदंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥ ३४ ॥
शृंगीतामलकीद्राक्षाजीवन्तीपुष्करागुरु।
अभयासामृताऋद्धिजीवकर्षभकौशठी ॥ ३५ ॥
मुस्तंपुनर्नवामेदसूक्ष्मैलोत्पलचंदनम्।
विदारीवृषमूलानिकाकोलीकाकनासिका ॥ ३६ ॥
एषांपलोन्मितान्भागान्शतान्यामलकस्यच।
पंचदद्यात्तदैकध्यंजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ३७ ॥
ज्ञात्वागतरसान्येतान्यौषधान्यथतंरसम्।
तच्चामलकमुद्धृत्यनिष्कुलंतैलसर्पिषोः ॥ ३८ ॥
पलद्वादशकेभृष्ट्वादत्त्वाचार्द्धतुलांभिषक्।
मत्स्यण्डिकायाःपूतायालेहवत्साधुसाधयेत् ॥ ३९ ।
षट्पलंमधुनश्चात्रसिद्धशीतेप्रदापयेत्।
चतुष्पलन्तुगोक्षीर्य्याःपिप्पल्याद्विपलन्तथा ॥ ४० ।
पलमेकंनिदध्याच्चत्वगेलापत्रकेशरात्।

इत्ययंच्यवनप्राशःपरमुक्तोरसायनः ॥ ४१ ॥
कासश्वासहरश्चैवविशेषेणोपदिश्यते ।
क्षीणक्षतानांवृद्धानांबालानांचांगवर्द्धनम् ॥ ४२ ॥
स्वरक्षयमुरोरोगंहृद्रोगंवातशोणितम् ।
पिपासामूत्रशुक्रस्थान्दोषांश्चैवापकर्षति ॥ ४३ ॥
अस्यमात्रांप्रयुञ्जीतयोपरुन्ध्यान्नभोजनम् ।
अस्यप्रयोगाच्च्यवनःसुवृद्धोऽभूत्पुनर्नवः ॥ ४४ ॥
मेधांस्मृतिंकान्तिमनामयत्वमायुःप्रकर्षंबलमिन्द्रियाणाम् ।
स्त्रीषुप्रहर्षंपरमाग्निवृद्धिंवर्णप्रसादंपरमानुलोम्यम् ॥४५॥
रसायनस्यास्यनरःप्रयोगाल्लभेतक्षीणोपिकुटीप्रवेशात् ।
जराकृतंपूर्वमपास्यरूपंबिभर्त्तिरूपंनवयौवनस्य ॥४६॥
सितामत्स्यण्डिकालाभेधात्र्याश्चमृदुभर्जनम् ।
चतुर्भागजलेप्रायोद्रव्यंगतरसंभवेत् ॥ ४७ ॥

अर्थ–बेल, रनि, सोनापाठा, पाढल, कुम्भेर, खिरैटी, मुगवन, मषवन, सारिवन, पिठवन, पीपल, गोखुरू, कटेरी, कटाई, काकडाशिंगी, भुँईआमला, दाख, जीवन्ती, पुष्करमूल, अगर, हरड, गिलोय, ऋद्धि, जीवक, ऋषभक, आमिया-हलदी. नागरमोथा, पुनर्नवा, मेदा, महामेदा, छोटी इलायची, कुमुदिनी, चंदन, विदारीकंद, अडूसेकी जड, काकोली और काकनासा (कौआठोडी) प्रत्येक चार तोले, और उत्तम आमले, ५०० लेवे, इन सबको एकद्रोण जलमें पकावे, जब चौथाभाग शेष रहै तब उतारले, पश्चात् इस काढेमेंसे आमलोंको अलग निकालकर आमलोंकी गुठली निकाल डाले, और काढेको छानकर रख देवे, फिर ४८ तोले घी और तेलमें इन आमलोंको भूनकर पीस लेवे, तदनन्तर ५० पल मिश्री पूर्वोक्त क्काथमें मिला और यह आमले मिलाकर पकावे, जब लेहकी समान होकर शीतल होजाय, तब २४ तोले सहत मिलादेवे, वंशलोचन चारपल, पीपल आठ तोले और दालचीनी, इलायची, नागकेशर, इनतीनोंका चूर्ण ४ तोले मिलादेवे, और सबको करछीसे एकमें एक करदेवे । यह च्यवनप्राश–परमरसायनहै, खाँसी और श्वासको विशेषकरके हरैहै । क्षीणक्षत, वृद्ध और बालकोंके अंगोंको बढावे, तथा स्वरक्षय, छातीका रोग, वातरक्त, पियास

मूत्रदोष और वीर्य्यदोष दूर करैहै। इस अवलेहको सेवनकरनेसे-वृद्ध च्यवन ऋषि फिरसे तरुण हुये थे। यह च्यवनप्राश अवलेह-मेधा, स्मरणशक्ति, कान्ति, आरोग्यता, आयुकी वृद्धि, इन्द्रियोंका बल, स्त्रीप्रसंगमें अत्यन्त आनन्द, जठराग्निकी वृद्धि, और शरीरकी सुन्दरताको उत्पन्नकरैहै। इसको सेवनकरनेसे वृद्धमनुष्य भी तरुण होजाताहै॥ ३४-४७॥

अथ छागलाद्यघृतम्।

छागमांसतुलांगृह्यसाधयेदुल्बणेऽम्भसि।
पादशेषेणतेनैवसर्पिःप्रस्थंविपाचयेत्॥ ४८॥
ऋद्धिर्वृद्धिश्चमेदेद्वेजीवकर्षभकौतथा।
काकोलीक्षीरकाकोलीकल्कैःपृथक्पलोन्मितैः॥ ४९॥
सम्यक्सिद्धेचावतार्य्यःसितेतस्मिन्प्रदापयेत्।
शर्करायाःपलान्यष्टौमधुनःकुडवंक्षिपेत्॥ ५०॥
पलंपलंपिबेत्प्रातर्यक्ष्माणंहन्तिदुर्जयम्।
क्षतक्षयंचकासांश्चपार्श्वशूलमरोचकम्॥ ५१॥
स्वरक्षयमुरोरोगंश्वासंहन्यात्सुदारुणम्॥ ५२॥

अर्थ-१२॥ सेर बकरेके मांसको लेकर बत्तीस ३२ सेर जलमें पकावे. जब चौथा भाग जल शेष रह जाय तब घी ६४ तोले, ऋद्धि. वृद्धि, मेदा. महामेदा, जीवक ऋषभक, काकोली. क्षीरकाकोली, इन प्रत्येकका कल्क चार ४ तोले मिलाकर विधिपूर्वक पकावे. जब भलेप्रकारसे पकजावे तब उतार लेवे, शीतलहोनेपर, ३२ तोले बूरा १६ तोले सहत मिलादेवे। इस घृतको प्रातःकाल चारतोले पीनेसे दुर्जय राजयक्ष्मारोग, क्षतक्षय. खाँसी, पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरक्षय, छातीकारोग. और दारुणश्वासको दूरकरैहै॥ ४८॥ ४९॥ ॥ ५०॥ ५१॥ ५२॥

अथ वासावलेहः।

वासकस्यरसप्रस्थेमानिकासितशर्करा।
पिप्पलीद्विपलंदद्यात्सर्पिषश्चपचेच्छनैः॥ ५३॥
लेहीभूतेततःपश्चाच्छीतेक्षौद्रपलाष्टकम्।
दत्त्वावतारयेद्वैद्योमात्रयालेहमुत्तमम्॥ ५४॥

निहन्तिराजयक्ष्माणंकासंश्वासंचदारुणम् ।
पार्श्वशूलंचहृच्छूलंरक्तपित्तंज्वरन्तथा ॥ ५५ ॥

अर्थ-अडूसेकारस ६४ तोले, सफेदबूरा ३२ तोले, पीपल ८ आठ तोले घी ८ आठ तोले लेवे, फिर सबको मिलाकर धीरे २ पकावे, जब लेहकी समान होकर शीतल होजाय तब ३२ तोले सहत मिलादेवे । यह लेह-राजयक्ष्मा, खाँसी, श्वास, पार्श्वशूल, हृदयकाशूल, रक्तपित्त और ज्वरको दूर करै है ॥ ५३-५५ ॥

अथ पंचामृतरसः ।

भस्मसूताभ्रलोहानांशिलाजतुविषंसमम् ।
गुडूचीत्रिफलाक्काथैःसंस्कृतंगुग्गुलुन्तथा ॥ ५६ ॥
मृतनेपालताम्रञ्चसूतस्थानेनियोजयेत् ।
एकीकृत्यनियोज्यंतद्द्विगुञ्जंराजयक्ष्मनुत् ॥ ५७ ॥
पञ्चामृतरसोह्येषअनुपानंचपूर्ववत् ॥ ५८ ॥

अर्थ-पारेकीभस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकीभस्म, शिलाजीत, गिलोय और त्रिफलाके क्राथसे शुद्धकिया गूगुल, नेपाल, ताँबेकी भस्म और विष इन सबको समानभाग लेवे, फिर सबको मिलाकर दोरत्तीभर खावे । इससे-राजयक्ष्मा-रोग दूर होताहै । इसको पंचामृतरस कहतेहैं ॥ ५६-५८ ॥

अथ क्षयलक्षणम् ।

संकोचःस्कन्धपार्श्वानांस्वरभेदोज्वरोभ्रमः ।
वातजेयक्ष्मणिज्ञेयंलक्षणंगात्ररूक्षता ॥ ५९ ॥
ज्वरोदाहोऽतिसारश्चरक्तवान्तिश्रमोमहान् ।
वीर्य्यस्तम्भोऽरतिश्चापिलक्षणंपैत्तिकेक्षये ॥ ६० ॥
गुरुत्वंशिरसश्छर्दिःकासःकण्ठस्यचारुचिः ।
ऊर्द्ध्वश्वासश्चविज्ञेयंलक्षणंकफजेक्षये ॥ ६१ ॥

अर्थ-स्कंध और पसलियोंमें संकोच, स्वरभेद, ज्वर, भ्रम और शरीरमें रूक्षता यह सबलक्षण वातजक्षयमें होतेहैं । ज्वर, दाह,अतीसार,रुधिरकी वमन, अत्यन्त श्रम, वीर्य्यस्तम्भ, और ग्लानि यह सब लक्षण पैत्तिकक्षयमें होतेहैं ।

मस्तकमें भारीपन, वमन, खाँसी, अरुचि, और ऊर्ध्वश्वास यह सब लक्षण कफक्षयमें जानने ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

अथ रत्नगर्भपोटलीरसः।

रसंवज्रंहेमतारंगंधंलोहञ्चताम्रकम्।
तुल्यांशंमरिचंयोज्यंमुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ ६२ ॥
शंखंचपूर्ववद्भागंसप्ताहंचित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वावचूर्ण्याथतेनपूर्य्यावराटिका ॥ ६३ ॥
टंकणंरविदुग्धेनपिष्ट्वातासांमुखंलिपेत्।
मृद्भाण्डेतानिरुद्ध्वाथमहागजपुटेपचेत् ॥ ६४ ॥
आदायचूर्णयेत्सर्वंनिर्गुण्ड्याःसप्तभावनाः।
संशोष्यचूर्णितंसर्वंवस्त्रबद्धंणदोलया ॥ ६५ ॥
अम्लवर्गविधिक्काथेततःसंशोष्यचूर्णयेत्।
आर्द्रकस्यद्रवैःसप्तचित्रकस्यैकविंशतिः ॥ ६६ ॥
द्रवैर्भाव्यंततःशोष्यंदेयंगुंजाचतुष्टयम्।
पिप्पलीदशकैः क्षौद्रैर्मरिचैकोनविंशतिः ॥ ६७ ॥
सघृतैर्दापयेद्धाथक्षयरोगनिवृत्तये।
महारोगाष्टकेचैवज्वरेचैवातिसारके ॥ ६८ ॥
पोटलीरत्नगर्भोऽयंयोगवाहेषुयोजयेत् ॥ ६९ ॥

अर्थ—पारा, हीरा, सोना, चांदी, गंधक, लोहा, ताँबा, कालीमिरच, मोती, सोनामाखी, मूँगा, शंख यह सब समानभाग लेकर सातदिन चीतेके रसमें खरल करे, पश्चात् कौडियोंमें भरके आकके दूधसे पिसे हुये सुहागेसे कौडियोंके मुख बंदकरदेवे, फिर कौडियोंको मिट्टीके बरतनमें रखके बरतनका मुख बंदकर गजपुटमें धर फूँक देवे, जब अपने आप शीतल होजाय तब उसमेंसे निकाल चूर्णकर सम्हालूके रसमें सात भावनादेवे, फिर सर्वचूर्णको सुखाकर वस्त्रमें बांध दोलायंत्रके द्वारा अम्लवर्गके क्वाथमें पकाकर सुखावे, फिर चूर्णकर अदरखके रसमें सात भावना देवे, तदनन्तर चीतेके रसमें २१ भावना देवे, पश्चात् इसको सुखाकर चूर्णकरे तो रत्नगर्भपोटलीरस सिद्धहो। इसको चाररत्तीभरलेकर १०

पीपल, १९ काली मिरच, सहत अथवा घीमें मिलाकर चाटे तो-क्षयरोग दूर होवे, और अष्ट महारोग (वातव्याधि, अश्मरी, कुष्ठ, प्रमेह, उदररोग, भगन्दर, अर्श और संग्रहणी) का हरैहै । ज्वर और अतीसारादिरोग नष्टहोतेहैं. यह रत्नगर्भपोटलीरस योगवाही योगोंमें प्रयोगकरना योग्य है ॥ ६२-६९ ॥

अथ मृगाङ्करसः ।

रसभस्मस्वर्णभस्मनिष्कंनिष्कंप्रकल्पयेत् ।
शंखगंधकमुक्तानांद्वौद्वौनिष्कौतुचूर्णयेत् ॥ ७० ॥
मुक्ताभावेवराटीवारसपादंचटंकणम् ।
वह्निचारनालक्काथेनमर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ७१ ॥
तद्गोलकंविशोष्याथभाण्डेलवणपूरिते ।
पचेद्यामचतुष्कञ्चमृगाङ्कोयंमहारसः ॥ ७२ ॥
रोगराजनिवृत्त्यर्थंचतुर्गुञ्जामितंघृतैः ।
दातव्यंमरिचैःसार्धंपिप्पलीमधुनापिवा ॥ ७३ ॥

अर्थ-पारेकी भस्म चारमासेभर, सोनेकी भस्म चारमासेभर, शंख, गंधक, मोती प्रत्येक ८ मासे, अगर मोती न मिले तो कौडियोंकी भस्म लेवे, पारेसे चौथाभाग सुहागा लेवे, फिर इन सबको चीतेके काढेमें और कांजीमें दोप्रहर मर्दनकरे, पश्चात् गोला बनाकर धूपमें सूखा नोनसे भरे हुवे बासनमें रख चारप्रहरपर्यंत पकावे तो मृगांकरस तैय्यारहो । इसकीमात्रा ४ रत्तीकीहै । अनुपान-घृत, कालीमिरचोंका चूर्ण, पीपलका चूर्ण और सहतहै । यह मृगांकरस राजयक्ष्मारोगको दूर करैहै ॥ ७०-७३ ॥

अथ अमृतेश्वरोरसः ।

रसलोहामृतासत्वंमधुसर्पिःसमन्वितम् ।
अमृतेश्वरनामायंपडंगक्षयरोगनुत् ॥ ७४ ॥

अर्थ-पारा, लोहा और गिलोयका सत्त्व इन तीनोंको घृत और मधुके साथ सेवनकरनेसे राजरोग शांत होताहै ॥ ७४ ॥

अथ शंखेश्वरोरसः ।

शंखनाभिश्चैकनिष्कंचतुर्निष्कंवराटकम् ।
तुर्य्यञ्चनीलतुत्थंचसवतुल्यञ्चगंधकम् ॥ ७५ ॥

गंधतुल्यंमृतंनागंनागतुल्यंमृतंरसम् ।
टंकणंरसतुल्यंस्यान्मर्द्यंपाच्यंमृगांकवत् ॥ ७६ ॥
राजयक्ष्महरःसोऽयंनाम्नाशंखेश्वरोरसः ।
षड्गुञ्जन्तुकणाक्षौद्रैर्लेह्यंवामरिचंघृतैः ॥ ७७ ॥

अर्थ—शंखकीनाभि चारमासे, कौडीकी भस्म १६ मासे नीलाथोथा १६ मासे, सबकी बराबर गंधक, गंधककी बराबर सीसेकी भस्म, सीसेकी भस्मकी बराबर पारेकी भस्म और पारेकी बराबर सुहागा लेवे, फिर इन सबको मृगांकरसकी तरह खरलकर पकावे तो शंखेश्वररस सिद्धहो । इसकी मात्रा ६ रत्तीकीहै । अनुपान—पीपल, सहत, कालीमिरच और घृतहै ॥ ७६–७७ ॥

अथ लोकनाथरसः ।

वराटीतुल्यमण्डूरंचूर्णयित्वादिनंपचेत् ।
चूर्णयेन्मरिचैस्तुल्यंनागवल्याविभावयेत् ॥ ७८ ॥
तत्पात्रेमधुनालेह्यंसघृतंनवनीतकैः ।
निष्कपादंक्षयंहन्तियामेयामेचभक्षयेत् ॥ ७९ ॥
लोकनाथोरसोह्येषमण्डलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ ८० ॥

अर्थ—कौड़ी और मंडूरका समानभाग चूर्ण लेकर एकदिन पकावे, फिर बराबर कालीमिरचोंका चूर्ण मिलाकर पानोंके रसमें भावना देवे । इस रसको एकमासेभर लेकर सहतमें, घृतमें अथवा नवनीतमें मिलाकर ४८ दिन तक चाटनेसे राजयक्ष्मारोग दूर होताहै ॥ ७८–८० ॥

अथ स्वल्पमृगांकरसः ।

रसभस्महेमभस्मतुल्यंगुंजाद्वयंपृथक् ।
पूर्ववदनुपानेनमृगांकोऽयंक्षयापहः ॥ ८१ ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, और सोनेकी भस्म समानभाग लेवे । इसको दो २ रत्तीभर मधु, घृत वा नवनीतके साथ खानेसे क्षयरोग दूर होताहै ॥ ८१ ॥

अथ लोहामृतः ।

शिलाजतुविडंगानिह्यभयाहेममाक्षिकम् ।
मृतलोहसमंक्षौद्रैर्निष्कंभुक्तंक्षयापहम् ॥ ८२ ॥
अयंलोहामृतोनाम्नासान्निपातंनियच्छति ॥ ८३ ॥

अर्थ—शिलाजीत, बायविडंग, हरड, सोनामाखी, यह सब समान भाग लेवे, और सबकी बराबर लोहेकी भस्म लेवे, पश्चात् सबको मिलाकर चार मासे सहतके साथ खानेसे क्षयरोग दूर होताहै. और यह लोहामृतरस सन्निपातको दूर करैहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

अथ हरनेत्ररसः ।

टंकणंशुद्धगंधंतुसुवर्णमाक्षिकंपृथक् ।
एकंद्वित्रिचतुःपंचक्रमाच्चशुद्धसूतकम् ॥ ८४ ॥
चांगेर्य्याश्चद्रवैर्मर्द्यंदिनैकंगोलकीकृतम् ।
गंधकंताम्रपर्ण्याथगोलकांशंप्रमर्दयेत् ॥ ८५ ॥
गोलकंलेपयेत्तेनततोवस्त्रेणवेष्टयेत् ।
मृगांकंपाचयेत्स्थाल्यांवालुकाभिश्चपूरिते ॥ ८६ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंहरनेत्रोरसोत्तमः ।
मृगांकवत्क्षयंहन्तितद्वन्मात्रानुसारतः ॥ ८७ ॥

अर्थ—सुहागा एक भाग, शुद्धगंधक दो भाग, सुवर्ण तीन भाग, सोनामाखी चार भाग और शुद्ध पारा पांच भाग लेकर चांगेरीके रसमें एक दिन खरलकर गोला बनावे, पश्चात् इस गोलेको गंधक और मजीठके रसमें खरलकरे, तदनन्तर गंधकका गोलेके ऊपर लेपकर गोलेको वस्त्रमें बाँधे, फिर वालुकायंत्रमें मृगांकरसकी तरह फूंकदेवे, जब स्वयं शीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्णकरे तो हरनेत्ररस सिद्ध हो । यह रस—मृगांकरसकी मात्राके अनुसार खानेसे क्षयरोगको दूर करैहै ॥ ८४-८७ ॥

अथ कनकसुन्दरः ।

रसभस्मचतुर्थांशंहेमभस्मप्रकल्पयेत् ।
तालकंरसकंतुल्यंमाक्षिकंगंधकंशिला ॥ ८८ ॥
रसमानानि[illegible]जीतसूतपादंचटंकणम् ।
दिनैकैकंक्रमेणैवतत्सर्वंमर्दयेद्दृढम् ॥ ८९ ॥
अर्कक्षीरंजयन्तीचभृंगवासाचलांगली ।
अगस्तिचित्रकंपाठामर्द्यमेपांद्रवैःपृथक् ॥ ९० ॥

द्विगुंजंभक्षयेन्नित्यमनुपानंमृगांकवत्।
क्षयंहन्तिमहातीव्रंरसःकनकसुन्दरः॥ ९१॥

अर्थ–मृतपारा, हरिताल, खपरिया, सोनामाखी, गंधक, मनशिल यह प्रत्येक एक एक भाग, सोनेकीभस्म चौथाभाग, सुहागा चौथाभाग लेवे, फिर इन सबको एकत्र खरलकर क्रमसे एक एक दिन आकके दूध, जयन्तीके रस, भांगराके रसमें, अडूसेके रसमें, करियारीके रसमें, अगथियाके रसमें, चीतेके रसमें और पाढ़के रसमें अलग २ खरलकरे। इसको दोरत्ती भर खावे, ऊपरसे मृगांकरसकी समान अनुपान करे तो महातीव्र क्षयरोग दूर हो इसको कनकसुंदर कहतेहैं॥ ८८–९१॥

अथ नीलकण्ठरसः।

विषंक्षुद्राउशीरञ्चहरिद्रागोक्षुरंमधु।
कुटजस्यत्वचंचूर्णसमांशंसर्वचूर्णकम्॥ ९२॥
राजयक्ष्महरंखादेद्रसोऽयंनीलकण्ठकः॥ ९३॥

अर्थ–विष, कटेरी, खस, हलदी, गोखुरू, सहत, और कुडेकी छालका चूर्ण इनसबको समान भाग लेकर विधिपूर्वक मिलावे। यह नीलकण्ठरस–राजयक्ष्मा रोगको दूर करै है॥ ९२॥ ९३॥

अथ वज्रेश्वररसः।

कर्षंखर्परसत्वस्यसमांशेहेमविद्रुमे।
निक्षिपेच्चूर्णयेत्तद्वत्षण्निष्कंशुद्धगंधकम्॥ ९४॥
अंकोलकंगुलीबीजंतुत्थंतालंचतुश्चतुः।
मुक्ताप्रवालचूर्णञ्चप्रतिनिष्काष्टकंक्षिपेत्॥ ९५॥
मृतलौहस्यनिष्कौद्वौटंकणस्याष्टनिष्ककम्।
द्वौनिष्कौनीलकटुकीवराटीनांचविंशतिः॥ ९६॥
सितानिष्कद्वयंयोज्यंसर्वंखल्वेविमर्दयेत्।
चांगेर्य्यम्लेनयामैकंजम्बीराम्लैर्दिनद्वयम्॥ ९७॥
रुद्ध्वापुटाष्टकंदेयंदिनमेकंतुषाग्निना।
जम्बीरोत्थद्रवेणैव पिष्ट्वापिष्ट्वापुटेपचेत्॥ ९८॥

ततेवनोपलैरेवदेयंगजपुटंमहत्।
आ॰ ।थचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंचूर्णार्द्धंशुद्धगंधकम्॥ ९९॥
गंधार्द्धंमरिचंचूर्णमेकीकृत्याद्विमाषकम्।
लेहयेन्मधुनासार्द्धंनागवल्लीदलोत्थितम्॥ १००॥
पथ्याशीप्रतियामेस्यादभुक्तेविषवद्भवेत्।
रसोवज्रेश्वरःख्यातःक्षयपर्वतभेदकः॥ १०१॥

अर्थ—खपरियाका सत्व दो तोले, सोना एक तोला, मूँगा एक तोला इन तीनोंको लेकर खरलकरे फिर उसमें २४ मासेभर शुद्धगंधक मिलावे पश्चात् अंकोल, हिंगोटके बीज, नीलाथोथा और हरिताल यह प्रत्येक सोलह २ मासे लेवे, मोती और मूँगेका चूर्ण ३२ बत्तीस २ मासे लेवे, लोहेकी भस्म आठ ८ मासे लेवे, सुहागा, ३२ मासे लेवे, नीलकुटकी आठ ८ मासे भर लेवे, कौडीकी भस्म ८० मासे और मिश्री ८ मासे भरलेवे, पश्चात् इन सबको खरलमें डाल कर खरलकरे, फिर चांगेरीके रसमें एकप्रहर खरलकरे, तदनन्तर जम्भीरीनींबूके रसमें दोदिन खरल करे, फिर पात्रमें बंदकर एकदिनमें भुसकी आगसे आठ पुट देवे और प्रतिपुटमें जम्भीरी नींबूके रसमें पीसलेवे, तदनन्तर वनके अरणे उपलोंकी अग्निके द्वारा महागजपुटमें खरलकर फूँक देवे, जब स्वयं शीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्ण करले, फिर चूर्णसे आधाभाग शुद्धगंधक और चौथाई भाग कालीमिरचोंका चूर्ण मिलावे, इसको दो उड़दोंकी बराबर लेकर सहत और नागरपानके रसमें मिलाकर चाटनेसे—क्षयरोग नाश होताहै, इसपै पथ्यसे रहै, और विना पथ्य यह रस—विषकी समान अपकार करताहै। यह वज्रेश्वर रस—क्षयरूपी जो पर्वतहैं तिनको भेदनेवालाहै॥ ९४॥ ९५॥ ९६॥ ॥ ९७॥ ९८॥ ९९॥ १००॥ १०१॥

अथ भस्मसूतरसः।

भस्मसूतमजाक्षीरैःकणानिष्कैःपलैःसह।
व्योषगंधकक्षौद्रैर्वाभक्षयेद्भक्षयेत्क्षयम्॥ १०२॥

अर्थ—चार मासे भर पारेकी भस्मको लेकर बकरीके दूधके साथ और पीपलके चूर्णके साथ खानेसे तथा त्रिकुटा, गंधक और सहतके साथ भक्षण करनेसे यह रस क्षयरोगको भक्षण करताहै॥ १०२॥

(अथाग्निरसः ।)

वज्रहाटकसूतानांभस्मकंद्वित्रिषट्क्रमात् ।
त्रिकण्टकरसैर्भाव्यंदिनान्तेतद्विचूर्णयेत् ॥ १०३ ॥
गुंजामात्रंप्रयोक्तव्यंसज्वरेराजयक्ष्मणि ।
स्नुहीमूलंचजम्बीरद्रवैःस्यादनुपानकम् ॥ १०४ ॥
साध्यासाध्यक्षयंहन्तिह्यनुपानंमृगांकवत् ।
अयमग्निरसंखादेत्त्रिनिष्कंराजयक्ष्मनुत् ॥ १०५ ॥

अर्थ—हीरेकी भस्म २ भाग, सोनेकी भस्म ३ भाग, पारेकी भस्म ६ भाग लेवे, पश्चात् इन तीनोंको गोखरूके रसमें एकदिन भावना देवे, दिनके अंतमें इसका चूर्ण करले । इसको एक गुंजाभर खावे तो ज्वरयुक्त राजयक्ष्मा रोग दूर होजाय, और ऊपरसे थूहरका दूध और जम्भीरी नींबूका रस पीवे, यह अनुपानहै । इसके ऊपर मृगांककी तरह अनुपान करै तो साध्यासाध्य राजयक्ष्मा दूर होवे । इस अग्निरसको १ तोलाभर खानेसे शीघ्रही राजयक्ष्मा दूर होवे ॥ १०३–१०५ ॥

अथ चन्द्रामृतरसः ।

त्रिकटुत्रिफलाचव्यंधान्यंजीरकसैन्धवाः ।
प्रत्येकंतोलकंग्राह्यंछागीदुग्धेनगोलयेत् ।
रसगंधकलोहानिप्रत्येकंकार्षिकंक्षिपेत् ॥ १०६ ॥
टंकणस्यपलंदत्त्वामरिचस्यपलार्द्धतः ॥
नवगुंजाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ।
प्रातःकालेशुचिर्भूत्वाचिन्तयित्वामृतेश्वरीम् ॥१०७॥
एकैकांवटिकांखादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
नीलोत्पलरसेनापिकुलत्थस्यरसेनवा ॥ १०८ ॥
छागीदुग्धेनमंडेनकैरवस्यरसेनवा ।
निहन्तिविविधंकासंवातपित्तसमुद्भवम् ॥ १०९ ॥
वातश्लेष्मोत्थितंदुष्टंपित्तश्लेष्मभवंचिरम् ।
वातिकंपैत्तिकंचैवगरदोषसमन्वितम् ॥ ११० ॥

सरक्तमथनीरक्तंज्वरश्वासान्वितम् ।
तृड्दाहभ्रमशूलघ्नीरुच्यावह्निप्रदीपनी ॥ १११ ॥
बलवर्णकरीवृष्याहीनगुल्मोदरापहा ।
आनाहकृमिपाण्डुघ्नीजीर्णज्वरविनाशिनी ॥ ११२ ॥
इयंचन्द्रामृतानाम्नाचन्द्रनाथेननिर्मिता ।
वासागुडूचिकाभार्ङ्गीमुस्तकंकण्टकारिका ॥ ११३ ॥
भोजनान्तेप्रभोक्तव्यवाटिकावीर्य्यवृद्धये ॥ ११४ ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, धनियाँ, जीरा और सेंधानोन यह प्रत्येक तोले तोले भर लेकर बकरीके दूधमें खरलकरे. फिर पारा, गंधक और लोहा प्रत्येक दोदो तोले सुहागा चार तोले और कालीमिरचोंका चूर्ण दो तोले यह सब पूर्वोक्तमें मिलाकर ९ रत्तीभर गोली बनालेवे । प्रातःकालमें पवित्र होकर अमृतेश्वरी देवीका ध्यानधर एक गोली लालकमलके रसमें अथवा नीलकमलके रसमें, वा कुलथीके रसमें, अथवा बकरीके दूधमें वा माडमें मिलाकर, अथवा कमोदिनीके रसमें मिलाकर रोज खावे। इससे विविधप्रकारकी खांसी-वातसे उत्पन्न हुई खांसी, पित्तसे उत्पन्न हुई खांसी, वातकफसे उत्पन्न हुई खांसी, पित्तश्लेष्मसे उत्पन्न हुई खांसी, विषोद्भव खांसी, रुधिरयुक्त खाँसी, सूखी खाँसी, ज्वर और श्वासयुक्त खाँसी, तृषा, दाह, भ्रम आर शूल दूर होताहै, तथा यह रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, बलकारक, वर्णको सुंदरकरनेवाला, वीर्य्य-वर्द्धक, और प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, कृमि, पाण्डु, और जीर्णज्वरको दूर करैहै। यह चन्द्रामृतरस श्रीचन्द्रनाथसिद्धने निर्म्माण कियाहै । अडूसा, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा, कटेरी इन सबको मिला गोली बनाकर भोजनके अंतमें खानेसे वीर्य्यकी वृद्धि होतीहै ॥ १०६–११४ ॥

अथ कांचनाभ्ररसः ।

कांचनंरससिन्दूरंमुक्तिकंलौहमभ्रकम् ।
विद्रुममभयातारंकस्तूरीचमनःशिला ॥ ११५ ॥
प्रत्येकंबिन्दुमात्रंचसर्वमर्द्यप्रयत्नतः ।
वारिणावटिकाकार्याद्विगुंज फलमानतः ॥ ११६ ॥
अनुपानंप्रयोक्तव्यंयथादोषानुसारतः ।

नानारोगप्रशमनंसर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ ११७ ॥
क्षयंहंतितथाकासंश्लेष्मपित्तहरंतथा ।
प्रमेहान्विंशतिंचैवदोषत्रयसमुत्थितान् ॥ ११८ ॥
अशीतिवातजान्रोगान्नाशयेत्सद्यएवहि ।
बलवृद्धिंवीर्य्यवृद्धिंलिंगजाड्यंकरोतिच ॥ ११९ ॥
रसोऽयंसुश्रुतप्रोक्तोवाजीकरणउत्तमः ।
काञ्चनस्यसमाकान्तिर्मदनस्यसमंवपुः ॥ १२० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थायरसंतुकांचनाभ्रकम् ॥ १२१ ॥

अर्थ–सोना, पारा, सिन्दूर, मोती, लोहा, अभ्रक, मूँगा, हरड, चांदी, कस्तूरी और मैनसिल यह सब समान भागले जलमें खरलकर दोदोरत्तीकी गोली बना लेवे । इसको दोषानुसार अनुपानके साथ देवे। यह गोली–सर्वोपद्रवयुक्त नाना-प्रकारके रोगोंको शांतकरैहै, तथा क्षय, खाँसी, कफ, पित्त, बीस २० प्रकारके प्रमेह, त्रिदोषोत्पन्न रोग और ८० प्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै, बल और वीर्य्यकी वृद्धिकरै, लिंगकी जडताको उत्पन्नकरै, यह रस श्रीसुश्रुताचार्य्यने कहा है और उत्तम वाजीकरणहै, यह काञ्चनाभ्ररस कांचनकी समान कांतिको देवे और कामदेवकी समान शरीरको करैहै, इसको प्रातःकाल उठकर भक्षण करना चाहिये ॥ ११५–१२१ ॥

अथ राजमृगांकरसः ।

रसभस्मत्रयोभागाभागैकंहेमभस्मकम् ।
मृतताम्रस्यभागैकंशिलागंधकतालकम् ॥ १२२ ॥
प्रतिभागद्वयंशुद्धमेकीकृत्यविचूर्णयेत् ।
वराटींपूरयेत्तेनअजाक्षीरेणटंकणम् ॥ १२३ ॥
पिष्ट्वातेनमुखंरुद्धामृद्भाण्डेतंनिरोधयेत् ।
श्लक्ष्णंगजपुटेपच्याच्चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ १२४ ॥
वासाराजमृगांकोयंचतुर्गुंजंक्षयापहम् ।
पिप्पलीदशकंक्षौद्रैर्मरिचैकोनविंशतिः ॥ १२५ ॥
सघृतैर्दीपयेद्वाथवातश्लेष्मभवेक्षये ॥ १२६ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म तीन भाग, सोनेकी भस्म एकभाग, ताँबेकी भस्म एक भाग, मनशिल दोभाग, गंधक दोभाग, हरिताल दोभाग, इनसबका चूर्णकर कौडियोंमें भरदेवे, और कौडियोंका मुख बकरीके दूधमें पीसेहुवे सुहागेसे बंद कर देवे, फिर कौडियोंको मट्टीके बासनमें रख गजपुटमें फूँकदेवे, जब स्वाँग शीतल होजाय तब बारीक चूर्ण करले, तो राजमृगांकरस सिद्धहो। इसको चाररत्ती भर खानेसे क्षयरोग दूर होताहै, दश पीपलके चूर्णमें सहत मिलाकर अथवा उन्नीस कालीमिरचोंके चूर्णमे घी मिलाकर खावे, यह अनुपान है। और यह वातकफोत्पन्न क्षयरोगका क्षयकर्ता है ॥१२२॥१२३॥१२४॥१२५॥१२६॥

अथ श्लेष्मलक्षणम्।

स्वरभेदःकफःकण्ठशूलंकासश्चछर्दनम्।
वातश्लेष्मभवेचिह्नंज्ञातव्यश्चचिकित्सकैः ॥ १२७ ॥
स्वरभेदोज्वरोदाहःशूलंछर्दिररोचकम्।
वातपित्ताधिकेज्ञेयोराजरोगेमहाबले ॥ १२८ ॥
आलस्यंबहुनिद्राचस्वल्पदाहोज्वरोभ्रमः।
वान्तिःशोणितपित्तोत्थापित्तश्लेष्मभवेक्षये ॥ १२९ ॥
वातपित्तकफोत्थैश्चलक्षणैःसंहतोयदा।
सन्निपातान्वितोज्ञेयःकष्टसाध्यःस्वयंस्मृतः ॥ १३० ॥

अर्थ–वातकफसे उत्पन्न हुवे क्षयरोगमें स्वरभेद, कफ कण्ठशूल, खाँसी और वमन, यह सब लक्षण होतेहैं। स्वरभेद, ज्वर, दाह, शूल, वमन, और अरुचि यह लक्षण वातपित्तसे उत्पन्न हुवे क्षयरोगमें होतेहैं। आलस्य, बहुनिद्रा, स्वल्प दाह, ज्वर, भ्रम, वमन, और रक्तपित्तमिश्रित वमन यह सब लक्षण हों तो पित्त कफसे उत्पन्न हुआ क्षयरोग जानना। सन्निपातसे उत्पन्न हुवे क्षयरोगमें वात, पित्त और कफ इनतीनों दोषोंके मिले हुये लक्षण होतेहैं, और सन्निपातोद्भव क्षयरोग कष्टसाध्य है ॥ १२७–१३० ॥

अथ शंखगर्भपोटलीरसः।

शंखनाभींगवांक्षीरैःपेषयेन्निष्कषोडशम्।
तेनमूषाःकर्त्तव्यातन्मध्येभस्मसूतकम् ॥ १३१ ॥
निष्कार्द्धंगंधकंत्रीणिचूर्णी[illegible]त्यविनिक्षिपेत्।

रुद्ध्वातद्वेष्टयेद्वस्त्रेमृत्तिकांलेपयेद्बहिः ॥ १३२ ॥
शोष्यंगजपुटेपच्यान्मूषयासहचूर्णयेत् ।
गुंजैकमनुपानेनक्षयंहान्तिमृगांकवत् ॥ १३३ ॥
पोटलीशंखगर्भोयंयोजयेद्वातपित्तजित् ॥ १३४ ॥

अर्थ-शंखकी नाभि ६४ मासे लेकर गायके दूधमें पीसके मूषा बनावे, उस मूषामें २ मासे पारेकी भस्म, और १२ मासे गंधक डाल कपरौटी कर धूपमें सुखा गजपुटमें फूँकदेवे, जब अपने आप शीतल होजाय तब उसको निकाल ऊपरकी कपरौटी अलगकर मूषासमेत खरलमें गेरकर पीसलेवे । इसकी मात्रा एकरत्तीकीहै, अनुपान मृगांकरसकी समान जानना । यह शंखगर्भपोटलीरस-राजयक्ष्मारोग, वात और पित्तको दूरकरैहै ॥ १३१-१३४ ॥

अथ बृहत्काञ्चनाभ्रः ।

कांचनंरससिन्दूरंमौक्तिकंलौहमभ्रकम् ।
विद्रुमंमृतवैक्रान्तंतारंताम्रश्चरंगकम् ॥ १३५ ॥
कस्तूरिकालवंगंचजातिकोषैलवालुका ।
प्रत्येकंबिन्दुमात्रंचसर्वंमर्द्यंप्रयत्नतः ॥ १३६ ॥
कन्यानीरेतुसंमर्द्यकेशराजरसेनच ।
अजाक्षीरेणसंभाव्यप्रत्येकंदिवसत्रयम् ॥ १३७ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ।
अनुपानंप्रदातव्यंयथादोषानुसारतः ॥ १३८ ॥
नानारोगप्रशमनंसर्वोपद्रवसं[illegible]तम् ।
क्षयंहन्तितथाकासंयक्ष्माणंश्वासमेवच ॥ १३९ ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैवदोषत्रयसमुत्थितान् ।
सर्वान्रोगान्निहन्त्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥ १४० ॥

अर्थ--सोना, रससिंदूर, मोती, लोहा, अभ्रक मूँगा, वैक्रान्त, चाँदी, ताँब और वंग इन सबकी भस्म, कस्तूरी, लौंग, जायफल और एलुआ यह सब समान भाग लेकर खरल करे, पश्चात् घीकुवारके रस, कुकुरभांगराके रस और ब[illegible] रीके दूधमें तीन २ दिन खरलकर चार: चार रत्तीकी गोली बना लेवे । इस[illegible]

दोषानुसार अनुपानके साथ देवे । यह रस–सर्वोपद्रवयुक्त नानाप्रकारके रोगोंको दूर करैहै, तथा क्षय, खाँसी, राजयक्ष्मा, श्वास, बीसप्रकारके प्रमेह, त्रिदोषोद्भवरोग, और सर्व प्रकारके रोगोंको दूर करैहै ॥ १३९–१४० ॥

अथ चन्द्रामृतरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंसूततुल्यंचसैन्धवम् ।
शमीश्वेतादलद्रावैर्मर्दितंगोलकीकृतम् ॥ १४१ ॥
नागवल्लीदलैर्वेष्टयंपाच्यंपातालयंत्रके ।
दिनान्तेऊर्द्धलग्नंतंग्राह्यंभक्ष्यत्रिगुंजकम् ॥ १४२ ॥
पर्णखंडेनसंयुक्तंमासैकाद्राजयक्ष्मनुत् ।
रसश्चन्द्रामृतोनामह्यनुपानंमृगांकवत् ॥ १४३ ॥

अर्थ–शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगंधक २ भाग, सेंधानोन १ भाग इन तीनोंको छीकुर और सफेदकोयलके पत्तोंके रसमें खरलकर गोला बनालेवे, फिर इसगोलेको पानोंसे वेष्टितकर पातालयंत्रमें एकदिन पकावे, जब अपने आप शीतल होजाय तब ऊपरके पात्रमें लगे हुवे द्रव्यको खुरचलेवे । इसको एक महीने पर्यंत पानके टुकडेपै तीन चोटलीभर लगाकर खानेसे राजयक्ष्मारोग दूर होजाताहै, इसको चंद्रामृतरस कहतेहैं, अनुपान मृगांकरसकी समान जानना १४१–१४३॥

अथ महामृगाङ्करसः ।

शुद्धसूतंस्वर्णभस्मजम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितंताम्रंत्रिभिस्तुल्यन्तुगंधकम् ।
टंकणंगंधकार्द्धञ्चसर्वंजम्बीरजैर्द्रवैः ॥ १४४ ॥
मर्द्यंयामचतुर्गोलंवस्त्रेबद्ध्वाविपाचयेत्
दोलायंत्रेचारनालेयामादुद्धृत्यशोपयेत् ।
ततोमृन्मयभाण्डान्तर्लवणञ्चांगुलद्वयम् ॥ १४५ ॥
उर्द्धाधःपृष्ठतःकृत्वागोलकंवस्त्रवेष्टितम् ।
लवणैःपूरयेद्भाण्डेबन्धयित्वादिनंपचेत् ॥ १४६ ॥
[illegible]ल्यांक्रमाग्निसिद्धोहिरसोमहामृगांककः ।
अनेनैवप्रकारेणमृगां[illegible] ॥ १४७ ॥

राजरोगनिवृत्त्यर्थंदेयंसिताघृतन्तुतैः ।
दशभिर्मरिचैःसार्द्धंपिप्पलीमधुनापिवा ॥ १४८ ॥

अर्थ–शुद्धपारा १ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग इन दोनोको लेकर जम्भीरी-नीबूके रसमें एकदिन खरल करे, पश्चात् ताँबा ४ भाग, गंधक ६ भाग, और सुहागा ३ भाग लेवे, फिर इन तीनोको पूर्वोक्तमें मिलाकर जम्भीरी नीबूके रसमें चारप्रहर पर्य्यंत खरलकर गोला बनालेवे, पश्चात् गोलेको वस्त्रमें बांधकर काँजीमें दोलायंत्रके द्वारा दो प्रहर पकावे, तदनन्तर उसमेंसे निकाल कर गोलेको सुखालेवे, पश्चात् मट्टीके बासनमें दो अंगुल ऊंचा लवण स्थापितकर उसके ऊपर कपडेमें बँधे हुवे गोलेको रख ऊपर नोन भरदेवे, फिर बासनके मुखको बंदकर चूलेपै चढा क्रमसे मन्द, मध्य, और तीक्ष्ण अग्निके द्वारा एकदिन पकावे तो, महामृगांकरस सिद्धहो । इसी विधिसे और सर्वप्रकारके मृगांकरस बनतेहैं । इससे रोगराज (राजयक्ष्मा) नष्टहोताहै, अनुपान–१० मिरच, बूरा, घृत, अथवा पीपल और मधु है ॥ १४४–१४८ ॥

अथ यक्ष्मिचिकित्सा ।

विभ्रमंश्लेष्मदिग्धांगमतीसारेणपीडितम् ।
शूनमुष्कोदरंचैवयक्ष्मिणंपरिवर्जयेत् ॥ १४९ ॥
ऊर्द्ध्वश्वासोऽतिशुष्काक्षःकांस्यपात्रहतःस्वरः ।
मधुमेहीकृशोऽमल्लोहीनबुद्धिबलेन्द्रियः ॥ १५० ॥
व्रणांगःशुक्रमेहीचक्षयीयातियमालयम् ।
अथास्यापिप्रकर्त्तव्याचिकित्साजीवितावधि ॥ १५१ ॥

अर्थ–विभ्रमहो, कफसे अंग लिप्त होजायँ, अतीसारकी पीडाहो, अंडकोश और उदरमें सूजनहो ऐसा राजयक्ष्मारोगी असाध्य जानना । ऊर्ध्वश्वासहो, नेत्र अत्यन्त सूखजायँ, कांसीके बरतनकी समान स्वरहो, मधुमेहहो, कृशता आजाय, दुर्बलताहो, बल, बुद्धि और इन्द्रियोंमें हीनता उत्पन्नहो, शरीरमें व्रण होजाय और शुक्रमेहहो, ऐसा क्षयरोगी निश्चय मृत्युको प्राप्त होताहै, किन्तु जबतक यह रोगी जीते रहैं तब तक चिकित्सा करे, असाध्य जानकर छोड देवे ॥ १४९–१५१ ॥

अथ प्राणत्राणरसः ।

लोहभस्मपलैकन्तुद्विपलंभृंगजद्रवात् ।
पलैकंत्रिफलाक्काथंसर्वंसम्मर्द्यखर्परे ॥ १५२ ॥
लोहाशंमाक्षिकंशुद्धंमर्द्यंपूर्वोदितद्रवैः ।
रुद्धात्रिभिःपुटेपाच्यंद्रवैर्मर्द्यपुनःपुनः ॥ १५३ ॥
मृतंसूतंमृतंनागंनिष्कंनिष्कंविमिश्रयेत् ।
शुद्धगंधस्यद्वौनिष्कौवराटीनांचतुष्टयम् ॥ १५४ ॥
एकीकृत्यपुटेपच्यात्पूर्वेणैवविमिश्रयेत् ।
पूर्वोक्तैश्चद्रवैर्मर्द्यपुटेनैकेनपाचयेत् ॥ १५५ ॥
चूर्णयेन्मरिचैःसप्ततुत्थटंकणयोर्दश ।
मेलयेच्चपृथङ्निष्कान्प्राणत्राणाह्वयोरसः ॥ १५६ ॥
भक्षयेन्निष्कपादार्द्धमसाध्यंराजयक्ष्मनुत् ।
शोथोदरार्शोग्रहणीपांडुगुल्महरञ्चयत् ॥ १५७ ॥

अर्थ—लोहेकी भस्म चार तोले, सोनामाखी ४ तोले, भांगराका रस ८ तोले और त्रिफलाका काढा ४ तोले लेवे, इन सबको कढाईमें डालकर खूब घोटे, पश्चात् पात्रमें रख गजपुटमें तीनवार पकावे और प्रतिपुट पूर्वोक्त रसोंमें मर्दन करता जाय, तदनन्तर पारेकी भस्म ४ मासे, सीसेकी भस्म ४ मासे, शुद्धगंधक ८ मासे और कौड़ीकी भस्म १६ मासे मिलाकर भांगरेके रस और त्रिफलेके काढेमें खरल कर गजपुटमें फूँकदेवे, पश्चात् इस रसमें कालीमिरचोंका चूर्ण २८ मासे, तूतिया ४० मासे और सुहागा ४० मासे मिलादेवे । इसकी मात्रा तीनरत्तीकी है । यह असाध्यराजयक्ष्मा रोगको दूर करैहै तथा सूजन, उदररोग, बवासीर, संग्रहणी, पांडु और गुल्मरोगको दूर करैहै ॥ १५२–१५७ ॥

अथ हेममृगांकरसः ।

मृतंसूतंमृतंहेमशुद्धगंधकटंकणम् ।
प्रत्येकमर्द्धनिष्कंस्यान्मृतशुल्वंद्विनिष्ककम् ॥ १५८ ॥
शंखनिष्कद्वयंचूर्णसर्वमेकत्रकारयेत् ।

पूरयेत्पूर्वचूर्णेनपुटयेच्चमृगांकवत् ॥ १५९ ॥
ततश्चार्द्रकनिर्य्यासैः सार्द्धंरुद्धापुटेपचेत् ।
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णंद्वात्रिंशन्मरिचैर्युतम् ॥ १६० ॥
चूर्णाच्चतुर्गुणंगंधमेकीकृत्यविचूर्णयेत् ।
पंचमांशंघृतंलेह्यमसाध्यंराजयक्ष्मनुत् ॥ १६१ ॥
शोथोदराशोग्रहणीज्वरगुल्मांश्चनाशयेत् ।
रसोहेममृगांकोऽयंह्यनुपानंमृगांकवत् ॥ १६२ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म २ मासे, सोनेकीभस्म २ मासे, शुद्ध गंधक २ मासे सुहागा २ मासे तांबेकीभस्म ८ मासे और शंखका चूर्ण ८ मासे लेवे, फिर इन सबको मिलाकर मृगांकरसकी नाई गजपुटमें पकावे, पश्चात् अदरखके रसमें भावना देकर गजपुटमें फूंक देवे, जब स्वयं शीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्ण करले, फिर इस चूर्णमें ३२ काली मिरचोंका चूर्ण, चौगुना गंधक मिलादेवे । इसमें पांचभाग घृत मिलाकर चाटनेसे–असाध्य राजयक्ष्मा रोग, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर और गुल्मरोगको दूर करताहै । इसमें अनुपान मृगांकरसकी समान जानना ॥१५८॥१५९॥१६०॥१६१॥ ॥१६२॥

अथ कालान्तकरसः ।

कार्य्यालोहमयीमूषाऊर्द्धतोद्वादशांगुला ।
मर्दितंस्वर्णवाराहीगृहकन्यारसैःसमम् ॥ १६३ ॥
लशुनैर्यामभात्रञ्चपिण्डंकृत्वानिवेशयेत् ।
पूर्वोक्तायाश्चमूषायांसूतपादञ्चगंधकम् ॥ १६४ ॥
निर्गुण्डीरससंपिष्टंमूषायांतंविनिक्षिपेत् ।
आच्छाद्यलौहचक्रेणवक्रयंत्रेणजारयेत् ॥ १६५ ॥
एवमष्टपुटेजीर्णंसमुद्धृत्यविचूर्णयेत् ।
पंचगुञ्जामितंखादेदनुपानंमृगांकवत् ॥ १६६ ॥
देयःकालान्तकोनाम्नारसोऽयंराजयक्ष्मनुत् ।

अर्थ–बारह अंगुल ऊँची लोहेकी मूषा बनावे, उसमें स्वर्ण और वाराही कन्दको घीकुवार और लसुनके रसमें एक एक पहर मर्दन कर गोला बनावै

पश्चात् पारा और पारेसे चौथाभाग गंधकको सम्हालूके रसमें पीसकर मूषामें डालदेवे, और मूषाको लोहेके चक्रसे ढककर वक्रयंत्रद्वारा आठबार पकावै, जब जीर्ण होजाय तब निकालकर चूर्ण करले । इसकी मात्रा पाँचरत्तीहै । अनुपान मृगांककी समानहै यह कालान्तक नामवाला रस—राजयक्ष्मारोगको दूर करै है॥ ॥ १६३ ॥ १६४ ॥ १६५ ॥ १६६ ॥

अथ यक्ष्मिणः पथ्यापथ्यम् ।

उपद्रवप्रशान्त्यर्थंपथ्यंवैकथ्यतेक्षये ।
घृतपक्कःप्रदातव्योलावकस्तित्तिरःशशः ॥ १६७ ॥
मरिचैर्जीरकेणैवसंस्कृतंपथ्यमाचरेत् ।
वर्जयेल्लवणंहिंगुतक्रंदधिविदाहितत् ॥ १६८ ॥
क्षीरमाजंदधिवाथपथ्यवर्गेयथोचितम् ।
वर्जयेत्तत्रवर्ज्यश्चरसश्चापिहिगुग्गुलोः ॥ १६९ ॥
पिबेद्वान्तिप्रशान्त्यर्थंक्षीरैश्छिन्नरुहारसम् ।
उशीरंतगरंशुण्ठीकंकोलंचन्दनद्वयम् ॥ १७० ॥
लवंगंपिप्पलीमूलंकृष्णैलानागकेशरम् ।
मुस्तामलककर्पूरंतुगाक्षीरंचपत्रकम् ॥ १७१ ॥
कृष्णागुरुसमंचूर्णंसितास्यादष्टमांशतः ।
रक्तवान्तिश्चसन्तापंनाशयेन्नात्रसंशयः ॥ १७२ ॥

अर्थ—घृतसे पकाया हुआ लवा, तीतर और खरगोशका मांस, तथा मिरच और जीरेसे संस्कृत किया हुआ पथ्य राजयक्ष्मारोगीको हितकारीहै । लवण, हींग, तक्र, दधि, सर्वविदाही द्रव्य, और गूगलका रस यह सब राजयक्ष्मारोगीको अपथ्यहै । बकरीका दूध अथवा दही इनको यथोचित विचारकर सेवन करे । गिलोयके रसमें सहत डाल पीनेसे राजरोगमें उत्पन्न हुआ वमन दूर होताहै । खस, तगर, सोंठ, शीतलचीनी, चन्दन, लालचन्दन, लौंग, पीपलामूल पीपल, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा, आमला, कपूर, वंशलोचन तेजपात, और काली अगर, यह सब समान भाग और मिश्री आठभाग लेवे, सबको एकत्र पीस चूर्ण बनावे । यह चूर्ण रक्तवान्ति और सन्तापको दूर करै— ॥ १६७ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥

अथ रास्नादिलौहम् ।

रास्नाकर्पूरतालीशभेकपर्णीशिलाह्वयैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लोहोयक्ष्मान्तकोमतः ॥ १७३ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपिशम्भोःसुदुर्जयम् ।
हन्तिकासंस्वराघातंक्षयकासंक्षतक्षयम् ॥ १७४ ॥
बलवर्णाग्निपुष्टीनांवर्द्धनोदोषनाशनः ॥ १७५ ॥
त्रिकत्रयंत्रिकटुत्रिफलाचित्रकमुस्ताविडंगंसर्वचूर्णसमलौहम् ।

अर्थ–रायसन, कपूर, तालीशपत्र, मण्डूकपर्णी, मैनशिल, त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, वायबिडंग और नागरमोथा, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहा मिलावे । इस लोहेको सेवनकरनेसे सर्व उपद्रवयुक्त, दुर्जयराजरोग, खाँसी, स्वराघात, क्षय, कास और क्षतक्षयको क्षय करैहै। बल, वर्ण, अग्नि और पुष्टिको बढानेवाला और दोपनाशक है ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥

अथ विन्ध्यवासियोगलौहम् ।

व्योषंशतावरीत्रीणिफलानिद्वेफलेतथा ।
सर्वमेहहरोयोगःसोऽयंलोहरुजान्वितः ॥ १७६ ॥
एषवक्षःक्षतंहन्तिकण्ठजांविविधांरुजाम् ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रंबाहुस्तम्भार्दितन्तथा ॥ १७७ ॥
सर्वचूर्णसमंलौहम् ।

अर्थ–त्रिकुटा, शतावरी, त्रिफला, जायफल, कायफल, यह सब समानभाग लेवे, और सबकी समान लोहेका चूर्ण मिलावे, । यह लोह–छातीका क्षत, अनेक प्रकारके कंठके रोग, अत्युग्रराजयक्ष्मा, बाहुस्तम्भ और अर्दितरोग विनष्ट करताहै ॥ १७६ ॥ १७७ ॥

अथ राजरोगहरलौहम् ।

मधुताप्यविडंगाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
घ्नन्तियक्ष्माणमत्युग्रंसेव्यंवानाहिताशिना ॥ १७८ ॥
अत्रमधुघृताभ्यांलेहःश्रेष्ठत्वात्सर्वचूर्णसमंलोहश्च ।

अर्थ-सहत, सोनामाखी,' बायविडंग, शिलाजीत, घृत और हरड़, यह सब समान भाग लेवै और सबकी बराबर लोहेका चूरन मिलावै । इसको सेवनकरनेसे अत्यन्त उग्र राजरोग शान्त होताहै ॥ १७८ ॥

अथ शिलाजत्वादिलौहम् ।

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिर्लोहोभिषक्सूतकताप्यभक्षः ।
आपूर्यतेदुर्बलदेहधातुस्त्रिपंचरात्रेणयथाशशांकः ॥ १७९ ॥

अर्थ-शिलाजीत, बायविडंग, पारा और सोनामाखी, इन सबको समान भाग लेकर चूर्णकर सहत और घृतके साथ चाटनेसे आठ दिनमें राजयक्ष्मा रोग नष्ट होकर शरीर चन्द्रमाकी समान दीप्तिमान् होजाता है ॥ १७९ ॥

अथ महाभ्रवटिका ।

अभ्रकं[illegible]टितंताम्रंलोहंगंधकपारदम् ।
कुलटाटंकणक्षारंत्रिफलाचपलंपलम् ॥ १८० ॥
गरलञ्चतथामाषचतुष्कंचैवचूर्णितम् ।
दृढपाषाणपात्रेचभूयोभूयःसुचूर्णितम् ॥ १८१ ॥
तत्सर्वंभावयेदेपांरसैःप्रत्येकशःपलैः ।
देवराजाशनाख्यस्यकेशराजाख्यकस्यच ॥ १८२ ॥
सोमराजस्यभृंगाख्यराजस्यत्रिफलस्यच ।
पारिभद्राग्निमन्थस्यवृद्धदारकतुम्बुरो ॥ १८३ ॥
मण्डूकपर्णीनिर्गुण्डीपूतिकोन्मत्तकस्यच ।
ग्रीष्मसुन्दरकन्याटरूपकस्यक्रमेणतु ॥ १८४ ॥
रसश्चताम्रपर्ण्याश्चदलोत्थैर्भावितंभिषक् ।
द्रवेकिंचित्स्थितंचूर्णमरिचस्यपलंक्षिपेत् ॥ १८५ ॥
ततश्चैववटींकुर्याच्चतुस्त्रीण्येकरक्तिका ।
ज्वरेचैवातिसारेचकासेश्वासेक्षयज्वरे ॥ १८६ ॥
सन्निपातज्वरेचैवत्रिविधेविषमज्वरे ।
क्षयरोगेषुसर्वेषुक्षीणशुक्रेषुयक्ष्मणि ॥ १८७ ॥

ग्रहण्यांचिरजातायां ःतिकायांविशेषतः ।
शोथेशूलेतथासाध्येस्थविरेचाममारुते ॥ १८८ ॥
मन्··ानलेबलेचैवसकलेश्लेष्मजेगदे ।
पीनसेऽपीनसेचैवपक्केऽपक्केचशस्यते ॥ १८९ ॥
वातश्लेष्मणिवातेचविविधेद्वन्द्वजेतथा ।
आमदे··तेपित्तेशस्तंबलावृतेऽपिवा ॥ १९० ॥
अष्टधैवोदरेचैवकोष्ठरोगेप्रशस्यते ।
अजीर्णकर्णरोगेचकृशस्थौल्येऽपिदेहिनि ॥ १९१ ॥
अयंसर्वगदोच्छेदीरसोहिपरिकीर्त्तितः ।
रसायनवरश्रेष्ठंवाजीकरणमुत्तमम् ॥ १९२ ॥
वृष्यंमधुरमाहारंप्रयोगेपरिकल्पयेत् ।
महाभ्रकमिदंब्रह्मकमनीयकमीरितम् ॥ १९३ ॥
यइहसकलकालंकल्पकामःकरोति ।
सर्षपपरिमाणैर्नित्यमभ्यासयोगैः ।
सखलुविगतरोगेभोगमुक्तोऽग्नियुक्तो
भवतिपलितहीनःसप्तकल्पान्तजीवी ॥ १९४ ॥

अर्थ–पुटित अभ्रक, ताँबा, लोहा, गंधक, पारा मैनशिल, सुहागा और त्रिफला, यह प्रत्येक चार चार तोले और विषका चूर्ण डार मासेभर ले, पीछे इन सबको भाँग, कुकुरभांगरा, बापची, भांगरा, त्रिफला, पारिभद्र, अग्निमन्थ, विधारा, तुम्बुरु, मण्डूकपर्णी, निर्गुण्डी, करंज, धतूरा, ग्रीष्मसुन्दर, घीकुआर, अडूसा और मँजीठ इनके चार चार तोले रसमें अलग अलग भावन देकर चारतोले कालीमिरचोंका चूर्ण मिलावै, एक, दो, तीन, वा चार चा रत्तीकी गोली बनावै, इन गोलियोंको यथायोग्य मात्राके अनुसार भक्षण करे यह गोली–ज्वर, अतिसार, खाँसी, श्वास, ज्वरयुक्तक्षय, सन्निपातज्वर, नाना प्रकारके विषमज्वर, सर्वप्रकारके क्षयरोग, क्षीणशुक्र, यक्ष्मारोग, बहुतदिनोंकी संग्रहणी, प्रसूतिकारोग, सूजन, शूल, पुरानाआमवात रोग, मन्दाग्नि, बलक्षय सर्वप्रकारके कफरोग, पीनसरोग, अपीनस, पक्कपीनस, अपक्कपीनस, वातकफ

वात, द्वन्द्वजरोग, आमदोष, पित्तरोग, आठप्रकारके उदररोग, अजीर्ण, कर्णरोग, कृशता और स्थूलताको दूर करैहै । यह रस सर्वरोगनाशक, सर्वरसायनोंमें श्रेष्ठ, उत्तम वाजीकरणहै । इसके ऊपर वृष्य और मधुर भोजनकरना चाहिये । इसको सरसोंकी समान सदा सेवनकरनेसे मनुष्य कल्पपर्यन्त जीते रहतेहैं । तथा इसके सेवनसे सफेद बाल काले होजातेहैं ॥ १८० ॥ १८१ ॥ १८२ ॥ ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ १९० ॥ ॥ १९१ ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥

अथ चन्दनाद्यं तैलम् ।

चन्दनाम्बुनखंवाप्यंयष्टीशैलेयपद्मकम् ।
मञ्जिष्ठासरलंदारुचव्यैलापूतिकेशरम् ॥ १९५ ॥
पत्रंतैलसुरामांसीकक्कोलंवनिताम्बुदम् ।
हरिद्रेशारिवेतिक्तालवंगागुरुकुंकुमम् ॥ १९६ ॥
त्वग्रेणुनलिकाचैभिस्तैलंमस्तुचतुर्गुणम् ।
लाक्षारससमंसिद्धंग्रहघ्नंबलवर्णकृत् ॥ १९७ ॥
अपस्मारज्वरोन्मादेहृद्याऽलक्ष्मीविनाशनम् ।
आयुष्पुष्टिकरंचैववशीकरणमुत्तमम् ॥ १९८ ॥

अर्थ—चन्दन, सुगन्धवाला, नख, कूट, मुलैठी, शैलेय (भूरिछरीला)पद्माख, मजीठ, सरल, देवदारु, इलायची, चव्य, रोहिपतृण, नागकेशर, शिलारस, कपूरकचरी, शीतलचीनी, फूलप्रियंगु, नागरमोथा, हलदी, दारुहलदी, सारिवा, श्यामालता, कुटकी, लौंग, अगर, केशर दालचीनी, रेणुका और नलिका, इन सबका कल्क सेरभर, तिलकातेल चारसेर, लाखका रस चारसेर और दहीका पानी सोलहसेर लेवे, पश्चात् सबको विधिपूर्वक मिलाकर तेलको सिद्धकरे । यह तेल ग्रहनाशक, बलकारक, वर्णको सुन्दर करनेवाला, तथा अपस्मार (मृगी) ज्वर, उन्माद और अलक्ष्मी विनाशकहै, हृदयको हितकारी, आयुवर्द्धक, पुष्टिकारक और उत्तम वशीकरणहै ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ १९८ ॥

अथ महच्चन्दनाद्यं तैलम् ।

चन्दना॰ ॰रुतालीशनखमञ्जिष्ठपद्मकाः ।
मुस्तकंचशठीलाक्षाहरिद्रेरक्तचन्दनम् ॥ १९९ ॥

एषांप्रतिपलैश्चूर्णैस्तैलार्द्धंपात्रकेपचेत् ।
भार्ङ्गीवासाकण्टकारीवाट्यालकगुडूचिका ॥ २०० ॥
एषांपलशतक्काथेसमभागेजडीकृते ।
पक्त्वातैलंप्रदातव्यंयक्ष्मरोगविनाशनम् ॥ २०१ ॥
कासघ्नंज्वरदोषघ्नंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ।
पापाऽलक्ष्मीप्रशमनंग्रहदोषनिवारणम् ॥ २०२ ॥
श्रीमद्गहननाथेननिर्मितंविश्वसम्पदि ॥ २०३ ॥

इतिराजयक्ष्मक्षतक्षीणाध्यायः ।

अर्थ—चन्दन, अगर, तालीशपत्र, नख, मजीठ, पद्माख, नागरमोथा, कचूर, लाख, हलदी, दारुहलदी, लालचन्दन, यह प्रत्येक चार चार तोले, तिलका तेल ९६ तोले लेवे, भारंगी, बाँसा, कटेरी, खिरैटी और गिलोय इनका क्काथ ४०० चारसौ तोले लेवे, पश्चात् क्काथमें पूर्वोक्त औषधियें और तेल डालकर पकावे, जब सिद्ध होजाय तो उतारले । यह तेल—राजयक्ष्मारोग, खाँसी, ज्वर, पाप, अलक्ष्मी, और ज्वरको दूर करैहै, बलको बढानेवाला, वर्णको सुन्दर करनेवाला, अग्निवर्द्धक है, यह तेल श्रीमान् गहननाथने संसारके उपकारार्थ निर्माण कियाहै ॥ १९९ ॥ २०० ॥ २०१ ॥ २०२ ॥ २०३ ॥

इतिराजयक्ष्मक्षतक्षीणाधिकारःसमाप्तः ।

कासाच्छ्वासात्क्षयच्छर्दिस्वरभेदादयोगदाः ।
भवन्त्युपेक्षयायस्मात्तस्मात्तंत्वरयाजयेत् ॥ १ ॥
केवलानिलजंकासंस्नेहैरेवासमुपाचरेत् ।
लेहैर्यूषैस्तथाभ्यंगैःस्नेहसेकावगाहनैः ॥ २ ॥
बस्तिभिर्बद्धविड्घातंसपित्तंचोर्द्धभक्तिकैः ।
घृतैःक्षीरैश्चसकलंजयेत्स्नेहविरेचनम् ॥ ३ ॥
वास्तुकोवायसीशाकंमूलकंसुनिषण्णकम् ।
स्नेहास्तैलादयोभक्ष्याःक्षीरेक्षुरसगौडिकाः ॥ ४ ॥
दध्यारनालाम्लफलप्रसन्नापानमेवच ।

शस्यतेवातकासेषुस्वाद्वम्ललवणानिच ॥ ५ ॥
ग्राम्यानूपोदकैःशालियवगोधूमयष्टिकान् ।
रसैर्माषात्मगुप्तानांयूषैर्वाभोजयेद्धितान् ॥ ६ ॥
कण्टकारिरसेसर्पिर्बुधोयूपसुसंस्कृतम् ।
सगौरामलकःसाम्लःपंचकासान्व्यपोहति ॥ ७ ॥

सगौरामलकःपरिणताम्लकः ।

पंचमूलीकृतःक्काथःपिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
रसार्थमश्नुतोनित्यंवातकासमुदस्यति ॥ ८ ॥

पंचमूलीस्वल्पा ।

शठीशृंगीकणाभार्ङ्गीगुडवारिदयासकैः ।
सतैलैर्वातकासघ्नोलेहोऽयमपराजितः ॥ ९ ॥

गुडतैलाभ्यांलिहः ।

चूर्णिताविश्वदुःस्पर्शाशठीद्राक्षासितोपला ।
लिह्यात्कर्कटशृंगंचकासेतैलेनवातजे ॥ १० ॥
भार्ङ्गीद्राक्षाशठीशृंगीपिप्पलीविश्वभेपजैः ।
गुडतैलयुतोलेहोहितोमारुतकासिनाम् ॥ ११ ॥

अर्थ–खाँसी और श्वासके होनेसे क्षय, वमन, स्वरभेदादिरोग, उत्पन्न होतेहैं, इसकारण खाँसी और श्वासरोगकी शीघ्र चिकित्सा करनी चाहिये। केवल वातसे उत्पन्न हुई खाँसीमें स्नेहद्वारा चिकित्सा करनी चाहिये । अवलेह, यूप, अभ्यंग, स्नेह, अवगाहन, बस्ति और ऊर्द्ध्वभक्तिके द्वारा मलबद्ध पित्तज खाँसीकी और घृत, क्षीर तथा स्नेहके विरेचनद्वारा सर्वप्रकारकी खाँसीकी चिकित्सा करनी चाहिये । बथुआ, मकोय, मूली, शिरिआरीका शाक, तैलादिस्नेह, दूध, ईखकारस, गुडके पदार्थ, दही, काँजी, अम्ल फल, प्रसन्नामदिरा, स्वादिष्ठ, अम्ल और नमकीन पदार्थ, यह सब वातकी खाँसीमें हितकारीहैं । ग्रामके जीव, अनूपके जीव और जलके जीव, इनसबका मांस, शालिधानके चावल, जौ, गेहूँ, साठीधानके चावल, उड़द और कौंछके यूपके साथ भोजनके पदार्थ सेवन करै । कटेरीका रस और घृतकेद्वारा संस्कृत किया हुआ आमलेका

यूष अम्लरसमें भिजोकर पीनेसे वातज खाँसी दूर होती है । लघुपंचमूलके क्वाथमें पीपलका चूरन डालकर पीनेसे वातज खाँसी नष्ट होतीहै । कचूर, काकडासींगी, पीपल, भारंगी, नागरमोथा, और जवासा इनके चूर्णमें गुड और तेल मिलाकर बनायाहुआ अवलेह चाटनेसे वातकी खाँसी शान्त होतीहै । सोंठ, गोखरू, कचूर, दाख, मिश्री और काकडाशिंगी, इनका चूर्ण तेलमें मिलाकर चाटनेसे—वातज खाँसी दूर होती है । भारंगी, दाख, काकडाशिंगी, कचूर, पीपल, और सोंठ, इनके चूरनमें गुड़ और तेल मिलाकर चाटनेसे वातकी खाँसी नष्ट होती है ॥ १-११ ॥

अथ पित्तकासोपायः ।

पित्तकासेतनुकफेवमनंसर्पिषाहितम् ।
तथादमनकाश्मर्यमधुकक्काथजैर्द्रवैः ॥ १२ ॥
यष्ट्याह्वफलकल्कैर्वाविदारीक्षुरसैर्युतैः ॥ १३ ॥
सर्पिषावमनद्रव्ययुक्तेन ।
द्राक्षामलकखर्जूरपिप्पलीमरिचान्वितम् ।
पित्तकासहरंह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसर्पिषा ॥ १४ ॥
खर्जूरपिप्पलीद्राक्षासितालाजाःसमांशिकाः ।
मधुसर्पिर्युतोलेहःपित्तकासहरःपरः ॥ १५ ॥

अर्थ—किंचित् कफयुक्त पित्तकी खाँसीमें घृत मिलाकर वमन कराना हितकारी है, तथा मैनफल, कुम्भेर, और महुआ इनके काढेमें, अथवा मुलेठीके कल्कमें वा बिदारीकन्द और ईखके रसमें घृत मिलाकर वमन कराना चाहिये। दाख, आमला, खजूर. पीपल और कालीमिरच. इनके चूर्णमें सहत और घी मिलाकर चाटे। खजूर, पीपल, दाख, मिश्री और खीलें, यह सब समानभाग ले सहत और घी मिलाकर चाटनेसे पित्तकी खाँसी दूर होतीहै ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ कफकासोपायः ।

[illegible]लिनंवमनेनादौशोधितंकफकासिनम् ।
यवान्नैःकटुरूक्षोष्णैःकफघ्नैश्चाप्युपाचरेत् ॥ १६ ॥
पिप्पलीक्षारकैर्यूषैःकौलत्थैर्मूलकस्यच ।
लघून्यन्नानिभुञ्जीतरसैर्वाकटुकान्वितैः ॥ १७ ॥

कट्फलंपौष्करंभार्ङ्गीविश्वपिप्पलिसाधितम्।
पिबेत्काथेकफोद्रेकेकासेश्वासेगलग्रहे ॥ १८ ॥
स्वरसंशृंगवेरस्यमाक्षिकेणसमन्वितम्।
पाययेच्छ्वासकासघ्नंप्रतिश्यायकफापहम् ॥ १९ ॥
पार्श्वेशूलेज्वरेकासेश्वासेश्लेष्मसमुद्भवे।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंदशमूलीजलंपिबेत् ॥ २० ॥
तैलयुक्तश्चापिप्पल्याःकल्कार्थंससितोत्पलम्।
पिबेद्वाकफकासघ्नंकुलत्थसलिलाप्लुतम् ॥ २१ ॥

अर्थ–जो बलवान् मनुष्यको कफकी खाँसी हो तो वमन करावे, तथा यवान्न, कटु, रूक्ष, और कफनाशकद्रव्य सेवन करावे। कफकी खाँसीमें पिप्पलीका क्षार, कुलथीका यूष, मूलीकायूष, लघु अन्न और मरिचादियुक्त मांसरस हितकारीहै। कायफल, पोहकरमूल, भारंगी, सोंठ, और पीपल, इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे–कफज खाँसी, श्वास और गलग्रहदूर होताहै। अदरखके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे–श्वास, खाँसी प्रतिश्याय और कफका नाश होताहै। दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे–पार्श्वशूल ज्वर और कफसे उत्पन्न हुआ कास और श्वासरोग नष्ट होताहै। पीपलका कल्क, मिश्री और कमल, इनको तेलमें पीसकर खानेसे अथवा कुलथीके काथमें मिलाकर पीनेसे कफकी खाँसी शान्त होतीहै ॥ १६–२१ ॥

अथ कट्फलादिक्काथः।

कट्फलंचतथाभार्ङ्गीमुस्तंधान्यंवचाभया।
शृंगीपर्पटकंशुण्ठीसुराह्वश्चजलेश्रृतम् ॥ २२ ॥
मधुहिंगुयुतंपेयंकासेवातकफात्मके।
कण्ठरोगेमुखेशूलेश्वासहिक्काज्वरेषुच ॥ २३ ॥

अर्थ–कायफल, भारंगी, नागरमोथा, धनियाँ, बच. काकड़ाशिंगी, पित्तपापडा, सोंठ, और देवदारु, इनके काढेमें सहत और हींग मिलाकर पीनेसे–खाँसी, वातज, कफज, कण्ठरोग, मुखरोग, शूल, श्वास, हिचकी और ज्वर दूर होताहै ॥ २२ ॥ २३ ॥

अथ सर्वकासोपायः ।

कण्टकारिकृतःक्काथःसकृष्णःसर्वकासहा ।
तिंतिडीपत्रजःक्काथोहिंगुसैन्धवसंयुतः ॥ २४ ॥
दुष्टकासंजयेदाशुघनवृन्दमिवानिलः ।
बिभीतकंघृताभ्यक्तंगोशकृत्परिवेष्टितम् ॥ २५ ॥
स्विन्नमग्नौहरेत्कासंध्रुवमास्यविधारितम् ।
वासकस्वरसःपेयोमधुयुक्तोहिताशिना ॥ २६ ॥
पित्तश्लेष्मकृतेकासेरक्तपित्तेविशेषतः ।
कासेचक्षतजेचान्यैर्जीवनीयैश्चबृंहणैः ॥ २७ ॥
शमनंपित्तकासोक्तैरन्यैश्चमधुरौषधैः ।
वातानुबन्धेवातघ्नैस्तेनस्वाभ्यंजनेहितम् ॥ २८ ॥
मंजिष्ठांजनमूर्वाग्निपाठाकृष्णानिशायुतः ।
क्षतक्षयजकासघ्नंलीढंचमधुनासह ॥ २९ ॥
मधुकंपिप्पलीद्राक्षालाक्षाशृंगीशतावरी ।
द्विगुणाचतुगार्क्षीरीसितासर्वैश्चतुर्गुणा ॥ ३० ॥
लिह्यात्तंमधुसर्पिर्भ्यांशतकासनिवृत्तये ।
पिप्पलीपद्मकंलाक्षासुपक्कंबृहतीफलम् ॥ ३१ ॥
घृतक्षौद्रयुतोलेपःक्षयकासनिबर्हणः ।
सन्निपातभवोह्येषक्षयकासःसुदारुणः ॥ ३२ ॥
सन्निपातहितंतस्मात्कार्यमत्रचिकित्सितम् ।
कुनटीसैन्धवव्योषविडंगामयहिंगुभिः ॥ ३३ ॥
लेहःसाज्यमधुःकासश्वासहिक्कानिबर्हणः ।
वचाहरिद्रासिन्धूत्थबिभीतककणारजः ॥ ३४ ॥
पुटेबद्धामुखेक्षिप्तंकासश्वासापहंनिशि ॥ ३५ ॥

अर्थ—कटेरीके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्वप्रकारकी खाँसी दूर होतीहै। इमलीके पत्तोंके क्वाथमें हींग और सैंधानोनका चूर्ण डालकर पीनेसे दुष्ट खाँसी शीघ्र नष्ट होतीहै, जैसे पवनसे बादलोंका समूह नष्ट होताहै। बहेडेको घीमें भिजोकर पश्चात् गोबरसे लपेट धूपमें सुखा आगमें पकाकर मुखमें रखनेसे खाँसी दूर होजाती है अडूसेके रसमें सहत डालकर पीवै तो पित्तकफसे उत्पन्न हुई खाँसी और रक्तपित्त रोग दूरहो। काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा महामेदा, जीवन्ती और मुलैठी इन औषधियोंको सेवन करना तथा पित्तजकासनिवारक औषधियोंको सेवन करना और बृंहण तथा मधुरद्रव्योंको सेवनकरना चाहिये। वातकी खाँसीमें वातनाशक द्रव्योंका सेवनकरना और तैलादिका मालिस करना हितकारीहै। मजीठ, रसोत, मूर्वा, चीता, पाढ, पीपल और हलदी इनके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसे क्षतक्षयज खाँसी दूर होतीहै। मुलैठी, दाख, पीपल, लाख, काकडाशिंगी, और शतावर, यह प्रत्येक एक एक भाग, वंशलोचन बारह भाग और मिश्री सबसे चौगुनी लेवे, पश्चात् इन सबको बारीक पीस सहत और घीमें मिलाकर चाटनेसे क्षतकी खांसी दूर होती है। पीपल, पद्माख, लाख और पका हुआ कटाईका फल, इनके चूर्णमें सहत और घृत मिलाकर चाटै तो क्षयकी खांसी दूर होवे। सन्निपातसे उत्पन्न हुई क्षयकी खांसीमें सन्निपातनाशक क्रियाका प्रयोग करना चाहिये। मनशिल, सैंधानोन, त्रिकुटा, वायविडंग, कूठ और हींग इनके चूर्णमें घी और सहत मिलाकर चाटनेसे खांसी, श्वास और हिक्कारोग दूर होताहै। वच, हलदी, सैंधानोन, बहेडा और पीपल, इन सबका चूर्ण एकत्रकर कपडेकी पोटलीमें बांध रात्रिके विषे मुखमें रक्खै तो खाँसी और श्वास दूर होजाय॥ २४–३५॥

अथ मरिचाद्यं चूर्णम्।

कर्षः कर्षार्द्धमथोपलं पलद्वयं तथार्द्धकर्षश्च।
मरिचस्य च पिप्पलीनां दाडिमगुडयावशूकानाम्॥३६॥
सर्वौषधैरसाध्या ये कासा वैद्यविवर्जिताः।
अपि पूयं छर्दयतां तेषामिदमौषधं पथ्यम्॥ ३७॥

अर्थ—कालीमिरच दो तोले, पीपल एक तोला, अनारकी छाल चार तोले, गुड आठतोले, और जवाखार एकतोले लेवे, सबको पीसकर एकत्र चूर्ण करले

जो कासरोग अनेक प्रकारकी औषधियोंके सेवन करनेसे शान्त न हुआ होय तथा जिनको वैद्य असाध्य जानकर छोड़ बैठेहों वह कासरोग इसचूर्णसे निःसन्देह नष्ट होजाताहै और यह चूर्ण राधयुक्त वमनको दूर करैहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथ समशर्करचूर्णम् ।

लवंगजातीफलपिप्पलीनां
भागान्प्रकल्प्याक्षसमानमीषाम् ।
पलार्द्धमेकंमरिचस्यदद्या-
त्पलानिचत्वारिमहौषधस्य ॥ ३८ ॥
सितासमंचूर्णमिदंप्रसह्यरोगानिमानाशुबलान्निहन्यात् ।
कासज्वरारोचकमेहगुल्माञ्छ्वासाग्निमान्द्यग्रहणीप्रदोषान् ३९॥

अर्थ--लौंग, जायफल, और पीपल, यह प्रत्येक एक एक तोला, कालीमिरच दो तोले, सोंठ सोलह तोले और सबकी बराबर मिश्री लेवै, पश्चात् सबको पीसकर बारीक चूर्ण करले। इस चूर्णको सेवन करनेसे--खाँसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, श्वास, मन्दाग्नि और संग्रहणीरोग दूर होताहै ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अथ हरीतक्यादिमोदकः ।

हरीतकीकणाशुण्ठीमरिचंगुडसंयुतम् ।
कासघ्नोमोदकःप्रोक्तस्तृष्णारोचकनाशनः ॥ ४० ॥

अर्थ--हरड, पीपल, सोंठ, कालीमिरच और गुड, इनसबको एकत्रकर मोदक बनाके खानेसे खाँसी, तृषा और अरुचि दूर होतीहै ॥ ४० ॥

अथ हरीतक्यादिगुटिका ।

हरीतकीनागरमुस्तचूर्णंगुडेनतुल्यंगुटिकाविधेया ।
निवारयत्यास्यविधारितेयंश्वासंप्रवृद्धंप्रबलञ्चकासम् ४१

अर्थ--हरड, सोंठ, नागरमोथा, यह प्रत्येक एकएक भाग और गुड़ तीन भाग लेवै, फिर सबको मिलाकर गोली बनावै। इन गोलियोंको खानेसे बढा-हुआ श्वास और प्रबल खाँसी दूर होतीहै ॥ ४१ ॥

अथ व्योषान्तिकागुटिका ।

तालीशवह्निदीप्यकचविकाम्लवेतसव्योषैः ।
तुल्यैस्त्रिसुगन्धियुतैर्गुडेनगुटिकाप्रकर्त्तव्या ॥ ४२ ॥

कासश्वासारोचकपीनसयकृत्कंठवाङ्निरोधेषु।
ग्रहणीगुदोद्भवेषुगुटिकाव्योषान्तिकानाम॥ ४३ ॥
सर्वचूर्णस्यचतुर्थांशंत्रिसुगंधिचूर्णम्।

अर्थ--तालीशपत्र, चीता, अजवायन, चव्य, अमलवेत और त्रिकुटा, यह सब समानभागले, और सबसे चौथाई भाग दालचीनी, इलायची और तेजपात लेवै और सबसे दुगुना गुड लेवै, पश्चात् सबको मिलाकर गोली बनावै,। यह गोली–खाँसी, श्वास, अरुचि, पीनस, यकृत, कण्ठनिरोध, वाङ्निरोध, संग्रहणी और गुदाके रोगोंको दूर करैहै॥ ४२॥ ४३॥

अथ कासहरधूमपानविधिः।

रम्यमाणस्यकासेनमुखश्वासेचशस्यते।
श्वयथूद्गारकासेषुधूमपानंप्रयोजयेत्॥ ४४॥
मनःशिलालमधुकंमांसीमुस्तैंगुदैःपिबेत्।
धूमंत्र्यहश्चतस्यानुसगुडंचपयःपिबेत्॥ ४५॥
एषकासान्पृथग्द्वन्द्वसर्वदोषसमुद्भवान्।
शतैरपिप्रयोगाणांसाधयेदप्रसाधितान्॥ ४६॥

ऐंगुदंपुत्रञ्जीवफलम्।

मनःशिलालिप्तदलंबदर्याउपशोषितम्।
सक्षीरधूमपानाच्चमहाकासनिवारणम्॥ ४७॥

क्षीरमनुपानम्।

अर्कच्छदाशिलेतुल्येततोऽर्द्धंनकटुत्रिकम्।
चूर्णितंवह्निनिक्षिप्तंपिबेद्धूमञ्चयोगवित्॥ ४८॥
भक्षयेदथताम्बूलंपिबेद्दुग्धमथाम्बुवा।
कासाःपंचविधायान्तिनाशमाशुनसंशयः॥ ४९॥
मरिचशिलार्कक्षीरैरर्कत्वचमाशुभावितांशुष्काम्।
कृत्वाविधिनाधूमंपिबतःकासाःशमंयान्ति॥ ५०॥

अर्थ-मुखश्वास, हिचकी, उद्गार और कासरोगमें धूमपान करना हितकारक है। मनशिल, हरताल, मुलैठी, बालछड, नागरमोथा और पतजिया, इनका तीनदिन धूमपान करै, गुड और दूधके साथ भोजन करै तो सर्वप्रकारकी खाँसी और श्वास दूर होताहै। मनशिलको पीस बेरीके पत्तोंपै लेपकर धूपमें सुखा धूमपान करै और ऊपरसे दूध पान करै तो महाकासरोग नष्ट होताहै। आकके पत्ते और मैनशिलको समान भाग लेवे, और इनसे आधाभाग त्रिकुटेका चूर्ण लेवै, पीछे सबको मिलाकर चिलममें रख धूमपान करनेसे पाँच प्रकारकी खाँसी दूर होतीहै, इसके ऊपर नागर पान और दूध सेवन करै, अथवा जल पीवै, यह अनुपान है। कालीमिरच, मनशिल और आककी छाल इनको आकके दूधमें भिजो धूपमें सुखावै, फिर चिलममें रख धूमपान करनेसे खाँसी दूर होतीहै॥ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथ दशमूलघृतम्।

दशमूलाढकैःप्रस्थंघृतस्याक्षसमैःपचेत्।
पुष्कराह्वशठीबिल्वसुरसाव्योषहिंगुभिः ॥ ५१ ॥
पयोऽनुपानंतत्पेयंकासेवातकफात्मके।
श्वासरोगेषुसर्वेषुहिक्कायांचप्रशस्यते ॥ ५२ ॥
बिल्वस्यमूलम्।

अर्थ-घृत चारसेर, दशमूलका क्काथ १६ सोलहसेर और पोहकरमूल, कचूर, बेलकी जड, तुलसी, त्रिकुटा, हींग, इन प्रत्येकका कल्क दो दो तोले लेवे, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै। इसके सेवनकरनेसे वात और कफकी खाँसी, सर्वप्रकारके श्वासरोग, और हिक्कारोग दूर होतेहैं इस घीके ऊपर दूध पीवे, यह अनुपान है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अथ कालान्तकोरसः।

हिंगुलंमरिचंव्योषंटंकणंगंधकंसमम्।
जम्बीररससंयुक्तंमर्दयेद्याममात्रकम् ॥ ५३ ॥
कासंश्वासमतीसारंग्रहणीसान्निपातिकम्।
अपस्मारामयंमेहमजीर्णंचाग्निमान्द्यताम् ॥ ५४ ॥
गुंजामात्रप्रदानेनसर्वंनाशयतिक्षणात् ॥ ५५ ॥

अर्थ–सिंग्रफ, कालीमिरच, त्रिकुटा, सुहागा और गंधक, यह सब समान भाग लेकर जम्बीरी नीबूके रसमें एक प्रहर खरल करै। इसकी मात्रा एक रत्तीकीहै। इससे खाँसी, श्वास, अतीसार, संग्रहणी, सन्निपातिक अपस्माररोग, प्रमेह, अजीर्ण, और मन्दाग्नि, नष्ट होतीहै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

अथ चन्द्रामृतरसः।

त्रिकटुत्रिफलाचव्यधान्यजीरकसैन्धवाः।
प्रत्येकंतोलकंग्राह्यंछागीदुग्धेनघोलयेत् ॥ ५६ ॥
रसगंधकलोहानिप्रत्येकंकार्षिकंक्षिपेत्।
टंकणस्यपलंदत्त्वामरिचस्यपलार्द्धतः ॥ ५७ ॥
नवगुंजाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक्।
प्रातःकालेशुचिर्भूत्वाचिन्तयित्वामृतेश्वरीम् ॥ ५८ ॥
एकैकांवटिकांखादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम्।
नीलोत्पलरसेनापिकुलत्थस्यरसेनवा ॥ ५९ ॥
छागीदुग्धेनमण्डेनकैरवस्यरसेनवा।
निहन्तिविविधंकासंवातपित्तसमुद्भवम् ॥ ६० ॥
वातश्लेष्मोत्थितंदुष्टंपित्तश्लेष्मभवंचिरम्।
वातिकंपैत्तिकंवापिगरदोषसमन्वितम् ॥ ६१ ॥
सरक्तमथनीरक्तंज्वरश्वाससमन्वितम्।
तृड्दाहभ्रमशूलघ्नीरुच्यावह्निप्रदायिनी ॥ ६२ ॥
बलवर्णकरीवृष्याप्लीहगुल्मोदरापहा।
आनाहकृमिपाण्डुघ्नीजीर्णज्वरविनाशिनी ॥ ६३ ॥
इयंचन्द्रामृतानामचंद्रनाथेननिर्मिता।
वासागुडूचिकाभार्ङ्गीहस्तकंकण्टकारिका।
भोजनान्तेप्रयोक्तव्यावटिकावीर्यवर्द्धिनी ॥ ६४ ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, धनियाँ, जीरा और सैंधानोन, यह प्रत्येक एक एक तोला लेकर बकरीके दूधमें खरल करै, फिर पारा, गंधक और लोहा,

यह प्रत्येक दो दो तोले, सुहागा चार तोले, और काली मिरच दो तोले लेवै, पीछे इन सबको पूर्वोक्तमें मिलावै और खूब मर्दन करै, तदनन्तर नौ नौ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवे,पश्चात् प्रातःकाल पवित्र हो अमृतेश्वरी देवीका ध्यान धर एक गोली नित्यप्रति लालकमलके रसमें, अथवा नीलकमलके रसमें, वा कुलथीके रसमें, या बकरीके दूधमें, वा माँडमें अथवा कमोदिनीके रसमें मिलाकर भक्षण करै। यह गोली नानाप्रकारकी खाँसी, वातपित्तकी खाँसी, वातकफकी खाँसी, दुष्टखाँसी पित्तकफकी खाँसी, बहुतदिनोंकी खाँसी, वातकी खाँसी, पित्तकी खाँसी, विषके विकारोंसे उत्पन्न हुई खाँसी, रुधिरयुक्त खाँसी, रुधिररहित खाँसी, ज्वर और श्वाससंयुक्त खाँसी, तृषा, दाह, भ्रम, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, कृमि, पाण्डु, और जीर्णज्वरको दूर करैहै, तथा रुचिकारक, अग्निप्रदीप, बलकारक,वर्णको सुन्दर करनेवाली, और वीर्यवर्द्धक है। यह चन्द्रामृतरस, श्रीचन्द्रनाथने निर्माण कियाहै। अडूसा, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा और कटेरी, इनकी गोली बनाकर, भोजनके अन्तमें खाना चाहिये। इससे वीर्यकी वृद्धि होती है ॥ ५६-६४ ॥

अथ सर्वांगसुन्दररसः।

रसगंधकतुल्यांशौद्वौभागौटंकणस्यच।
मौक्तिकंविद्रुमंशंखंमारणीयाःसमांशतः ॥ ६५ ॥
हेमभस्मार्द्धभागंचसर्वंखल्वेविमर्दयेत्।
निम्बुद्रवस्ययोगेनपिण्डकांकारयेद्भिषक् ॥ ६६ ॥
पश्चाद्गजपुटंदद्याच्छीतलंचसमुद्धरेत्।
हेमभस्मसमंतीक्ष्णंतीक्ष्णार्द्धंदरदोमतः ॥ ६७ ॥
एकीकृत्यसमस्तानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत्।
ततःपूजांप्रकुर्वीतरसस्यदिवसेशुभे ॥ ६८ ॥
सर्वांगसुंदरोह्येषरोगराजनिकृन्तनः।
वातपित्तज्वरेघोरेसन्निपातेसुदारुणे ॥ ६९ ॥
अर्शस्संग्रहणीरोगेमेहेगुल्मेभगन्दरे।
निहन्तिवातजान्रोगाञ्श्लेष्मजांश्चविशेषतः ॥ ७० ॥

पिप्पलीचूर्णसं[illegible]घृतयुक्तमथापिच ।
भक्षयेत्पर्णखंडेनासितयाचार्द्रकेणवा ॥ ७१ ॥
गुडूचीसत्त्वसहितंप्रमेहेऽपिविशेषतः ।
[illegible]करेप्रोक्तःसिद्धयोगेरसोत्तमः ॥ ७२ ॥
राजिकातैलहिंग्वम्ललवणाढ्यंचवर्जयेत् ॥ ७३ ॥

अर्थ–पारा और गंधक समान भाग, सुहागा दो भाग, मोती–मूंगा, शंख, इनकी भस्म एकएक भाग और सोनेकी भस्म आधा भाग लेवै, सबको खरल-में डाल नीबूके रसमें घोटकर गोला बना लेवै, फिर इस गोलेको गजपुटमें फूंक देवै, जब शीतल होजाय तब निकालकर चूर्ण करले, पश्चात् इसमें सोनेकी भ-स्मकी बराबर तीक्ष्णलोहेकी भस्म और लोहेकी भस्मसे आधा भाग सिंग्रफ मिलावै, फिर सबको पीस बारीक चूर्ण करले । फिर इस रसकी शुभदिनमें पू-जाकर पीपलके चूर्णमें मिला, वा घीमें मिला, अथवा पानीमें मिला, या मिश्री-में मिला, अथवा अदरखके रसमें मिलाकर खावै तो गजरोग, वातपित्तज्वर, दारुण सन्निपातज्वर, बवासीर संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वातके रोग और कफके रोग दूरहों, और इसको गिलोयके सत्त्वके साथ खावै तो सर्वप्रका-रके प्रमेह रोग दूर होवैं । इस सर्वांगसुन्दर रसपै राई, तेल, हींग, खटाई और लवणके पदार्थ नहीं खाने चाहियें ॥ ६९–७३ ॥

अथ बृहत्कण्टकारीघृतम् ।

समूलपत्रशाखायाःकण्टकार्यारसाढके ।
घृतप्रस्थंबलाव्योपविडंगशठिचित्रकैः ॥ ७४ ॥
सौवर्चलयवक्षारबिल्वामलकपुष्करैः ॥
वृश्चीरबृहतीपथ्यायवानीदाडिमस्तथा ॥ ७५ ॥
द्राक्षापुनर्नवाचव्यादुरालभाम्लवेतसैः ॥
शृंगीतामलकीभार्ङ्गीरास्नागोक्षुरकैःपचेत् ॥ ७६ ॥
कल्कोऽयंसर्वकासेषुहिक्काश्वासेचशस्यते ।
कण्टकारीघृतंसिद्धंकफव्याधिविनाशनम् ॥ ७७ ॥

अर्थ–मूल, पत्र और शाखायुक्त कटेरीके ८ आठसेर रसमें दोसेर घृत, खि-रैटी, त्रिकुटा, बायबिडंग, कचूर, चीता, कालानोन, जवाखार, बेल, आमला,

पोहकरमूल, विषखपरा, कटाई, हरड, अजवायन, अनार, दाख, पुनर्नवा, चव्य, धमासा, अमलवेत, काकडाशिंगी, भुईआमला, भारंगी, रास्ना और गोखरू इनसबका कल्क समान भाग मिलाके विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै । यह कण्टकारीघृत सर्वप्रकारकी खाँसी, हिक्का, और श्वासरोगमें अत्यन्त हितकारी है, तथा कफव्याधिविनाशकहै ॥ ७४–७७ ॥

अथ व्याघ्रीहरीतकी ।

समूलपुष्पच्छदकण्टकार्यास्तुल्यांजलद्रोणपरिप्लुताश्च ।
हरीतकीनाञ्चशतंनिदध्यादथार्द्रपक्वाचरणावशेषम् ॥ ७८ ॥
गुडस्यदत्त्वाशतमेवचाग्नौविपक्वमुत्तार्यततःसुशीते ।
कटुत्रिकञ्चद्विपलप्रमाणंपलानिषट्पुष्परसस्यतत्र ॥ ७९ ॥
क्षिपेच्चतुर्जातपलंयथाग्निप्रयुज्यमानोविधिनावलेहः ।
वातात्मकंपित्तकफोद्भवञ्चद्विदोषकासानपियत्रिदोषम् ८०॥
यक्ष्माणमेकादशमुग्ररूपंभृगूपदिष्टंहिरसायनंस्यात् ॥ ८१ ॥

अर्थ–कटेरीका पंचांग १२ ॥ साढ़ेबारहसेर, हरड १०० एकसौ, इनको बत्तीससेर जलमें औटावै, जब चौथाभाग जल शेष रहै तब १२ ॥ साढ़ेबारह सेर गुड डालकर पकावै, जब अच्छेप्रकार पकजावै तब उतारले, शीतलहोनेपर त्रिकुटेका चूर्ण आठ तोले, सहत चौवीस तोले और चतुर्जातकका चूर्ण चार तोले मिलादेवे । अग्निका बलावल विचारकर इसको भक्षण करै तो वातज, पित्तज, कफजन्य, द्विदोषज और त्रिदोषज खाँसी, तथा ग्यारहप्रकारके राज्ययक्ष्मारोगको दूर करै है । यह रसायन भृगुजीने प्रकाशित की है ॥ ७८–८१ ॥

अथागस्त्यहरीतकी ।

दशमूलंस्वयंगुप्तांशंखपुष्पींशठींबलाम् ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥ ८२ ॥
भार्ङ्गीपुष्करमूलंचद्विपलांशंयवाढकम् ।
हरीतकीशतञ्चैकंजलपंचाढकेपचेत् ॥ ८३ ॥
यवैःस्विन्नैःकषायन्तंश्रुतंतच्चाभयाशतम् ।
पचेद्गुडतुलांदत्त्वाकुडवञ्चपृथग्घृतात् ॥ ८४ ॥

तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धशीतेचमाक्षिकात् ।
लेह्याद्द्वेचाभयेनित्यमतःखादेद्रसायनात् ॥ ८५ ॥
तद्वलीपलितंहन्याद्वर्णाग्निबलवर्द्धनम् ।
पंचकासान्क्षयंश्वासंहिक्कांसविषमज्वरम् ॥ ८६ ॥
हन्यात्तथाग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान् ।
अगस्त्यविहितंधन्यमिदंश्रेष्ठंरसायनम ॥ ८७ ॥

यवहरीतक्योःश्लक्ष्णपोटलींबद्ध्वानिक्षिपेत् । पश्चात्स्विन्न-हरीतकींघृततैलाभ्यांभर्जयेदितिरसरत्नाकरोक्तम् ॥

अर्थ—दशमूल, कौंछके बीज, शंखपुष्पी, कचूर, खिरैटी, गजपीपल, चिर-चिटा, पीपरामूल, चीता, भारंगी, और पोहकरमूल, यह प्रत्येक सोले सोले तोले लेकर ८० सेर जलमें पकावे, फिर आटसेर जौ और एकसौ हरड़, इनको वारीक कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर पूर्वोक्त क्काथमें डालदेवै, जब २० वीस सेर जल शेष रहै तब उतारकर काढ़ेको छान लेवै और हरडोंको अलग निकालकर उनकी गुठली निकाल डाले, फिर घी और तेलमें हरडोंको भूने, तदनन्तर पूर्वोक्त छने हुए क्काथमें १२॥ साढेबारह सेर गुड़ उपरोक्त भुनीहुई एकसौ हरड, सोलह तोले घी १६ सोलह तोले तेल और सोलह तोले पीपलका चूर्ण मिलाकर पका-वे, शीतल होनेपर सोलह तोले सहत मिलादेवै । दोहरडें नित्यप्रति खावै तो वलीपलिरोग, पांचप्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास, हिक्का, विषमज्वर, संग्रहणी, बवासीर, हृदयरोग, अरुचि और पीनसरोग दूर होवै । यह श्रेष्ठरसायन अग-स्त्यजीने कहीहै ॥ ८२–८ ॥

अथ वातकासे ।

वातान्हृच्छंखयोःशूलंमूर्ध्निपार्श्वोदरेऽपिच ।
क्षामाननंबलंक्षीणंभिन्नकांस्यस्वरस्तथा ॥ ८८ ॥

अर्थ—हृदय, कनपटी, मस्तक, पसली, और उदर, इनसबमें शूल होवे, मुख क्षीण और बलहानि होवे, तथा फूटे काँसीके बासनके शब्दकी समान स्वर होजा-वे तो वातकी खाँसी जाननी ॥ ८८ ॥

अथ रुद्रपर्पटी ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंद्रवैःपुनःपुनःपचेत् ।
वातारिचार्द्रकंभृंगीकाकमाच्यद्रिकर्णिका ॥ ८९ ॥
।दिनैकंमर्दयेत्खल्वेपाचयेत्पर्पटींयथा ।
द्वयोःपादंमृतंताम्रंपिष्टामृद्वग्निनापचेत् ॥ ९० ॥
रक्तवर्णंभवेद्यावत्तावद्दर्व्याप्रचालयेत् ।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रेऽथवास्निग्धपुटेपुनः ॥ ९१ ॥
अब्दाद्यंतेनयोगेनततश्चोर्द्ध्वञ्चगोमयम् ।
देयंविचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादंविषंक्षिपेत् ॥ ९२ ॥
रुद्रपर्पटिकाह्येषादेयंगुंजाद्वयंतथा ।
चूर्णितंकटुनिर्गुण्ड्यामूलंनिष्कद्वयंपिबेत् ॥ ९३ ॥
भृंगराजरसेनैवलिहेद्वामधुनासह ।
वातकासंनिहन्त्याशुरसोवानन्दभैरवः ॥ ९४ ॥
कटुस्त्रिकटुः ।

अर्थ–शुद्धपारा एक भाग, शुद्धगंधक दो भाग, इन दोनोंको अरंड, अदरख, अतीस, मकोय, और कोयल, इनके रसमें एक दिन खरल करे, और पर्पटीकी तरह पकावै, पश्चात् पारे और गंधकसे चौथा भाग तांबेकी भस्म मिलाकर मृदुअग्निसे पकावै, जब पकते पकते लाल होजाय तब उतारकर केलेके पत्तेके नीचे गोबर बिछाय उसपै ढाल देवै और ऊपरसे दूसरे पत्तेसे दबाकर पपडीकी तरह बनालेवै, फिर इसका चूर्णकर चूर्णसे चौथा भाग विष मिलालेवे तो रुद्रपर्पटीरस सिद्धहो । मात्रा दो रत्तीकी है। इस औषधिके अन्तमें त्रिकुटा और सम्हालूकी जड़के चूर्णको भांगरेके रसमें अथवा सहतमें मिलाकर सेवन करे । यह रस शीघ्रही वातकी खाँसीको दूर करै है ॥ ८९–९४ ॥

अथामृतार्णवरसः ।

रास्नाविडंगत्रिफलारसगंधंकटुत्रयम् ।
अमृतापद्मकंक्षौद्रंविषतुल्यंसुचूर्णितम् ॥ ९५ ॥

द्विगुंजंवातकासा... ःक्षयेदमृतार्णवम् ॥ ९६ ॥

अर्थ-रास्ना, बायविडंग, त्रिफला, पारा, गंधक, त्रिकुटा, गिलोय, पद्माख, सहत और विष, इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करै । इसको दो रत्तीभर खानेसे-वातकी खाँसी दूर होतीहै । इसको अमृतार्णवरस कहतेहैं ॥९५॥९६॥

अथ भूतांकुशरसः ।

शुद्धसूतस्यभागैकंद्विभागंशुद्धगंधकम् ।
भागद्वयंमृतंताम्रंमरिचंदशभागकम् ॥ ९७ ॥
मृताभ्रस्यचतुर्भागंभागमेकंविषंक्षिपेत् ।
भूतांकुशस्यभागैकंसर्वमम्लेनभावयेत् ॥ ९८ ॥
योयंभूतांकुशोनामयामैकंवातकासजित् ।
अनुपानंलिहेत्क्षौद्रविभीतकफलत्वचम् ॥ ९९ ॥

अर्थ-शुद्धपारा एकभाग, शुद्धगंधक दो भाग, ताँबेकी भस्म दो भाग काली-मिरच दश भाग, अभ्रककी भस्म चार भाग, विष एक भाग, और भूतांकुश-रस एक एक भाग लेवै, सबको एक प्रहर नीबूके रसमें भावना देकर एक एक मासेकी गोली बनावे। एक गोली खानेसे वातकी खांसी दूर होतीहै । अनुपान-बहेडेकी छालको पीस सहतमें मिलाकर चाटै ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

अथ पित्तकासः ।

उरोदाहोरक्तशोषस्तिक्तास्यश्चज्वरंतथा ।
कटुपित्तंवमत्येवपाण्डुत्वंपित्तकासके ॥ १०० ॥

अर्थ-वक्षस्थलमें दाह हो, रुधिर सूख जावै, मुख कडवा हो, ज्वर हो, कटु पित्त वमनमें गिरै और शरीर पाण्डुवर्ण होजाय यह सब लक्षण पित्तकी खाँसीमें होते हैं ॥ १०० ॥

अथ त्रिनेत्ररसः ।

भस्मताम्राभ्रतीक्ष्णानांकासमर्दत्वचोरसैः ।
सालजैर्वेतसाम्लेनदिनंमर्द्यंसुपिण्डितम् ॥ १०१ ॥
द्विगुंजंपित्तकासार्त्तोभक्षयेच्चत्रिनेत्रकम् ॥ १०२ ॥

अर्थ-ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकी भस्म, इन तीनोंको समान भाग लेकर कसोंदीकी छालके रसमें, सालके रसमें और अमलबेतके रसमें

एक दिन खरलकर गोला बनालेवे, फिर दो रत्तीकी गोलियें करले। एक गोली खानेसे पित्तकी खाँसी दूर होती है, इसको त्रिनेत्ररस कहतेहैं ॥ १०१॥१०२॥

अथ लोकेश्वररससेवनविधिः ।

रसोलोकेश्वरोप्यत्रपिप्पलीमधुनासह ।
देयंगुंजाचतुष्कंचसघृतैर्मरिचैःसह ॥ १०३ ॥
कासश्वासाग्निमान्द्यञ्चक्षयकासंचनाशयेत् ॥ १०४ ॥

अर्थ–चार रत्ती लोकेश्वररसको पीपलके चूर्णके साथ सहत मिलाकर खावै तो अथवा कालीमिरचोंके चूर्णके साथ घी मिलाकर खावै तो–खाँसी, श्वास, मन्दाग्नि, और क्षयकी खाँसी दूर होतीहै ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

अथ कफकासलक्षणम् ।

शिरोऽर्त्तिःकफपूर्णास्यतारुजिर्गौरवंज्वरः ।
कासेत्सान्द्रकफःकण्ठेश्लेष्मकासस्यलक्षणम् ॥ १०५॥

अर्थ–शिरमें पीडा, कफसे मुख भरारहै, अरुचि, शरीर भारी और ज्वरहो वारंबार खाँसी उठे और कण्ठमें गाढा कफ होय, यह लक्षण कफकी खाँसीके जानने ॥ १०५ ॥

अथ काससंहारभैरवः ।

रसगंधकताम्राणांशंखटंकणलौहकम् ।
मरिचंकुष्ठतालीशंजातीफललवङ्गकम् ॥ १०६ ॥
कार्षिकंचूर्णमादायद्रवैरेषांचमर्दयेत् ।
भेकपर्णीकेशराजनिर्गुण्डीकाकमाचिका ॥ १०७ ॥
द्रोणपुष्पीचशालश्चीग्रीष्मसुन्दरएवच ।
भार्ङ्गीहरीतकीवासाकार्षिकैःपत्रजैरसैः ॥ १०८ ॥
वटिकांकारयेद्वैद्यःपंचगुंजाप्रमाणिकाम् ।
पित्तजंवातजंकासंद्वन्द्[illegible] : ॥ १०९ ॥
श्रीमद्[illegible]थेनकाससं[illegible]रभैरवः ।
रसोऽयंनिर्मितोयत्ना[illegible]करक्षणहेतवे ॥ ११० ॥

वासाशुंठीकंटकारीक्वाथेनपाययेद्बुधः।
कासनाशनवज्रोऽयंरसःसश्वासपाण्डुजित् ॥ १११ ॥

अर्थ–पारा, गंधक, ताँबा, शंख, सुहागा, लोहा, कालीमिरच, कूठ, तालीसपत्र, जायफल और लौंग, ये प्रत्येक दो दो तोले लेकर मंडूकपर्णी, कुकुरभांगरा, सम्हालू, मकोय, द्रोणपुष्पी, शालिंचशाक, ग्रीष्मसुन्दरशाक, भारंगी, हरड़, अडूसा, इन प्रत्येक पत्तोंके दो दो तोले रसमें भावना देकर पांच पांच रत्तीकी गोलियें बनालेवै। इसको अडूसा, सोंठ, और कटेरीके काढेमें मिलाकर पीवै तो पित्तज, वातज, द्वन्द्वज और बहुतदिनोंकी खाँसी, तथा श्वास और पाण्डुरोग दूरहोवै। यह काससंहारभैरवरस श्रीमान् गहननाथने संसारकी रक्षाके अर्थ निर्माण कियाहै ॥१०६--१११ ॥

अथ त्रिकट्वादिचूर्णम्।

कटुत्रयंपाठकदेवदारुरास्नाविडंगत्रिफलावृपाणाम्।
चूर्णंसमांशंसितयाविमिश्रंकासंजयेद्विष्णुरिवातिपापम्॥११२॥

अर्थ–त्रिकुटा, पाढ, देवदारु, रास्ना, बायबिडंग, त्रिफला और अडूसा इन सबको समानभाग लेकर चूर्ण करै और सब चूर्णकी बराबर मिश्री मिलावे, यह खाँसीको दूर करै है ॥ ११२ ॥

अथ रसेन्द्रगुटिका।

कुमारीत्रिफलाचूर्णचित्रकस्वरसैःक्रमात्।
शोधयित्वापुनाराजीगृहधूमहरिद्रया ॥ ११३ ॥
पक्वेष्टकारजश्चैवजलम्बूपरसेनच।
भृंगराजरसेनापिशोधयित्वापुनःपुनः ॥ ११४ ॥
प्रक्षालयेत्पुनःपश्चाद्गालयेद्वसनेघने।
कर्षद्वयंरसेन्द्रस्यभावयेद्भिरद्रवैः ॥ ११५ ॥
शिलायांखलयेच्चापियावत्पिण्डत्वमागतम्।
जलकर्णीकाकमाचीरसाभ्यांभावयेत्पुनः ॥ ११६ ॥
सौगन्धिकपलंशुण्ठीमरिचटंकणम्।
माक्षिकंचशिखिग्रीवतालकंचाभ्रकन्तथा ॥ ११७ ॥

एतांस्तुमिलितान्कृत्वाभावयेच्चार्द्रकद्रवैः ।
रत्तिद्वयप्रमाणेनकारयेद्गुटिकांभिषक् ॥ ११८ ॥
जीर्णान्नोभक्षयेदेकांक्षीरमांसरसाशनः ।
पंचकासंक्षयंश्वासंरक्तपित्तविनाशनम् ॥ ११९ ॥
पाण्डुक्रिमिज्वरहरंकृशानांपुष्टिवर्द्धनम् ।
वाजीकरणनिर्दिष्टमम्लपित्तहरंपरम् ॥ १२० ॥
वह्निसंदीपनंश्रेष्ठमरोचकविनाशनम् ।
नागार्जुनाख्यमुनिनाभाषितंतत्त्ववेदिना ॥ १२१ ॥

अर्थ–घीकुवार और त्रिफलेके चूर्णमें, चीतेके रसमें, राई, घरका धुआँ और हलदीके रसमें, तथा ईटके चूर्णमें, लज्जालुभेदके रसमें और भांगरेके रसमें क्रमसे पारेको अलग अलग शोधकर पानीसे धोकर वस्त्रमें छानले, ऐसा पारा दो तोले लेकर भांगके रसमें भावनादेवै, फिर खरलमें घोट गोला बनाके उस गोलेको कर्णमोरट लताके रसमें और मकोयके रसमें भावना दे, चारतोले शुद्धगंधक तथा कालीमिरच, सुहागा, सोनामाखी, तूतिया और हरिताल तथा अभ्रक ये प्रत्येक चार तोले मिलाकर अदरखके रसमें भावना देवै, फिर दोरत्तीकी गोलियें बनालेवै, एकगोली रोज भोजनके जीर्ण होनेपर भक्षण करै। इसके ऊपर दूध और मांसरसका भोजन करै। यह रसेन्द्रगुटिका पांचप्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डुरोग, कृमिरोग, ज्वर, अम्लपित्त, और अरुचिको दूर करैहै, तथा कृशमनुष्योंके पुष्टिको बढानेवाला, वाजीकरण, अग्निप्रदीपक और अति उत्तम है।यह रस–श्रीमान् नागार्जुनऋषिने निम्र्माण कियाहै॥ ११३--१२१॥

अथबृहद्रसेन्द्रगुटिका।

कर्षंशुद्धरसेन्द्रस्यगंधकस्य भ्र[illegible]च ।
लौहचूर्णस्यताम्रस्यतालकस्यविषस्यच ॥ १२२ ॥
मनःशिलायाःक्षाराणांबीजंधुस्तूरकस्यच ।
मरिचस्यापिसर्वेषांचूर्णंतुल्यंप्रदापयेत् ॥ १२३ ॥
जयन्तीचित्रकौमानघण्टाकर्णोऽथमण्डुकी ।
शक्राशनंकेशराजं[illegible]गापामार्गकस्यच ॥ १२४ ॥

सिन्धुवारस्यचरसैःकर्षमात्रैश्चमर्दयेत् ।
हन्तिपंचविधंकासंश्वासञ्चैवसुदारुणम् ॥ १२५ ॥
कफवातमयंरोगम [illegible] विड्बिन्धताम् ।
अग्निमान्द्यारुचिञ्चैवउदरंपाण्डुकामलाम् ॥ १२६ ॥
रसायनीचवृष्याचबलवर्णप्रदायिनी ।
बृंहणंमधुरंस्निग्धंमत्स्यंमांसञ्चजांगलम् ॥ १२७ ॥
घृतपक्कंसदाभक्ष्यंरूक्षंतीक्ष्णंचवर्जयेत् ॥ १२८ ॥

अर्थ—शुद्धपारा,शुद्धगंधक, अभ्रक, लोहेकाचूर्ण. ताँवा, हरिताल, विष, मनशिल, जवाखार, सज्जी, सुहागा, धतूरेके बीज, और कालीमिरचोंका चूर्ण यह प्रत्येक दो दो तोले लेकर जयन्ती, चीता, मानकंद, घण्टाकर्ण, ब्रह्ममण्डूकी, भांग, कुकुरभाँगरा, भांगरा, चिरचिटा और सम्हालू, इन प्रत्येकके दो दो तोले रसमें खरल कर मटरकी बराबर गोली बनालेवे। इनको भक्षणकरनेसे—पाँचप्रकारकी खाँसी, श्वास, कफ, वातरोग, आनाह, विड्विबन्ध, मन्दाग्नि, अरुचि, उदररोग, पाण्डुरोग और कामलारोग दूर होताहै । यह गोली—रसायन, वीर्यवर्धक, बलकारक, वर्णको सुन्दर करनेवाली है । इसके ऊपर पुष्टिकारक, मधुर, स्निग्ध, मत्स्य, जांगलदेशके जीवोंका मांस घीमें भुनाहुआ सदैव खाना चाहिये, तथा रूक्ष और तीक्ष्णपदार्थ इसके ऊपर नहीं भक्षण करे ॥ १२२ ॥ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥

अथ विजयभैरवरसः ।

सूतकंगंधकंलौहंविषमभ्रकमेवच ।
विडंगंबिल्वकंमुस्तमेलाग्रन्थिककेशरम् ॥ १२९ ॥
त्रिकटुत्रिफला[illegible]शुद्धजैपालबीजकम् ।
एतानिसमभागानिगुडोद्विगुणउच्यते ॥ १३० ॥
तिन्तिडीबीजमानेनप्रातःकालेतुभक्षयेत् ।
श्वासंकासंक्षयं[illegible]मंप्रमेहंविषमज्वरम् ॥ १३१ ॥
अजीर्णग्रहणीदोषाञ्छूलंपार्श्वामयांस्तथा ।
अपानेहृदयेशूलेवातरोगेगलग्रहे ॥ १३२ ॥

अरुचौचातिसारेचसूतिकाविषनाशनः ।
जयाक्षनिर्मितोह्येषब्रह्मादित्रिदिवेश्वरैः ॥ १३३ ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहा, विष, अभ्रक, बायविडंग बेलगिरी, नागरमोथा, इलायची, पीपरामूल, नागकेशर, त्रिकुटा, त्रिफला, चीता और शुद्ध जमालगोटेके बीज, यह सब समान भाग और सबसे दुगुना गुड़ लेवै, सबको मिलाकर इमलीके चियेकी समान गोलियां बनालेवे, एक गोली रोज प्रभातके समय भक्षण करै तो--श्वास, खाँसी, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी, शूल, पसलियोंका शूल, अपानशूल, हृदयका शूल, वातरोग, गलग्रह, अरुचि, अतिसार, सूतिका, विष, इनको दूर करैहै यह विजयभैरव रस ब्रह्मादि देवोंने निर्माण कियाहै ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥

अथ क्षतकासलक्षणम् ।

पर्वभेदोज्वरश्वासतृषावैस्वर्य्यपीडितम् ।
सपूर्वंकासतेशुष्कंततःष्ठीवेत्सशोणितम् ॥ १३४ ॥
पारावतइवाकूजन्कासवेगात्क्षतोद्भवात् ॥ १३५ ॥

अर्थ--शरीरकी संधियोंमें हड़फूटनहो, ज्वर, श्वास, तृषा, स्वरभेद इनसे पीडित हो प्रथम सूखा खाँसे, पश्चात् रुधिर थूकै और कबूतरकी समान शब्द करै तो जानिये क्षतकी खाँसीहै ॥ १३४ ॥ १३५ ॥

अथ तालेश्वररसः ।

रसपादंमृतंतारंशिलातालंचतुर्गुणम् ।
वासागोक्षुरसत्त्वाभ्यांमर्द्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ १३६ ॥
द्वियामंबा॰ कायन्त्रेस्वेद्यमादायचूर्णयेत् ।
गुंजाद्वयंनिहंत्या॰ कासंश्वासंक्षतोद्भवम् ॥ १३७ ॥
रसस्तालेश्वरोनाम्नाअनुपानंचकथ्यते ।
वचाकुष्ठहरिद्राभिःसैंधवंटंकणंविषम् ॥ १३८ ॥
सपाठालांगलीव्योषंचाक्षंप्रत्येकभागकः ।
भावितंभृंगराजेनदिनैकंतंच्चभक्षयेत् ॥ १३९ ॥
माषंतालेश्वरोनाम्नाहिक्कावैस्वर्यकासजित् ॥ १४० ॥

अर्थ–पारा एक भाग, चांदीकी भस्म, मैनशिल और हरिताल, इन्हैं प्रत्येक चार चार भाग लेकर अडूसे और गोखुरूके सत्त्वमें दो प्रहर खरलकरै, पश्चात् दो प्रहरतक बालुकायंत्रमें पकावै, जब स्वयं शीतल होजाय तब निकालकर चूर्ण करले, इसको दो गुंजाभर खावै तो–क्षतसे उत्पन्न हुए खांसी और श्वास दूर हो जातेहैं । इसको तालेश्वररस कहतेहैं वच, कूट, हलदी, सैंधानोन, सुहागा, विष, पाढ, कलिहारी, त्रिकुटा यह प्रत्येक दो दो तोले लेकर, भांगरेके रसमें एक दिन भावना देकर, अनुपान करै । इसको एकमासेभर रोज खाय तो हिचकी, स्वरभेद और कासरोग दूर हो ॥१३६–१४० ॥

अथ क्षयकासः ।

गात्रशूलंज्वरोदाहोमोहःश्वासश्चयस्यवै ।
शुष्कंनिष्ठीवयेत्कृच्छ्रात्सपूयंशोणितंचयः ॥ १४१ ॥
इत्येषक्षयजःकासःसाध्योबलवतांक्वचित् ।
क्षीणानांदेहनाशायसएकःसाध्यतांव्रजेत् ॥ १४२ ॥

अर्थ–शरीरमें शूल हो, ज्वर, दाह, मोह और श्वास, उत्पन्न हो, अत्यन्त कष्टके साथ सूखा खाँसे, पश्चात् राधयुक्त रुधिर थूकै तो क्षयकी खाँसी जाननी । यह खाँसी–बलवान् मनुष्योंको कुछ कुछ साध्य होतीहै और क्षीण-मनुष्योंके असाध्य जाननी ॥ १४१ ॥ १४२ ॥

अथाग्निरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंकुर्याद्यत्नेनकज्जलीम् ।
तयोःसमंतीक्ष्णचूर्णमर्दयेत्कनकद्रवैः ॥ १४३ ॥
द्वियामान्तेकृतंगोलंताम्रपात्रेविनिक्षिपेत् ।
आच्छाद्यैरण्डपत्रेणयामार्द्धेऽप्युष्णताभवेत् ॥ १४४ ॥
धान्यराशौन्यसेत्पश्चाद्द्वियामान्तेसमुद्धरेत् ।
संपेष्यगालयेद्वस्त्रेसद्योवारितरंभवेत् ॥ १४५ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचैलाजातीफललवंगकम् ।
एषाञ्चपरभागानांसमपूर्वरसोभवेत् ॥ १४६ ॥
सचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यंनिष्कद्वयंद्वयम् ।
अयमग्निरसोनाम्नाक्षयकासनिकृन्तनः ॥ १४७ ॥

इन्द्रवारुणिकामूलंभृंगं[illegible]ण्णातलैःसह ।
भक्षयेत्क्षयकासार्त्तोनिष्कमात्रंप्रशान्तये ॥ १४८ ॥

इति कासाध्यायः ।

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग, इन दोनोंकी कज्जली करै, पश्चात् दोनोंकी समान ईस्पातका चूर्ण मिला धतूरेके रसमें खरल करै, [illegible] खरलकर गोला बनालेवै, उस गोलेको तांबेके बासनमें रख ऊपर अरंडके पत्ते ढक चारघडीतक रहनेदेवै, जब गरम होजाय तब दोप्रहरतक धानोंके ढेरमें रखदेवै, पश्चात् निकालकर महीन पीस वस्त्रमें छानलेवै वह छनाहुआ ऐसा होजाय कि, पानीमें डालनेसे तिरनेलगै, फिर उसमें त्रिकुटा, त्रिफला, इलायची, जायफल, लौंग, इनसबको समानभागलेकर चूर्णबना मिलादेवै, पश्चात् सहत मिलाके आठमासेभर नित्यप्रति भक्षण करै । यह अग्निरस–क्षयकी खाँसीको दूर करैहै । इसके सेवनके अन्तमें इन्द्रायणकी जड, दालचीनी और कालेतिल, इनको एकत्रमिलाकर चारमासेभर भक्षण करै ॥ १४३--१४८ ॥

इति कासाधिकारःसमाप्तः ।

अथ हिक्काश्वासयोश्चिकित्सामाह ।

हिक्काश्वासार्त्तयोःपूर्वंतिलाक्तःस्वेदइष्यते ।
स्निग्धैर्लवणयोगैश्चऊर्द्ध्ववातानुलोमनम् ॥ १ ॥
ऊर्द्ध्वाधःशोधनंशक्तेदुर्बलेशमनंमतम् ।
प्रस्वापयेद्दिवायत्नान्नरंहिक्कातुरंभिषक् ॥ २ ॥
मधुकंमधुसंयुक्तांपिप्पलीशर्करान्विता ।
नागरंगुडसंयुक्तंहिक्काघ्नंलावणत्रयम् ॥ ३ ॥

लावणंनस्यम् ।

स्तन्येनमाक्षिकाविष्ठानस्यंवालक्तकाम्बुना ।
योज्यंहिक्काभिभूतायस्तन्यंवाचन्दनान्वितम् ॥ ४ ॥

अर्थ--हिक्का और श्वाससे पीडितमनुष्यको प्रथम तिलयुक्त द्रव्योंका स्वेद प्रयोग कराना चाहिये और चिकने तथा निमकीनपदार्थोंसे ऊर्द्ध्ववातको अनुलोमन करना चाहिये । हिक्का और श्वासरोगी जो बलवान् होय तो वमन और विरेचन करावे और जो दुर्बल होय तो शमनऔषधि सेवन करावै । हिक्कारो-

गीको दिनमें शयन करावै। मुलैठीमें सहत मिलाकर अथवा पीपलके चूर्णमें बूरा मिलाकर वा सोंठके चूर्णमें गुड मिलाकर नासलेनेसे हिक्कारोग शान्त होताहै। मक्खीकी विष्ठाको पीसकर नास लेनेसे वा दूधको चन्दनमें मिलाकर नासलेनेसे हिक्कारोग शान्त होताहै॥ १-४॥

अथ पिप्पल्यादिलौहम्।

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलास्थिमधुशर्कराः।
विडंगपुष्करैर्युक्तोलोहोहन्तिसुदुर्जयाम्॥ ५॥
छर्दिंतृष्णांतथाहिक्कांत्रिरात्रेणनसंशयः॥ ६॥
सर्वचूर्णसमंलोहम्।

अर्थ—पीपल, आमला, दाख, बेरकी मींग, सहत, बूरा, बायबिडंग और पोहकरमूल, यह सब समानभाग लेवे और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवे। इसको सेवन करनेसे दुर्जयहिक्कारोग, वमन तृषा, तीन रात्रियोंमें दूर होजातेहैं॥ ५॥ ६॥

अथ हिक्काशमनोपायाः।

कूष्माण्डप्रभवंमूलंपीत्वाभक्तस्यवारिणा।
अजस्रमुत्थिताहिक्काशान्तिर्भवतितत्क्षणात्॥ ७॥
आष्ठील[illegible]दलीकन्दरसखण्डविमिश्रितम्।
पीत्वाहिक्कांजयत्युग्रांवातपित्तसमुद्भवाम्॥ ८॥
हिक्काश्वासीभजेत्सर्वंपानार्थंकफवातनुत्।
दशमूल्या[illegible]त्थैर्वासिद्धंजांगलजैरसैः॥ ९॥
भुंजीतशालिगोधूमयवान्नंजीर्णमेवच।
हिक्काश्वासीपिबेदुष्णंदशमूलीकृतंजलम्॥ १०॥
[illegible]वदारुशृतंवापिभार्ङ्गीशृतमथापिवा।
सनागराभयातुल्याकासश्वासौव्यपोहति॥ ११॥
अभयानागरकल्कंपौष्करयावशूकमरिचकल्कंवा।
तोयेनोष्णेनपिबेच्छ्वासीहिक्कीचतच्छान्त्यै॥ १२॥
गुडंकटु[illegible]श्रयित्वाऽसमंलिहेत्।

त्रिसप्ताहप्रयोगेणश्वासंनिर्मूलतांनयेत् ॥ १३ ॥
कृष्णासैन्धवसं[illegible]चूर्णंस्वरसेनशृंगवेरस्य ।
योलेढिशयन[illegible]लेस[illegible] यतिसप्ताहतःश्वासान् ॥ १४ ॥
कृष्णामलकशुण्ठीनांचूर्णंमधुसिताघृतम् ।
मुहुर्मुहुः[illegible]व्यंहिक्काश्वासनिवारणम् ॥ १५ ॥
अ[illegible]तानागरंफञ्जीव्याघ्रपर्णीसुसाधितः ।
क्काथःपीतःसकणाचूर्णःकासश्वासाञ्जयन्त्याशु ॥ १६ ॥
[illegible]ल्वाटरूषदलवारिसमूलशुक्क-
दण्डोत्पलदलजलंकटुतैलमिश्रम् ।
भार्ङ्गीगुडादिरपियत्रहतप्रभाव-
स्तंश्वासमाशुविनिहन्तिमहाप्रभावम् ॥ १७ ॥
बिल्ववासापत्ररसःसमूलपत्रशुक्कदंडोत्पलरसश्च ।

इति कटुतैलेनसह योगः ।

अर्थ–पेठेकी जड़को चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे-तत्काल हिक्कारोग शान्त होताहै । केलेके कन्दके रसको खांडके साथ पीनेसे वातपैत्तिक हिक्कारोग दूर होताहै, हिक्का और श्वासरोगी सब पीनेके द्रव्य कफवातनाशक पान करै तथा दशमूल, कुलथी और जांगलदेशोंके जीवोंके मांसका यूष सेवन करै और पुराने चावलोंका भात, गेहूं और जौके अन्नका भोजन करै । गरमागरम दशमूलका क्काथ, देवदारुका क्काथ और भारंगीका क्काथ पीनेसे हिचकी और श्वास नष्ट होताहै । सोंठ और हरड़ समानभाग लेकर सेवनकरनेसे श्वास और खाँसी दूर होतीहै । हरड, सोंठ, दालचीनी, पोहकरमूल, जवाखार और कालीमिरच, इनको गरमजलमें पीसकर सेवन करनेसे श्वास और हिक्का रोग दूर होताहै । गुडमें सरसोंका तेल मिलाकर तीन सप्ताहतक सेवन करनेसे श्वासरोग शान्त होताहै । सोनेके समय पीपल और सैंधानोनका चूर्ण अदरखके रसके साथ सेवनकरै तो एकसप्ताहमें श्वासरोग शान्तहो । पीपल, आमला, और सोंठका चूर्ण, सहत, बूरा और घीके साथ बारंवार [illegible] हिचकी और श्वासरोग नष्ट होताहै । गिलोय, सोंठ, भरंगी, कटेरी, और जलकुम्भी, इनके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीनेसे श्वास और खांसी दूर होतीहै । बेलगिरी,

अडूसा और मूल तथा पत्रसमेत सफेद दण्डोत्पलका रस सरसोंके तेलके साथ पीनेसे अथवा भारंगीको गुडादिके द्वारा पीनेसे—असाध्य श्वासरोग शान्त होताहै ॥ ७–१७ ॥

अथ शृंग्यादिचूर्णम् ।

शृंगीकटुत्रयफलत्रयकण्टकारी-
भार्ङ्गीसपुष्करजटालवणानिपंच ।
चूर्णंपिबेदपिशिवेनजलेनहिक्का-
श्वासोर्द्ध्ववातकसनाऽरुचिपीनसेषु ॥ १८ ॥

अर्थ—काकडाशिंगी, त्रिकुटा, त्रिफला कटेरी, भारंगी, पोहकरमूल, पंचलवण, इनका चूर्ण बना, जलके साथ पीनेसे—हिक्का, श्वास, ऊर्द्ध्ववात खाँसी, अरुचि और पीनसरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥

अथ कुलत्थषट्पलंघृतम् ।

कुलत्थाद्दशमूलाच्चभार्ङ्ग्याःप्रस्थंपृथक्पृथक् ।
क्काथयित्वाजलद्रोणेपादशेषेविपाचयेत् ॥ १९ ॥
द्विक्षीरंसर्पिषःप्रस्थंसक्षारैःपंचकोलकैः ।
पलिकैस्त[illegible]द्धंश्वासंकासंसपीनसम् ॥ २० ॥
[illegible]हण्यर्शोगुल्मांश्चविषमज्वरान् ।
कुलत्थषट्पलंसर्पिर्बलवर्णाग्निदीपनम् ॥ २१ ॥

अर्थ—कुलथी, दशमूल, और भारंगी, प्रत्येक चौसठ चौसठ तोले लेकर १०२४ एक हजार चौबीस तोले जलमें पकावे जब चौथा भाग जल शेष रहै तब उसमें २५६ दोसौ छप्पन तोले दूध, ६४ चौसठ तोले घी, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, चीता, चव्य, सोंठ, पीपल और पीपलामूल, यह प्रत्येक चार चार तोले मिलाकर घृतको सिद्ध करे । यह घृत—श्वास, खाँसी, पीनस, प्लीहा, हिचकी, संग्रहणी, बवासीर, गुल्म और विषमज्वरको दूर करैहै । यह कुलत्थषट्पल घृत—बल, वर्ण और अग्निको दीपन करैहै ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ कुलत्थगुडः ।

कुलत्थोदशमूलञ्चतथैवा[illegible]जयष्टिका ।
शतंशतञ्चसंगृह्यजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ २२ ॥

पादावशेषेतस्मिंश्चगुडस्यार्द्धं[illegible]लांक्षिपेत् ।
शीतीभूतेचपक्केचमधुनोऽष्टौपलानिच ॥ २३ ॥
षट्पलश्चतुगाक्षीर्य्याः पिप्पल्याश्चपलद्वयम् ।
त्रिसुगन्धिसुगंधंतत्खादे[illegible]ग्निबलंप्रति ॥ २४ ॥
[illegible]हिक्कांनाशयेत्तमकन्तथा ॥ २५ ॥
क्वाथत्रे[illegible]त्रयमेव ।
पिप्पलीमानसान्निध्यात्त्रिसुगंधिपलद्वयम् ।

अर्थ—कुलथी, दशमूल और भारंगी, यह प्रत्येक ४०० चारसौ तोले लेकर तीन द्रोण पानीमें पकावे, जब चौथा भाग जल शेष रहै तब २०० दोसौ तोले गुड मिलाकर फिर पकावे, शीतल होनेपर ३२ बत्तीस तोले सहत, वंशलोचन २४ चौबीस तोले, पीपल आठ तोले और त्रिसुगन्धिका चूर्ण ८ आठ तोले मिला, इसको अग्निका बलाबल विचार कर खावे तो—श्वास, खांसी, ज्वर, हिचकी और तमकश्वास, दूर होवे ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

अथ बृहत्कुलत्थगुडः ।

चतुष्पलंमूलकशुण्ठिकायास्तथैवशुद्धस्यकुलत्थकस्य ।
तुलांप्रदद्याद्दशमूलकस्यद्रोणेऽम्भसः सर्वमिदंपचेच्च ॥ २६ ॥
पूतेरसेपादचतुर्थशेषेप्रस्थप्रमाणंरसमार्द्रकस्य ।
दत्त्वाहविस्तैलपलाष्टकञ्चगुडस्यशुद्धस्यतुलांपचेच्च ॥ २७ ॥
चूर्णैर्युतंजीरकचव्यशृंगीभार्ङ्गीत्रिसौगन्धिककट्फलैश्च ।
मुस्तायवनीशठिपुष्करैश्चसव्योषकैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥ २८ ॥
अर्द्धंक्षिपेन्माक्षिकप्रस्थमात्रांपथ्याशनः स्यादुपयोगकाले ।
कफोद्भवायेचविकारजाताः श्वासः सकासोहृदयक्षतश्च ॥ २९ ॥
हृत्पार्श्वशूलज्वरवान्तितृष्णास्वरक्षयारोचकवह्निसादाः ।
तेनाशमायान्त्युपयोगकाले[illegible]लत्थसंज्ञस्यगुडस्यशीघ्रम् ३०

अर्थ—पीपरामूल १६ सोलह तोले, सोंठ १६ सोलह तोले, कुलथी १६ सोलह तोले और दशमूल ४०० चारसौ तोले लेवे, इन सबको १०२४ एक हजार चौबीस तोले जलमें पकावे, जब चौथा भाग शेष रहै, तब अदरखका रस

चौसठ तोले, घृत बत्तीस तोले, तेल बत्तीस तोले, गुड चारसौ तोले मिलादे, फिर जीरा, चव्य, काकडासिंगी, भारंगी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कायफल, नागरमोथा, अजवायन, कचूर, पोहकरमूल, सोंठ, मिरच, और पीपल यह सब दो दो तोले मिला देवै, पश्चात् चौसठ तोले सहत मिलाकै सेवन करै और ऊपरसे पथ्य भोजन करै । यह कुलत्थगुड—कफ, श्वास, हृदयक्षत, हृदयशूल, पसलीशूल, ज्वर, वमन, तृष्णा, स्वरक्षय, अरुचि और मन्दाग्नि को दूर करताहै ॥ २६–३० ॥

अथ सूर्यावर्तरसः ।

सूतार्द्धंगंधकंमर्द्यंयामैकंकन्यकाद्रवैः ।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपत्रंपूर्वकल्केनलेपयेत् ॥ ३१ ॥
दिनैकंहण्डिकायंत्रेपक्कमादायचूर्णयेत् ।
सूर्यावर्त्तोरसोनामद्विगुंजंश्वासजिद्भजेत् ॥ ३२ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलंदेवदारुकटुत्रिकम् ।
शर्करासहितंखादेदूर्द्ध्वश्वासप्रशान्तये ॥ ३३ ॥
निष्कैकंलेहयेद्वापिक्षौद्रेणकटुरोहिणीम् ।
श्वासश्चारोचकंहन्तिमरिचंदाडिमंगुडम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—पारा दो भाग, गंधक एक भाग, इन दोनोंको घीकुवारके रसमें एक प्रहर खरल करै, फिर दोनोंकी बराबर तांबेके पत्र ले उनपे पूर्वोक्त कल्कका लेप करै, पश्चात् उन पत्रोंको हण्डिकायंत्रमें एक दिन पकावे, शीतल होनेपर चूर्ण करले । इसको दोरत्ती प्रमाण खावे तो श्वास रोग दूर होवे । इन्द्रायणकी जड, देवदारु, त्रिकुटा, इनके चूर्णमें बूरा मिलाकर खावे तो ऊर्द्ध्वश्वास दूर होवे । दो तोले कुटकीके चूर्णमें सहत मिलाकर खानेसे अथवा कालीमिरचोंका चूर्ण, अनारदाना और गुड मिलाकर खानेसे—श्वास और अरुचि दूर होतीहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

अथ उदयभास्कररसः ।

धान्याभ्रंसूतकंगंधंश्वेतापामार्गजद्रवैः ।
तुल्यांशंमर्दयेच्चापियन्त्रेपातालकेपचेत् ॥ ३५ ॥
ऊर्द्ध्वलग्नन्तुसंग्राह्यंरसोह्युदयभास्करः ।
श्वासंपञ्चविधंहन्तिद्विगुंजमनुपानतः ॥ ३६ ॥

अर्थ–धान्याभ्रक, पारा और गंधक, इनको समानभाग लेकर सफेद कोयल, और चिरचिटेके रसमें खरलकर पातालयन्त्रमें पकावै, फिर ऊपरके पात्रमें उडके लगेहुए द्रव्यको सुखाकर दो रत्ती प्रमाण अनुपानके साथ खावै तो पांचप्रकारके श्वास दूर होवें ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथ दाडिमाद्यंचूर्णम् ।

दाडिमंनागरंहिंगुसर्जसैन्धवपौष्करा: ।
रास्नाचात्रसमंचूर्णंकर्षंघृतेनसंपिबेत् ॥ ३७ ॥
कासश्वासहरंचूर्णंदाडिमाद्यंनसंशयः ॥ ३८ ॥

अर्थ–अनार, सोंठ, हींग, राल, सेंधानोन, पोहकरमूल, रास्ना इन सबको समानभाग लेकर चूर्णबना दोतोले घीके साथ पीवै तो यह दाडिमाद्यचूर्ण निःसन्देह खाँसी और श्वासको दूर करैहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अथ बिडंगादिचूर्णम् ।

विडंगपिप्पलीचैलात्वचश्चप्रतिकार्षिकम् ।
त्रिकर्षंमरिचस्यापिनागराच्चचतुष्पलम् ॥ ३९ ॥
सर्वतुल्यासितायोज्याकर्षमात्रंचभक्षयेत् ।
कासश्वासज्वरप्लीहपाण्डुरोगक्षयापहम् ॥ ४० ॥

अर्थ–बायबिडंग, पीपल, इलायची, दालचीनी, यह प्रत्येक दोदोतोले लेवै, कालीमिरच छैतोले लेवै, सोंठ सोलह तोले लेवै, सबका चूर्णबना फिर सबकी बराबर बूरा लेवै, सबको मिलाकर दो तोले प्रमाण खावै तो खाँसी, श्वास, ज्वर, प्लीहा, पाण्डुरोग और क्षयरोग दूर होवै ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथ गंधकसेवनविधिः ।

गंधकंमरिचंसाज्यंपिबेद्वातकफापहम् ।
गंधकंघृतपानेनश्वासयक्ष्मक्षयापहम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–गंधक, कालीमिरच और घी इनको मिलाकर पीवै तो वात और कफ दूर होवै, अथवा केवल गंधकको घृतके साथ पीवै तो श्वास, यक्ष्मा और क्षयरोग नष्ट होताहै ॥ ४१ ॥

अथ मेघडम्बररसः ।

तण्डुलीयद्रवैःपिष्टं तत्तुल्यश्चगंधकम् ।
वज्रमूषागतंपच्याद्भूधरेभ [illegible] ॥ ४२ ॥

दशमूलकषायेणभावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुंजाद्वयंजयत्याशुहिक्काश्वासज्वरप्रणुत् ॥ ४३ ॥
अनुपानेनदातव्यंरसोऽयंमेघडम्बरः ।
अभयापिप्पलीभार्ङ्गीपुष्करंकर्कटीशठी ॥ ४५ ॥
शर्कराष्टगुडंयोज्यमनुपानंप्रयोजयेत् ॥ ४५ ॥

अर्थ-पारे और गंधकको समानभाग लेकर चौलाईके रसमें पीस वज्रमूषामें रख भूधरयंत्रके द्वारा फूंकदेवे, फिर दोप्रहरपर्य्यन्त दशमूलके काढेमें भावनादे, पश्चात् इस मेघडम्बर रसको दोगुंजाप्रमाण अनुपानके साथ सेवनकरनेसे-हिचकी, श्वास, और ज्वरको हरैहै । हरड, पीपल, भारंगी, पोहकरमूल, काकड़ाशिंगी और अमियाहलदी, इनका चूर्ण समान भाग ले और आठगुना बूरा लेवे, सबको मिला अनुपान करै ॥ ४२-४६ ॥

अथ हिक्कादिहरोपायः ।

पाषाणभेदीमत्स्याक्षीद्रवैःपिष्टन्तुमर्दयेत् ।
तद्गोलंलेपयेद्बाह्येकल्कैःपाषाणभेदकैः ॥ ४६ ॥
मत्स्याक्ष्याश्वदलंलेप्यंदत्त्वापातालयंत्रके ।
स्वेदयेद्यामंमात्रंचरसोऽयंयोगवाहकः ॥ ४७ ॥
गुंजाद्वयंप्रदातव्यंहिक्कावैस्वर्यश्वासजित् ।
दशमूलेपिबेच्चानुसकुलत्थैःकषायकम् ॥ ४८ ॥

अर्थ-पाषाणभेदको मत्स्याक्षी (मछेछी) के रसमें घोटकर गोला बनालेवे, पश्चात् उस गोलेके ऊपरके भागको मत्स्याक्षी और पाषाणभेदके कल्कसे लेप कर पातालयंत्रमें एकप्रहरतक पकाकर चूर्णकरले । इसको दो गुंजाभर खानेसे हिक्का, स्वरभेद और श्वास दूर होताहै । इसके ऊपर दशमूल और कुलथीके काढेका अनुपान करै ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अथ चन्द्रिकाबद्धरसः ।

द्वाभ्यांचरसगंधाभ्यांकज्जलींकारयेद्बुधः ।
निशाभांकारयेन्मूषांकज्जलींतांविनिक्षिपेत् ॥ ४९ ॥
पलैकंरुद्धताम्रस्यपत्रिकांतत्रनिक्षिपेत् ।

सम्यङ्निरुध्यसंशोष्यंक्षिपेत्कुक्कुटकेपुटे ॥ ५० ॥
स्वांगशीतलमुद्धृत्यधमेट्टंकणसंयुतम् ।
काचटंकणयोगेनधमेत्तंचाष्टधापुटे ॥ ५१ ॥
ईषद्रंगसमायोगःसमावर्त्तिततारकम् ।
सार्द्धंतेनैवभावेननिष्कमद्रेणयोजयेत् ॥ ५२ ॥
गोजलैः धाभिन्नंस्व९' गंधकसंयुतम् ।
मूषिकायांविनिक्षिप्यरुद्धातंप्रधमेत्ततः ॥ ५३ ॥
द्वित्रिवारंकृतेह्येवंतंतारंतत्रजीर्यति ।
जीर्णंसुवर्णमानञ्चतत्रनागंनियोजयेत् ॥ ५४ ॥
तद्गोलंतत्रचादायकटुत्रितयकट्फलैः ।
चूर्णितैःसहसंयोज्यतुलामात्रंनिषेवितम् ॥ ५५ ॥
श्वासंकासंक्षयंशूलंप्लीहगुल्माग्निमन्दताम् ।
वातरोगमशेषञ्चकफरोगमनेकधा ॥ ५६ ॥
ज्वरंनानाविधंचैवपीडामुदरसम्भवाम् ।
ग्रहणींश्वयथुश्चैवअर्शांसिचभगन्दरम् ॥ ५७ ॥
यकृद्वृद्धिंतथाप्लीहमेदोवृद्धिश्चविद्रधिम् ।
एवमन्यान्हरेद्व्याधींस्तमःसूर्योदयेयथा ॥ ५८ ॥
तत्तद्रोगहरैर्योगैर्योजनीयःसदारसः ।
चन्द्रिकाबद्धसूतोऽयंजलदोषनिवारणः ॥ ५९ ॥
स्वस्थानंनित्यमेवात्रदेहलाघवकारकम् ॥ ६० ॥
रसगंधकयोःपलमेकंग्राह्यंनिशाभांनिशाकारमूषाम् ।

इति हिक्काश्वासाध्यायः ।

अर्थ–पारा और गंधक समानभाग लेकर कज्जली करे, फिर रातमें मूषा बनावे, कज्जलीको मूषामें रख उसके ऊपर चारतोले शुद्ध तांबेके पत्र रक्खे. पश्चात् मूषाको अच्छेप्रकार बंदकर कुक्कुटपुटमें पकावे, शीतल होनेपर बराब-

रका सुहागा मिलाके फिर पकावे, तदनंतर काँच और सुहागा समानभाग मिलाकर आठबार पुटपाक करै, फिर दोतोले वंग और दो तोले चाँदी मिलाके आठबार गोमूत्रमें भावना देवै, फिर कुछ थोडासा गंधक मिलाकर सम्पुटमें रख दो या तीन बार अग्निमें पकावै, इसप्रकार करनेसे चाँदी जीर्ण होजाती है। पश्चात् चाँदीकी बराबर सोनेकी भस्म और सीसेकी भस्म मिलाकर गोला बनालेवै, पश्चात् गोलेमें सोंठ, मिरच, पीपल और कायफलका चूर्ण मिलाकर सेवन करै तो श्वास, खाँसी, क्षय शूल, प्लीहा, गुल्म, मन्दाग्नि, सर्वप्रकारके वातरोग, नानाप्रकारके कफरोग, अनेकप्रकारके ज्वर, उदरकी पीडा, संग्रहणी, सूजन, बवासीर, भगंदर, यकृत्, अंडवृद्धि, प्लीहा, मेदवृद्धि, विद्रधिरोग, इत्यादिरोग ऐसे दूर होवें, जैसे सूर्यसे अंधकार दूर होताहै । यह रस यथारोगोक्त अनुपानके साथ सेवनकरना चाहिये । यह चंद्रिकाबद्धरस–जलदोषविनाशक है, तथा शरीरको हलका करता है ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

इति हिक्काश्वासाधिकारः समाप्तः ।

अथ स्वरभेदचिकित्सा ।

वातेसलवणंतैलंपित्तेसर्पिःसमाक्षिकम् ।
कफेसक्षारकटुकंक्षीरंकवडइष्यते ॥ १ ॥
गलेतालुनिजिह्वायांदन्तमूलेषुचाश्नुतः ।
तेननिष्कुप्यतेश्लेष्मास्वरश्चास्यप्रसीदति ॥ २ ॥
पथ्यापिप्पलिसंयुक्तानागरेणगुडेनवा ।
बदरीपत्रकल्कंवाघृतभृष्टंससैन्धवम् ॥ ३ ॥
स्वरोपघातेकासेचलेहमेनंप्रयोजयेत् ।
अजमोदांनिशांधात्रींक्षारंवह्निंविचूर्णयेत् ॥ ४ ॥
मधुसर्पिर्युतंलीढ्वास्वरभेदंव्यपोहति ॥ ५ ॥
कलितरुफलसिन्धुकणाचूर्णं[illegible]ढमपहरति ।
स्वरभेदंगोपयसापिबतिवामलकचूर्णम् ॥ ६ ॥
शर्करामधुमिश्राणिशृतानिमधुरैःसह ।
पिबेत्पयांसियस्योच्चैर्वदतोहिहतःस्वरः ॥ ७ ॥

अर्थ–वातसे उत्पन्न हुए स्वरभेदमें तेलकेसाथ नोन पीना चाहिये । पित्तसे उत्पन्न हुए स्वरभेदमें घीके साथ सहत मिलाकर पीवे, कफके स्वरभेदमें जवाखार और त्रिकुटेका चूर्ण दूधमें मिलाकर कुलेकरै तो गल, तालु, जिह्वा और दन्तमूलका कफ निकलकर स्वर शुद्ध होजाताहै, हरड और पीपलके चूर्णको मिलाकर खावे, अथवा सोंठके चूर्णको गुडमें मिलाकर खावे, वा बेरीके पत्तोंके कल्कको घीमें भूजकर सैंधानोन मिलाकर खावै तो स्वरभेद और खांसी दूर होवै। अजमोदा, हलदी, आमला, जवाखार और चीतेके चूर्णको सहत और घीमें मिलाकर खानेसे स्वरभेदरोग दूर होताहै । बहेडा, सैंधानोन और पीपल इनके चूर्णको छाँछमें मिलाकर पीनेसे स्वरभेदरोग दूर होताहै । गायके दूधमें आमलोंका चूर्ण मिलाके पीनेसे स्वरभेदरोग नष्ट होताहै । मधुर औषधियोंको दूधमें औटाके बूरा और सहत मिलाकर पीनेसे ऊंचेस्वरसे भाषणकरनेका स्वरभेद दूर होजाताहै ॥ १–७ ॥

अथ चव्यादिचूर्णम् ।

चव्याम्लवेतसकटुत्रिकतिन्तिडीकं
तालीशबीजकतुगादहनैःसमांशैः ।
चूर्णंगुडप्रमृदितंत्रिसुगंधियुक्तं
वैस्वर्यपीनसकफारुचिषुप्रशस्तम् ॥ ८ ॥

अर्थ–चव्य, अमलबेंत, त्रिकुटा, इमली, तालीशपत्र, बिजोरेकी केशर, वंशलोचन, चीता और त्रिसुगन्धि इनका चूर्ण बना गुड मिलाके सेवनकरनेसे स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि दूर होती है ॥ ८ ॥

अथ भृंगराजाद्यंघृतम् ।

भृंगराजामृतावल्लीवासकदशमूलकासमर्दरसैः ।
सर्पिःसपिप्पलीकंसिद्धंस्वरभेदकासजिन्मधुना ॥ ९ ॥
भृंगराजप्रभृतीनांचतुर्गुणःक्वाथःपिप्पल्याःपादिकःकल्कः ।

अर्थ–भांगरा, पीपल, अडूसा, दशमूल और कसौंदी, इनके रसमें घीको सिद्धकर, पीपलका चूर्ण और सहत मिलाके खानेसे स्वरभेद और खाँसी दूर होती है ॥ ९ ॥

अथ पथ्याद्यंघृतम् ।

पथ्यापाठाकणाशुण्ठीसैन्धवंमरिचंवचा ।
शिग्रुप्रतिपलंकल्कं तंद्वात्रिंशत्पलम् ॥ १० ॥

घृताच्चतुर्गुणंक्षीरमाजंसर्पिर्विपाचयेत् ।
घृतशेषंपिबेन्नित्यंवाङ्मेधास्मृतिबुद्धिकृत् ॥ ११ ॥

अर्थ–हरड, पाढ, पीपल, सोंठ, सैंधानोन, कालीमिरच, बच और सैंजिना यह प्रत्येक चार चार तोले ले कल्क बना उसमें १२८ एकसौ अट्ठाईस तोले बकरीका घी और ५१२ पांचसौ बारह तोले दूध मिलाके घीको सिद्ध करै । इस घीको पीनेसे वाणी, मेधा और स्मरणशक्ति बढती है ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ अश्वगंधाद्यंघृतम् ।

अश्वगंधाजमोदाचपाठात्रिकटुकत्रिकम्।
शतपुष्पंब्रह्मबीजंसैंधवश्चसमंसमम् ॥ १२ ॥
एतदर्द्धंवचाचैवचूर्णितंमधुसार्पिषा ।
भक्षयेत्कर्षमात्रन्तुजीर्णानिक्षीरभोजनम् ॥ १३ ॥
सहस्रग्रन्थधारीस्यान्मृतोवावाक्पतिर्भवेत् ॥ १४ ॥
ब्रह्मंबीजंपलाशबीजंसर्वचूर्णादर्द्धंग्राह्यम् ॥

अर्थ–असगंध, अजमोदा, पाढ, त्रिकुटा, त्रिफला, सोया, ढाकके बीज और सैंधानोन, यह प्रत्येक समान भाग लेकर और सबसे आधाभाग बचका चूर्ण लेवै, सबको एकत्रकर घी और सहतमें मिलाकर दो तोले भर खानेसे १००० एक सहस्र ग्रन्थोंका धारण करनेवाला होजाताहै, पश्चात् मरकर बृहस्पतिके अवतारको धारण करता है,इसके ऊपर दूधका भोजन करना चाहिये॥ १२–१४॥

अथ कल्याणावलेहः ।

सहरिद्रावचाकुष्टंपिप्पलींविश्वभेषजम् ।
अजाजीचाजमोदाचयष्टीमधुकसैन्धवम् ॥ १५ ॥
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
तच्चूर्णंसर्पिषालोड्यप्रत्यहंभक्षयेन्नरः ॥ १६ ॥
एकविंशतिरात्रेणभवेच्छ्रुतिधरोनरः ।
मेघदुन्दुभिनिर्घोषोमत्तकोकिलनिस्वनः ॥ १७ ॥
जडगद्गदमूकत्वंलेहःकल्याणकोजयेत् ॥ १८ ॥

अर्थ–हलदी, बच, कूट, पीपल, सोंठ, कालाजीरा, अजमोदा, मुलैठी और सैंधानोन, यह सब समानभाग ले एकत्र चूर्णकर घीमें मिला इक्कीस दिन खावै तो अनेकशास्त्रोंको धारणकरनेवाला मनुष्य होजाताहै, यह कल्याणावलेह-शब्दको मेघकीसमान और कोकिलकी समान कर देताहै, तथा जडता, गद्गदपन और गूँगेपनको दूर करैहै ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ ब्राह्मीघृतम् ।

समूलपत्रमादायब्राह्मींप्रक्षाल्यवारिणा ।
उलूखलेक्षोदयित्वारसंवस्त्रेणगालयेत् ॥ १९ ॥
रसेचतुर्गुणेतस्मिन्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
औषधानितुपेष्याणितानीमानिप्रदापयेत् ॥ २० ॥
हरिद्रामालतीकुष्ठंत्रिवृतासहरीतकी ।
एतेषांपालिकान्भागान्शेषांश्चकार्षिकानिह ॥ २१ ॥
पिप्पल्यथविडंगानिसैन्धवंशर्करावचा ।
सर्वमेतत्समालोड्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥ २२ ॥
एतत्प्राशितमात्रेणवाग्विशुद्धिश्चजायते ।
अर्द्धमासप्रयोगेणसोमराजवपुर्भवेत् ।
सप्तरात्रप्रयोगेणकिन्नरैःसहगीयते ॥ २३ ॥
मासमेकप्रयोगेणस्मृतमात्रन्तुधारयेत् ॥ २४ ॥
हन्त्यष्टादशकुष्ठानिअर्शांसिविविधानिच ।
पंचगुल्मान्प्रमेहांश्चकासंपंचविधंजयेत् ॥ २५ ॥
वन्ध्यानाञ्चैवनारीणांनराणामल्परेतसाम् ।
घृतंसारस्वतंनामबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ २६ ॥

इति स्वरभेदाऽध्यायः ।

अर्थ–मूल और पत्तों समेत ब्राह्मीको लेकर पानीसे धो डाले, फिर ओखलीमें कूटकर वस्त्रमें निचोडके रस निकालले, यह रस २५६ दोसौ छप्पन तोले और इसमें चौसठ तोले घी मिलाके पकावै, फिर हलदी, मालती, कूठ,

निसोत, हरड, यह प्रत्येक चार २ तोले, पीपल, बायबिडंग, सैंधानोन, बूरा, और वच, यह प्रत्येक दो २ तोले मिलाकर धीरे धीरे मृदु अग्निसे पकावै, शीतल होनेपर उतार लेवै, इस घृतको सेवनकरनेसे शब्द शुद्ध होजाताहै । इसको सातरात्रिपर्यन्त खावै तो किन्नरकी समान शब्द होजावै, इसको पंद्रह-दिन सेवनकरनेसे शरीर चन्द्रमाकी समान निर्मल होजाताहै, और इसको एक महीने सेवनकरनेसे सम्पूर्ण शास्त्रोंको धारणकरनेवाला मनुष्य होजाताहै । तथा यह घी–अठारह प्रकारके कोढ, अनेक प्रकारकी बवासीर, पांचों प्रकारके गुल्म, सर्वप्रकारके प्रमेह, पांचों प्रकारकी खाँसी, इन सबको दूर करैहै और वंध्या स्त्री तथा अल्पवीर्यवाले पुरुषोंके यह तेल–बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवालाहै ॥ १०–२६ ॥

इति स्वरभेदाध्यायः समाप्तः ।

अथारोचकचिकित्सा ।

बस्तिंसमीरणेपित्ते विरेकंवमनंकफे ।
कुर्याद्धृद्यानुकूलानिहर्षणंचमनोघ्नजे ॥ १ ॥
वान्तोवचाद्भिरनिलेविधिवत्पिबेत्तु
स्नेहोष्णतोयमदिरान्यतमेवचूर्णम् ।
कृष्णाविडंगयवभस्महरेणुभार्ङ्गी
रास्नैलहिंगुलवणोत्तमनागराणाम् ॥ २ ॥
सर्वत्रमदनफलयोगइतिबोद्धव्यः ।
पिबेद्गुडाम्बुमधुरैर्वमनंप्रशस्तं
लेहःससैन्धवसितामधुसर्पिरिष्टः ।
निम्बाम्बुछर्दितवतःकफजेचपानं
राजद्रुमाम्बुमधुनासहदीप्यकाढ्यम् ॥ ३ ॥
चूर्णंयदुक्तमथवानिलजेतदेव
सर्वैश्चसर्वकृतमेवमुपक्रमेच्च ॥ ४ ॥
पानानिचविचित्राणिभक्ष्याणिविविधानिच ।
कर्पूरादिःगंधीनिप्रयुंजीतयथाविधि ॥ ५ ॥

कुष्ठंसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचंविडम् ।
धात्र्यैलापद्मकोशीरपिप्पलयश्चन्दनोत्पले ॥ ६ ॥
लोध्रंतेजोवतीपथ्यात्र्यूषणंसयवाग्रजम् ।
आर्द्रदाडिमनिर्यासश्चाजाजीशर्करान्वितः ॥ ७ ॥
:तैललवणास्त्वेतेचत्वारःकवडग्रहाः ।
चत्वारोऽरोचकान्हन्युर्वाताद्येकजसर्वजान् ॥ ८ ॥
आर्द्रकदाडिमफलस्वरसः ।
अथवामांसीधान्यानिमुस्तमामलकत्वचः ।
त्वक्चदार्वीयवान्यश्चपिप्पलयस्तेजवत्यपि ॥ ९ ॥
यवानीतिन्तिडीकंचपंचैतेमुखशोधनाः ।
श्लोकपादैरभिहिताःसर्वारोचकनाशनाः ॥ १० ॥
विट्चूर्णमधुसंयुक्तोरसोदाडिमसम्भवः ।
असाध्यमपिसंहन्यादरुचिंवक्त्रधारितः ॥ ११ ॥
अम्लिकागुडतोयंचत्वगेलामरिचान्वितम् ।
अभक्तच्छन्दरोगेषुशस्तंकवडधारणम् ॥ १२ ॥
अम्लिकातिन्तिडीफलम् ।

अर्थ—वातसे उत्पन्न हुई अरुचिमें बस्तिकर्म कराना चाहिये । पित्तसे उत्पन्न अरुचिमें विरेचनकर्म कराना चाहिये । और कफसे उत्पन्न हुई अरुचिमें वमन कराना चाहिये । मनको नाश करनेवाले पदार्थोंसे उत्पन्न हुई अरुचिमें मनके अनुकूल और हर्षजनक पदार्थ सेवन करने उचितहैं । वचके क्राथको पीनेसे वमन होकर वातज अरुचि रोग दूर होजाताहै ॥ घृत तैलादि स्नेह, गरमजल, मदिरा, इन तीनोंमेंसे एक किसीको पीनेसे वातज अरुचि दूर होजाती है । पीपल, बायबिडंग, जवाखार, रेणुका, भारंगी, रास्ना, इलायची, हींग, सैंधानोन और सोंठ, इनके चूर्णको सेवन करनेसे अरुचि विनष्ट होजातीहै, इन सब योगोंमें वमन करानेके लिये मैनफलका चूर्ण मिलाना उचितहै । मधुर औषधियोंको गुडके शरबतके साथ पीनेसे वमन होकर अरुचि रोग दूर होजाताहै । सैंधानोन, मिश्री, सहत और घी मिलाकर खानेसे अरुचि दूर होतीहै, नीमके

काढेको पीनेसे कफज अरुचि दूर होतीहै। अमलतासके रसमें अजमोदाका चूर्ण और सहत मिलाकर खानेसे वातज अरुचि दूर होतीहै। त्रिदोषसे उत्पन्न हुए अरुचिरोगमें सब प्रकारकी चिकित्सा करनी चाहिये। विविधविचित्र अन्न-पान तथा कर्पूरादि सुगंधिद्रव्य अरुचिरोगमें प्रयोग करने चाहियें। कूट, कालानोन, जीरा, बूरा, कालीमिरच, विडनोन, आमला, इलायची, पद्माख, खस, पीपल, चंदन, और कमल अथवा लोध, तेजबल, हरड, त्रिकुटा और जवाखार या अदरखका रस, अनारका रस, जीरा और खांड, इनचार योगोंका तेलके साथ और सैंधानोनके साथ कुल्ला करनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजा-तीहै। बालछड और धनियाँ अथवा नागरमोथा और आमला वा दालचीनी, दारुहलदी, और अजवायन या पीपल और चव्य अथवा अजवायन और इम-ली इन पाचों योगोंमेंसे एक किसी योगका चूर्ण करके मुखमें धारणकरनेसे मुख शुद्ध होकर सर्वप्रकारकी अरुचि नष्ट होजातीहै। विड या संचरनोनको सहत और अनारके रसके साथ अथवा इमली, गुड और जलके साथ दालचीनी, इलायची और कालीमिरचोंका चूर्ण मुखमें धारणकरनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै॥ १-१२॥

अथारुचिहरागुटिका।

कारव्यज [illegible]क्षावृक्षाम्लदाडिमम्।
सौवर्चल[illegible]डक्षौद्रंसर्वारोचकनाशनम्॥ १३॥
एभिश्च[illegible]माषप्रमितागुटिकाकार्य्या।

अर्थ-सौंफ, जीरा, कालीमिरच, दाख, इमली, अनार, कालानोन, गुड, और सहत, यह सब द्रव्य एकत्र मिलाकर चारमासेकी गोलियाँ बनालेवे, इन गोलियों[illegible] सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै॥ १३॥

अथ यवानीखाण्डवः।

यवानीतिन्तिडीकञ्चनागरञ्चाम्लवेतसम्।
[illegible]डिमंबदरंचाम्लंकार्षिकाण्युपकल्पयेत॥ १४॥
धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गंचार्द्धकार्षिकम्।
पिप्पलीनांशतंचैकंद्वेशतेमरिचस्य च॥ १५॥
शर्करायाश्चचत्वारिपलान्येकत्रकारयेत्।
जिह्वाविशो[illegible]तच्चूर्णभक्तरोचनम्॥ १६॥

कासश्वासहरंग्राहिग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥ १७ ॥
पिप्पलीमरिचयोर्डकेनमानम् ।

अर्थ—अजवायन, इमली, सोंठ, अमलबेंत, अनार और बेर, यह प्रत्येक दो दो तोले, धनियाँ, कालानोन, जीरा, और दालचीनी यह प्रत्येक चारचार तोले, कालीमिरच २०० दोसौ, पीपल १०० एकसौ, तथा खांड चार पल लेवै, इन सबको एकत्र पीसकर सेवनकरनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजाती है, तथा यह रागखाण्डव जिह्वाको शुद्ध करनेवाला, हृदयको हितकारी खाये हुएको जीर्ण करनेवाला, खाँसी, श्वास, संग्रहणी, और बवासीरको दूर करै है, और मलरोधक है ॥ १४–१७ ॥

अथ कलहंसकः ।

अष्टादशशिग्रुपलानिदशमरिचानिविंशतिश्चपिप्पल्यः ॥
आर्द्रकपलंप्रस्थत्रयमारनालस्य ।
विडलवणसहितमेतत्खजाहतंसरतिगंधाढ्यम् ।
व्यंजनसहस्रघातिज्ञेयंसकलहंसकोनाम ॥ १८ ॥

अर्थ—सैंजिनेके बीजोंका चूर्ण अठारह पल, कालीमिरचोंका चूर्ण दशपल, बीस पिप्पली, अदरखकारस एकपल, कांजी तीन सेर और विडनोन, इन सब द्रव्योंको एकत्र पकाकर त्रिसुगंधिका चूर्ण मिलाके लेवै । इसको अनुपान माफिक खानेसे अरुचि दूर होजातीहै ॥ १८ ॥

अथारुचिहरोपायाः ।

यवक्षारन्तुकर्षैकंद्वाविंशद्गुणकैर्जलैः ।
पादशेषंहरेत्क्वाथंश्लेष्मघ्नंमुखशुद्धिकृत् ॥ १९ ॥
कणापथ्याप्रियंगुश्चदार्वीतेजोवतीनिशा ।
लोध्रंचप्रतिकर्षैकंदत्त्वात्रिंशद्गुणैर्जलैः ॥ २० ॥
पादशेषंहरेत्क्वाथंपलैकञ्चमधुक्षिपेत् ।
गण्डूषाच्छ्वासकासञ्चमुखरोगञ्चनाशयेत् ॥ २१ ॥
पक्वदाडिमबीजञ्चग्राहयेच्चपलाष्टकम् ।
अजाजीभृष्टचूर्णञ्चकर्षांशांसितशर्कराः ॥ २२ ॥

पलंक्षौद्रेणसंयुक्तंपीतंरुचिकरंमुखे ।
शर्करादाडिमक्काथद्राक्षाखर्ज्जूरजे वा ॥ २३ ॥
केशरंमातुलुंगस्यसैन्धवंमधुनापि वा ।
आस्यवैरस्यशान्त्यर्थंभक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ २४ ॥
मुस्ताद्राक्षामृताशुंठीकिराततिक्तकंजलैः ।
क्काथयित्वापिबेदुष्णमास्यवैरस्यशान्तये ॥ २५ ॥
कणातगरसौराष्ट्रीतुल्यतेजोवतींजले ।
मधुयुक्तंपिबेत्क्काथंवैरस्यंश्लैष्मिकंजयेत् ॥ २६ ॥
कपित्थमज्जत्रिकटुचूर्णंक्षौद्रसितायुतम् ।
अरोचकेषुसर्वेषुप्रसन्नंधारयेन्मुखे ॥ २७ ॥

इति अरोचकाऽधिकारः ।

अर्थ—एक तोले जवाखारको बत्तीस तोले जलमें पकावे, जब आठतोले जल शेष रहे तब उतारले, यह क्काथ कफनाशक और मुखशोधक है। पीपल, हरड, फूलप्रियंगु, दारुहलदी, तेजबल, हलदी, और लोध ये प्रत्येक एक एक कर्ष लेवे और ३२ कर्ष पानीमें काढा करै, चतुर्थांश शेष रहे तब एक पल सहत डाल कर गंडूष करे, इससे श्वास, कास और मुखरोग नष्ट होतेहैं, पके अनारके बीजोंको आठपल लेकर उसमें अजवायनका भुना हुआ चूर्ण एक कर्ष डाले उसका काढा करके एक पल सहत डालके पीनेसे मुखमें रुचि आतीहै, अनारके क्काथको खांडके साथ, अथवा दाख और खजूरके क्काथको वा बिजोरे-की केशरको सेंधानोनके साथ और सहतके साथ दोतोलेभर सेवन करनेसे—मुखकी विरसता दूर होतीहै। नागरमोथा, दाख, हरड, सोंठ और चिरायता इनके काढेको गरम गरम पीनेसे मुखकी विरसता दूर होतीहै। पीपल, तगर, सोरठकी मिट्टी और तेजबल, इन सबको समानभाग लेकर काढा करे इसकाढेमें सहत मिलाकर पीवे तो कफसे उत्पन्न हुई मुखकी विरसता दूर होतीहै। कैथाकी मींग, त्रिकुटेका चूर्ण, सहत और मिश्री, इनसबको मिलाके मुखमें धारण-करनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होतीहै ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

इति अरोचकाधिकारः समाप्तः ।

अथच्छर्द्दिचिकित्सा ।

आमाशयोत्क्लेशभवाहिसर्वाश्छर्द्योमतालंघनमेवतस्म त्
प्राक्कारयेन्मारुतजांविमुच्यसंशोधनंवाकफपित्तहारि १
हन्यात्क्षीरोदकंपीतंछर्द्दिंवमनसंभवाम् ।
ससैन्धवंपिबेत्सर्पिर्वातच्छर्द्दिनिवारणम् ॥ २ ॥
मुद्गामलकयूषंवाससर्पिष्कंससैन्धवम ।
यवागूंमधुमिश्रांवापंचमूलीकृतांपिबेत् ॥ ३ ॥

पंचमूलीस्वल्पा ।

सोदीच्यंगैरिकंपेयंसेव्यंवातण्डुलाम्बुना ।
चन्दनश्चमृणालश्चबालकंनागरंवृषः ॥ ४ ॥
सतण्डुलोदकक्षौद्रःपीतःकल्कोवमिंजयेत् ।
क्वाथःपर्पटजःपीतःसक्षौद्रश्छर्दिनाशनः ॥ ५ ॥
कषायोभृष्टमुद्गस्यसलाजमधुशर्करः ।
छर्द्यतीसारतृड्दाहज्वरघ्नःसंप्रकाशनः ॥ ६ ॥
गुडूचीत्रिफलानिम्बपटोलैःक्वथितंपिबेत् ।
क्षौद्रयुक्तंनिहन्त्याशुच्छर्द्दिपित्ताम्लसंभवाम् ॥ ७ ॥
कोलामलकमज्जानोमाक्षिकाविट्सितामधु ।
सकृष्णातण्डुलोलेहश्छर्द्दिमाशुनियच्छति ॥ ८ ॥
अश्वत्थवल्कलंशुष्कंदग्ध्वानिर्वापितंजले ।
तज्जलंपानमात्रेणच्छर्द्दिंजयतिदुस्तराम् ॥ ९ ॥
लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां
क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम् ।
पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां
लेहास्त्रयःसकलवम्यरुचिप्रशान्त्यै ॥ १० ॥
कृतंगुडूच्याविधिवत्कषायंहिमसंज्ञितम् ।
तिमृष्वपिभवेत्पथ्यंमाक्षिकेणसमायुतम् ॥ ११ ॥

अर्थ-आमाशयके उत्क्लेश होनेसे छर्दि होतीहै, इसकारण वातकी छर्दिको छोडके शेष छर्दियोंमें प्रथम लंघन अथवा कफपित्तनाशक जुलाबदेवै । दूध और जल अथवा घी और सैंधानोनको मिलाकर पीनेसे वातकी वमन शमन होतीहै । मूँग और आमलेके यूषको घृत और सैंधानोनके साथ अथवा स्वल्प-पंचमूलकी बनाई हुई यवागूमें सहत मिलाके पीनेसे सर्वप्रकारकी वमन दूर होतीहै । सुगंधवाला और गेरूको चावलोंके जलके साथ पीनेसे अथवा लाल-चन्दन, कमलकीनाल, सुगंधबाला, सोंठ और अडूसा चावलोंके जलके साथ पीसकर मधुके साथ या पित्तपापडेके काढेको मधुके साथ पीनेसे वमन दूर होतीहै । भुनीहुई मूँगोंके काढेमें खीलें सहत और बूरा मिलाकर पीनेसे-वमन, अतीसार, तृषा, दाह और ज्वर दूर होताहै । गिलोय, त्रिफला, नीम और परवल, इनके काढेमें सहत डालके पीनेसे अम्लपित्तसे उत्पन्न हुआ वमन दूर होजाताहै । बेरकी मींग, आमलेकी मींग, मक्खीकी विष्ठा, मिश्री, सहत, पीपल, और चावल इनसबका अवलेह बनाकर चाटनेसे सर्वप्रकारका वमन, दूर होजाताहै । पीपलके खारका नितरा हुआ जल पीनेसे छर्दि नष्ट होजाती है । खीलें, कैथ, सहत, पीपल और कालीमिरच अथवा सहत, हरड, त्रिकुटा, धनियाँ और जीरा, या हरड, गिलोय, कालीमिरच, सहत और पीपल, इनका अवलेह बनाकर चाटनेसे-वमन और अरुचि दूर होतीहै । गिलोयके शीतल क्वाथमें मधु डालके पीनेसे सर्वप्रकारका वमन दूर होताहै ॥ १-११ ॥

अथैलादिचूर्णम् ।

एलालवंगगजकेशरकोलमज्जा-
लाजाप्रियंगुवनचन्दनपिप्पलीनाम् ।
चूर्णानिमाक्षिकसितासहितानिलीढ्वा
छर्दिंनिहन्तिकफमारुतपित्तजाञ्च ॥ १२ ॥

अर्थ-इलायची, लौंग, नागकेशर, बेरकी मींग, खीलें, फूलप्रियंगू नागरमोथा, चन्दन, और पीपल, इनका चूर्ण बना तिसमें सहत मिलाकर खावै तो-सर्वप्रकारकी छर्दि दूर होवै ॥ १२ ॥

अथ पंचकाद्यंघृतम् ।

चन्दनंमधुकंक्षीरंपीतंरुधिरवान्तिजित् ।
पद्मकंगुडूचीनिम्बंधन्याकंरक्तचन्दनम् ॥ १३ ॥

कल्केक्वाथेचहविषःशस्तंछर्दिनिवारणम् ।
तृष्णारुचिप्रशमनंदाहज्वरनिवारणम् ॥ १४ ॥
१ ण्डनारिकेलखण्डकूष्माण्डच्यवनप्राशाद-
योऽत्रयोज्याः ।

इति छर्द्यधिकारः ।

अर्थ–चन्दन और मुलैठीके चूर्णको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्तवमन, दूर होताहै । पद्माख, गुडूची (गिलोय), नीम, धनियाँ, लालचन्दन, इनके कल्कमें और क्वाथमें घीको सिद्धकर खानेसे वमन, तृष्णा, अरुचि और दाह-ज्वर दूर होताहै ॥ १३ ॥ १४ ॥

नारिकेलखण्ड, खण्डकूष्माण्ड और च्यवनप्राशको सेवनकरनेसे सर्वप्रकारका वमन विनष्ट होजाताहै ॥

इति छर्द्यधिकारः समाप्तः ।

अथ तृष्णाचिकित्सा ।

वान्तिःसर्वा ःतृष्णा सुक्षयादन्यत्रपूज्यते ।
विलोडनश्वसर्वास प्रयोगैर्विविधैर्हितम् ॥ १ ॥
वातपित्तहरःकृत्स्नोविधिःप्रायोऽत्रशस्यते ।
तृष्णायांपवनोत्थायांसगुडंदधिशस्यते ॥ २ ॥
रसाश्चबृंहणाःसितागुडूच्यारसएववा ।
लाजोदकंमधुयुतंशीतंगुडविमर्दितम् ॥ ३ ॥
काश्मर्य्याःशर्करायुक्तंपिबेत्तृष्णार्दितोरसम् ।
ओदनंरक्तशालीनांशीतंमाक्षिकसंयुतम् ॥ ४ ॥
भोजयेत्तेनशम्येतच्छर्दिस्तृष्णाचिरोत्थिता ।
३ [ह्र] जम्बूकषायंवापिबेन्माक्षिकसंयुतम् ॥ ५ ॥
छर्दिंसर्वांप्रणुदतितृष्णां चैवापकर्षति ।
ः च्छांछर्दितृषादाहस्त्रीमद्यभृशकर्षिताः ॥ ६ ॥
पिबेयुःशी तलंतोयंरक्तपित्तेमदात्यये ।

दाडिमस्यतुबीजानिजीर[illegible]नागकेशरम् ॥ ७ ॥
चूर्णसशर्करक्षौद्रोले[illegible]स्तृष्णा[illegible]म् ।
पैत्तेतृषिसिता[illegible]क्तःपक्वोदुम्बरजोरसः ॥ ८ ॥
तत्काथ[illegible]द्वच्छारिवादिगणाम्बुवा ।
वटशुङ्गामयक्षौद्रलाजानीलोत्पलैर्दृढा ॥ ९ ॥
गुडिकावदनेन्यस्ताक्षिप्रंतृष्णामुदस्यति ।
[illegible]स्तकंचन्दनोशीरपद्मकंरक्तचन्दनम् ॥ १० ॥
एतैःशिरसिलेपेनक्षिप्रंतृष्णामुदस्यति ।
शुष्कंन्यग्रोधकाष्ठञ्चदग्ध्वानिर्वापयेज्जले ॥ ११ ॥
तज्जलंपानमात्रेणक्षिप्रंतृष्णांविनश्यति ।
पुनर्नवाह्यपामार्गमूलकंजीरकद्वयम् ॥ १२ ॥
तक्रपिष्टंपिबेद्यस्तुमुखशोषप्रशान्तये ।
खर्जूरंदाडिमंद्राक्षातिन्तिडीकंपरूषकम् ॥ १३ ॥
चित्रकामलकन्तोयैःक्काथंपादावशेषितम् ।
संयुक्तंनिखिलंचैवतृष्णादाहहरंपरम् ॥ १४ ॥
पलैकंचन्दनंतोयैर्द्वात्रिंशद्गुणितैःपचेत् ।
अर्द्धशेषंपिबेन्नित्यंदाहतृष्णाज्वरापहम् ॥ १५ ॥
द्राक्षाखर्जूरकोलानांप्रतिपंचपलंभवेत ।
पचेदष्टगुणेतोयेपादशेषंसुशीतलम् ॥ १६ ॥
त्वगेलापत्रकंचूर्णंप्रतिनिष्कद्वयंक्षिपेत् ।
क्षौद्र[illegible]पलचत्वारिपानात्तृष्णाम्रशोपजित् ॥ १७ ॥
खर्जूरोशीरमृद्वीकापद्मकंपद्मकेसरम् ।
धात्रीप[illegible]षकंव्याघ्रीवलायष्टिकचन्दनम् ॥ १८ ॥
मधूकपुष्पकाश्मर्य्यंतोयैश्चैवचतुर्गुणैः ।
पक्वंपर्युषितंरात्रौस्थितंभाण्डेनवेदृढे ॥ १९ ॥

लाजाचूर्णश्चतद्युक्तंशर्करामधुसं॰तम ।
तृष्णादाहहरंपानेजातीपुष्पाधिवासितम् ॥ २० ॥
मूर्च्छादाहभ्रमंहन्तितृष्ण मत्यन्तदारुणाम् ।
तृषितोमोहमायातिमोहात्प्राणंप्रमुञ्चति ॥ २१ ॥
तस्मात्सर्वास्ववस्थासुनक्कचिद्वारिवार्य्यते ॥ २२ ॥

अर्थ–क्षयजको छोडकर बाकीके सर्व तृषारोगोंमें वमन करानी चाहिये,तथा वातपित्तनाशक क्रिया तृषारोगोंमें हितकारीहै । वातकी तृषामें गुडके साथ दही-का खाना उत्तमहै । पुष्टिकारक रस, खाँड और गिलोयका रस यह तृषारोग-में पीने चाहियें । खीलोंके शीतलजलमें सहत और गुड मिलाकर पीनेसे तृषा रोग दूर होतीहै, कुम्भेरके रसमें खाँड मिलाकर पीनेसे तृषा दूर होतीहै । लाल धानके चावलोंके भातको सहतके संग खानेसे तृषा और वमन नष्ट होताहै । आम और जामुनके क्काथमें सहत डालके पीनेसे, तृषा और वमन नष्ट होता है। मूर्च्छा, वमन, तृषा, दाह, स्त्रीप्रसंग और मद्यपानसे क्षीणहुए मनुष्यको तथा रक्तपित्त और मदात्यय रोगीको शीतलजल पीनेको देना चाहिये । अनारकेबीज, जीरा और नागकेशर इनके चूर्णमें बूरा और सहत मिलाकर चाटनेसे तृषारोग नाश होताहै । पकेहुए गूलरकेरसमें अथवा क्काथमें खाँड डालके पीनेसे पित्तकी तृषा दूर होतीहै । सारिवादिगणका क्काथ शीतलकर पीनेसे पित्तकी तृषा दूर होतीहै । वड़के अंकुर, खील, सहत और नीलोत्पल (जिसके अभावमें फा० में नीलोफर लेतेहैं), इनकी वनाई हुई गोली मुखमें खानेसे तृषा दूर होजाती है । नागरमोथा, चन्दन, खस, पद्माख और लालचन्दन, इनको पीसकर शिरपै लेप करनेसे तृषा दूर होजातीहै । वड़की सूखी हुई ल॰ड़ियोंको जलाके क्षार बना उस क्षारको जलमें नितारके पीनेसे तृषा दूर होजातीहै । पुनर्नवा, चिरचिटा, मूली, सफेदजीरा और कालाजीरा इनको समानभाग लेकर मट्ठेमें पीस सेवन करनेसे–मुखशोषरोग दूर होताहै । पिण्डखजूर, अनार, दाख, इमली, फालसा, चीता और आमला इनका चतुर्थांश क्काथ वनाकर पीनेसे–सर्वप्रकारकी तृषा और दाह दूर होतीहै । चारतोलेभर चन्दनको ३२ वत्तीसगुणे जलमें पकावे, जब आधाभाग जलजाय तव उतारकर पीवै तो दाह, तृषा और ज्वर दूर होवै । दाख खजूर और वेर, यह प्रत्येक बीसबीस तोले लेकर आठगुने पानीमें पकावै, जब चौथाभाग शेषरहै तव उतारले, शीतल होनेपर दालचीनी, इला-यची, तेजपात, इनका चूर्ण चारचार मासेभर मिलादेवै और सोलह तोले सहत

मिलादेवे, इसको सेवन करनेसे तृषा और रक्तशोष दूर होताहै । खजूर, दाख, खस, पद्माख, नागकेशर, आमला, फालसा, कटेरी, खिरैटी, मुलैठी, चन्दन, महुएके फूल और कुम्भेर इनको चौगुने जलमें पकावे. जब काढा तैय्यार होजाय तब उत्तम नवीन वासनमें करके रात्रिभर धरा रहनेदेवै, फिर दूसरेदिन खीलोंका चूर्ण, बूरा और सहत मिलाके तथा चमेलीके फूलोंकी वासना देकर सेवन करै तो मूर्च्छा, दाह, भ्रम और अत्यन्त दारुणतृषा दूर होवै । तृषासे पीडित मनुष्योंके मोह उत्पन्न होताहै, और मोहसे प्राण नष्ट होतेहैं, इसकारण संपूर्ण अवस्थाओंमें तृष्णातुर मनुष्योंको जल पीनेको देना चाहिये ॥ १-२२ ॥

इति तृष्णाधिकारःसमाप्तः ।

अथ मूर्च्छा ।

सेकावगाहौमणयःसहाराःशीताःप्रदेहाव्यजनानिलाश्च ।
शीतानिपानानिचगंधवन्तिसर्वासुमूर्च्छासुनिवारितानि ॥ १ ॥
कुर्याच्चनासावदनावरोधंक्षीरंपिबेद्वाथचमानुषीणाम् ।
मूर्च्छाप्रशक्तांतुशिरोविरेकैर्जयेदभीक्ष्णंवमनैश्चतीक्ष्णैः ॥ २ ॥
स्नेहस्वेदोपपन्नानांयथादोषंयथाबलम् ।
पंचकर्माणिकुर्वीतमूर्च्छायेषुमदेषुच ॥ ३ ॥
सिद्धानिवर्गेमधुरेपयांसिसदाडिमाजांगलजारसाश्च ।
तथायवालोहितशालयश्चमूर्च्छासुशस्ताःससतीनमुद्गाः ॥ ४ ॥
यथादोषंकषायाणिज्वरघ्नानिप्रयोजयेत् ।
रक्तजायांतुमूर्च्छायांहितःशीतक्रियाविधिः ॥ ५ ॥
मद्यजायांवमेन्मद्यंनिद्रांसेवेद्यथासुखम् ।
विषजायांविषघ्नानिभोजनानिप्रयोजयेत् ॥ ६ ॥
कोलमज्जोषणोशीरकेशरंशीतवारिणा ।
पीतंमूर्च्छांजलेलीढाकृष्णांवामधुसंयुताम् ॥ ७ ॥
महौषधामृताक्षुद्रापौष्करंग्रन्थिकोद्भवम् ।

पिबेत्कणायुतंक्काथंमूर्च्छायेषुमदेषुच ॥ ८ ॥

क्षुद्राकण्टकारी ।

त्रिफलायाःप्रयोगोवाप्रयोगःपयसोऽपिवा ।
रसायनानांकौम्भस्यसर्पिषोवाप्रशस्यते ॥ ९ ॥

कौम्भंदशवर्षस्थितंघृतम् ।

पिबेद्दुरालभाक्काथंसघृतंभ्रमशान्तये ।
शतावरीबलामूलद्राक्षासिद्धंपिबेत्पयः ॥ १० ॥
सघृतंभ्रमनाशायबीजंवात्त्यालकस्यवा ।
आभाशतावरीव्योषसौवर्चलरजःपिबेत् ॥ ११ ॥
उष्णाम्बुनाभ्रमेकासेश्वासेनेत्ररुजित्र्यहम् ॥ १२ ॥

आभाबबुलपर्य्यायः ।

कल्याणघृतादिकमत्रविधातव्यमिति ।

अर्थ—जलका छिडकना, जलमें घुसकर स्नानकरना, मुक्तादिके हारोंका धारणकरना, चन्दनादिका प्रलेपकरना, शीतलपंखेकी पवन और गुलाबादि शीतल और सुगंधित अर्कोंका पीना, यह सब कर्म्म मूर्च्छारोगमें करने चाहियें। मुख और नासिकाको बन्दकरनेसे अथवा स्त्रीके दूधको पीनेसे मूर्च्छा दूर होतीहै । शिरोविरेचन (अत्यन्त तीक्ष्ण नस्य) अथवा तीक्ष्ण वमन करानेसे—मूर्च्छा दूर होतीहै। स्नेह और स्वेदसे उत्पन्न हुई मूर्च्छा और मदात्ययरोगमें दोषोंका बलाबल विचार कर पंचकर्म्म (वमन, विरेचन, अनुवासनवस्ति, निरूहवस्ति और नस्य), प्रयोग करने चाहिये। मधुरद्रव्योंके साथ सिद्ध किया-हुआ दूध, अनारके रसके साथ जांगलदेशके जीवोंका मांस, तथा जौ, लाल-चावल, मटर और मूँग, यह सब पदार्थ मूर्च्छारोगमें हितकारीहैं । दोषोंको विचारकर ज्वरनाशक कषाय पीनेसे मूर्च्छा रोग दूर होताहै । रक्तकी मूर्च्छामें शीतल क्रिया, मद्यज मूर्च्छामें मदिराकी वमन और निद्रा सेवन करनी चाहियें। विषज मूर्च्छारोगमें विषनाशक भोजन सेवनकरने चाहियें । बेरकी मींग, काली-मिरच, खस और नागकेशरका चूर्ण शीतलजलके साथ, अथवा पीपलका चूर्ण सहतके साथ सेवनकरनेसे मूर्च्छा दूर होजातीहै । सोंठ, गिलोय, कटेरी, पोहकरमूल और पीपलामूल इनके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे—मूर्च्छा

और मदरोग दूर होताहै। त्रिफलेके सेवनकरनेसे, दूधको पीनेसे, रसायन पदार्थोंके भक्षणकरनेसे और दश वर्षके पुराने घीको सेवनकरनेसे—मूर्च्छारोग आराम होताहै। धमासेका काढा घीके साथ अथवा शतावर, खिरैंटी और दाखोंके साथ पकाया हुआ दूध घीके साथ पीनेसे भ्रमरोग नष्ट होजाताहै। बबूरकी फली, सतावर, त्रिकुटा और कालानोन इनका चूर्ण गरमजलके साथ पीनेसे तीन दिनमें भ्रम, खाँसी, श्वाश और नेत्ररोग दूर होतेहैं तथा कल्याणकादि घृतोंको सेवनकरनेसेभी भ्रमरोग दूर होताहै॥ १॥ २॥ ३॥ ४॥ ५॥ ६॥ ॥ ७॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥ १२॥

अथ मदाविष्टलक्षणम्।

शक्तानन्द्रुताभाषंचलक्षलितचेष्टितम्।
विद्याद्वातमदाविष्टंरक्तपीतसिताकृतिम्॥ १३॥
सक्रोधपरुषाभाषीसंप्रहारकलिप्रियम्।
विद्यात्पित्तमदाविष्टंरक्तपीतसिताकृतिम्॥ १४॥
स्वल्पसंबद्धवचनंतंद्रालस्यसमन्वितम्।
विद्यात्कफमदाविष्टंपाण्डुप्रध्यानतत्परम्॥ १५॥

अर्थ—शक्तमुखहोवै, बहुत शीघ्रबोलै, चंचलतासे गमनादि कार्य करै तथा देह लाल, पीली और सफेद रंगकी होय तो वातका मदाविष्ट जानना। क्रोधसहित कठिनवचन बोलै, मारनेकी चेष्टा करै, कलह प्यारी लगै, शरीर लाल, पीला और सफेद रंगका हो तो पित्तका मदाविष्ट जानना। बहुत थोडाबोलै, तन्द्रा और आलस्यसे संयुक्तहो और शरीर पाण्डुवर्ण होजाय तो कफका मदाविष्ट जानना॥ १३॥ १४॥ १५॥

अथ मदमूर्च्छाहरोपायाः।

वन्यकरीपघ्राणाच्छीतलजलपानाल्लवणभक्षणाद्वापि।
शाम्यतिपूगीफलमदचूर्णरुजाशर्कराकवलात्॥ १६॥
पथ्याक्काथेनसंसिद्धंसर्पिर्धात्रीरसेनवा।
सर्पिःकल्याणकंवापिमदमूर्च्छाहरंपिबेत्॥ १७॥

घृत ३२ पल, हरीतकी या आमलोंका रस ६४ पल, पानीय ५२४ पल, शेष १२८ पल॥ अकल्कमिदंघृतम्।

ऽंजनान्यवपीडाश्चधूमःप्रधमनानिच।
सूचिभिस्तोदनंशस्त्रैर्दाहःपीडान्यथान्तरे ॥ १८ ॥
अंजनंकेशलोम्नाञ्चदन्तैर्दंशनमे च।
आत्मगुप्तावघर्षश्चहितस्तस्यावरोधने ॥ १९ ॥
अवपीडानिर्गुण्डीपत्ररसादिभिर्नस्यम्।
प्रधमनंत्रिकटुकादिचूर्णस्यनासायांक्षेपः ॥ २० ॥
शस्त्रैःपीडेतियोजना।
प्रबुद्धसंज्ञमल्पैस्तुलघुभिस्तमुपाचरेत्।
विस्मापनैःसंस्मरणैःप्रियैःश्रुतिभिरेवच ॥ २१ ॥
पटुभिर्गीतवादित्रैःशब्दैश्चित्रैश्चदर्शनैः।
विरेकवान्त्यसृक्स्रावैर्व्यायामामोदघर्षणैः ॥ २२ ॥
प्रातर्गुडार्द्रकंखादेत्तथामधुलिहन्निशि।
मूर्च्छोन्मादमदंकासंसप्ताहात्पथ्यभुग्… ॥ २२ ॥

अर्थ–वनकागोवर (अरने उपले) सूँघनेसे वा शीतलजलको पीनेसे अथवा लवणको भक्षणकरनेसे सुपारीका मद दूर होताहै। खाँडका कवल मुखमें धारणकरनेसे चूनादिकी वेदना दूर होतीहै। हरडोंके क्वाथमें अथवा आमलोंके क्वाथमें पकाएहुए घृतको या कल्याणघृतको पीनेसे मद और मूर्च्छा दूर होजातीहै। नेत्रोंमें अंजन लगानेसे, अवपीडन करनेसे, धूम्रपान करनेसे, प्रधमन करनेसे, सुइयोंको चुभानेसे, शस्त्रोंसे तोदनकरनेसे, लोहेकी शलाकासे, दग्धकरनेसे, बाल और रुओंको उखाडनेसे, दांतोसे काटनेसे, कोंछकी फलीको देहपै घिसनेसे और शस्त्रादिकसे डरानेसे मूर्च्छारोगीको चेत होताहै। नास निर्गुण्डीके पत्तोंके रसका लेना चाहिये, और प्रधमन अर्थात् नाकमें त्रिकुटेका चूर्ण डालना चाहिये। चेतहुए मूर्च्छा रोगीकी लघु-अल्पक्रिया, आश्चर्यकी वार्त्ता, स्मरण, प्रिय कार्य, प्रियश्रवण, सुंदर गीत, वाद्यादिके शब्द, विचित्रदर्शन, विरेचन, वमन, रक्तमोक्षण, व्यायाम, आमोद और घर्षणके द्वारा चिकित्सा करनी चाहिये। प्रातःकाल अदरखमें गुड मिलाके खावै और रात्रिमें अदरखको सहतके साथ चाटे तो सातदिनमें मूर्च्छा उन्माद, मद और खाँसी दूर होवै, इसपै पथ्यभोजन करै ॥ १६-२३ ॥

अथ पुनर्नवाद्यंघृतम् ।

पयः पुनर्नवाक्काथेयष्टिकल्कप्रसाधितम् ।
घृतंपुष्टिकरंपानान्मद्यपानहतौजसम् ॥ २४ ॥

अर्थ—पुनर्नवाके क्काथमें मुलैठीका कल्क और दूध मिलाके घीको पकावै यह घी—पुष्टिकारक और मद्यपानजनित ओजोहीनताको दूर करैहै ॥ २४ ॥

अथ मूर्च्छाहरनस्यम् ।

मुस्तकंसैन्धवंचैवबृहतीफलमेवच ।
यष्टीमधुसमायुक्तंनस्यंतन्द्राविनाशनम् ॥ २५ ॥

इति मूर्च्छाभ्रमनिद्रातंद्राधिकारः ।

अर्थ—नागरमोथा, सेंधानोन, बडीकटेरीका फल, और मुलैठी, इनके चूर्णका नास लेनेसे तन्द्रा दूर होतीहै ॥ २५ ॥

इति मूर्च्छाभ्रमनिद्रातन्द्राधिकारः समाप्तः ।

अथ दाहचिकित्सा ।

यत्पित्तज्वरदाहोक्तंदाहेतत्सर्वमिष्यते ।
शतधौतघृताभ्यक्तंलिह्याद्वायवसक्तुभिः ॥ १ ॥
कोलामलकयुक्तैर्वाधान्याम्लैरपि [illegible]द्धिमान् ।
छादयेत्तस्यसर्वाङ्ग[illegible]वासना ॥ २ ॥
लामज्जेनाथशु[illegible]क्तेनचन्दनेनानुलेपयेत् ।
चन्दनाम्बुकणास्यन्दितालवृन्तोपजीविते ॥ ३ ॥
स्वप्यादाहार्दितोऽम्भोजकदलीदलसम्भवे ।
परिसेकावगाहेषुव्यजनानाञ्चसेचने ॥ ४ ॥
शस्यतेशिशिरंतोयंतृष्णादाहोपशान्तये ।
क्षीरैःक्षी[illegible]श्चसुशीतैश्चन्दनान्वितैः ॥ ५ ॥
अन्तर्दाहंप्रशमयेदेतैश्चान्यैश्चशीतलैः ।
फलिनीलाध्रसेव्याम्[illegible]हमपत्रंकुटन्नटम् ॥ ६ ॥
कालीयकरसोपेतंदाहेशस्तंप्रलेपनम् ।

सेव्याम्बुशीरवालाचहेमनागेश्वरचूर्णकैः ॥ ७ ॥
धातुक्षयोत्थेकुर्वीतक्षीरमांसादिबृंहणम् ॥ ८ ॥
...टन्नटकैवर्त्तमुस्तकम् ।

अर्थ–जो औषधि पित्तज्वरमें कहीहै वह सब दाहरोगमें हितकारी हैं। सौ-बार धुलेहुए घीको शरीरमें मलनेसे, जौके सतुओंके खानेसे, बेर और आम-लोंके साथ काँजीको पीनेसे,काँजीमें भिजोए हुए वस्त्रको सब शरीरमें ढकनेसे, लामज्जकतृण और काँजी तथा चन्दनके लेप करनेसे, चन्दनके जलमें ताड़के पंखेको भिजोकर पवन करनेसे, कमलके पत्तोंकी शय्यापै शयन करनेसे, अथवा केलेके पत्तोंपै शयन करनेसे, शीतल जलसे परिसेक और अवगाहन तथा, पंखे-को भिजोकर पवन करनेसे दाह और तृषा शान्त होतीहै। चन्दनसंयुक्त शीतल दूध, क्षीर कषाय और अन्यान्य शीतलप्रयोगोंके द्वारा अंतर्दाह दूर होती है। फूलप्रियंगू, लोध, खस, सुगंधबाला, नागकेशर और कैवर्ती मोथा, इन सब द्रव्योंको दारुहलदीके रसमें पीसकर प्रलेप करनेसे दाह दूर होता है। धातुक्षय जनित दाहरोगमें दूध और मांसादि पुष्टिकारक खाद्यद्रव्य देने चाहियें ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ कुशाद्यंतैलंघृतञ्च।

कुशादिशालपर्णीभिर्जीवकाद्येनसाधितम् ।
तैलंघृतंवादाहघ्नंवातपित्तविनाशनम् ॥ ९ ॥

अर्थ–कुशादि पंचतृण, लघुपंचमूल, इनके काढ़ेमें जीवकादि अष्टवर्गका कल्क मिला घृत वा तेलको सिद्ध करके सेवन करनेसे, दाह और वातपित्त दूर होते हैं ॥ ९ ॥

अथ महत्कल्याणकघृतम्।

चतुर्गुणेशतावर्यारसेक्षीरंचतुर्गुणम् ।
सर्पिःप्रस्थंबलाजाजीमंजिष्ठापीवरीनिशा ॥ १० ॥
काकोल्यौमधु...देवदारु ।
एषामष्टपलैःकल्कैःपचेत्कल्याणकंमहत् ॥ ११ ॥
...हणीयंविशेषेणपुष्टिकरंमतम् ।
अर्दितंकर्णशूलञ्चनेत्ररागंसु...रुणम् ॥ १२ ॥

दाहोन्मादमपस्मं रंवातरुग्वातशोणितम्।
उदावर्त्तगुल्मरोगंहृद्रुजंमूत्रकृच्छ्रकम्॥ १३॥
मूत्रबद्धोपदंशंचग्रहणीमतिदुस्तराम्।
गुदाङ्कुरंमन्दमग्निंश्वासरुग्विषमज्वरौ॥ १४॥
हलीमकंतथाशूलंरक्तपित्तस्वरक्षयम्।
कासश्चैवस्वरंभिन्नंछर्दिंतृष्णांप्रमेहकम्॥ १५॥
स्त्रीणांरुजंजयेच्छीघ्रंक्षयरोगंसकामलम्।
एकजंद्वन्द्वजंचैवतथैवसान्निपातिकम्॥ १६॥
सर्वरोगान्निहन्त्येतन्महत्कल्याणकंघृतम्॥ १७॥

इति दाहाधिकारः।

अर्थ—सतावरका रस २५६ दोसौ छप्पन तोले, गायका दूध २५६ दोसौ छप्पन तोले, घी ६४ चौंसठ तोले, खिरैटी, जीरा, मजीठ, असगंध, हलदी, काकोली, क्षीरकाकाला, मलठी, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि और देवदारु, इन सबका कल्क ३२ बत्तीस तोले लेंव. सबको विधिपूर्वक मिलाकर घृतको सिद्ध कर, यह महत्कल्याण घृत—बृंहण, पुष्टिकारक, तथा अर्दितरोग, कर्णशूल, दारुणनेत्ररोग, दाह, उन्माद, अपस्मार, वातरोग, वातरक्त, उदावर्त्त, गुल्मरोग, हृदयरोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रबंध, उपदंश, असाध्यसंग्रहणी, गुदांकुर मन्दाग्नि, श्वासरोग, विषमज्वर, हलीमक, शूल, रक्तपित्त, स्वरक्षय, खाँसी, स्वरभेद, वमन, तृषा, प्रमेह, स्त्रीरोग, क्षयरोग, कामला, ऐकाहिकज्वर, द्वन्द्वजज्वर और सन्निपातज्वरको दूर करै है॥ १०—१७॥

इति दाहाधिकारःसमाप्तः।

अथोन्मादचिकित्सा।

उन्मादेवातजेपूर्वंस्नेहपानंविरेचनम्।
कुर्यादावृतवातेतुसस्नेहमूर्द्धशोधनम्॥ १॥
पैत्तिकेरेचनंशस्तंवमनंतुकफोत्तरे।
स्निग्धस्विन्नेयथादोषंबस्तिनस्यंचयोजयेत्॥ २॥
बुद्धस्याचारविभ्रंशेतीक्ष्णंलावणमंजनम्।

ताडनं मनोबुद्धिस्मृतिसंवेजनंहितम् ॥ ३ ॥
तर्जनंत्रासनंदानंसान्त्वनंहर्षणंभयम् ।
विस्मयोविस्मृतेर्हेतोर्नयन्तिप्रकृतिंमनः ॥ ४ ॥

सान्त्वनमाश्वासनम् ।

सर्पैरदन्तैर्दन्तैश्चगजैर्व्याघ्रैस्तथारिभिः ।
त्रासयेद्राजपुरुषैःशस्त्रहस्तैर्वधोद्यतैः ॥ ५ ॥
प्रदेहोच्छादनाभ्यंगधूमपानश्चसर्पिषः ।
प्रयोक्तव्यंमनोबुद्धिस्मृतिसंज्ञाप्रबोधनम् ॥ ६ ॥
प्रयोज्यंसार्षपंतैलंनस्याभ्यंजनयोस्तथा ।
बद्धंसर्षपतैलाक्तमुत्तानश्चातपेन्यसेत् ॥ ७ ॥
सिद्धार्थकोवचाहिङ्गुकरंजोदेवदारुच ।
मंजिष्ठात्रिफलाश्वेताकटभीत्वक्कटुत्रिकम् ॥ ८ ॥
समांशानिनिप्रियंगुश्चशिरीषोरजनीद्वयम् ।
बस्तमूत्रेणपिष्टोऽयमगदःपानमंजनम् ॥ ९ ॥
नस्यमालेपनंचैवस्नानमुद्वर्तनंतथा ।
अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरापहः ॥ १० ॥
भूतेभ्यश्चभयंहन्तिराजद्वारेचशस्यते ।
सर्पिरेतैश्चसिद्धंवासगोमूत्रंतदर्थकृत् ॥ ११ ॥

अर्थ—वातके उन्मादरोगमें प्रथम स्नेहपान और विरेचन तथा वातसमन्वित उन्मादरोगमें सस्नेह शिरोविरेचन करना चाहिये । पित्तज उन्मादरोगमें विरेचन और कफज उन्मादरोगमें वमन कराना चाहिये । स्नेह और स्वेदयुक्त मनुष्यको बलाबलका विचार कर बस्तिकर्म और नस्यप्रदान करना चाहिये । आचारभ्रष्टमनुष्यको तीक्ष्ण नस्य, अंजन और ताडनके द्वारा—मन, बुद्धि और स्मृति उत्पन्न करानी चाहिये । तर्जन (झिडकना) त्रासन (धमकाना) दान, सान्त्वन (प्रियवचनोंसे शान्त करना) हर्षण, भय, आश्रय, आश्चर्य और विस्मृतिके द्वारा उन्माद रोगीके मनको प्रकृतिमें प्राप्त करना चाहिये । सर्प,

विनादाँतोंके अथवा दाँतोंके भयंकर जीव, हाथी, व्याघ्र, शत्रु, शस्त्रको हाथमें धारण किये और बधकरनेको तैयार ऐसे राजाके पुरुषोंसे उन्मादरोगीको भयभीत करावै, इनसे चित्त स्थिर होजाताहै ! उत्तम प्रलेप, श्रेष्ठ आच्छादन, अभ्यंग, धूमपान और घृतपानके द्वारा मन, बुद्धि, स्मृति और संज्ञा यह उत्पन्न होतेहैं। सर्सोंके तेलका नास देनेसे और सर्सोंके तेलको शरीरमें मर्दनकरनेसे उन्माद रोग दूर होताहै। उन्माद रोगीको सरसोंके तेलमें भिजोकर फिर सूर्यकी धूपमें पैर फैलाकर सीधा सुलादेवै, इससे उन्मादरोग आराम होताहै। सफ़ेद सरसों, बच, हींग, करंज, देवदारु, मँजीठ, त्रिफला, सफेदकोयल, कटभीकी छाल, त्रिकुटा, फूलप्रियंगु सिरस, हलदी और दारुहलदी, यह सब समान लेकर बकरीके मूत्रमें पीसके पीनेसे, या आंखोंमें अंजन लगानेसे अथवा नाकमें सूंघनेसे वा लेप करनेसे या उबटन करनेसे अथवा जलमें मिलाकर स्नान करनेसे–अपस्मार, विष, उन्माद, अलक्ष्मी और ज्वर दूर होताहै। यह प्रयोग भूतके भयको दूर करताहै और राजद्वारमें श्रेष्ठहै। अथवा गोमूत्र और उक्तद्रव्योंके कल्कमें घृतको सिद्धकर सेवनकरनेसे उन्माद और अपस्मारादिरोग नष्ट होजातेहैं॥ १–११॥

अथ त्र्यूषणाद्यावर्त्तिः।

त्र्यूषणंहिंगुलवणंवचाकटुकरोहिणी।
शिरीषनक्तमालानांबीजंश्वेताश्चसर्षपाः॥ १२॥
गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तुवर्त्तिर्नेत्रांजनेहिता।
चातुर्थिकमपस्मारमुन्मादंचनियच्छति॥ १३॥
उन्मादेसमधुःपेयोरसोवाताालजाखजः॥ १४॥
केवलोऽपि।

अर्थ–त्रिकुटा, हींग, सेंधानोन, बच, कुटकी, सिरसाके बीज, करंजके बीज, सफेद कोयल, और सरसों, इन सबको गोमूत्रमें पीस बत्ती बना कर आँखोंमें लगानेसे चौथियाज्वर, अपस्मार, और उन्मादरोग दूर होताहै अथवा ताडकी शाखाओंके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे या केवल ताडकी शाखाओंकाही रस पीनेसे, उन्माद रोग दूर होताहै॥ १२॥ १३॥ १४॥

अथोन्मादहरोपायाः।

ब्राह्मीकूष्माण्डीफलषड्ग्रन्थाशंखपुष्पिकाःस्वरसाः।

उन्मादहराहष्टाःपृथगेतेकुष्ठमधुमिश्राः ॥ १५ ॥

कूष्माण्ड ' ,लस्यमज्जा ।

दशमूलांबुसघृतंयुक्तंमांसरसेनवा ।

ससिद्धार्थकचूर्णवापुराणंचैककंघृतम् ॥ १६ ॥

पानाभ्यंजननस्येषुहितमुन्मादिनांसदा ।

उग्रगंधंपुराणंस्याद्दशवर्षस्थितंघृतम् ॥ १७ ॥

लाक्षारसनिभंशीतंप्रपुराणमतःपरम् ॥ १८ ॥

अर्थ—ब्राह्मी, पेठेकी मींग, वच और शंखपुष्पी इनके रसोंमें कूठका चूर्ण और सहत मिलाके अलग अलग सेवन करै तो उन्माद रोग दूर होवै। घृतयुक्त दशमूलका क्काथ वा, मांसरसके साथ सफेद सरसोंका चूर्ण अथवा केवल पुराने घीको पीनेसे, नास लेनेसे और मालिस करनेसे उन्मादरोग दूर होजाताहै । उग्रगंधयुक्त, दशवर्षका रक्खा हुआ, लाखके रंगकी समान ऐसे घीको पुराना घी कहतेहैं और इससे अधिक पुरानेको प्रपुराण घी कहतेहैं ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ हिंग्वाद्यंघृतम् ।

हिंगुसौवर्चलंव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम् ।

चतुर्गुणेगवांमूत्रेसिद्धमुन्मादनाशनम् ॥ १९ ॥

अर्थ—हींग, कालानोन, त्रिकुटा, यह प्रत्येक आठ आठ तोले लेवै, गोमूत्र ३२ बत्तीस सेर लेवै, इनमें आठसेर घृतको डालके सिद्ध करै, यह घृत उन्माद-रोगनाशकहै ॥ १९ ॥

अथ स्वल्पचैतसंघृतम् ।

पंचमूल्यावकाश्मर्य्यौरास्नैरण्डत्रिवृद्बला ।

मूर्वाशत वरीचेतिक्काथैर्द्विपलिकैरिमैः ॥ २० ॥

कल्याण ,स्यचाङ्गेनतद्घृतंचैतसंस्मृतम् ।

सर्वचेतोविकाराणांशमनंपरमंमतम् ॥ २१ ॥

अकाश्मर्योगम्भारीमूलरहितदशमूलम् ।

एषांक्काथःकल्याण ,तस्यकल्कः।

अर्थ—कुम्भेररहितदशमूल, रास्ना, अरंड, निसोथ, खिरैटी, मूर्वा और शतावर, प्रत्येकका आठ आठ तोले क्वाथ लेवै, और कल्याणघृतमें कहीहुई औषधि ले कल्क बना क्वाथमें मिलाके चित्तके विकारोंको दूर करदेवै ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ महापैशाचिकंघृतम् ।

जटिलापूतनाकेशीचारटीमर्कटीवचा ।
त्रायमाणाजयावीराचोरकंकटुरोहिणी ॥ २२ ॥
कायस्थाशूकरीच्छत्रासातिच्छत्रापलंकषा ।
महापुरुषदन्ताचवयस्थालांगलीद्वयम् ॥ २३ ॥
कटम्भरावृश्चिकालीस्थिराचैवचतैर्घृतम् ।
सिद्धंचातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ २४ ॥
महापैशाचिकंनामघृतमेतद्यथामृतम् ।
मेधास्मृतिबुद्धिकरंबालानांचांगवर्द्धनम् ॥ २५ ॥

जटिलाजटामांसीपूतनाहरीतकीकेशीभूकेशः चारटीकुम्भाडुब्राह्मीरामकर्कटीशूकशिम्बीजयाजयन्तीवीराक्षीरकाकोलीपृश्निपर्णी वा चोरकश्चोरहेलीः कायस्थासिन्धुवारःशूकरीवाराहीकन्दः तदभावेचर्मकारत्वक्छत्रामधुरिकैवनतुजीरकंमिसीतिजत्रुकर्णात् अतिच्छत्राशतपुष्पापलङ्कषागुग्गुलुः महापुरुषदन्ताशतावरीवयस्था ब्राह्मीगुडूचीवा लांगलीद्वयंरास्नाद्वयमेकातत्रगन्धरास्नातदभावेभागद्वयम् । कटम्भराभद्राणिकाकटभीवावृश्चिकालीविछाती। स्थिराशालपर्णीघृतप्रस्थेकल्कार्थंप्रत्येकमेषांरक्तित्रयोपेतषण्मापाधिककर्षएकःकर्षम् १ मा० ६ रक्तिकाः ३ जलंघृताच्चतुर्गुणम् । महापैशाचिकमितिमहच्छब्दःपूजावचनः चलपस्याभावात् ॥

अर्थ—बालछड़, हरड, भूकेशी, ब्राह्मी, कौंछ, वच, खिरैटी, जयंती, क्षीरकाकोली, चोरपुष्पी, कुटकी, सम्हालू, वाराहीकन्द, सौंफ, सोया, गूगल, शतावर-

गिलोय, रास्ना, गंधरास्ना, मालकांगनी, विछाटी और शालपर्णी, यह प्रत्येक दो तोले ६ मासे ३ रत्तीभर लेवे, इन सबका कल्क बना उसमें २५६ दोसौ छप्पन तोले जल और ६४ चौंसठ तोले घृत विधिपूर्वक मिलाके घृतको सिद्ध करै । यह घृत—चातुर्थिक ज्वर उन्माद, ग्रहदोष और अपस्मारको दूर करैहै । तथा मेधा, स्मृति, बुद्धि और बालकोंके अंगको बढानेवाला है ॥ २२-२५ ॥

अथ शिवाघृतम् ।

शिवायास्तुसुपुत्रायाःपलंपंचाशतन्तथा ।
[illegible]मादायपंचमूलयुगात्पृथक् ॥ २६ ॥
कुट्टयित्वा[illegible]तुषषष्टिप्रस्थैरेवाम्भसांपृथक् ।
पक्त्वापादावशिष्टेनतेनक्काथोदकेनच ॥ २७ ॥
क्षीरस्याष्टभिराज्यस्यशरावाणाश्चतुष्टयम् ।
यष्टीमधुकमंजिष्ठाकुष्टचन्दनपद्मकैः ॥ २८ ॥
विभीतकशिवाधात्रीत्रिवृत्तगरपादिकैः ।
विडंगदाडिमंदेवदारुदन्तीहरेणुकैः ॥ २९ ॥
तालीशकेशरंश्यामाविशालाशालपर्णिभिः ।
प्रियंगुमालतीपुष्पकाकोलीयुगलोत्पलैः ॥ ३० ॥
हरिद्रा[illegible]गलानन्ताहरिवालुकबालकैः ।
पृश्निपर्णीसमैरेभिःकल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ ३१ ॥
[illegible] गदतःशृणु ।
[illegible]वासुरग्रहैर्ग्रस्तेमानुषेराक्षसैःक्षते ॥ ३२ ॥
गंधर्वधर्[illegible]तेचैवापितृग्रहनिपीडिते ।
भूतैरप्यभिभूतेचपिशाचैश्चपरिप्लुते ॥ ३३ ॥
भुजंगमगृहीतेचतथाजांगलभक्षिते ।
ऋक्षैरपिपारिक्षितेभयैरप्यर्दितेभृशम् ॥ ३४ ॥
शस्यतेसर्ववातेचसर्व[illegible]लेप्रशस्यते ।
शोषेवक्षःक्षते[illegible]सेश्वासेमेदेमदात्यये ॥ ३५ ॥

मेहेमूत्रग्रहेचैवज्वरेचैतत्प्रशस्यते ।
वृष्यंबलकरंहृद्यंवन्ध्यानामपिपुत्रदम् ॥ ३६ ॥
श्रीविन्ध्यवासिपादेननिर्म्मितंघृतमुत्तमम् ॥
शिवाघृतमिदंनाम्नाशिवायोन्मादनं [illegible]दा ॥ ३७ ॥
अत्र शृगालीमांसंप्रशस्यते ।
पलपंचसंख्ययादशमूल ५० पलक्काथद्वयम् ।

अर्थ—गायका घी चारसेर, दूध आठसेर, क्काथके लिये शृगालीका मांस ५० पल, जल ६४ चौंसठ सेर, शेष १६ रक्खे । दशमूलकी सब औषधी ५० पल, जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलह सेर रहने देवै । कल्कके लिये मुलेठी, मजीठ, कूठ, चन्दन, पद्माख, हरड़, आमला, निसोत, तगर, बायबिडंग, अनार, देवदारु, दन्ती, रेणुका, तालीशपत्र, नागकेशर, सारिवा, इन्द्रायण, शालिपर्णी, फूलप्रियंगु, मालतीकेफूल, काकोली, क्षीरकाकोली, कमल, नीलेकमल, हलदी, दारुहलदी, अनन्तमूल, एलुआ, सुगंधवाला और पिठवन, यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवै, । इस घृतको भलेप्रकारसे सिद्धकर सेवनकरनेसे देव, असुर, राक्षस, गंधर्व, पितर, पिशाच, नाग और यक्षादिका उन्माद दूर होता है । तथा सर्वप्रकारके वातरोग, सर्व प्रकारके शूल, शोष, वक्षःक्षत, खाँसी, मेदरोग, मदात्यय, प्रमेह, मूत्रग्रह और ज्वर दूर होवै । और यह घी वीर्य तथा बलको बढावै, हृदयको हितकारी और बंध्या स्त्रियोंको पुत्र देवै है । यह शिवाघृत उन्मादरोगियोंको अत्यन्त हितकारी है ॥ ३६—३७ ॥

अथ स्कंदग्रहादिहरधूपः ।

निंबपत्रवचाहिंगुसर्पनिर्म्मोकसर्षपैः ।
डाकिन्यादिहरोधूपोभूतोन्मादविनाशनः ॥ ३८ ॥
कार्पासास्थिमयूरपुच्छबृहतीनिर्म्माल्यपिंडीतकैः ।
दुग्धाशिवातथाहिविष्ठावचाकेशाहिनिर्मोककैः ।
गोशृंगद्विपदन्तहिंगुमरिचैस्तुल्यैस्तुधूपःकृतः
स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशोज्वरघ्नःस्मृतः ३९॥

अर्थ—नीमकेपत्ते, बच, हींग, साँपकी केंचुली और सरसों, इनकी धूप बनाकर देनेसे डाकिनी आदिग्रह और भूतोन्माद दूर होवै है। विनौले, मोरकी पूँछ, कटाई, निर्मलीफल, मैनफल, दुद्धी, हरड़, साँपकी विष्ठा, केश,बच, साँपकीकेंचुली, गायकेसींग, हाथीकेदाँत और कालीमिरच इन सबको समान भाग लेकर धूप बनाकर देनेसे—स्कन्दग्रह, उन्माद, पिशाच बाधा, राक्षसप्रवेश,देवताप्रवेश और ज्वर दूर होता है ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अथ भूतांकुशरसः।

सूतायस्तारताम्रञ्चमुक्ताचैवसमंसमम्।
सूतपादंतथावज्रंतालंगंधंमनःशिला ॥ ४० ॥
तुत्थंशिलांजनंसीसमब्धिफेनंरसाञ्जनम्।
पंचानांलवणानांचप्रतिभागंरसोन्मितम् ॥ ४१ ॥
चित्रकंमूलकंचैववज्रीदुग्धेनमर्दयेत्।
दिनान्तेगोलकंकृत्वारुद्धागजपुटेपचेत् ॥ ४२ ॥
भूतांकुशरसोनामततोगुंजाद्वयंलिहेत्।
आर्द्रकस्यरसेनैवभूतोन्मादसमीरजित् ॥ ४३ ॥
पिप्पल्याक्तंपिबेच्चानुदशमूलकषायकम्।
स्वेदयेत्कटुतुम्बीनांरसेशीतञ्चगोलयेत् ॥ ४४ ॥
माहिषञ्चघृतंक्षीरंभक्षयेच्चततःपरम्।
सघृतंक्वथितंक्षीरंशुष्कशाकंविवर्जयेत् ॥ ४५ ॥
अभ्यंगंकटुतैलेनगुर्वन्नंभोजनेहितम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—पारा एकतोला, लोहा एक तोला, चाँदी एक तोला, मोती एक तोला, हीरा ३ मासे, हरिताल तीनमासे, गंधक तीनमासे, मैनशिल तीनमासे, नीलाथोथा तीनमासे, सुरमा तीनमासे, सीसा तीन मासे, समुद्रफेन तीन मासे, रसौत तीनमासे, और पांचों नोन पारेके समान लेवे, इन सबको चीतेके रसमें, मूलीके रसमें और थूहरके दूधमें खरल करै, रात्रिमें गोला बनाके गजपुटमें रखकर फूंक देवै तो भूतांकुशरस तैयार होता है। इसको दो रत्तीभर अदरखके साथ खानेसे भूतोन्माद और वात दूर होती है। इसके ऊपर दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालके पीवै, और कड़वी तोम्बीके द्वारा

स्वेदन करै तो सर्वप्रकारके शीतलपदार्थ त्याग देवै, भैंसका घी और दूध सेवन करै। घृतयुक्त पकाया हुआ दूध और सूखेशाक त्याग देवै। और सदैव कडुवे तैलका मालिश एवं भारी अन्नोंका भोजन करै ॥ ४०–४६ ॥

अथ चण्डभैरवरसः ।

हेमपादंमृतंसूतंनिष्कंखल्वेविमर्दयेत् ।
शोभांजनंविषंतुल्यंमर्द्यञ्चत्रिशूलीद्रवैः ॥ ४७ ॥
देवदाल्याद्रवैश्चाह्नितद्गोलंपाचयेद्दिनम् ।
गंधकोत्थेनतैलेनततउद्धृत्यचूर्णयेत् ॥ ४८ ॥
मासैकंभक्षयेन्नित्यंपिबेद्ब्राह्मीघृतंह्यनु ।
सर्वभूतग्रहंहन्तिरसोऽयंचण्डभैरवः ॥ ४९ ॥

अर्थ–सोनेकी भस्म एक भाग, पारेकी भस्म चौथा भाग, सैंजिना और विष, यह प्रत्येक एक एक भाग लेकर गोखुरुओंके रसमें और देवदालीके रसमें खरल करै, फिर गोला बना एक दिन पकावे, तदनन्तर गंधकके तेलमें मिलाकर एकमास पर्यन्त सेवनकरै तो सर्वप्रकारके भूतग्रह दूर होवैं। इसके ऊपर ब्राह्मीघृतका अनुपान करै ॥ ४७–४९ ॥

अथ नरसिंहमन्त्रः ।

नारसिंहस्यमंत्रेणसकृदुच्चारितैर्हरेत् ।
डाकिनीग्रहभूतादितमःसूर्योदयेयथा ॥ ५० ॥
ओंनमोनरसिंहायहिरण्यकशिपोर्वक्षःस्थलविदारणायत्रिभुवनव्यापकायभूतायप्रतिसारणायडाकिनीकुलोन्मूलनायसमस्तदोषान् हरहरविसरविसरबलबलकम्पकम्पमथहुंहुंहुं फट्फट्चट्चट्एहिएहिरुद्राज्ञापयतिस्वाहा ॥
सर्षपानिम्बपत्राणिभूर्जपत्रंवचाघृतम् ।
धूपोवाजिनखैर्युक्तःसर्वग्रहनिवारणम् ॥ ५१ ॥

इत्युन्मादाऽध्यायः ।

अर्थ–ओं नमो नरसिंहाय–ज्ञापयति स्वाहा। इस मंत्रको एकबार पढे तो डाकिनी, ग्रह और भूतादिजनित उन्माद दूर होवे है। जैसे सूर्योदयसे अन्ध-

कार दूर होवैहै ॥ ५० ॥ सरसों, नीमकेपत्ते, भोजपत्र, वच, घृत, और घोडेके नख, इनसबकी धूपबनाकर देनेसे सर्वप्रकारके ग्रह दूर होतेहैं ॥ ५१ ॥

इत्युन्मादाध्यायः।

अथापस्मारचिकित्सा।

चिकित्स्योह्यपस्मारीचाचिरकालीमहागदः।
तस्माद्रसायनैरेनंप्रायशःसमुपाचरेत् ॥ १ ॥
वातिकंबस्तिभिःप्रायःपित्तंप्रायोविरेचनैः।
श्लैष्मिकंवमनैःप्रायोह्यपस्मारमुपाचरेत् ॥ २ ॥
सर्वतःपरिशुद्धस्यसम्यगाश्वासितस्यच।
अपस्मारविमोक्षार्थंयोगान्त्संशमनाच्छृणु ॥ ३ ॥
पिप्पलीवृश्चिकालीचकुष्ठञ्चलवणानिच।
प्रदद्याच्चूर्णितंनस्यमेतत्प्रशमनंपरम् ॥ ४ ॥
भूतोन्मादोत्थितश्चात्रयोज्यंनस्याञ्जनादिकम्।
मनोह्वातार्क्ष्यजञ्चैवसकृत्पारावतस्य च ॥ ५ ॥
अञ्जनंहन्त्यपस्मारमुन्मादंचविशेषतः।

तार्क्ष्यजंरसांजनम्।

यष्टीहिंगुवचावक्राशिरीषलशुनामयैः ॥ ६ ॥
अजाघृतैरपस्मारेसोन्मादेचांजनंहितम्।

वक्रंतगरपादिका।

पुष्योद्धृतंशुनःपित्तमपस्मारघ्नमंजनम् ॥ ७ ॥
तदेवसर्पिषायुक्तंधूपनंपरमंमतम्।
नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटादि[illegible]कजैः ॥ ८ ॥
तुण्डैःपक्षैःपुरीषैश्चधूपनंकारयेद्भिषक्।

कीटोवृश्चिकः।

यःखादेत्क्षीरभक्ताशीमाक्षिकेणवरारजः ॥ ९ ॥
अपस्मारंमहाघोरंसचिरोत्थंजयेद्ध्रुवम् ।

वरात्रिफला ।

कूष्माण्डकफलोत्थेनरसेनपरिशोधितम् ॥ १० ॥
अपस्मारविनाशाययष्टिमधुपिबेत्त्र्यहम् ।
प्रयोज्यंतैललशुनंपयसाऽथशतावरी ॥ ११ ॥
ब्राह्मीरसश्चमधुनासर्वापस्मारनाशनम् ॥ १२ ॥

अर्थ—अपस्माररोग चिरकाली और महारोगोंमें गिनाजाताहै, इस कारण रसायनप्रयोगसे इनकी चिकित्सा करनी चाहिये। विशेष करके वातज अपस्माररोगकी बस्तिकर्मसे, पित्तज अस्मारकी विरेचनसे और कफज अस्माररोगकी वमनके द्वारा चिकित्सा करनी उचितहै । अब भलेप्रकारसे शुद्ध किये और भलेप्रकारसे आश्वासित किये अपस्माररोगको हरनेवाले प्रयोग कहे जातेहैं । पीपल, वृश्चिकाली, कूठ, और पांचों नोन, इनसबको पीसकर नास देनेसे अपस्मार रोग दूर होताहै । भूतोन्मादमें कहेहुए नस्य और अंजन, इसरोगमें प्रयोग करने चाहियें। मैनशिल, रसोत और परेवाकी विष्ठाका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे अपस्मार और उन्मादरोग नाश होताहै । मुलेठी, हींग, बच, तगर, सिरसके बीज और कूठ, इनको पीसकर बकरीके घीमें मिला नेत्रोंमें लगानेसे अपस्मार और उन्मादरोग दूर होताहै । पुष्यनक्षत्रमें कुत्तेके पित्तको लेकर आखोंमें आँजनेसे तथा घृत मिलाके धूपदेनेसे उन्मादरोग आराम होताहै। नकुल, उलूक, बिलाव, गीध, बिच्छू, साँप और काककी चोंच अथवा मुख, पक्ष और विष्ठा, इनकी धूपदेनेसे—अपस्माररोग दूर होताहै । त्रिफलेके चूर्णको सहतमें मिलाकरखावे और दूधके साथ भोजन करे तो महाघोर और बहुत पुराना अपस्मार दूर होजावे । पेठेके रसमें शुद्ध की हुई मुलठीके चूरनको मिलाकर खानेसे तीनदिनमें अपस्माररोग आराम होजाताहै। लहसुनको तेलमें मिलाकर खावे, या शतावरको दूधमें मिलाकर सेवन करे अथवा ब्रह्मीके रसको सहत मिलाकर चाटै तो सर्वप्रकारके अपस्माररोगदूर होजावें ॥ ९–१२ ॥

अथ स्वल्पपंचगव्यघृतम् ।

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैःसमैर्घृतम् ।
सिद्धंचातुर्थिकोन्मादसर्वापस्मारनाशनम् ॥ १३ ॥

अर्थ—गोबरका रस, खट्टा दही, दूध, गोमूत्र और घी, इन सबको समान भाग लेकर घृतको सिद्ध करै, इस घृतको सेवनकरनेसे चातुर्थिक ज्वर, उन्माद और सर्वप्रकारके अपस्माररोग दूर होतेहैं ॥ १३ ॥

अथ बृहत्पञ्चगव्यघृतम् ।

द्वेपंचमूल्यौत्रिफलारजन्यौकुटजत्वचः ।
सप्तपर्णमपामार्गनीलिनीकटुरोहिणी ॥ १४ ॥
शम्याकफल्गुमूलञ्चपौष्करंसदुरालभम् ।
द्विपलांशंजलद्रोणेपक्त्वापादावशेषितम् ॥ १५ ॥
भार्ङ्गीपाठात्रिकटुकत्रिवृतानिचूर्णानिच ।
श्रेयसीमागधीमूर्वादन्तीभूनिम्बचित्रकौ ॥ १६ ॥
द्वेशारिवेरोहिषञ्चभूतिकोमदयन्तिकाम् ।
क्षिपेत्पिष्ट्वाक्षमानानितैःप्रस्थंसर्पिषःपचेत् ॥ १७ ॥
गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैश्चतत्समैः ।
पंचगव्यमितिख्यातंमहत्तदमृतोपमम् ॥ १८ ॥
अपस्मारेज्वरेकासेश्वयथावुदरेषुच ।
गुल्मार्शःपाण्डुरोगेषुकामलायांहलीमके ॥ १९ ॥
अलक्ष्मीग्रहरक्षोघ्नंचातुर्त्थिकनिवारणम् ॥ २० ॥
श्रेयसीगजपिप्पलीरोहिषंगंधतृणभेदः ।
भूतिकंगंधतृणंरोहिषाभावेभागद्वयंग्राह्यम् ॥

अर्थ—गायका घी चारसेर, गोमूत्र चारसेर, गायका दूध चारसेर, गोबरकारस ४ चारसेर, गायका दही चारसेरलेवै, दशमूल, त्रिफला, हलदी, दारुहलदी, कुडेकीछाल, सतवनकी छाल, चिरचिटा, नील, कुटकी, अमलतास, कठूमर, पोहकरमूल और जवासा यह प्रत्येक दोदो पल लेकर सबका कल्कबना चौंसठसेर जलमें पकावै, शेष १६ सोलहसेर जल रहनेदेवै और कल्कके लिये भारंगी, पाढ, त्रिकुटा, निसोत, गजपीपल, पीपल, चुरनहार, दन्ती, चिरायता, चीता, अनंतमूल, गौरीसर, रोहिषतृण—गंधतृण, और मैनफल, यह प्रत्येक वस्तु दोदो तोले लेवै, पश्चात् विधिपूर्वक घृत सिद्धकरै, इसको पंचगव्यघृत कहतेहैं । यह पंचग-

व्यघृत—अपस्मार, ज्वर, खाँसी, सूजन, उदररोग, गुल्म, बवासीर पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, अलक्ष्मी, ग्रहदोष, राक्षसबाधा और चातुर्थिकज्वरको दूर करैहै ॥ १४–२० ॥

अथ महाचैतसंघृतम् ।

शणास्त्रिवृत्तथैरण्डोदशमूलीशतावरी ॥ २१ ॥
रास्नामागधिकाशिग्रुक्काथ्यंद्विपलिकंभवेत् ॥ २२ ॥
विदारीमधुकंमेदेद्वेकाकोल्यौशिवातथा ।
एभिःखर्जूरमृद्वीकाभीरुयुञ्जातगोक्षुरैः ॥ २३ ॥
चैतसस्यघृतस्यापिपक्तव्यंसर्पिरुत्तमम् ।
महाचैतससंज्ञन्तुसर्वापस्मारनाशनम् ॥ २४ ॥
गरोन्मादप्रतिश्यायतृतीयकचतुर्थकान् ।
पापालक्ष्मीजयेदेतत्सर्वग्रहनिवारणम् ॥ २५ ॥
श्वासकासहरंचैवशुक्रार्त्तवविशोधनम् ।
नित्यंयुञ्जातकाभावेतालमस्तकमिष्यते ॥ २६ ॥

शणादिशिग्रुपर्यन्तंक्काथःघृतमानंक्काथविधिः
विदार्य्यादिभिः ।
कल्याणकस्याद्यविंशतिभिः सहकल्कः ।
शणस्यबीजम् ।

अर्थ—गायका घी चारसेर, सनके बीज, निसोत, अरण्ड, दशमूल, सतावर, रायसन और सँजिना यह प्रत्येक दोदो पल लेकर १६ सोलह सेर जलमें पकावे, शेष चारसेर जल रहने देवै, और कल्कके लिये विदारीकन्द, मुलैठी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, हरड, खजूर, दाख, सतावर, ताडका, मस्तक, गोखरू और चैतसघृतमें कहीहुई सर्व औषधियोंका कल्क एक सेर लेवै, पश्चात् घृतको सिद्ध करै। इसको महाचैतसघृत कहतेहैं । यह घृत—सर्वप्रकारके मृगीरोग, विषविकार, उन्माद, प्रतिश्याय, तृतीयकज्वर, चातुर्थिकज्वर, पाप, अलक्ष्मी, सर्व प्रकारके ग्रह, श्वास और खांसीको दूर करैहै । तथा शुक्र और आर्त्तवको शुद्ध करैहै ॥ २१–२६ ॥

अथ ब्रह्मीघृतम् ।

ब्रह्मीयासवचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेवच ।
पुराणंमेध्यमुन्मादग्रहापस्मारनशनम् ॥ २७ ॥
ब्रह्मीरसश्चतुर्गुणः पुराणंघृतमत्रयोज्यम् ।

अर्थ-पुराना घी चारसेर, ब्रह्मीका रस सोलह सेर, और कल्कके लिये ब्रह्मी, जवासा, कूठ और शंखपुष्पी, यह समान भागले, सब तौलमें सेरभर लेवै, फिर घृतको सिद्धकर सेवनकरनेसे-उन्माद, ग्रहदोष और अपस्माररोग दूर होता है ॥ २७ ॥

अथ प्रचण्डभैरवरसः ।

पार्वतीकाशीशसूतंदरदोमधुपुष्पकम् ।
गुडूचीशाल्मलीधान्यभूनिम्बामरतुम्बुरुम् ॥ २८ ॥
तिलमुद्गपटोलानांद्राक्षाकूष्माण्डभस्मानि ।
वटिकाकन्यकाभस्मबलाद्वयनियोजितम् ॥ २९ ॥
सर्वमेतत्समाहृत्यगव्याज्येगुटिकाशुभा ।
उन्मादपवनच्छर्दिमपस्मारंविशेषतः ॥ ३० ॥
कासंश्वासंक्षयंहिक्कांदुर्नामश्चप्रमेहकम् ।
पित्तज्वरारुचिश्चैवतिमिरंचक्षुरामयम् ॥ ३१ ॥
गलरोगेषुसर्वेषुकर्णस्तब्धंहरेद्ध्रुवम् ॥ ३२ ॥

अर्थ-गंधक, कसीस, पारा, सिंग्रफ, महुएके फूल, गिलोय, सेमल, धानियाँ, चिरायता, देवदारु, तुम्बुरु, तिल, मूँग, परवल, दाख, पेठेकी भस्म, घीकुवारकी भस्म, खिरैटी और गँगेरन, इन सबका चूर्ण बनाकर गायके घीमें मिलाके गोली बना लेवै । इनको सेवनकरनेसे उन्माद, वात, वमन, अपस्मार, खाँसी, श्वास, क्षय, हिचकी, बवासीर, प्रमेह, पित्तज्वर अरुचि, तिमिररोग, नेत्ररोग, सर्वप्रकारके गलरोग और कर्णस्तब्धरोगको दूर करैहै ॥ २८-३२ ॥

अथ भूतभैरवः ।

मृतसूतार्कलौहश्चतालंगंधंमनःशिला ।
स्रोतोऽञ्जनंचतुल्यांशंनरमूत्रेणमर्दयेत् ॥ ३३ ॥

तद्गोलंद्विगुणंगंधंलोहपात्रेक्षणंपचेत् ।
पंचगुंजामितंखादेदपस्मारहरंघृतैः ॥ ३४ ॥
हिंगुसौवर्चलंत्र्यूषंनरमूत्रेणसर्पिषा ।
कर्षमात्रंपिबेच्चानुरसोऽयंभूतभैरवः ॥ ३५ ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, तांबा, लोहा, हरिताल, गन्धक, मैनशिल, और सुरमा यह सब समान भाग लेकर मनुष्यके मूत्रमें खरलकर गोला बनाले, फिर इस गोलेमें दुगुना गंधक मिलाकर लोहेके पात्रमें क्षणभर पकावे । इसको ५ पांच रत्तीभर सेवन करै, ऊपरसे हींग, कालानोन और त्रिकुटेका चूर्ण मनुष्यके मूत्रमें मिलाकर घीके साथ अनुपान करे । यह भूतभैरवरस-सर्वप्रकारके अपस्माररोगोंको दूर करैहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथेन्द्रब्रह्मवटी ।

मृतंसूताभ्रंसतीक्ष्णंतारताप्यविषंसमम् ।
पद्मकेसरसंयुक्तंदिनैकंमर्दयेद्द्रवैः ॥ ३६ ॥
स्नुग्वह्निविजयैरण्डवचानिष्पावशूरणैः ।
निर्गुण्डयाश्चद्रवैर्मर्द्यंतद्गोलंपाचयेत्पुनः ॥ ३७ ॥
कर्णिकासर्षपोत्थेनतैलेनगंधसंयुतम् ।
ततःपक्त्वासमुद्धृत्यचणमात्रावटीकृता ॥ ३८ ॥
इन्द्रब्रह्मवटीनामभक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
दशमूलकषायञ्चकणायुक्तंपिबेदनु ॥ ३९ ॥
अपस्मारंनिहन्त्याशुयथासूर्योदयेतमः ॥ ४० ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, अभ्रककीभस्म, लोहा, चाँदी, सोनामाखी और विष, यह सब समानभाग ले कमलकी केशर मिला थूहर, चीता, भाँग, अरण्ड, वच, निष्पाव, जिमीकन्द, और निर्गुण्डीके रसमें खरल कर गोला बना लेवे, फिर उस गोलेको पकावे, पकती समय मूषाकर्णी, सरसोंका तेल, और गंधक मिला देवै, । जब पकजावे तब निकालकर चनेकी समान वटी बना लेवे । इस इन्द्रब्रह्मवटीको अदरखके रसके साथ भक्षण करै । ऊपरसे दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीवे । जैसे सूर्योदयसे अंधकार दूर होताहै तैसेही इसके सेवन करनेसे अपस्माररोग दूर होताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथापस्मारनाशनधूपः ।

मानुषास्थिवसाहिंगुलशुनंसर्पकंचुकम् ।
गोधूमंसर्पिषापिष्टाधूपोऽपस्मारनाशनः ॥ ४१ ॥

इति अपस्माराध्यायः ।

अर्थ–मनुष्यकी हड्डी, चर्वी, हींग, लहसुन, सांपकी केंचुली, और गेहूं धीके साथ पीसकर धूपदेनेसे अपस्माररोग दूर होताहै ॥ ४१ ॥

इति अपस्माराध्यायः समाप्तः ।

अथ वातव्याधिचिकित्सा ।

स्वाद्वम्ललवणस्निग्धैराहारैर्वातरोगिणः ।
अभ्यंगस्नेहबस्त्याद्यैःसर्वानेवोपपादयेत् ॥ १ ॥
सर्पिस्तैलवसामज्जपानाभ्यंजनबस्तयः ।
स्वेदःस्निग्धोनिवातंचस्थानंप्रावरणानिच ॥ २ ॥
बृंहणंयच्चतत्सर्वंप्रशस्तंवातरोगिणाम् ।
निरामंकेवलंवातमादौस्नेहैरुपाचरेत् ॥ ३ ॥
यूपैर्ग्राम्याम्बुजानूपैरसैर्वास्नेहसंस्कृतैः ।
कृशरापायसश्चान्नैःसुस्विन्नंस्वेदयेत्ततः ॥ ४ ॥
अभ्यक्तंस्नेहसंयुक्तैःस्वेदनैःशाल्वनादिभिः ।
स्नेहाक्तंस्विन्नमङ्गन्तुवक्रंसर्वमथापिवा ॥ ५ ॥
यथेष्टमानमशितुंशक्यतेशुष्कदारुयत् ।
स्विन्नस्याशुप्रशाम्यन्तिरुक्स्तम्भःसुग्रहादयः ॥ ६ ॥
स्नेहोमुष्णातिसंशुष्कान्धातून्पुष्टिबलप्रदः ।
अतःपुनःपुनःस्नेहैःस्वेदैश्चाप्युपपादयेत् ॥ ७ ॥
अतोपशान्तोमृदुभिःसस्नेहैस्तंविरेचयेत् ।
पयसैरण्डतैलंवापाययेद्दोषशोधनम् ॥ ८ ॥
पटोलफलकयूषोवृष्योवातहरोलघु ।
व[illegible]यूषःपरंवातविकारनुत् ॥ ९ ॥

उभयत्रैवयूषार्थंमुद्गान्वाकुलत्थान्क्षिपेत् ।
वात्यालकयूषस्तुमाषकलायाढ्यःप्रायः ।
प्रचरतिघृतेपरिभज्यसैंधवमनुरूपम् ।
देयमेवमन्यत्रापियूषरसादौ ।
बलायाःपंचमूलस्यदशमूलस्यवारसे ॥ १० ॥
अजाशीर्षाम्बुजानूपक्रव्यादपिशितैःपृथक् ॥ ११ ॥
साधयित्वारसान्स्निग्धान्दध्यम्लस्नेहसंस्कृतान् ।
भोजयेद्वातरोगार्त्तंतैलाक्तलवणैर्युतान् ॥ १२ ॥

अम्बुजाःकूर्मादयः । आनूपा वराहादयः ।
क्रव्यादादीनां व्याघ्रश्येनगृध्रादीनाम् ।

पंचमूलीबलासिद्धंक्षीरंवातामयेहितम् ॥ १३ ॥
कोलंकुलत्थःसुरदारुरास्नामाषातसीतैलफलानिकुष्ठम ।
वचाशताह्वायवचूर्णमम्लमुष्णानिवातामयिनांप्रदेहाः १४

तैलफलानिसर्षपादीनिअम्लंकांजिकंपेषणार्थम् ।

अनुपवेशवारोष्णप्रदेहोवातनाशनः ॥ १५ ॥
निरस्थिपिशितंपिष्टंस्विन्नंघृतगुडान्वितम् ।
कृष्णामरिचसंयुक्तंवेशवारइतिस्मृतः ॥ १६ ॥

अर्थ–स्वादिष्ठ, खट्टे, नमकीन, और स्निग्धभोजनकरनेसे, तैलादिका मालिश करनेसे, और स्नेह वस्तिकर्म करानेसे वातरोग शान्त होता है । घृत, तैल, वसा, और मज्जाकापान, अभ्यंजन, वस्तिप्रयोग, स्निग्ध, स्वेद निर्वातस्थान, प्रावरण, (कनात तम्बू) और जितने पुष्टिकारक द्रव्यहैं, सब वातरोगोंमें हितकारीहैं । केवल निरामवात (आमरहित वात) रोगमें प्रथम स्नेहके द्वारा चिकित्सा करे, तथा ग्राम्य, जलज और अनूपदेशके जीवोंके मांसका यूष बनाकर पीवे, तथा घृतादिकसे मांसको सिद्धकर सेवन करे, और कृशरा (खिचडी) पायस (खीर) और लाल चावलोंके भातके द्वारा तथा स्नेहसंयुक्त मनुष्यको शाल्व नादि स्वेदके द्वारा वारंवार स्वेददेवै, इससे रोगी यथेष्ट भोजन

करसक्ताहै, तथा स्तम्भ और पीडा दूर होती है स्नेह और स्वेद यह दोनों सूखीहुई धातुओंको पोषणकर बल और पुष्टिको देवै है । इसकारण वातादि रोगोंमें बारंबार तैलादिको मलकर स्वेदप्रदान करै । और जो इससे वातरोग शान्त न होय तो स्नेहादिका जुल्लाब देकर वातरोगको शान्त करै । अरंडीके तेलको दूधके साथ पीनेसे दस्त होकर कोठा शुद्ध हो जाता है । परवलके फलोंका यूष बनाकर सेवन करनेसे वीर्यकी वृद्धि होतीहै, और वातविकार विनाश होताहै । और यह यूष हलकाहै, वा खिरैटीका यूष बनाकर पीनेसे वातविकार दूर होताहै, उपरोक्त दोनों यूषोंमें मूँग और कुलथी डालै, प्रायः खिरैटीके यूषमें उडद और मटर डालते हैं, और यूषादिको घृतमें भून कुछेक सैंधानोंन मिलाकर पीना चाहिये । बकरीके मस्तकका मांस, कच्छपादि जीवोंका मांस, वराहादि पशुओंका मांस, व्याघ्रादि पशुओंका मांस, तथा गृध्रादि पक्षियोंके मांसका यूष, तेल, लवण और खट्टे दहीके साथ पकाकर पीनेसे वातरोग शान्त होताहै । दूधमें पंचमूल और खिरैटीको पकाकर पीनेसे वातरोग शमन होताहै । बेर, कुलथी, देवदारु, रास्ना, उडद, अलसी, सरसों, कूठ, वच, सौंफ और जौका चूर्ण इन सबको कांजीमें पीसकर लेपकरनेसे वातरोग शान्त होताहै । शूकरादिके अस्थिहीन मांसको पीसै, फिर तिसमें घृत, गुड, पीपलका चूर्ण और कालीमिरचोंका चूर्ण मिला वेशवार बना गरम करके लेपकरनेसे वातरोग शान्त होताहै ॥ १-१६ ॥

अथ वातरोग कथनम् ।

वातरोगाश्मरीकुष्ठमहोदरभगन्दराः ।
अर्शांसिग्रहणीदुष्टामहारोगाःप्रकीर्त्तिताः ॥ १७ ॥
आध्मानस्तम्भरौक्ष्यस्फुटनविमथनक्षो-
भकम्पप्रतोदाःकण्ठोर्द्ध्वंसारमादोभ्रमक-
विलपनंस्रंसशूलप्रभेदाः ॥ पारुष्यंक-
र्णनादःकेशपरिणतिभ्रंशदृष्टिप्रमोहा-
विस्पन्दोद्वट्टनानिप्लवनमशयनंताडनंपीडनञ्च ॥१८॥
नामोन्नामौविषादौभ्रमपरिसदनंजृम्भणं
रोमहर्षौ विक्षेपाक्षेपशोषग्रहणिशुषि-

रताच्छेदनंवेष्टनंच ॥ वर्णःश्यामोऽरुणोवा
तृडपिचमहतीस्वापविश्लेषसङ्गा
विद्यात्कर्माण्यमूनिप्रकुपितमरुतःस्यात्कषायोरसश्च १९
कटिविकटियकृत्क्लोमपार्श्वांघ्रिपृष्ठे
जठरवृषणवक्षःकुक्षिस्कन्धांसकेषु ।
प्रसरतिगुरुशूलंरात्रिनिद्राविपर्य्यं-
स्त्वतिपवनविकारालक्षणैर्लक्षणीयाः ॥ २० ॥

अर्थ–वातरोग, पथरी, कोढ, उदर, भगन्दर, बवासीर और संग्रहणी यह सब महारोग कहे जाते हैं । वातके कुपितहोनेसे आध्मान, स्तम्भ, रौक्ष्य स्फुटन, विमथन, क्षोभ, कम्प, प्रतोद, कंठके ऊर्ध्वभागमें श्रम, विलाप, स्रंसन, शूल, पारुष्य, कर्णनाद, केशपक्कता, भ्रंशदृष्टि, मोह, स्पन्दन, उद्घट्टन, ग्लानि, अनिद्रा, ताडन, पीडन, और विक्षेपादि विकारोंकी उत्पत्ति होती है ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

अथ पतंत्रकनिवारणोपायः ।

चित्रकेन्द्रयवापाठाकटुकातिविषाभयाः ।
महाव्याधिप्रशमनोयोगःषड्धरणःस्मृतः ॥ २१ ॥
हरीतकीवचारास्नासैन्धवंसाम्लवेतसम् ।
घृतमात्रासमायुक्तमपतंत्रकनाशनम् ॥ २२ ॥

अर्थ–चीता, इन्द्रजौ, पाढ, कुटकी, अतीस, और हरड, इन सबको एकत्रकर सेवनकरै तो सर्वप्रकारकी वातव्याधि दूर होतीहै । इसको षड्धरण योग कहतेहैं । हरड, वच, रायसन, सेंधानोंन, और अमलबेंत, इन सबको पीस घीके साथ सेवनकरनेसे अपतंत्रक वातरोग शान्त होता है ॥ २१ ॥ २२ ॥

अथ बिभीतकादिचूर्णम् ।

बिभीतकविषामुस्तंशुण्ठींभार्ङ्गींश्चपिप्पलीम् ।
[illegible]त्वाचूर्णानिमद्येनपीतान्युष्णोदकेनवा ॥ २३ ॥
नाश[illegible]णं क्षिप्रंहिक्काश्वासापतंत्रकम् ॥ २४ ॥

अर्थ–बहेडा, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, भारंगी और पीपल, इनका चूर्ण बनाकर मदिरा अथवा गरमजलके साथ सेवनकरनेसे–हिक्का, श्वास और अपतन्त्रकवातरोग विनष्ट होताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

अथ धनुस्तम्भपक्षाघातोपायकथनम् ।

तैलद्रोण्यान्तुशमनंधनुस्तम्भेपरंहितम् ।
पत्रोत्थाम्बुपरस्तैलद्रोण्यःस्युरवगाहने ॥ २५ ॥
पत्रोत्थाम्बुप्रसारण्यश्वगन्धादीनांपत्ररसः ।
पक्षाघातिनमक्षीणंस्निग्धस्विन्नंविरेचनम् ॥ २६ ॥
बस्तिभिर्योजयेत्पित्तकफोद्रेकेविरेचयेत् ।
माषात्मगुप्तकैरण्डवाट्यालकश्रृतंजलम् ॥ २७ ॥
हिंगुसैन्धवसंयुक्तंपक्षाघातनिवारणम् ॥ २८ ॥

अर्थ–पसरन और असगन्ध आदिके पत्तोंका रस, दूध और तेलसे भरीहुई द्रोणीमें डूबनेसे धनुस्तंभरोग शान्त होताहै । अक्षीण, स्निग्ध, स्विन्न, पक्षाघात रोगीके पित्तकफकी अधिकता होय तो बस्तिद्वारा विरेचन देवै । उडद, कौंछ, अरण्ड और खिरैंटीका क्वाथ बना तिसमें, हींग और सैंधानोनका चूर्ण डालके पीनेसे पक्षाघातरोग दूर होताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथ माषबलादिः ।

मापबलाशूकशिम्बीकत्तृणरास्नाश्वगन्धोरुबूकाणाम् ।
क्काथोनश्यतिपीतोवासवंलवणान्वितःकोष्णः ॥ २९ ॥
अपहरतिपक्षवातंमन्यास्तम्भंसकलकर्णनादरुजाम् ।
दुर्जयमर्दितवातंसप्ताहाज्जयतिचावश्यम् ॥ ३० ॥

अर्थ–उडद, खिरैंटी, कौंछ, गंधतृण, रास्ना, असगन्ध और अरंड, इनका क्काथ बना हींग और सैंन्धानोन मिला, नासिकाके द्वारा पान करनेसे पक्षाघात, मन्यास्तम्भ, खाँसी, कर्णनाद और दुर्जय अर्दित वातरोग सात दिनमें दूर होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

अथ रास्नागुग्गुलुः ।

रास्नायास्तुपलंचैकंकर्षान्पंचचगुग्गुलोः ।
सर्पिषावटिकांकृत्वाखादेद्धान्तचगृध्रसीम् ॥ ३१ ॥

अर्थ-चार तोले रास्ना और पांचतोले गूगुल, इन दोनोको घीमें मिलाकर गोली बना खानेसे-गृध्रसी वातरोग दूर होताहै ॥ ३१ ॥

अथ कटिशूल-झिंझिनिवातशमनम् ।

दशमूलीकषायेणपिबेद्वानागराम्भसा ।
कटीशूलेषुसर्वेषुतैलमेरण्डसंभवम् ॥ ३२ ॥
दशमूलस्यनिर्यूहोहिंगुपुष्करसंयुतः ।
शमयेत्परिपीतस्तुवातंझिंझिनिसंज्ञितम् ॥ ३३ ॥

अर्थ-अंडीके तेलको दशमूलके काथके साथ अथवा सोंठके काथके साथ पीनेसे कटिशूल दूर होताहै । दशमूलके काढेमें हींग और पोहकरमूलका चूर्ण डालकर पीनेसे-झिनझिन वात शमन होताहै ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

अथ स्वल्परसोनपिण्डः ।

पलमर्द्धपलंवापिरसोनस्यसुकुट्टितम् ।
हिंगुजीरकसिन्धूत्थैःसौवर्चलकटुत्रयैः ॥ ३४ ॥
चूर्णितैर्मापिकोन्मानैरवचूर्ण्यविलोडितम् ।
यथाग्निभक्षितंप्रातारुबुक्काथानुपानतः ॥ ३५ ॥
दिनेदिनेप्रयोक्तव्यंमासमेकंनिरन्तरम् ।
वातरोगान्निहन्त्याशुचार्दितंसापतानकम् ॥ ३६ ॥
एकाङ्गरोगिणेचैवतथासर्वाङ्गरोगिणे ।
ऊरुस्तम्भेचगृध्रस्यांकृमिदोषेविशेषतः ॥ ३७ ॥
कटिपृष्ठामयंहन्यादुदरञ्चविशेषतः ॥ ३८ ॥
वाशब्देनसार्द्धपलमित्यर्थः ।

अर्थ-कुटाहुआ लहसुन चार या दो तोले, हींग, जीरा, सेंधानोन, कालानोन, और त्रिकुटा, इन प्रत्येकका चूर्ण एकएक मासा लेवे, सबको अच्छेप्रकार मिला अग्निका बलाबल विचारकर सेवनकरै और ऊपरसे अरण्डका काढा पीवे, इसप्रकार प्रतिदिन पीवे तो एक महीनेमें-वातरोग, अर्दितवात, अपतानक, एकांगवात, सर्वाङ्गवात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसीवात, कृमिरोग, कटिरोग, और पृष्ठरोग, दूर होताहै ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अथ त्रयोदशांगगुग्गुलुः ।

आहाश्वगन्धाहवुषागुडूचीशतावरीगोक्षुरवृद्धदारकम् ।
रास्नाशताह्वासशठीयवानीसनागराश्चेतिसमैश्चचूर्णम् ३९ ॥
तुल्यंभवेत्कौशिकमत्रमध्येदेयंतथासर्पिरथार्द्धभागम् ।
अर्द्धाक्षमात्रंत्वथतत्प्रयोगात्कृतानुपानंसुरयाथयूषैः ॥४०॥
मद्येनवाकोष्णजलेनवाथक्षीरेणवामांसरसेनवापि ।
कटिग्रहेगृध्रसिबाहुपृष्ठेहनुग्रहेजानुनिपादयुग्मे ॥ ४१ ॥
सन्धिस्थितेचास्थिगतेचवातेमज्जास्थितेस्नायुगतेचकुष्ठे ।
रोगाञ्जयेदान्त्रकफानुविद्धान्वातोरितान्हृद्ग्रहयोनिदोषान् ॥
भग्नास्थिविद्धेषुचखंजवातेत्रयोदशांगंप्रवदन्तिधीराः ॥४३॥

अर्थ—आहा (एकप्रकारका वणिक्द्रव्य) असगन्ध, हाऊबेर, गिलोय, सतावर, विधारा, सौंफ, कचूर, अजवायन, और सोंठ, यह सब समान भाग, गूगुल सबकी बराबर और सबसे आधा भाग घी मिलावे, पश्चात् इसका एक तोलाभर सुरा, यूष, मदिरा, किंचित् गरमजल, गरम दूध और मांसरस, इनमेंसे किसी एक अनुपानके साथ सेवन करनेसे कटिग्रह, गृध्रसी, बाहुग्रह, पृष्ठग्रह, जानुग्रह, सन्धिवात, अस्थिवात, मज्जाश्रितवात, स्नायुगतवात, कुष्ठ, कफरोग, वातविकार, हृद्ग्रह, योनिदोष, अस्थिभग्न, विद्ध, और खंजवात दूर होताहै । इसको त्रयोदशांगगूगुल कहतेहैं ॥ ३९–४३ ॥

अथ छागलाद्यंघृतम् ।

आजंचर्मविनिर्मुक्तंत्यक्तशृंगखुरादिकम् ।
पंचमूलीद्वयश्चैवजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ४४ ॥
तेनपादावशेषेणघृतंप्रस्थंविपाचयेत् ।
जीवनीयैःसयष्ट्याह्वैःक्षीरंचैवशतावरीम् ॥ ४५ ॥
छागलाद्यमिदंनाम्नासर्ववातविकारनुत् ।
अर्दितेकर्णशूलेचबाधिर्य्येमू[illegible]न्मिने ॥ ४६ ॥
जडगद्गदपंगूनांखञ्जेगृध्रसिकुब्जयोः ।
अपतानेऽपतन्त्रेचसर्पिरेतत्प्रशस्यते ॥ ४७ ॥

अर्थ-चर्म, सींग और खुर आदिसे हीन बकरीके ५० पचास पल मांसको ३२ सेर जलमें पकावै जब आठसेर शेष रहै तब उतारले फिर पचास पल दशमूलको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै, जब चौथा भाग अर्थात् आठसेर जल बाकी रहै तब उतारले, और दूध चारसेर, सतावरका रस ४ चारसेर, गायका घी चारसेर, तथा कल्कके लिये जीवनीयदशक और मुलैठी, यह सब ६ सेर लेवै, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको बनावै, इस घृतको सेवनकरनेसे-सर्वप्रकारके वातरोग, अर्दितवात, कर्णशूल, बधिरता, गूँगापन, मिनमिन वात, जड़ता, गद्गदवात, पंगुला वात, खंजवात, गृध्रसीवात, कुब्जक वात, अपतानक वात और अपतंत्र वातरोग दूर होताहै, इसको छागलाद्यघृत कहतेहैं ॥ ४४-४७ ॥

अथ बृहद्बलातैलम् ।

लामूलकषायस्यदशमूलीकृतस्यच ।
यवकोलकुलत्थानांक्काथस्यपयसस्तथा ॥ ४८ ॥
अष्टावष्टौशुभाभागास्तैलादेकस्तदेकतः ।
कल्कीकृत्यपचेद्धीमान्काकोल्यादिससैन्धवम् ॥ ४९ ॥
तथागुरुसर्जरसंसरलंदेवदारुच ।
मंजिष्ठाचन्दनंकुष्ठमेलातगरपादिकम् ॥ ५० ॥
मांसीशैलेयकंपत्रंतगरंशारिवांवचाम् ।
शतावरीमश्वगंधांशतपुष्पांपुनर्नवाम् ॥ ५१ ॥
तत्सिद्धंस्थापयेत्कुम्भेसुवर्णादौसुरक्षिते ।
राजार्हणमिदंतैलंसर्ववातविकारनुत् ॥ ५२ ॥
सूतिकारोगशमनंगर्भदंशुक्रवर्द्धनम् ।
गुल्माग्निमन्दहिक्कार्त्तिश्वासकासान्त्रवृद्धिनुत् ॥ ५३ ॥
[illegible]ग्नेममंगतेग्रन्थेसर्वथैवोपयोजयेत् ।
[illegible]धार्त्तःपुरुषो[illegible]स्थिरयौवनः ॥ ५४ ॥

यवकोल[illegible]लत्थानांक्काथः ।

बलादीनांतैलाष्टभागापेक्षयाद्वात्रिंशद्गुणोद्रवः ।
बलाक्काथोऽष्टगुणः । दशमूलक्काथोऽष्टगुणः ।
यवादीनांक्काथोऽष्टगुणः । दुग्धमष्टगुणम् ।
काकोल्याद्यष्टवर्गः ।

अर्थ–तिलका तेल आठसेर, खिरैंटीका क्काथ आठसेर, दशमूलका क्काथ आठसेर, जौ, बेर और कुलथीका क्काथ आठसेर, दूध आठसेर और कल्कके लिये काकोल्यादि द्रव्य, सैंधानोन, अगर, राल, धूप सरल, देवदारु, मँजीठ, लालचन्दन, कूठ, इलायची, बालछड़, तगर, भूरि, छरीला, तेजपात, तगरपुष्प, अनन्तमूल, बच, सतावर, असगंध, सौंफ और पुनर्नवा यह प्रत्येक समान भाग और सब दोसेर लेवै, सबको मिला अच्छेप्रकारसे सिद्धकर सुवर्णादिके कुम्भमें भरके रखदेवै । यह बृहद्बलातेल राजाओंके सेवन करने योग्य है । यह तेल–सर्वप्रकारके वातविकार, सूतिकारोग, गुल्म, मन्दाग्नि, हिक्कारोग, श्वास, खाँसी, अन्त्रवृद्धि, भग्नरोग और मर्मगत ग्रन्थि इन रोगोंको दूर करैहै । गर्भजनक, वीर्यवर्द्धक, और वृद्धपुरुषोंको फिर यौवनयुक्त करदेताहै ॥ ४८–५४ ॥

अथ विष्णुतैलम् ।

शालपर्णीपृश्निपर्णीबलागोक्षुरतण्डुला ।
एरण्डस्यचमूलानिबृहत्योःपूतिकस्यच ॥ ५५ ॥
शतावरीसहचरंपचेदेतैःपलोन्मितैः ।
तैलप्रस्थंपयोदत्त्वागव्यंवाजंचतुर्गुणम् ॥ ५६ ॥
वातार्त्तानरनागाश्वाःपीत्वास्युर्निश्चयंदृढाः ।
हृत्पार्श्वशूलवातेषुगलगंडार्दितेक्षये ॥ ५७ ॥
सशर्कराश्मरीपाण्डुकामलार्द्धावभेदके ।
क्षीणेन्द्रियेऽन्त्रवृद्धौचजरयाजर्जरेहितम् ॥ ५८ ॥
स्त्रीणामश्वतरीणांतुगर्भस्थितिकरंपरम् ।
एतदङ्गवरंतैलंविष्णुनापरिकल्पितम् ॥ ५९ ॥

अर्थ–तिलका तेल चारसेर, गाय या बकरीका दूध १६ सोलहसेर और कल्कके लिये शालपर्णी, पृश्निपर्णी, खिरैंटी, गोखरू, गंगेरन, अरंडकीजड, बडी

कटाई, छोटी कटेरी, पूतिकरञ्ज, सतावर और पियावासा यह सब एकसेर लेवे, सबको विधिपूर्वक मिला तेलको सिद्धकरै । यह विष्णुतैल वातसे पीड़ितमनुष्य, हाथी और घोड़ोंके रोगोंको शान्त करके शरीरको दृढ करदेताहै । हृदयका शूल, पसलीका दर्द, वातरोग, गलगण्ड, अर्दितवात, क्षयरोग, शर्करा, पथरी, पाण्डु, कामला, अर्द्धावभेदक, इन्द्रियोंकी क्षीणता, अन्त्रवृद्धि, जरा और जर्जरविकार-को दूर करै है । स्त्री और खिच्चरियोंके गर्भकी स्थिति करनेवालाहै । यह अंग-वर तैल विष्णुने निर्माण किया है ॥ ५५-५९ ॥

अथबृहच्छागलाद्यंघृतम् ।

नातिबालानसूताचनवृद्धानचरोगिणी ।
मध्यस्थातरुणीग्राह्याकृष्णावृष्याविशेषतः ॥ ६० ॥
छागमांसंतुलांगृह्यदशमूल्यास्तथाशतम् ।
अश्वगन्धापलशतंवाट्यालकशतन्तथा ॥ ६१ ॥
घृताढकंपचेत्तेनचतुर्भागावशेषितम् ।
क्षीरंस्नेहसमन्दद्याच्छतावर्यारसस्तथा ॥ ६२ ॥
ताम्रपात्रेदृढेचैवशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
अस्यौषधस्यकल्कस्यप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ॥ ६३ ॥
जीवन्तीमधुकंद्राक्षाकाकोलीनीलमुत्पलम् ।
मुस्तंसचन्दनंरास्नापर्णिनीद्वयशारिवे ॥ ६४ ॥
मेदेद्वेचतथाकुष्ठंजीवकर्षभकौशठी ।
दार्वीप्रियङ्गुत्रिफलानंतर्तालीशपद्मकौ ॥ ६५ ॥
[illegible]नागजातीकुसुमधान्यकम् ।
मञ्जिष्ठादाडिमंदारुएलावालुकरेणुकम् ॥ ६६ ॥
विडंगंजीरकंचैवपेषयित्वाविनिक्षिपेत् ।
वस्त्रपूतेचशीतेचशर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥ ६७ ॥
निधायेत्स्निग्धभाण्डेमर्दयेद्दृढभाजने ।
अस्यौषधस्यसिद्धस्यशृणुवीर्यमतःपरम् ॥ ६८ ॥

देवदेवंनमस्कृत्यसंपूज्यगणनायकम् ।
पिवेत्पाणितलंतत्रवारिवीक्ष्यानुपानकम् ॥ ६९ ॥
सर्ववातविकारेषुअपस्मारेविशेषतः ।
सोन्मादेपक्षघातेचआध्मानेकोष्ठविड्ग्रहे ॥ ७० ॥
कर्णरोगेशिरोरोगेबाधिर्येसापतन्त्रके ।
भूतोन्मादेचगृध्रस्यांसोद्गारेचाम्लपित्तजे ॥ ७१ ॥
पार्श्वशूलेतथाशूलेबाह्यायामार्दितेतथा ।
क्रोष्टुशीर्षेतथाखंजेकुब्जेगद्गदमिन्मिने ॥ ७२ ॥
अपतानेऽन्तरायामेरक्तपित्तेतथोर्द्ध्वगे ।
आनाहेऽर्शोविकारेषुचातुर्थिकज्वरेषुच ॥ ७३ ॥
हनुग्रहेतथाशोषेक्षीणेचैवापबाहुके ।
दण्डापतानके भग्नेदाहेचाक्षेपकेतथा ॥ ७४ ॥
जीर्णज्वरेविषेकुष्ठेशेफस्तम्भेमदात्यये ।
आढ्यवातेऽग्निमांद्येचवातरक्तगदेषुच ॥ ७५ ॥
एकाङ्गरोगिणेचैवतथासर्वांगरोगिणे ।
हस्तकम्पेशिरःकम्पेजिह्वास्तम्भेजडेगदे ॥ ७६ ॥
क्षीणेन्द्रियेनष्टशुक्रेशुक्रानिःसरणेतथा ।
स्त्रीणांवातहतेरक्तेप्रदरेसर्वसम्भवे ॥ ७७ ॥
योनिमध्यगतेवातेयोतिशूलेचशस्यते ।
क्षीणगर्भेनष्टगर्भेमूढगर्भोवशेषतः ॥ ७८ ॥
अर्द्धावभेदकेचैवातिमिरेवातपंगुके ।
नक्तान्ध्येचाश्रुपातेचपटोलेचाक्षिस्पन्दने ॥ ७९ ॥
एकाङ्गस्पन्दनेचैवतथासर्वांगस्पन्दने ।
नगादिपतितेवातेस्त्रीणामप्राप्तिहेतुके ॥ ८० ॥

आभिचारिकदोषेचधनसन्तापहेतुके ।
येवातसम्भवारोग येचान्येपित्तसम्भवाः ॥ ८१ ॥
शिरोमध्यगतारे[illegible]श्लेषुसंस्थिताः ।
कुक्षिबस्तिगतायेचयेचान्येहृदिसंस्थिताः ॥ ८२ ॥
मातृग्रहाभिभूतेनाशिशुर्यश्चविशुष्यति ।
प्रक्षीणबलमांसश्चनवर्त्मगहनेगतिः ॥ ८३ ॥
स्तन्यंशुष्[illegible]तियस्याश्चयावत्स्तन्यंनविंदति ।
घृतेनानेनासिद्धचन्तिवज्रमुक्तिरिवासुरान् ॥ ८४ ॥
रसायनंवह्निबलप्रदश्चवपुःप्रकर्षंविदधातिरूपम् ।
गजेंद्रतुल्येनसमानतेजाश्चिरायुपंपुत्रशतंकरोति ॥८५॥
स्त्रीणांशतंगच्छतिसातिरेकंनयातितृप्तिंसबलःसमाङ्गः ।
अपुत्रिणीपुत्रशतंकरोतिशतायुवत्सामृतपुत्रवत्यः ॥८६॥
महद्घृतंनामतुच्छागलाद्यंविनिर्मितंवायुनिपूदनञ्च ।
शिवंशुभंरोगभयापहञ्चचकारहारीतमुनिर्वरिष्ठः ॥८७॥

अर्थ—न अत्यंत बालकहो, न तत्काल ब्याई हुई हो, न वृद्धहो और न रोगिणी हो, मध्यम अवस्थावाली, तरुण और कृष्णवर्ण हो ऐसी बकरी वृष्य होतीहै । ऐसी बकरीका मांस १०० एकसौ पल, दशमूल एकसौ पल, असगंध एकसौ पल और खिरैंटी एकसौ पल लेवै, प्रत्येक को ५१२ पल जलमें पकावे जब १२८ एकसौ अट्ठाईस पल जल शेष रहै तब उतारले, इसप्रकार सबका चतुर्थांश क्वाथ बनावै, फिर सब क्वाथोंको एकत्र करलेवै, पश्चात् इसमें १२८ एकसौ अट्ठाईस पल गायका घी और एकसौ अट्ठाईस पल सतावरका रस मिलाके तांबेके बासनमें मन्दमन्द अग्निसे पकावै, और पकते समय जीवन्ती महुआ, दाख, काकोली, नीलकमल, नागरमोथा, चन्दन, रसायन,शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, सारिवा, अनन्तमूल, मेदा, महामेदा, कूट, जीवक, ऋषभक, कचूर दारुहलदी, फूलप्रियंगु, त्रिफला, तगर, तालीसपत्र, पद्माख, इलायची, तेजपात, सतावर, नागकेशर, चमेलीके फूल, धनियाँ, मँजीठ, अनार, देवदारु, एलुआ, रेणुका, बायविडंग और जीरा, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर

कल्क बना छोड देवै । जब पककर घृत शीतल होजाय तब वस्त्रमें छानकर ६४ तोले बूरा मिलाके चिकने बासनमें भरकर रखदेवै, फिर देवाधिदेव गणेशजीको नमस्कार और पूजाकर प्रतिदिन एक तोलाभर पीवै, और इसके ऊपर रोगानुसार अनुपान करै तो यह घृत सर्वप्रकारके वातविकार, अपस्मार, उन्माद, पक्षाघात, आध्मान, कोष्ठरोग, विड्ग्रह, कर्णरोग, शिरोरोग, बधिरता, अपतन्त्रक, भूतोन्माद, गृध्रसीवात, अम्लपित्तोद्भव उद्गाररोग, पार्श्वशूल, शूल, बाह्यायाम, अर्दितरोग, क्रोष्टुशीर्ष, वात, खंजवात, कुब्जवात गद्गदवात, मिन्मिन्, अपतानक, अंतरायामवात, अधोगतवायु, रक्तपित्त, आनाह, अर्शरोग, चातुर्थिकज्वर, हनुग्रह, शोष, क्षीणता, अपबाहुकरोग, दण्डापतानकवात, भग्नरोग, दाह, आक्षेपकवात, जीर्णज्वर, विषविकार, कोढ, शेफस्तम्भ (लिंगरोगविशेष) मदात्यय, आढ्यवात, मन्दाग्नि, वातरक्तरोग, एकांगवात, सर्वांगवात, हस्तकम्प, शिरःकम्प, जिह्वास्तम्भ, जड़ता, इन्द्रियोंकी क्षीणता, वीर्यकी क्षीणता, शुक्रनिःसरण, स्त्रियोंके शरीरमें वातसे हताहुआ रुधिरविकार, सर्वप्रकारके प्रदररोग, योनिगतवात, योनिशूल, क्षीणगर्भ, नष्टगर्भ, मूढगर्भ, अर्द्धावभेदक मस्तकरोग, तिमिररोग, पंगुवात, रतौंधी, अश्रुपात रोग, पटलगतनेत्ररोग, नेत्रस्पन्दनरोग, एकांगस्पन्दन, सर्वांगस्पन्दन, वृक्षके ऊपरसे पतित होनेसे उत्पन्न हुआ वात, स्त्रियोंकी प्राप्तिके अभावसे उत्पन्न हुआ वात, आभिचारिक दोष, धनके सन्तापसे उत्पन्न हुआ वात, सर्वप्रकारके वातसे उत्पन्नहोनेवाले रोग सर्वप्रकारके पित्तसे उत्पन्न होनेवाले रोग, सर्व प्रकारके शिरोरोग, जंघाके रोग, पसलियोंके रोग कुक्षिरोग, बस्तिरोग, हृदयरोग, मातृग्रहादिसे बालकका सूखजाना बल और मांसकी क्षीणता, मार्गचलनेकी शक्तिका न होना, स्तनोंसे दूधका सूखजाना और स्तनोंमें दूधका उत्पन्न नहीं होना, यह सब रोग दूर होजावें । जैसे वज्रसे राक्षस दूर होवै । यह घृत—परमोत्तम रसायन, अग्निप्रदीपक, बलवर्द्धक, शरीरको सुन्दरकरनेवाला, गजेन्द्रकी समान तेजवान् और चिरायुष १०० सौ पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, इसको सेवनकरनेवाला मनुष्य सौ स्त्रियोंके साथभी रमण करै तो भी तृप्त नहीं होता, अपुत्रा स्त्रियोंके सैंकडों पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, जिसके पुत्र नहीं जीते हों और जिसकी अवस्था सौ १०० वर्षकी होय, उनको भी यह घृत—पुत्रवती करदेताहै, इसको बृहत् छागलाद्य घृत कहते हैं ॥ ६०—८७ ॥

अथ नारायणतैलः ।

बिल्वाग्निमन्थश्योनाकपाटलापारिभद्रकः ।
प्रसारण्यश्वगंधाचबृहतीकण्टकारिका ॥ ८८ ॥
बलाचातिबलाचैवश्वदंष्ट्रासपुनर्नवा ।
एषांदशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥ ८९ ॥
पादशेषंपरिस्राव्यतैलपात्रंप्रदापयेत् ।
शतपुष्पादेवदारुमांसीशैलेयकंवचा ॥ ९० ॥
चन्दनंतगरंकुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम् ।
रास्नातुरगगंधाचसैन्धवंसपुनर्नवम् ॥ ९१ ॥
एषांद्विपलिकान्भागान्पेषयित्वाविनिक्षिपेत् ।
शतावरीरसंचैवतैलतुल्यंप्रदापयेत् ॥ ९२ ॥
आजंवायदिवागव्यंक्षीरंदद्याच्चतुर्गुणम् ।
पानेबस्तौतथाभ्यंगेभोज्येचैवप्रयोजितम् ॥ ९३ ॥
अश्वोवावातसंभग्नोगजोवायदिवानरः ।
पंगुलःपीठसर्पीचतैलेनानेनसिध्यति ॥ ९४ ॥
अधोभागेचयेवाताःशिरोमध्यगताश्चये ।
मन्यास्तम्भेहनुस्तम्भेदन्तरोगेगलग्रहे ॥ ९५ ॥
यस्यशुध्यतिचैकांगंगतिर्यस्यचविह्वला ।
क्षीणेन्द्रियाःक्षीणशुक्राज्वरक्षीणाश्चयेनराः ॥ ९६ ॥
बधिरालल्लजिह्वाश्चमन्दमेधसएवच ।
अल्पप्रजाचयानारीयाचगर्भंनविन्दति ॥ ९७ ॥
वातार्त्तोवृषणौयेषामन्त्रवृद्धिश्चदारुणा ।
एतत्तैलवरंतेषांनाम्नानारायणःस्मृतः ॥ ९८ ॥

अर्थ—बेलगिरी, अरणी, शोनापाठा, पाटल, पारिभद्र, पसरन, असगंध, कटाई, कटेरी, खिरैंटी, कंघी, गोखुरू और पुनर्नवा, यह प्रत्येक चालीस चालीस तोले

लेकर चार द्रोण जलमें पकावै, जब एक द्रोण जल शेषरहै तब आठसेर तेल, सौंफ, देवदारु, बालछड भूरिछरीला, बच, लालचन्दन, तगर, कूठ, इलायची, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, रायसन, असगंध, सैंधानोन और पुनर्नवा, यह प्रत्येक पिसेहुए आठ आठ तोले, सतावरका रस आठ सेर और बकरी या गायका दूध ३२ सेर मिलाके पकावै। इसको पीनेसे, इसके द्वारा बस्तिकर्म करनेसे, मालिश करनेसे और खानेसे वातसे पीडित अश्व, हाथी और मनुष्य रोगसे विमुक्त होजाताहै। इसको सेवनकरनेवाले पंगु और पीठसे चलनेवाले मनुष्य भी आरोग्य होजातेहैं। तथा अधोभागगत वायु, शिरोगतवायु, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, दन्तरोग, गलग्रह, एकांगशोष, मार्गमें गमन करनेकी शक्ति का न होना, इन सबको दूर करैहै। जिन मनुष्योंकी इन्द्रियें क्षीणहोगईहैं, जो वीर्यक्षीणहैं और जो ज्वरसे क्षीण होगये हैं, बधिरतारोगवाले, जिह्वारोगवाले, जो मन्दबुद्धिवालेहैं उन मनुष्योंको, तथा जिन स्त्रियोंकी सन्तान नहीं जीती, और जिनके गर्भ नहीं रहता उन स्त्रियोंको वातसे पीड़ित, अंडकोशरोगवाले मनुष्य और अंत्रवृद्धि रोगवाले मनुष्योंको यह नारायणनामवाला तैल परम श्रेष्ठहै॥ ८८–९८॥

अथ बृहद्विष्णुतैलम्।

जलधराश्वगंधाजाजीवकर्षभकौशठी।
काकोलीक्षीरकाकोलीजीवन्तीमधुयष्टिका॥ ९९॥
मधुरिकादेवदारुपद्मकाष्ठंचशैलजम्।
मांसीएलात्वचंकुष्ठंवचाशैलजचन्दनम्॥ १००॥
मंजिष्ठामृगनाभिश्चश्वेतचन्दनकुंकुमम्।
पद्मिनीकुंदकोटिश्चग्रंथिकश्चनखीतथा॥ १०१॥
एतेषांपलिकैर्भागैस्तैलश्चापिसहाढकम्।
शतावरीरससमंदुग्धश्चापिसमम्भवेत्॥ १०२॥
एतत्संभृत्यसम्भाव्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत्।
विष्णुतैलवरंश्रेष्ठंसर्ववातविकारनुत्॥ १०३॥
ऊर्द्ध्ववातेतथावातेह्यंगविग्रहएवच।
शिरोमध्यगतेवतेमन्यास्तम्भेशिरोग्रहे॥ १०४॥

यस्यशुध्यतिवैकाङ्गंगतिर्यस्य चविह्वला ।
येवातप्रभवारोगायेचान्येपित्तसम्भवाः ॥ १०५ ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशुतमःसूर्योदयेयथा ॥ १०६ ॥

अर्थ-नागरमोथा, असगंध, जीरा, जीवक, ऋषभक, कचूर, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मुलैठी, सौंफ, देवदारु, पद्माख, भूरिछरीला, बालछड़, इलायची, दालचीनी, कूठ, बच, शिलारस, लालचन्दन, मँजीठ, कस्तूरी, सफेदचंदन, केसर, कमालिनी, कुन्दुरु, (वं कुन्दुरु खोटी) गठिवन और नखी यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर कल्क वनावे, फिर दोसौ छप्पन तोले सतावरका रस और दोसौ छप्पनतोले गायका दूध लेवे, इन सबको और उपरोक्त औषधियोंके कल्कको विधिपूर्वक मिलाके धीरे धीरे मन्दमन्द आगसे पकावे, जब सिद्ध होजाय तब उत्तम वासनमें भरके रखदेवे । यह बृहद्विष्णुतेल-अत्यंत श्रेष्ठ, तथा सर्वप्रकारके वातविकार ऊर्द्धवात, अधोवात, व्यंग, विड्ग्रह, शिरोगतवात, मन्यास्तम्भ, शिरोग्रह, एक अंगका सूखजाना, मार्गचलतेसमय अत्यन्त दुःख होना, सर्वप्रकारके वातरोग और सर्वप्रकारके पित्तरोग इन सबको यह तेल दूर करै है, जैसे सूर्योदय अंधकारको दूर करै है ॥ ९९-१०६ ॥

अथ श्रीनारायणतैलम् ।

विल्वाश्वगंधाबृहतीश्वदंष्ट्रास्योनाकवाट्यालकपारिभद्रम् ।
क्षुद्राकठिल्लातिबलाग्निमन्थंमूलानिचैषांशरणीयुतानाम् ॥
मूलंविदध्यादथपाटलीनांसपादप्रस्थंविधिनोद्धृतानाम् ।
द्रोणैरपामष्टभिरेवपक्त्वापादावशेषेणरसेनतेन ॥ १०८ ॥
तैलाढकाभ्यांसममेवदुग्धमाजंविदध्यादथवापिगव्यम् ।
एकत्रसम्यग्विपचेत्सुबुद्धिर्दद्याद्रसञ्चैवशतावरीणाम् १०९॥
तैलेनतुल्यंपुनरेवतत्ररास्नाश्वगंधामिसिदारुकुष्ठम् ।
पर्णीचतुष्कागुरुकेशराणिसिन्धूत्थमांसीरजनीद्वयंच ११०॥
शैलेयकंचन्दनपुष्कराणिएलासयष्टीतगराब्दपत्रम् ।
भृंगाष्टवर्गा... वचापलाशंवृश्चीरस्थौणेयकचोरकाख्यम् १११
एतैः[illegible]सर्वविधिनापिपक्कम् ।

नारायणंनाममहच्चतैलंकर्पूरकाश्मीरमृगाण्डजानाम् ११२॥
दद्यात्सुगन्धायवदन्तिकेचित्प्रस्वेददौर्गन्ध्यनिवारणाय ।
चूर्णीकृतानांद्विपलप्रमाणंसवैंःप्रकारैर्विधिवत्प्रयोज्यम् ११३
आश्वेतपुंसांपवनार्दितानांचैकाङ्गशोषार्दितवेपनानाम् ।
येपंगवःपीठविसर्पिणश्चबाधिर्यशुक्रक्षयपीडिताश्च ॥११४॥
मन्याहनुस्तम्भशिरोगदार्त्तायुक्तामयान्तेबलवर्णयुक्ताः ।
संसेव्यतैलंसहसाभवन्तिवन्ध्याचनारीलभतेसुपुत्रम् ११५
देवोपमंसर्वगुणोपपन्नंसुमेधसंश्रीविजयान्वितंच ।
शाखागतेकोष्ठगतेचवातेवृद्धौविधेयंपवनांत्रजायाम्॥११६॥
जिह्वानिलेदन्तगतेचशूलेवातापहंतैलवरंप्रदिष्टम् ।
उन्मादकुब्जज्वरकर्षितानांनातःपरंतैलवरंप्रदिष्टम् ॥११७॥
वातामयेवैद्यवरेणयोज्यमायुःप्रकर्षंप्रमदाप्रियत्वम् ।
प्राप्नोतिलक्ष्मींविजयश्चनित्यंरक्षांसिदुष्टानिनिहन्तिनूनम् ॥
तैलोपसेवीजरयाविमुक्तोजीणज्वरीचाशुभरेणुरेव ।
देवासुरेयुद्धवरेसमीक्ष्यस्नाय्वस्थिभग्नानसुरैःसुरास्तु ११९
नारायणेनापिसुबृंहणार्थंस्वनामतैलंविहितंतुतेषाम्॥१२०॥

अर्थ–बेलगिरी, असगंध, कटाई, गोखुरू, सोनापाठा. खिरेंटी, पारिभद्र. कटेरी, पुनर्नवा, कंधी, अरणी, परस और पाडल यह प्रत्येक अस्सी अस्सी तोले लेकर आठ द्रोण जलमें पकावे, जब दो द्रोण जल शेष रहजाय तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इस काढ़ेमें ५१२ पांचसौ बारह तोले गाय या बकरीका दूध और ५१२ पांचसौ बारह तोले शतावरका रस, तथा रास्ना. असगन्ध, सौंफ, देवदारु, कूठ माषपर्णी, मुद्गपर्णी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, अगर, नागकेशर, सैंधानोन, बालछड, हलदी, दारुहलदी, भूरिछरीला, लालचन्दन, पोहकरमूल, इलायची, मुलैठी, तगर, नागरमोथा, तेजपात, दालचीनी काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, सुगन्धबाला, बच, कचूर, विषखपरा, थुनेर, और चोरक (ने, भटेउर), यह प्रत्येक औषधि आठ आठ तोले लेकर सबको पीसके मिलादेवै, फिर तेलको

विधिपूर्वक पकावै । इस तैलको महानारायण तेल कहतेहैं । पश्चात् कितनेक वैद्य इसमें कचूर, कस्तूरी और केशर, यह प्रत्येक औषधि आठ आठ तोले सुगन्धिके लिये, और कितनेक वैद्य प्रस्वेद और दुर्गन्ध दूर करनेके लिये डालतेहैं । यह महानारायण तेल—वातरोग, एकांगशोष, अर्दितरोग और कम्पादि रोगोंको दूर करैहै । तथा पंगुरोगी, जो मनुष्य पीठसे खिचड़तेहैं, बधिरतारोगवाले, जो मनुष्य वीर्य्यके क्षयसे पीडितहैं, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ और शिररोगी मनुष्योंको यह नारायण तेल परम हितकारीहै, और बल तथा वर्णको बढानेवालाहै । इस तेलको सेवनकरनेसे वंध्यास्त्री भी देवोंकी समान सुन्दर सर्वगुणसम्पन्न, महाबुद्धिमान्, और विजय लक्ष्मीको पानेवाला पुत्र उत्पन्न करतीहै यह तेल—शाखागतवात, कोष्ठगतवात, वातवृद्धि, जिह्वागतवात, दन्तगत शूल और वातरोगको दूर करैहै । उन्माद, कुब्जवात और ज्वरसे व्याकुल मनुष्योंको यह तेल—महा उपकारीहै । इसको वैद्य सर्वप्रकारके वातरोगोंमें देवे । जो इस तेलको सदैव सेवनकरतेहैं, उनके लक्ष्मी और विजयकी प्राप्ति होतीहै, राक्षस दूरसे ही भाग जातेहैं, वृद्धता नहीं आती और जीर्णज्वर शीघ्रही नष्ट होजाताहै । पूर्वकालमें देवता और राक्षसोंका परस्पर युद्ध हुआ था, उससमय राक्षसोंने देवताओंकी हड्डी, स्नायु और संधि आदि तोडडाली, तब श्रीनारायणने देवताओंको पुष्टिके अर्थ निजनामसे प्रसिद्ध 'नारायणने' तेल निर्माण कियाहै ॥ १०७–१२० ॥

अथ माषतैलम् ।

माषक्वाथेबलाक्वाथेरास्नायादशमूलजे ।
यवकोलकुलत्थानांछागमांसंभवेत्पृथक् ॥ १२१ ॥
प्रस्थेचतिलतैलस्यक्षीरंदत्त्वाचतुर्गुणम् ।
रास्नात्मगुप्तासिन्धूत्थशताह्वैरण्डमुस्तकैः ॥ १२२ ॥
जीवनीयबलाव्योपैःपचेदक्षसमैर्भिषक् ॥
बाधिर्य्येकर्णशूलेचकर्णनादेचदारुणे ॥ १२३ ॥
विषूच्यामर्दितेकुब्जेगृध्रस्यामपतानके ।
बस्त्यभ्यंजनपानेषुलावणेः प्रयोजयेत् ॥ १२४ ॥
माषतैलमिदंश्रेष्ठमूर्द्धजत्रुगदापहम् ।

क्वाथःप्रस्थाःषडेवात्रविभक्त्यन्तेनकीर्तिताः ॥ १२५ ॥
यथा माषपल १६ जलशराव १६ शेषशराव ४ एवंसर्वत्र ॥

अर्थ—तिलका तेल चारसेर, उडदोंका क्वाथ चारसेर, खिरैंटीका क्वाथ चारसेर, रास्नाका क्वाथ चारसेर, दशमूलका क्वाथ चारसेर जौका क्वाथ चारसेर, बेरका क्वाथ चारसेर, कुलथीका क्वाथ चारसेर, और बकरेके मांसका क्वाथ चारसेर लेवै, दूध सोलहसेर, कल्कके लिये रास्ना, कौंछ, सैंधानोन, सौंफ, अरंड, नागरमोथा, जीवनीयदशक, खिरैंटी, और त्रिकुटा, यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवै. सबको विधिपूर्वक मिला तैलको सिद्ध करै । इसतैलको सेवनकरनेसे—बधिरता, कर्णशूल, दारुणकर्णनाद, विषूचिका, अर्दितवात, कुब्जकवात, गृध्रसीवात, और अपतानकवात रोग दूर होताहै । इसको बस्तिकर्म्म, अभ्यंजन पान और नस्य, इन सब कर्मोंसे योजना चाहिये । यह माषतैल अत्यन्त श्रेष्ठहै, ऊर्ध्वजत्रुरोगोंको दूर करैहै ॥ १२१–१२५ ॥

अथ बृहन्महामाषतैलम् ।

माषस्यार्द्धाढकंदत्त्वातुलार्द्धंदशमूलतः ।
पलानिच्छागमांसस्यत्रिंशद्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥ १२६ ॥
पूतेशीतेकषायेचचतुर्थांशावशेषिते ।
प्रस्थश्चतिलतैल[illegible]दत्त्वाचतुर्गुणम् ॥ १२७ ॥
आत्मगुप्तोरुबूकश्चशताह्वालवणत्रयम् ।
जीवनीयानिमंजिष्ठाचव्यचित्रककट्फलम् ॥ १२८ ॥
सव्योषंपिप्पली[illegible]कसैन्धवम् ।
देवदार्व्यामृताकुष्ठंवाजिगंधावचाशठी ॥ १२९ ॥
एतैरक्षसमैःकल्कैःसाधयेन्मृदुनाग्निना ।
पक्षाघातार्दितेवातेचार्दितेहनुसंग्रहे ॥ १३० ॥
कर्णमन्याशिरः[illegible]लेतिमिरेचात्रिदोषजे ।
पाणिपादशिरोग्रीवाभ्रमणेमंदचंक्रमे ॥ १३१ ॥
कल[illegible]यखंजेपंगुल्येगृध्रस्यामपबाहुके ।

पानेबस्तौ तथाभ्यंगनस्यकर्णाक्षिपूरणैः ॥ १३२ ॥
तैलमेतत्प्रशंसन्तिसर्ववातरुजापहम् ॥ १३३ ॥

अर्थ–तिलका तेल दोसेर, दूध आठसेर, काथके लिये उडद चारसेर, दशमूल सवाछेसेर, और बकरेका मांस तीसपल लेवै, सबको एक द्रोण अर्थात् ३२ बत्तीससेर जलमें पकावै, जब चौथा भाग जल शेष रहे तब उतारकर शीतल होनेपर छान लेवै; फिर कल्कके लिये कौंछ, अरंड, सौंफ सेंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन जीवनीयदशक, मँजीठ, चव्य, चीता, कायफल, त्रिकुटा, पीपरामूल, रास्ना, मुलैठी, सेंधानोन, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, बच, और कचूर यह प्रत्येक दो दो तोले लेवै, सबको मिला यथाविधिसे तेलको पकावै, यह बृहन्माषतैल–पक्षाघात, अर्दितवात, हनुग्रहवात, कर्णशूल, मन्याशूल, शिरःशूल, त्रिदोषज तिमिररोग, हस्त, पाद, शिर और ग्रीवाका घूमना, मंदचंक्रम, कलापखंज, पंगुरोग, गृध्रसीवात, अपबाहुक इत्यादि रोगोंको दूर करैहै । यह–पान, वस्तिकर्म, अभ्यंग, नस्य और नेत्रोंमें भरनेसे सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करै-है ॥ १२६–१३३ ॥

अथ त्रिकत्रयाद्यंलौहम् ।

त्रिकत्रयसमायुक्तंजीवनीययुतन्त्वयः ।
हन्त्यपस्मारमुन्मादंवातव्याधिंसुदुर्ज्जयम् ॥ १३४ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, चीता, वायविडंग और जीवनीयदशक इन सबको समान भाग लेकर सबका चूर्ण बना और सब चूर्णकी समान लोहेका चूर्ण मिला लेवै । इसको सेवन करनेसे ववासीर, उन्माद और दुर्जयवातव्याधि दूर होतीहै ॥ १३४ ॥

अथ लक्ष्मीविलासतैलम् ।

जिङ्गीचोरकदेवदारुशबरव्याघ्रीवचाचेलक-
[illegible]ःसहगन्धपत्रकशठीपथ्याक्षधात्रीघनैः ।
एतैःशोधितसंस्कृतैःपलयुगैराख्यातयासंख्यया
तैलप्रस्थमवस्थितैःस्थिरमतिःकल्कैःपचेद्गान्धिकः ॥
मांसी[illegible]रादमनचम्पकसुन्दरीत्वक्-
ग्रन्थ्यम्बुकुङ्कुमरुबकैर्द्विपलैःसपृक्कैः ।

श्रीवासकुन्दुरुनखीनलिकामिसीनं
प्रत्येकतःपलमुत्तार्यपुनःपचेच्च ॥ १३६ ॥
एलालवंगचलचन्दनजातियूथी-
कक्कोलकागुरुलताघुसृणैःपलार्द्धैः ।
कस्तूरिकाक्षसहितानलदीप्तियुक्तैः
पक्षीष्टमन्दशिखिणैवमहासुगन्धम् ॥ १३७ ॥
पंचद्विकेनचार्द्धेनमदात्कर्पूरमिष्यते ।
कर्पूरमदयोर्बद्धंपत्रकल्कादिहेष्यते ॥ १३८ ॥
पंचपत्राम्बुनात्राद्योद्वितीयोगंधवारिणा ।
तृतीयोऽपिचतेनैवपाकोवाधूपिताम्बुना ॥ १३९ ॥
चेलकंगुवाकस्यत्वक् ।

अर्थ-मँजीठ, चोरक, सुगंधद्रव्य, देवदारु, सवरलोध, कटेरी, वच, सुपारीके पेड़की छाल, दालचीनी, तेजपात, गंधपत्रक (बं. पचापाता), कचूर, हरड, बहेडा, आमला और नागरमोथा यह प्रत्येक दो दो पलके कल्क बना दोसेर तेलमें मिला बिल्वादि पंचपल्लवोंके जलके द्वारा पकावै, फिर बालछड, कपूरकचरी, दौना, चम्पा, फूलप्रियंगु, दालचीनी, गठिवन, सुगंधवाला, कूठ, मरुआ और असवरग यह प्रत्येक दो दो पल, तथा श्रीवास (गंधविरोजा) कुंदरू, नखी, नलिका और सौंफ, यह प्रत्येक एक एक पल लेवै । इन सबका कल्क बना दूसरीबार गंधोदकके द्वारा पकावै, तदनन्तर इलायची, लौंग, [illegible], चन्दन, चमेलीके फूल, जुहीके फूल, शीतलचीनी, अगर, लताकस्तूरी और केशर, यह प्रत्येक दो दो तोले, कस्तूरी एक तोला और कपूर छः मासे, इन सबका कल्क बना तीसरी बार गंधद्रव्यादिके द्वारा गंधोदकके साथ पाक करै। यह महासुगंधि लक्ष्मीविलासतैल-सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै ॥१३९॥ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

अथ महाप्रसारिणी तैलम् ।

शतत्रयंप्रसारण्याद्वेचपीतसहाचरात् ।
अश्वगंधैरण्डबलावरारास्नापुनर्नवा ॥ १४० ॥
केतकीदशमूलञ्चपृथक्त्वक्पारिभद्रतः ।

प्रत्येकं [illegible]तुलातुलार्द्धंदेव[illegible]रुतः ॥ १४१ ॥
तुलार्द्धंशिरीषस्यैवलाक्षायाःपंचविंशतिः ।
पलानिलोध्राच्चतथासर्वमेकत्रसाधयेत् ॥ १४२ ॥
जलपंचाढकशतेसपादेतत्रशेषयेत् ।
द्रोणद्वयंकांजिकश्चषड्विंशत्याढकोन्मितः ॥ १४३ ॥
क्षीरदध्नोःपृथक्प्रस्थान्दशमस्त्वाढकंतथा ।
इक्षोरसाढकेचैवछागमांसतुलात्रये ॥ १४४ ॥
जलपंचचत्वारिंशत्प्रस्थेप्रस्थेतुशेषयेत् ।
सप्तदशरसप्रस्थामंजिष्ठाक्काथएवच ॥ १४५ ॥
कुडवोनाढकोन्मानेद्रवैरेभिस्तुसाधयेत् ।
सुशुद्धतिलतैलस्यद्रोणंप्रस्थेनसंयुतम् ॥ १४६ ॥
आद्यएभिर्द्रवैःपाकेकल्कोभल्लातकंकणा ।
नागरंमरिचंचैवप्रत्येकंषट्पलोन्मितम् ॥ १४७ ॥
पथ्याक्षधान्यःसरलंशताह्वाकर्कोटीवचा ।
चोरपुष्पीशठीमुस्तद्वयंपद्मश्चसोत्पलः ॥ १४८॥
पिप्पलीमूलमंजिष्ठासाश्वगंधापुनर्नवा ।
दशमूलंसमुदितंचक्रमर्दोरसांजनम् ॥ १४९ ॥
गंधतृणंहरिद्राचजीवनीयगणस्तथा ।
एषांद्विपलिकैर्भागैराद्यपाकोविधीयते ॥ १५० ॥
देवपुष्पीबोलपत्रंशल्लकीरसशैलजे ।
प्रियंगूशीरमधुरीमांसीदारुबलाचलाः ॥ १५१ ॥
श्रीवासोनलिकाखोटिःसूक्ष्मैलाकुन्दुरुर्मुरा ।
नखीत्रयश्चत्वक्पत्रीपयस्यापूतिचम्पकम् ॥ १५२ ॥
दमनंरेणुकापृक्कामरुवश्चपलत्रयम् ।
प्रत्येकंगंधतोयेनद्वितीयःपाकइष्यते १५३ ॥

गंधोदकन्तुत्वक्पत्रीपद्मकोशीरमुस्तकम् ।
प्रत्येकंसबलामूलपलानिपञ्चविंशतिः ॥ १५४ ॥
कुर्याऽर्द्धभागोऽत्रजलप्रस्थन्तुपंचविंशतिः ।
अर्द्धावशिष्टःकर्त्तव्यःपाकोगंधाम्बुकर्मणि ॥ १५५ ॥
गंधाम्बुचन्दनाम्बुभ्यांतृतीयःपाकइष्यते ।
कल्कोऽत्रकेशरंकुष्ठंत्वक्कालीयककुंकुमम् ॥ १५६ ॥
भद्रश्रियंग्रन्थिपर्णलताकस्तूरिकातथा ।
लंवंगागुरुकक्कोलजातीकोषफलानिच ॥ १५७ ॥
एलालवंगवल्लीचप्रत्येकंत्रिपलोन्मितम् ।
कस्तूरीषट्पलंचन्द्रात्पलंसार्द्धञ्चगृह्यते ॥ १५८ ॥
वेधार्थञ्चपुनश्चन्द्रमदौदेयौतथोन्मितौ ।
महाप्रसारिणीसेयंराजयोग्याप्रकीर्त्तिता ॥ १५९ ॥
गुणान्प्रसारणीनांतुवहत्येषाबलोत्तमान् ॥ १६० ॥

सपादंपंचाढकशतंपञ्चविंशत्यधिकंपंचशतान्याढकानिभवन्ति तेषुचद्रोणद्वयंस्थाप्यम् ।

तत्रप्रतिशतमेकविंशतिराढकानिशरावाश्चषट्किंचिन्न्यूनसप्तपलान्विता एतेन किंचिन्न्यूनसप्तपला धिकत्वाच्चत्वारिंशदुत्तरशरावशतत्रयं भवति । स्थाप्यश्चकिंचिदधिकसार्द्धपलान्विताःप्रतिशतंदेयं जलशरावः३४२ किंचिदूनपल २७ शेष ५ पल १ किंचिदधिककर्ष ३ समुदायेनदेयजलस्य चतुःशताधिकाष्टस.स्रशरावाः ८४००स्थाप्यश्चाष्टाविंशत्यधिकशरावशतं १२८ किंवा स.दायेन षोडशशरावपरिमितकलशेन पंचविंशत्युत्तरकलशपञ्चशतानि ।

स्थाप्या॰ ाष्टाकलशाः ।

कांजिकस्याढक नि षड्विंशतिर्यद्यपि तथापि कांजेक-
द्रोणमात्रेण व्यवहरन्ति वृद्धाः । कांजिकंशुक्तं ग्राह्यमत
एवोक्तंचक्रेणकांजिकमानतोद्रोणःशुक्तेनैवविधीयते ।
शुक्तन्तुपरग्रन्थेप्रस्थंतण्डुलतोयतइत्यादिनाग्रहण्या-
मुक्तम् । चक्रमतं [illegible]नरन्यथा तथाहि—

अत्रशु[illegible]धिर्मण्डप्रस्थःपंचाढकोन्मितम् ।
कांजिकंकुडवोदध्नोगुडप्रस्थेऽम्लमूलकात् ॥ १६१ ॥
पलान्यष्टौशोधितार्द्रात्पलषोडशकंतथा ।
कणामरिचसिन्धूत्थहरिद्राजीरकंपृथक् ॥ १६२ ॥
द्विपलम्भावितेभाण्डेघृतमष्टदिनस्थितम् ।
सिद्धंभवतितच्छुक्तंयदावतार्य्यगृह्यते ॥ १६३ ॥
तदादेयंचतुर्ज्जातंपृथक्कर्षत्रयोन्मितम् ॥ १६४ ॥

अत्रमण्डस्यभक्तमण्डस्यप्रस्थम् ।
अम्लमूलकंकांजिकमूलकंशोधितार्द्रात् निस्त्वगार्द्रात्
क्षीरदध्नाप्रत्येकंप्रस्थादशेतिभेदः । छागमांसपल ३००
जलांश १८० शेषांश ६८ मंजिष्ठापल ६० जलांश६०
शेष १५ गांधिकव्यवहारंसिध्यति तैलांश ६४ उपक्ष-
यार्थमपरतैलांश ४ कल्के भल्लातकस्या सहद्वेतस्यस्थाने
रक्तचन्दनमेव वदन्ति वृद्धाः । अक्षं विभीतकं पद्मोत्प-
लयोः पुष्पं दशमूलस्य मिलित्वा पलत्रयं चक्रमर्दएड-
गजाबीजं कल्कद्रव्यं तप्तोदकप्रक्षालितं श्लक्ष्णचूर्णितं
सुपिष्टं दत्त्वा क्वाथादि सर्वत्र वैवाद्यःपाकः सचाति-
मृदुःक[illegible]कोऽस्त्येव यतः । द्वितीयपाके
देवपुष्पी देवहुलीति प्रसिद्धा बोलो गंधरसः पत्र-
वाटीयगं [illegible]पत्रकं शल्लकीरसः कुन्दुरु यदुक्तं शब्दार्णवे ।

कुन्दुरु भागद्वयं निरुक्तत्वात् वाला वालकं सुगन्धित्वा-
त् चलः सिह्लकं श्रीवासो नवनीतखोटिःनखी त्रयमश्व-
खुरबदरपत्रोत्पल गजकर्णाख्य नखीमध्याज्या दुष्पत्रा
तेजोवती पूतिःखाटसी गंधोदके बलायूषं बलानिकरः
दुष्पत्रादीनां प्रतिपल २५ तोला उत्पलं १२ तोला ४
जलशराव १००शेषांश५०तृतीयपाके गंधोदकं पूर्ववत् ।
चन्दनोदकार्थं श्वेतचंदनपल५३७ कर्ष २ क्षोदयित्वा
जलशराव १०० शेषांश ५० किंवा उक्तार्द्धमानेन कृत-
गंधोदक २५ अन्येतु सुपविष्टेनसुघृष्टेनवा गंधोदक एवा-
र्द्धमानचन्दनेगोलितमर्द्धावशिष्टगंधोदकमानं गृह्णन्ति ।
इत्थं व्यवहारोऽपिकल्के भद्रश्रियंसितचन्दनं जाझ्या-
दोषःफलञ्चलवंगस्यैव छल्ली चन्द्रःकर्पूरःवेधार्थं मदः
कस्तूरी सिद्धतैलस्यकिंचित्तैलेन कस्तूरीं पिष्ट्वा पात्रस्थ
सिद्धतैले मिश्रयित्वाच्छाद्य स्थाप्यमितिवेधशब्दार्थः ।

अर्थ—पसरन तीनसौ पल, पीलेफूलकी कटसरैया दोसौ पल, असगंध, अरंड, खिरैंटी, सतावर, रहसन, पुनर्नवा, केतकी, दशमूल और फरहदकीछाल यह प्रत्येक सौ पल, देवदारु पचास पल, सिरसकी छाल पचासपल, लाख पचीसपल और लोध पचीसपल, इन सबको एकत्रकर ९२५ आढ़क ९ जलमें पकावें, जब दो द्रोण जल शेषरहै तब उतारकर छानलेवै । कांजी एकद्रोण, दूध, दही, प्रत्येक दशप्रस्थ, दहीका तोर १ एक आढ़क, ईखका रस एक आढक, बकरे-का मांस ३०० तीनसौपल, पाकके लिये जल ८५ पचासी सेर, शेषजल १७ सतरह सेर, मँजीठ ५० पचासपल, जल साठ सेर, शेष पन्द्रहसेर, तिलका तेल एकद्रोण एक प्रस्थ, कल्कके लिये मिलावै, पीपल, सोंठ और कालीमिरच प्रत्येक छे छे पल, हरड़, बहेडा, आमला, धूपसरल, सौंफ, काकडाशिंगी, बच, शंखपुष्पी, कचूर, मोथा, नागरमोथा, कमल, कुमुद, पीपरामूल, मँजीठ, असगंध, पुनर्नवा, दशमूल, चकवड, रसौत, सुगंधतृण, हलदी और जीवनीयगणकी सम्पूर्ण औषधि, प्रत्येक दोदोपल लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाके

प्रथम पाक करै । तत्पश्चात लौंग, गंधबोल, तेजपात, शल्लकीकागोंद, भूरिछरीला, फूलप्रियंगु, खस, सौंफ, बालछड, देवदारु, खिरैंटी, सिलारस, सरलका गोंद, नलिका, कुँदुरू, छोटी इलायची, लोबान, कपूरकचरी, तीनोंप्रकारकी नखी, दालचीनी, गंगापत्री, काकोली, खट्टाशमुष्क, चंपा, दवना, रेणुका, असवरग और मरुआ यह प्रत्येक तीन तीन पल लेवै, इन सबका कल्क और गंधोदकके द्वारा तेलका दूसरा पाक करै । गंधोदक बनानेकी यह विधिहै कि–दालचीनी, गंगापत्री, तेजपात, खस, नागरमोथा और खिरैंटीकी जड, प्रत्येक २५ पचीस पल कमल १२ बारहपल, जल १०० सौ शराव ले, अर्द्धावशेष काथ बनावै, इसको गन्धजल कहतेहैं । इसगंधजलके द्वारा ऊपर लिखाहुआ दूसरा पाक करै । पश्चात् इसी गंधोदक और चन्दनोदकके द्वारा नीचे लिखे तृतीयकल्कका पाक करै । अब चंदनोदक बनानेकी विधि कहतेहैं, कुटाहुआ चन्दन ५० पचास पल, जल पचीस सेर ले, अर्द्धावशेष अथवा चतुर्थांश काढा करै, तथा चन्दनको जलमें घिसलेवै । इसको चन्दनोदक, चन्दनाम्बु, चन्दनजल कहतेहैं । उपरोक्त गंधोदक और चन्दनोदकके द्वारा नागकेशर, कूठ, दालचीनी, पीलाचन्दन, केशर, चन्दन, गठिवन, लताकस्तूरी, लौंग, अगर, शीतलचीनी, जायफल, जावित्री, इलायची, और लौंगकी बेल प्रत्येक तीन तीन पल, कस्तूरी छे पल, कपूर डेढ पल, इनके कल्कके साथ तृतीय पाक करै । जब तेल सिद्ध होजाय तब १॥ डेढ तोले कस्तूरी और १॥ डेढ तोले कपूर पीसकर तेलमें मिलादेवै । यह महाप्रसारिणी तेल–राजाओंके सेवने योग्यहै, तथा अन्यप्रसारिणी तेलोंकी अपेक्षा यह तेल अधिक गुणवालाहै । अब शुक्त बनानेकी विधि कहतेहैं । भातका मांड दो सेर, कांजी ४० चालीस सेर, दही एकसेर, गुड़ १ एकसेर कांजिकमूलक (कांजीके नीचेकी जमी हुई गाद) आठपल, अदरख १६ सोलहपल, पीपल, कालीमिरच, सेंधानोन, हलदी और जीरा, यह प्रत्येक दो २ पल लेकर सबको एकत्र घीके चिकने बासनमें आठदिन तक रक्खा रहनेदे, फिर इसमें दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण छे छे तोले मिलादेवै, इसको शुक्त कहतेहैं । यह शुक्तनामवाली कांजी इस महाप्रसारिणी तैलमें डाली जाती है, इसकारण इसको यहाँपर लिख दियाहै ॥ १४०–१६४ ॥

अथ वातकुलान्तकंतैलम् ।

मूलश्चैवाश्वगन्धायागृहीत्वाखण्डशःशतम् ।
पंचाशत्पलमानन्तुजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ १६५ ॥
पादशेषेहरेत्क्काथंक्काथांशंतिलतैलकम् ।
तैलाच्चतुर्गुणंक्षीरंगव्यंवामाहिषन्तथा ॥ १६६ ॥
शतपुष्पाकणाचेलाकुष्ठञ्चकण्टकारिक ।
शुण्ठीयष्टीदेवदारुशालपर्णीपुनर्नवा ॥ १६७ ॥
मंजिष्ठापत्रकंरास्नावचापुष्करमूलकम् ।
यवानीभूतिकंमांसांनिर्गुण्डीएरण्डबल ॥ १६८ ॥
वह्निगोक्षुरकञ्चैवमृणालंबहुपुत्रिका ।
प्रतिकर्षमिदंयोज्यंसर्वमेकत्रपाचयेत् ॥ १६९ ॥
तैलशेषंसमुद्धृत्यसिद्धंवातकुलान्तकम् ।
अभ्यंगेयोजयेत्पानेनस्यकर्मणिसर्वदा ॥ १७० ॥
भग्नानांखञ्जपंगूनांशान्तिमाप्नोतिन न्यथा ॥ १७१ ॥

अर्थ—तिलकातेल दोसेर, गाय या भैंसका दूध आठसेर, क्काथके लिये असगंधकी जडके टुकडे पचास पल, जल ३२ बत्तीससेर, शेष आठसेर और कल्कके लिये सौंफ, पीपल, इलायची, कूठ, कटेरी, सोंठ, मुलैठी, देवदारु, सालपर्णी, पुनर्नवा, तेजपात, मँजीठ, रहसन, वच, पोहकरमूल, अजवायन, सुगन्धतृण, वालछड, सम्हालू, सूर्यमुखी, खिरैंटी, चीता, गोखरू, खस और सतावर, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवै । सबको विधिपूर्वक मिलाके तेलको सिद्ध करै । यह वातकुलान्तक तेल अभ्यंग, पान और नस्यकर्ममें सदैव प्रयोग करै तो भग्नरोग, खंजरोग, और पंगुरोग दूरहोवै ॥ १६५–१७१ ॥

अथ गंधराजतैलम् ।

तिलतैलाढकेक्षिप्त्वातक्रंतत्परिमाणकः ।
वचाचतुष्पलंदत्त्वाशुक्तंतच्चचतुर्गुणम् ॥ १७२ ॥
त्रिफलायाःपलान्यष्टौमंजिष्ठ यास्तथैवच ।
पुनरष्टपलान्यस्त अर्द्धदग्धानिधापयेत् ॥ १७३ ॥

गलेचशठीपत्रशरण्यमुद्दारुणः ।
पलान्यष्टौविनिक्षेप्यंघृतस्यतुपलद्वयम् ॥ १७४ ॥
आद्येपाकेपचेदित्थंतैलंयावच्चतुर्गुणम् ।
गालयित्वापरंकुर्यात्तत्रपाकत्रयंबुधः ॥ १७५ ॥
चण्ड चलमरुच्छत्रात्वक्पत्रीचोलशैलजम् ।
विषाणवीरणग्रन्थिदेवताकुसुमानिच ॥ १७६ ॥
प्रत्येकमेषांचत्वारिपलान्यादायगान्धिकः ।
पाकंद्वितीयंतैलस्यकारयेत्क्रमयोगतः ॥ १७७ ॥
स्पृक्कामांसीमुरावालंलवंगच्छलिकामला ।
नगुरुकाष्ठखोटीचचम्पकुन्दुप्रियङ्गवः ॥ १७८ ॥
एषांखट्टासिकायाश्चप्रत्येकञ्चपलद्वयम् ।
आदायकारयेत्पाकंतृतीयंगंधकोविदः ॥ १७९ ॥
फणिलावलताकोलफलैलागुरुसिह्लकैः ।
त्वक्कोषाकैर्द्विपलिकैरितिपाकचतुर्थकः ॥ १८० ॥
वेधपलयुगेनेन्दोर्म्मदस्यत्वष्टभिःपलैः ।
गन्धराजाह्वयंतैलमिदंनृपमनोहरम् ॥ १८१ ॥

अर्थ–तिलोंका तेल एक आढक, तक्र एक आढक, वच चारपल, शुक्तनामवाली काँजी १६ सोलह पल, त्रिफला आठपल, आधाभुना हुआ मँजीठ आठपल और सुपारीके वृक्षकी छाल, कचूर, तेजपात, पमरन, नागरमोथा, और चीता, यह प्रत्येक आठपल, तथा घृत आठ तोले लेवे, सबको विधिपूर्वक मिलाके प्रथम पाक करे, फिर वस्त्रमें छानकर चोरक, सुगंधद्रव्य, दालचीनी, मरुआ, सौंफ, गंगापत्री, बोल, भूरिछरीला, कूठ, खस, पीपलामूल और लौंग, यह प्रत्येक चारपल मिलाके दूसरा पाक करे, फिर वस्त्रमें छानकर स्पृक्का (असवरग) बालछड, कपूरकचरी, सुगंधवाला, लौंगकीछाल, भुईआमला, अगर, लोबान, चम्पाकी कली, कुँदुरू, फूलप्रियंगु और खट्टाशमुष्क यह प्रत्येक दोपल, मिलाके तृतीय पाक करै, फिर इसको वस्त्रमें छानकर सफेदचंदन, लौंग, लता, कस्तूरी, शीतलचीनी, जायफल, इलायची, अगर, शिला-

रस, दालचीनी, जावित्री और केशर, यह प्रत्येक आठ आठ तोले मिलाके चौथीबार पकावै, फिर इसमें २ पल कपूर और आठ पल कस्तूरी मिलालेवै । यह गंधराजतैल सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै ॥ १७२–१८१ ॥

अथ पंचपल्लवतोयेनगंधद्रव्यशोधनम् ।

पंचपल्लवतोयेनगंधानांक्षालनंतथा ।
शोषणंचापिसंस्कारोविशेषश्चात्रवक्ष्यते ॥ १८२ ॥
आम्रजम्बुकीपित्थानांबीजपूरकबिल्वयोः ।
गंधकर्मणिसर्वत्रपत्राणिपञ्चपल्लवम् ॥ १८३ ॥

अर्थ–पंचपल्लवके जलसे सर्वगंधद्रव्य धोकर धूपमें सुखाने चाहिये । आम, जामन, कैथा, बिजोरा और बेल इन पांच वृक्षोंके पत्तोंको पंचपल्लव कहतेहैं ॥ १८२ ॥ १८३ ॥

अथ नखीकर्कटशुद्धिः ।

चण्डीगोमयतोयेनयदिवातिन्तिडीजलैः ।
नखंसंक्राथयेदेभिरभावेमृज्जलेनतु ॥ १८४ ॥
पुनरुद्धृत्यप्रक्षाल्यभर्जयित्वानिषेचयेत् ।
गुडपथ्याम्बुनाह्येवंशुध्यतेनात्रसंशयः ॥ १८५ ॥
सम्मर्द्यचन्दनाद्यैस्तुवासयेत्कुसुमैःशुभैः ॥ १८६ ॥
चण्डीमहिषीमृत्तिकाकृष्णाग्राह्याकुसुमैर्जातीमल्लिकावकादेभिः । अधिवासनञ्चशरावसंपुटेकृत्वा एवं सर्वेषामेवशुद्धानामधिवासनंज्ञेयम् ।

अर्थ–भैंसके गोबरका रस अथवा इमलीके जलमें या काली मिट्टीके क्वाथमें नखद्रव्यको औटावै, फिर गंधोदकसे धो घीमें भून गुड मिलाकर हरडोंके जलमें भिजोवै फिर धूपमें सुखाकर चंदनादिसे मर्दनकर चमेली, मोतिया, आदिके फूलोंसे सुवासित करलेवै तो नखद्रव्य शुद्ध होजाताहै ॥ १८४–१८६ ॥

अथ वचाहरिद्राशुद्धिः ।

गोमूत्रेचालम्बुषकेपक्त्वापंचदलोदके ।
पुनःसुरभितोयेन स्विन्नमातपशोषितम् ॥ १८७ ॥
गुडाम्बुनासिच्यमानंभर्जयेच[illegible]णयेत्ततः ॥ १८८ ॥

अर्थ—बच और हलदीको गोमूत्र और गोरखमुंडीके क्राथमें तथा पंचपल्लवके क्राथमें पका गंधकोदकमें भिजोके धूपमें सुखावै, फिर गुड़के शरबतमें भिजोकर सुखादेवै, तदनंतर अग्निमें भूनकर चूर्ण करले तो बच और हलदी शुद्ध होजातीहै ॥ १८७ ॥ १८८ ॥

अथ मुस्तकशुद्धिः ।

मुस्तकंचमनाक्क्षुण्णंकांजिकेत्रिदिनोषितम् ।
पंचपल्लवतोयेनस्विन्नमातपशोषितम् ॥ १८९ ॥
गुडाम्बुनासिच्यमानंभर्जयेच्चूर्णयेत्ततः ।
आजसौभांजनजलैर्भावयेच्चेतिशुध्यति ॥ १९० ॥
अजस्यजलंमूत्रम् ।

अर्थ—नागरमोथेको कूट तीन दिन तक काँजीमें भिजो रक्खै, फिर पंचपल्लवके जलमें पकाकर सुखालेवे फिर गुडके सरबतमें भिजोकर भूनके चूर्ण करले पश्चात् बकरीके मूत्र और सँजिनेके रसकी भावना देवे तो नागरमोथा शुद्ध होजाताहै ॥ १८९ ॥ १९० ॥

अथ शैलजशुद्धिः ।

कांजिकक्कथितंशैलंभृष्ट्वापथ्यागुडांबुना ।
सिंचेदेवंततःपुष्पैर्विविधैरधिवासयेत् ॥ १९१ ॥
कांजिकेविपच्यपंचपल्लवतोयेनक्षालनमित्युपदेशः ।

अर्थ—प्रथम भूरिछरीलेको कांजीमें पकाकर पंचपल्लवके जलमे धोलेवे फिर अग्निमें भूनकर हरड और गुडके जलमें भिजोके अनेकप्रकारके सुगंधित पुष्पोंसे सुवासितकरले तो भूरिछरीला शुद्ध होजाताहै ॥ १९१ ॥

अथ खट्टासीशुद्धिः ।

यथालाभमपामार्गस्नुह्यादिक्षीरलेपितम् ।
बाष्पस्वेदेनसंस्वेद्यपूतिनिर्लोमतांनयेत् ॥ १९२ ॥
दोलापाकंपचेत्पश्चात्पंचपल्लववारिणि ।
खलःसा[illegible]मिवोत्पीडयततोनिःस्नेहतांनयेत् ॥ १९३ ॥
आजसौभांजनजलैर्भावयेच्चपुनःपुनः ।

शिग्रुमूलेचकेतक्याःपुष्पपत्रपुटेचतम् ॥ १९४ ॥
पचेदेवंविशुद्धःसन्मृगनाभिसमोभवेत् ॥ १९५ ॥

अर्थ–चिरचिटा और थूहरके दूधसे खट्टाशीको लपेटकर वाफसे स्वेदन करै तो यह दुर्गन्धरहित और रोमशून्य होजावै, फिर पंचपल्लवके जलमें दोलायंत्र-केद्वारा पकाकर निचोडलेवै तो खट्टाशी स्नेहरहित होजाय। पश्चात् बकरीके मूत्र और सैंजिनेके रसमें बारंबार भावना देकर सैंजिनेकी जड, केतकीके फूल, तथा पत्रोंसे पुट बना उसमें खट्टाशीको रख पकावै, इसप्रकार करनेसे खट्टाशी शुद्ध होकर कस्तूरीकी समान होजातीहै ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥

अथ सिह्लकादिभावनम् ।

सिह्लकंमधुनाभाव्यंकुंकुमश्चापिसर्पिषा ।
कुंकुमेनागुरुःप्राज्ञैर्गोमूत्रेग्रन्थिपर्णकम् ॥ १९६ ॥
मधूदकेनमधुरीपत्रकंतण्डुलाम्बुना ।

भाव्यमितिसर्वत्रयोज्यम् ।

कुष्ठंपंचदलोत्स्विन्नमौर्वीकुन्दुरुधूपितम् ॥ १९७ ॥
वासितंकुसुमैरेभिःशुद्धिमायातिनिर्म्मलाम् ।
ध्यामकश्चूर्णितःशुद्धिंशर्कराजलसेचितम् ॥ १९८ ॥
घृतगुग्गुलुधूपेनयातिचन्दनवासितः ।

ध्यामकोगंधतृणम् ।

कुन्दुरुश्चूर्णितोऽत्यर्थंकुंकुमेनविमर्द्दितः ॥ १९९ ॥
धूपितेगुडसर्जाभ्यांवासितःशुध्यतेतराम् ।
रेणुकोभावितोऽत्यर्थंमधुनातक्रभावितः ॥ २०० ॥
आतपेशोषितःपुष्पवासितःशुद्धितामियात् ।
सर्वेषांगंधवस्तूनांपंचपल्लववारिणा ॥ २०१ ॥
गंधाम्बुनाचकर्त्तव्यंक्षालनंरौद्रशोषणम् ।
ततोगुग्गुलुतोयेनसिक्ताशक्त्यातुभर्जयेत् ॥ २०२ ॥

कुष्ठादिकन्तुनभर्जनीयम् । यदुक्तम् ।

रुग्ग्रन्थिलघुनिर्यासपत्रपुष्पफलेषुच ।
चन्दनेनचकर्तव्यंभर्ज्जनंगंधकोविदैः ॥ २०३ ॥

अर्थ-शिलारस सहतमें भिजोनेसे शुद्ध होजाताहै । केशर घृतमें, अगर केशरमें, गठिवन गोमूत्रमें, सौंफ, मधूदकमें और तेजपात चावलोंके पानीमें भिजोनेसे शुद्ध होता है । कूटको पंचपल्लवके जलमें पकाके मूर्वा और कुन्दुरुकी धूप देवै, फिर सुगंधित पुष्पोंसे सुवासित करै तो कूट शुद्ध होजाताहै । गंधतृणोंका प्रथम चूर्णकर फिर खांडके शरबतमें भिजोके घृतयुक्त गूगलकी धूपदेवै, पश्चात् चंदनादिकसे सुवासित करले तो गंधतृण शुद्ध होजातेहैं । कुन्दुरुका अत्यन्त बारीक चूर्णकरके केशरके साथ पीसै, फिर गुड और रालकी धूप देकर पुष्पोंसे सुवासित करले तो कुन्दुरू शुद्ध होजाताहै । रेणुकाको सहत और तक्रमें भावना देकर सुखालेवै फिर पुष्पोंसे सुवासित करनेसे रेणुका शुद्ध होजातीहै । सर्वप्रकारके गंधद्रव्योंको पंचपल्लवोदक और गंधोदकसे धोकर धूपमें सुखालेवे फिर गूगलके क्वाथमें भिजोकर भूनलेवे, परन्तु कुष्ठादि गंध द्रव्योंको न भूने, कूठ, गठिवन, अगर, सर्वप्रकारके गोंद, पत्र, पुष्प और फल इन सबको चन्दनके साथ भूनना चाहिये ॥ १९६-२०३ ॥

अथ गंधद्रव्यसुवासनविधिः ।

केतकीयूथिकाजातिश्चम्पकश्चातिमुक्तकः ।
कदम्बोमल्लिकानागःपुन्नागःकुटजस्तथा ॥ २०४ ॥
पाटलाकरुणामौर्वीपुष्पैरेभिःसमाचरेत् ।
वासनंदवसंभिन्नैस्तथान्यैरपिशोभनैः ॥ २०५ ॥
शोधिताशोधितंद्रव्यंनकुर्यादेकभाजने ।
असाधुसंगतःसाधुरप्यसाधुर्यतोभवेत् ॥ २०६ ॥
पीतःकिंचिल्लघुरतिशयंकेतकीतुल्यगंधः ।
स्निग्धोगन्धोमिसिमिसिकरोभस्मभावंनयाति ॥
[illegible]षात्तिक्तःकटुर[illegible]क्षारगंधानुविद्धम् ।
शुद्धःसम्यक्मदइतिमहीपालयोग्योमनोज्ञः ॥ २०७ ॥
करस्थतोयेनिक्षिप्ताकस्तूरीचेन्मुहूर्त्ततः ।

रक्तपित्तंजलंकुर्या॒ ॒त्रिमांतातदाभवेत् ॥ २०८ ॥
पक्कात्कर्पूरतःप्रा॒ रपक्कंगुणवत्तरम् ।
अत्रापिस्याद्यदक्षुद्रंस्फटिकाभंतदुत्तमम् ॥ २०९ ॥
आ॒ष्यमाणंयच्चापिकरेरेखाकरंभवेत् ।
अत्राद्यपक्के ।
पक्कश्चसदलंस्निग्धंहरितद्युतिचोत्तमम् ॥ २१० ॥
भङ्गेमनागपिनचेन्निपतन्तिततःकणाः ।
चन्दनंगुरुगंधाढ्यंरक्तसारंविदुर्बुधाः ॥ २११ ॥
मध्यमंपीतसारंस्यादधमंपाण्डुरच्छवि ।
विशेषेणगुणस्तत्रग्रन्थिकोटरसंगताः ॥ २१२ ॥
आकृष्णमुत्तमंमूलंरक्तच्छायश्चमध्यमम् ।
आरक्तंमध्यमंविद्धिरक्तचंदनकन्त्रिधा ॥ २१३ ॥
काकतुण्डच्छविस्निग्धंगुरुचागुरुशस्यते ।
मध्यंतित्तिरपक्षाभंहेयंशाल्मलिकाष्ठवत् ॥ २१४ ॥
रक्तस्निग्धंसुगंधंचसरलंसम्मतंसताम् ।
स्निग्धंसुगन्धिलघुचदेवदारुप्रशस्यते ॥ २१५ ॥
खट्टासीधूपजः॒ष्ठोवचलोमांसलश्चयः ।
मृगशृंगोपमंकुष्ठंकीटदोषोज्झितंमतम् ॥ २१६ ॥
किंचित्पीतामुराशस्तामांसीपिंगजटाकृतिः ।
शैलजःशुकपिच्छाभोजलाग्निभ्यामदूषितः ॥ २१७ ॥
वेणुको॒द्गतुल्योऽत्रश्रेष्ठःस्थूलस्तुनिन्दितः ।
मुस्तंशस्तमनूपोत्थंनिशास्थूलाऽरुणान्तरा ॥ २१८ ॥
जातीफलंसशब्दंचगु॒स्निग्धंप्रशस्यते ।
एलाकक्कोलबीजाभाग्राह्यालोकोऽत्रवा॒तिः ॥ २१९ ॥
एलासूक्ष्मबीजश्रेष्ठेत्यर्थः ।

कक्कोलाभाचकर्पूरश्वेताश्रेष्ठात्रुटिर्मता।
कक्कोलकंगुरुस्निग्धंसूक्ष्माद्रास्थितंशुभम् ॥ २२० ॥
गुडत्वक्सुरसाभद्रासुदृढाकीटवर्ज्जिता।
ग्रन्थिकापाण्डवःकिंचित्कनिष्ठामध्यमंमतः ॥ २२१ ॥
उत्तमःकृष्णवर्णोयःस्थूलोऽतीवसनिन्दितः।
शस्ताप्रियंगूर्वापाण्डुशामाकीटैरदूषिता ॥ २२२ ॥
मलकोष्ठोज्झितंशस्तंसर्ज्जश्रीवासकुन्दुरु।
सिह्लकस्तुस्वच्छपिङ्गःशस्तोमधुनिभोऽधमः ॥ २२३ ॥
भूकेशःसूक्ष्ममूलोऽत्रशस्यतेसरसोनवः।
कीटाग्नितोयैरक्लिष्टंसरसंपत्रकंशुभम् ॥ २२४ ॥
दीर्घमूलंदृढंस्निग्धंपुराणंद्रवसंयुतम्।
देशेसाधारणेजातमुशीरंभद्रकम्भवेत् ॥ २२५ ॥

अर्थ—केतकी, जुही, चमेली, चम्पा, अतिमुक्तक, कदम्ब, मल्लिका, नागकेशर, पुन्नाग, कुड़ा, पाढ़ल, करुणी और मौर्वी, इनके फूलोंमें तथा अन्यान्य सुगंधित पुष्पोंमें गंधद्रव्यको सुवासित करना चाहिये। शोधित और अशोधित दोनो द्रव्योंको कदापि एक बासनमें न रक्खे कारण, यहहै कि—दुर्जनकी संगतिसे सज्जन भी दुर्जन होजातेहैं। (कस्तूरीपरीक्षा,) कुछेक पीतवर्ण हो, तोलमें अत्यन्त हलकीहो, जिसमें केतकीके फूलोंके समान गंध आतीहो, स्निग्ध, अत्यन्त सुगंधयुक्त, अग्निमें डालनेसे भस्मभावको न प्राप्त होवै और मिसिमिसि ऐसा शब्द करै, स्वादमें किंचित्कडवी और चरपरीहो और अल्पक्षारगंधयुक्तभी हो ऐसी कस्तूरी उत्तम और राजाओंके योग्य होतीहै। हाथमें जलको स्थापन कर उसमें कस्तूरीको डालदेवे, एकमुहूर्त्तमें वह जल लाल पीले रंगका होजाय तो उसको कृत्रिम कस्तूरी जाननी। पक्क कर्पूरसे अपक्क कर्पूर अधिक गुणवाला है, और कच्चे कर्पूरमें भी जो अक्षुद्र, स्फटिककी कान्तिसमान निर्मल और जिसके लगनेसे हाथमें रेखा पड़जाय वह कपूर अत्युत्तम होताहै। दलयुक्त, स्निग्ध, हरितमणिकी समान प्रकाशमान और अल्पतोडनेसेभी जिसमें कण गिरने लगें ऐसा पक्क कपूर उत्तम होवाहै, सफेदचंदन—भारी, अत्यंतगंधयुक्त और लाल गूदेवाला उत्तम होताहै, पीले गूदेका मध्यम और पाण्डु वर्णका अधम होताहै। विशेष करके ग्रन्थि और कोटरसंयुक्त सफेद चन्द-

न उत्तम होताहै । लालचन्दन तीन प्रकारकाहै, तहाँ जिसका मूल किंचित् कृष्णवर्ण हो ऐसा उत्तम होताहै, जिसका रक्तवर्णहो वह मध्यम, और जिसका मूल अल्प रक्तवर्ण हो उसको अधम जानना। अगर कौवेकी तुण्डकी समान रंगवाली स्निग्ध और भारी उत्तम होतीहै, तीतर पक्षीके परोंकी समान रंगवाली मध्यम,और सेमलकी समान रंगवाली अधम होतीहै। सरल काष्ठ स्निग्ध सुगंधित और रक्तवर्ण हो तो उत्तम होताहै । देवदारु—स्निन्ध,सुगंधित और हलका उत्तम होताहै । खट्टास मुष्क—धूपज और शब्दयुक्त तथा मांसल श्रेष्ठ होताहै । कूठ मृगके शींगके समान और कीटदोष वर्ज्जित उत्तम होताहै । किंचित् पीली कपूरकचरी उत्तम होतीहै । वालछड पिंगवर्ण और जटाकी समान आकृतिवाला उत्तम होताहै । जो तोतेकी पूंछकी समान हो, जल और अग्निसे न बिगडाहो ऐसा भूरिछरीला उत्तम होताहै । रेणुका—मूँगकी समान उत्तम होतीहै और स्थूल निन्दित होतीहै । नागरमोथा—अनूपदेशमें उत्पन्न होनेवाला उत्तम होताहै, हलदी मोटी और भीतरसे लाल उत्तम होतीहै, जायफल शब्दयुक्त भारी और चिकना उत्तम होताहै । इलायची—कंकोलकी समान सूक्ष्म बीजोंवाली उत्तम होतीहै, छोटी इलायची कंकोलकी समान प्रभावाली कपूरकी समान धवल और छोटेबीजोंकी उत्तम होतीहै, शीतलचीनी—भारी, चिकनी और सूक्ष्मअग्रभागवाली उत्तम होतीहै । उत्तम रसवाली दृढ और कीडे आदिने न खाई हो, ऐसी दालचीनी उत्तम होतीहै, पाण्डुवर्ण और छोटा पीपलामूल, मध्यम होताहै, कालेरंगका पीपरामूल उत्तम होताहै और अत्यन्त मोटा पीपरामूल अधम होताहै । फूलप्रियंगु—पाण्डुवर्ण, श्यामवर्ण और कीडे आदिका न खाया उत्तम होताहै । राल, श्रीवास और कुन्दुरु यह कीट आदिसे न बिगडे हुए उत्तम होतेहैं । शिलारस स्वच्छ और पिंगलवर्णका उत्तम होताहै, और सहतकी समान कान्तिवाला अधम होताहै, सूक्ष्मजडवाला, उत्तमरसयुक्त और नवीन उत्तम होताहै, तेजपात—कीड़े, अग्नि और जलसे न बिगड़ा हुआ और सरस उत्तम होताहै, खस—बडी जड़वाली, दृढ़, स्निग्ध, पुरानी, रससंयुक्त, और साधारण देशमें उत्पन्न होनेवाली उत्तम होतीहै ॥ २०४–२२५ ॥

ग्राह्याप्रशोष्यसम्य[illegible]चम्पककलिकाप्रदीपकलिकैव ।
कीटादिदोषविरहितमभिनवमितिकेशरंग्राह्यम् ॥ २२६॥

अ[illegible]ग्रा[illegible]पेसराग[illegible]पिग्रन्थिला[illegible]पप[illegible] ।
अन्तः[illegible]त्रेणवचाबाह्यत्वमुज्झति ॥ २२७ ॥

अस्सारमध्यसबलानिष्कीटानलिकामता ।
गजकर्णाश्वखुरकौबदरोत्पलपत्रकौ ॥ २२८ ॥
वराहकर्णःपंचैतेनख स्त्याज्या इहान्तिमाः ।

नामानुरूपात्सात्रते ।

लाक्षाचनूतनाग्राह्यामृत्तिकादिविवर्जिता ॥ २२९ ॥
कुसुम्भंनूतनंस्पृक्कामव्यापन्नांनवांविदुः ।
चौरपुष्पीनवांश्यामामामनन्तिमनीषिणः ॥
मध्यपाकोगुडःश्रेष्ठोनिर्मलःकाष्ठवर्जितः ॥ २३० ॥

हरीतकीचिह्नंरसायनाऽध्यायेऽस्ति ।

भाद्रक्यांकीर्त्तितंयेषांविरुद्धत्वंनकीर्त्तितम् ॥ २३१ ॥
तेषांतद्विपरीतत्वाद्विरुद्धमपिलक्षयेत् ।
गतेषामपरेषाञ्चनवातप्रभवोगुणः ॥ २३२ ॥
मांसीपत्रं:रादारुकेशरंकुष्ठरेणुकम् ।
एलाप्रियंगुकाश्मीरंमिथोमित्रगणोमतः ॥ २३३ ॥
परमागुरुपत्राम्-चौराब्दश्वेतचंदनम् ।
नखीग्रन्थिकचारस्पृग्देव:ष्पीतुमध्यमः ॥ २३४ ॥

स्पृक्स्पृक्का ।

श्रीवासतैलेमद..न्दचन्द्रामिसिर्द्धिषड्वर्गइतिप्रकीर्तितः ।
भागक्रमात्तैलविधौविधेयोभवेदमीपांसकलोर्द्धपादिकः २३५॥
सुगन्धितैलपाकार्थं ।लानांगंधयोजनम् ॥ २३६ ॥

अर्थ—चम्पाकीकली—दीपककी कलिकाकी समान दीप्तवान् लेनी चाहिये, नागकेशर कीटादि दोषसे रहित और नवीन उत्तम होतीहै, बच—अत्यन्त उग्र, रागयुक्त, और बहुत गाँठोंवाली उत्तम होतीहै, जो सारहीन हो, जिसका मध्य-भाग बलवान्हो, और जो निष्कीट हो ऐसी नलिका उत्तम होतीहै, हस्तिकर्ण अश्वखुर, बेरीकेपत्र उत्पलपत्र और वराहकर्णके सदृश, ऐसे पाँचप्रकारके नख होतेहैं, इनमें वराहकर्णकी समान नख त्यागना चाहिये, लाख नवीन और मृत्ति-

कादिसे रहित उत्तम होतीहै, कुसुमके फूल नवीनही उत्तम होतेहैं और असवरगभी नवीनही उत्तम होताहै, चोरपुष्पी नूतन और श्यामवर्ण उत्तम होतीहै, गुड मध्यमरीतिसे पकाया हुवा निर्मल और तृणआदिसे रहित उत्तम होताहै, हरडके लक्षण रसायनाध्यायमें लिखेहैं । जिन द्रव्योंको श्रेष्ठ कहाहै उनमें विरुद्धता नहीं कहीहै और उनमें विपरीतगुणयुक्त होनेके कारण उनको विरुद्धभी कहाहै । इन द्रव्योंमें तथा अन्यान्य द्रव्योंमें वातजनित गुण नहीं है । जटामासी (बालछड), तेजपात, कपूरकचरी, देवदारु, नागकेशर, कूठ, रेणुका, इलायची, फूलप्रियंगु और केशर, इनसब मिलेहुए द्रव्योंको मित्रगण कहते हैं । गंधशठी (कपूरकचरी), अगर, तेजपात, सुगंधबाला, चोरद्रव्य नागरमोथा सफेदचदंन, नखीद्रव्य, गठिवन, चोरक (चोरपुष्पी), असवरग और लौंग इनसबको मध्यमगण कहतेहैं । श्रीवास, शिलारस, कस्तूरी, कुँदुरू, कपूर, और सौंफ, इनको षड्वर्ग [शत्रुवर्ग] कहतेहैं । इनकी मात्रा तेलके बनानेमें क्रमसे उत्तरोत्तर चौथाई भाग क्रम लेनी चाहिये और सुगंधित तेल बनानेमें सुगंधबाला आदि सुगंधित औषधि डालनी चाहिये ॥ २२६ ॥ २२७ ॥ २२८ ॥ ॥ २२९ ॥ २३० ॥ २३१ ॥ २३२ ॥ २३३ ॥ २३४ ॥ २३५ ॥ २३६ ॥

अथ स्वच्छन्दभैरवरसः ।

शुद्धसूतंमृतंलोहंताप्यगंधकतालकम् ।
पथ्याग्निमंथनिर्गुण्डीत्र्यूषणंटंकणंविषम् ॥ २३७ ॥
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेदिनंनिर्गुण्डिकाद्रवैः ।
शुण्ठीद्रावैर्दिनैकन्तुद्विगुंजांवटकीकृताम् ॥ २३८ ॥
भक्षयेत्सर्वशूलार्त्तोनाम्नास्वच्छन्दभैरवः ॥ २३९ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, लोहेकीभस्म, सोनामाखी, गंधक, हरिताल, हरड़, अरणी, निर्गुण्डी, त्रिकुटा, सुहागा और विष इनसबको समानभाग लेकर एकदिन सम्हालूके रसमें खरल करै, फिर एकदिन सोंठके रसमें खरल करै, पश्चात् दो गुंजाभरकी गोली बनावै तो स्वच्छन्दभैरवरस सिद्धहो, यह स्वच्छन्दभैरवरस सर्वप्रकारके शूलोंको दूर करैहै ॥ २३७ ॥ २३८ ॥ २३९ ॥

अथ षडंगगुग्गुलुः ।

अमृतादेवकाष्ठञ्चशुण्ठीवातारितलकः ।

गुग्गुलुंसर्वतुल्यांशं कुट्टयेच्चसदादृढम् ॥ २४० ॥
कर्षांशंखादयेच्चापिख्यातंषडङ्गगुग्गुलुम् ॥ २४१ ॥

अर्थ—गिलोय, देवदारु, सोंठ, एरण्डका तेल, यह सब समानभाग लेवै और सबकी वराबर गूगुल लेवै, सबको कूट पीसके एक तोलेभर प्रतिदिन खावै तो सर्वप्रकारके वातशूल दूर होवैं, इसको षडंगगूगुल कहतेहैं और कोई वैद्य इसको स्वच्छन्दभैरवरसका अनुपान कहतेहैं ॥ २४० ॥ २४१ ॥

अथ त्र्यूषणादिगुटिका ।

त्र्यूषणंपिप्पलीमूलंचित्रकंरजनीद्वयम् ।
अजमोदायवानीचपथ्यातुल्यासुवर्चलैः ॥ २४२ ॥
सैन्धवंवाकुचीबीजंयवक्षारंविडंवचा ।
प्रत्येकश्चत्रिमापन्तुसर्वतुल्यंचगुग्गुलुम् ॥ २४३ ॥
अम्लवेतसकर्षैकंकिञ्चिदाज्येनकुट्टयेत् ।
गुटिकाचहितावातेसामेसंध्यस्थिमज्जगे ॥ २४४ ॥
दृढंकरोतिभग्नंचजठरानलदीपनी ॥ २४५ ॥

अर्थ—त्रिकुटा, पीपरामूल, चीता, हलदी, दारुहलदी, अजमोदा, अजवायन, हरड़, कालानोन, सेंधानोन, वाकुचीके बीज, जवाखार, विरिया, संचरनोन और वच यह प्रत्येक तीन तीन मासे और सबकी वराबर गूगुल लेवै और अमलवेंत दो तोले लेवे, फिर सबको एकत्र पीसके गोली बनालेवे, यह गोली वातरोग, आमवात, संधिगतवात, अस्थिगत वात, मज्जागत वात, इन सब वातविकारोंको दूर करैहै, टूटेहाडांको जोड़देवे, और अग्निको दीपन करैहै ॥ २४२ ॥ ॥ २४३ ॥ २४४ ॥ २४५ ॥

अथ वातारिरसः ।

क्रमोत्तरगुणंशुद्धंरसंगंधंफलत्रिकम् ।
चित्रकंगुग्गुलुंपञ्चमर्द्यमेरण्डतैलकैः ॥ २४६ ॥
पुन्नागबृहतीयुग्मदेवदारुसुचूर्णितम् ।
एतत्पूर्वौषधिसमंमर्दयेद्यामामात्रकम् ॥ २४७ ॥

कर्षंखादेत्पिबेत्क्वाथंनागरैरण्डमूलकैः ।
संमर्द्यैरण्डतैलेनपृष्ठेस्वेदञ्चकारयेत् ॥ २४८ ॥
विरेचनंभवेत्तेनस्निग्धमुष्णञ्चभोजनम् ।
रसोवातारिनामायंसर्ववातहरःपरः ॥ २४९ ॥

अर्थ—पारा एकभाग, गंधक दोभाग, त्रिफला तीनभाग, चीता चारभाग, गूगुल पाँचभाग लेवै, सबको अरंडके तेलमें एक प्रहरतक मर्दनकरै, फिर इसमें पुन्नागके पुष्प, कटाई, कटेरी और देवदारुका चूर्ण मिलाके एकप्रहर खरल करै तो वातारिनामकरस सिद्धहो, इसको एक तोलाभर खावे और ऊपरसे सोंठ और अरण्डकी जडका क्वाथ पीवै तथा रोगीके शरीरमें अंडीके तेलका मालिश करावै और पृष्ठभागमें स्वेदप्रदान करै, इसप्रकार करनेसे जुल्लाव होजाताहै । चिकने और गरम भोजनकरै, यह वातारिनामक रस सर्वप्रकारके वातविकारोंको दूर करैहै ॥ २४६–२४९ ॥

अथ वडवानलरसः ।

सूतवज्रार्ककान्तानांभस्ममाक्षिकहाटकम् ।
तालंनीलांजनंतुत्थमहिफेनसमांशिकम् ॥ २५० ॥
पंचानांलवणानांचभागैश्चैकंविमर्दयेत् ।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकन्तुरुद्धातंभूधरेपचेत् ॥ २५१ ॥
माषैकंचार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वडवानलम् ।
पिप्पलीमूलजंक्वाथंपिप्पल्यासहपाचयेत् ॥ २५२ ॥
धनुर्वातंदण्डवातंशृंखलावातकंजयेत् ॥ २५३ ॥

अर्थ—पारेकीभस्म, हीरेकीभस्म तांबेकीभस्म, कान्तलोहेकी भस्म सोनामाखीकी भस्म, सोनेकी भस्म, हरताल, नीलासुर्मा, नीलाथोथा, [illegible] और पांचोंनोन प्रत्येक एकएक भागलेवै, सबको एकत्र कर थूहरके दूधमें एकदिन खरल करै, फिर भूधरयंत्रमें फूँकदेवै तो वडवानल रस सिद्धहो, इसको एकमासेभर, अदरखके साथ खावै और ऊपरसे पीपलके साथ पीपलामूलका क्वाथ पान करै तो धनुर्वात, दण्डवात और शृंखलादि वातविकार दूर होवै ॥ २५० ॥ २५१ ॥ २५२ ॥ २५३ ॥

अथ स्वच्छन्दनायकरसः ।

मृतंसूतंतीक्ष्णकान्तंतालंमाक्षिकगंधकम् ।
तुल्यांशंमर्दयेद्द्रावैर्विदार्यार्द्रकसम्भवैः ॥ २५४ ॥
भृंग्युत्थैःकाकमाच्युत्थैर्गिरिकर्णीद्रवैर्दिनम् ।
संमर्द्यभांडगंरुद्ध्वापचेन्मन्दाग्निनादिनम् ॥ २५५ ॥
व्योषाग्निगंधकविषैःसरण्याभयाटङ्कणैः ।
समांशैश्चूर्णितंमिश्रैस्तुल्यांशंपूर्वपातितम् ॥ २५६ ॥
त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावैर्मुण्डीनिर्गुण्डिभृंगजैः ।
अष्टगुंजामितंखादेद्रसःस्वच्छन्दनायकः ॥ २५७ ॥
सर्ववातहरःख्यातोह्यनुपानमिदंपिबेत् ।
लशुनंसैन्धवंतैलंकर्षमात्रंसुखावहम् ॥ २५८ ॥

अर्थ–पारेकीभस्म, तीक्ष्णलोहा, कान्तलोहा, हरिताल, सोनामाखी और गंधक प्रत्येक समान भागलेवै सबको एकत्रकर विदारीकन्द, अदरख, अतीस, मकोय और विष्णुक्रान्ता (कोयल) इन प्रत्येकके रसमें एकएकदिन खरल कर गोलाबनालेवै, उस गोलेको हाँडीमें रखके मृदु अग्निसे एकदिन पकावै, फिर त्रिकुटा, चीता, गंधक, विष, प्रसारिणी, हरड और सुहागा समानभाग ले, सबका चूर्णकर उक्तगोलेमें मिलादेवै, फिर इसको गोरखमुण्डी, सम्हालू और भांगरेके रसमें तीनदिन खरल करै तो स्वच्छन्दनायक नामवाला रस सिद्ध हो, इसको आठ चौंटलीभर खावै और ऊपरसे लहशुन, सेंधानोन और तिलोंका तेल मिलाकर दो तोलेभर पीवै तो सर्वप्रकारके वातरोग दूर होवैं ॥ २५४–२५८॥

अथ त्रिगुणाख्योरसः ।

गंधकाष्टगुणंसूतंशुद्धंमृद्वग्निनाक्षणम् ।
पक्त्वावतार्यसंचूर्ण्यचूर्णतुल्याभयायुतम् ॥ २५९ ॥
सप्तगुंजामितंखादेद्वर्द्धयेच्चादिनेदिने ।
गुंजैकैकंक्रमेणैवयावत्स्यादेकविंशतिः ॥ २६० ॥
क्षीराज्यशर्कराभिश्चशाल्यन्नंपथ्यमाचरत् ।

कम्पवातप्रशान्त्यर्थंनिर्वातेनिवसेत्सदा ॥ २६१ ॥
द्विगुणाख्योरसोनामत्रिपक्षात्कम्पवातजित् ॥ २६२ ॥

अर्थ-गंधक एकभाग, और शुद्धपारा आठ भाग, दोनोंको क्षणभर मृदु अग्निसे पकावै, फिर उतारकर चूर्ण करले और इस चूर्णमें बराबर हरड-काचूर्ण मिलालेवे, इसको पहिलेदिन सातरत्तीभर खावै पश्चात् क्रमसे रोज रोज एकरत्ती बढ़ाके खावै, ऐसे इक्कीस रत्तीतक खावै, इसपै दूध, घी, बूरा और शालिधानोंका भात सेवन करै। और कंपवातको शान्तकरनेके लिये रोगी निरंतर निर्वातस्थानमें रहै, यह त्रिगुणाख्यनामवालारस तीनपक्षमें कम्पवातको दूर करैहै ॥ २५९ ॥ २६० ॥ २६१ ॥ २६२ ॥

अथ वातगजांकुशः ।

मृताभ्रंतीक्ष्णताम्रञ्चसूततालकगंधकम् ।
भार्ङ्गीशुण्ठीबलाधान्यंकट्फलंचाभयाविषम् ॥ २६३॥
मर्द्यञ्चपलाद्रावैर्निष्कैकंभक्षयेद्वटीम् ।
वातश्लेष्माहराह्येषागुरुवातगजांकुशः ॥ २६४ ॥

अर्थ-अभ्रककीभस्म, लोहेकीभस्म, तांबेकीभस्म, पारेकीभस्म, शुद्धहरिताल, शुद्धगंधक, भारंगी, सोंठ, खिरैंटी, धनियाँ, कायफल, हरडे और विष इन सबको समान भागले पीपलके क्वाथमें खरल करके दोदो मासेभरकी गोली बनालेवे, इन गोलियोंको सेवनकरनेसे-वातकफरोग और अत्यन्त बढ़ा हुआ वातरोग दूर होताहै, इसको वातगजांकुश रस कहतेहैं ॥ २६३ ॥ २६४ ॥

अथ विजयभैरवतैलम् ।

रसगंधशिलातालंचूर्णसंमर्द्यकांजिकैः ।
लिप्त्वावस्त्रेकृतावर्तिस्तैलाक्ताज्वालयेच्चताम् ॥ २६५ ॥
तद्द्रुतंग्राहयेत्तैलमधःपात्रेघृतेसति ।
तत्तैलैर्लेपयेद्गात्रंनागवल्ल्यातुभक्षयेत् ॥ २६६ ॥
बाहुकम्पंशिरःकम्पमेकाङ्गंजानुकम्पनम् ।
नाशयेद्रक्षणाल्लेपात्तैलंविजयभैरवम् ॥ २६७ ॥

अर्थ-पारा, गंधक, मैनसिल और हरिताल इनसबका चूर्ण करके कांजीमें खरल करै, फिर इसको वस्त्रपै लपेटकर बत्ती बनालेवै, उन बत्तियोंको तेलमें

भिजोके अग्निसे जलावै, उनके जलनेसे जो तेल नीचेको गिरै उसको एक बासनमें लेलेवै,इसतेलको शरीरसे मलै, अथवा नागरपानपै लगाकर भक्षण करै तो बाहुकंप, शिरःकम्प, एकांगकम्प और जानुकम्प दूर होवै, इसको विजयभैरव तैल कहतेहैं ॥ २६५ ॥ २६६ ॥ २६७ ॥

अथ सर्वांगकम्पारिरसः ।

मृतंसूतंमृतंताम्रंमर्दयेत्कटुकद्रवैः ।
एकविंशतिवारंचशोष्यंपेष्यंपुनःपुनः ॥ २६८ ॥
चणमात्रावटीभक्ष्यारसःसर्वाङ्गकम्पजित् ॥ २६९ ॥

अर्थ–पारेकीभस्म और ताँबेकी भस्म दोनोंको त्रिकुटेके रसमें खरल करै, पश्चात् खरल करके सुखा देवै, फिर खरल करै, इसप्रकार इक्कीसबार खरल कर चनेकी बराबर गोली बनाके खानेसे सर्वांगकम्परोग दूर होताहै, इसको सर्वांगकम्पारिरस कहतेहैं ॥ २६८ ॥ २६९ ॥

अथ अर्द्धांगवातारिरसः ।

सूतस्यचपलात्पञ्चपलैकंमृतताम्रकम् ।
जम्बीराणांद्रवैःपिष्टंसूततुल्यञ्चगंधकम् ॥ २७० ॥
नागवल्लीदलैःपिष्टंस्थित्वामूपांविलेपयेत् ।
रुद्धालघुपुटेपच्यात्त्र्यूपणेनसमन्वितम् ॥ २७१ ॥
अर्द्धाङ्गकम्पवातार्तोभक्षयेच्चद्विगुंजकम् ॥ २७२ ॥

अर्थ–पारा बीस तोले और ताँबेकी भस्म चार तोले, इन दोनोंको जम्बीरी नीबुओंके रसमें पीसै, फिर इसमें पारेकी बराबर गंधक मिलाकर पानोंके रसमें पीसै, पश्चात् मूषामें रख मूषाका मुख बंदकर लघुपुटमें फूंक देवै । फिर इसरसमें त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर इसको दो रत्तीभर भक्षण करै तो अर्द्धांगकंपवात दूर होवै ॥ २७० ॥ २७१ ॥ २७२ ॥

अथ पित्तयुतवातलक्षणम् ।

दाहसन्तापमूर्च्छाःस्युर्वातेपित्तसमन्विते ॥ २७३ ॥

अर्थ–पित्तसंयुक्त वातरोगमें दाह,सन्ताप और मूर्च्छा उत्पन्न होतीहै ॥२७३॥

अथ वातपित्तारिरसः ।

मृतंसूतंमृतंताम्रंशिलातालंविपोषणम् ।
कुष्ठंनागबलापथ्यात्रिकण्टञ्चविदारिका ॥ २७४ ॥

एरण्डंमर्दयेत्तुल्यंद्रवैश्चाग्नि पुनर्नवैः ।
निष्कमात्रांवटींखादेद्वातपित्तहराभवेत् ॥ २७५ ॥

अर्थ—पारेकीभस्म, तांबेकीभस्म, मैनशिल, हरिताल, विष, कालीमिरच, कूठ, गंगेरन, हरड, गोखरू, विदारीकन्द और अरण्डकी जड इन सबको समान भागलेकर चीते और पुनर्नवेके रसमें खरल करके चारचार मासेकी गोली बनालेवै, एकगोली प्रतिदिन खानेसे वातपित्त रोग दूर होवै। इसको वातपित्तारिरस कहतेहैं ॥ २७४ ॥ २७५ ॥

अथ सामान्यतोवातहरणानि ।

स्निग्धोष्णस्थिरवृष्यबल्यलवणस्वाद्वम्लतैलातप-
स्नानाभ्यंजनमत्स्यमांसमदिरासंवाहनोन्मर्दनैः ।
स्नेहस्वेदनिरूहनस्यशमनस्नेहोपनाहादिक-
पानाहारविहारभेषजमिदंवातंप्रशान्तिनयेत् ॥ २७६ ॥

इति वातरोगाध्यायः ।

अर्थ—स्निग्ध, उष्ण, स्थिर, वृष्य, बलकारक, नमकीन, खट्टे और मधुरद्रव्य, तेल, धूप, स्नान, अभ्यंजन, मत्स्यमांस, मदिरा, संवाहन, उन्मर्दन, स्नेहस्वेद, निरूहण, नस्य, स्नेह और उपनाहादि, पान, आहार और विहार, यह सब वातरोगको शान्त करनेवालेहैं ॥ २७६ ॥

इति वातरोगाध्यायःसमाप्तः ।

अथ वातरक्तचिकित्सा ।

बाह्यलेपाभ्यंगसेकोपानाहैर्वातशोणितम् ।
विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गम्भीरमाचरेत् ॥ १ ॥
द्वयोर्मुञ्चेदसृक्शृंगसूच्यलाबुजलौकसा ।
देशाद्देशंव्रजेत्स्राव्यंसिराभिः प्रच्छलेनवा ॥ २ ॥
अंगग्लानौनचस्राव्यंरूक्षेवातोद्भवेतुयत् ।
पुराणायवगोधूमशालयोभोजनेमताः ॥ ३ ॥
मुद्गादियूषःसघृतोमांसंप्रातुदवैष्किरम् ।
शाकंवास्तुकवेत्राग्रसुनिषण्णादिकंहितम् ॥ ४ ॥

शस्तावातकफेकोष्णालेपाद्याःपैत्तिकेहिमाः।
दशमूलीशृतंक्षीरंसद्यःशूलनिवारणम्॥ ५॥
परिसेकोऽनिलप्रायेतद्वतकोष्णेनसर्पिषा।
क्षीरपरिसेकइतियोजनानतुपेयम्। शूलंव्यथा।
लेपोवरुणशिग्रुभ्यांशूलंहन्तिसकांजिकः॥ ६॥
गोधूमचूर्णंछगलीपयश्चसच्छागदुग्धोरुबुबीजकल्कः।
लेपेविधेयंशतधौतसर्पिःसेकेपयश्चाविकमेवशस्तम्॥७॥
अगस्तिपुष्पचूर्णेनमाहिषंजनयेत्पयः।
तदुत्थनवनीताक्तोदेहजंस्फुटनंजयेत्॥ ८॥
माहिषंनवनीतञ्चखलिगोमूत्रसैन्धवम्।
क्षीरञ्चाग्नौप्रताप्याङ्गमुद्वर्त्यस्फुटनंजयेत्॥ ९॥
लेपःपिष्टास्तिलास्तद्वद्भृष्टाःपयसिनिर्वृताः।
दुग्धेनपिष्ट्वाहिततोभृष्ट्वादुग्धेनिर्वापिताः॥ १०॥
अमृतानागरधान्यककर्षत्रितयेनपाचनंसिद्धम्।
जयतिसरक्तंवातंसामंकुष्ठान्यशेषाणि॥ ११॥
इति प्रत्येकंकर्षात्कर्षत्रितयम्।

अर्थ—बाह्यवातरक्तमें लेप, अभ्यङ्ग, जलका सेवन और उपनाह स्वेद करावे और गम्भीरवातरक्तमें विरेचन, निरूहवस्ति और स्नेहपान करावे। शींग, सुई, तोंबी और जोंकसे दोनों प्रकारके वातरक्तरोगमें रक्तमोक्षण करावे, एकही जगह रक्तमोक्षण न करावे, किन्तु शरीरकी सर्व शिराओंके प्रदेशमें जगह जगह रक्तस्राव करावे। जिसके अंगमें ग्लानि हो, जिसका शरीर रूखाहो, और जिनके वातसे वातरक्त उत्पन्न हुआ हो, उनको वातरक्तरोगमें रक्तमोक्षण नहीं कराना चाहिये। पुराने जौ, गेहूँ, और शालिधानोंका भोजन, मुद्गादिका यूष, प्रतुद और विष्किर पक्षियोंका घृतसे भूना हुआ मांस, बथुआ, बेतका अग्रभाग और शिरीआरी आदिका शाक, यह सब वातरक्तरोगमें हितकारीहैं। वातश्लैष्मिक वातरक्तरोगमें किंचित् उष्ण प्रलेपादि हितकारीहैं और पैत्तिक वातरक्तरोगमें शीतल लेपादिक हितकारीहैं। गायके

दूधमें दशमूलको पका शीतलकर पीनेसे तत्काल शूल दूर होताहै, किंचित् गरमघीमें दूध मिलाके सींचनेसे शूल दूर होताहै (यहां शूलशब्दका अर्थ वातरक्तकी पीडाकाहै) वरना और सैंजिनेकी छालको काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे वातरक्तकी वेदना दूर होतीहै। गेहूँके चूनेको बकरीके दूधमें मिलाके अथवा अरंडके बीजोंको बकरीके दूधमें पीसके, वा सौबार धुले हुए घीके लेप करनेसे, भेडके द्वारा सेक करनेसे वातरोग आराम होताहै। भैंसके दूधमें अगस्तियेका चूर्ण डालके दही जमा देवै, फिर उसहीमेंसे माखन निकालकर लेप करनेसे देहस्फुटन दूर होताहै। अथवा भैंसका माखन, खल, गोमूत्र, सैंधानोन और दूध इन सबको मिलाकर आगपै गरम करके शरीरपै उद्वर्त्तन करनेसे देहस्फुटन दूर होताहै। भुने हुए तिलोंको दूधमें पीसकर फिर दूधहीमें मिलाके लेप करनेसे, अथवा गिलोय, सोंठ और धनियाँ प्रत्येक एक एक तोले लेकर पाचन बनाके पीनेसे वातरक्त, आमवात और सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ वातशोणितोपायः।

गुडूच्याःस्वरसंकल्कंचूर्णंवाक्काथमेववा।
प्रभूतकालमासेव्यमुच्यतेवातशोणितात् ॥ १२ ॥

अर्थ-गिलोयका स्वरस कल्क, चूर्ण, अथवा क्काथ कुछेक दिवस सेवन करनेसे वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १२ ॥

अथ वातरक्तहरोपायः।

पीतःसगुग्गुलुःक्काथोगुडूच्यावातरक्तजित् ॥ १३ ॥

अर्थ-गिलोयके काढ़ेमें गूगुल मिलाके पीनेसे वातरक्तरोग दूर होताहै॥१३॥

अथामवातहरोपायः।

घृतेनवातंसगुडाविबन्धंपित्तंसिताढ्यामधुनाकफञ्च।
वातास्रमुग्रंरुबुतैलमिश्राशुंठ्यामवातंशमयेद्गुडूची ॥ १४ ॥

अर्थ-गिलोय घीके साथ, वातको, गुड़के साथ विबन्धको, खाँडके साथ पित्तको मधुके साथ कफको, अंडीके तेलके साथ और वातरक्तको, सोंठके साथ सेवन करनेसे आमवात रोगको दूर करै है ॥ १४ ॥

अथ सर्वांगवातहरोपायः।

वासागुडूचीचतुरङ्गुलानामेरण्डतैलेनपिबेत्कषायम्।

क्रमेणसर्वांगजमप्यशेषंजयेदसृग्वातभवंविकारम् ॥ १५ ॥
चतुरंगुलंशोणालुमूलम् ।

अर्थ–वासा, गिलोय और श्योनाककी जड इनका क्काथ बना अंडीके तेलके साथ पीनेसे सर्वांगवातरक्त दूर होताहै ॥ १५ ॥

अथ वातरक्तहरोपायः ।

तिस्रोथवापंचगुडेनपथ्यादग्ध्वापिबेच्छिन्नरुहाकषायम् ।
तद्वातरक्तंशमयत्युदीर्णमाजानुसंभिन्नमपिद्यवन्यम् ॥ १६ ॥

अर्थ–तीन या पांच छोटी हरडोंको गुडके साथ खाकर ऊपरसे गिलोयका क्काथ पीनेसे जानुतक स्फुटित वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १६ ॥

अथ वातरक्तहरः कल्कः ।

रुबुबीजामृताकल्कोवातास्रंहन्तिसेवितः ॥ १७ ॥

अर्थ–अरण्डके बीज और गिलोयका कल्क सेवन करनेसे वातरक्त रोग दूर होताहै ॥ १७ ॥

अथ सघृतगुडसेवनगुणाः ।

कफवातास्रवीसर्पकण्डूजित्सगुडंघृतम् ॥ १८ ॥

अर्थ–गुड और घृतको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे कफ वातरक्त, वीसर्प और कण्डूरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥

अथ पटोलादिक्काथः ।

पटोलकटु[illegible]गभीरुत्रि[illegible]धितम् ।
क्काथंपीत्वाजयेज्जन्तुःसदाहंवातशोणितम् ॥ १९

अर्थ–पटोल, कुटकी, सतावर, त्रिफला और गिलोय इनका क्काथ बनाकर पीनेसे दाहयुक्त वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १९ ॥

अथ वातरक्तहरःकल्कः ।

कटु[illegible]ह्वशुण्ठीकल्कःसमाक्षिकः ।
गो[illegible]त्रपीतोजयतिसकफंवातशोणितम् ॥ २० ॥

अर्थ–कुटकी, गिलोय, मुलैठी और सोंठ इनको सहतमें पीसकर गोमूत्रके साथ पीनेसे कफयुक्त वातरक्त दूर होताहै ॥ २० ॥

अथ व[illegible]ःकषायः ।

धात्री[illegible]स्तहरिद्राण कषायंवाकफाधिके ॥ २१ ॥

अर्थ-आमला, नागरमोथा और हलदीका क्काथ बनाकर पीनेसे कफाधिक वातरक्त दूर होताहै ॥ २१ ॥

अथ कफाधिकवातरक्तहरोपायः।

कोकिलाक्षामृताक्काथेपिबेत्कृष्णांकफाधिके।
पथ्यभोजीत्रिसप्ताहान्मुच्यतेवातशोणितात् ॥ २२ ॥

अर्थ-तालमखाना और गिलोयके काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे इक्कीस दिनोंमें कफाधिक्य वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ २२ ॥

अथ नवकार्षिकक्काथः।

त्रिफलानिंबमंजिष्ठावचाकटुकरोहिणी।
वत्सादनीदारुनिशाकषायोनवकार्षिकः ॥ २३ ॥
वातरक्तंतथाकुष्ठंपामानंरक्तमण्डलम्।
कुष्ठंकपालिकाकुष्ठंपानादेवापकर्षति ॥ २४ ॥
प्रत्येकंकर्षकम्। पञ्चरक्तिकामाषेणकर्षोग्राह्यः।

अर्थ-त्रिफला, नीम, मँजीठ, वच, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी, प्रत्येक एक एक कर्ष ले क्काथ बनाके पीनेसे वातरक्त, कोढ, पामा, रक्तमण्डलकुष्ठ और पालिकाकुष्ठरोग नष्ट होताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

अथ शतावरीगुडूचीघृते।

शतावरीरसेकल्केगुडूच्याःक्काथकल्कयोः।
तुल्यंक्षीरंघृतंसिद्धंवातासृक्कुष्ठजित्परम् ॥ २५ ॥

अर्थ-गायका घी चारसेर, गायका दूध चारसेर, सतावरका रस वा गिलोयका क्काथ चारसेर, और कल्कके लिये सतावर, गिलोय एकसेर लेवै। विधिपूर्वक दोनो घृतोंको सिद्ध करै। इस सतावरी घृत अथवा गुडूची घृतको पीनेसे वातरक्त और कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ २५ ॥

अथामृताद्यघृतम्।

अमृतायष्टिकाश्मर्यद्राक्षाब्दारग्वधामरैः।
गोक्षुरिक्षुरवृश्चीरवृद्धदारबलावृषैः ॥ २६ ॥
रास्नैरण्डवरातिक्ताभीरुपाठीकणोत्पलैः।
धात्रीरससमंसर्पिःसाधितंत्रिगुणेजल ॥ २७ ॥

गम्भीरोत्तानवातास्त्रंत्रिकजंघोरुजांरुजम् ।
हन्त्युग्रंक्रोष्टुशीर्षंचरुग्दाहंसानिलंज्वरम् ॥ २८ ॥
मेदोदावर्त्तब्रध्नादीनिदमायुर्बलप्रदम् ।
अमरंदेवदारु इक्षुरःकोकिलाक्षमूलम् ।
वृश्चीरःश्वेतपुनर्नवा । व्यक्तमन्यत् ॥

अर्थ-गायका घी चारसेर, आमलोंका रस चारसेर, जल बारह सेर और कल्कके लिये गिलोय, मुलैठी, कुम्भेर, दाख, नागरमोथा, अमलतास, देवदारु, गोखुरू, तालमखाना, सोंठ, विधारा, खिरैंटी, अडूसा, रास्ना, अरण्ड, त्रिफला, कुटकी, सतावर, सोंठ, पीपल और कमल, यह सब एकसेर लेवे, फिर विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै । इस घृतको सेवन करनेसे-गम्भीर और उत्तानवातरक्त, त्रिक और जंघाकी वेदना, अत्यन्त उग्र क्रोष्टुशीर्षवात, रुग्दाह, सन्निपात, वातज्वर, मेदरोग, उदावर्त्त और ब्रध्नादि रोग दूर होते हैं, तथा बल और आयु बढतीहैं ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथ गुडूच्यादितैलत्रयम् ।

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यांतैलंद्राक्षारसेनवा ॥ २९ ॥
सिद्धंमधुककाश्मर्यरसैर्वावातरक्तजित् ॥ ३० ॥
गुडूचीक्वाथदुग्धाभ्यामितिचक्रेपाठान्तरम् ।

अर्थ-गिलोयके क्वाथ अथवा कल्कमें तेलको पकाकर, या दाखके रसमें तेलको पकाकर अथवा महुआ और कुम्भेरके रसमें पकाकर सेवन करनेसे वातरक्त रोग दूर होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

अथ खुड्डाकपद्मकतैलम् ।

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैःसर्जमञ्जिष्ठावीराकाकोलिचंदनैः ॥ ३१ ॥
खुड्डाकपद्मकमिदंतैलंवातास्रदाहनुत् ॥ ३२ ॥

अर्थ-तिलोंका तेल एकसेर, कल्कके लिये राल, मँजीठ, सतावर, काकोली और लालचंदन एकसेर और पद्माख, खस, मुलैठी और हलदीका क्वाथ सोलह सेर लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाके तेलको सिद्ध करै । इसको खुड्डाकपद्मक तैल कहतेहैं । इसको सेवन करनेसे वातरक्त और दाह दूर होताहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथ गुडूचीतैलम्।

तुलांपचेज्जलद्रोणेगुडूच्याःपादशेषितम् ॥ ३३ ॥
क्षीरद्रोणन्तुताभ्याञ्चपचेत्तैलाढकंशनैः ॥ ३४ ॥
कल्कैर्मधुकमंजिष्ठाजीवनीयगणस्तथा।
कुष्ठैलागुरुमृद्वीकामांसीव्याघ्र[illegible] ॥ ३५ ॥
हरेणुंश्रावणीव्योषंशताह्वाशृंगिशारिवे।
त्वक्पत्राज्र्जुनविक्रान्तास्थिराताामलकीतथा ॥ ३६ ॥
नतंह्रीबेरकेशरंपद्मकोत्पलचन्दनम्।
सिद्धंकर्षसमैर्भागैःपानाभ्यामनुवासनैः ॥ ३७ ॥
सेव्यंवातस्रजोहन्तिसर्वधात्वन्तराश्रयाः।
स्वेदकण्डू[illegible]जायासशिरःकंपामयार्दितः ॥ ३८ ॥
हन्याद्व्रणकृतान्दोषान्गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥ ३९ ॥

अर्थ–तिलोंकातेल आठसेर, कल्कके लिये मुलैठी, मँजीठ, जीवनीयगणकी सम्पूर्ण औषधि, कूट, इलायची, अगर, दाख, बालछड़, व्याघ्रनखी, नखी, रेणुका, गोरखमुण्डी, त्रिकुटा, सोंठ, काकडाशिंगी, शारिवा, दालचीनी, तेजपात, अर्जुन, मूषाकानी, सालपर्णी, भुईआमला, तगर, नागकेशर, सुगंधबाला, पद्माख, कमल और चंदन, प्रत्येक दो दो तोले लेवै, गायका दूध बत्तीस सेर और क्वाथके लिये गिलोय साढेबारह सेर, शेष सोलहसेर। सबको एकत्र कर तेलको सिद्ध करै। इसको पान, मालिश और अनुवासनके द्वारा व्यवहार करनेसे–सर्वधातुओंमें स्थित वातरक्त· पसीना, खुजली, पीडा, दोषप्रकारका आयास, शिरःकम्प, [illegible]र्दितवात और व्रण आदिसे उत्पन्न हुए बिकार दूर होतेहैं, यह गुडूचीतैल अत्यन्त उत्तम है ॥ ३३–३९ ॥

अथ शतावरीतैलम्।

शतंपक्त्वाशतावर्याजलद्रोणावशेषितम्।
[illegible]स्राव्यविपचेत्तैलंक्षीरं[illegible]त्वाचतुर्गुणम् ॥ ४० ॥
कल्कै[illegible]णालशालूकविषकिंजल्कमालती।
पुष्पैर्ह्रीबेरमधुकशारिवापद्मकेशरैः ॥ ४१ ॥

मेदापुनर्नवाद्राक्षामंजिष्ठाबृहतीद्वयम् ।
गंधकस्यचमूलानिमूलंसहचरस्यच ॥ ४२ ॥
अश्वगंधाचाबिल्वञ्चश्वदंष्ट्रात्रिकटुस्तथा ।
[illegible]थ्यमूलमेतेषांयस्मिंस्तैलेविनिक्षिपेत् ॥ ४३ ॥
शतपुष्पादेवदारुमांसीशैलेयकंबले ।
चंदनंतगरं[illegible]ष्ठमेलाचांशुमतीवचा ॥ ४४ ॥
वृद्धदारककाकोलीमेदामधुकमुत्पलम् ।
सर्वमेतत्समं[illegible]रक्षसमन्वितैः ॥ ४५ ॥
पानेबस्तौतथाभ्यंगेनस्येचैवप्रदापयेत् ।
अंगशूलंशिरःशूलंमेहदण्डापतानकम् ॥ ४६ ॥
वातरक्तंसदाहञ्चवातपित्तादिकंमदम् ।
शोथपाण्ड्वामयप्लीहकामलागरगृध्रसी ॥ ४७ ॥
योनिशूलंत्वसृग्दोषमाध्मानेविनिहन्तिच ।
क्षीणशुक्रौजसांपुंसांशस्तंवन्ध्याशुभप्रदम् ॥ ४८ ॥
शतावरीतैलमिदंकृष्णात्रेयेणपूजितम् ॥ ४९ ॥

अर्थ–तिलोंकातेल सोलहसेर, गायका दूध चौंसठ सेर क्काथके लिये शतावर साढेबारहसेर, जल चौंसठसेर, शेष सोलह सेर रक्खे। मृणाल (कमलकी डंडी) शालूक (भसींडे) कमलकी केशर, [illegible] फूल, सुगंधबाला, मुलैठी, सारिवा, कमल, नागकेशर, मेदा, पुनर्नवा, दाख, मँजीठ, कटाई, कटेरी, [illegible]रण्डकीजड, कटसरैयाकी जड, असगंध, बेल, गोखुरू और त्रिकुटा, प्रत्येकका क्काथ दो दो तोले लेवै और कल्कके लिये सौंफ, देवदारु, बालछड, भूरिछरीला, खिरैंटी, गंगेरन, लालचंदन, कूठ, इलायची, पिठवन, बच, विधारा, काकोली, मेदा, महुएके फूल और कुमुद प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबको मिलाकर तेल सिद्ध करै। इसको पान, वस्तिकर्म्म, अभ्यंग और नस्यकर्मके द्वारा प्रयोग करनेसे–अंगशूल, शिरःशूल, प्रमेह, दंडापतानक, वातरक्त, दाह, वातपित्तादिक मद, सूजन, पाण्डुरोग, प्लीहा, कामला, विषदोष, गृध्रसीवात, योनिशूल, रुधिरविकार और आध्मानरोग दूर होताहै। यह तेल क्षीणशुक्र और क्षीण ओज-

वाले मनुष्योंको परमहितकारीहै और वन्ध्या स्त्रियोंको कल्याणप्रदायकहै । यह सतावरीतेल श्रीकृष्ण और आत्रेयकरके पूजितहै ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

अथ कामलकावटिका ।

अंकोटमूलंत्रिफलाकुण्डलीमरिचंनिशा ।
सप्तच्छदाकुटीकुष्टंप्रत्येकंकार्षिकंभवेत् ॥ ५० ॥
विडंगमुस्तकंकाचंतालकंटंकणंत्रिवृत् ।
रसगंधकलोहानांप्रत्येकार्द्धंपलंक्षिपेत् ॥ ५१ ॥
गुग्गुलुंत्रिपलंदत्त्वाघृतेनपरिपेषितम् ।
वटीकामलकानामगहनानन्दभाषिता ॥ ५२ ॥
चतुर्माषावटीखाद्यागोमूत्रेणजडीकृता ।
वातरक्तंनिहन्त्याशुनानादोषसमुद्भवम् ॥ ५३ ॥
कुष्टंनानाविधंहन्तिनानादोषसमुद्भवम् ।
दद्रुकण्डूविचर्चेश्चव्रणार्शोगंडमालिका ॥ ५४ ॥
भगंदरोपदंशाश्चविद्रधिंगर्दभार्बुदे ।
श्लीपदंशोथशूलानिकासश्वासमरोचकम् ॥ ५५ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलामेहमेदोगलामयान् ।
जीर्णज्वरमानाहश्चपांड्वादित्रितयंजयेत् ॥ ५६ ॥
संग्रहग्रहणींदुष्टांबलवर्णाग्निवर्द्धनीम् ॥ ५७ ॥

अर्थ—अंकोटकी जड, त्रिफला, गिलोय, कालीमिरच, हलदी, सतोना, कपूरकचरी और कूठ यह प्रत्येक औषधि एक एक तोले, वायबिडंग नागरमोथा, कांच, हरिताल, सुहागा, निसोत, पारा, गंधक और लोहा यह प्रत्येक दो दो तोले और गूगुल चौवीस तोले लेवै, सब द्रव्योंको एकत्र घीके साथ पीस कर गोमूत्रमें चार चार मासेकी गोली बनालेवै, यह कामलकानामवाली वटी गहनानन्दने कहीहै । प्रतिदिन एकगोलीखानेसे—शीघ्रही अनेकप्रकारके दोषोंसे उत्पन्न हुवा वातरक्त, नानाप्रकारके कोढ़ और दाह, कण्डू, विचर्चिका, व्रण, बवासीर गंडमाला, भगंदर, उपदंश, विद्रधि, जालगर्दभकरोग, अर्बुद, श्लीपद, सूजन,

शूल, खाँसी, श्वास, अरुचि, प्लीहा, गुल्मरोग, उदररोग, आष्ठीला, प्रमेह, मेद-रोग, गलरोग, जीर्णज्वर, आनाह, पाण्ड्वादिरोग और दुष्ट संग्रहणीरोग दूर होताहै, तथा बल, वर्ण और जठराग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

अथ पिण्डतैलम् ।

मधूच्छिष्टंसमंजिष्ठंससर्जरसशारिवम् ।
पिण्डतैलंतदभ्यंगाद्वातरक्तरुजापहम् ॥ ५८ ॥

अर्थ—मोम, मँजीठ, राल और सारिवा, इनका तेल सिद्धकर मालिश करनेसे वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ ५८ ॥

अथ शारिवाद्यंतैलम् ।

शारिवारिष्टकूष्माण्डपोतकीभस्मजाऽम्बुना ।
गुडूचीक्काथदुग्धंचकम्मेरङ्गरसेनच ॥ ५९ ॥
पचेत्तैलश्चतिलजंदत्त्वैतानिभिषग्वरः ।
काकोल्यौजीरकंमेदेशताह्वाक्षीरिणीयुतैः ॥ ६० ॥
जिङ्गीसिक्थामृतानन्तासर्जसैन्धवचन्दनैः ।
षड्गुंजाधिकचतुर्मासंकर्षद्वितयसंयुतम् ॥ ६१ ॥
हन्तिवातास्रजंघोरंस्फुटितंगलितन्तथा ।
चर्मदलश्चपामानंत्वग्दोषश्चविपादिकाम् ॥ ६२ ॥
कुष्ठान्यर्शांसिवीसर्पव्रणशोथभगन्दरान् ।
नसोऽस्तिवातरक्तस्यविकारोयंनहन्तिच ॥ ६३ ॥

अर्थ—तिलका तेल चारसेर, सारिवा, नीम, कुम्हडा और पोईकी क्षारका जल चारसेर, गिलोयका क्वाथ चारसेर, गायका दूध चारसेर, कमरखोंका रस चारसेर और कल्कके लिये मँजीठ, मोम, जीरा, मेदा, महामेदा, खिरनी, काकोली, क्षीरकाकोली, गिलोय, सारिवा, राल, सैंधानोन और लालचन्दन, यह प्रत्येक तीन कर्ष चार मासे और छे रत्ती लेवे । सवको विधिपूर्वक तेलको सिद्ध करै । यह तेल-वातरक्त, घोर स्फुटित और गलितरोग, चर्म-दलकुष्ठ, पामारोग, त्वचाके विकार, विपादिका, सर्वप्रकारके कुष्ठ, बवासीर, वीसर्प, व्रण, सूजन और भगन्दररोगको दूर करैहै, ऐसा कोई भी वातरक्त

विकार नहीं है जिसको यह २ रिवादितैल दूर नहीं करसक्ता ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

अथ वातरक्तान्तकोरसः ।

लोहंफलत्रिकंचैवशाणमानंसमाहरेत् ।
षट्शाणंबाकुचीबीजंयत्नतः परिकल्पयेत् ॥ ६४ ॥
त्रिवृच्चित्रकमूलञ्चशाणंशाणंसमाहरेत् ।
शुण्ठीशाणत्रयंदद्याच्छाणैकंपिप्पलींतथा ॥ ६५ ॥
तोलद्वयंगुडूच्याश्चतथापौनर्नवंदलम् ।
तथावासकवल्कञ्चमुस्तंशाणद्वयंतथा ॥ ६६ ॥
शाणद्वयंघोषावतीफलंदद्याद्भिषग्वरः ।
पिष्ट्वैकत्रजलंदत्त्वाशुष्कंभक्षेत्प्रयत्नतः ॥ ६७ ॥
मासमेकंप्रयोगेणप्रातःकालेदिनेदिने ।
मधुनालेहपिष्टञ्चवातरक्तंविनाशयेत् ॥ ६८ ॥
गम्भीरंद्वन्द्वजंचैवत्रिदोषजमथापिवा ।
नाशयेन्नात्रसंदेहःसर्वकुष्ठंतथैवच ॥ ६९ ॥
वातरक्तान्तकोनामप्रयोगोमुनिसम्मतः ॥ ७० ॥

अर्थ–लोहा और त्रिफला प्रत्येक चारमासे, बाकुचीके बीज तीन तोले, निसोथ, चीता, प्रत्येक चार चार मासे, सोंठ बारहमासे, पीपल चारमासे, गिलोय, पुनर्नवा और अडूसेकी छाल प्रत्येक दो दो तोले, नागरमोथा एक-तोला और कडवी तोरइयोंके बीज एक तोलाभर लेवै, सबको एकत्रकर पानी डालके पीसलेवै, फिर इसके सूखजानेपर इसमें सहत मिलाके प्रति-दिन प्रातःकाल चाटै, इसप्रकार एकमास चाटनेसे वातरक्त, गम्भीर द्वन्द्वज और त्रिदोषवातरक्त तथा सर्वप्रकारके कोढ दूर होतेहैं, इसको वातरक्तान्तक रस कहतेहैं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथ कैशोरकगुग्गुलुः ।

वरमहिषलोचनोदरसन्निभवर्णस्यगुग्गुलोःप्रस्थम् ।
प्रस्थद्वयंगुडूच्यास्त्रिफलायाः पृथगपिप्रस्थम् ॥ ७१ ॥

पक्त्वाशताढकजलेशेषितमर्द्धंपचेत्पश्चात्।
दत्त्वापिण्डितगुग्गुलुमस्मिन्गुडवत्साधितेशीते ॥ ७२ ॥
त्रिफलात्रिकटुविडंगंपृथक्पलार्द्धंगुडूच्याश्च।
कर्षंकर्षंत्रिवृतादन्त्योःसंचूर्ण्यनिक्षिपेत्तदनु ॥ ७३ ॥
जलोष्णाद्यनुपानंभेषजमुपयुज्ययंत्रणाहीनः।
वातास्रंहन्त्यखिलंस्रुतशुष्कंस्फुटितमागतंजानु ॥ ७४ ॥
व्रणकासगुल्मश्वयथूदररोगपाण्डुप्रमेहांश्च।
मंदाग्नित्वविबन्धंप्रमेहविट्कांश्चनाशयत्याशु ॥ ७५ ॥
सततंनिषेव्यमाणःकालवशाद्धन्तिगदान्।
अभिभूयजरादोषंयातिचकैशोरकंरूपम् ॥ ७६ ॥
किशोरस्तरुणस्तस्यरूपम्।

अर्थ—उत्तमभैंसागूगुल एकप्रस्थ, गिलोय दो प्रस्थ, और त्रिफला एकप्रस्थ लेकर एकसौ आढक जलमें पकावे, जब जल पचास आढक शेष रहै तब उतारकर छानलेवे, फिर इसमें उक्त औटेहुए गूगुलको छोडकर गुडकी समान पकावे, पश्चात् शीतल होनेपर त्रिकुटा, त्रिफला और बायविडंग, इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले, गिलोय, निसोथ और दन्ती, प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोले मिला देवे। इसको उष्णजलके साथ सेवल करे तो सर्वप्रकारके वातरक्त, स्रुत, शुष्क, स्फुटित और जानुतक आयाहुवा वातरक्त, व्रण, खाँसी, गुल्म, सूजन, उदररोग, पाण्डुरोग, प्रमेह, मन्दाग्नि, विबन्ध, प्रमेहपिडिका, यह सब दूर होवें इसको निरंतर सेवनकरनेसे यह कैशोरगूगुल जरादोषको दूर करके मनुष्यको किशोरअवस्थावाले मनुष्योंकी समान रूपवान् करदेताहै ॥७१–७६॥

अथ अमृतागुग्गुलुः।

प्रस्थंगुडूच्याःप्रस्थार्द्धंप्रत्येकंत्रिफलापुरम्।
पक्त्वाद्रोणेऽम्भसःशिष्टेपाकार्द्धनेततःक्षिपेत् ॥ ७७ ॥
कोष्णेदन्त्यमृताव्योषविडंगत्रिफलारजः।
प्रत्येकमर्द्धपलिकंत्रिवृच्चूर्णञ्चकार्षिकम् ॥ ७८ ॥

वातास्रेकुष्ठमेहार्शऊरुस्तम्भंभगन्दरान् ।
आमवातंव्रणंशोथममृतागुग्गुलुर्जयेत् ॥ ७९ ॥

अर्थ–गिलोय दोसेर, त्रिफला और गूगुल प्रत्येक सेर सेर भर लेवे, सबको एकद्रोण जलमें औटावे जब आधाभाग जल शेष रहे तब उतार लेवे, पश्चात् इसको छानकर दूसरीबार पकावे, गाढा होजानेपर किंचित् उष्णमें दन्ती, गिलोय त्रिकुटा, बायबिडंग और त्रिफला प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले ले,और निसोथका चूर्ण एक तोला मिलादेवे। इसको अमृतागुग्गुलु कहतेहैं. यह वातरक्त. कोढ, प्रमेह, ऊरुस्तम्भ, भगंदर, आमवात. व्रण और सूजनको हरे है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

अथ योगसारामृतः ।

शतावरीनागबलावृद्धदारकमुच्चटा ।
पुनर्नवामृताकृष्णावाजिगंधात्रिकण्टकम् ॥ ८० ॥
पृथक्दशपलान्येषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
सर्पिष्प्रस्थमाढकार्द्धंक्षौद्रंचूर्णार्द्धशर्करा ॥ ८१ ॥
पृथक्त्रिजातकपलंदत्त्वामर्द्यंचभक्षितम ।
वातासृक्क्षयकुष्ठासृक्पित्तमन्यांस्तथागदान् ॥ ८२ ॥
हत्वाकरोतिपुरुषंवलीपलितवर्जितम् ।
योगसारामृतोनामलक्ष्मीकान्तिविवर्द्धनः ॥ ८३ ॥
उच्चटारक्तगुञ्जाश्रेष्ठत्वान्मिलितचूर्णार्द्धसमाशर्करा ।

अर्थ–शतावर, गंगेरन, विधारा, सफेद चोंटलीकी जड, पुनर्नवा, गिलोय. पीपल, असगंध और गोखुरू प्रत्येक चालीस चालीस तोले लेकर सबका बारीक चूर्ण करले। घृत दोसेर, सहत चारसेर और सब चूर्णसे आधी मिश्री. दालचीनी, इलायची और तेजपात, प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले लेवे, सबको एकत्र कर खूब मर्दन करे। इसको भक्षणकरनेसे वातरक्त, क्षय, कोढ, रक्तपित्त तथा अन्यान्यरोग दूर होते हैं, तथा मनुष्य वलीपलितरहित होजातेहैं। यह योगसारामृत–लक्ष्मी और कान्तिको बढानेवाला है ॥ ८०–८३ ॥

अथ स्वायंभुवोगुग्गुलुः ।

अलम्बुषालोहचूर्णमयोर्द्धपलेपृथक् ॥
पलत्रयंचताप्यस्यत्राकुच्याश्चपलत्रयम् ॥ ८४ ॥
शिलाजतुतयोस्तुल्यंपलानिदशगुग्गुलोः ॥
सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्यगुटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ८५ ॥
शाणंकर्पार्द्धकर्षंवाततःखादेत्प्रयत्नतः ॥
वातरक्तानिकुष्टानिश्वित्राणिविविधानिच ॥ ८६ ॥
भगन्दरान्दुष्टव्रणान्ग्रहणीश्चव्रणन्तथा ॥
बस्तिजान्गुदजान्दोषान्पाण्डुतामुदराणिच ॥ ८७ ॥
शोथश्लीपदमानाहंयक्ष्माणश्चविशेपतः ॥
नाडीव्रणान्निहन्त्याशुअंत्रवृद्धिञ्चविद्रधीन् ॥ ८८ ॥
वृष्योबल्यश्चकेश्यश्चमेधाग्निबलवर्द्धनः ।
आयुर्वर्णकरस्त्वच्यःपुत्रसौभाग्यदस्तथा ॥ ८९ ॥
भग्नसंधानकृत्प्रोक्तोगृध्रदृष्टिकरःपरः ।
जालपादेनविख्यातोनाम्नास्वायंभुवोभुवि ॥ ९० ॥

अर्थ—गोरखमुंडी और लोहेका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोले, सोनामाखी और बाकुचीके बीज तीन तीन पल, शिलाजीत छे पल, और गूगुल दश पल लेवे, सबको एकत्र पीसकर गोली बनालेवे । इसको चारमासे अथवा एक तोला वा दो तोलेभर यत्नपूर्वक भक्षण करे तो वातरक्त, कोढ़, श्वित्रकोढ़, नानाप्रकारके कोढ़, भगन्दर, दुष्टव्रण, संग्रहणी, व्रण, बस्तिरोग, गुदारोग, पाण्डुता, उदररोग सूजन, श्लीपद, आनाह, राजयक्ष्मा, नाडीव्रण, अन्त्रवृद्धि और विद्रधिरोग दूर होताहै । यह स्वायम्भुव गूगुल वीर्यवर्द्धक, बलकारक, केशोंको हितकारी, मेधा, अग्नि और बलको बढानेवाला, आयुको बढानेवाला, वर्णको सुन्दरकरनेवाला, त्वचाको हितकारी, पुत्र और सौभाग्यताको देनेवाला, भग्नसन्धानकारक, गृध्र-की समान दृष्टि करनेवाला, यह स्वायम्भुव नामवाला गूगुल, पृथ्वीपर जाल-पादमुनिने प्रकाशित कियाहै ॥८४॥ ८५॥ ८६ ॥ ८७॥ ८८ ॥ ८९ ॥९०॥

अथ काकोल्यादिघृतम् ।

काकोलियुग्ममधुकंसाशिवाचधात्री
जीवन्तिमेद[illegible]गल वपिपृश्निपर्ण्यौं ।
द्राक्षासपद्मकतुगाचकुलीरशृंगी
द्वौजीरकावपिसमस्तचतुष्पलाधिकम् ॥ ९१ ॥
यष्टिंविचूर्ण्यविपचेच्चशनैर्घटेऽपां
प्रस्थंमृतस्यचतथास्वरसंगुडूच्याः ॥ ९२ ॥
घृतस्यपादंपुरमेवदत्वापुनः पचेद्वैद्यवरोविधिज्ञः ॥
कृत्वाविरेकंवमनञ्चपश्चाद्यथानुपानंसुदिनेप्रयुज्यात् ९३
व तरक्तंमहाघोरंद्वन्द्वजंसर्वजन्तथा ।
आमवातञ्चवातञ्चनाशयेन्नात्रसंशयः ।
काकोल्यादिघृतंह्येतद्बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ ९४ ॥
वृष्यंरसायनंमेध्यंवातरक्तान्तकंविदुः ।
वातरक्तगजेन्द्रायकेसरीमुनिनिर्म्मितः ॥ ९५ ॥

अर्थ—काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी, हरड, आमला, जीवन्ती, मेदा, महामेदा, पृश्निपर्णी, दाख, पद्माख, काकडासिंगी, सफेदजीरा और कालाजीरा प्रत्येक चार चार पल लेकर सबका बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इसचूर्णको बत्तीस सेर जलमें पकावे, फिर छानकर दूसरी बार पकावे, जब पकते पकते गाढा पडजावे तब दो सेर गिलोयका रस, दोसेर घी और आधासेर गूगुल डालकर आलोडनकरै । तदनंतर विरेचन और वमन कराकर शुभदिनमें यथानुपानके साथ इस काकोल्यादि घृतको देवे । यह काकोल्यादिघृत—महाघोरवातरक्त, द्वन्द्वज, सर्वज आमवात और वातको दूर करैहै । यह काकोल्यादिघृत—बल, वर्ण और अग्निको बढानेवालाहै, वीर्यवर्द्धक, रसायन, मेधाजनक और वातरक्तका अंतकारकहै । यह वातरक्तरूपी गजेन्द्रके लिये सिंहस्वरूपहै ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

अथ वातरक्तान्तकोरसः ।

गंधकंपारदंलौहंघनतालंमनःशिला ।
शिलाजतुपुरं[illegible]द्धंसम[illegible]गं[illegible]र्णयेत् ॥ ९६ ॥

विडंगंत्रिफलाव्योषमब्धिफेनंपुनर्नवा।
देवदारुंचित्रकञ्चदार्वीश्वेतापराजिता॥ ९७ ॥
चूर्णमेषांपृथक्तुल्यंसर्वमेकत्रकारयेत्।
त्रिफलाभृंगराजस्यरसेनैवात्रिधात्रिधा॥ ९८ ॥
भावनाखलुदातव्याततःसंचूर्ण्यभक्षयेत्।
मधुनामाषमात्रञ्चप्रातःकालेदिनेदिने॥ ९९ ॥
कृत्वाऽनुपानंनिम्बस्यपत्रंपुष्पंत्वचंसमम्।
शाणमात्रंघृतैःकुर्यात्सर्ववातविकारनुत॥ १०० ॥
वातरक्तंमहाघोरंगंभीरंसर्वजंजयेत्
सर्वोपद्रवसंयुक्तंसाध्यासाध्यंनिहन्त्यलम्॥ १०१ ॥

अर्थ—गंधक, पारा, लोहा, अभ्रक, हरिताल, मैनशिल, समानभाग लेकर सबका चूर्ण अलग अलग करके पश्चात् एकत्र करलेवे, फिर शुद्ध शिलाजीत, बायबिडंग, त्रिफला, त्रिकुटा, समुद्रफेन, पुनर्नवा, देवदारु, चीता, दारुहलदी और सफेदकोयल, इन सबको समान भाग ले, सबका अलग अलग चूर्णकर पश्चात् सबको एकत्र कर त्रिफला और भांगरेके रसकी तीन तीन भावनादेवें, फिर चूरनकर सहतके साथ एक मासेभर प्रतिदिन प्रातःकाल सेवनकरै और ऊपरसे नीमके पत्र, फूल और छालको घीमें पीसकर चारमासे भर भक्षण करे तो सर्वप्रकारके वातविकार, वातरक्त, महाघोरवातरक्त, गम्भीरवातरक्त, सर्वजवातरक्त, सर्वोपद्रवसंयुक्त वातरक्त और साध्य तथा असाध्य वातरक्त दूर होवै॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

अथ वज्रगुग्गुलुः।

त्रिकटुत्रिफलादन्तीचित्रकंत्रिवृताशठी।
विडंगमुस्तकंरात्रिबाकुचीन्द्रयवंवचा॥ १०२ ॥
अंकोठमूलंकुष्ठञ्चराजवृक्षस्यमूलकम्।
एतेषांपलिकंग्राह्यंतत्समंगुग्गुलुंगुरु॥ १०३ ॥
भल्लाततैलंद्विपलंगोघृतेनजडीकृतम्।
तत्रताम्र[illegible]रितालंद्वयोःकुर्यात्पलद्वयम्॥ १०४ ॥

सर्वमेकीकृतंयत्नात्पेषयित्वासुपिण्डकम् ।
घृतभाण्डेतुसंस्थाप्यखादेन्मासचतुष्टयम् ॥ १०५ ॥
गुग्गुलुर्वज्रनामायंगहनानन्दभाषितः ।
देशकालवयोवह्निंदृष्ट्वावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ १०६ ॥
वातरक्तंनिहन्त्याशुनानादोषसमुद्भवम् ।
श्लीपदंशोथशूलानिमेहमेदोगलामयान् ॥ १०७ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाकासश्वासमरोचकम् ।
जीर्णज्वरश्चसानाहंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ १०८ ॥
संग्रहग्रहणींदुष्टांपाण्ड्वादित्रितयंजयेत् ॥ १०९ ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, दन्ती, चीता, निसोथ, कचूर, बायबिडंग, नागरमोथा, हलदी, बापची, इन्द्रजौ, वच, अंकोटकी, जड़, कूठ, अमलतासकी जड, यह प्रत्येक चार चार तोले, और सबकी समान गूगुल भिलावेका तेल दो पल, गायका घी दोपल लेवे, सबको एकत्र कर यत्नपूर्वक पीसके गोला बनालेवे, इसको घीके चिकने बासनमें स्थापनकर देशकाल, अवस्था और अग्निका बलाबल देखकर प्रतिदिन चार चार मासे खावे। यह वज्रगुग्गुलु श्रीमान् गहनानन्दने भाषण कियाहै। यह गूगुल नानाप्रकारके दोषोंसे उत्पन्न हुआ वातरक्तरोग, श्लीपद रोग, सूजन, शूल, प्रमेह, मेदरोग, गलरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, खांसी, श्वास, अरुचि, जीर्णज्वर, आनाह, दुष्टसंग्रहणी और पांड्वादि तीनों रोगोंको दूर करेहै, तथा बल, वर्ण और अग्निको बढावे है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७॥१०८॥१०९॥

अथ त्रिनेत्रारसः ।

गरुत्मान्दरदस्तीक्ष्णंस्वर्णाह्वावंगशक्तिका ।
शुल्बश्चगगनंफेनंरुधिरश्चत्रिनेत्रकम् ॥ ११० ॥
पातालनृपतिश्चैववह्निमूलश्चरामठम् ।
त्रिकटुत्रिफलाशिग्रुचाजमोदायवानिका ॥ १११ ॥
पिप्पलीमूलभार्ङ्गीचलशुनंजीरकद्वयम् ।
आर्द्रकस्यरसेनैवगुटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ११२ ॥

मन्दानलामवातघ्नंश्लेष्माणश्चजलोदरम् ।
अशीतिर्वातजान्रोगान्प्रमेहांश्चैवविंशतिम् ॥ ११३ ॥
घ्राणाक्षिकर्णजिह्वानांगदश्चैवत्रिदोषजम् ।
गलिताङ्गंवातरक्तंसर्वमेतद्व्यपोहति ॥ ११४ ॥

अर्थ—सोनामाखी, सिंग्रफ, लोहा, स्वर्णक्षीरी, वंग, गंधक, तांबा, अभ्रक, समुद्रफेन, गेरू, सोना, सीसा, चीतेकीजड, हींग, त्रिकुटा, त्रिफला, सोंजिना, अजमोद, अजवायन, पीपरामूल, भारंगी, लहशुन, जीरा और कालाजीरा, इन सबको अदरखके रसमें खरलकरके गोली बनालेवे। इन गोलियोंको सेवनकरनेसे—मन्दाग्नि, आमवात, कफ, जलोदर, अस्सीप्रकारके वातरोग, बीसप्रकारके प्रमेह रोग त्रिदोषज नासिका नेत्र कर्ण और जिह्वारोग, गलितांग और वातरक्तरोग दूर होता है ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

अथ लांगलाद्यंलौहम् ।

विमर्द्ययत्नतःपच्याद्गुटिकाकोलसम्मिता ।
लाङ्गल्यामूलमुद्धृत्यत्रिफलात्रिकटुकामृता ॥ ११५ ॥
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यंलोहचूर्णंनियोजयेत् ।
मातुलुंगरसेनैवत्रिफलायारसेनच ॥ ११६ ॥
भक्षयेन्मधुनासार्द्धंशृणुकुर्वन्तियत्फलम् ।
पादस्फोटंमहाघोरंसर्वगात्रस्यस्फोटनम् ॥ ११७ ॥
तत्सर्वंनाशयत्याशुसाध्यासाध्यञ्चशोणितम् ११८ ॥

अर्थ—कलिहारीकी जड़, त्रिफला, त्रिकुटा, गिलोय, दाख, गूगल, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवे, सब एकत्रकर बिजौरे नीबूके और त्रिफलेके रसमें खरल करके बेरकी बराबर गोली बनालेवे। इन गोलियोंको सहतके साथ सेवन करे, इससे महाघोर पादस्फोट, सर्वअंगस्फोटन और साध्यासाध्य वातरक्त रोग दूर होताहै ॥ ११५—११८ ॥

अथ गुडूच्याद्यंलौहम् ।

गुडूचीसारसंयुक्तंत्रिकत्रयसमान्वितम् ।
वातरक्तंनिहन्त्याशुसर्वरोगहरोपिसन् ॥ ११९ ॥
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णंग्राह्यम् ।

इतिवातरक्ताध्यायः।

अर्थ—गिलोयका सार, त्रिफला, त्रिकुटा, नागरमोथा, चीता, बायबिडंग यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै, सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे वातरक्तादि संपूर्ण रोग दूर होतेहैं ॥ ११९ ॥

इति वातरक्ताधिकारःसमाप्तः ।

अथोरुस्तम्भचिकित्सा ।

ऊरुस्तम्भेविधिःकार्योवातकोपीकफापहः ।
युक्त्याजित्वाकफंरूक्षैःपश्चाद्वातंजयेद्भिषक् ॥ १ ॥

अर्थ—ऊरुस्तम्भरोगमें वातको कुपित करनेवाली और कफनाशकविधि करनी चाहिये। प्रथम रूक्ष क्रियाओंके द्वारा यत्नपूर्वक कफको जीतकर पश्चात वातको जीतै ॥ १ ॥

अथोरुस्तम्भोपायाः।

पुराणशालिश्यामाकयवकोद्रवमोदनम् ।
अघृतैर्जाङ्गलैर्मांसैस्तथाचालवणैर्हितम् ॥ २ ॥
वास्तुकंवायसीनिम्बवेत्राग्रकुलकादिभिः ।
शुष्कमूलकयूषेणपटोलस्यरसेनवा ॥ ३ ॥
कफक्षयार्थंव्यायामेष्वेनंशक्येपुयोजयेत् ।
स्थानान्याक्रामयेत्प्रातःप्रतिस्रोतोनदीन्तरेत् ॥ ४ ॥
लिम्पेदूरुग्रहंमूत्रकरञ्जफलसर्षपैः ।
क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकागजपिप्पलीः ॥ ५ ॥
त्वक्पत्रफलमूलानिकरञ्जात्सर्षपस्तथा ।
प्रलेपोद्वर्त्तनंपिष्टामूत्रेणोरुग्रहापहम् ॥ ६ ॥
शिलाजतुगुग्गुलुंवापिप्पलींवाथनागरम् ।
ऊरुस्तम्भेपिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेनवा ॥ ७ ॥
भल्लातकामृताशुण्ठीदारुपथ्यापुनर्नवा ।
पंचमूलीद्वयोन्मिश्राऊरुस्तम्भनिबर्हणाः ॥ ८ ॥

क्काथेन ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंभल्लातक्काथएववा ।
कल्कोवासमधुर्देयऊरुस्तम्भविनाशनः ॥ ९ ॥
दारुचव्याग्निपथ्यानांकल्कंचमधुनालिहेत् ।
त्रिफलाचव्यकटुकंग्रन्थिकंमधुनालिहेत् ॥ १० ॥
लिह्याद्वात्रिफलाचूर्णंक्षौद्रेणकटुकायुतम् ।
सुखाम्बुनापिबेद्वापिचूर्णंषड्धरणंनरः ॥ ११ ॥
कटुकेनत्रिकटुकेनयुतंकिंवाकटुकंकटुकी ॥

इति षड्धरणं वातोक्तमत्र ।

अर्थ–पुराने शालिधान, समा, जव और कोदोंकाभात, घृत और लवणरहित जांगलदेशके जीवोंका मांस, बथुआ, मकोय, नीम, बेतकी कोंपल, परवल, और सूखीमूलीका यूष, तथा परवलका रस भोजनार्थ देवे । कफको दूर करनेके लिये बलवान् रोगीको व्यायाम, पथभ्रमण करावे. और प्रातःकाल प्रवाहवाली नदियोंमें तिरावे । करंजके फल और सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर, अथवा सहत सरसों, बांबीकी माटी, और गजपीपलको गोमूत्रमें पीसकर अथवा करंजकी छाल, पत्र, फल, मूल और सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप तथा उबटन करनेसे ऊरुग्रहरोग दूर होताहै । शिलाजीत और गूगल वा पीपल अथवा सोंठको गोमूत्रके या दशमूलके क्वाथके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै । पीपल, पीपरामूल और भिलावेका काढा या कल्क सहतके साथ, देवदारु, चव्य. चीता और हरड़ अथवा त्रिफला, चव्य. त्रिकुटा और पीपलामूलका चूर्ण अथवा त्रिफलेका चूर्ण और कुटकी सहतके साथ, किंवा वातोक्त षड्धरणयोग किंचित् गरमजलके साथ पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग दूर होताहै ॥ १–११ ॥

अथ कुष्ठाद्यंतैलम् ।

कुष्ठंश्रीवेष्टकोदीच्यंसरलंदारुकेशरम् ।
अजगंधाश्वगंधाचतैलन्तैःसार्षपंपचेत् ॥ १२ ॥
सक्षौद्रंमात्रया तस्यऊरुस्तम्भार्दितःपिबेत् ॥ १३ ॥

अर्थ–कूठ. श्रीवेष्ट, सुगंधवाला, धूपसरल. देवदारु, नागकेशर, वनतुलसी और असगंध इनके क्वाथ अथवा कल्कमें सरसोंका तेल पकावे, इसतेलको सहतके साथ सेवन करै तो ऊरुस्तम्भरोग दूर होवे ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथोरुस्तम्भहरतैलम् ।

द्विपलिकंग्रन्थिकंविश्वंसमंदध्यष्टकट्वरम् ।
कटुतैलंपचेत्प्रस्थंगृध्रस्यूरुग्रहापहम् ॥ १४ ॥

द्विपलंप्रत्येकम् ।

अष्टकट्वरमष्टगुणंसस्नेहंदधिघृततक्रकम् ॥

इतिअष्टकट्वरंतैलम् ।

सैन्धवादितैलमत्रयोज्यम् ।

इति ऊरुस्तम्भाध्यायः ।

अर्थ—पीपरामूल आठतोले, सोंठ आठतोले, दहीका तोड बत्तीस तोले, सरसोंका तेल दोसेर, अष्टकट्वर दोसेर लेवे, सबको मिलाके तेलको पकावे । इस तेलको सेवनकरनेसे गृध्रसीवात, और ऊरुस्तम्भ रोग दूर होताहै, यहाँ सैंधवादितैल योजना चाहिये ॥ १४ ॥

इति ऊरुस्तम्भाधिकारः समाप्तः ।

अथ आमवातचिकित्सा ।

लंघनंस्वेदनंतिक्तंदीपनानिकटूनिच ।
विरेचनंस्नेहपानंवान्तयश्चाममारुते ।
रूक्षःस्वेदोविधातव्योवालुकापुटकैस्तथा ॥ १ ॥

अर्थ—लंघन करना, पसीना निकलवाना, चरपरे, कडवे और दीपन पदार्थोंका भक्षण करना, विरेचन, स्नेहपान, वस्ति और वालूकी पोटलीकेद्वारा रूक्ष पसीना देना, यह सब उपचार आमवातरोगमें कराने चाहियें ॥ १ ॥

अथामवातहरोपायः ।

कार्पासास्थिकुलत्थकातिलयवैरण्डमूलातसी
वर्षाभूषणबीजकांजिकयुतैरेतत्कृतेर्वापृथक् ।
स्वेदःस्यादतिकूर्परोदरशिरःस्फिक्पाणिपादांगुली
गुल्फस्कन्धकटीरुजोविजयतेसाम्याःसमीरारुजः ॥२॥

अर्थ—बिनोले, कुलथी, तिल, जौ, अरंडकीजड, अलसी, पुनर्नवा और सनके बीज, इनसब द्रव्योंको एकत्रकर अथवा एक एकको अलग अलग कूटकर काँजीमें भिजोके पोटली बनालेवै, उन पोटलियोंसे कुहिनी, उदर, शिर, कूल, हाथ, पांव, अंगुली, स्कन्ध और कमरको सेंके तो आमवात दूर होवै ॥ २ ॥

गोजलंपिष्टाहिंस्राकेबुकशिग्रुभिरत्रनाङ्गयुतैः ।
लेपःसामसमीरेविहितःसहवेदनेशोथे ॥ ३ ॥
कोष्णंकृत्वालेपःसवेदनेशोथे ।

अर्थ–मकोय, केउँआ, सँजिनेकी जड और बाँबीकी मट्टी, यह सब समान भाग लेकर गोमूत्रमें पीस गरम करके प्रलेप करै तो वेदना और सूजनयुक्त आमवात रोग दूरहोवै ॥ ३ ॥

अथामवातोपायः ।

पटोलंगोक्षुरंचैववरुणंकारवेल्लकम् ।
यवकोद्रवशाल्यादिप्रपुराणंसतिक्तकम् ॥ ४ ॥
लावादीनांतथामांसंतक्रेणमस्तुनाहितम् ।
कुलत्थयूपसूपैश्चरूक्षमन्नंप्रदापयेत् ॥ ५ ॥

अर्थ–परवल, गोखुरू, बरना, करेला, जौ, कोदों, पुरानेशालिधान, और पित्तपापडा, लावादिपक्षियोंका मांस, तक्र, दहीका पानी, कुलथीका यूष और दालके साथ रूक्ष अन्न आमवात रोगमें देवै ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथामवातकटिशूलहरःक्वाथः ।

शुण्ठीगोक्षुरकःक्वाथःप्रातःप्रातर्निषेवितः ।
सामेवातेकटीशूलेपाचनोरुक्प्रणाशनः ॥ ६ ॥

अर्थ–सोंठ और गोखुरुवोंका क्वाथ प्रातःकाल सेवन करै तो आमवात और कटिशूल दूरहोवै, यह पाचन है ॥ ६ ॥

अथ रास्नासप्तकम् ।

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकण्टकैरण्डपुनर्नवानाम् ।
क्वाथंपिबेन्नागरचूर्णमिश्रंजंघोरुपृष्टत्रिकपार्श्वशूली ॥७॥

अर्थ–रायसन, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखुरू, अरण्डकी जड और पुनर्नवा, इनके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीवे तो जंघा, ऊरु, पृष्ठ, त्रिक और पार्श्वशूल दूर होवै ॥ ७ ॥

अथ रास्नापंचकम् ।

रास्नागुडूचीमेरण्डंदेवदारुमहौषधम् ।

पिबेत्सर्वांगकेवातेसामेसंध्यस्थिमज्जगे ॥ ८ ॥
भेदार्थमेरण्डतैलंप्रक्षिपन्तिवृद्धाः ॥

अर्थ–रायसन, गिलोय, अरंडकी जड, देवदारु, और सोंठ, इनके काढेमें अंडीका तेल मिलाकर पीनेसे सर्वांगगत, सन्धिगत, अस्थिगत और मज्जागत आमवातरोग दूर होता है ॥ ८ ॥

अथ रास्नादशमूलादिक्काथः ।

दशमूलामृतैरण्डरास्नानागरदारुभिः ।
क्काथोरुबूकतैलेनसामंहन्त्यनिलंगुरुम् ॥ ९ ॥

अर्थ–दशमूल, गिलोय, अरण्ड, रास्ना, सोंठ और देवदारु, इनके काढेमें अण्डीका तेल मिलाकर पान करनेसे निःसन्देह आमवातरोग दूर होताहै ॥९॥

अथामवातहरैरण्डतैलम् ।

आमवातगजेन्द्रस्यशरीरवनचारिणः ।
एकएवनिहन्त्याशुएरण्डस्नेहकेसरी ॥ १० ॥

अर्थ–मनुष्योंके शरीररूपी वनमें विचरता हुआ जो आमवातरूपी गजेन्द्र है उसको मारनेके लिये केवल एकही अरण्डका तेल सिंहस्वरूप है ॥ १० ॥

अथामवातोपायः ।

आमवातेकणायुक्तंदशमूलीजलंपिबेत् ॥ ११ ॥

अर्थ–अथवा दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे, आमवातरोग दूर होताहै ॥ ११ ॥

अथामवातहराग्निदीपनोपायः ।

खादेद्वाऽभयाविश्वगुडूचीनागरेणवा ।
शतपुष्पाविडंगानिसैन्धवंमरिचंसमम् ॥
चूर्णमुष्णाम्बुनापीतमामघ्नंवह्निदीपनम् ॥ १२ ॥

अर्थ–हरड, सोंठ, और गिलोयके काढेमें सोंठका चूर्ण मिलाकर पीनेसे अथवा सौंफ, बायबिडंग, सैंधानोन और कालीमिरच इन सबको समानले, बारीक चूर्णकर किंचित् गरमजलके साथ पीनेसे आमवातरोग दूर होताहै, तथा अग्नि दीपन होती है ॥ १२ ॥

अथ वैश्वानरचूर्णम् ।

मणिमन्थस्यभागौद्वौयवान्यास्तद्वदेवतु ।
भागास्त्रयोऽजमोदायानागराद्भागपंचकम् ॥ १३ ॥
दशद्वौचहरीतक्याःश्लक्ष्णचूर्णीकृताःशुभाः ।
मस्त्वारनालतक्रेणसर्पिषोष्णोदकेनवा ॥ १४ ॥
पीतंजयत्यामवातंगुल्महृद्बस्तिजान्गदान् ।
प्लीहानंग्रन्थिशूलादीनर्शांस्यानाहमेवच ॥ १५ ॥
विबन्धंजाठरान्रोगांस्तथावैदुष्टपादजान् ।
वातानुलोमनमिदंचूर्णंवैश्वानरंस्मृतम् ॥ १६ ॥

अर्थ-सेंधानोन दो तोले, अजवायन दो तोले, अजमोदा तीन तोले, सोंठ पाँच-तोले और हरड बारहतोले लेवे, सबको एकत्र पीस बारीक चूर्ण करले, इस चूर्णको दहीका तोड, काँजी, तक्र, घी और गरमजल इनमेंसे किसीएक अनु-पानके साथ पीनेसे-आमवात, गुल्म, हृदयरोग, बस्तिरोग, प्लीहा, ग्रन्थिरोग-शूल, अर्श, आनाह, विबन्ध, उदररोग, और पावोंके रोग दूर होते हैं, और यह वैश्वानर चूर्ण वातानुलोमक है ॥ १३-१६ ॥

अथालम्बुषाद्यंचूर्णम् ।

अलम्बुषांगोक्षुरकंगुडूचींवृद्धदारकम् ।
पिप्पलींत्रिवृतांमुस्तांवरुणंसपुनर्नवम् ॥ १७ ॥
त्रिफलांनागरञ्चैवश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
मस्त्वारनालतक्रेणपयोमांसरसेनवा ॥
आमवातंनिहंत्याशुश्वयथुंसन्धिजस्थितम् ॥ १८ ॥

अर्थ-अलम्बुषा (एक प्रकारका लज्जालु), गोखुरू, गिलोय, विधारा, पीपल, निसोथ, नागरमोथा, वरना, पुनर्नवा, त्रिफला और सोंठ, इन सबका बारीक चूर्ण कर दहीका पानी, तक्र, दूध और मांसरस इनमेंसे किसी एकके साथ सेवनकरनेसे-आमवात और संधिज शोथ दूर होता है ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ योगराजगुग्गुलुः ।

चित्रकंपिप्पलीमूलंयवानींकारवींतथा ।
विडंगान्यजमोदाञ्चजीरकंसुरदारुच ॥ १९ ॥

चव्यैलांसैंधवंरास्नांतथागोक्षुरधान्यकम् ।
त्रिफलामुस्तकंव्योपंत्वगुशीरयवाग्रजम् ॥ २० ॥
तालीशपत्रंपत्रञ्चश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावन्मात्रन्तुगुग्गुलुम् ॥ २१ ॥
संमर्द्यसर्पिषागाढंस्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ।
ततोमात्रांप्रयुञ्जीतयथेष्टाहारवानपि ॥ २२ ॥
योगराजइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ।
आमवाताढ्यवातादीन्कृमिकुष्ठव्रणानपि ॥ २३ ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानिविनाशयेत् ।
अग्निंचकुरुतेदीप्तंतेजोवृद्धिंबलंतथा ॥
वातरोगाञ्जयत्येपसन्धिमज्जागतानपि ॥ २४ ॥

अर्थ—चीता, पीपरामूल, अजवायन, सौंफ, बायबिडंग, अजमोदा, जीरा, देवदारु, चव्य, इलायची, सेंधानोन, गायसन, गोखुरू, धनियाँ, त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, दालचीनी, खस, जवाखार, तालीशपत्र और तेजपात, यह सब समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें, और सबचूर्णकी बराबर गूगुल, डाले, पश्चात् इसको घृतमें मर्दन कर चिकने बासनमें भरके रखदेवे यह संसारमें अमृतकी समान योग, "योगराजगुग्गुलु" इसनामसे प्रसिद्ध है। इसको उचित मात्रानुसार खावे और यथेष्ट भोजन करे। यह योगराज—आमवात, आढ्यवातादिरोग, कृमि, कुष्ठ, व्रण, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह और बवासीरको दूर करै है। अग्निको दीपनकरै, तेज और बलको बढावे, तथा सन्धि और मज्जागत वातरोगोंको हरै है ॥ १९-२४ ॥

अथ वातारिगुग्गुलुः ।

वातारितैलसंयुक्तंगुग्गुलुंपरिपेपयेत् ।
गंधकंत्रिफलाचूर्णैःसुश्लक्ष्णैर्मिश्रयेत्ततः ॥ २५ ॥
भक्षयेत्प्रत्यहंप्रातरुष्णतोयाऽनुपानतः ।
आमवातंकटीशूलंगृध्रसींखञ्जपंगुताम् ॥ २६ ॥

वातरक्तंसशोथञ्चसदाहंक्रोष्टुशीर्षकम् ।
शमयेच्छतशोदृष्टमपिवैद्यविवर्जितम् ॥ २७ ॥

अर्थ–अंडीके तेलके साथ गूगुलको पीस लेवै, पश्चात् इसमें गन्धक और त्रिफलेका चूर्ण मिलाकर प्रतिदिन प्रातःकाल गरम जलके अनुपानसे भक्षण करै तो आमवात, कटिशूल, गृध्रसीवात, खंज और पंगुता, शोथयुक्त और दाहयुक्त वातरक्त, तथा क्रोष्टुशीर्षक रोग और वैद्यवर्जित सैंकडों रोग दूर होवैं ॥ २५–२७ ॥

अथ सिंहनादगुग्गुलुः ।

पलत्रयंकषायस्यत्रिफलायाःसचूर्णितम् ।
सौगन्धिकपलंचैकंकौशिकस्यपलन्तथा ॥ २८ ॥
कुडवंचित्रतैलस्यसर्वमादाययत्नतः ।
पाचयेत्पाकविद्वैद्यःपात्रेलौहमयेदृढे ॥ २९ ॥
हन्तिवातंतथापित्तंश्लेष्माणंखंजपंगुताम् ।
श्वासंसुदुर्जयंहन्तिकासंपंचविधंतथा ॥ ३० ॥
कुष्ठानिवातरक्तंचगुल्मशूलोदराणिच ।
आमवातंजयेदेतदपिवैद्यविवर्जितः ॥ ३१ ॥
एतदभ्यासयोगेनवलीपलितनाशनः ।
सर्पिस्तैलरसोपेतमश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥ ३२ ॥
सिंहनादइतिख्यातोरोगवारणदर्पहा ।
वह्नेर्वृद्धिकरंपुंसांभापितोदण्डपाणिना ॥ ३३ ॥
चित्रतैलमेरण्डतैलं तस्यकुडवोक्तुतद्वैगुण्यः ।
अन्यथातैलबहुत्वात्पाकःबहुविज्ञेयःस्यात् ॥

अर्थ–त्रिफलेका क्वाथ तीन पल, गंधकका चूर्ण एक पल, गूगुल एक पल, और अंडीका तेल एक सेर लेवै पश्चात् सबको मिलाकर पाकक्रियाको जानने-वाला वैद्य उत्तम लोहेके दृढ पात्रमें पकावै । इसको सेवन करनेसे वात, पित्त, कफ,खंज और पंगुता, दुर्जय श्वास,पाँच प्रकारकी खाँसी, कोढ, वातरक्त,गुल्म,

शूल, उदररोग, और वैद्य करके वर्जित भी आमवातरोग दूर होवै । इसके अभ्यासके योगसे मनुष्य वली (शरीरमें वलोंका पड़ना), पलित (विना समयही वालोंका धवल होजाना) रहित होजातेहैं । घी, तेल, और रसों युक्त शालि और साँठी धानोंका भात खावै । यह सिंहनादगूगुल रोगरूप हाथियोंके दर्पको भंजन करनेवाला है । और मनुष्योंकी जठराग्निको बढानेवाला है । यह महादेवने भाषण कियाहै ॥ २८–३३ ॥

अथ व्याधिशार्दूलगुग्गुलुः ।

त्रिफलायाःपलान्यष्टौप्रत्येकंबीजवर्जितम् ।
गुग्गुलोर्द्विपलंचात्रनिक्षिपेत्तंसुकुट्टितम् ॥ ३४ ॥
सर्वंसंक्षुद्ययत्नेनसार्द्धाढकजलेपचेत् ।
एकरात्रौस्थितंचैतत्पक्त्वापादावशेषितम् ॥ ३५ ॥
द्विपलंकटुतैलस्यमिलित्वैकत्रपाचयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामलकानिच ॥ ३६ ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्तीचव्यशूरणमानकम् ।
अष्टाष्टौमापकानेतान्प्रत्येकन्तुसुचूर्णितम् ॥ ३७ ॥
सहस्राद्धंपलंदेयंकालकंविधिशोधितम् ।
रसगंधककर्षार्द्धंप्रत्येकंकज्जलीकृतम् ॥ ३८ ॥
सम्यक्सिद्धंतुविज्ञायस्निग्धेभाण्डेविनिक्षिपेत् ।
ततोमाषद्वयंजग्ध्वाप्रातरुष्णोदकंपिबेत् ॥ ३९ ॥
प्रथमंकुरुतेवह्निंशरीरंस्थिरयौवनम् ।
धातुवृद्धिंवयोवृद्धिंबलंसुविपुलन्तथा ॥ ४० ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्चदुर्नामंसभगन्दरम् ।
आमवातंशिरोवातमम्लपित्तंनिहन्तिच ॥ ४१ ॥
कामलांपाण्डुतांश्वासंप्रमेहंगुदनिर्गमम् ।
प्लीहानंश्लीपदंश्वासंकासंपंचविधन्तथा ॥ ४२ ॥
शमयत्युदराण्यष्टौशूलान्यष्टौविशेषतः ।

भग्नास्थिविद्धवातेषुसक्थिग्रहविमोक्षये ॥ ४३ ॥
हन्यादेवंविधान्व्याधीनामवातंविशेषतः ।
ग्रन्थिवातंतथाकुष्ठंविषमज्वरमेवच ॥ ४४ ॥
मेदःकफामयंवातंव्याधिवारणदर्पहा ।
व्याधिशार्दूलविख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥ ४५ ॥

अर्थ—गुठलीरहित हरड, बहेडा और आमला, प्रत्येक आठ आठ पल और कुटा हुआ गूगुल आठ तोले ले, सबको यत्नपूर्वक कूटकर बारहसेर जलमें पकावे, जब चौथा भाग जल शेष रहे, तब एक रात रख दूसरेदिन आठ तोले कडुवातेल मिला चूल्हेपे चढाके इसमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा. वायविडंग, आमला, गिलोय, चीता, निसोत, दन्ती, चव्य, जमीकन्द और मानकन्द, इन प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ मासे, जमालगोटेकी अन्तर्जिह्वा दो तोले, पारे और गंधककी कज्जली एक तोले मिलादे, जब भले प्रकारसे सिद्ध होजाय तब चिकने बासनमें भरके रख देवे, पश्चात् इसको प्रतिदिन प्रातःकाल दो मासे भर खावे और ऊपरसे गरम जल पीवे। यह अग्निको दीपन करे, शरीरको स्थित यौवनयुक्त करे, धातुओंको बढावे, आयुको बढावे और अत्यन्तबलकी वृद्धि करेहै। तथा पथरीरोग, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, भगन्दर, आमवात, शिरोवात, अम्लपित्त, कामला, पाण्डुरोग, श्वास, प्रमेह, गुदनिर्गम, प्लीहा, श्लीपद, श्वास, पांचप्रकारकी खाँसी, आठ प्रकारके उदर रोग, आठप्रकारके शूल, भग्नअस्थि, विद्धवात, सक्थिग्रह, विशेषकरके आमवात, ग्रन्थिवात, कोढ, विषमज्वर, मेदरोग और कफरोगको दूर करेहै। यह वातरोगरूपी हाथीके मदके दूर करनेके लिये व्याधिशार्दूल है, यह अमृतकी समान योग व्याधिशार्दूल गुग्गुलु नामसे विख्यात है ॥ ३४–४५ ॥

अथ त्रिफलागुग्गुलुः ।

त्रिफलामुस्तकंव्योपंविडंगंपुष्करंवचा ।
चित्रकंमधुकंचैवपलांशंश्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ ४६ ॥
अयश्चूर्णपलान्यष्टौगुग्गुलुस्तावदेवच ।
आलोड्यमधुनापेतंपलद्वादशकेनच ॥ ४७ ॥
प्रातर्विभज्यभुंजानोजीर्णेतस्मिन्भजेद्द्विजः ।

आमवातंतथागुल्मंश्वयथुंविषमज्वरम् ।
जीर्णानुसम्भवंशूलंपाण्डुरोगंहलीमकम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, बायबिडंग, पोहकरमूल, बच, चीता, और महुआ प्रत्येकका चूर्ण चारचार तोले, लोहेका चूर्ण बत्तीस तोले, और गूगुल ३२ बत्तीस तोले लेवै, पश्चात् इसमें बारहपल सहत मिलाकर नित्यप्रति प्रातःकाल सेवन करै तो जीर्ण आमवातरोग, गुल्म, सूजन, विषमज्वर, बहुत दिनोंका शूल, पाण्डुरोग और हलीमक रोग दूर होवे ॥ ४६–४८ ॥

अथ वृद्धदारकादिलौहम् ।

वृद्धदारत्रिवृद्दन्तीकरिकर्णाग्निमानकैः ।
त्रिकत्रययुतोलोहआमवातान्तकोमतः ।
सर्वानेतान्गदान्हन्तिदन्तिनःकेसरीयथा ॥ ४९ ॥

अर्थ—विधारा, निसोत, दन्ती, हस्तिकर्ण (पलाश), चीता, मानकन्द, त्रिकुटा, त्रिफला और त्रिमद, यह सब समानभाग और सबकी समान लोहा लेवे, सबको एकत्र कर चूर्ण बनाकर भक्षण करै तो आमवातरोग, दूर होवै । जिसप्रकार सिंह हाथियोंको मारदेवे है उसीप्रकार यह लोह आमवातादि संपूर्णरोगोंको विध्वंस करदेवेहै ॥ ४९ ॥

अथ योगरत्नाकरस्थपंचाननरसः ।

जारितंपुटितंलौहंचूर्णंपंचपलन्ततः ।
गुग्गुलोःपलपंचाथलौहार्द्धंमृतमभ्रकम् ॥ ५० ॥
शुद्धसूतमभ्रसमंगन्धकञ्चतथामतम् ।
त्रिगुणामसयश्चूर्णादभ्रान्तात्रिफलांनयेत् ॥ ५१ ॥
दत्त्वा[illegible]नीयमष्टभागावशेषयेत् ।
तेनचाष्टावशेषेणपचेल्लोहाभ्रगुग्गुलुम् ॥ ५२ ॥
घृततुल्यंशतावर्यारसंदत्त्वातथाशुभम् ।
प्रस्थंप्रस्थञ्चदुग्धस्यशनैर्मृद्वग्निनाभिषक् ॥ ५३ ॥
लौहमय्यापचेद्दर्व्यापात्रेचायस्मिन्मये ।
ततःपाकविधिज्ञस्तुपाकसिद्धेविनिक्षिपेत ॥ ५४ ॥

रसकज्जलिकांकृत्वादत्त्वाचापिविशुद्धयेत् ।
विडंगनागरंधान्यंगुडूचीसत्त्वजीरकान् ॥ ५५ ॥
पंचकोलंत्रिवृद्दन्तीत्रिफलैलाचमुस्तकम् ।
सुचूर्णितंचप्रत्येकंचूर्णमर्द्धं [illegible] था ॥ ५६ ॥
उत्तार्यस्थापयेद्भाण्डेसिद्धेचापिसुरञ्जितम् ।
घृतेनमधुनापश्चान्मर्दयित्वानुपानतः ॥ ५७ ॥
भक्षयेच्छुद्धदेहस्तुशुभेऽहनिविपृच्छयच ।
आमवातमहाव्याधिविनाशायमहौपधम् ॥ ५८ ॥
सन्धिवातंकर्णशूलंकुक्षिशूलंसुदारुणम् ।
जंघापदांगुलीशूलंगृध्रसीमग्निमान्द्यताम् ॥ ५९ ॥
गुल्मंशोथंकामलाञ्चपाण्डुरोगंसुदुःसहम् ।
आमवातगजेन्द्रस्यकेसरीमुनिनिर्मितः ॥ ६० ॥

अर्थ–जारित और पुटित लोहेका चूर्ण पांचपल, शुद्ध गूगुल पांच पल, अभ्रककी भस्म ढाईपल क्काथके लिये त्रिफला प्रत्येक बारहपल पांच तोले लेकर छः सौ तोले जलमें पकावे, जब आठवाँभाग जल शेष रहे तब उतारले, पश्चात् उस अष्टावशेष काढेमें लोहेका चूर्ण, गूगुल और अभ्रक तथा घृत, दूध और शतावरका रस प्रत्येक एक एक प्रस्थ डालके उत्तम लोहेके पात्रमें अथवा मट्टीके पात्रमें धीरे धीरे मन्द मन्द अग्निसे पकावे और लोहेकी करछीसे चलाता जावे। जब पाक सिद्ध होजाय तब किंचित् गरममें गंधक और पारेकी कज्जली पांच पल, वायविडंग, सोंठ, धनियाँ, गिलोयका सत्त्व, जीरा पंचकोल, निसोथ दन्ती, त्रिफला, इलायची, और नागरमोथा, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले मिला देवे। फिर इसको उतारकर चिकने बासनमें भरके रख देवे, पश्चात् इसको घृत और सहतमें मर्दनकर पवित्र हो शुभ दिनमें अनुपानके साथ सेवन करे। यह आमवातमहाव्याधिको दूर करनेके लिये, महौपध है तथा सन्धिवात, कर्णशूल, कुक्षिशूल, जंघाओंकी पीडा, पदांगुली शूल, गृध्रसीवात, अग्निकी मंदता, गुल्म, सूजन, कामला और दुःसह पाण्डुरोगको दूर करै है। यह पंचाननरस आमवातरूपी गजराजके लिये सिंह है ॥ ५०–६० ॥

अथ रसार्णवस्यबृहत्सिंहनादगुग्गुलुः।

पिष्टितांगुग्गुलुमानींकटुतैलपलाष्टके।
प्रत्येकंत्रिफलाप्रस्थौसार्द्धद्रोणेजलेपचेत् ॥ ६१ ॥
पादशेषंचपूतंचपुनरग्नावधिश्रपेत्।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामलकालिकम् ॥ ६२ ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्तीचव्यंसूरणमानकम्।
पारदंगंधकंचैवप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ॥ ६३ ॥
सहस्रंकालकफलंसिद्धंसंचूर्ण्यनिक्षिपेत्।
ततोमाषद्वयंजग्ध्वापिबेत्तप्तजलादिकम् ॥ ६४ ॥
अग्निश्चकुरुतेदीप्तंवडवानलसन्निभम्।
धातुवृद्धिंवयोवृद्धिंबलवृद्धिकरन्तथा ॥ ६५ ॥
आमवातंशिरोवातंसन्धिवातंभगन्दरम्।
जानुजंघाश्रितंवातंसकटीग्रहमेवच ॥ ६६ ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रश्चभग्नश्चतिमिरोदरम्।
अम्लपित्तंतथाकुष्ठंप्रमेहंगुदनिर्गमम् ॥ ६७ ॥
कासंपंचविधंश्वासंक्षयश्चविषमज्वरम्।
प्लीहानंश्लीपदंगुल्मंपाण्डुरोगंसकामलम् ॥ ६८ ॥
शोथान्त्रवृद्धिंशूलानिगुदजानिविनाशयेत्।
मेदःकफामसंजातव्याधिवारणदर्पहा ॥
सिंहनादइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥ ६९ ॥

अर्थ—गूगुल आठपल, सरसोंका तेल आठपल, और त्रिफला प्रत्येक २ दो-सेर लेकर डेढ द्रोण जलमें पकावै, जब जल चौथा भाग शेष रहै तब उतार लेवै, पश्चात् वस्त्रमें छानकर फिर चूलेहपै चढादेवै और इसमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, बायबिडंग, आमला, गिलोय, चीता, निसोत, दन्ती, चव्य, जमीकन्द, मानकन्द, पारा और गंधक प्रत्येक दो दो तोले, तथा शुद्ध किये हुए जमालगोटेकी अन्तर्जिह्वा १००० सबका चूर्णकर मिला देवै। इसको दो मासेभर

खावै और ऊपरसे उष्ण जल पीवे । इससे जठराग्नि बडवानलकी समान दीपन होतीहै, धातु, आयु और बलकी वृद्धि होतीहै, तथा आमवात, शिरोवात, सन्धिवात, भगन्दर, जानु और जंघाश्रितवात, कटीग्रह, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, भग्न, तिमिर, उदररोग, अम्लपित्त, कोढ, प्रमेह, गुदनिर्गम, पांचप्रकारकी खाँसी, श्वास, क्षय, विषमज्वर, प्लीहा, श्लीपद, गुल्म, पाण्डुरोग, कामलारोग, सूजन, अंत्रवृद्धि, शूल और बवासीर नष्ट होती है । यह मेद, कफ और आमसे उत्पन्न हुए रोगरूपी हस्तियोंके मदको दूर करनेके लिये सिंहनाद है । यह योग अमृतकी समान है ॥ ६१–६९ ॥

अथ हृदयनितम्बजशूलहरोपायः ।

दग्धमनिर्गतधूपंमृगशृंगंगोघृतेनसहपीतम् ।
हृदयनितम्बजशूलंहरतिशिखीदारुनिवहमिव ॥ ७० ॥

अर्थ–हिरनके सींगकी भस्म गायके घीके साथ पीनेसे हृदयशूल और नितम्बशूल दूर होताहै । अब हिरनके सींगकी भस्म बनानेकी विधि कहतेहैं (प्रथम हिरनके सींगको छीलकर पीस लेवे, फिर उस पिसे हुए हिरनके सींगको एक नवीन मट्टीकी हांडीमें रखकर हांडीके मुखपर शराव ढँकके गीली मिट्टीसे बंद कर देवै और नीचे अग्नि जला देवे, जब जलकर भस्म होजाय तब ग्रहण कर लेवै) ॥ ७० ॥

अथामवातिनांवर्जनीययोगाः ।

अभिष्यन्दकरायेचयेचान्येगुरुपिच्छिलाः ।
वर्जनीयाःप्रयत्नेनआमवातार्दितैर्नरैः ॥ ७१ ॥

अर्थ–अभिष्यन्दकारी, भारी, और पिच्छिल द्रव्य आमवात रोगमें त्यागने चाहिये ॥ ७१ ॥

अथ परग्रन्थस्थरसोनपिण्डः ।

पलशतंरसोनस्यतिलस्यकुडवन्तथा ।
हिंगुत्रिकटुकंक्षारौद्वौपञ्चलवणानिच ॥ ७२ ॥
शतपुष्पातथाकुष्ठंपिप्पलीमूलचित्रकौ ।
अजमोदायवानीचधान्यकञ्चैवबुद्धिमान् ॥ ७३ ॥
प्रत्येकन्तुपलञ्चैषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।

घृतभाण्डेतथ चैतत्स्थापयेद्दिनषोडश ॥ ७४ ॥
प्रक्षिप्यतैलमानीञ्चप्रस्थार्द्धंकांजिकस्यच ।
खादेत्कर्षप्रमाणञ्चतोयंमद्यंपिबेदनु ॥ ७५ ॥
आमवातेतथावातेसर्वाङ्गैकांगसंश्रये ।
अपस्मारेऽनलेमन्देकासेश्वासेज्वरेषुच ।
सोन्मादेवातभग्नेचशूलेजन्तुषुशस्यते ॥ ७६ ॥
क्षारौयवक्षारसर्जिकाक्षारौयवान्याभागद्वयंके-
चिदजमोदांफोफान्धीमेवगृह्णन्तिमानीपलाष्टकम् ।
रसोनञ्चतिलंनिस्तुषंकृत्वामिश्रयित्वास्निग्धे
भाण्डेकृत्वाशुधान्यराशौस्थापयेत् ।
कर्षंकर्षार्द्धंवाखादित्वाततजलानुपानम् ।
रसोनपिण्डाद्युपयोगजातेदाहेविदध्याद्वपुषःप्रलेपनम् ।
धत्तूरपत्रस्वरसेनपिष्टंनागेश्वरंचूर्णनवनीतयुक्तम् ॥७७॥

अर्थ-लहशुन १०० एक सौ पल, तिल आधसेर, हींग, त्रिकुटा, जवाखार, सज्जी, पाचोंनोन, सोंफ, कूठ, पीपरामूल, चीता, अजवायन, अजमोदा और धनियाँ यह प्रत्येक एक एक पल लेकर सबका बारीक चूर्ण कर घीके चिकने बासनमें भर तिसमें बत्तीस तोले तेल और बत्तीस तोले कांजी मिलाके रख देवै, १६ सोलह दिन बीत जानेपर इसमेंसे एक तोला या दो तोले नित्य खावै और ऊपरसे गरम जल या मदिरा पीवै । इससे आमवात, वात, सर्वांगवात, एकांगवात, अपस्मार, मंदाग्नि, खाँसी, श्वास, ज्वर, उन्माद, वातभग्न और शूल दूर होवै ॥ ७२-७७ ॥

अथ बृहद्रसोनपिण्डः ।

रसोनस्यशतंक्षुण्णंतदर्द्धंनिस्तुषात्तिलात् ।
पात्रेगव्यस्यतक्रस्यापिष्टैर्द्रव्यैःसमंक्षिपेत् ॥ ७८ ॥
त्रिकटुधान्यकंचव्यंचित्रकंगजपिप्पलीम् ।
अजमोदांत्वगेलाञ्चग्रन्थिकञ्चपलांशिकम् ॥ ७९ ॥

शर्कराय :पलान्यष्टौपंचाजाज्याःपलानिच ।
कृष्णाजाज्याश्चचत्वारिमधुकस्यगुडस्यच ॥ ८० ॥
आर्द्रकस्यचचत्वारिसर्पिषोष्टौपलानिच ।
तिलतैलस्यतावन्तिशुक्तस्यापिचविंशतिः ॥ ८१ ॥
सिद्धार्थकस्यचत्वारिराजिकायास्तथैवच ।
कर्षप्रमाणंदातव्यंहिंगुलवणपंचकम् ॥ ८२ ॥
एकीकृत्यदृढेभाण्डेधान्यमध्येनिधापयेत् ।
द्वादशाहात्समुद्धृत्यप्रातःखादेद्यथाबलम् ॥ ८३ ॥
सुरासौवीरकंसीधुमधुचानुपिबेन्नरः ।
जीर्णेयथेप्सितंभोज्यंदधिपिष्टविवर्जितम् ॥ ८४ ॥
आमवातार्दितार्द्धाङ्गसर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ।
मासात्सर्वगदान्हन्तिवातपित्तकफोद्भवान् ॥ ८५ ॥
प्रमेहोदरकुष्ठार्शःशोथगुल्मक्षयज्वरान् ।
अग्निसंधानकृद्वृष्यंदृष्ट्यायुर्बलवर्णदम् ॥ ८६ ॥

पात्रंशरावः ।

मधुकस्यगुडस्येत्यत्रमधुनःकुडवन्तथेतिपाठान्तरंतेना-
पिव्यवहारःशुक्ताभावेकांजिकम् ।

अर्थ-लहशुनका कल्क सौपल, तुषरहित अर्थात् धुले हुए तिल पचास पल, त्रिकुटा, धनियाँ, चव्य, चीना, गजपीपल, अजमोदा, दालचीनी, इलायची और पीपलामूल प्रत्येक चार चार तोले, बूरा आठ पल, जीरा २० तोले, मूलैठी सोलह तोले, गुड सोलह तोले, अदरख सोलह तोले, गायका घी बत्तीस तोले, तिलका तेल बत्तीस तोले, काँजी अस्सी तोले, सफेद सरसों सोलह तोले, राई सोलह तोले, हींग दो तोले, और पाँचोंनोन प्रत्येक दो दो तोले लेवै, सबका चूर्णकर एक पात्रमें गायका मट्ठा भर उसमें यह चूर्णडाल पात्रका मुख बन्द करके धानोंके ढेरमें बारह दिन तक गाड़ देवे, पश्चात् निकालकर शक्त्यनुसार प्रातःकाल खावे और ऊपरसे सुरा, कांजी, शीधुनाम-

वाली मदिरा और सहत इनमेंसे किसी एकका अनुपान करै । और जीर्ण होजाने पर यथेष्ट भोजन करै । और दही तथा पिट्टी छोड देवै । यह आमवात, अर्द्धांगवात, सर्वांगवात, एकांगवात, वातपित्त और कफसे उत्पन्न हुए रोग, प्रमेह, उदररोग कोढ, बवासीर, सूजन, क्षय और ज्वर इन सब रोगोंको एक महीनेमें दूर करदेताहै । भग्नसंधानकारक वीर्यवर्द्धक तथा दृष्टि, आयु, वल और वर्णको बढानेवाला है ॥ ७८–८६ ॥

अथ बृहत्सैन्धवाद्यंतैलम् ।

सैंधवंत्रिफलारास्नापिप्पलीगजपिप्पली ।
स्वर्जिकामरिचंकुष्ठंशुण्ठीसौवर्चलंविडम् ॥ ८७ ॥
यवान्यौपुष्कराजाजीमधुकंशतपुष्पिकाम् ।
पलार्द्धिकैःपचेदेतैःप्रस्थमेरण्डतैलतः ॥ ८८ ॥
प्रस्थाम्बुशतपुष्पायाःप्रत्येकंमस्तुकांजिके ।
दत्त्वाद्विगुणितेपानेतत्रसम्यक्प्रयोजितम् ॥ ८९ ॥
आमवातहरंश्रेष्ठंसर्ववातघ्नमग्निदम् ।
कटीजानूरुसन्धिस्थेपार्श्वहृद्वङ्क्षणाक्षये ।
शस्तंवातान्त्रवृद्धौचसैन्धवाद्यमिदंमहत ॥ ९० ॥

अर्थ–अंडीका तेल दोसेर, सौंफका अर्क दोसेर, दहीका तोड चारसेर, कांजी चारसेर, और कल्कके लिये सेंधानोन, त्रिफला, रायसन, पीपल, गजपीपल, सज्जी, काली मिरच, सोंठ, कालानोन, विड़नोन, अजमोदा, पोहकरमूल, जीरा, मुलेठी और सौंफ, प्रत्येक दो दो तोले कूठ और अजवायन चार चार तोले लेवै। सबको विधिपूर्वक मिलाकर सिद्ध करै । इसको पीनेसे आमवात तथा सर्वप्रकारका वात दूर होजाताहै, अग्निदीपन होता है तथा कटी, जानु, ऊरु सन्धि, पार्श्व और वंक्षणमें स्थित हुआ वात दूर होजाताहै । यह बृहत्सैन्धवाद्यतैल वातान्त्रवृद्धि रोगोंका अत्यन्त हितकारीहै ॥ ८७–९० ॥

अथान्यबृहत्सैन्धवाद्यंतैलम् ।

सैन्धवंश्रेयसीरास्नाशतपुष्पायवानिका ।
स्वर्जिकामरिचंकुष्ठंशुण्ठीसौवर्चलंविडम् ॥ ९१ ॥

...जमोदाजरणंपौष्करंमधुकंकणा ।
एतान्यर्द्धपलांशानिश्लक्ष्णंपिष्ट्वाप्रदापयेत् ॥ ९२ ॥
प्रस्थमेरण्डतैलस्यप्रस्थाम्बुशतपुष्पजम् ।
काञ्जिकंद्विगुणंदत्त्वामस्तुचद्विगुणन्तथा ॥ ९३ ॥
सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरंपरम् ।
पानाभ्यंजनबस्तौचकुरुतेऽग्निबलंभृशम् ॥ ९४ ॥
वातार्त्तेवङ्क्षणेशस्तंकटीजानूरुसन्धिजे ।
शूलेहृत्पार्श्वजेवृद्धौकृच्छ्रेऽश्मरीप्रपीडिते ॥ ९५ ॥
बाह्यायामार्दितेवातेत्वन्त्रवृद्धिनिपीडिते ।
अन्यांश्चानिलजान्रोगान्नाशयत्याशुदेहिनाम् ॥ ९६ ॥

इति आमवाताध्यायः ।

अर्थ–सेंधानोन, हरड, रायसन, सौंफ, अजवायन, सज्जी, कालीमिरच, कूठ, सोंठ, कालानोन विरियासंचरनोन, बच, अजमोदा, जीरा, पोहकरमूल, मुलेठी और पीपल, यह प्रत्येक दो दो तोले लेकर सबको बारीक पीसलेवे, फिर दोसेर अंडीका तेल, दोसेर सौंफका क्वाथ, चारसेर दहीका पानी लेवे, सबको मिलाकर सिद्ध करे । इस तेलको पान, अभ्यंजन और बस्तिकर्म्म में प्रयोग करे । यह तेल आमवातनाशक और अग्निवर्द्धक है तथा वंक्षण, कटि, जानु, संधि, हृदय और पसली, इनका शूल, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, बाह्यायामवात, अन्त्रवृद्धि और अन्यान्य वातरोगोंको दूर करे है ॥ ९१–९६ ॥

इति आमवाताधिकारः समाप्तः ।

अथ शूलचिकित्सा ।

वमनंलंघनंस्वेदःपाचनंफलवर्त्तयः ।
क्षारचूर्णानिगुटिकाःशस्यन्तेशूलशान्तये ॥ १ ॥
पुंसःशूलाभिपन्नस्यस्वेदएवसुखावहः ।
पायसैः कृशरैःपिष्टैःस्निग्धैर्वापिसितोत्करैः ॥ २ ॥

अर्थ–वमन, लंघन, स्वेद, पाचन, फलवर्त्ती, क्षार, चूर्ण और गुटिका यह सब शूलरोगमें शान्तिके लिये प्रयोग करे । शूलरोगयुक्त मनुष्यको स्वेदही

सुखकारक है, तथा खीर, खिचड़ी, पिट्टी, स्निग्ध और खाँडयुक्त द्रव्य शूलरोगमें हितकारी हैं ॥ १ ॥ २ ॥

अथ शूलहरोपायः ।

शूलेतुवातिकेऽभ्यङ्गस्वेदमर्द्दनबस्तयः ।
स्निग्धोष्णमनुपानञ्चसस्नेहमुपनाहनम् ॥ ३ ॥
बिल्वमूलतिलैरण्डकांजिकैर्वाथवातिलैः ।
गुटिकांभ्रामयेदुष्णांवातशूलविनाशिनीम् ॥ ४ ॥
नाभिलेपाज्जयेच्छूलंमदनःकांजिकान्वितः ।
बलापुनर्नवैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥ ५ ॥
सहिंगुलवणक्काथःसद्योवातरुजापहः ।
तुम्बुरूण्यभयाहिंगुपुष्करंलवणत्रयम् ॥ ६ ॥
पिबेद्यवाम्बुनावातगुल्मशूलापतन्त्रकी ।
यवानीहिंगुसिन्धूत्थक्षारसौवर्चलाभयाः ॥ ७ ॥
सुरामण्डेनपातव्यावातशूलनिषूदनाः ।
विश्वमेरण्डजंमूलंक्काथयित्वाजलंपिबेत् ॥ ८ ॥
हिंगुसौवर्चलोपेतंसद्यःशूलनिवारणम् ।
विश्वैरण्डयवक्काथःसद्यःशूलनिवारणः ॥ ९ ॥

अर्थ—वातजन्यशूलरोगमें अभ्यंग, स्वेद, मर्दन, वस्ति, स्निग्ध और उष्ण अनुपान तथा स्नेहयुक्त उपनाहस्वेद हितकारक है । बेलकी जड, तिल, अरंडकी जड, इनको कांजीमें पीसकर गोली बना अथवा तिलोंकी गोली बना गरम कर स्वेद देवै तो वातजशूल दूर होवै । मैनफलको कांजीमें पीसकर नाभिपै लेप करनेसे वातशूल नष्ट होताहै । खिरैंटी, पुनर्नवा, अरंडकी जड़, बृहती, कटेरी और गोखुरू इनके काढ़ेमें हींग और सैंधेनोनको डालकर पीनेसे वातजनितशूल रोग दूर होताहै । धनियाँ, हरड, हींग, पोहकरमूल, कालानोन सैंधानोन और बिरियासंचरनोन इनका क्काथ बना जवोंके जलके साथ पनिसे वातजनितगुल्म, शूल और अपतन्त्रक वातरोग दूर होताहै । अजवायन, हींग, सैंधानोन, जवाखार, काला नोन और हरड़ इनका चूर्ण

सुराके मंडके साथ पीनेसे वातजशूल नष्ट होताहै। सोंठ और अरण्डकी जड़के क्काथमें हींग और कालानोन डालकर पीनेसे अथवा सोंठ, अरण्ड और जौका क्काथ पीनेसे तत्काल शूल दूर होताहै ॥ ३-९ ॥

अथ पित्तशूलहरोपायः ।

गुडःशालिर्यवाःक्षीरसर्पिष्पानंविरेचनम् ।
जाङ्गलानिचमंसानिभेषजंपित्तशूलिनाम् ॥ १० ॥

अर्थ-गुड, शालिधान, जौ, दूध, घी. और जाङ्गलदेशके जीवोंका मांस इनका भक्षण करना, और विरेचन यह पित्तशूलरोगवालोंकी औषधि है ॥१०॥

अथ दाहशूलहरोपायः ।

प्रातर्वरीरसःपीतःसक्षौद्रोदाहशूलहा ॥ ११ ॥

अर्थ-प्रातःकाल शतावरका रस सहतके साथ पीनेसे दाहयुक्तशूलरोग दूर होताहै ॥ ११ ॥

अथ पित्तशूलहरोपायः ।

बृहत्यौगोक्षुरैरण्डकुशकाशेक्षुबालिका ।
पीताःपित्तभवंशूलंसद्योहन्तिसुदारुणम् ॥ १२ ॥

अर्थ-बृहती, कटेरी, गोखुरू, अरंडकीजड. कुश, काश और इक्षुबालिका (एक प्रकारकी ईख, जो कि ईखकी समान होती है, जिसको वंगदेशमें आनाखु और खाग्डा कहते हैं), इनका क्काथ पीनेसे तत्काल दारुणपित्तजशूल दूर होता है ॥ १२ ॥

अथ दाहशूलहरोपायः ।

त्रिफलानिम्बयष्टयाह्वकटुकारग्वधैःस्मृतम् ।
पाययेन्मधुमिश्रं वा दाहशूलोपशान्तये ॥ १३ ॥

अर्थ-त्रिफला, नीम, मुलैटी, कुटकी और अमलतास इनके काढेमें सहत मिलाके पीनेसे दाह और शूल शान्त होताहै ॥ १३ ॥

अथ कफशूलहरोपायः ।

कफशूलेबस्तिनस्यंलंघनंकटुरूक्षकम् ।
पंचमूलकृतापेयादीपनंकफशूलनुत् ॥ १४ ॥
अर्द्धशृतेनकल्केनवा ।

अर्थ–कफजशूल रोगमें बस्ति, नस्य,लंघन, कटु, और रूक्षद्रव्य हितकारक है। पंचमूलके अर्द्धावशिष्ट क्वाथके अथवा कल्कके साथ बनाई हुई पेया पीनेसे जठराग्नि दीपन होतीहै और कफजशूल दूर होताहै ॥ १४ ॥

अथान्यकफशूलहरोपायः ।

लवणत्रयसंयुक्तंपंचकोलंसरामठम् ।
सुखोष्णेनाम्बुनापेयंकफशूलनिवारणम् ॥ १५ ॥

अर्थ–सैंधानोन, कालानोन, बिरियासंचरनोन, पंचकोल और हींग इनका बारीक चूर्ण कर सुखोष्णजलके साथ पीनेसे कफजशूल दूर होताहै ॥१५॥

अथ शूलहरोपायः।

बिल्वमूलमथैरण्डंचित्रकंविश्वभेषजम् ।
हिंगुसैन्धवसंयुक्तंसद्यःशूलनिवारणम् ॥ १६ ॥

अर्थ–बेलकीजड, अरण्डकीजड, चीता और सोंठ, इनके क्वाथमें सैंधानोन और हींग डालकर पीनेसे तत्काल शूल नष्ट होताहै ॥ १६ ॥

अथ पार्श्वहृद्बस्तिशूलहरोपायः ।

मातुलुङ्गरसोवापिशिग्रुक्राथस्तथापरः ।
सक्षारोमधुनापीतःपार्श्वहृद्बस्तिशूलनुत् ॥ १७ ॥

अर्थ–बिजोरेके रसमें अथवा सँजिनेके क्वाथमें जवाखार और सहत डालके पीनेसे पार्श्व, हृदय और बस्तिशूल आराम होताहै ॥ १७ ॥

अथ शूलहरचूर्णम्।

दीप्यकंसैन्धवंपथ्यानागरञ्चचतुःसमम् ।
चूर्णशूलंजयत्याशुमन्दस्याग्नेश्चदीपनम् ॥ १८ ॥

इदं चूर्णं तप्तजलेन पेयम् ।

अर्थ–अजमोदा,सैंधानोन,हरड और सोंठ, सब समान भागले चूर्णकर गरम जलके साथ पीनेसे शूल निर्मूल होजाताहै और अग्निप्रदीपन होतीहै ॥ १८ ॥

अथ बृहद्विश्वादिचूर्णम् ।

विश्वोरुबूकदशमूलयवाम्भसातु
द्विक्षारहिंगुलवणत्रयपुष्कराणाम् ।

चूर्णंपिबेद्धृदयपार्श्वकटीग्रहाम-
पक्वाशयांसभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली ॥ १९ ॥
अत्रचूर्णंपेशीचतुर्द्रवः ।

अर्थ–सोंठ, अरण्डकीजड, दशमूल और जो इनके चौगुने क्वाथमें जवाखार, सज्जी, हींग, सैंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन और पोहकरमूलका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे हृदय, पार्श्व, कटि और आमशूल, पक्वाशय और स्कन्ध-देशकी वेदना, ज्वर, गुल्म और शूल दूर होतेहैं ॥ १९ ॥

अथ सन्निपातशूलहरोपायः ।

विदारीदाडिमरसःसव्योषलवणान्वितः ।
क्षौद्रयुक्तोजयत्याशुशूलंदोषत्रयोद्भवम् ॥ २० ॥

अर्थ–विदारीकन्द और अनारके रसमें त्रिकुटा, सैंधानोनका चूर्ण डालके सहतकेसाथ पीनेसे सांनिपातिक शूल दूर होताहै ॥ २० ॥

अथैरण्डसप्तकम् ।

एरण्डबिल्वबृहतीद्वयमातुलुंग-
पाषाणभित्त्रिकण्टकमूलकृतःकषायः ॥
सक्षारहिंगुलवणोरुबुतैलमिश्रः
श्रोण्यंसमेढ्रहृदयामयहृत्सपेयः ॥ २१ ॥

अर्थ–अरण्डकीजड, बेल, कटेरी, कटाई, बिजोरा, पाषाणभेद और गोखुरू इनके काढेमें हींग, सैंधानोन, जवाखार और अण्डीका तेल मिलाकर पानकरनेसे कटी, संधि, मेढ्र और हृदयशूल दूर होताहै ॥ २१ ॥

अथ सर्वशूलहरोपायः ।

तुम्बुरूण्यभयाहिंगुपौष्करंलवणत्रयम् ।
यवानीचयवक्षारोविडंगानिसमानिच ॥ २२ ॥
त्रिवृत्त्रिगुणितंचूर्णंपिबेदुष्णेनवारिणा ।
आनाहमुदराण्यष्टौविद्रधिंगुल्ममेवच ॥ २३ ॥
निहन्तिसर्वइतितुम्बुर्वाद्यचूर्णंशूलानितुम्बुर्वाद्योऽतिविश्रुतः ॥

अर्थ–तुम्बुरु, हरड, हींग, पोहकरमूल, कालानोन, सैंधानोन बिरियासंचरनोन, अजवायन और बायबिडंग यह सब समान भाग और निसोत तीन भाग लेवै, सबका बारीक चूर्ण कर गरमजलके साथ पीवै तो आनाह, आठप्रकारके उदररोग, विद्रधि, गुल्म और सर्वप्रकारके शूल दूर होवें ॥ २२ ॥ २३ ॥

अथ सर्वेश्वरचूर्णम्।

शुद्धलोहमलाच्चूर्णंषट्पलंपंचकार्षिकम् ।
हरीतक्याःकठिन्याश्चरसगंधकयोःपृथक् ॥ २४ ॥
अर्द्धकर्षंततःकर्षंचित्रकंनागरंकणा ।
सूक्ष्मैलातेजपत्रंचवात्यालंभद्रमुस्तकम् ॥ २५ ॥
यवानीधान्यकंधूपंविभीतक्यामलक्यपि ।
विडंगंशंखनाभिश्चअर्जुनाशनयोस्त्वचः ॥ २६ ॥
अपामार्गभवंमूलंसर्वमेकीकृतंशुभम् ।
पीठोपरिपदंन्यस्यप्रस्तयेघृतभाजने ॥ २७ ॥
भुक्तोपरिचतच्चूर्णंकर्षंकर्षार्द्धमाचरेत् ।
तप्तोदकानुपानञ्चताम्बूलंभक्षयेत्ततः ॥ २८ ॥
ततोभूमौपदंदत्त्वाभूमेःकिंचिद्यथासुखम् ।
प्रत्यहंभक्षयेद्भक्त्यावह्निसंदीपनंपरम् ॥ २९ ॥
शूलमष्टविधंहन्तिविशेषात्परिणामजम् ।
अन्नद्रवकृतंशूलंगुल्मशूलञ्चनाशयेत् ॥ ३० ॥
कटीपार्श्वभवंशूलंयकृत्प्लीहकृतञ्चयत् ।
शूलानामपिसर्वेषामौषधंनास्तितत्परम् ॥ ३१ ॥
कामल पाण्डुरोगघ्नंहलीमकविनाशनम् ।
मानवानांकृपाहेतोर्देवदेवेननिर्मितम् ॥
चित्रकाद्यमिदंचूर्णंसर्वशूलान्तकंमतम् ॥ ३२ ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, शम्बूकके मुखका चूर्ण, जवाखार, कामरुदेशकी सेलखडी (असगंध और लालसेलखडी) इन्द्रजव, और सतोनाका खार

प्रत्येकसमान, गोमूत्र और कलमी शाकके रससे शुद्ध किया हुआ मण्डूर सब औषधियोंसे दुगुना लेकर सबका एकत्र चूर्ण करले और पात्र भरके रखदेवे। इसको सर्वेश्वरचूर्ण कहतेहैं, इसको भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें भक्षण करै। अनुपान-शुष्कपत्र जल और गायका अधऔटा हुआ गरमागरम दूध है। इसको सेवनकरनेसे मनुष्य बहुतदिनोंके पुराने, महादुस्तर और असाध्य शूलस छूटजाते हैं, इसको भोजनके पश्चात् कर्ष या अर्द्धकर्ष प्रमाण गरम जलके साथ खावै। तदनन्तर पान खाय और कुछ देर पृथ्वीमें पांवधर सुखपूर्वक बैठे इसप्रकार प्रतिदिन खावे। इससे आठप्रकारके शूल, विशेषकरके परिणामशूल, अन्नद्रवकृतशूल, गुल्मशूल, कटी और पार्श्वोद्भवशूल, यकृत और प्लीहासे उत्पन्न हुआ शूल, कामला, पाण्डुरोग और हलीमक रोगको दूर करताहै। यह शूलरोगकी एकही औषधिहै। यह चित्रकाद्यचूर्ण देवादिदेव शिवजीने मनुष्योंके हितके लिये निर्माण कियाहै ॥ २४-३२ ॥

अथ चित्रकाद्यंचूर्णम्।

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णंचूर्णंशम्बूकजाननम्।
यवक्षारंतथारक्तकटिनीकामरूपिणी ॥ ३३ ॥
शक्रचूर्णंसमधिकंक्षारंदानदलोद्भवम्।
यावन्त्येतानिचूर्णानिमण्डूरंद्विगुणन्ततः ॥ ३४ ॥
मण्डूरंद्विगुणंकार्यंगोमूत्रैःसप्तचैवहि।
कलम्बीस्वरसैःशुद्धंशोधयेत्सुविचक्षणः ॥ ३५ ॥
एकीकृत्यप्रयत्नेनचूर्णंसर्वेश्वराह्वयम्।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैवभोजनस्यप्रयोजयेत् ॥ ३६ ॥
मात्रयाचानुपानञ्चशुष्कपत्रजलेपयः।
गव्यमर्द्धशृतंकृत्वाशूलादन्तकमन्वितात् ॥ ३७ ॥
चिरजात्सर्वतोधीमान्दुस्तरान्मुच्यतेनरः।
पक्तिशूलात्तथैवान्नद्रवशूलाच्चसर्वशः ॥ ३८ ॥
मुच्यतेमानवोयाद्दग्विष्णुमाराधनेभवात्।
प्लीहगुल्मोदरादींश्चमन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ३९ ॥

कासंपंचविधंचापिऊरुस्तम्भामवातकैः ।
हन्यादेवप्रयोगोऽयमश्विभ्यांनिर्मितःपुरा ॥ ४० ॥

अर्थ–शुद्ध लोहेके मलका चूर्ण छे पल, हरड़ और सेलखडी प्रत्येक दश तोले, शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला चीता दो तोले, सोंठ दो तोले, पीपल दो तोले, छोटी इलायची दो तोले, तेजपात दो तोले, खिरैंटी दो तोले, नागरमोथा दो तोले, अजवायन दो तोले, धनियाँ दो तोले, राल दो तोले, आमला दो तोले, वायबिडंग दो तोले, शंखनाभि दो तोले, अर्जुनवृक्षकी छाल दो तोले, असनवृक्षकी छाल दो तोले, और चिरचिरेकी जड़ दो तोले लेकर सबका वारीक चूर्णकर घीके चिकने वासनमें रखकर प्रति दिन खानेसे पक्तिशूल और अन्नद्रवकृतशूलसे मनुष्य इसप्रकार निर्मुक्त होजातेहैं जैसे विष्णुभगवान्के आराधनसे इस असारसंसारसे निर्मुक्त होजातेहैं । तथा प्लीहा, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि, अरुचि, पाँचप्रकारकी खाँसी, ऊरुस्तम्भ और आमवात रोग दूर होजाता है । यह योग पूर्वकालमें अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥ ३३–४० ॥

अथ शंखचूर्णम् ।

शंखचूर्णंसलवणंसहिंगुव्योषसंयुतम् ।
उष्णोदकेनतत्पीतंशूलंहन्तित्रिदोषजम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–शंख, सेंधानोन, हींग और त्रिकुटा इनका चूर्ण बनाकर गरम जलके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज शूल आराम होताहै ॥ ४१ ॥

अथ त्रिफलामंडूरम् ।

गोमूत्रशुद्धमण्डूरंत्रिफलाचूर्णसंयुतम् ।
विलिहन्मधुसर्पिर्भ्यांशूलंहन्तित्रिदोषजम् ॥ ४२ ॥
सर्वचूर्णसमंमण्डूरंग्राह्यंप्रधानत्वात् ।

अर्थ–त्रिफला प्रत्येक एक भाग और गोमूत्रमें शुद्ध किया हुआ मण्डूर तीन भाग लेवै, सबका एकत्र चूर्ण बनाकर सहत और घीके साथ चाटनेसे त्रिदोषज शूल नष्ट होताहै ॥ ४२ ॥

अथ बीजपूराद्यं घृतम् ।

बीजपूरकमेरण्डंरास्नांगोक्षुरकंबलाम् ।
पृथक्पंचपलान्भागान्यवप्रस्थसमायुतान् ॥ ४३ ॥

वारिद्रोणेनसंसाध्यंयावत्पादावशेषितम्।
घृतप्रस्थंपचेत्तेनकल्कंदत्त्वाक्षसम्मितम् ॥ ४४ ॥
तुम्बुरूण्यभयाव्योषहिंगुसौवर्चलंविडम्।
सैन्धवंयावशूकश्चस्वर्जिकामम्लवेतसम् ॥ ४५ ॥
पुष्करंदाडिमंचैववृक्षाम्लंजीरकद्वयम्।
मस्तुप्रस्थद्वयंसिद्धंततोमृद्वग्निनापचेत् ॥ ४६ ॥
पानमेतत्प्रशंसन्तिशूलंहन्यात्त्रिदोषजम्।
वातशूलंयकृच्छूलंगुल्मप्लीहापहंपरम् ॥ ४७ ॥
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्चअंगशूलञ्चयद्भवेत्।
बलवर्णकरंहृद्यमग्निसंदीपनंपरम् ॥ ४८ ॥

अर्थ-गायका घी दोसेर, दहीका तोड चारसेर,क्राथके लिये बिजोरा नीबू, अरण्ड, रास्ना, गोखुरू, और खिरैटी ५ पल, जो दोसेर, पाकके लिये जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठसेर रक्खे, कल्कके लिये तुम्बुरु हरड, त्रिकुटा, हींग, कालानोन, विरियासंचरनोन, सेंधानोन, जवाखार, सज्जी, अम्लवेंत, पोहकरमूल, अनार, विषांविल, जीरा और कालाजीरा, प्रत्येक समान और सब बीस तोले लेंवे। सबको यथाविधिसे मिलाकर मन्दाग्निसे पकावे। जब सिद्ध होजाय तब उतारकर उत्तमपात्रमें भरके रख देवे। इसको पीनेसे-त्रिदोषशूल, वातशूल, यकृच्छूल, गुल्म, प्लीहा, हृदयशूल, पार्श्वशूल और अंगशूल, नाश होताहै। यह-बल, वर्ण, इनको करनेवाला, हृदयको हितकारी, और अग्निको दीपनकरनेवाला है ॥ ४३-४८ ॥

अथ रास्नाद्यंघृतंतैलञ्च।

रास्नाश्वगन्धाकपिकच्छुभूमिकूष्माण्डगोकण्टकशालपर्णी।
छिन्नारुहैरण्डबलाशताह्वपुनर्नवानांविधिनोद्धृतानाम् ॥
प्रत्येकशः पंचपलंगृहीत्वापचेद्घटेऽपांकृतपादशेषे ॥ ४९ ॥
शतावरीरसंपूतंदत्त्वात्रपलषोडशम्।
घृतप्रस्थंविपक्तव्यंतैलमेरण्डमेववा ॥ ५० ॥
दत्त्वाष्टवर्गकल्कञ्चगुग्गुलोर्वा पलाष्टकम्।

सिद्धंघृतंचतैलंवादद्याद्वातगदातुरे ॥ ५१ ॥
एकजंद्वन्द्वजंचैवसर्वगञ्चविशेषतः ।
आमवातगदंहन्तिघृतमेतदनुत्तमम् ॥ ५२ ॥
पार्श्वशूलञ्चहृच्छूलंकटिशूलञ्चनाशयेत् ॥
पादमन्याभिसन्धीनांशूलंहन्तिनसंशयः ॥ ५३ ॥

अर्थ–गायकाघी अथवा अरंडका तेल दोसेर, शतावरका रस दो सेर, क्वाथके लिये रास्ना, असगंध, कौंछ, विदारीकन्द, गोखुरू, शालिपर्णी, गिलोय, अरण्ड खिरैटी, सौंफ और पुनर्नवा प्रत्येक पांच पल, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठ-सेर रक्खे, और कल्कके लिये (काकोली, क्षीरकाकोली मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, जीवक, ऋषभक) या गूगुल एकसेर लेवै । सबको मिलाकर घृत अथवा तेल सिद्ध करे । इस घृत या तेलको सेवनकरनेसे सर्व प्रकारके वातरोग और आमवात रोगको दूर करैहै । तथा पार्श्वशूल हृदयशूल, कटिशूल, पाद मन्या और संधियोंके शूलको हरैहै ॥ ४९–५३ ॥

अथाग्निमुखरसः ।

मृतःसूताभ्रकंचाम्लवेतसंताम्रगंधकम् ।
विषंफलत्रयंतुल्यंचूर्णमर्द्यंदिनावधि ॥ ५४ ॥
विषमुण्डतिकावासाविजयारक्तशालिनी ।
बृहतीचमहाराष्ट्रीधत्तूरंपद्मपत्रकम् ॥ ५५ ॥
अन्तमत्यमृताजम्बुर्गव्यंनीलोत्पलद्रवैः ।
समांशंपंचलवणंदत्त्वार्द्रकरसेनच ॥ ५६ ॥
दिनंपेष्यंततःकुर्याद्वटिकांचणमात्रिकाम् ।
प्रातर्मध्याह्नरात्रौचभक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥ ५७ ॥
मांसेक्षुपिष्टगुर्वन्नंगोपयश्चापिबेच्छनैः ।
भक्षयेद्वातशूलार्त्तःसोऽयमग्निरसोत्तमम् ॥ ५८ ॥
हरीतकीप्रातिविषाहिंगुसौवर्चलंवचा ।

कलिंगेन्द्रयवातुल्यंपाययेदुष्णवारिणा ॥
कर्षैकमनुपानंस्याद्वातशूलहरंपरम् ॥ ५९ ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, अमलबेंत, ताँबेकी भस्म, शुद्ध गंधक शुद्ध तोलिया और त्रिफला, यह सब समान भाग लेकर एक एक दिन विपतुण्डिका, वासा, भांग, रक्तशालिनी, बृहती, जलपीपल, धतूरा, कमलके पत्र, शालिपर्णी, गिलोय, जामन, गोबर और नीलोत्पलके रसमें खरल करै । फिर इसमें समान भाग पंचलवण मिलाकर एक दिन अदरखके रसमें खरल करै । पश्चात् चनेकी बराबर गोलियां बनालेवै । एक गोली प्रातःकाल, एक गोली दुपहरको और एक गोली रात्रिको भक्षण करै, इसप्रकार प्रतिदिन तीन गोली खावै । अनुपान—हरड, अतीस, हींग,कालानोन, बच,कुडेकीछाल और इन्द्रजवका चूर्ण दो तोला गरम जलके साथ । इसपर मांस, ईख, पिट्ठी भारी अन्न और गायका दूध पीवै । यह अग्निमुखरस वातशूलको दूर करैहै ॥ ५४–५९ ॥

अथोदयभास्कररसः ।

भस्मसूतसमंचाभ्रंशिलागंधकतालकम् ।
हिंगुकंकुष्ठमुस्तञ्चतुल्यंचूर्णंविभावयेत् ॥ ६० ॥
स्नुह्युन्मत्तस्यनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीद्रवैःपुनः ।
प्रतिद्रावैर्दिनंभाव्यंशुष्कंतद्गोलकंकुरु ॥ ६१ ॥
वस्त्रेबद्ध्वामृदालेप्यंशुष्कन्तुसंपुटेपचेत् ।
चतुर्यामार्द्धमात्रेषुतमादायविचूर्णयेत् ॥ ६२ ॥
गुंजाष्टंघृतशुण्ठीभ्यांलेह्यश्चोदयभास्करः ।
वातशूलप्रशान्त्यर्थंतिलक्षारंसकुष्टकम् ॥
मधुनालेहयेच्चानुजलंवाकाकतुण्डजम् ॥ ६३ ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, मनशिल, गंधक, हरिताल, हींग, मुरदासिंह, नागरमोथा, यह सब समानभाग लेकर थूहर, धतूरा, सम्हालू और जलपीपलके रसमें एक एक दिन खरल कर गोला बना सुखादेवै, पश्चात् इस गोलेको वस्त्रमें बांध मट्टीका लेपकर ४॥ साढेचार प्रहर तक पुटपाक करै । शीतल होने पर चूर्ण करलेवै । आठ गुंजाभर इस उदयभास्कर रसको सोंठके चूर्णके तथा सहतके साथ चाटै तो वातशूल दूर होवै । अनुपान तिलोंका खार और कूठका चूर्ण या कौआठोडीका जल अथवा सहतके साथ है ६०–६३॥

अथ भूदारोरसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंमृतताम्ररोमनःशिला ।
सैन्धवंमाक्षिकंतालंधत्तूरंहिंगुसूरणम् ॥ ६४ ॥
महाराष्ट्र्यर्कनिर्गुण्डीवासैरण्डद्रवैर्दिनम् ।
मर्द्यंरुद्ध्वापुटेपच्यात्कुक्कुटाख्येसमुद्धरेत् ॥ ६५ ॥
अष्टगुंजांलिहेत्क्षौद्रैर्भूदारोवातशूलजित् ।
हिंगुसौवर्चलंशुंठीमक्षमुष्णाम्बुनाप्यनु ॥ ६६ ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताँबेकी भस्म, लोहेकी भस्म मनफल, सेंधा-नोन, सोनामाखी, हरिताल, धतूरा, हींग और जमीकन्द, यह सब समान भाग लेकर जलपीपल, निर्गुण्डी, वासा और अरण्डके रसमें एक एक दिन खरलकर कुक्कुटपुटमें पकावे । आठ घुँघुची भर इस भूदाररसको सहतके साथ चाटे तो वातशूल दूर होय, अनुपान–हींग, कालानोन और सोंठका चूर्ण दो तोले भर गरम जलके साथ पीवे ॥ ६४–६६ ॥

अथ शिलाबद्धरसः ।

मृतसूतस्यभागैकंभागैकांशोधितांशिलाम् ।
दिनंजम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्यंरुद्ध्वाधमेल्लघु ॥ ६७ ॥
शिलाबद्धोरसोनामगुंजैकंपित्तशूलजित् ।
एकंहिंगुशतंपथ्यात्रिशुण्ठीद्विसुवर्चला ॥
एतच्चूर्णञ्चकर्षैकमनुस्याच्छूलशान्तये ॥ ६८ ॥

अर्थ–पारेकीभस्म एकभाग, शुद्धमैनशिल एकभाग लेकर दोनोंको जम्बीरी नीबूकेरसमें एकदिन खरलकर लघुपुटमेंरखके फूँकदेवै । इस शिलाबद्धरसको एकगुंजाभर खानेसे पित्तशूल दूर होताहै । अनुपान एकभाग हींग, सौभाग हरड़, तीनभाग सोंठ और दो भाग कालानोन इनका चूर्ण बनाकर दो तोले खावै ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

अथ शूलसिंहरसः ।

विषकर्षंवचाकर्षंत्रिकटुत्रिफलाचषट् ।
भार्ङ्गीमुस्ताविडंगानांप्रतिकर्षञ्चचूर्णयेत् ॥ ६९ ॥

गुडेनसर्वतुल्येनगुटिकाचणमात्रिका ।
शूलसिंहप्रयोगोऽयंकफशूलहरंभवेत् ॥ ७० ॥
एरण्डतैलशुण्ठीभ्यांहिंगुसौवर्चलान्वितम ॥
उष्णोष्णकैःपिबेच्चानुरसोवानन्दभैरवः ॥ ७१ ॥

अर्थ–विष, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, भारंगी, नागरमोथा और बायविडंग प्रत्येक एक २ कर्ष लेकर सबका चूर्ण करले और सब चूर्णकी बराबर गुड मिलाकर चनेकी समान गोली बना लेवे । यह शूलसिंहरस कफशूलको नष्ट करै है । अनुपान–हींग और कालेनोनको अंडीके तेल और सोंठकेसाथ या गरम जलके साथ पान करे ॥ ६९–७१ ॥

अथ सर्वांगसुन्दररसः ।

शुद्धसूतंमृतंताम्रंशिलामाक्षिकतालकम् ।
चूर्णयेल्लवणंपंचएतद्दशकतुल्यकम् ॥ ७२ ॥
सूततुल्यंवत्सनाभंचूर्ण्यंभाव्यंदिनावधि ।
विषमुष्ट्याजयन्त्यावाविजयारक्तशाकिनी ॥ ७३ ॥
शोभांजनंमहाराष्ट्रीद्रवैर्धुस्तूरजैस्तथा ।
रुद्ध्वातुसंपुटेपच्यात्समुद्धृत्यविचूर्णयेत् ॥ ७४ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरोनामरसोगुंजाचतुष्टयम् ।
भक्षयेद्धिंगुशुण्ठीभ्यांकफशूलञ्चगुल्मनुत् ॥ ७५ ॥
व्योषंसौवर्चलंहिंगुकरञ्जबीजसंयुतम् ।
पिबेदुष्णाम्बुनाचानुकफशूलहरंपरम् ॥ ७६ ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, ताँबेकी भस्म, मनशिल, सोनामाखी, हरिताल, पांचोंनोन और वत्सनाभविष सब समान भाग लेकर चूर्ण बना कुचिला, जयन्ती, भाँग रक्तशाकिनी, सँजिना, जलपीपल और धतूरेके रसकी प्रतिदिन भावना देकर पुटपाक करे, फिर शीतल होजानेपर तोड़कर चूर्ण करले तो सर्वांगसुन्दररस सिद्धहो यह सर्वांगसुन्दररस हींग और सोंठके साथ खानेसे–कफ शूल और गुल्मको दूर करैहै । मात्रा चार रत्तीकी है, अनुपान–त्रिकुटा, कालानोन, हींग और करंजके बीजोंका चूर्ण गरम जलके साथ पान करे ॥ ७२–७६ ॥

अथ शूलवज्रिणीवटिका ।

रसगंधकलोहानांपलार्द्धेनसमन्वितम् ।
टंकणंरामठं शुंठीत्रिकटुत्रिफलाशठी ॥ ७७ ॥
त्वगेलापत्रतालीशंजातीफललवंगकम् ।
यवानीजीरकंधान्यंप्रत्येकंतोलकंशुभम् ॥ ७८ ॥
माषैकावटिकाकार्याछागीदुग्धप्रपेषिता ।
गणेशयोगिनीशम्भुहरिसूर्यान्प्रपूज्यच ॥ ७९ ॥
शीतनीरानुपानेनच्छागीदुग्धेनवापुनः ।
एकैकाभक्षिताचेयंवटिकाशूलवज्रिणी ॥ ८० ॥
शूलमष्टविधंहन्तिप्लीहगुल्मोदरंज्वरम् ।
अष्ठीलानाहमेहांश्चमूत्ररोगंहलीमकम् ॥ ८१ ॥
अम्लपित्तामवातंचकामलांपाण्डुरोगकम् ।
शोथंमलग्रहंवृद्धिंश्लीपदश्चभगन्दरम् ॥ ८२ ॥
कासंश्वासंव्रणंकुष्टंकृमिहिक्कामरोचकम् ।
अर्शांसिग्रहणींदुष्टांसर्वातीसारनाशनम् ॥ ८३ ॥
विपूचीकण्डुमन्दाग्निंपिपासांपीनसंगदम् ।
एकजंद्वन्द्वजंवापिदोषत्रयसमुद्भवम् ॥ ८४ ॥
बुद्धिकान्तिप्रदानित्यंसेविताचचिरायुषी ।
गुरुणाचन्द्रनाथेनमह्यामेषाप्रकीर्त्तिता ॥
संसारलोकरक्षार्थंविचिन्त्यपरिनिर्मिता ॥ ८५ ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहा प्रत्येक दो दो तोले, सुहागा, हींग, सोंठ, त्रिकुटा, त्रिफला, कचूर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, तालीशपत्र, जायफल, जीरा, लौंग, अजवायन, धनियाँ प्रत्येक एक एक तोला लेवै, सबको बकरीके दूधमें पीसकर एक एक मासेकी गोली बनालेवै । इसको शूलवज्रिणीवटिका कहतेहैं । गणेश, योगेश्वरी, शंकर, हरि और -सूर्यदेवका पूजनकर प्रतिदिन एक गोली शीतलजलके अथवा बकरीके दूधके साथ खावै । यह शूलवज्रिणीवटिका–आठ-

प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, ज्वर, आष्ठीला, आनाह, प्रमेह, मूत्ररोग, हलीमक, अम्लपित्त, आमवात, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, गलग्रह, वृद्धिरोग, श्लीपद, भगन्दर, कास, श्वास, व्रण, कोढ, कृमि, हिक्का, अरुचि, अर्श, दुष्टसंग्रहणी, सर्वप्रकारके अतिसार, विषूचिका, कण्डू, मंदाग्नि, पिपासा, पीनस, एक दोषसे उत्पन्न हुए, दो दोषसे उत्पन्न हुए और तीन दोषसे उत्पन्न हुए रोगोंको दूर करै है । बुद्धि और कान्तिको बढानेवाली है । इसको नित्यसेवनकरनेसे मनुष्य दीर्घायु होतेहैं । यह शूलवज्रिणी वटिका संसारके मनुष्योंकी रक्षाके लिये श्रीमान् गुरु चन्द्रनाथजीने विचारकर निर्म्माण की है ॥ ७७–८५ ॥

अथाग्निमुखोरसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंरसार्द्धंमृतताम्रकम् ।
दिनैकंशाकजैर्द्रावैर्मर्द्यंक्षीरिणीद्रवैः ॥ ८६ ॥
रुद्धालघुपुटेचैवपच्यादग्निमुखोरसः ।
यवानीन्द्रयवापाठाबिल्वशुण्ठीरसांजनम् ॥
चूर्णंशूलहरंचानुपिबेदुष्णाम्बुनासह ॥ ८७ ॥

अर्थ–शुद्धपारा दो भाग, शुद्धगंधक दो भाग, ताँबेकी भस्म एक भाग लेवे, इन सबको एकत्रकर एक दिन शाकवृक्षके रसमें और एक दिन खिरनीके रसमें खरल करे, पश्चात् लघुपुटमें फूँक देवे तो अग्निमुख रस सिद्ध हो । इसको भक्षण कर ऊपरसे अजवायन, इन्द्रजौ, पाढ, बेल, सोंठ और रसौतका चूर्ण गरमजलके साथ पीवे तो शूल दूर होवे ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

अथ शूलरोगहरंचूर्णम् ।

मृतताम्रंपलैकन्तुचिंचाक्षारपलाष्टकम् ।
हिंगुहरीतकीव्योषंकरंजबीजचोरकम् ॥ ८८ ॥
प्रत्येकंपलमात्रन्तुचूर्णंकोष्णोदकेपिबेत् ।
कर्षैकंशूलशान्त्यर्थंसर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ ८९ ॥

अर्थ–ताँबेकी भस्म एकपल, इमलीका खार आठ पल, हींग एकपल, हरड एकपल, सोंठ एकपल, पीपल एकपल, मिरच एकपल करंजके बीज एकपल, चोर [illegible] एकपल लेवे, सबका चूर्ण कर एककर्षप्रमाण [illegible]रमजलके साथ पीनेसे सर्वोपद्रवसंयुक्तशूलरोग शान्त होताहै ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

अथ शूलकेसरीरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंयामैकंमर्दयेद्दृढम् ।
द्वयोस्तुल्यंशुल्वपत्रसंपुटेतंनिरोधयेत् ॥ ९० ॥
ऊर्द्धाधोलवणंदत्त्वासद्भाण्डेधारयेद्भिषक् ।
रुद्धागजपुटेपच्यात्स्वाङ्गशैत्यंसमुद्धरेत् ॥ ९१ ॥
संपुटंचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंपर्णखण्डेद्विगुंजकम् ।
भक्षयित्वानुपानंचहिंगुशुण्ठीचजीरकम् ॥ ९२ ॥
वचामरिचचूर्णञ्चकर्षमुष्णाम्बुनापिबेत् ।
असाध्यंनाशयेच्छूलंरसोऽयंशूलकेसरी ॥ ९३ ॥

अर्थ–शुद्धपारा एक भाग और शुद्धगंधक दो भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करे, फिर तीन भाग ताँबा लेकर तिसका सम्पुट बनाय उस सम्पुटमें पूर्वोक्त खरल किये हुए पारे और गन्धकको रखके ढकदेवे, फिर इसको नोनसे भरी हुई हांडीमें गाड़ हाँडीका मुख बन्द कर गजपुटमें धरके फूँक देवे । स्वांगशीतल होनेपर उसको बाहर निकालकर सम्पुटको बारीक पीसके चूर्ण बना लेवे तो शूलकेसरीरस सिद्ध हो । इसको दो रत्तीभर पानमें रखके खावे और ऊपरसे हींग, सोंठ, जीरा, वच और कालीमिरचका चूर्ण एक कर्षप्रमाण गरम जलके साथ पान करे । यह शूलकेसरीरस असाध्य शूलको भी दूर करे है ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥

अथ शूलगजकेसरीरसः ।

तोलकाश्चतुरःसूतादष्टौगंधाश्मनस्तथा ।
समादायततःकार्यंपलंताम्रस्यसंपुटम् ॥ ९४ ॥
एकस्मिन्नथपात्रेद्वौकृत्वागंधकपारदौ ।
अनेनताम्रपात्रेणपिधातव्यंदृढंततः ॥ ९५ ॥
क्षिप्त्वास्थाल्यांलवणंततःक्षिप्त्वारसंपुटेत् ।
तस्योपरिपुटंक्षिप्त्वारुद्धास्थाल्यामथापिच ॥ ९६ ॥
निरुध्यातिप्रयत्नेनपचेद्गजपुटेनच ।
स्वांगशीतलतांज्ञात्वासंपुटंपरिचूर्ण्यच ॥ ९७ ॥

निहंत्यष्टविधंशूलंगुलमप्लीहयकृद्‌दम् ।
मन्दाग्निंग्रहणींपाण्डुंकामलाञ्चहलीमकम् ॥ ९८ ॥
श्लेष्मवातोत्थरोगांश्चज्वरानपितथाविधान् ।
हरीतक्यनुपानेनदातव्योऽयंभिपग्वरैः ॥
पथ्यंदोषानुसारेणशास्त्रप्रोक्तंप्रदापयेत् ॥ ९९ ॥

अर्थ—पारा, चार तोले, गन्धक आठतोले लेकर दोनोंकी कज्जली करे, फिर आठतोले तांबा लेकर तिसका सम्पुट बना उससम्पुटमें उपरोक्त कज्जली रख दूसरे पात्रसे आच्छादित करके नोनकी भरीहुई हांडीमें स्थापन करे, और उस हांडीका मुख बन्द करदेवे, पश्चात् गजपुटमें फूँकदेवे, फिर स्वांगशीतल होजानेपर सम्पुटको पीसकर चूर्ण करलेवे, तो शूलगजकेसरी रस सिद्ध हो । इसको हरडकेसाथ सेवन करनेसे, आठ प्रकारके शूल, गुल्म, प्लीहा, यकृत, मंदाग्नि, संग्रहणी, पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, कफवातोत्पन्नरोग और सर्वप्रकारके ज्वर दूर होतेहैं । पथ्य—दोषानुसार करावे ॥ ९४–९९ ॥

अथ गौडारसः ।

शुद्धंसूतंमृतंतीक्ष्णंपंचमंभागसम्मितम् ॥
चूर्णंतयोर्भावयित्वाशतावर्यारसेनच ॥ १०० ॥
धात्र्यागुडूच्यास्त्रिदिनंखल्वेमर्द्यपुनःपुनः ।
गुंजाचतुष्टयंखादेद्‌घृतेनमधुनापयः ॥ १०१ ॥
अनुपानंपिबेत्प्राज्ञःसर्वशूलनिवारणम् ।
वातरोगान्पित्तरोगान्कफरोगान्सुदुस्तरान् ॥ १०२ ॥
त्वग्दोषदेहकार्श्यञ्चदाहमुग्रंनिवारयेत ।
गौडारसःसमुद्दिष्टोबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥ १०३ ॥

अर्थ—शुद्धपारा एक भाग और लोहेकी भस्म पांच भाग, दोनोंको शतावरीके रसमें, आमलेके रसमें और गिलोयके रसमें क्रमसे एक एक दिन भावना देकर खरल करे । इसको चारगुंजाभर खावे और ऊपरसे घी, सहत तथा दूध पीवे तो यह 'गौडारस' सर्वप्रकारके शूल, सर्वप्रकारके वातरोग, पित्तरोग, कफरोग, त्वचाके विकार, शरीरकी कृशता और उग्रदाहको दूर करे । तथा बल, वर्ण और अग्निको बढावे है ॥ १००–१०३ ॥

अथ षण्मुखोरसः ।

सूतंगंधंसमंशुद्धंसूतांशंमृतताम्रकम् ।
सौवर्चलञ्चसूतांशंजम्बीरैर्दिनसप्तकम् ॥ १०४ ॥
मर्दयेदातपेतीक्ष्णंरुद्ध्वालघुपुटेत्रयम् ।
दत्त्वादायतुतच्चूर्णंसमंत्रिकटुकंपचेत् ॥ १०५ ॥
षण्मुखोऽयंरसोनामत्रिगुञ्जेनामशूलजित् ।
एरण्डतैलषड्भागंलशुनस्यदशाष्टकम् ॥ १०६ ॥
एकंहिंगुत्रिसिन्धूत्थंसर्वमेकत्रकारयेत् ।
त्रिनिष्कंभक्षयेच्चानुआमशूलप्रशान्तये ॥ १०७ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताँबेकी भस्म और सज्जी, यह सब समान भाग लेकर सात दिनतक जम्भीरी नीबूके रसके द्वारा तेज धूपमें खरल करै, पश्चात् सूखजानेपर लघुपुट देवै इसप्रकार तीनपुट देवै, फिर इसमें बराबरका त्रिकुटेका चूर्ण मिलालेवै । इसको षण्मुखरस कहतेहैं । इसको तीन रत्ती प्रमाण खानेसे सर्वप्रकारके आमशूल दूर होतेहैं । अनुपान–अण्डीका तेल छे भाग, लहशुन १८ अठारह भाग, हींग एक भाग और सैन्धवनोन तीन भाग एकत्र मिलाकर बारह मासे प्रमाण भक्षण करै ॥ १०४–१०७ ॥

अथ त्रिकत्रयाद्यंतैलम् ।

त्रिकत्रयसमायुक्तंतालमूलीशतावरी ।
लोहोनिहन्तिशूलानिदारुणान्ययसोरजः ॥ १०८ ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, बायाविडंग, चीता, मुसली, शतावर, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै । सबको एकत्र पीसके चूर्ण करले । यह त्रिकत्रयाद्य लोह सर्वप्रकारके शूलोंको निर्मूल करैहै ॥ १०८ ॥

अथ शर्करालौहम् ।

त्रिफलायास्तथाधान्याश्चूर्णंवाक ललौहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तंसर्वशूलेषुलेहयेत् ॥ १०९ ॥

पुनरुक्तत्वाद्धान्याभागद्वयंग्राह्यम् ।
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णम् ।

अर्थ-हरड एक भाग, बहेडा एक भाग, आमला दो भाग और कालेलोहेका चूर्ण चार भाग लेवै, सबको एकत्र पीसके चूर्ण बनाले, फिर इस चूर्णमें बराबर मिश्री मिलाकर सेवन करै तो सर्वप्रकारके शूल दूर होवें ॥ १०९ ॥

अथ चतुःसमं लौहम्।

अभ्रंताम्रंरसंलौहंप्रत्येकंसंस्कृतंपलम् ।
सर्वमेतत्समाकृत्यगृह्णीयात्कुशलोभिषक् ॥ ११० ॥
आज्येपलद्वादशकेदुग्धेऽपिघृतसंक्षये ।
पक्त्वातत्रक्षिपेच्चूर्णंसुपूतंघनवाससा ॥ १११ ॥
विडंगत्रिफलावह्नित्रिकटूनान्तथैवच ।
पिष्ट्वापलोन्मितानेतान्यथासंमिश्रितान्नयेत् ॥ ११२ ॥
ततःपिष्टेषुभाण्डेषुस्थापयेच्चविचक्षणः ।
आत्मनःशोभनेचाह्निपूजयित्वापरंगुरुम् ॥ ११३ ॥
घृतेनमधुनामर्द्यंभक्षयेन्माषकोन्मितान् ।
अष्टौमाषान्क्रमेणैववर्द्धयेच्चसमाहितः ॥ ११४ ॥
अनुपानञ्चदुग्धेननारिकेलोदकेनवा ।
जीर्णेलोहितशाल्यन्नंमुद्गमांसरसादयः ॥ ११५ ॥
रसायनविरुद्धानिचान्यान्यपिनकारयेत् ।
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्चआमवातंकटीग्रहम् ॥ ११६ ॥
गुल्मशूलंशिरःशूलंयकृत्प्लीहौविशेषतः ।
अग्निमान्द्यंक्षयंकुष्ठंकासंश्वासंविचर्चिकाम् ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्चयोगेनानेननाशयेत् ॥ ११७ ॥

अर्थ-अभ्रककीभस्म, ताँबेकीभस्म, पारेकीभस्म, लोहेकीभस्म, और शुद्ध गंधक प्रत्येक एक एक पल लेकर बारहपल घी और दूधके साथ पकावे, फिर इसको गाढेवस्त्रमें छानकर इसमें चार चार तोले वायविडंग, हरड, बहेडा, आमला, चीता, सोंठ, मिरच और पीपलका चूर्ण मिलादेवे । फिर इसको खूब चलाकर चिकने बासनमें भरके रखदेवै पश्चात् शुभदिनमें अपने परम गुरुका पूजनकर घृत और सहतके साथ मिलाके खावे । पहिले दिन एक मासे प्रमाण

खावै, दूसरे दिन दो मासे खाय, इसप्रकार प्रतिदिन एक एक मासा बढाके आठ मासे तक खावै। ऊपरसे दूध और नारियलका जल पीवै। इस औषधिके जीर्ण होनेपर लाल शालिधानोंका भात, मूँग, और मांसरस खावै। इसपै रसायन विरुद्धद्रव्य कदापि भक्षण नहीं करै। यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटीग्रह, गुल्म, शूल, शिरःशूल, यकृत्, प्लीहा, मन्दाग्नि, क्षय, कोढ़, खाँसी, श्वास, विर्चाचिका, पथरी और मूत्रकृच्छादि रोगोंको दूर करैहै ११०-११७॥

अथ शूलिनोवर्जनीयानि ।

व्यायामंमैथुनंमद्यंलवणंकटुवैदलम् ।
वेगरोधंशुचंक्रोधंवर्जयेच्छूलवान्नरः ॥ ११८ ॥

इति शूलाध्यायः ।

अर्थ-व्यायाम, मैथुन, मद्य, लवण, कटुरसवाले द्रव्य, विदल अन्न, मलमूत्रादिकोंके वेगका धारण, शोक और क्रोध यह सब शूलरोगी त्याग देवै ११८॥

इति शूलाध्यायः ।

अथ परिणामशूलचिकित्सा ।

वमनंतिक्तमधुरैर्विरेकश्चात्रशस्यते ।
बस्तयश्चहिताःशूलेपरिणामेसमुद्भवे ॥ १ ॥

अर्थ-तिक्त और मधुरद्रव्योंके द्वारा वमन तथा विरेचन और वस्तिप्रयोग, यह सब परिणामशूलमें हितकारी हैं ॥ १ ॥

अथ परिणामशूलहरमोदकः ।

विडंगव्योषदन्त्यग्नित्रिवृच्चूर्णंगुडैःकृतम् ।
मोदकःसर्वजंपक्तिशूलंहंत्यग्निदीपनम् ॥ २ ॥

अर्थ-बायबिडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, दन्ती, चीता और निसोत, सब समान भाग ले चूर्णकर गुडमें मिलाके लड्डू बनालेवै। गरमजलके साथ खानेसे यह मोदक सर्वप्रकारके पक्तिशूलोंको हरैहै। तथा अग्निको दीपन करै है ॥ २ ॥

अथ परिणामशूलहरोपायः ।

नागरतिलगुडकल्कं पयसासंसाध्ययः मानद्यात् ।
उग्रंपरिणतिशूलंतस्याभ्युपैतिसप्तरात्रेण ॥ ३ ॥

अर्थ—सोंठ, तिल और गुड़ इनका कल्क दूधमें पकाकर सेवन करनेसे सात रात्रियोंके भीतर परिणामशूल दूर होताहै ॥ ३ ॥

अथापर उपायः ।

शम्बूकजंभस्मपीतंजलेनोष्णेनवारिणा ।
पक्तिजंविनिहंत्याशुशूलंविष्णुरिवासुरान् ॥ ४ ॥

अर्थ—घोंघेकी भस्म गरम जलके साथ पीनेसे परिणामशूल दूर होताहै ॥४॥

अथान्य उपायः ।

रसोनपत्रस्वरसःपीतोमधुनापिदुस्तरंशूलम् ।
परिणामजंनिहन्यात्पित्तप्रबलंत्रिरात्रेण ॥ ५ ॥

अर्थ—लहशुनके पत्तोंके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे पित्तप्रबल परिणामशूल तीन दिनमें दूर होताहै ॥ ५ ॥

अथ पिप्पलीघृतम् ।

पिप्पलीक्वाथकल्काभ्यांसिद्धंसर्पिःसमाक्षिकम् ।
पक्तिशूलंप्रवृद्धञ्चहन्तिक्षीरानुपानतः ॥ ६ ॥
शीतेमधुपानादिकम् ।

अर्थ—गायका घी एक सेर ऽ१, पीपलका क्वाथ चार सेर ऽ४, और कल्कके लिये पीपल पावभर ऽ। सबको मिलाकर घृत सिद्ध करे । पश्चात् इस घृतको सहतके साथ सेवन करे और ऊपरसे दूधका पान करे तो अत्यन्त बढाहुआ परिणामशूल नष्ट होवै ॥ ६ ॥

अथ नारिकेलखंडम् ।

कुडवंनारिकेलस्यश्लक्ष्णंदृपदिपेपितम् ।
शुद्धखंडस्यकुडवंसर्वमेतच्चतुर्गुणे ॥ ७ ॥
आलोड्यनारिकेलस्यजलेमृद्वग्निनापचेत् ।
धन्याकंपिप्पलीमुस्तंचातुर्जातंसुचूर्णितम् ॥ ८ ॥
शाणप्रमाणंतद्ग्राह्यंशीतीभूतेक्षिपेद्बुधः ।
नारिकेलस्यखण्डोऽयंपुंसोनिद्राबलप्रदः ॥ ९ ॥
अम्लपित्तंक्षयंशूलञ्चपरिणामजम् ।

नाशयेद्रक्तपित्तञ्चशुष्कंदार्वनलोयथा ॥
पलेसर्पिषिभृष्टञ्चशस्यंचाद्दोमधुप्रभम् ॥ १० ॥

अर्थ–सिलमें पीसकर घीमें भुनी हुई नारियलकी गिरी एकसेर, बूरा एकसेर दोनोंको चौगुने नारियलके जलमें मन्द मन्द अग्निसे पचावै, जब पककर शीतल हो जाय तब इसमें धनियाँ, पीपल, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशर प्रत्येकका चार चार मासे चूर्ण डालदेवै और करछीसे एकमएक करदेवै । यह नारिकेलखण्ड–मनुष्योंको निद्रा और बलको देनेवालाहै । तथा अम्लपित्त, क्षय, श्वास, परिणामशूल, और रक्तपित्तको दूर करै है ॥ ७–१० ॥

अथ बृहन्नारिकेलखण्डम् ।

नारिकेलफलान्यष्टौशर्कराप्रस्थमेवच ।
तज्जलंपात्रमेकन्तुसर्पिष्पंचपलानिच ॥ ११ ॥
शुण्ठीचूर्णस्यकुडवंप्रस्थार्द्धंक्षीरमेवच ।
सर्वमेकीकृतंपात्रेशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥ १२ ॥
तुगात्रिकटुकंमुस्तंचातुर्जातकधान्यकम् ।
द्विकणाकर्षयुग्मन्तुजीरकंचपृथक्पृथक् ॥ १३ ॥
श्लक्ष्णचूर्णानिनिक्षिप्यस्थापयेत्स्निग्धभाजने ।
खादेत्प्रातिदिनंशाणंयथेष्टादारसेविनः ॥ १४ ॥
सर्वदोषोद्भवंशूलमामवातंविनाशयेत् ।
परिणामभवंशूलमम्लपित्तञ्चनाशयेत् ॥ १५ ॥
बलपुष्टिकरंचैववाजीकरणमुत्तमम् ।
रक्तपित्तहरंश्रेष्ठंछर्दिहृद्रोगनाशनम् ॥ १६ ॥
अग्निसन्दीपनकरंसर्वरोगनिपूदनम् ।
धन्वन्तरिकृतंह्येतन्नारिकेलमिदंमहत ॥ १७

अर्थ–नारियलकी गिरी एक सेर ऽ१, बूरा दोसेर ऽ२, नारियलकाजल आठ सेर ऽ८, घी बीस तोले २०, सोंठका चूर्ण आध सेर ऽ॥, गायका दूध एक सेर ऽ१ लेवै, सबको एक पात्रमें करके धीरे धीरे मन्द मन्द अग्निसे पकावै, पकते

पकते जब गाढा होजाय तब वंशलोचन, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, नागकेसर, तेजपात, धनियाँ, पीपल, गजपीपल और जीरा, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले डाल देवै और करछीसे चलाकर एकम-एक कर देवै, फिर चूल्हेपैसे उतारकर चिकने वासनमें भरके रखदेवे । फिर इसमेंसे प्रतिदिन चारमासे खावे और यथेष्ट भोजन करै । यह बृहन्नारिकेल-खण्ड-सर्वदोषोत्पन्नशूल, आमवात परिणामशूल, अम्लपित्त, रक्तपित्त, वमन और हृदयरोगको दूर करै है, बल और पुष्टिको करै है, उत्तम वाजीकरण है, और अग्निको दीपन करै है, तथा सर्वप्रकारके रोगोंको दूर करै है, यह बृहन्नारि-केलखण्ड श्रीमान् धन्वन्तरिजीने निर्माण किया है ॥ ११-१७ ॥

अथ खण्डामलकी ।

स्विन्नपीठितकूष्माण्डात्तुलार्द्धंभृष्टमाज्यता ।
प्रस्थार्द्धेखण्डतुल्यन्तुपचेदामलकीरसात् ॥ १८ ॥
प्रस्थेसुस्विन्नकूष्माण्डरसप्रस्थे विघट्टयेत् ।
दर्वीपाकंगतेतस्मिंश्चूर्णीकृत्यविनिक्षिपेत् ॥ १९ ॥
द्वेद्वेपलेकणाजाजीशुण्ठीनांमरिचस्यच ।
पलंतालीशधन्याकंचातुर्जातकमुस्तकम् ॥ २० ॥
एतत्प्रमाणंप्रत्येकंप्रस्थार्द्धंमाक्षिकस्यच ।
पक्तिशूलं[illegible]तद्दोषत्रयकृतञ्चयत् ॥ २१ ॥
छर्द्यम्लपित्तमूर्च्छाश्चश्वासकासमरोचकम् ।
हृच्छूलंरक्तपित्तंचपृष्ठशूलञ्चनाशयेत् ॥ २२ ॥
रसायनमिदंश्रेष्ठंखण्डामलकसंज्ञितम् ॥ २३ ॥

अर्थ-प्रथम पेठेको उसेकर निचोडलेवै, ऐसा पेठा घीमें भुनाहुआ ५० पचा-सपल, आमलोंका रस ६४ चौंसठ तोले, पेठेका रस चौंसठ तोले सबको मिला-कर पकावे और करछीसे चलाता जाय, जब गाढ़ा होजाय तब इसमें पीपल, जीरा, सोंठ और कालीमिरचका चूर्ण दो दो पल, तालीशपत्र, धनियाँ, दाल-चीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात, और नागरमोथा प्रत्येकका चूर्ण एक एक पल और सहत बत्तीस तोले मिला देवैं । इसको सेवन करनेसे त्रिदोषोद्भव

परिणामशूल, अम्लपित्त, छर्दि, मूर्च्छा, श्वास, खाँसी, अरुचि, हृदयशूल, रक्तपित्त और पृष्ठशूलको यह खण्डामलकनामवाली उत्तम रसायन दूर करैहै ॥ १८-२३ ॥

अथ समुद्राद्यंचूर्णम् ।

सामुद्रंसैन्धवंक्षारोरुचकंरोमकंविडम् ।
दन्तीलोहरजःकिट्टंत्रिवृच्छूरणकंसमम् ॥ २४ ॥
दधिगोमूत्रपयसामन्दपावकपाचितम् ।
तद्यथाग्निबलंचूर्णंपिबेदुष्णेनवारिणा ॥ २५ ॥
जीर्णेजीर्णेचभुञ्जीतमांसादिघृतसाधितम् ।
नाभिशूलंयकृच्छूलंप्लीहगुल्मकृतञ्चयत् ॥ २६ ॥
विद्रध्यष्ठीलिकांहन्तिकफवातोद्भवंतथा ।
शूलानामपिसर्वेषामौषधंनास्तितत्समम् ॥
परिणामसमुत्थस्यविशेषेणान्तकृन्मतम् ॥ २७ ॥

अर्थ-समुद्रनोन, सैंधानोन, जवाखार, सज्जी, कालालोन, साँभर, विरिया, संचरनोन, दन्ती, लोहेकी भस्म, मण्डूर, निसोत, जमीकन्द, दही, गोमूत्र और दूध मिलाकर मन्दमन्द अग्निसे पकावै । इस चूर्णको शक्त्यनुसार गरमजलके साथ सेवन करै । इसके जीर्णहोनेपर घृतसे सिद्ध कियेहुए मांसादिक भोजन करै । यह समुद्राद्यचूर्ण-नाभिशूल, यकृत्शूल, प्लीहाशूल, गुल्मशूल, विद्रधि, अष्ठीलिका, कफ और वातसे उत्पन्न हुआ शूल, इन सबको हरैहै, इसकी समान शूलनाशक और दूसरी औषधि नहीं है, और परिणामशूल हो तो विशेषकरके विध्वंस करैहै । और कोई कोई वैद्य इसमें घृत मिलाकर समुद्राद्यघृत बनातेहैं ॥ २४-२७ ॥

अथ तारामण्डूरम् ।

विडंगंचित्रकंचव्यंत्रिफलात्र्यूषणानिच ।
नवभागानिचैतानिलोहकिट्टसमानिच ॥ २८ ॥
गोमूत्रंद्विगुणंदत्त्वामूत्रार्द्धिकगुडान्वितम् ।
शनैर्मृद्वग्निनापक्त्वासुसिद्धंपिंडतांगतम् ॥ २९ ॥

स्निग्धेभाण्डेविनिक्षिप्यभक्षयेत्कोलमात्रया।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैवभोजनस्यप्रयोजितः॥ ३०॥
योगोऽयंशमयत्याशुपक्तिशूलंसुदारुणम्।
कामलांपाण्डुरोगञ्चशोथंमन्दाग्नितामपि॥ ३१॥
अर्शांसिग्रहणीदोषंकृमिगुल्मोदराणिच।
नाशयेदम्लपित्तञ्चस्थौल्यंचैवापकर्षति॥ ३२॥
वर्ज्जयेच्छुष्कशाकानिविदाह्यम्लगुरूणिच।
पक्तिशूलान्तकोह्येषगुडोमण्डूरसंज्ञकः॥
शूलार्तानांकृपाहेतोस्तारयापरिकीर्तितः॥ ३३॥

अर्थ—वायविडंग, चीता, चव्य, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, यह सब समानभाग, सबकी समानमण्डूरका चूर्ण, और सबसे दुगना गोमूत्र, गोमूत्रसे आधा गुड लेवे, सबको एकत्र कर धीरे धीरे मन्द मन्द अग्निसे पकावे। जब सिद्ध होकर पिण्डसा होजाय तब एक चिकने बासनमें भरके रखदेवे। यह औषधि एक तोलाप्रमाण भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें खानेसे दारुण परिणामशूल, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, मन्दाग्नि, बवासीर, संग्रहणी, कृमि, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त और स्थूलताको दूर करैहै। इसपर शुष्कशाक, दाहकारक द्रव्य, अम्लद्रव्य और भारीपदार्थ त्यागने चाहियें। यह मण्डूरसंज्ञक गुड–विशेषकरके परिणामशूलनाशक है। शूलरोगवाले मनुष्योंपर कृपाकरके यह मण्डूर तारानें प्रकट कियाहै॥ २८–३३॥

अथ बृहच्छतावरीमंडूरम्।

तप्तांबराम्बुसिक्तस्यमण्डूरस्यपलाष्टकम्।
अष्टौवरीरसादुग्धाद्दध्नोधात्रीरसादपि॥ ३४॥
सर्पिश्चतुष्पलंपक्त्वाचतुःशाणंरजःपृथक्।
क्षिपेन्मुस्तकणाजाजीधान्यपथ्याद्रिजातकम्॥
त्रिदोषपक्तिशूलाम्लपित्तरोचकवातनुत्॥ ३५॥
वराम्बुत्रिफलाक्काथः।

अर्थ-त्रिफलाके क्वाथमें शुद्धमण्डूर आठपल, सतावरका रस ८ आठपल, दूध आठपल, आमलोंका रस आठपल और घी चारपल डालके पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब नागरमोथा, पीपल, जीरा, धनियाँ, हरड, दालचीनी और इलायची प्रत्येकका चूर्ण चार चार मासे डालकर करछीसे चलादेवै। यह बृहच्छतावरी मण्डूर-सान्निपातिक पक्तिशूल, अम्लपित्त, अरुचि और वातको दूर करैहै ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथ शतावरीमण्डूरम्।

शतावरीरसाद्दुग्धाद्दध्नोमण्डूरचूर्णकात्।
पृथक्पृथक्पलान्यष्टौघृतात्पलचतुष्टयम् ॥
पक्काद्याद्वातपित्तोत्थंपक्तिशूलंजयेद्ध्रुवम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-शतावरका रस, दूध, दही और मण्डूरका चूर्ण प्रत्येक आठ आठ पल, घृत चारपल सबको मिलाकर पकावे। यह शतावरीमण्डूर-त्रिदोषजनित परिणामशूल दूर करैहै ॥ ३६ ॥

अथ शर्करामण्डूरम्।

शतावरीरसप्रस्थेप्रस्थेचसुरभीजले।
अजायाःपयसःप्रस्थेप्रस्थेधात्रीरसस्यच ॥ ३७ ॥
लोहकिट्टपलान्यष्टौशर्करापलषोडश।
दत्त्वाचाष्टपलंसर्पिःपचेन्मृद्वग्निनाभिषक् ॥ ३८ ॥
सिद्धशीतेघनीभूतेचूर्णानीमानिदापयेत्।
त्रिफलाव्योषयवानीपिप्पलीगजपिप्पली ॥ ३९ ॥
द्विजीरकघनानाञ्चश्लक्ष्णान्यक्षसमानिच।
मधुनस्त्रिपलञ्चात्रसिद्धंशीतेप्रदापयेत् ॥ ४० ॥
भक्षयेच्चत्वनापेक्षीभक्तस्यादौविचक्षणः।
शूलंसर्वोद्भवंहन्तिपक्तिशूलंविशेषतः ॥ ४१ ॥
रक्तपित्ताङ्गदाहञ्चसाम्लपित्तंवमिन्तथा।
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्चकुक्षिबस्तिगुदोद्भवम् ॥ ४२ ॥

कासंश्वासंतथाशोषंग्रहणीदोषनाशनम् ।
यकृत्प्लीहोदरंगुल्मंराजयक्ष्मज्वरापहम् ॥ ४३ ॥
विष्टम्भनामदौर्बल्यमग्निमान्द्यंतथैवच ।
दुर्नामपाण्डुरोगंचकामलाञ्चहलीमकम् ॥ ४४ ॥
सर्वांश्चनाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥
दुग्धेनिर्वापणंकार्यंमण्डूरंवागवांजले ।
सप्तवाराष्टवारंवारुद्धानिर्मलतांव्रजेत् ॥ ४५ ॥

अर्थ—सतावरका रस, गोमूत्र, बकरीका दूध और आमलोंका रस प्रत्येक दो दो सेर, लोहेकी किट्ट एकसेर, बूरा दो सेर और घी एक सेर लेवै, सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे पकावे, जब पककर गाढा होजाय तब उतार लेवे, पश्चात् शीतल होनेपर इसमें हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, अजवायन, पीपल, गजपीपल, जीरा, कालाजीरा और नागरमोथा प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले और सहत बारह तोले मिलादेवे । इसको भोजनकी आदिमें भक्षण करनेसे सर्वप्रकारके शूल, विशेषकरके पक्तिशूल, रक्तपित्त, अंगदाह, अम्लपित्त, वमन, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, वस्तिशूल, गुदशूल, खाँसी, श्वास, शोष, संग्रहणी, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, राजयक्ष्मा, ज्वर, विष्टम्भ, आम, दुर्बलता, मन्दाग्नि, बवासीर, पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, इन सब रोगोंको यह शर्करामण्डूर दूर करैहै । लोहकिट्ट आठवार अथवा सात वार दूधमें, या गोमूत्रमें बुझाकर पुटनेसे शुद्ध होजाताहै ॥ ३७–४५ ॥

अथ रसमण्डूरम् ।

कुडवंपथ्याचूर्णाद्द्विपलंगन्धाश्वलो[illegible]श्च ।
शुद्धरसस्यार्द्धपलंभृंगस्यकेशराजस्य ॥ ४६ ॥
प्रस्थोन्मितश्चदत्त्वापात्रेलौहेचदण्डसंघृष्टम् ।
शुद्धंघृतमधुयुक्तंमृदितंस्थाप्यंचभाजनेस्निग्धे ॥ ४७ ॥
उपयुक्तमेतदचिरान्निहन्तिकफपित्तजान्रोगान् ।
शूलंतथाम्लपित्तंग्रहणीमपिकामलामुग्राम् ॥ ४८ ॥
भृंगराजकेशराजयोःप्रत्येकंरसप्रस्थम् ॥

अर्थ-हरडका चूर्ण सोलह तोले, गंधक और मण्डूर प्रत्येक दो दो पल, शुद्ध पारा दो तोले, भांगरेका रस और कुकुरभांगरेका रस प्रत्येक दो दो सेर, इन सबको लोहेके पात्रमें एकत्र कर लोहेके दण्डेसे घोटै, जब घोटते घोटते सूख जाय तब इसमें घी और सहत मिलाकर खूब मर्दन करै, पश्चात् इसको चिकने-बासनमें भरकर रखदेवै। यह रसमण्डूर कफपित्तसे उत्पन्नहुए रोगोंको, शूलको अम्लपित्तको, संग्रहणीको और उग्रकामला रोगको दूर करैहै ॥ ४६-४८ ॥

अथ त्रिनेत्राख्योरसः।

टंकणंहारिणशृंगंस्वर्णशुद्धंमृतंरसः।
आर्द्रकस्यद्रवैश्चाह्निमर्द्यंरुद्ध्वापुटेपचेत् ॥ ४९ ॥
त्रिनेत्राख्यरसोनाममाषैकंमधुसर्पिषा।
सैन्धवंजीरकंहिंगुमध्वाज्याभ्यांलिहेदनु ॥
पक्तिशूलहरंख्यातोमासमात्रान्नसंशयः ॥ ५० ॥

अर्थ-सुहागा, हरिणका सींग, शुद्ध सोना और पारेकी भस्म, सबको समान भाग लेकर अदरखके रसमें एक दिन खरल कर मिट्टीके शरावसम्पुटमें रख कपरौटीकर पुटपाक करै, शीतल होनेपर निकालकर चूर्ण करले, इसको त्रिनेत्राख्यरस कहतेहैं। यह रस एक मासे प्रमाण घृत और सहतके साथ सेवन करै। और ऊपरसे सैंधानोन, जीरा, हींग, इनका चूर्ण सहत और घृतमें मिलाकर खावे तो यह त्रिनेत्राख्यरस परिणामशूलको एक महीनेमें दूर करताहै ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथामृतमण्डूरम्।

मण्डूरस्यपलान्यष्टौशतावर्यारसन्तथा।
क्षीराज्यदधिप्रत्येकंपिष्ट्वाचतुष्पलंपिबेत् ॥ ५१ ॥
यावत्पित्तंतदुत्तार्यनिष्कैकंभोजयेत्सदा।
प्रातःसन्ध्यांसदाखादेत्पक्तिशूलप्रशान्तये ॥
वातजंपित्तजंमिश्रममृताख्योहिमृत्युजित् ॥ ५२ ॥

अर्थ-मण्डूर आठ पल, सतावरका रस आठ पल, दूध, घी और दही प्रत्येक चारचार पल लेकर एकत्र पीस लेवै। इसको प्रतिदिन प्रातःकाल और संध्या-समय आठ मासे भर खावे तो परिणामशूल दूर होवे तथा वातज पक्तिशूल

और पित्तज पक्तिशूल भी दूर होताहै । यह अमृतमण्डूर मृत्युको भी दूरकरताहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अथ पथ्याद्यंलौहम् ।

पथ्यालोहरजःशुण्ठीतच्चूर्णंमधुसर्पिषा ।
परिणामोद्भवंशूलंसद्योहन्तित्रिदोषजम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—हरडका चूर्ण, लोहेका चूर्ण और सोंठका चूर्ण प्रत्येक समानभाग लेकर सहत और घीके साथ सेवनकरनेसे कफज, पित्तज, और वातज परिणामशूल दूर होतेहैं ॥ ५३ ॥

अथ कृष्णाद्यंलौहम् ।

कृष्णाभयालोहचूर्णंलेहयेन्मधुसर्पिषा ।
परिणामोद्भवंशूलंसद्योहन्तित्रिदोषजम् ॥ ५४ ॥

अर्थ--पीपल, हरड, और लोहेका चूर्ण प्रत्येक समानभाग लेकर सहत और घीके साथ सेवनकरनेसे तत्काल त्रिदोषजनित परिणामशूल दूर होताहै ॥ ५४ ॥

अथ बृहत्त्रिफलाद्यंलोहम् ।

द्व्याढकंत्रिफलायाश्चचतुर्गुणजलेपचेत् ।
पादावशिष्टंविज्ञायकषायमवतारयेत् ॥ ५५ ॥
सुतप्तंनिर्वपेत्प्राज्ञोगुडूच्यार्द्धशतन्तथा ।
सर्पिषःषोडशपलंतच्चूर्णैःसहयोजयेत् ॥ ५६ ॥
गुडूचीकन्दकदलीतालमूलीयवासकम् ।
चित्रकंपिप्पलीमूलंचविकाजीरकद्वयम् ॥ ५७ ॥
त्वगेलाऽरुष्करोव्योषद्विक्षारलवणत्रयम् ।
विडंगटंकणक्षारौयवानीद्विपलिकांशिकान् ॥ ५८ ॥
लोहंपचेत्तदैकध्यंयावत्सान्द्रत्वमागतम् ।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यांयथासानुश्चभोजनम् ॥ ५९ ॥
वातजंपित्तजंशूलंकफजंद्वन्द्वजंतथा ।
परिणामसमुत्थञ्चसन्निपातसमुद्भवम् ॥ ६० ॥

अष्टादशविधंकुष्ठंपाण्डुरोगंभगन्दरम् ।
मन्दाग्निंगुदजञ्चैवजयेदेतन्नसंशयः ॥ ६१ ॥
सुतप्तंजारणपुटनादिशोधितम् ।

अर्थ–सोलह सेर त्रिफलाको चौगुने जलमें पकावे, जब चौथाई भाग जल शेष रहै तब उतारकर छान लेवै, फिर इस काढेमें सवाछेसेर कान्तलोहेका चूर्ण, सवाछेसेर गिलोयका रस, दोसेर घी, तथा गिलोय, केलाकन्द, मुसली, अडूसा, चीता, पीपरामूल, चव्य, कालाजीरा, सफेदजीरा, दालचीनी, इलायची, भिलावा, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सज्जी, कालानोन, सैंधानोन, विरियासंचरनोन, बायविडंग, सुहागा और अजवायन प्रत्येक आठ आठ तोले वारीकचूर्ण मिलाकर पकावे, जबतक यह खूब गाढ़ा न होय तबतक पकावे । इस त्रिफलाद्यलोहको सहत और वीके साथ सेवन करै। इससे वातजशूल, पित्तजशूल कफजशूल, द्वन्द्वजशूल, परिणामशूल, सान्निपातिकशूल, अठारह प्रकारके कोढ़, पाण्डुरोग, भगन्दर, मन्दाग्नि और बवासीर दूर होतीहै ॥ ५९–६१ ॥

अथ धात्रीलोहम् ।

धात्रीचूर्णस्याष्टपलानिचत्वारिलोहचूर्णस्य ।
यष्टीमधुकरजश्चद्विपलंदद्यात्पट्टघृष्टम् ॥ ६२ ॥
अमृताक्काथेनैतद्भाव्यंचूर्णन्तुसप्ताहम् ।
चण्डातपेसुशुष्कंभूयःपिष्ट्वानवेघटेस्थाप्यम् ॥ ६३ ॥
मधुघृतमधुनासंयुक्तंभक्तादौमध्यतोऽन्तेन ।
त्रीनपिवारान्खादेत्पथ्यंदोषानुबन्धने ॥ ६४ ॥
भक्तादौनाशयातिव्याधीन्पित्तानिलोद्भूतान् ।
मध्येऽह्नोविष्टम्भंजयतिचनृणांविदह्यतेनानुम् ॥ ६५ ॥
पानानुकृतान्दोषान्भुक्तान्तेशीततोजयति ।
एवंजीर्यतिचानुशूलंनृणांसुकष्टमपिहन्ति ॥ ६६ ॥
हरतिचसहसायुक्तोयोगश्चायंजरत्पित्तम् ।
चक्षुष्यःपलितघ्नःकफपित्तसमुद्भवाञ्जयेद्रोगान् ॥
प्रसादयत्यपिरक्तंपाण्डुत्वंकामलांजयति ॥ ६७ ॥

अर्थ–आमलोंका चूर्ण आठ पल, लोहेका चूर्ण चारपल, मुलैठीका चूर्ण दो पल, सबको मिलाकर सात दिन तक गिलोयके रसकी भावना देवै, पश्चात् तेज धूपमें सुखाकर बारीक पीसके एक नवीन घडेमें भरके रखदेवै । इसको सहत और घीमें मिलाकर भोजनके आदि मध्य और अन्तमें इसप्रकार तीन बार खावै और पथ्यसे रहै । यह भोजनके पूर्वमें भक्षण किया हुआ पित्त और वातसे उत्पन्न हुए रोगोंको विध्वंस करैहै । भोजनके मध्यमें भक्षण किया हुआ विष्टम्भको दूर करैहै, और भोजनके अन्तमें भक्षण किया हुआ पानसे उत्पन्नहुए विकारोंको हरताहै । यह जीर्ण होनेपर अत्यन्त कष्टयुक्त शूलको नष्ट करै है । यह योग–पित्तनाशक, नेत्रोंको हितकारी, विना समय बालोंके श्वेत होजानेको हरै है, तथा कफपित्तसे उत्पन्न हुवे रोग, रुधिरविकार, पाण्डुता और कामलारोगको दूर करैहै ॥ ६२–६७ ॥

अथ समस्तशूलहरोपायः ।

शुण्ठीशमीवारिपुनर्नवानांजलंसशम्बूकजभस्मपीतम् ।
सैरंडतैलंजयतिप्रसह्यशूलंसमस्तंपुरुपस्यसिद्धम् ॥ ६८ ॥

अर्थ–सोंठ, शमी, सुगन्धवाला और पुनर्नवा, इनके काथमें घोंघेकी भस्म और अण्डीका तेल डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके शूल दूर होते हैं ॥ ६८ ॥

अथ हिंग्वाद्यवटकः ।

हिंगुसौवर्चलंपाठाद्रौक्षारौलवणत्रयम् ।
चूर्णीकृतंविधातव्यंवटकंलशुनेरसे ॥ ६९ ॥
हृच्छूलेपार्श्वशूलेचमन्यास्तम्भेचदारुणे ।
प्रयोज्यंकुक्षिशूलेचभिषजासिद्धिमिच्छता ॥ ७० ॥

अर्थ–हींग, कालानोन, पाढ, सज्जी, जवाखार, सेंधानोन, संचरनोन, और विरियासंचरनोन, इन सबको पीस लहशुनके रसमें भिजो बडे बनालेवे । इन बडोंके सेवनकरनेसे–हृदयशूल, पार्श्वशूल, मन्यास्तम्भ और कुक्षिशूल दूर होता है ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथ त्रिफलामोदकः ।

फलतिक्ताव्योपगुडशर्करात्रिवृतार्द्धिकाः ।
मोदकंभक्षयेच्चानुपिबेत्कोष्णंजलंपुनः ॥
पार्श्वशूलेऽरुचौकासेज्वरेचानिलसम्भवे ॥ ७१ ॥

इति पक्तिशूलाऽध्यायः ।

अर्थ—हरड़, बहेडा, आमला, कुटकी, सोंठ, मिरच और पीपल, इनका चूर्ण समानभाग, शर्करा और निसोतका चूर्ण सबसे आधाभाग, तथा गुड सबसे दुगुना डालकर मोदक बनाके भक्षण करै और ऊपरसे गरमजल पीवे तो पार्श्वशूल, अरुचि, खाँसी, और वातज्वर दूर होताहै ॥ ७१ ॥

इति परिणामशूलाऽध्यायः ।

अथान्नद्रवजरत्पित्तचिकित्सा ।

जीर्णेजीर्यत्यजीर्णेवायच्छूलमुपजायते ।
पथ्यापथ्यप्रयोगेणभोजनाभोजनेनच ॥ १ ॥
नशमंयातिनियमाद्योऽन्नद्रवउदाहृतः ।
अन्नद्रवाख्यशूलेषुतावन्नस्वास्थ्यमश्नुते ॥ २ ॥
यावत्कटुकपीताम्लमन्नंनच्छर्दयेद्द्रवम् ।
जातमात्रेजरत्पित्तेशूलमाशुविनाशयेत् ॥ ३ ॥
पित्तार्त्तंवमनंकृत्वाकफार्त्तंश्चविरेचनम् ।
अन्नद्रवेचतत्कार्य्यंजरत्पित्तेयदीरितम् ॥
आमपक्काशयेशुद्धेगच्छेदन्नद्रवःशमम् ॥ ४ ॥

अर्थ—भोजनके पचजानेपर, या पचनेके समय अथवा अजीर्णमें जो शूल उत्पन्न होवे, वह शूल पथ्यापथ्यप्रयोगसे, वा भोजन करनेसे अथवा भोजन करनेके नियमसे शान्त होवे,उसको अन्नद्रवशूल कहते हैं। अन्नद्रवशूलमें जबतक चरपरे, पीले, खट्टे, अन्नद्रवको वमन नहीं करै, तबतक चैन नहीं पडताहै ॥ जरत्पित्तशूल उत्पन्न होतेही मनुष्यको मारदेताहै, इस कारण पित्तसे पीडितमनुष्यको वमन करावे, और कफसे पीडित जरत्पित्तशूलवालेको विरेचन करावे, जो चिकित्सा जरत्पित्तमें कही है वही अन्नद्रवशूलमें करे और जो यत्न अन्नद्रवमें कहा है वह जरत्पित्तमें करे जब रोगीका आमाशय और पक्काशय शुद्ध होजाताहै तब अन्नद्रव शूल शांत होताहै ॥ १–४ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्राश्मरीहरोपायः ।

माषेण्डरींसरुचकांसुस्विन्नांवह्निपाचिकाम् ।
तादृशींसर्पिषाखादेन्मूत्र[illegible]वनिपीडितः ॥ ५ ॥

लिह्याद्धात्रीफलचूर्णमयश्चूर्णसमायुतम् ।
यष्टीचूर्णेनवायुक्तंलिह्यात्क्षौद्रेणतद्द्रवे ॥ ६ ॥
श्यामाकतण्डुलैःसिद्धंसिद्धंतण्डुलकोद्रवैः ।
प्रियंगुतण्डुलैःसिद्धंपायसंशर्करान्वितम् ॥ ७ ॥
गौडिकंसूरणंकन्दंकूष्माण्डञ्चापिभक्षयेत् ।
कलाययवसक्तून्वासक्तून्वालाजसंभवान् ॥ ८ ॥
कुलत्थसक्तुमथवाऽथवादुग्धसरेणतु ।
चणकानामथोसक्तून्कोद्रवस्यौदनंयथा ॥ ९ ॥
गोधूममण्डकंतत्रसर्पिषागुडसंयुतम् ।
ससितंशीतदुग्धेनमृदितंवाहितंचयत् ॥ १० ॥
पटोलपत्रयूषेणखादेत्कणिकसक्तुकान् ।
भृष्टान्वाचणकान्खादेद्द्रुजावान्वापिपिष्टितान् ॥ ११ ॥
कलायान्वानिराहारस्तृषितःक्षीरपोभवेत् ॥
कलाययवगोधूमश्यामाकाःककुभस्यच ॥ १२ ॥
एर्वारुबीजतोयेनपिबेद्वालवणाकृतम् ॥
शर्करेक्षुरसंक्षीरद्राक्षारसमथापिवा ।
सर्वथोपप्रयुञ्जीतमूत्रकृच्छ्राश्मरीभिदाम् ॥ १३ ॥

अर्थ–अन्नद्रवसे पीडित मनुष्योंको लवणयुक्त भलेप्रकार अग्निसे पकाई-हुई घीके साथ खानी चाहिये । आमलोंका चूर्ण और लोहेका चूर्ण दोनोंको सहतमें मिलाकर चाटनेसे, अथवा मुलैठीके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसे अन्नद्रवशूल दूर होताहै । समेके चावलोंकी, या कोदोंके चावलोंकी अथवा कंगनीके चावलोंकी बनाई हुई खीर बूरा मिलाकर भक्षण करना अन्न-द्रवशूलवाले रोगियोंको हितकारीहै । ईख, सूरणकन्द, पेठा, मटर, जौंके सत्तू खीलोंके सत्तू, कुलथीके सत्तू और चनेके सत्तू, कुदईका भात इनको दधि और दूधके सरके साथ सेवन करना चाहिये । गेहूंके मण्डकको घृत और गुड तथा बूरामिलेहुए ठंढे दूधमें मलके या औटाकर खावे । कणिक (सूजी) के सत्तू अथवा भुनेहुए चनोंके सत्तू या मटरके सत्तू परवलके यूषके साथ भोजन करे,

और ऊपरसे दूध पीवे । मटर, जौ, गेहूं, समा और अर्जुनवृक्षकी छाल इनको ककडीके बीजोंके जल और लवणके साथ पीनेसे अथवा मिश्री, ईखका रस और दूध वा दाखोंका रस पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी रोग दूर होता-है ॥ ९–१३ ॥

अथान्नद्रवशूलहरोपायः ।

अन्नद्रवोदुश्चिकित्स्योदुर्विज्ञेयोमहागदः ।
तस्मात्तस्यप्रशमनेपरंयत्नंसमाचरेत् ॥ १४ ॥
अन्नद्रवेजरत्पित्तेवह्निर्मन्दोभवेद्यतः ।
तस्मात्तत्रानुपानानिमात्राहीनानिकारयेत् ॥ १५ ॥
कलाययवगोधूमश्यामाकाःकोरदूषकाः ।
राजमाषाःस्थूलमाषाःस्थूलस्थाःकंगुशालयः ॥ १६ ॥
भोजनार्थेप्रशस्ताश्चपुराणाःसप्रियङ्गवः ।
दधिलुप्तसरंक्षीरंगव्यमाजंसमाहिषम् ॥ १७ ॥
घृतंपुराणंशाकार्थेवास्तुकोनिम्बपल्लवाः ।
कर्कोटकारवेल्लानांपत्राणिस्वरसस्यच ॥ १८ ॥
यानिकानिप्रयोज्यानिकासमर्ददलानिच ।
बर्हिणोहरिणामत्स्यारोहिताःसकपिञ्जलाः ॥
भूतीकृताःशस्ततरारसार्त्तेचोपपादिताः ॥ १९ ॥

अर्थ–अन्नद्रवशूल महाअसाध्य, दुर्विज्ञेय (जाननेमें नहीं आवै) और महारोगहै, इसकारण इसको शीघ्रही बडे यत्नोंसे शान्त करै । जरत्पित्त और अन्नद्रवशूलरोगमें अत्यन्त अग्नि मन्द होजातीहै । इसकारण इसरोगमें सकल अन्न और पान अल्प देनेचाहियें । मटर, जौ, गेहूं, समा, कोदों, लोबिया, उडद, कंगनी, शालि, और प्रियंगु (चोवा) यह सब पुराने अन्न अन्नद्रवशूलरोगमें भोजनके लिये हितकारीहैं । दधिमिश्रित दूध, गायका घी, भैंसका घी पुराना घी, बथुआ, नीमके पत्ते, ककोडे, करेले, इनके पत्ते और स्वरस, तथा कसौंदीकेपत्ते, इन सबका शाक, मयूर, हिरण, रोहितमछली और कपिंजल पक्षीके मांसका रस, अन्नद्रवशूलरोगमें हितकारीहै ॥ १४–१९ ॥

अथ गुडमण्डूरम्।

गुडामलकपथ्यानांचूर्णंप्रत्येकशःपलम्।
त्रिपलंलोहकिट्टस्यतत्सर्वंमधुसर्पिषा॥ २०॥
समालोड्य ततःखादेदक्षमात्रप्रमाणतः॥
आद्यमध्यावसानेषुभोजनस्यनिहन्तितत्॥ २१॥
अन्नद्रवंजरत्पित्तमम्लपित्तंसुदारुणम्।
परिणामसमुत्थस्यशूलंसंवत्सरोत्थितम्॥ २२॥

अर्थ–गुड चार तोले, आमलोंका चूर्ण चार तोले, हरडका चूर्ण चार तोले, मण्डूरकी भस्म बारह तोले लेवै, सबको सहत और घीमें मिलाकर दो तोले प्रमाण भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें भक्षण करे। इससे अन्नद्रवशूल, जरत्पित्त, दारुण अम्लपित्त, और एक वर्षका परिणाम शूल दूर होता है॥ २०–२२॥

अथ विद्याधराभ्रकम्।

विडंगमुस्तत्रिफलागुडूचीदन्तीत्रिवृद्धह्निकटुत्रिकाणि।
प्रत्येकमेषांपिचुभागचूर्णंपलानिचत्वार्ययसोमलस्य॥२३॥
गोमूत्रशुद्धस्यपुरातनस्ययद्वायसस्तानिशिवाटिकायाः।
कृष्णाभ्रकाच्चूर्णपलंविशुद्धंनिश्चन्द्रकाच्छ्लक्ष्णमतीवसूतात् २२
पादोनकर्षस्वरसेनखल्वशिलातलेमन्यमुनीदलस्य।
संमर्द्ययत्नादतिशुद्धगन्धपाषाणचूर्णेनविचूर्णितेन॥ २५॥
युक्त्याततःपूर्वरजांसिदत्त्वासर्पिर्मधुभ्यामवमृद्ययत्नात्।
संस्थापयेत्स्निग्धघटेविशुद्धेततःप्रयोज्योऽस्यरसायनस्य॥२६॥
प्राङ्माषकोद्वावथमाषकौवागव्यञ्चपथ्यंशिशिरंजलंवा।
पिबेदरं योगवरःप्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकःस्यात्॥ २७॥
योगोपिहन्यात्परिणामशूलंतथापिचान्नद्रवसंज्ञकञ्च।
यक्ष्माम्लपित्तंग्रहणींप्रदुष्टांजीर्णज्वरंलोहितपित्तकुष्ठे॥
नसन्तितेयान्ननिहन्तिरोगान्योगोत्तमःसम्यगुपास्यमानः २८॥

अर्थ–वायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, गिलोय, दन्ती, निसोत, चीता, और त्रिकुटा, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले, गोमूत्रमें भावनादेकर सिद्ध किया-हुआ लोहमल या लोहपत्रिका चारपल निश्चंद्रकृष्णाभ्रकका चूर्ण चार तोले, और शुद्धपारा डेढ तोले लेकर सबको अगस्तियाके पत्तोंके रसमें खरल करै॥ पश्चात् सूखजानेपर इसमें १॥ डेढतोले शुद्धगंधकका चूर्ण मिलादेवै, फिर सहत और घीमें घोटकर एक चिकने वासनमें भरकर रखदेवै। अग्निका वलावल विचारकर एकमासा या दोमासे गायके दूध या शीतल जलके साथ सेवन करै। इससे मन्दाग्नि, परिणामशूल, अन्नद्रवशूल, राजयक्ष्मा, अम्लपित्त, दुष्टसंग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त और कुष्ठरोग दूर होताहै॥ २३–२८॥

अथ लौहगुटिका।

लौहस्यरजसोभागास्त्रिफलायास्तथात्रयः।
गुडस्याष्टौतथाभागागुडान्मूत्रंचतुर्गुणम्॥ २९॥
एतत्सर्वन्तुविपचेद्गुडपाकविधानवित्।
लिहेच्चतद्यथाशक्तिशूलंचान्नद्रवंजयेत्॥ ३०॥
लौहस्यैकभागः।

अर्थ–लोहेकाचूर्ण एकभाग, त्रिफला तीनभाग गुड आठभाग और गोमूत्र बत्तीसभाग, सबको एकत्रकर गुडपाककी विधिसे पकावै इसको यथाशक्त्य-नुसार सेवनकरै तो अन्नद्रवशूल, दूरहोवे॥ २९॥ ३०॥

अथ कलायगुटिका।

कलायचूर्णभागौद्वौलौहचूर्णस्यचापरः।
कारवेल्लपलाशानांरसेनैवविमर्दयेत्॥ ३१॥
कर्षमात्रांततश्चैकांभक्षयेद्गुटिकांनरः।
मण्डानुपानात्साहन्तिजरत्पित्तंसुदुर्जयम्॥ ३२॥
अत्रकलायोवर्तुलकलायः।
लौहस्यैकभागःमाषकादिक्रमेणभक्षणीयम्।

इति अन्नद्रवजरत्पित्ताऽध्यायः।

अर्थ-मटरकाचूर्ण दो तोले, लोहेकाचूर्ण एक तोला, दोनोंको करेलेके पत्तोंके रसमें खरलकर दो दो तोलेकी गोली बनालेवै, एक गोली प्रतिदिन खावे और ऊपरसे माँड पीवे। इससे दुर्जय जरत्पित्तरोग दूर होताहै॥३१-३२॥

इति अन्नद्रवजरत्पित्ताधिकारः ।

अथोदावर्त्तचिकित्सा।

त्रिवृत्सुधापत्रतिलादिशाकग्राम्यौदकानूपरसैर्यवान्नम् ।
अन्यैश्चसृष्टानिलविड्विवाद्यात्तथाप्रसन्नागुडसीधुपायी १
प्रसन्नासुरामण्डःगुडकृत्सीधुगुडसीधु ।
आस्थापनंमारुतजेस्विन्नस्यपरिशस्यते ॥
पुरीषजेतुकर्त्तव्योविधिरानाहिकस्तुयः ॥ २ ॥
आनाहिकोविधिः ।

अर्थ-निसोत, थूहरकेपत्ते, तिलादिकाशाक, तथा ग्राम्यजलचर और अनूपदेशके जीवोंके मांसका रस, यवान्न, सुरामण्ड, और गुडसे बनाई हुई सीधु तथा अन्यान्य वायुनिःसारक द्रव्य उदावर्त्तरोगमें हितकारी हैं। वातज उदावर्त्तमें स्निग्ध और स्विन्नमनुष्योंके लिये आस्थापन (निरूहबस्ति) और पुरीषज उदावर्त्तमें आनाहिकविधि (फलवर्त्यादि) करनी चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥

अथोदावर्त्तादिहरोपायः ।

क्षारवैतरणौबस्तीयुज्यात्तत्रचिकित्सकः ।
सर्पिस्तैलरजःक्वाथंकल्केनान्यतमेनच ।
उदावर्त्तोदरानाहविषगुल्मविनाशनः ॥ ३ ॥

अर्थ-क्षार, वैतरणनिरूहबस्ति अनुवासनबस्ति, घृत, तेल, चूर्ण, क्वाथ, कल्क और अन्यान्यरोगोंके द्वारा उदावर्त्त, आनाह, विषदोष और गुल्मरोग नष्ट होताहै ॥ ३ ॥

अथ विड्विबंधहरोपायः ।

त्रिवृत्कृष्णाहरीतक्योद्विचतुष्पंचभागिकाः ।
गुटिकागुडतुल्यास्तुविड्विबन्धगदापहाः ॥ ४ ॥

अर्थ–निसोत दो भाग, पीपल चार भाग और हरड पांच भाग तथा सबकी समान गुड लेवै, सबको मिला गोली बनाकर खानेसे विड्विबन्धरोग दूर होताहै ॥ ४ ॥

अथ नाराचचूर्णम्।

खण्डपलंत्रिवृतासममुपकुल्याकर्षचूर्णितं श्लक्ष्णः।
प्राग्भोजनेचसमधुरितान्मोदकंलिहन्प्राज्ञः ॥ ५ ॥
एतद्गाढपुरीषेपित्तेचविनियोज्यम्।
स्वादुर्नृपयोग्योऽयंचूर्णंनाराचकोनाम्ना ॥ ६ ॥

अर्थ–खांड एक पल, निसोतका चूर्ण एक कर्ष, पीपलका चूर्ण एक कर्ष, इन सबको सहतमें मिलाकर भोजनके पहिले भक्षण करे तो गाढपुरीष, पित्त और कफ दूर होवे। यह नाराचचूर्ण राजाओंके सेवने योग्य है ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ गुडाष्टकम्।

सव्योषंपिप्पलीमूलंत्रिवृद्दन्तीसचित्रकम्।
तच्चूर्णंगुडसंमिश्रंभक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ ७ ॥
एतद्गुडाष्टकंनामबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
प्लीहोदावर्त्तगुल्मघ्नंशोथपाण्डुज्वरापहम् ॥ ८ ॥

अर्थ–पीपल, कालीमिरच, सोंठ, पीपलामूल, निसोत, दन्ती और चीतेकी जड, इन सबका चूर्ण समानभाग और सबकी समान गुड मिलाकर प्रातःकाल सेवन करै। यह गुडाष्टक–बल, वर्ण आर अग्निको बढानेवालाहै, तथा प्लीहा उदावर्त्त, गुल्म, सूजन, पाण्डु और ज्वरको दूर करैहै ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथोदावर्त्तरोगोपायः।

हिंगुमाक्षिकसिन्धूत्थैःपक्त्वावर्त्तिंसुवर्जिताम्।
घृतयुक्तांगुदेदद्यादुदावर्त्तविनाशिनीम् ॥ ९ ॥

अर्थ–हींग चारमासे, सहत आठ तोले, सैंधानोन चारमासे, इन सबको एकत्र कर गुड़पाकविधिसे पकाके बत्ती बनालेवै, इन बत्तियोंको घीसे चुपडकर गुदामें चढानेसे दस्त होकर उदावर्त्त रोग दूर होजायगा ॥ ९ ॥

अथानाहहरगुटिका ।

त्रिवृद्धरीतकीश्यामास्नुहीक्षीरेणभावयेत् ।
वटिकामृतपीतास्ताःश्रेष्ठाश्चानाहभेदिकाः ॥ १० ॥

श्यामाश्याममूलैवात्रिवृत् ।

अर्थ–कालानिसोत, और हरड दोनो बराबर लेकर चूर्ण बनाले, पश्चात थूहरके दूधकी भावना देकर गोली बना दूधकेसाथ सेवनकरनेसे आनाहरोग दूर होताहै ॥ १० ॥

अथ स्थिरादिघृतम् ।

स्थिरादिवर्गस्यपुनर्नवायाःशम्याकपूतीककरञ्जयोश्च ।
सिद्धःकषायेद्विपलांशिकानांप्रस्थोघृतात्स्यात्प्रतिबद्धवाते११

अर्थ–गायका घी दोसेर, जल आठसेर, और स्थिरादिवर्ग, पुनर्नवा श्योनाक, पूतिकरञ्ज, तथा हडर, करंज, प्रत्येक आठ आठ तोले, पाकके लिये जल बत्तीससेर और शेष आठ सेर रक्खे । यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । यह घृत वातकी बद्धताको दूर करैहै ॥ ११ ॥

अथ शुष्कमूलकाद्यंघृतम् ।

मूलकंशुष्कमार्द्रञ्चवर्षाभूमूलपञ्चकम् ।
आरेवतपलञ्चापिपिष्ट्वातेनपचेद्घृतम् ॥
तत्पीयमानंशमयेदुदावर्त्तमशेषतः ॥ १२ ॥

पंचमूलंस्वल्पमिदम् । आर्द्रम्आर्द्रकम् ।

अर्थ–गायका घी एकसेर, जल चारसेर, तथा कल्कके लिये सूखी मूली, अदरख, पुनर्नवा, स्वल्पपंचमूल, और अमलतासका गूदा, प्रत्येक दो दो तोले लेवै । यथाविधिसे घृतको पकावे । इस घृतको पीनेसे उदावर्त्त रोग दूर होताहै ॥ १२ ॥

अथ नाराचयोगः ।

त्रिवृत्खण्डंचपलिकंकर्षंकृष्णारजोमधु ।
विष्टम्भेकफपित्तेचनाराचाख्यंनृपोचितम् ॥ १३ ॥

क[illegible]र्द्वामधुनालिह्यात् ।

इति आनाहोदावर्त्ताऽध्यायः ।

अर्थ–निसोतका चूर्ण चार तोले, खाँड चार तोले, पीपलका चूर्ण दो तोले लेवै पश्चात् सबको मिलाकर सहतके साथ चाटनेसे–कफ और पित्तजनित विष्टम्भरोग दूर होताहै। यह नाराचयोग राजाओंके सेवन करने योग्यहै ॥१३॥

इतिआनाहोदावर्त्ताधिकार ।

अथ गुल्मचिकित्सा ।

लंघनंदीपनंस्निग्धमुष्णवातानुलोमनम् ।
बृंहणंयद्भवेत्सर्वंतद्धितंसर्वगुल्मिनाम् ॥ १ ॥

अर्थ–लंघन, दीपन, स्निग्ध, उष्ण, वातानुलोमक और सर्व प्रकारके पुष्टिकारक द्रव्य गुल्मरोगवालोंको हितकारीहैं ॥ १ ॥

स्निग्धस्यभिषजास्वेदःकर्त्तव्योगुल्मशान्तये ।
स्रोतसांमार्दवंकृत्वाजित्वामारुतमुल्बणम् ॥ २ ॥

अर्थ–गुल्मरोगीको प्रथम स्निग्ध करके पश्चात् स्वेद देवै । कारण यह है कि, स्वेद, स्निग्धमनुष्योंके स्रोतोंमें मृदुता उत्पन्न करके कुपित वायुको शान्तकर विबन्धादिकोंको नष्ट कर गुल्मरोगको दूर करदेताहै ॥ २ ॥

अथ पिण्डमांसादिपिण्डः ।

स्निग्धस्यस्वेदनंकुर्यात्कुम्भीपिण्डेष्टकादिभिः ।
शाल्वणाद्युपनाहश्चसुखोष्णंगुल्मशान्तये ॥
भित्त्वाविबन्धंस्निग्धस्यस्वेदोगुल्ममपोहति ॥ ३ ॥

अर्थ–गुल्मरोगीको स्निग्धकरके कुम्भ मांसपिण्ड और इष्टकादि द्वारा शाल्वणकेसाथ उपनाह स्वेददेनेसे गुल्मरोग दूर होताहै ॥ वातनाशक क्काथसे कुम्भीको परिपूर्ण कर पृथ्वीमें खोदकर गाडदेवै और उसके ऊपर शय्याको कराय स्वेददेनेसे गुल्मरोग शान्त होताहै ॥ ३ ॥

अथ वातगुल्महरोपायः ।

मातुलुंगरसोहिंगुदाडिमंविडसैन्धवम् ।
सुरामण्डेनपातव्यंवातगुल्मरुजापहम् ॥ ४ ॥

अर्थ–बिजौरेका रस, हींग अनार, बिडनोन और सैन्धानोन, सबको एकत्र कर सुरामण्डके साथ पीनेसे वातगुल्मरोग दूर होताहै ॥ ४ ॥

अथ हिंग्वादिचूर्णम् ।

हिंगुत्रिकटुकंपाठांहपुषामभयाशठीम् ।
अजमोदाश्वगन्धेचतिन्तिडीकाम्लवेतसम् ॥ ५ ॥
दाडिमंपौष्करंधान्यमजाजीचित्रकंवचाम् ।
द्वौक्षारौलवणेद्वेचचव्यंचैकत्रचूर्णयेत् ॥ ६ ॥
चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमनुपानेष्वनव्ययम् ।
प्रागुक्तमथवापेयंमद्येनोष्णोदकेनवा ॥ ७ ॥
पार्श्वहृद्बस्तिशूलेषुगुल्मेवातकफात्मके ।
आनाहेमूत्रकृच्छ्रेचशूलेचगुदयोनिजे ॥ ८ ॥
ग्रहण्यर्शोविकारेषुप्लीहपाण्ड्वामयेऽरुचौ ।
उरोविबन्धेहिक्कायांकासेश्वासेगलग्रहे ॥ ९ ॥
भावितंमातुलुंगस्यचूर्णमेतद्रसेनवा ।
बहुशोगुटिकाःकार्याःकार्मुकाःस्युस्ततोऽधिके ॥ १० ॥

अर्थ–हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ़, हाऊवेर, हरड़, कचूर, अजमोदा, असगंध, इमली, अमलबेंत, अनार, पोहकरमूल, धनियाँ, जीरा, चीता, बच, सज्जी, जवाखार, सैंधानोन, कालानोन और चव्य, इन सबका बारीक चूर्ण बना बिजोरे नींबूके रसकी भावना देकर गोली बना लेवे । इसको पूर्वोक्त अनुपान, अथवा मदिरा, या उष्णोदकके साथ पान करनेसे–पार्श्वशूल, हृदयशूल, बस्तिशूल, वातकफात्मक गुल्म, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, गुदशूल, योनिशूल, संग्रहणी, बवासीर, प्लीहा, पाण्डुरोग, अरुचि, उरोरोग, विबन्ध, हिक्का, खाँसी, श्वास और गलग्रह, यह सब रोग दूर होतेहैं ॥ ५–१० ॥

अथ गुल्मोदरादिनाशकचूर्णम् ।

पूतिकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्नि-
व्योषश्चसंस्तरचितंलवणोपधानम् ।
दग्ध्वाविचूर्ण्यदधिमस्तुयुतंप्रयोज्यं
गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुगदोद्भवेषु ॥ ११ ॥

पूतिकोनाटकरंजस्तस्यमूलंगजचिर्भटंगोरक्षकर्कटी ।
लवणंसैन्धवंतच्चपूतिकमत्रापिसमम् ।
इति सर्वमन्तर्धूमेनदाग्धव्यम्।

अर्थ–दुर्गंधित करञ्जकी जड, तेजपात, बडी इन्द्रायनकी जड, चव्य, लालचीता, सोंठ, मिरच, पीपल और सैंधानोन इन सबको दग्ध करके चूर्णबनालेवै इस चूर्णको दहीके पानीके साथ सेवन करनेसे गुल्म, उदररोग, सूजन और पाण्डुरोग दूर होताहै ॥ ११ ॥

अथ कांकायनगुटिका ।

शठींपुष्करमूलञ्चदन्तींचित्रकमाढकीम् ।
शृंगवेरंवचाञ्चैवपलिकानिसमाहरेत् ॥ १२ ॥
त्रिवृतायाःपलञ्चैकंकुर्यात्रीणिचहिंगुलः ।
यवक्षारपलेद्वेचद्वेपलेचाम्लवेतसात् ॥ १३ ॥
यवान्यजाजीमरिचंधान्यकंचेतिकार्षिकम् ।
उपकुंच्यजमोदाभ्यांपृथगर्द्धपलंभवेत् ॥ १४ ॥
मातुलुंगरसेनैतद्गुटिकांकारयेद्भिषक् ।
तासामेकांपिबेद्द्वेवातिस्रोवाथसुखाम्बुना ॥ १५ ॥
अम्लैर्द्रव्यैश्चयूषैश्चघृतेनपयसाथवा ।
एषाकांकायनेनोक्तागुटिकागुल्मनाशिनी ॥ १६ ॥
अर्शोहृद्रोगशमनीकृमीणाञ्चविनाशिनी ।
गोमूत्रयुक्ताशमयेत्कफगुल्मचिरोत्थितम् ॥ १७ ॥
क्षीरेणपित्तगुल्मन्तुमद्यैरम्लैश्चवातिकम् ।
[illegible]समूत्रैश्चनियच्छेत्सान्निपातिकम् ॥
रक्तगुल्मन्तुनारीणामुष्ट्रीक्षीरेणपाययेत् ॥ १८ ॥

उपकुंचिका [illegible]णजीरा ।

अर्थ–कचूर, पोहकरमूल, दन्ती, चीता, अड़हर, अदरख और बच प्रत्येक चार चार तोले, निसोत चार तोले, सिंग्रफ बारह तोले, जवाखार आठ तोले

अम्लवेत आठ, तोले, अजवायन, जीरा, कालीमिरच और धनियाँ प्रत्येक एक एक तोला, कालाजीरा और अजमोदा प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबका बारीक चूर्णकर बिजोरेके रसमें गोली बनालेवै । एक गोली या दो गोली अथवा तीन गोली, उष्णोदक, अम्लद्रव्य, मूंग आदिकेयूष, घी अथवा दूधके साथ सेवन करै । यह कांकायनमुनिप्रोक्त कांकायनगुटिका-गुल्म, बवासीर, हृदयरोग, कृमि आदिरोगोंको दूर करै है । यह गोली गोमूत्रके साथ बहुत दिनोंके कफगुल्मको, दूधकेसाथ पित्तगुल्मको, मदिराके साथ वातगुल्मको, त्रिफलेकेरस और गो[illegible]त्रकेसाथ सान्निपातिक गुल्मको, तथा ऊंटनीके दूधकेसाथ पीवे तो स्त्रियोंके [illegible]को यह कांकायनगुटिका दूर करतीहै ॥ १२-१८ ॥

अथ हपुषादिघृतम् ।

हपुषाव्योषपृथ्वीकाचव्यचित्रकसैन्धवैः ।
साजाजीपिप्पलीमूलदीप्यकैर्विपचेद्घृतम् ॥ १९ ॥
सकोलमूलकरसंसक्षीरंदधिदाडिमम् ।
तत्परंवातगुल्मघ्नंशूलानाहविबन्धनुत् ॥ २० ॥
योन्यर्शोग्रहणीरोगश्वासकासारुचिज्वरान् ।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलञ्चघृतमेतद्व्यपोहति ।
कोलस्यमूलकक्काथस्तथार्द्रस्यरसस्तथा ॥ २१ ॥
[illegible]डिमबीजस्वरसःक्काथोवास्वरसाभावे ।
पंचद्रवाणिप्रत्येकंस्नेहसमानिचतथा ॥

अर्थ-गायका घी एकसेर, बेरीका क्काथ एकसेर, मूलीका क्काथ एकसेर, दूध एकसेर दही एकसेर, अनारका रस एकसेर और कल्कके लिये हाऊबेर, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, बडी इलायची, चव्य, चीता, सैंधानोन जीरा, पीपलामूल और अजवायन प्रत्येक एक एक तोले यथाविधिसे घृतको सिद्धकर सेवन करनेसे वातगुल्म, शूल, आनाह, विबन्ध, योनिरोग, बवासीर, संग्रहणी, श्वास, खाँसी, अरुचि, ज्वर, पार्श्वशूल, हृदयशूल बस्तिशूल, इन सब रोगोंको यह हपुषादिघृत दूर करैहै ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ द्राक्षाद्यंघृतम् ।

द्राक्षाम[illegible]कखर्जूरंविदारींसशतावरीम् ।
परूषका णित्रिफलांसाध[illegible]संमितान् ॥ २२ ॥

जलाढकेपादशेषरसमामलकस्यच ।
घृतमिक्षुरसंक्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥ २३ ॥
साधयेच्चघृतंसिद्धंशर्कराक्षौद्रपादिकम् ॥
प्रयोगातिपित्तगुल्मघ्नंसर्वपित्तविकारनुत् ॥ २४ ॥

अर्थ—उत्तम गायका घी दो सेर, आमलोंकारस दो सेर, ईखका रस दो सेर, गायका दूध दो सेर, क्वाथके लिये दाख, मुलैठी, खजूर, विदारीकन्द, शतावर, फालसा, हरड, आमला और बहेडा, प्रत्येक चार चार तोले, पाकके लिये जल आठ सेर, शेष दो सेर, और कल्कके लिये कुटी हुई हरड आधसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्धकर पावभर बूरा और पावभर सहत मिलालेवै। यह घृत-पित्तगुल्म और सर्व पित्तके विकारोंको दूर करैहै ॥ २२–२४ ॥

अथ भार्ङ्गीषट्पलघृतम् ।

षड्भिःपलैर्मगधजाफलमूलचव्य-
विश्वौषधज्वलनयावककल्कपक्वम् ।
प्रस्थंघृतस्यदशमूलरुबूकभार्ङ्गी-
क्वाथेनवापयसिदध्निचषट्पलाख्यम् ॥ २५ ॥
गुल्मोदरारुचिभगंदरवह्निसाद-
कासज्वरक्षयशिरोग्रहणीविकारान् ।
सद्यःशमंनयतियेचकफानिलोत्थाः ।
भार्ङ्ग्याख्यषट्पलघृतंप्रवदन्तितज्ज्ञाः ॥ २६ ॥

मगधजापिप्पलीतस्याःफलंमूलञ्च ।
ज्वलनश्चित्रकमूलंयावकोयवक्षारः ।
क्वाथश्चतुर्गुणःपयः स्नेहसमंदधिचतुर्गुणम् ।
किंवाक्वाथदध्नीप्रत्येकंद्विगुणे ॥

अर्थ—पीपल, पीपलामूल, चव्य, सोंठ, चीता और जवाखार यह प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेकर क्ल्क बनावे, इन औषधियोंके कल्कके द्वारा एक प्रस्थ घृतको दशमूलके क्काथ, अण्डके क्काथ और भारङ्गीके क्काथमें तथा दूध और दहीमें पकावे जब पकते पकते घृतमात्र शेष रहजाय तब उतारलेवे,

यह षट्पल घृत–गुल्म, उदररोग, अरुचि, भगंदर, मंदाग्नि, खांसी, ज्वर, क्षय, शिरोरोग, संग्रहणी और कफवातोद्भवरोगोंको तत्काल नष्ट करैहै ॥२५–२६॥

अथ दन्तीहरीतकी ।

जलद्रोणेविपक्तव्याविंशतिःपंचचाभया ।
दन्त्याःपलानितावन्तिचित्रकस्यतथैवच ।
तेनाष्टभागशेषेणपचेद्दन्तीसमंगुडम् ॥ २७ ॥
तच्चोभयाम्त्रिवृच्चूर्णात्तैलाच्चापिचतुष्पलम् ।
पलमेकंकणाशुण्ठयोःसिद्धेलेहेऽथशीतले ।
क्षौद्रतैलसमंदद्याच्चातुर्जातपलन्तथा ॥ २८ ॥
ततोलेहपलंलीढ्वाजग्ध्वाचैकांहरीतकीम् ।
सुखंविरिच्यतेस्निग्धादोषप्रस्थमनामयः ॥ २९ ॥
प्लीहश्वयथुगुल्मार्शोहृत्पाण्डुग्रहणीगदाः ।
शाम्यन्त्युत्क्लेशविषमज्वरकुष्ठान्यरोचकाः ॥ ३० ॥

अर्थ–पोटलीमें बँधी हुई हरड पचीसपल, दन्तीकी जड पचीस पल और चीतेकी जड पचीसपल लेकर बत्तीस सेर जलमें पकावे जब चार सेर जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवे और पोटलीको खोलकर हरडोंको निकाललेवै, पश्चात् इस काढेमें पचीसपल गुड, पचीसपल काढेमें निकाली हुई हरड, सोलह तोले निसोतका चूर्ण, सोलह तोले तेल, पीपल और सोंठ चार तोले डालकर अवलेह सिद्ध करै, जब शीतल होजाय तब सहत सोलह तोले और चातुर्जातक (दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात) का चूर्ण चार तोले मिलादेवै। पश्चात अवलेहको चार तोले भर और एक हरड सेवन करै। इससे कोठा स्निग्ध होकर सुखपूर्वक दस्त होनेलगतेहैं। तथा प्लीहा, सूजन, गुल्म, बवासीर, हृदयरोग, पाण्डुरोग, संग्रहणी, उत्क्लेश, विषमज्वर, कुष्ठ और अरोचक रोग दूर होताहै ॥ २७–३० ॥

अथ लौहगुग्गुलुः।

स्नुहीत्वक्खादिरंकाष्ठंकोष्ठोदुम्बरजंफलम् ।
वल्कलञ्चपृथक्पंचपलमष्टगुणेजले ॥ ३१ ॥
पक्कापादावशेषेणलौहपंचपलंपचेत् ।

पिण्डीभावेद्रवेकिंचिदवशिष्टेतुनिक्षिपेत् ॥ ३२ ॥
शोभाञ्जनकमूलस्यकल्केनावृत्यपाचितम् ।
करीषाग्नौसमुद्धृत्यहरितालंपलद्वयम् ॥ ३३ ॥
चूर्णितद्विपलंतच्चगुग्गुलोर्घृतपिष्टितम् ।
एकीकृत्यपचेद्भूयोयावल्लेहत्वमागतम् ॥ ३४ ॥
गुल्मे ुष्ठेक्षयेस्थौल्येशोथेशूलेचपाकजे ।
पाण्डुरोगेप्रमेहेचव तरोगेतथैवच ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीतवलीपलितनाशनम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–थूहरकीछाल, खैरकी लकडी, गूलरकी छाल और फल, प्रत्येक पांच पांच पल लेकर आठगुने जलमें पकावै जब जल चौथाई भाग शेषरहे तब उतारकर वस्त्रमें छानलेवै, पश्चात् इस काढेमें पांच पल लोहेका चूर्ण डालकर पकावै जव कुछ कुछ गाढा होजाय तब सैंजनेकी जडका कल्क अन्नेउपलोंकी अग्निसे पुटपाक किया हुवा आठ तोले, हारिताल आठ तोले और घीसे पिसा हुआ गूगुल आठ तोले सबको मिलाकर लेहवत् पकावै । इसको सेवनकरनेसे–गुल्म, कोढ, क्षय, स्थूलता, सूजन, शूल, पकाहुआ शूल, पाण्डुरोग, प्रमेह, वातरोग और वलीपलितरोग दूर होताहै ॥ ३१–३५ ॥

अथ रक्तगुल्महरोपायः ।

रौधिरस्यतुगुल्मस्यगर्भकालव्यतिक्रमे ।
स्निग्धस्विन्नशरीरायदद्यात्स्निग्धविरेचनम् ॥ ३६ ॥

अर्थ–रक्त (आर्त्तव) जनित गुल्मरोगमें गर्भकालको छोडकर अर्थात् ग्यारह मासके भीतर भी गर्भ प्रसूत न होय तो निश्चय रक्तगुल्म जानकर स्त्रियोंको स्निग्ध और स्विन्न करके विरेचनके लिये स्नेहयुक्त जुल्लाब देवै ॥ ३६ ॥

अथ नानाविधगुल्मोपायः ।

कम्पिल्लस्यरजःश्रेष्ठंससितंमधुरेचनम् ॥
शताह्वाचिरबिल्वत्वग्दारुभार्ङ्गीकणोद्भवः ॥ ३७ ॥
कल्कःपीते हरेद्गुल्मंतिलक्वाथेनरक्तजम् ।

तिलक्काथोगुडव्योषहिंगुभार्ङ्गीयुतोभवेत् ॥ ३८ ॥
पानंरक्तभवेगुल्मेनष्टेपुष्पेचयोषिताम् ॥
सक्षारत्र्यूषणंमद्यंप्रपिबेदस्रगुल्मिनी ॥ ३९ ॥
पलाशक्षारतोयेनसिद्धंसर्पिःपिबेच्चसा ।
नप्रभिद्येतयद्येवंदद्याद्योनिविशोधनम् ।
क्षारेणयुक्तंफलकंस्नुहीक्षीरेणवापुनः ॥ ४० ॥

क्षारेणपलाशस्यफलकंतिलपिण्डकम् ।
सूक्ष्मवस्त्रंप्रक्षायित्वावर्त्तिंकृत्वायोनौ धारयेत् ।

किण्वंसगुडक्षारंदद्याद्योनिविशोधनम् ।
रुधिरेतिप्रवृत्तेतुरक्तपित्तहरीक्रिया ॥ ४१ ॥

क्षारोघण्टापाटल्यादिः ।
उष्णैरुष्णवीर्यैः ।
किण्वंसुराबीजंजलेनवर्त्तिः ।

अर्थ—कबीलेका चूर्ण, मिश्री और सहत मिलाकर सेवनकरनेसे रक्तगुल्मवाली स्त्रियोंके उत्तम रीतिसे दस्तहोतेहैं । सोया, करंजकी छाल, देवदारु, भारंगी और पीपलको तिलोंके क्काथमें पीसकर सेवनकरनेसे आर्त्तवजनित गुल्मरोग शान्त होताहै । गुड़, पीपल कालीमिरच, सोंठ, हींग और भारंगीको तिलोंके क्काथमें पीसकर पीनेसे स्त्रियोंका रक्तगुल्म रोग नष्ट होताहै और नष्टपुष्प फिरसे उदित होजाताहै । खार और त्रिकुटेका चूर्ण मद्यकेसाथ पानकरनेसे रक्तगुल्म आराम होताहै । घण्टापाढ़ल आदिकेक्षारके जलसे और ढाकके क्षारके जलसे बनायाहुआ घी पीनेसेभी आर्त्तवजनित गुल्मरोग दूर होताहै । आर्त्तवजनित गुल्मरोगमें उष्ण औषधियोंके द्वारा जुल्लाब देना अत्यंत हितकारी है । जो जुल्लाब न देवे तो योनिको शुद्धकरनेवाली औषधि प्रयोग करे, पलाशका क्षार अथवा थूहरका और दूध तिलोंके एकत्र पीसके पिण्ड बनालेवे, उस पिण्डको बारीक वस्त्रपै लेपकरि बत्ती बना योनिमें धारणकरनेसे दूषितरक्त निकलकर योनि शुद्ध होजातीहै । सुराबीज, गुड़ और क्षार इनको मिलाकर जलके साथ बत्ती

बना योनिमें धारणकरनेसे योनि शुद्ध होजातीहै । जो योनिके द्वारा अधिक रक्तस्राव होय तो रक्तपित्तनाशक क्रिया करनी चाहिये ॥ ३७–४१ ॥

अथ भल्लातकघृतम् ।

भल्लातकान्कल्ककषायपक्वंसर्पिःपिबेच्छर्करयाविमिश्रम् ॥
तद्रक्तगुल्मंविनिहन्तिपीतंबलासगुल्मंमधुनासमेतम् ॥ ४२॥
सिद्धशीतेशर्कराप्रक्षेप्या ।
कफगुल्मेशर्करास्थानेमध्वादिकम् ।

अर्थ–गायका घी एकसेर, भिलावेका क्वाथ चारसेर और कल्कके लिये कुटा हुआ भिलावा पावभर, सबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। इस घृतमें बूरा मिलाकर पीनेसे रक्तगुल्म और सहत मिलाकर पीनेसे–कफगुल्म रोग नाश होता है

अथ शिखिवाडवरसः ।

मारितंसूतताम्राभ्रंगंधकंमाक्षिकंसमम् ।
मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्यवक्षारयुतंदिनम् ॥ ४३ ॥
त्रिगुञ्जंभक्षयेन्नित्यंनागवल्लीदलेनवा ।
वातगुल्महरःख्यातोरसोऽयं शिखिवाडवः ॥ ४४ ॥
हिंगुसौवर्चलत्र्यूषसिन्धुदाडिमदीप्यकैः ।
प्रतिचूर्णकर्षमात्रंप्रस्थंप्रस्थंघृतंदधि ॥ ४५ ॥
पाच्यंघृतावशेषंतंकर्षार्द्धमनुपानतः ।
वातगुल्मञ्चशूलञ्चआनाहञ्चविनाशयेत् ॥ ४६ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, गंधक, सोनामाखी और जवाखार, इन सबको एकत्र कर एकदिन चीतेके रसमें खरल करै । इसको प्रतिदिन तीन रत्तीभर पानमें रखके खावे तो यह शिखिवाडवरस वातगुल्मको निश्चय नष्ट करदेवै । हींग, कालानोन, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, सैंधानोन, अनार और अजवायन, प्रत्येकका चूर्ण दो तोले, घृत दोसेर, दही दोसेर, इन सबको एकत्रकर यथाविधिसे पकावे, जब केवल घृतही शेष रहै तब उतारलेवै। इसको एक तोलाभर शिखिवाडवरसके ऊपरसे पीवे तो वातगुल्म, शूल और आनाह रोग दूर होवै ॥ ४३–४६ ॥

अथोड्डामररसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतांशंमृतताम्रकम् ।
पंचांशंशाकवृक्षस्यद्रवैर्मर्द्यंदिनद्वयम् ॥ ४७ ॥
सर्पाक्ष्योऽथद्रवैश्चाह्निरुद्ध्वालघुपुटेपचेत् ।
पंचधाभूधरेवाथचूर्णंजैपालतुल्यकम् ॥ ४८ ॥
त्रिगुंजंभक्षयेच्चाज्यैःपित्तगुल्मप्रशान्तये ।
द्राक्षाहरीतकीक्काथमनुपानंप्रकल्पयेत् ॥
रसउड्डामरोनामपित्तगुल्मंनियच्छति ॥ ४९ ॥

अर्थ-शुद्धपारा एक भाग, शुद्धगंधक एकभाग और ताँबेकी भस्म चौथाई भाग, इन सबको पांचभाग शाकवृक्षके रसमें दो दिन और सर्पाक्षीके रसमें एक दिन खरल करे, फिर सम्पुटमें रख पांच लघुपुट देवे, अथवा पांचवार भूधरयंत्रमें पकावे । पश्चात् शीतल होनेपर पीसके चूर्ण करले और चूर्णकी बराबर शुद्ध जमालगोटा मिलादेवे । इसको तीन गुंजाप्रमाण घीके साथ खावे और ऊपर दाख और हरडोंके क्वाथका अनुपान करे तो यह उड्डामरनामवाला रस पित्तगुल्मको नष्ट करे ॥ ४७-४९ ॥

अथ नाराचरसः ।

ताम्रंसूतंसमंगंधंजैपालंत्रिफलासमम् ।
त्रिकटुकंपेषयेत्क्षौद्रैर्निष्कंगुल्महरंलिहेत् ॥
उष्णोदकंपिबेच्चानुनाराचोयंमहारसः ॥ ५० ॥

अर्थ-ताँबा, पारा, गंधक जमालगोटा, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सबको समान भाग लेकर सहतमें पीसलेवे, इसको चारमासेभर भक्षण करे और ऊपरसे गरमजल पीवे तो यह नाराचरस-गुल्मरोगको निश्चय दूर करदेताहै ॥ ५० ॥

अथ विद्याधररसः ।

गंधकंतालकंताप्यंमृतताम्रंमनःशिला ।
शुद्धसूतंचतुल्यांशंमर्दयेद्भावयेद्दिनम् ॥ ५१ ॥
पिप्पल्यास्तुकषायेणवज्रीक्षीरेणभावयेत् ।

निष्कार्द्धंभक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मंप्लीहंविनाशयेत् ॥
रसोविद्याधरोनामगोमूत्रञ्चपिबेदनु ॥ ५२ ॥

अर्थ—शुद्ध गंधक, शुद्ध हरिताल, शुद्ध सोनामाखी, ताँबेकी भस्म, मैनशिल और शुद्ध पारा यह सब समान भाग लेकर पीपलके काढेमें और थूहरके दूधमें भावना देकर एक दिन खरल करै । इसको दो मासे भर सहतके साथ खावे और ऊपरसे गोमूत्र पीवे तो यह विद्याधरनावाला रस गुल्म और प्लीहादि रोगोंको दूर करै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अथ गुल्मोदरादिहरचूर्णम् ।

मृतंसूतंमृतंताम्रंताप्यंकांचनींमर्द्दयेत् ।
अर्कवज्रीरसेनैवदिनान्तेवटकीकृतम् ॥ ५३ ॥
गुंजैकंगुडसंयुक्तंतथागंधसुवर्चलम् ।
निष्कैकंगुल्मशांत्यर्थंरसःकांचनमोहनः ॥ ५४ ॥
विशालाकटुकामुस्तंकुष्ठमिन्द्रयवंसमम् ।
चूर्णयेद्देवदारुञ्चकर्षैकंमधुनालिहेत् ॥
गुल्मोदरज्वरस्तापमनुपानंनिहन्त्यलम् ॥ ५५ ॥

अर्थ—पारेकीभस्म, ताँबेकीभस्म, सोनामाखी, हलदी, गंधक और कालानोन, इन सबको एकत्रकर आकके दूधमें एकदिन खरलकर रात्रिमें एक एक गुंजाभरकी गोली बनालेवै । चारमासे भर इसको गुड़केसाथ भक्षणकरै । और ऊपरसे इन्द्रायण, कुटकी, नागरमोथा, कूठ, इन्द्रजौ और देवदारु इनका चूर्ण सहतमें मिलाकर दो तोलेभर खावे तो गुल्म, उदररोग, ज्वर और दाह दूर होवै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

अथ नाराचरसगुणः ।

पित्तश्लेष्मोत्थितेगुल्मेदेयोनाराचकोरसः ॥ ५६ ॥

अर्थ—पित्तश्लेष्मसे उत्पन्न हुए गुल्मरोगमें नाराचरस देना चाहिये ॥ ५६ ॥

अथ रक्तप्रदररोगहरोपायः ॥

पारदंशिखितुत्थञ्चजैपालंगंधकंसमम् ।
आरग्वधफलंकृष्णावज्रीदुग्धेनमर्द्दयेत् ॥ ५७ ॥

धात्रीफलरसैःखा· त्स्त्रीणांरक्तदरंहरेत् ॥
चिंचाफलरसंचाशुपथ्यंदध्योदनंहितम् ॥ ५८ ॥

अर्थ-पारा, नीलाथोथा, जमालगोटा, गंधक, अमलतास और पीपल इन-सबको एकत्रकर थूहरके दूधमें खरलकरै, फिर इसको आमलोंके रसमें मिला-कर खानेसे स्त्रियोंका रक्तप्रदररोग दूर होताहै इसके ऊपर इमलीका रस और दहीके साथ भातका भक्षण करना पथ्य है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

अथान्योपायः ।

रक्तदरंहरेत्सैवकठिनंलेपनेनतु ॥ ५९ ॥

अर्थ-खडियामिट्टीका पेटपर लेप करनेसे भी रक्तप्रदररोग दूर होताहै ॥५९॥

अथ रुधिरस्त्राविप्रदराचिकित्सा ।

रुधिरेतुप्रवृत्तेऽपिरक्तपित्तहरीक्रिया ।
कार्यावातरुजार्तानांसर्ववातहरीक्रिया ॥ ६० ॥

अर्थ-रक्तस्त्राव अधिक होय तो रक्तपित्तनाशक क्रिया करनी चाहिये। और स्त्रियोंके उदरमें वातजनित वेदना होय तो सर्ववातनाशक क्रिया करनी चाहिये ॥ ६० ॥

अथ धात्रीषट्पलकंघृतम् ।

धात्रीफलानांस्वरसैःषट्पलंविपचेद्घृतम् ।
शर्करासैन्धवोपेतंतद्धितंसर्वगुल्मिनाम् ॥ ६१ ॥

अर्थ-आमलोंके रसमें चौबीस तोले घृतको पकावे, फिर इसमें मिश्री और सैंधानोन मिलाकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके गुल्म रोग दूर होतेहैं ॥६१॥

अथ सशूलगुल्महरवचादिचूर्णम् ।

वचाहरीतकीहिंगुसैन्धवंसाम्लवेतसम् ।
यवक्षारंयवानीश्चपिबेदुष्णाम्बुनाभृशम् ॥ ६२ ॥
एतद्धिगुल्मनिचयंसशूलंसपरिग्रहम् ।
भिनत्ति सप्तरात्रेणवह्नेर्वृद्धिङ्करोतिच ॥ ६३ ॥

अर्थ-वच, हरड, हींग, सैंधानोन, अमलबेत, जवाखार और अजवायन इन सबको समान भागले चूर्णकर गरम जलके साथ पीनेसे-शूलसहित गुल्मरोग सात दिनमें दूर होजाताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

अथ हिंग्वाद्यंचूर्णम् ।

हिंगुत्रिकटुकवचाजमोदाधन्याजगन्धादाडिमतिन्तिडीकपाठाचित्रकचव्यसैन्धवविडसौवर्चलयवाक्षारस्वर्जिकाः । पिप्पलीमूलाम्लवेतसशठीपुष्करहपुषाजाजीपथ्याःसंचूर्ण्यमातुलुङ्गाम्लेनबहुशःपरिभाव्याक्षमात्रागुटिकाःकारयेत् । ततःप्रातरेकैकांभक्षयेत् । एषखलुयोगोगुल्मश्वासकासचोरकहृद्रोगपार्श्वोदरबस्तिशूलानाहमूत्रकृच्छ्रार्शःप्लीहपाण्डुरोगान्हन्ति । दूलीप्रतिदूल्याश्चात्र्थमुपयुज्यते ।

अर्थ—हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, अजमोदा, धनियाँ, तिलवन, अनार, इमली, पाढ़, चीता, चव्य, सैंधानोन, बिरियासंचरनोन, कालानोन, जवाखार, सज्जीखार, पीपलामूल, अमलबेंत, कचूर, पोहकरमूल, हाऊबेर, जीरा और हरड़ इन सबको एकत्र पीस चूर्णकर बिजौरे नीबूके रसकी बारंबार भावना देकर दोदो तोले भरकी गोली बनालेवे । प्रतिदिन प्रातःकाल एक गोली खावे । इससे गुल्म, श्वास, खांसी, अरुचि, हृदयरोग, पार्श्वशूल, उदररोग, बस्तिशूल, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, प्लीहा और पाण्डुरोग दूर होजाताहै ॥

अथ कह्लाराद्यंघृतम् ।

कह्लारमुत्पलंपद्मकुमुदंमधुयष्टिका ।
पक्वाम्बुनाथतत्क्वाथेजीवनीयोपकल्कितम् ॥ ६४ ॥
घृतंपक्वंनवंपीतंरक्तपित्तास्रगुल्मनुत् ।
दाहतृष्णाज्वरच्छर्दियोनिदोषहरंपरम् ॥ ६५ ॥

अर्थ—गायका घी दोसेर, कल्कके लिये जीवनीयदशक आध सेर और क्वाथके लिये सफेदकमल, नीलोत्पल, कमल, कुमोदिनी और मुलेठी दोसेर, जल बत्तीस सेर, शेष आठ सेर रक्खै । सबको मिलाकर यथाविधिसे—घृतको सिद्ध करै । इस घृतके पीनेसे—रक्तपित्त, रक्तगुल्म, दाह, तृषा, ज्वर, वमन और योनिके विकार दूर होतेहैं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

अथ गुल्मिनोऽपथ्यम्।

वल्लूरंमूलकंमत्स्यान्छुष्कशाकानिवैदलम्।
नखादेच्चानुपंगुल्मीमधुराणिफलानिच ॥ ६६ ॥

इति गुल्मरोगाऽध्यायः।

अर्थ–शुष्कमांस, मूली, मछली, शुष्कशाक, वैदल अन्न अनूपदेशके जीवोंका मांस, और मधुफल यह सब गुल्मरोगवाले मनुष्योंको कदापि भक्षण करने नहीं चाहियें ॥ ६६ ॥

इति गुल्मरोगाधिकारः समाप्तः।

अथ हृद्रोगचिकित्सा।

हृद्रोगिणंस्नेहयित्वावमयेद्रेचयेत्तथा।
सुचिरोत्थंलंघयेच्चहृद्रोगंवातिकंविना ॥ १ ॥
पिप्पल्येलावचाहिंगुयवक्षारोऽथसैंधवम्।
सौवर्चलमथोशुण्ठीचाजमोदावचूर्णितम् ॥ २ ॥
फलधान्याम्बुकौलत्थंदधिमद्यासवादिभिः।
पाययेच्छुद्धदेहश्चस्नेहेनान्यतमेनवा ॥ ३ ॥

अर्थ–हृदयरोगीको स्निग्धकरके वमन और विरेचन करावै, और वातिक हृदयरोगको छोडकर बाकीके बहुत पुराने सर्वप्रकारके हृदयरोगोंमें लंघन कराने चाहियें। पीपल, इलायची, हींग, जवाखार, सेंधानोन, कालानोन, सोंठ और अजमोदा इन सबका एकत्र चूर्णकर त्रिफलेके काढेके साथ, काँजीके- साथ, कुलथीके यूषके साथ, दधि, मदिरा, आसव अथवा अन्य किसी- स्नेहके साथ वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्धदेहवाले हृदयरोगीको पान करावे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ हृद्रोगहरोपायः।

शीतप्रदेहाःपरिसेचनानितथाविरेकोहृदिपित्तदुष्टे।
द्राक्षासिताक्षौद्रपरूषकैःस्याच्छुद्धेचपित्तेह्यनुपानकंस्यात् ४

अर्जुनस्यत्वचासिद्धंक्षीरंयोज्यंचपैत्तिके ।
सितयापंचमूल्याचबलयामधुकेनवा ॥ ५ ॥
घृतेनदुग्धेनगुडाम्भसावापिबन्तिचूर्णंककुभस्यतोये ।
हृद्रोगजीर्णज्वररक्तपित्तंहत्वाभवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥ ६ ॥

अर्थ-पैत्तिक हृदयरोगमें शीतललेप, जलका सींचना, और विरेचन यह उपचार करै । वमन, विरेचन आदिसे शुद्ध किये हुए हृदयरोगीको दाख, मिश्री, सहत और फालसा इनको एकत्रकर खानेको देवै । अर्जुनकी छाल, अथवा पंचमूल या मुलैठी, अथवा खिरैटीके साथ दूधको औटाकर मिश्री मिलाके पीनेसे पित्तज हृदयरोग दूर होताहै । घी, दूध, या गुड़के शरबतके साथ अर्जुनवृक्षकी छालके चूर्णको पीनेसे हृद्रोग, जीर्णज्वर और रक्तपित्तरोग दूर होताहै और मनुष्य दीर्घजीवी होजातेहैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ हृद्रोगहरचूर्णम् ।

वचानिम्बकषायाभ्यांवान्तंहृदिकफोत्थिते ॥ ७ ॥
गोधूमककुभचूर्णंछागपयोगुडसर्पिषापक्वम् ।
मधुशर्करयाविमिश्रंशमयतिहृद्रोगमुद्धतंपुंसाम् ॥ ८ ॥
दशमूलीकषायास्तुसयवक्षारसैन्धवम् ।
कासंश्वासंचहृद्रोगंगुल्मशूलञ्चनाशयेत् ॥ ९ ॥
हिंगूग्रगन्धाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराढ्यंयवाम्भसाशूलहृदामयघ्नम् १० ॥

अर्थ-कफज हृदयरोगमें बच और नीमके क्वाथके द्वारा वमन करावे । गेहूं और कोहका चूर्ण बकरीके दूधमें गुड़ और घृत डालके पकावे, फिर इसमें सहत और मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे प्रबल हृदयरोग दूर होताहै । दशमूलके काढ़ेमें जवाखार और सैंधानोन मिलाकर पीनेसे-खाँसी, श्वास, हृदयरोग, गुल्म और शूलरोग, दूर होताहै । हींग, बच, विरियासंचरनोन, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड़, चीता, जवाखार, कालानोन और पोहकरमूल इनका चूर्ण जौके काढ़ेके साथ पीनेसे-शूल और हृदयरोग दूर होताहै ॥ ७-१० ॥

अथ वल्लभघृतम् ।

मुख्यंशतार्द्धञ्च [illegible]रीतकीनां[illegible]ौवर्चलस्या[illegible]ञ्च ।

पक्वं घृतं वल्लभकेति नाम्ना हृद्रोगशूलोदरमारुतघ्नः ॥११॥
मुख्यं प्रशस्तम्।

अर्थ—हरड़ पचास, कालानोन आठ तोले, इनके द्वारा घृतको पकाकर सेवन करनेसे हृदयरोग, शूल, उदररोग और वातको यह वल्लभघृत दूर करै है ॥११॥

अथ पाठाद्यं चूर्णम्।

पाठावचाशठीक्षारपथ्याग्निव्योषदाडिमम्।
महार्द्रकश्च त्रिफलाकुष्ठयासाम्लवेतसम् ॥ १२ ॥
मातुलुंगस्य मूलञ्च चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत्।
मद्येन वा जयेद्गुल्मं हृद्रोगं शूलमाशु तत् ॥ १३ ॥

अर्थ—पाढ़, बच, कचूर, जवाखार, हरड़, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, अनार, महार्द्रक (इमली), हरड़, बहेडा, आमला, कूठ, जवासा, अमलबेंत और बिजोरेकी जड, इनका एकत्र चूर्णकर गरमजलके अथवा मदिराके साथ पीनेसे गुल्म, हृदयरोग और शूलका नाश होताहै ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथ श्वदंष्ट्राद्यं घृतम्।

श्वदंष्ट्रोशीरमंजिष्ठाबलाकाश्मर्यकट्फलम्।
दर्भमूलं पृश्निपर्णी पलाशर्षभकौ स्थिरा ॥ १४ ॥
पलिकान्साधयेत्तेषां रसे क्षीरचतुर्गुणे।
कल्कैः स्वगुप्तर्षभकौ जीवन्तीजीवकैः समैः ॥ १५ ॥
शतावर्यार्द्धिमृद्वीकाशर्कराश्रावणीबिसैः।
प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातपित्तहृद्रोगशूलनुत् ॥ १६ ॥
मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शःकासश्वासक्षयापहः।
बल्यः स्त्रीमद्यभावाध्वक्षीणानां बलमांसदः ॥ १७ ॥
श्रावणी मुण्डी बिसं मृणालम्।

अर्थ—गायका घी दोसेर, दूध आठ सेर, क्वाथके लिये गोखुरू, खस, मँजीठ, खिरैटी, कुम्भेर, श्योनाक, कुशकीजड, पृश्निपर्णी, ढाक, ऋषभक और शालिपर्णी, यह प्रत्येक चार चार तोले, पाकके वास्ते जल सोलह सेर, शेष चार सेर और कल्कके लिये कौंछ, ऋषभक, जीवन्ती, जीवक, सतावर, दाख,

किसमिस, मिश्री, गोरखमुण्डी और कमलकी नाल प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृत सिद्धकरै । इस घृतको सेवन करनेसे वातपैत्तिक हृदयरोग, शूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह बवासीर, खाँसी, श्वास और क्षयरोगका क्षय होताहै । अत्यन्त बलकी वृद्धि होतीहै । यह घृत–मैथुन, मद्यपान, भारवहन (बोझढोना या बोझ लादना) और पथभ्रमण (मार्ग चलना) के द्वारा क्षीण मनुष्योंके बल और मांसको बढाताहै ॥ १४–१७ ॥

अथ बलाद्यंघृतम् ।

घृतंबलानागबलार्जुनाम्बुसिद्धंसयष्टीमधुकल्कपादम् ।
हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्तकासानिलासृक्शमयत्युदीर्णम् १८॥
अम्बु क्वाथः ।

अर्थ–गायका घी एकसेर, खिरैटी, गंगेरन और अर्जुनका काढा चार सेर, और मुलैठीका कल्क पावभर, लेवै, सबको मिलाकर घृतको सिद्ध करै । यह घृत–हृदयरोग, शूल, क्षत, रक्तपित्त, खाँसी, वातरक्त, इनको दूर करैहै ॥ १८॥

अथार्जुनघृतम् ।

पार्थस्यकल्कस्वरसेनसिद्धंशस्तंघृतंसर्वहृदामयेषु १९॥
स्वरसाभावे क्वाथः ।

अर्थ–अर्जुनके कल्क और स्वरससे सिद्धकियाहुआ घी सर्वप्रकारके हृदयरोगोंमें देना चाहिये ॥ १९ ॥

अथ पंचसाररसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंधात्रीफलद्रवैर्दिनम् ।
यष्टीखर्ज्जूरद्राक्षाणांक्काथेनमर्द्दयेद्दिनम् ॥ २० ॥
पंचसाररसोनामभक्षयेन्माषमात्रकम् ।
धात्रीचूर्णंसिताचानुपित्तहृद्रोगजिद्भवेत् ॥ २१ ॥

अर्थ–पारा और गंधक समानभाग लेकर आमलोंके रसमें एकदिन खरल करै. फिर मुलैठी, खजूर और दाखोंके काढेमें एकदिन खरल करै तो पंचसारनामवाला रस सिद्ध हो । इसको एक मासाभर खावे और ऊपरसे आमलोंका चूर्ण मिश्री मिलाकर भक्षण करै । इससे पित्तज हृदयरोग दूर होताहै॥२०॥२१॥

अथ हृदयार्णवरसः ।

शुद्धसूतसमंगंधंमृतताम्रंद्वयोःसमम् ।
मर्दयेत्त्रिफलाद्रावैःकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ २२ ॥
चणमात्रांवटींखादेद्रसोऽयंहृदयार्णवः ।
काकमाचीफलंशुष्कंत्रिफलाफलसंयुतम् ॥ २३ ॥
द्वात्रिंशच्चपलंतोयंक्काथमष्टावशेषकम् ।
अनुपानंपिबेच्छान्त्यैहृद्रोगेचकफोत्थिते ॥ २४ ॥

अर्थ—शुद्धपारा एकभाग, शुद्धगंधक एकभाग, ताँबेकी भस्म दोभाग, इनको एकदिन त्रिफलेके क्काथमें और एकदिन मकोयके रसमें खरल करके चनेकी बराबर गोली बनालेवै । एक गोली प्रतिदिन खावे और ऊपरसे मकोयके सूखेफल और त्रिफलेको बत्तीस पल जलमें अष्टावशेष काढ़ा कर पीवे तो कफज हृदयरोग दूर होवे ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

अथ हृद्रोगहरोपायः ।

चतुर्विंशतिपलंक्षीरंगवामथपचेच्छनैः ।
द्विरष्टपलकंयावत्तावत्कुर्यात्सुशीतलम् ॥ २५ ॥
कर्षैकंपिप्पलीचूर्णंक्षिप्त्वापेयंहितंपरम् ।
सर्वदोषोत्थहृद्रोगंज्वरंश्वासंक्षयंजयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ—चौबीसपल गायके दूधको मन्दाग्निसे धीरे धीरे पकावे, जब आधा दूध औटाकर शेष रहे तब उतारकर शीतल करले, फिर इसमें दो तोले पीपलका चूर्ण डालकर पीवे तो सर्वप्रकारके हृदयरोग, ज्वर, श्वास और क्षयरोग दूर होवें ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथोरुस्तम्भादिहरोपायः ।

निष्कत्रयंशुद्धसूतंनिष्कद्वादशगंधकम् ।
गुंजाबीजञ्चपञ्चिणिष्कंनिम्बबीजंजयातथा ॥ २७ ॥
प्रत्येकंनिष्कमात्रन्तुसमंजैपालबीजकम् ।
जयाजंबीरधत्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ २८ ॥
मर्द्यंसर्वंरसंकुर्याद् घृतैर्गुञ्जाद्वयंलिहेत् ।

गुंजाभद्ररसोनामहिंगुसैन्धवसंयुतम् ॥
शमयत्येवकिंचित्रमूरुस्तम्भादिदुःसहम् ॥ २९ ॥

अर्थ—शुद्धपारा बारहमासे, शुद्धगंधक अड़तालीस मासे, चोंटली चौबीसमासे, नीमके बीज चारमासे, भाँग चारमासे, जमालगोटा चारमासे, इन सबको एकत्र कर जयन्ती, जम्भीरी नीबू, धतूरा और मकोयके रसमें एक एक दिन खरल करै । इसको दो गुंजाभर घृत, हींग और सैंधेनोनके साथ सेवनकरनेसे—ऊरुस्तम्भादिरोग दूर होतेहैं ॥ २७–२९ ॥

अथ हृदयरोगेलेपः ।

अर्कक्षीरेणसिन्धूत्थंलेपोवक्षसिदापयेत् ॥ ३० ॥

अर्थ—आकके दूधमें सैंधानोन पीसकर वक्षःस्थलमें लेप करनेसे हृदयरोग दूर होताहै ॥ ३० ॥

अथ गुंजाभद्ररसः ।

पद्मकेशरकंद्राक्षानिम्बबीजंजयातथा ।
तुल्यंचतुर्गुणंक्षीरंक्षीरात्तोयंचतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
क्षीरशेषंपचेत्सर्वंसक्षौद्रंपाययेद्भिषक् ।
उदराणिक्षतंवक्षोहृद्रोगंरक्तपित्तनुत् ॥ ३२ ॥

अर्थ—कमलकी केशर, दाख, नीमके बीज और जयन्ती यह सब समानभाग. इससे चौगुना दूध और दूधसे चौगुना जल मिलाकर मन्द मन्द अग्निमे पचावै, जब दूध बाकी रहै तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इसमें सहत मिलाकर पीनेसे उदररोग, क्षत, वक्षरोग, हृदयरोग और रक्तपित्त रोग दूर होता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथ पुष्करजचूर्णोपयोगः ।

चूर्णंपुष्करजंलिह्यान्माक्षिकेणसमायुतम् ।
हृच्छूलश्वासकासघ्नंक्षयहिक्कानिवारणम् ॥ ३३ ॥

इति हृद्रोगाऽध्यायः ।

अर्थ—पोहकरमूलके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसे हृदयशूल, श्वास, खाँसी, क्षय और हिक्कारोग दूर होताहै ॥ ३३ ॥

इति हृद्रोगाधिकारः समाप्तः ।

अथोरोग्रहाधिकारचिकित्सा ।

अत्यभिस्यन्दिगुर्वन्नशुष्कपूत्यामिषाशनात् ॥ ।
स्वासंमांसंयकृत्प्लीह्नोःसद्योवृद्धिंयदागतम् ॥ १ ॥
उरोग्रहंतदाकुक्षौकुरुतःकफमारुतौ ।
संस्तम्भंसज्वरंघोरंरूक्षंस्पर्शासहंगुरुम् ॥ २ ॥
आध्मानारुचिहृच्छोथवातविण्मूत्ररोधिता ।
तंत्रारोधकशूलानितत्रलिंगानिनिर्दिशेत् ॥ ३ ॥

अर्थ–अत्यन्त अभिष्यन्दि पदार्थ, भारी अन्न और सूखे तथा दुर्गन्धित मांसको भक्षणकरनेसे–मांसरुधिरके संयोगसे यकृत और प्लीहा जिससमय वृद्धिको प्राप्त होतेहैं, उसीसमय कफ और वात कुक्षिमें जाकर उरोग्रहरोगको उत्पन्न करतेहैं। स्तम्भ, ज्वर, रूक्षता, स्पर्शको न सहसके, गुरुता, आध्मान, अरुचि, हृदयमें सूजन अधोवायुका अवरोध, मलमूत्रकारोध, तन्द्रा और शूल यह सब लक्षण उरोग्रहरोगमें उत्पन्न होतेहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथोरोग्रहरोगहरोपायः ।

अत्राशुस्वेदनंकुर्याद्दहनंरक्तमोक्षणम् ।
तीक्ष्णैर्निरूहणंवैकंक्रमाल्लंघनमादरात् ॥ ४ ॥
पुत्रञ्जीवकशिग्रुत्वक्सूर्यावर्त्तदलोद्भवाः ।
रसाएकैकशःकोष्णाद्विशोवारामठान्विताः ॥ ५ ॥
सपंचलवणाःपेयास्त्रिवृद्गुडसकाल्किताः ।
तन्निवृत्तंयथाशास्त्रंमूत्रतैलसुरासवैः ॥ ६ ॥
चव्याम्लवेतसक्षारान्सरामठसचित्रकान् ।
पिबेत्तैलारनालाभ्यामुरोग्रहनिवृत्तये ॥ ७ ॥
यथातुरस्यात्रकृतस्यकर्मव्याधेर्विरोधोनभवेन्मनागपि ।
यथाबलंवीक्ष्यचशुद्धविग्रहंतथाविधंपथ्यमपिप्रयोजयेत्

इति उरोग्रहनिदानचिकित्साधिकारः ।

अर्थ–इस उरोग्रह रोगके उत्पन्न होनेही स्वेद, लोहादिकी शलाकाके द्वारा दहन, रक्तमोक्षण, तीक्ष्णद्रव्योंके द्वारा बस्तिकर्म्म और लंघन यह क्रमसे उप-

चार करै । पतजिया, सैंजिनेकी छाल, हुलहुलके पत्ते इनमें एकके या दोके रसको गरम कर हींग और पांचों नोन मिलाकर पीनेसे उरोग्रहरोग शान्त होताहै, अथवा निसोत और गुड एकत्र कर गोमूत्र, तेल, सुरा या आसवके साथ पीसकर सेवन करनेसे—वा चव्य, अम्लबेंत, जवाखार, हींग और चीता समानभाग लेकर तेल और कांजीके साथ पान करनेसे—उरोग्रह दूर होताहै। उरोग्रहरोगीको बलके अनुसार वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्धकर रोगके अविरोधी पथ्य देवै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

इति उरोग्रहाधिकारः समाप्तः ।

अथ मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा ।

स्वेदाभ्यंजनसेकादिनिरूहोत्तरबस्तयः ।
स्थिराद्यैर्मारुतघ्नैश्चक्वाथाद्यावातकृच्छ्रिणाम् ॥ १ ॥

अर्थ—स्वेद, अभ्यंग, सेकादि, निरूहबस्ति, उत्तरबस्ति और वातनाशक शालिपर्णीआदिका क्वाथ,वातज मूत्रकृच्छ्ररोगवाले मनुष्योंको हितकारीहैं ॥ १ ॥

अथ मूत्ररोधहरोपायः ।

तैलकुचकमूलंपिष्ट्वाव्युषितेनवारिणातस्य ।
स्वरसोनिपीतमात्रःशमयतिमूत्रस्यसंरोधम् ॥ २ ॥

अर्थ—तैलकुचक (कन्दूरी) की जडको बासी जलमें पीसकरके उसके स्वरसको पीनेसे मूत्ररोध दूर होताहै ॥ २ ॥

अथ वातजमूत्रकृच्छ्रहरोपायः।

अश्वगंधामृताशुण्ठीधात्रीगोक्षुरजंजलम् ।
वातजंमूत्रकृच्छ्रञ्चशूलञ्चाशुविनाशयेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—असगंध, गिलोय, सोंठ, आमला और गोखुरुवोंका क्वाथ पीनेसे वातज मूत्रकृच्छ्र और शूल दूर होताहै ॥ ३ ॥

अथान्योपायः ।

एरण्डतैलसिंधूत्थरुबुक्काथंसवातिके ॥ ४ ॥

अर्थ—अरंडके क्वाथमें अंडीका तेल और सैंधानोन डालकर पीनेसे वातज मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै ॥ ४ ॥

अथापरोऽपि ।

एर्वारुबीजकल्कोवाकांजिकेनच सैन्धवः ॥ ५ ॥

अर्थ–ककडीके बीजोंको कांजीमें पीस सैंधानोन डालकर पीनेसे वातज मूत्रकृच्छ्र दूर होवै ॥ ५ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्ररोगोपचारकथनम् ।

सेकावगाहाःशिशिरप्रदेहाःस्नेहोविधिर्वस्तिपयोविकाराः ।
द्राक्षाविदारीक्षुरसैर्युतैश्चकृच्छ्रेषुपित्तप्रभवेषुकार्याः ॥ ६ ॥

अर्थ–सेक, अवगाहन, शीतललेप, स्नेह, बस्तिकर्म, दूधके विकार (माखन मट्टा इत्यादि) और दाखोंका रस, विदारीकन्दका रस और ईखका रस यह सब उपचार पित्तके मूत्रकृच्छ्रमें करने चाहियें ॥ ६ ॥

अथ तृणपंचमूलम् ।

कुशःकाशःशरोदर्भइक्षुश्चेतितृणाह्वयम् ।
पित्तकृच्छ्रहरंपंचमूलंबस्तिविशोधनम् ॥
एतत्पीतंपयःसिद्धंमेढ्रगंहन्तिशोणितम् ॥ ७ ॥

अर्थ–कुश, कास, डाभ, रामसर, और ईख, इन पाँचोंकी जडको तृणपंचमूल कहतेहैं । यह–पित्तके मूत्रकृच्छ्रको दूर करैहै और बस्तिको शुद्ध करैहै। इसी पंचमूलको दूधमें औटाकर पीनेसे लिंगसे रुधिरका निकलना बन्द होजाताहै ॥ ७ ॥

अथ शतावर्यादिक्काथः ।

शतावरीकासकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालूककशेरुकाणाम् ।
क्काथंसुशीतंमधुशर्कराभ्यांपिबञ्जयेत्पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रम् ॥८॥

अर्थ–शतावर, कास, कुशा, गोखुरू, बिदारीकन्द, भँसीडे और कशेरू, इनका क्काथ करै, जब ठंडा होजाय तब उसमें सहत और मिश्री मिलाकर पीवे तो पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र दूर होवे ॥ ८ ॥

अथ हरीतक्यादिक्काथः ।

हरीतकीगोक्षुरराजवृक्षपाषाणभिद्धन्वयवासकानाम् ।
क्काथंपिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तंकृच्छ्रेसदाहेसरुजेविबन्धे ९॥

पाषाणजित्कुलत्थम् ।

अर्थ–हरड़, गोखुरू, अमलतास, कुलथी, बेल और जवासा, इनके काढ़ेमें सहत डालकर पीनेसे दाह और पीड़ायुक्त मूत्रकृच्छ्ररोग, दूर होताहै ॥ ९ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्रहराणि ।

यवान्नक्षारतीक्ष्णोष्णंतैलाज्यंतिक्तकैःशृतम् ।
मूत्रेणसुरयावापिकदलीस्वरसेनवा ॥ १० ॥
कफपित्तविनाशायश्लक्ष्णंपिष्ट्वात्रुटिंपिबेत् ।

त्रुटिं सूक्ष्मैलाम् ।

शुण्ठीगोक्षुरतोयंवाकफकृच्छ्रविनाशनम् ॥ ११ ॥

यवक्षारंप्रक्षिपन्तिवृद्धाः ।

बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकलिंगकाः ।
पाचनीयोबृहत्यादिकृच्छ्रदोषत्रयापहः ॥ १२ ॥

धावनी पृश्निपर्णी ।

गुडेनमिश्रितंक्षीरंकदुष्णंकामतःपिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्रेषुसर्वेषुशर्करावातरोगनुत् ॥ १३ ॥

त्रिकण्टकारग्वधदर्भकाशदुरालभापर्वतभेदपथ्याः ।
निघ्नन्तिपीतामधुनाश्मरीञ्च संप्राप्तमृत्योरपिमूत्रकृच्छ्रम् १४

आसन्नमृत्योरित्यर्थः ।

शिलातुल्यायवक्षारःसर्वकृच्छ्रनिवारणः ।
कण्टकारीरसोवापिसक्षौद्रःकृच्छ्रनाशनः ॥ १५ ॥

अर्थ–यवान्न, खार तीक्ष्णपदार्थ, उष्णद्रव्य, तेल, घृत और कडुवे पदार्थ इनको औटाकर, अथवा गोमूत्र या मदिरा वा केलेके रससे छोटी इलायचीको बारीक पीसकर पीनेसे कफ और पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । सोंठ और गोखुरूओंके क्वाथमें जवाखार डालकर पीनेसे कफज मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । बृहती, पृश्निपर्णी (किसीके मतसे कटेरी), पाढ, मुलैठी और इन्द्रजौ इनका काढ़ा पीनेसे त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । इसको बृहत्यादिपाचन कहतेहैं। किंचित्गरमदूधमें गुड़ मिलाकर पीवे तो सर्वप्रकारके मूत्रकृच्छ्र, शर्करा, मेह

और वातरोग दूर होवै। गोखरू, अमलतास, डाभकी जड, कांसकी जड, जवासा, पाषाणभेद और हरड़, इनके क्वाथमें सहत मिलाकर पीनेसे असाध्यमूत्रकृच्छ्र और पथरीरोग दूर होताहै । मैनशिल और जवाखारको बराबर भाग मिलाकर सेवन करनेसे—सर्वप्रकारके मूत्रकृच्छ्र दूर होतेहैं। कटेरीके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होताहै ॥ १०–१५ ॥

अथ सरक्तमूत्रकृच्छ्रविचारः।

सरक्तेमूत्रकृच्छ्रेतुपैत्तिकंविधिमाचरेत् ॥ १६ ॥

अर्थ—रक्तज मूत्रकृच्छ्रमें पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रोक्त विधि करनी चाहिये ॥ १६ ॥

अथ शतावरीघृतंक्षीरञ्च।

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्राविदारिकेक्ष्वामलकेषुसिद्धम् ।
सर्पिःपयोवासितयाविमिश्रंकृच्छ्रेषुपित्तप्रभवेषुकुर्यात् १७॥

अर्थ—शतावर, काश, कुशा, गोखुरू, विदारीकन्द, ईखकी जड और आमला इनके कल्कसे घृत या दूधको सिद्धकर मिश्री मिलाकर सेवनकरनेसे—पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होताहै ॥ १७ ॥

अथ त्रिकंटकादिघृतम्।

त्रिकण्टकैरण्डकुशाद्यभीरुकर्कारुकेक्षुस्वरसेनसिद्धम् ।
सर्पिर्गुडार्द्धांशयुतंप्रदेयंकृच्छ्राश्मरीमूत्रविघातहेतोः ॥ १८॥

अर्थ—गोखुरू, अरण्ड, कुशादि, पंचमूल, सतावर, पेठा और ईख इनके स्वरसमें घृतको सिद्ध करै, इस घृतसे आधाभाग गुड मिलाकर पीवे तो मूत्रकृच्छ्र अश्मरी और मूत्राघात रोग दूर होवें। जो त्रिकण्टकादि औषधियोंका स्वरस न मिले तो क्वाथ लेना चाहिये ॥ १८ ॥

अथ सुकुमारकरसायनम्।

पुनर्नवामूलतुलादशमूलंशतावरी ।
बलातुरगगंधाचतृणमूलंत्रिकण्टकम् ॥ १९ ॥
विदारिगन्धानागाह्वगुडूच्यतिबलातथा ।
पृथग्दशपलान्भागानपांद्रोणेविपाचयेत् ॥ २० ॥
तेनपादावशेषेणघृतस्यार्द्धाढकंपचेत् ।
मधुकंशृंगवेरञ्चद्राक्षासैन्धवपिप्पली ॥ २१ ॥

द्विपलीनांपृथग्दद्याद्यवान्याःकुडवंतथा।
त्रिंशद्गुडपलान्यत्रतैलमेरण्डकस्य च ॥ २२ ॥
प्रस्थंदत्त्वासमालोड्यसम्यङ्मृद्वग्निनापचेत्।
एतदीश्वरपुत्राणांप्राग्भोजनमनिन्दितम् ॥ २३ ॥
राज्ञांराजसमानानांबहुस्त्रीपतयश्चये।
मूत्रकृच्छ्रेकटिस्तम्भेतथागाढपुरीषिणाम् ॥ २४ ॥
मेढ्रवंक्षणशूलेचयोनिशूलेनशस्यते।
यथोक्तानाञ्चगुल्मानांवातशोणितिकाश्चये ॥
बल्यंरसायनंशीतंसुकुमारकुमारकम् ॥ २५ ॥
दशमूलस्यमिलित्वादशपलानि।
एवंतृणपंचमूलस्य।
द्रोणेजलद्रोणद्वयम्।
द्रव्यतुलात्वंयस्याविद्यमानत्वात्।
द्विपलीनांप्रत्येकंद्विपलप्रमाणम्।
घृतस्यप्रस्थद्वयम्।
घृततैलान्येकीकृत्यपाकः।

अर्थ–गायका घी चारसेर, गुड तीसपल, अरण्डकातेल दो सेर क्राथकेलिये पुनर्नवेकी जड साढेवारहसेर, दशमूल, सतावर, खिरेंटी, असगन्ध, तृणपंचमूल. गोखुरू, विदारीकन्द, नागकेशर, गिलोय और कंघी प्रत्येक दशदशपल, जल चौसठसेर शेष सोलहसेर, कल्कके लिये महुवा, अदरख, दाख, सेंधानोन और पीपल प्रत्येक दोदो पल और अजवायन आधसेरलेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे पकावै। यह राजा तथा राजाओंके समान और बहुतस्त्रीवाले मनुष्योंको सेवन करना चाहिये। मूत्रकृच्छ्र, कटिस्तम्भ, गाढपुरीष. मेढ्र, वंक्षणशूल, योनिशूल, गुल्म और वातरक्तको दूरकरैहै। बलकारक रसायन और शीतल है॥ १९–२५ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्रहरलौहम्।

अयोरजःश्लक्ष्णचूर्णंमधुनासहयोजितम्।
मूत्रकृच्छ्रंनिहन्त्येतात्रिभिर्लोहैर्नसंशयः॥ २६॥

अर्थ—तीनभाग लोहेके चूर्णमें एकभाग सहत मिलाकर सेवनकरनेसे निःसन्देह मूत्रकृच्छ्र रोग दूरहोताहै॥ २६॥

अथ मूत्रकृच्छ्रान्तकोरसः।

शतावरीरसैःपिष्ट्वामृतसूतश्चताम्रकम्।
शिखितुत्थंचतुल्यांशंदिनैकंमर्दयेद्दृढम्॥ २७॥
तद्गोलंसार्षपेतैलेपाच्यंयामञ्चचूर्णयेत्।
मूत्रकृच्छ्रात्मकःक्षौद्रैर्लिहेद्गुंजाचतुष्टयम्॥ २८॥
भक्षयेन्नात्रसन्देहोमूत्रकृच्छ्रंनिहन्त्यलम्।
तुलसीतिलपिण्याकंबिल्वमूलंतुषाम्बुना॥
कर्षैकमनुपानेनसुरयावासुवर्चलैः॥ २९॥

अर्थ—पारेकीभस्म, तांबेकीभस्म और शुद्ध नीलाथोथा, इनको समानभाग लेकर एक दिन सतावरके रसमें खरल करै, पश्चात् इसका गोला बनाकर सरसोंके तेलमें एक प्रहर तक पकावे, शीतल होनेपर चूर्ण करलेवे तो मूत्रकृच्छ्रान्तकनामवाला रस तैयार हो। इसको सहतमें मिलाकर चार रत्तीभर खावे तो निश्चय मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवे। इसके ऊपर तुलसी, तिलोंकी खल और बेलकी जड इनको तुषाम्बुनामक कांजीमें मिलाकर एक कर्ष प्रमाण पीवे अथवा सुरामें संधानोन डालकर पान करै॥ २७–२९॥

अथ लघुलोकेश्वररसः।

रसभस्मैकभागश्चचत्वारःशुद्धगंधकाः।
पिष्ट्वावराटिकापूर्य्यारसपादेनटङ्कणम्॥ ३०॥
क्षीरपिष्टेनरुद्धास्यंभाण्डेरुद्ध्वापुटेपचेत्।
स्वांगशैत्यंविचूर्ण्याथलघुलोकेश्वरोरसः॥ ३१॥
चतुर्गुञ्जाघृतैर्देयंमरिचैःसहबुद्धिमान्।

धात्रीमूलफलैःकल्कमजाक्षीरेणपाययेत् ॥
शर्कराभावितंवातुपीत्वाकृच्छ्रहरःपरः ॥ ३२ ॥

अर्थ—पारेकीभस्म एकभाग, शुद्ध गंधक चारभाग दोनोको एकत्र खरलकर कौडीमेंभर पारेसे चौथाई भाग सुहागा लेकर दूधमें पीसके कौडीके मुखको बंदकर कौडीको भांडमें रख भांडका मुख बंदकर पुट देवै, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले इसको लघुलोकेश्वर रस कहतेहैं । इसको चार रत्तीभर घी और कालीमिरचोंके साथ सेवन करै, पश्चात् आमलेकी जड़ और आमलोंको बकरीके दूधके अथवा बूराके साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवै ॥ ३०–३२ ॥

यष्टीगोक्षुरकंपथ्याविदारीचकसेरुकम् ।
कषायंससिताक्षौद्रंरसभस्मयुतंपिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्रंहरत्याशुसप्ताहात्पित्तसंभवम् ॥ ३३ ॥

इति मूत्रकृच्छ्ररोगाध्यायः ।

अर्थ—मुलैठी, गोखुरू, हरड, विदारीकन्द और कशेरू इनके काढेमें मिश्री, सहत और पारेकी भस्म मिलाकर पीनेसे सातदिनमें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होताहै ॥ ३३ ॥

इति मूत्रकृच्छ्राधिकारः ।

अथ मूत्राघातचिकित्सा ।

मूत्राघातान्यथादोषंमूत्रकृच्छ्रहरैर्जयेत् ।
बस्तिमुत्तरबस्तिञ्चदद्यात्स्निग्धंविरेचनम् ॥ १ ॥
जलेनखदिरीबीजंमूत्राघाताश्मरीहरम् ।
मूलंरुद्रजटायाश्चतक्रपीतंतदर्थकृत् ॥ २ ॥
कल्कमेर्वारुबीजानामक्षमात्रंससैन्धवम् ।
धान्याम्बुयुक्तंपीत्वाचमूत्राघाताद्विमुच्यते ॥ ३ ॥
तोयेनत्रिफलाकल्कःपातव्यःसैन्धवान्वितः ।
स्वरसःकण्टकार्याश्चकेवलोमधुनापिवा ॥ ४ ॥
गोधावत्यामूलंक्वथितंघृततैलगोरसैर्मिश्रम् ॥
पीतंनिरु[illegible]मरिचाद्भिनत्तिमूत्रस्यसंघातम् ॥ ५ ॥

अर्थ–मूत्राघातरोगको दोषोंके अनुसार मूत्रकृच्छ्रनाशक औषधादिसे नष्ट करै । इसमें बस्ति, उत्तरबस्ति, और स्निग्ध विरेचन देवै । छुईमुईके बीजोंको जलमें पीसकर पीनेसे मूत्राघात और पथरीरोग दूर होताहै । शंकरजटाकी जड़को मट्ठेके साथ पीनेसे भी मूत्राघात और पथरीरोग दूर होताहै, दो तोले ककड़ोंके बीजोंका कल्क कर सैंधानोन मिला काँजीके साथ पीनेसे मूत्राघातरोग दूर होताहै । त्रिफलेको जलमें पीसकर सैंधानोन डालकर सेवनकरनेसे मूत्राघातरोग दूर होताहै । अथवा केवल कटेरीके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे मूत्राघातरोग दूर होताहै । वटपत्रीकी जड़के क्वाथमें घृत, तेल और गायका दूध मिलाकर पीनेसे निःसन्देह बहुत शीघ्र मूत्राघातरोग दूर होजाताहै ॥ १–५ ॥

अथ चित्रकाद्यंघृतम् ।

चित्रकंशारिवाचैवबलाकालानुशारिवा ।
द्राक्षाविशालापिप्पल्यस्तथाचित्रानतम्भवेत् ॥ ६ ॥
तथैवमधुकंदद्याद्दद्यादामलकानिच ।
घृताढकंपचेदेतैःकल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ ७ ॥
क्षीरद्रोणेजलद्रोणेतत्सिद्धमवतारयेत् ।
शीतंपरिस्रुतञ्चैवशर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥ ८ ॥
तुगाक्षीर्य्याश्चतत्सिद्धंमतिमान्प्रतिमिश्रयेत् ।
ततोमितंपिबेत्कालेयथादोषंयथाबलम् ॥ ९ ॥
वातरेताःपित्तरेताःश्लेष्मरेताश्चयोभवेत् ।
रक्तरेताग्रन्थिरेताःपिबेदिच्छिन्नरोगिताम् ॥ १० ॥
जीवनीयश्चवृष्यश्चसर्पिरेतन्महागुणम् ।
प्रजाहितश्चधन्यश्चसर्वरोगापहंशिवम् ॥ ११ ॥
सर्वैरेतत्प्रयुञ्जानंस्त्रीगर्भंलभतेऽचिरात् ।
असृग्दोषाश्चयेचापियोनिदोषांश्चसंहतान् ॥
मूत्रदोषेषुसर्वेषुकुर्यादेतच्चिकित्सितम् ॥ १२ ॥

इति मूत्राघाताध्यायः ।

अर्थ-गायका घी आठसेर, दूध बत्तीस सेर, जल बत्तीस सेर और कल्कके लिये चीता, अनन्तमूल, खिरैंटी, हारसिंगार, दाख, पीपल, इन्द्रायन, मूषाकर्णी, तगर, मुलैठी और आमला, प्रत्येक दो दो तोले लेवै। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै जब सिद्ध होकर शीतल होजाय तब दो सेर मिश्री और दोसेर वंशलोचन मिला देवै। दोष और बलको विचार कर इसका सेवन करै। यह घृत-वातसे, पित्तसे कफसे और रुधिरसे बिगडेहुए वीर्य्य तथा ग्रन्थियुक्तवीर्यके विकारोंको विनष्ट करैहै। जीवन, वीर्य्यवर्द्धक, महागुणवान् सन्तानको बढानेवाला, धन्य, और सर्वरोगनाशक है। इसको सेवनकरनेसे स्त्री गर्भको धारण करतीहै, तथा रुधिरके विकार, योनिदोष और सर्व प्रकारके मूत्रके विकारोंको दूर करैहै॥ ६-१२॥

इति मूत्राघाताऽधिकारः।

अथ अश्मरीचिकित्सा।

अश्मरीदारुणाव्याधिस्त्ववघातेनतंजयेत्।
भिन्द्यात्प्रवृद्धंप्राग्रूपेमूत्रकृच्छ्रक्रमोमतः॥ १॥
क्रमःस्नेहाभ्यङ्गादिः।

अर्थ-अश्मरीरोग अत्यंत भयानक है। जब तक यह नवीन है तबतक अवघातसे नष्ट करै। जब बढजावे तब अस्त्रादिद्वारा भेदे। और इसके पूर्वरूपमें मूत्रकृच्छ्रोक्त स्नेहाभ्यंगादि उपचार करै॥ १॥

अथ वातजन्याश्मरीलक्षणम्।

विशीर्णधारंमूत्रस्यगंधंकृच्छ्रंज्वरोऽरुचिः।
नातिपीतोभवेद्वातेसकृदल्पश्चमूत्रति॥ २॥

अर्थ-वातजन्यपथरीरोगमें अत्यन्त कष्टसेफटी धारवाला, दुर्गन्धयुक्त मूत्र उतरे. ज्वर, अरुचि और किंचित् पीतवर्ण बहुत थोडा मूत्र आवे, ॥ २॥

अथ वाताश्मरीरोगोपायः।

वरुणस्यत्वचंशुण्ठीगोक्षुरंक्राथयेज्जले।
गुडक्षारयुतंपीत्वाचिरवाताश्मरींजयेत्॥ ३॥

अर्थ-वरनाकी छाल, सोंठ और गोखुरू, इनके क्राथमें गुड और जवाखार डालकर पीनेसे बहुतदिनोंकी वाताश्मरी दूर होतीहै॥ ३॥

अथ शुंठ्यादिक्काथः।

शुण्ठ्यग्निमन्थपाषाणशिग्रुवरुणगोक्षुरैः।
सपथ्यारग्वधैःक्काथःसहिंगुक्षारसैन्धवः॥
कृच्छ्राश्मरीकटीकोष्ठमेढ्रवातापहोऽग्निदः॥ ४॥

पाषणः कुलत्थः।

अर्थ–सोंठ, अरणी, कुलथी, सैंजिना, बरना, गोखुरू, हरड और अमलतासके काढेमें हींग, सेंधानोन और जवाखार डालकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, कटी, कोठ और मेढ्रवात दूर होताहै, तथा अग्निकी वृद्धि होतीहै॥ ४॥

अथाश्मरीभेदनचूर्णम्।

वरुणत्वक्कषायन्तुपीतश्चगुडसंयुतम्।
अश्मरींपातयत्याशुबस्तिशूलञ्चनाशयेत्॥ ५॥
त्रिकण्टकस्यबीजानांचूर्णंमाक्षिकसंयुतम्।
अविक्षीरेणसप्ताहंपेयमश्मरिभेदनम्॥ ६॥

अर्थ–बरनाकी छालके काढेमें गुड मिलाकर पीनेसे पथरी पतित होजातीहै और बस्तिशूल नष्ट होताहै। गोखुरुओंका चूर्ण सहतमें मिलाकर भेड़के दूधके साथ पीनेसे सातदिनमें पथरीरोग दूर होजाताहै॥ ५॥ ६॥

मूत्ररोधेतुकर्पूरचूर्णंलिंगेप्रवेशयेत्॥ ७॥

अर्थ–मूत्ररोध होय तो कपूरका चूर्ण लिंगमें प्रवेश करे॥ ७॥

स्त्रीणामपिप्रसंगेनशोणितंयस्यसिच्यते।
मैथुनोपरमश्चास्यबृंहणीयोहितोविधिः॥ ८॥

अर्थ–जिसके अत्यन्त स्त्रीप्रसंगसे लिंगके द्वारा रुधिर गिरने लगे, उनके लिये मैथुनकी निवृत्ति और बृंहणीयविधि विशेष हितकारीहै॥ ८॥

अथ वरुणाद्यं घृतम्।

वरुणस्यतुलांक्षुण्णांजलद्रोणेविपाचयेत्।
पादशेषंपरिस्राव्यघृतप्रस्थंविपाचयेत्॥ ९॥
वरुणंकदलीबिल्वंतृणजंपंचमूलकम्।
अमृताचाश्मजंपथ्याबीजञ्चत्रपुषोद्भवम्॥ १०॥

शतपर्वोतिलक्षारंपलाशक्षारमेवच ।
यूथिकायाश्चमूलानिकार्षिकाणिसमावपेत् ॥ ११ ॥
अस्यमात्रां पिबेज्जन्तुर्देशकालाग्न्यपेक्षया ।
जीर्णेचास्मिन्पिबेत्पूर्वंगुडंजीर्णन्तुमस्तुना ॥
अश्मरींशर्कराञ्चैवमूत्रकृच्छ्रञ्चनाशयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ–साढेबारह सेर बरनाकी छालको कूटकर बत्तीस सेर जलमें औटावै जब आठसेर जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इसमें दोसेर गायका घी, बरनाकी छाल,केला, तृणपंचमूल, बेल, गिलोय,शिलाजीत, हरड़, खीरेके बीज, दूब, तिलोंका खार, ढाकका खार और जुहीकी जड़ प्रत्येक दो दो तोले डालकर पकावे । देश, काल और अग्निका बलाबल विचारकर इसका सेवनकरै । इसके जीर्ण होनेपर पुराना गुड दहीके तोडके साथ खावे । यह घृत–पथरी, शर्करा और मूत्रकृच्छ्ररोगको दूर करै है ॥ ९–१२ ॥

अथ शरादिपंचमूल्यादिघृतम् ।

शरादिपंचमूल्यावाकषायेणपचेद् घृतम् ।
प्रस्थंगोक्षुरकल्केनसिद्धमद्यात्सशर्करम् ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नंरेतोमार्गरुजापहम् ॥ १३ ॥

अर्थ–गायका घी दो सेर, शरादिपंचमूलका क्वाथ आठसेर और गोखुरुओंका कल्क आधासेर, सबको मिलाकर घृतको सिद्धकरै । शीतल होनेपर अनुमानमाफिक मिश्री मिलादेवे । इसको सेवन करनेसे–पथरीरोग, मूत्रकृच्छ्र और मेढ्ररोग दूर होताहै ॥ १३ ॥

अथ पाषाणवज्रकोरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंद्रवैःश्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वादिनंखल्वेरुद्ध्वातंभूधरेपचेत् ॥ १४ ॥
दिनान्तेतत्समुद्धृत्यचूर्णयेदतिचिक्कणम् ।
पाषाणभेदसंयुक्तंचूर्णतुल्यंद्विम षकम् ॥ १५ ॥
भक्षणादश्मरींहन्तिरसःपाषाणवज्रकः ।

गोपालकर्कटीमूलक्काथंमधुयुतंपिबेत् ॥
गोकण्टकशुभाभद्रमूलक्काथंपिबेन्निशि ॥ १६ ॥

अर्थ—शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग, दोनोको सफेद पुनर्नवाके रसमें एक दिन खरल करके भूधरयंत्रमें पकावे, शीतल होनेपर बारीक चूर्ण करले, फिर इसमें पाषाणभेदका चूर्ण मिलाकर प्रतिदिन दो मासे खावे । यह पाषाणभेद-रस—शीघ्रही पथरीरोगको दूर करदेताहै । इसके ऊपर गोपालककड़ीका काथ सहत मिलाकर पीवे, रात्रिमें गोखुरू, वंशलोचन और नागरमोथेकी जड़का काथ पान करे ॥ १४-१६ ॥

अथ त्रिविक्रमरसः ।

ताम्रंभस्ममजाक्षीरैःपाच्यंतुल्यैःकृतेद्रवे ।
तत्ताम्रंशुद्धसूतश्चगंधकश्चसमंसमम् ॥ १७ ॥
निर्गुण्ड्युत्थैर्द्रवैर्मर्द्यंदिनंतद्गोलमुद्धरेत् ॥
दिनैकंवालुकायन्त्रेपाच्यंयोज्यंद्विगुंजकम् ॥ १८ ॥
बीजपूरस्यमूलश्चपिष्टातंचानुपाययेत ।
रसस्त्रिविक्रमोनाममासैकमश्मरीप्रणुत् ॥ १९ ॥

अर्थ—बकरीके दूधमें तांबेकी भस्म पकावे, यह तांबेकी भस्म, शुद्ध पारा और गंधक तीनों समान भागले एकदिन निर्गुण्डीके रसमें खरल कर गोला बना दिनभर वालुकायंत्रमें पकावे, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले, इसको दो रत्तीभर खावे और ऊपरसे बिजौरेकी जड़को जलमें पीसकर पीवे तो एक महीनेमें यह त्रिविक्रम नामवाला रस पथरीको दूर कर देवे ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ पाषाणभेदरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंशिखितुत्थंरसोपमम् ।
श्वेतापुनर्नवावासागिरिकर्णीरसोद्भवैः ॥ २० ॥
प्रतिद्रावैर्दयहंमर्द्यंशुष्कंतच्चारुसंपुटे ।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रेदिनैकंतंविचूर्णयेत् ॥ २१ ॥
रसःपाषाणभिन्नामद्विगुंजोह्यश्मरीहरः ।

कुलत्थक्काथसंपीतमनुपानंप्रशस्यते ॥
सघृतंगोक्षुरक्काथंरात्रौतैलेनलेहयेत् ॥ २२ ॥

इत्यश्मरीरोगाऽध्यायः ।

अर्थ—शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग, नीलाथोथा एकभाग, तीनोंको एकत्र कर सफेद पुनर्नवा, अडूसा और अपराजिताके रसमें एकएक दिन खरलकर सुखालेवे । फिर संपुटमें रख एकदिन दोलायंत्रमें पकावे, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले । इसको दो रत्तीभर भक्षण करे, और ऊपरसे कुलथीका क्काथ पीवे और रात्रिमें गोखुरूके काढेमें तेल और घी मिलाकर पीवे तो यह पाषाणभित् रस—बहुत शीघ्र पथरीरोगको दूर करदेताहै ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

इति पथरीरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथ प्रमेहचिकित्सा ।

यैर्हेतुभिर्येप्रभवन्तिमेहास्तेषुप्रमेहेषुनतेनिषेव्याः ।
हेतोरसेवाविहितायथैवजातस्यरोगस्यभवेच्चिकित्सा १॥

अर्थ—जिन आहारविहारादिसे मेहरोग उत्पन्न होता है, वह संपूर्ण आहार विहारादि मेहरोगवाले रोगीको अवश्य २ त्याग करने चाहियें । कारण यह है कि रोगोत्पादक हेतुओंका त्याग करनाही रोगकी एक प्रकारकी चिकित्सा है ॥१॥

अथ प्रमेहरोगेपथ्यानि ।

श्यामाककोद्रवोद्दालगोधूमचणकाढकी ।
कुलत्थाश्चहिताभोज्येपुराणामेहिनांसदा ॥ २ ॥
रूक्षमुद्वर्तनंगाढंव्यायामंनिशिजागरम् ।
यच्चान्यच्छ्लेष्मपित्तघ्नंबाह्यमान्तरिकंहितम् ॥ ३ ॥

अर्थ—समा, कोदों, वनकोदों, गेहूं, चने, अरहर और कुलथी, यह सब पुराने अन्न प्रमेहरोगवालोंको सदैव हितकारी हैं । रूक्षद्रव्य, गाढा उबटन, कसरत, रात्रियोंमें जागना और अन्यान्य बाह्य तथा आन्तरिक कफ और पित्तनाशक क्रिया प्रमेहरोगमें विशेष हितकारी है ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ शुक्रमेहहरोपायः ।

दूर्वाकसेरुपूतीककुम्भीकप्लवशैवलम् ।
जलेनक्कथितंपीतंशुक्रमेहहरंपरम् ॥ ४ ॥

अर्थ–दूर्वा, कसेरु, दुर्गन्ध करंज, जलकुम्भी, केवटी, मोथा और सिवार इनके काढेमें सहत मिलाकर पीनेसे–शुक्रमेह दूर होताहै ॥ ४ ॥

अथान्योपायः।

क्षौद्रेणामलकंखादेच्छुक्रमेहहरंपरम् ॥ ५ ॥

अर्थ–आमलोंके चूर्णको सहतके साथ खानेसे शुक्रमेह नष्ट होताहै ॥ ५ ॥

अथ प्रमेहकषायः।

त्रिफलारग्वधद्राक्षाकषायोमधुसंयुतः।
पीतोनिहन्तिफेनाख्यंप्रमेहंनियतंनृणाम् ॥ ६ ॥

अर्थ–त्रिफला अमलतास, और दाख, इनके काढेमें सहत मिलाकर पीनेसे फेनाख्य मेह शान्त होताहै ॥ ६ ॥

अथ हरीतक्यादिकषायः।

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्राःपाठाविडंगार्जुनधन्वनश्च।
उभेहरिद्रेतगरंविडंगकदम्बशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥ ७ ॥
दार्वीविडंगःखदिरोधवश्चसुराह्वकुष्ठागुरुचन्दनानि।
दार्व्यग्निमन्थेत्रिफलासपाठापाठाचमूर्वाचतथाश्वदंष्ट्रा ॥८॥
यवान्युशीराण्यभयागुडूचीजम्ब्वाभयाचित्रकसप्तपर्णाः।
पादैः कषायाः कफमेहिनां च सदोपदिश्यामधुसंप्रयुक्ताः ९॥

अर्थ–हरड, कायफल, नागरमोथा और लोध, इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे उदकप्रमेह नष्ट होताहै। पाढ, वायविडंग, अर्जुनकी छाल और धन्वनवृक्षकी छाल, इनका काढा पीनेसे इक्षुमेह दूर होताहै। हल्दी, दारुहल्दी, तगर और वायविडंगका क्वाथ पान करनेसे सान्द्रप्रमेह दूर होताहै। कदम्ब, साल, अर्जुन और अजवायनका काढा पीनेसे सुरामेह नष्ट होताहै। दारुहल्दी, वायविडंग, खैर और धववृक्षकी छालका क्वाथ पीनेसे पिष्टमेह नष्ट होता है। देवदारु, कूठ, अगर और चन्दनका क्वाथ पान करनेसे शुक्रमेह विनष्ट होताहै। दारुहल्दी, अरणी, त्रिफला और पाढका काढा पीनेसे सिकतामेह दूर होताहै। पाढ, मूर्वा और गोखुरूका क्वाथ पानकरनेसे शीतमेह नष्ट होताहै। अजवायन, खस, हरड और गिलोयका काढा पीनेसे शनैःप्रमेह दूर होताहै।

और जामुन, हरड, चीता तथा सतवनकी छालका काढा पीनेसे लालप्रमेह दूर होताहै। उदकादिमेहनाशक इन दशों काढोंमें मधुप्रक्षेप और सहत मिलाना चाहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ मेहहरोपायः।

अश्वत्थाच्चतुरङ्गुलान्न्यग्रोधादेःफलत्रयात्।
सजिङ्गीरक्तसाराच्चक्राथाःपंचसमाक्षिकाः ॥ १० ॥
नीलहारिद्रशुक्राख्यक्षारमंजिष्टकाह्वयान्।
मेहान्हन्युःक्रमादेते सक्षौद्रो रक्तमेहजित् ॥ ११ ॥

न्यग्रोधादिपंच।
जिङ्गी मंजिष्ठा। रक्तसारो रक्तचन्दनः।
आसामेकोयोगः।
सक्षौद्र इत्यादि रक्तमेहक्राथः।

क्राथःखर्जूरकाश्मर्यतिन्दुकास्थ्यमृताकृतः ॥ १२ ॥

खर्जूरकाश्मर्य्योः फलम्। तिन्दुकः तिन्दुकस्यफलमज्जा ॥

अर्थ–पीपलकी छालका क्राथ पानकरनेसे नीलमेह नष्ट होताहै। अमलतासका क्राथ पीनेसे हारिद्रमेह दूर होताहै। वटादिपंचवृक्षका क्राथ पान करनेसे शुक्रमेह नष्ट होताहै। त्रिफलाका क्राथ पान करनेसे क्षारमेह नष्ट होता है मजीठ और लालचंदनका क्राथ पान करनेसे मांजिष्टमेह दूर होताहै और पीपल, अमलतास, वटादिपंचवृक्ष. त्रिफला, मंजीठ और लालचंदन, इन सबका काढा पीनेसे रक्तमेह नष्ट होताहै। इन सब काढोंमें सहत डालना चाहिये। खजूर, कुम्भेर तेंदुकी मज्जा और गिलोयका काढा पीनेसे सर्वप्रकारके प्रमेह विनष्ट होतेहै ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ पित्तप्रमेहहरकषायाः।

लोध्रार्जुनोशीरकुचन्दनानामरिष्टसेव्यामलकाभयानाम्।
धात्र्यर्जुनारिष्टकवत्सकानांनीलोत्पलैलातिविपार्जुनानाम् ॥
चत्वारएतेविहिताःकषायाःपित्तप्रमेहमधुसंप्रयुक्ताः ॥ १३ ॥

अर्थ–लोध. अर्जुन, खस और लालचंदन इनके काढेमें या नीमकी छाल-खस, आमला और हरड, इनके काढेमें अथवा आमला, अर्जुनकी छाल. नीम.

कीछाल और कुड़ेकीछाल इनके काढेमें या नीलोत्पल, इलायची, अतीस और अर्जुनकी छाल इनके काढेमें सहत मिलाकर पीनेसे पित्तप्रमेह दूर होताहै ॥ १३ ॥

असाध्येऽपियापनार्थयोगायथा ।

छिन्नावाह्लिकषायेणपाठाकुटजरामठम् ।
तिक्तांकुष्ठंचसंचूर्ण्यसर्पिर्मेहीपिबेन्नरः ॥ १४ ॥

पाठादीनांप्रक्षेपः ।

कुटजस्यत्वक् ।

कदरखदिरपूगक्काथंक्षौद्राह्वयेपिबेत् ॥ १५ ॥

कदरो विटखदिरः । पूगस्यफलम् ।

अग्निमन्थकषायन्तुवसामेहेप्रयोजयेत् ॥ १६ ॥
पाठाशिरीषदुःस्पर्शामूर्वाकिंशुकतिन्दुकम् ।
कपित्थानांभिषक्क्काथंहस्तिमेहेप्रयोजयेत् ॥ १७ ॥

तिन्दुककपित्थयोःफलम् ।

अर्थ–गिलोय और चीनेके काथमें पाढ, कुडा, हींग, कुटकी और कूटका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्पिमेह दूर होताहै । दुर्गंधखैर, खैर और सुपारीका काढा पीनेसे क्षौद्रमेह दूर होताहै । अरणीका काथ पान करनेसे वसामेह विनष्ट होताहै । पाढ, सिरस, जवासा, चुरनहार, ढाक, तेंदू और कैथका काथ पान करनेसे हस्तिमेह नष्ट होताहै ॥ १४–१७ ॥

सिद्धानितैलानिघृतानिचैवयोज्यानिमेहेष्वनिलात्मकेषु ।
मेदःकफश्चैवकषाययोगैःस्नेहैश्चवायुःशममेतितेषाम् ॥ १८ ॥

अर्थ–वातज प्रमेहमें सिद्ध तेल और घृत सेवन करने चाहिये । मेद और कफ कषाययोगोंके द्वारा और वायु स्नेहके द्वारा शमन होतेहैं ॥ १८ ॥

अथ कफपित्तजमेहोपायः ।

गुंडारोचनिकासप्तपर्णशालविभीतकात् ।
रोहीतकात्कपित्थाच्चपुष्पाणिकुटजादपि ॥ १९ ॥
चूर्णानिमधुनालिह्यात्प्रमेहेकफपित्तजे ।
कार्षिकाणिपिबेत्तिपिष्ट्वारसेनामलकस्यवा ॥ २० ॥

त्रिफलामुस्तकंदारुहरिद्रादेवदारुच ।
तत्क्वाथंमधुसंयुक्तंपिबेत्सर्वप्रमेहजित् ॥ २१ ॥
सर्वमेहहरोधात्र्यारसःक्षौद्रनिशायुतः ।
कषायस्त्रिफलादारुमुस्तकैरथवाकृतः ॥ २२ ॥

अत्रक्षौद्रहरिद्राप्रक्षेपोनास्ति ।

गोधावतीजटायाःक्काथोघृतदुग्धतैलसंस्निग्धः ।
दुर्जयमेहान्हन्यात्प्रातःपीतोनसन्देहः ॥ २३ ॥

पलत्रिकंदारुनिशांविशालांमुस्तञ्चनिष्क्काथ्यनिशांशकल्कम् ।
पिबेत्कषायंमधुसंयुतंचसर्वप्रमेहेषुसमुत्थितेषु ॥ २४ ॥

अंशशब्दोऽर्थाभिधायी निशायाअंशश्चतुर्थ-
भागःकल्कोयमित्यर्थः ।

अंशश्चतुर्थोभागः ।

कटंकटेरीमधुकत्रिफलाचित्रकैःसमैः ।
सिद्धःकषायःपातव्यःप्रमेहाणांविनाशनः ॥ २५ ॥
मधुनात्रिफलाचूर्णमथवाश्मजतूद्भवम् ।
लोहंजम्ब्वभयोत्थंवालिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥ २६ ॥

अर्थ—कबीला, सतवन, साल, बहेडा, गोंहडा, कैथा और कुडेके फूलोंका चूर्ण दो तोले सहतके साथ अथवा आमलोंके रसके साथ पीनेसे कफपैत्तिक प्रमेह विनष्ट होताहै। हरड, आमला. बहेडा. नागरमोथा. दारुहलदी और देवदारु इनके काढेमें सहत डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होजातेहैं। त्रिफला, देवदारु और नागरमोथेका काथ पान करनेसे भी सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होजातेहैं। हंसपदी लताकी जडके काथमें घृत, तैल और दूध मिलाकर प्रातःकाल पीनेसे असाध्य प्रमेहभी दूर होजाताहै। त्रिफला, दारुहलदी, इन्द्रायन और नागरमोथा इनके काढेमें चतुर्थांश हलदीका चूर्ण और किंचित् सहत डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रमेहरोग नष्टहोजातेहैं। दारुहलदी, मुलैटी, त्रिफला और चीता इनका काढा पीनेसे सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होतेहैं

त्रिफलेका चूर्ण अथवा शिलाजीतका चूर्ण या लोह, जामुन और हरडका चूर्ण सहत मिलाकर चाटनेसे सर्वप्रकारके प्रमेहरोग दूर होजातेहैं ॥ १९-२६ ॥

अथ न्यग्रोधाद्यंचूर्णम्।

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थस्योनाकारग्वधाऽसनम्।
आम्रजम्बूकपित्थश्चपियालंककुभंधवम् ॥ २७ ॥
मधुकंमधुकोलोध्रंवरुणंपारिभद्रकम्।
पटोलमेषशृंगीचदन्तीचित्रकमाढकी ॥ २८ ॥
करञ्जत्रिफलाशक्रभल्लातकफलानिच।
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥ २९ ॥
न्यग्रोधाद्यमिदंचूर्णंमधुनासहलेहयेत्।
फलत्रयरसञ्चानुपिबेन्मूत्रंविशुध्यति ॥ ३० ॥
एतेनविंशतिर्मेहामूत्रकृच्छ्राणियानिच।
प्रशमंयान्तियोगेनपिडकानचजायते ॥
न्यग्रोधाद्यमिदंत्वत्रआम्रजम्ब्वस्थिगृह्यते ॥ ३१ ॥

अर्थ—बड, गूलर, पीपल, स्योनाक, अमलतास, असन, आम, जामुन कैथ, चिरोंजी, कोह, धो, महुआ, मुलैठी, लोध, बरना, फरहद, पटोल मेढाशिंगी, दन्ती, चीता, अरहर, करञ्ज, हरड, बहेडा, आमला, इन्द्र जौ और भिलावा, इनसबको समान भाग लेकर बारीक चूर्णकरले, इसको न्यग्रोधादिचूर्ण कहतेहैं। इसमें बराबरका सहत मिलाकर सेवन करै और ऊपरसे त्रिफलेका क्वाथ पीवे तो मूत्र शुद्ध हो, बीस प्रकारके प्रमेह और मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवें, इसको सेवन करनेसे प्रमेहजनित पिड़का उत्पन्न नहीं होतेहैं। यहां आम और जामुनकी गुठली लेनी चाहिये ॥ २७-३१ ॥

अथ त्रिकण्टकाद्यंघृतंतैलंच।

त्रिकण्टकाश्मन्तकसोमवल्कैर्भल्लातकैःसातिविषैःसलोध्रैः।
वचापटोलार्जुननिम्बमुस्तैर्हरिद्रयापद्मकदीप्यकैश्च ॥ ३२ ॥
मंजिष्ठपाठागुरुचन्दनैश्चसर्वैःसमस्तैःकफवातजेषु।
मेहेषुतैलंविपचेद्घृतंचपैत्तेषुमिश्रंत्रिपुलक्षणेषु ॥ ३३ ॥

अर्थ—गायका घी अथवा तिलका तेल प्रत्येक अथवा दोनों मिले हुए दोसेर, गोखुरू, कुम्भेर, सफेदखैर, भिलावा, अतीस, लोध, बच, पटोल, अर्जुन, नीम, नागरमोथा, हलदी, पद्माख, अजवायन, मजीठ, पाढ़, अगर और लालचन्दन सब औषधियोंका कल्क आधासेर लेवै । यह तेल या घृत अथवा घी और तेल दोनों कल्कमें मिलाकर सिद्ध करै । इसको सेवनकरनेसे पैत्तिकमेह और सान्निपातिकमेह नष्ट होताहै ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

अथ दाडिमाद्यंघृतम् ।

दाडिमस्यचबीजानिकृमिघ्नस्यचतण्डुलाः ।
रजनीचविकाजाजीनागरंत्रिफलाकणा ॥ ३४ ॥
त्रिकण्टकस्यबीजानियवानीधान्यकन्तथा ।
वृक्षाम्लंबदरंचैवसिन्धूद्भवसमायुतैः ॥ ३५ ॥
अम्लवेतसकंद्राक्षायष्टीमधुकपाकलैः ।
दार्वीत्वचंशिलाधातुनीलोत्पलरसांजनैः ॥ ३६ ॥
एतैःकल्कैरक्षमात्रैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
भोज्येपानेप्रदातव्यंसर्वर्त्तुषुचमात्रया ॥ ३७ ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैवमूत्राघातांस्तथाश्मरीम् ।
कृच्छ्रान्सुदारुणांश्चैवहन्यादेतन्नसंशयः ॥ ३८ ॥
विबन्धानाहशूलघ्नंकामलाज्वरनाशनम् ।
दाडिमाद्यंघृतन्नामअश्विभ्यांनिर्मितंपुरा ॥ ३९ ॥

शिलाधातुःशिलाजतुतच्चशोधितंग्राह्यम् ।

अर्थ—अनारदाना, बायबिडंग, हलदी, चव्य, जीरा, हरड़, सोंठ बहेड़ा, आमला, पीपल, गोखुरुओंके बीज, अजवायन, धनियाँ, बिषाबिल, बेर, सेंधानोन, अमलवेंत, दाख, मुलैठी, कूठ, दारुहलदी, दालचीनी, शुद्धशिलाजीत, नीले कमल और रसौत प्रत्येकका एक तोला कल्क लेकर चौंसठ तोले घृतको पकावै । इसको सर्वऋतुओंमें भोजन और पानमें मात्रासे सेवनकरनेसे वीसप्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, पथरी, दारुण मूत्रकृच्छ्र, विबन्ध, आनाह, शूल, कामला, और ज्वर दूर होताहै । यह दाडिमाद्य घृत श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥ ३४–३९ ॥

अथ धान्वंतरघृतम् ।

दशमूलकरंजौद्वौदेवदारुहरीतकी ।
वर्षाभूर्वरुणोदन्तीचित्रकंसपुनर्नवम् ॥ ४० ॥
सुधानीपकदम्बाश्चबिल्वंभल्लातकानिच ।
शठीपुष्करमूलञ्चपिप्पलीमूलमेवच ॥ ४१ ॥
पृथग्दशपलान्भागानेतांस्तोयार्मणेपचेत् ।
यवकोलकुलत्थानांप्रस्थंप्रस्थंचदापयेत् ॥ ४२ ॥
तेनपादावशेषेणघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
निचुलंत्रिफलाभार्ङ्गीरोहिषंगजपिप्पली ॥ ४३ ॥
शृंगवेरंविडंगानिवचाकंपिल्लकंतथा ।
गर्भेणानेनसिद्धंस्यात्पाययेच्चयथाबलम् ॥ ४४ ॥
एतद्धान्वन्तरंनामविख्यातंसर्पिरुत्तमम् ।
गुल्मकुष्ठप्रमेहांश्चश्वयथुंवातशोणितम् ॥ ४५ ॥
प्लीहोदरंतथार्शांसिविद्रधिंपिडिकाश्चयाः ।
अपस्मारंतथोन्मादंसर्पिरेतन्नियच्छति ॥ ४६ ॥

अर्थ—गायका घी चारसेर, काथके लिये दशमूल, लालफलकी करंज, सफेद फलकी करंज, देवदारु, हरड, लालपुनर्नवा, वरना, दन्ती, चीता सफेदपुनर्नवा, थूहर, कदम्ब, बडीकदम्ब, बेल, भिलावाँ, कचूर, पोहकरमूल और पीपलामूल, प्रत्येक औषधि दशदशपल और जौ, बेर तथा कुलथी प्रत्येक सोले सोले पल पाकके लिये, जल २१० द्रोणी दश सेर, शेष ५२ बावन सेर चारपल और कल्कके लिये हिज्जलकी जड, त्रिफला, भारंगी, सुगंधतृण, गजपीपल, अदरख, वायविडंग, वच और कवीला यह सब औषधि चारसेर लेवे । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृत सिद्ध करै । अग्निका बलाबल विचारकर इसका सेवन करै, यह उत्तम घृत धान्वन्तर नामसे विख्यातहै । इसके सेवनसे गुल्म, कोढ, प्रमेह, सूजन, वातरक्त, प्लीहा, उदररोग, बवासीर, विद्रधि, पिडिका, अपस्मार और उन्मादरोग दूर होतेहैं ॥ ४०–४६ ॥

अथ बृहद्धान्वन्तरं घृतम् ।

दन्तीचित्रकमूलानामष्टावष्टौपलानिच ।
अभयाविंशातिर्देयापट्पलंदेवदारुच ॥ ४७ ॥
कदम्बनीपवरुणसम्पाकाम्रपुनर्नवाः ।
चिरबिल्वश्चसर्वेषांपट्पलानिपृथक्पृथक् ॥ ४८ ॥
द्वेपंचमूल्यौसंकूटयपृथगाढकसम्मिते ।
पक्त्वाचतुर्गुणेतोयेपादशेपेघृताढकम् ॥ ४९ ॥
विपचेत्पंचलवणैःपंचकोलैश्चकार्पिकैः ।
बृहद्धान्वन्तरमिदंघृतंविंशतिमेहनुत् ॥ ५० ॥
गुल्मश्वयथुकुष्टार्शःश्वासहिक्कोदरापहम् ।
आग्नेयंबृंहणंचैवहन्तिनानाव्यथानृणाम् ॥
रसायनमिदंसर्पिःश्रेष्टंब्रह्माभिपूजितम् ॥ ५१ ॥

अर्थ—घृत आठ सेर, काथके लिये दन्तीकी जड आठ पल, चीतेकी जड आठपल, हरड बीसपल, देवदारु छे पल, कदम्ब, वडा कदम्ब, वरनाकीछाल, आमकी छाल, पुनर्नवा और करंजुआ प्रत्येक छे छे पल, स्वल्पपंचमूल और बृहत्पंचमूल प्रत्येक आठ सेर जल सब औषधियोंमे चुगुना शेष चतुर्थांश और कल्कके लिये पंचलवण और पंचकोल प्रत्येक दो दो तोले, सबको मिलाकर यथा-विधिसे घृतको सिद्ध करे। इसको सेवन करनेसे वीसप्रकारके प्रमेह, गुल्म, सूजन, कोढ,बवासीर, श्वास, हिचकी, उदररोग और अनेकप्रकारके रोग दूर होतेहै। यह बृहद्धान्वन्तर घृत अग्निको दीपनकरनेवाला, पुष्टिकारक और श्रेष्ठ रसायन है और ब्रह्माकरके पूजितहै ॥ ४७–५१ ॥

अथ शिलाजतुलेहः ।

शिलाजतुपलान्यष्टौसितायाश्चपलाष्टकम् ।
बृहत्यास्तुफलंमूलंशृङ्गी धात्रीकणातुगा ॥ ५२ ॥
पृथगेपांपलश्चातुर्जातस्यमिलितंतुगा ।
संचूर्ण्यमिलितंकृत्वा निहन्तिमधुनालिहन् ॥ ५३ ॥
प्रमेहशुक्रदोषामृक्श्वासकासक्षयाश्मरीम् ।

मूत्राघाताग्निमान्द्यामगुल्मप्लीहाग्निमारुतम् ॥
जीर्णज्वरारुचिहरोलेहएपशिलाजतोः ॥ ५४ ॥
शिलाजतुशिवागुटिकान्यायेनशोधितभावितंग्राह्यम् ॥

अर्थ—शुद्धशिलाजीत आठपल, सफेद बूरा आठपल, बृहतीकीजड और फल काकडाशिंगी, आमला, पीपल और वंशलोचन प्रत्येक एक एक पल, दालचीनी एकतोला, इलायची एकतोला, नागकेशर एक तोला, तेजपात एकतोला इन सबका बारीक चूर्ण कर सहतमें मिलाकर चाटै तो प्रमेह, शुक्रदोष, रक्तदोष, खांसी, श्वास, क्षय, पथरी, मूत्राघात, मंदाग्नि, आम, गुल्म, प्लीहा, अग्नि, वात, जीर्णज्वर और अरुचि दूर होवै ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

अथ दशमूलघृतम् ।

दशमूलीशठीदन्तीदेवदारुपुनर्नवा ।
मूलंस्नुह्यर्कयोःपथ्याभूकन्दश्चसपुष्करम् ।
करञ्जंवारुणंमूलंपिप्पलीचमरांसमम् ॥ ५५ ॥
प्रतिदशपलंयोज्यंकुलत्थबदरीयवाः ।
प्रत्येकंषोडशपलंसर्वमेकत्रपाचयेत् ।
तेषामष्टगुणेतोयेपादशेषं समाहरेत् ॥ ५६ ॥
वस्त्रपूतं कषायन्तंपुनःपाच्यमिमैःसह ।
चव्यंद्विपिप्पलीभार्ङ्गीवचात्रिवृद्विडंगकम् ।
लोध्रंकम्पिल्लकंशुण्ठीप्रत्येकंपलसम्मितम् ॥ ५७ ॥
चूर्णितंयोजयेत्तत्रघृतप्रस्थयुतंपचेत् ।
घृतावशेषमुत्तार्यकर्षमात्रंप्रयोजयेत् ।
प्रमेहोपद्रवाणाञ्चशमनंपवनंहितम् ॥ ५८ ॥
पिडिकाव्रणगण्डानांसर्वोपद्रवशान्तिकृत् ।
स्वभावितंसारसारैरविचन्द्रांशुशोधितम् ॥ ५९ ॥
पानीयशालिभुंजानोजांगलानांरसैःशुभैः ।

सर्वानितिहरेन्मेहान्सर्वोपद्रवकंजयेत् ॥ ६० ॥
अस्यपत्रिकादशमूलादिद्वाविंशद्द्रव्याणांमिलि-
त्वा३९पलपाकार्थंपानीय२८१६पल,शेष१०४पल ।
कल्कार्थंचव्यादिशुण्ठीनांमिलित्वाचूर्ण१०पल ॥

अर्थ–दशमूल, कचूर, दन्ती, देवदारु, पुनर्नवा, थूहरकीजड, आककी जड़, हरड, जंगलीजमीकन्द, पोहकरमूल, करंज, बरनाकी जड़ और पीपल, प्रत्येक दश दशपल, कुलथी, बेर और जो प्रत्येक सोलह सोलह पल लेकर सबसे आठ गुने जलमें पकावे जब चौथाभाग जल शेष रहे तब उतारकर वस्त्रमें छान लेवे. पश्चात् इसमें चव्य, पीपल, गजपीपल, भारंगी, बच, निसोत, वायबिडंग, लोध, कबीला और सोंठ प्रत्येकका चूर्ण एक एक पल और गायका घी दो सेर मिलाकर पकावे । जब केवल घृत शेष रहे तब उतारले । दो तोले भर प्रतिदिन इसको खावे । यह घृत प्रमेहके उपद्रवोंको शान्त करे, वातरोगमें हितकारी. तथा पिड़िका, व्रण और गलगंडादिके सब उपद्रवोंको शमन करे है। इस घृतको चावलोंके जलके और जांगलदेशके जीवोंके मांसरसके साथ सेवन करे । यह घृत सर्वोपद्रवसंयुक्त सर्वप्रकारके प्रमेहरोगोंको दूर करेहै, ॥ ००–६० ॥

अथ सर्वमेहोपायः ।

जयन्तीलाजयावाथमधुनासर्वमेहजित् ॥ ६१ ॥

अर्थ–जयन्ती और खीलोंके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटनेसे प्रमेह रोग दूर होजातेहैं ॥ ६१ ॥

अथ विडंगादिलौहम् ।

विडंगत्रिफलामुस्तैःपिप्पल्यानागरेणच ।
जीवकाद्यायुतोहन्तिप्रमेहानतिदारुणान् ॥
लोहोमूत्रविकारांश्चसर्वानेवनसंशयः ॥ ६२ ॥
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णंग्राह्यम् ।

अर्थ–बायविडंग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ और जीवनीयदशक यह सब औषधि समानभाग लेकर चूर्ण करले और सब चूर्णकी बराबर लोहेका चूर्ण मिलालेवै । यह बिडंगादिलोह–अत्यन्त दारुण प्रमेहोंको और सर्व-मूत्रविकारोंको दूर करेहै ॥ ६२ ॥

अथ श्वदंष्ट्रादिलौहः ।

श्वदंष्ट्रात्रिफलामुस्तगुडूचीफल्गुपल्लवान् ।
दर्भंकुशश्चमंजिष्ठांरोहिषस्यचपल्लवान् ॥ ६३ ॥
बलापुनर्नवाश्यामाशारिवेदेवदारुच ।
पिप्पलीनागरश्चैवविडंगमरिचानिच ॥ ६४ ॥
पाठाकम्पिल्लकंभार्ङ्गीद्वेहरिद्रेनिदिग्धिकाम् ।
एरण्डमूलंदन्तीचचित्रकंकटुरोहिणीम् ॥ ६५ ॥
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत ।
द्विगुणंसर्वचूर्णेभ्योलौहचूर्णंप्रदापयेत् ॥ ६६ ॥
माषकत्रितयंतस्माच्चतुष्टयमथापिवा ।
पिबेदुष्णेनतोयेनमद्येनापिचमद्यपः ॥ ६७ ॥
मेहशूलोदरंप्लीहशोथार्शःपाण्डुरोगनुत ।
गोमूत्रपिष्टैरेतैश्चवटिकास्तद्गदापहाः ॥ ६८ ॥

फल्गुश्चकाकोडुम्बरीतस्याःपल्लवः ।

अर्थ-गोखुरू, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कठूमरकेपत्ते, डाभ, कुशा, मंजीठ, सुगंधरोहिषतृणोंके पत्ते, खिरेटी, पुनर्नवा, निसोत, कालीसर, गोरीसर, देवदारु, पीपल, सोंठ, वायविडंग, कालीमिरच, पाठ, कबीला, भारंगी, हलदी, दारुहलदी, कटेरी, अरण्डकीजड़, दन्ती, चीता और कुटकी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करले, सब चूर्णसे दुगना लोहेका चूर्ण मिला लेवे । यह तीन मासे या चार मासेभर गरम जलके साथ अथवा मदिरा पीनेवाला मदिराके साथ सेवन करे । इससे प्रमेह, शूल, उदररोग, प्लीहा, सूजन, बवासीर और पाण्डुरोग यह सब दूर हो जातेहैं और इस चूर्णको गोमूत्रमें गोली बनाकर खानेसे उपरोक्त गुणोंको करेहै ॥ ६३-६८ ॥

अथ चन्द्रप्रभागुटिका ।

कृमिरिपुदहनव्योषत्रिफलाऽमरदारुचव्यभूनिम्बम् ।
मागधीमूलमुस्तंसशटिवचंमाक्षिकंचैव ॥

लवणक्षारनिशायुक्तस्तुम्बुरुगजकणातिविषाः ॥ ६९ ॥
कर्षांशिकान्येवसमानिकुर्यात्पलाष्टकंचाश्मजतोर्विदध्यात्।
निष्पत्रशुद्धस्यपुरस्यविद्वान्पलद्वयंलौहरजस्तथैव ॥ ७० ॥
सिताचतुष्कंपलमत्रवांश्यानिकुम्भकुम्भत्रिसुगन्धियुक्तम् ॥
चन्द्रप्रभेयंगुटिकाप्रयोज्याअर्शांसिनिर्णाशयतेषडेव ॥७१॥
भगन्दरंपाण्डुचकामलाञ्चनिर्णष्टवह्नेःकुरुतेचदीतिम् ।
हन्त्यामयान्पित्तकफानिलोत्थान्नाडीगतेमर्मगतेव्रणेच७२॥
ग्रन्थ्यर्बुदेविद्रधिराजयक्ष्मणोर्मेहेभगाख्येप्रबलेप्रयोज्यः ।
शुक्रक्षयेचाश्मरिमूत्रकृच्छ्रेशुक्रप्रवाहेऽप्युदरामयेच ॥ ७३ ॥
भक्तस्यपूर्वंसततंप्रयोज्यातक्रानुपानाप्यथमस्तुपाना ।

१–किंचित् दशमूलक्काथे चतुर्गुणे उष्णे पत्रादिरहितनिरवकरगुग्गुलुं प्रक्षिप्यालोड्य वस्त्रपूतं विधाय प्रचण्डातपे विशोष्य शिक्षितगुग्गुलोः पलद्वयं ग्राह्यम् । तथा नागार्जुनोक्तामृतसारलौहोक्तजारणपुटनादिशोधितयथाव्याधिप्रत्यनीकद्रव्यविशेषपुटितकान्तवज्रादिलौहचूर्णस्य पलद्वयम् । तथा शिलाजतुनस्त्रिफलादशमूलानि क्वाथे उष्णे प्रक्षिप्य कोष्णोष्णजल एव वा प्रक्षिप्य प्रचण्डातपे तापितास्याद्र्धीभूतसारं गृहीत्वा शोधितस्याष्टपलान्यादाय रसायनाधिकारोक्तशिवागुटिकोक्तक्रमेण त्रिफलादशमूलगुडूचीक्वाथादिभिर्भाव्य शिलाजतुसमैः प्रचण्डातपशोषणं तथा तथैवोक्तकाकोल्याद्यष्टाविंशतिद्रव्ययथोक्तक्वाथार्द्धभावितस्य च तथा विशेषतः सालसारादिगणक्वाथेन चरकोक्तमहाकषायजीवनीयादिदशगणमध्ये यथाव्याधिप्रत्यनीकगणक्वाथेन च तथा वाग्भटोक्तयथादोषभेदोक्तभावनद्रव्यक्वाथैश्चभावनं कर्त्तव्यम् । तदनु लोहचूर्णगुग्गुलुभ्यां शिलाजतु मिश्रयित्वा पुनः शिवागुटिकोक्तकाकोल्याद्यष्टाविंशतिद्रव्यक्वाथेन विशेषतः । सालसारादिगणक्वाथादिभिश्च मिलित्वा भावनां विधाय विडंगचित्रकाद्योषधचूर्णानि संयोज्य धान्यपटोलक्वाथाष्टवर्गेक्षमूलशिल्यादिप्रपिष्टा च्छायाशुष्काःकार्याः । किञ्च सिताचतुष्कमिति पलचतुष्टयमित्यर्थः ॥ निकुम्भो दन्ती कुम्भस्त्रिवृता एतयोर्मिलित्वा पलमेकं पाठान्तरदर्शनात् त्रिसुगन्धेन मिलित्वा पलमेकम् । वांशी वंशलोचना ।

किंच शिलाजतुभावनार्थे शिलाजतुसमं गृहीत्वा चतुर्गुणं जलं दत्त्वा चतुर्भागावशिष्टं कृत्वा तेन भावनमित्येकः पक्षः । वाग्भटमतेन क्वाथ्यद्रव्यं शिलाजतु सममेव गृहीत्वाष्टगुणं जलं दत्त्वाष्टभागावशेषं कृत्वा तेन भावनमित्युभयथैव व्यवहारः ॥

आजंरसोजाङ्गलजोरसोवापयोथवाशीतजलानुपानम् ॥
बलेननागस्तुरगोजवेनदृष्ट्यासुपर्णःश्रवणैर्वराहः ॥ ७४ ॥
शुक्रदोषान्निहन्त्यष्टौप्रमेहांश्चैवविंशतिः ।
वलीपलितनिर्मुक्तोवृद्धोऽपितरुणायते ॥ ७५ ॥
नपानभोज्यंपरिहार्य्यमस्तिनशीतवातातपमैथुनेच ।
शम्भुंसमभ्यर्च्यकृतप्रणामात्प्राप्तागुटीचन्द्रमसःप्रसादात् ७६
अत्रवचाद्यागेनपाठस्तन्त्रान्तरविरुद्धः ।
माक्षिकंस्वर्णमाक्षिकम् ।
पाठान्तरेताप्यमित्युक्तेः । युगशब्दस्यत्रिष्वेवसम्बन्धः ।
तेनसैन्धवसौवर्चलेयवक्षारसर्जिकाक्षारौ ।
हरिद्रादारुहरिद्रेग्राह्ये ।

अर्थ–वायविडंग, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, चव्य, पीपरामूल, चिरायता, नागरमोथा, कचूर, वच, सोनामाखी, कालानोन, सेंधानोन, जवाखार, सज्जीखार, हलदी, दारुहलदी, धनियाँ, जल, पीपल और अतीस प्रत्येक दो दो तोले, शुद्ध शिलाजीत बत्तीस तोले, शुद्ध गूगुल आठ तोले, लोहेका चूर्ण आठ तोले, मिश्री सोलह तोले, वंशलोचन चार तोले, निसोत और दन्ती चार तोले और मिलेहुए त्रिसुगंध (दालचीनी, इलायची, तेजपात,) चार तोले, इनसबको एकत्र कर यथाविधिसे गोली बनाले यह चंद्रप्रभा नामवाली गोली–छै प्रकारकी बवासीर, भगन्दर, पाण्डुरोग, कामला, मन्दाग्नि पित्त कफसे उत्पन्न हुए रोग, नाडीव्रण, मर्मगतव्रण, ग्रन्थि, अर्बुद, विद्रधि, राजयक्ष्मा, प्रमेह, शुक्रक्षय, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रप्रवाह और उदरादि रोगोंको दूर करैहै । इन गोलियोंको भोजनसे पहिले खावै और तक्र या दहीका पानी अथवा बकरेके मांसका रस या जांगलदेशके जीवोंके मांसके रस, किंवा दूध या शीतलजलका अनुपान करै । इन गोलियोंको सेवनकरनेसे मनुष्य बलमें हाथीकी समान, वेगमें घोडेकी समान, दृष्टिमें गरुडकी समान और श्रवणमें वराहकी समान होजातेहैं । तथा आठप्रकारके शुक्रदोष, बीस प्रकारके प्रमेह और वलीपलितरोगोंसे मुक्त होजातेहैं और वृद्धमनुष्यभी इसके प्रभावसे तरुणताको

प्राप्त होतेहैं । भोजन और पानका परहेज नहीं है और शीत, वात, आतप और मैथुनकाभी परहेज नहीं है ॥ ६९-७६ ॥

अथ लोहरसोपयोगः ।

लौहोरसायनोऽप्यत्रपाण्डुभ्यःश्रेष्ठउच्यते ।
व्यायामजातमखिलंभजन्मेहान्व्यपोहति ॥ ७७ ॥
पादत्रच्छत्ररहितोभैक्षाशीमुनिवद्व्रतः ।
योजनानांशतंगच्छेदधिकंवानिरन्तरम् ॥
मेहाञ्जेतुंवनेचापिनीवारामलकाशनः ॥ ७८ ॥

अर्थ–लोहरसायन पाण्डुरोगकी अपेक्षा इस प्रमेह रोगमें विशेष उपकारी है। अधिकतर कसरत करनेसे प्रमेहरोग विनष्ट होता है । प्रमेहरोगी पादुका (जूते) और छत्रहीन होके भिक्षा मांगे तथा मुनियोंकी समान आचरण करे, निरंतर शतयोजन अथवा अधिक गमन करे, और वनमें जाकर नीवार धान और आमलोंका भोजन करे ॥ ७७-७८ ॥

अथ प्रमेहोत्पत्तिनिदानम् ।

नवान्नदधिमद्याम्बुगुडक्षीरनिषेवणात् ।
दूषयन्तिमलंमेदःशुक्रमज्जावसारसाः ॥ ७९ ॥
विंशतिर्मेहाःप्रजायन्तेदशसाध्याःकफोत्थिताः ।
पित्तोत्थिताश्चषड्याप्याह्यसाध्यामारुतोत्तराः ॥ ८० ॥
आस्यस्वादुस्तृषादाहोदन्तानांमलसंचयः ।
देहचिक्कणतापीतादाहश्चपाणिपादयोः ॥ ८१ ॥
प्रभूताविलमूलत्वंमेहलक्षणमग्रजम् ।
उदकेक्षुरसंसान्द्रंसुरासिकताशुक्रजम् ॥ ८२ ॥
पीतंपिष्टकलालाख्यंबहुमूत्रंततःपरम् ।
क्षारंहारितरक्तश्चमांजिष्ठंस्याच्चतुर्दश ॥ ८३ ॥
नीलंकालंवसामज्जाक्षौद्रंविद्याद्दशोत्तरम् ।
हन्तिमेहंविंशतमंयातेवर्णेक्लक्षयात् ॥ ८४ ॥

अर्थ—नवीन अन्न, दही, मदिरा, जल, गुड़ और दूध इन द्रव्योंको अधिकतर सेवनकरनेसे शरीरमें स्थित मल, मेद, शुक्र, मज्जा, वसा और रस दूषित होकर बीसप्रकारके प्रमेहोंको उत्पन्न करतेहैं, उनमें कफसे उत्पन्नहुए दश प्रमेह साध्य हैं, पित्तसे उत्पन्नहुए छे प्रमेह याप्य हैं और वातसे उत्पन्न हुए चार प्रमेह असाध्य-हैं । मुखमें मधुरता, तृषा, दाह, दाँतोंमें मैल इकट्ठाहोना, शरीरमें चिकनापन और पीलापन, हाथ और पैरोंमें दाह, मूत्रकी अधिकता और अनिर्म्मलता यह सब प्रमेहके पूर्वके लक्षणहैं । उदकमेह, इक्षुमेह, सान्द्रमेह, सुरामेह, सिकतामेह, शुक्रमेह, पीतमेह, पिष्टमेह, लालामेह, बहुमूत्रमेह, क्षारमेह, हरितमेह, रक्तमेह, मांजिष्ठमेह, नीलमेह, कालमेह, वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह और हस्तिमेह इस-प्रकार यह बीस प्रमेहरोग वर्ण और बलके क्षय होनेसे उत्पन्न होतेहैं ॥७९-८४॥

अथोदकमेहः ।

स्वच्छंबहुसितंशीतंनिर्गन्धमुदकोपमम् ।
मेहंह्युदकमेहेनकिंचिदाविलपिच्छिलम् ॥ ८५ ॥

अर्थ—स्वच्छ, बहुतसफेद, शीतल, गंधरहित, जलका समान और किंचित् गाढा और पिच्छिल मूते इसको उदकमेह कहतेहैं ॥ ८५ ॥

अथोदकमेहोपायः ।

मेहिनोबलिनःकुर्यादादौवमनरेचने ॥ ८६ ॥

अर्थ—बलवान्मेहरोगीको प्रथम वमन और विरेचन करावे ॥ ८६ ॥

अथ मेघबंधरसः ।

भस्मसूतंमृतंकान्तंतीक्ष्णंभस्मशिलाजतु ।
शुद्धंताप्यंशिलाव्योषंत्रिफलांकोलबीजकम् ॥ ८७ ॥
कपित्थंरजनीचूर्णंतुल्यंभाव्यन्तुभृंगिणा ।
विंशद्वारंविशोष्याथमधुयुक्तंलिहेत्सदा ॥ ८८ ॥
निष्कमात्रंहरेन्मेहान्मेघबन्धोरसोमहान् ।
महानिम्बस्यबीजानिषण्निष्कंपेषितानिच ॥ ८९ ॥
पलंतण्डुलतोयेनघृतनिष्कद्वयेनच ।
एकीकृत्यापिबेच्चानुहन्तिमेहंचिरोत्थितम् ॥ ९० ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, कान्तलोहेकी भस्म, तीक्ष्णलोहेकी भस्म, शिलाजीत, शुद्ध सोनामाखी, मनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला, अंकोलके बीज और कैथा तथा हलदी, यह सब समान भागले एकत्र चूर्णकर भांगके रसमें बीसवार भावना देवे, पश्चात् इसमें सहत मिलाकर आधातोला नित्य खावे, और ऊपरसे तीन तोले बकायनके बीज चार तोले चावलोंके जलमें पीसकर एकतोला घृत मिलाकर अनुपान करै तो यह मेघबन्धरस बहुतदिनोंके प्रमेहरोगको दूर करै ॥ ८७-९० ॥

अथेक्षुमेहः ।

इक्षोरससमरूपंमधुरंचेक्षुमेहकम् ॥ ९१ ॥

अर्थ—ईखके रसकी समान रंगवाला और स्वादमें मीठा मूत्र उतरे, इसको इक्षुमेह कहतेहें ॥ ९१ ॥

अथेक्षुमेहोपायः ।

गंधकंगुडसंयुक्तंकर्षंभुक्त्वाप्रमेहजित् ॥ ९२ ॥

अर्थ—शुद्धगंधकको गुड़में मिलाकर एकतोलेभर प्रतिदिन खाय तो प्रमेहरोग दूर होवे ॥ ९२ ॥

अथ वंगेश्वरोरसः

वंगभस्ममृतंसूतंतुल्यंक्षौद्रैर्विमर्दयेत् ।
द्विगुंजंलेहयेन्नित्यंहन्तिमेहंचिरोत्थितम् ॥
गुंजामूलंपिबेच्चानुक्षीरैरेवप्रशाम्यति ॥ ९३ ॥

अर्थ—बंगकी भस्म, पारेकीभस्म, दोनो समानभाग लेकर बराबरके सहतमें मर्दन करके नित्य गुंजाभर सेवन करै और ऊपरसे चोंटलीकी जडको दूधमें पीसकर पीवे तो बहुत दिनोंका प्रमेहरोग दूर होवे ॥ ९३ ॥

अथ सान्द्रमेहः ।

सान्द्रंभवेत्पर्युषितंसान्द्रमेहंतदुच्यते ॥ ९४ ॥

अर्थ—मूत्रको रातमें रखदेवे जो वह मूत्र दूसरे दिन गाढ़ा होजावे तो सान्द्रप्रमेह जानना ॥ ९४ ॥

अथ सुरामेहोपायः ।

पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितम् ।
चित्रकंत्रिफलाक्राथंसुशीतञ्चमधुप्लुतम् ॥ ९५ ॥

अनुपानंप्रदातव्यंसुरामेहप्रशान्तये ।
दार्वीमुस्तादेवदारुत्रिफलाक्कथितेजले ॥
योजयेदनुपानेनमेघबन्धरसोऽपि वा ॥ ९६ ॥

अर्थ—यहां पंचवक्त्ररस दोगुंजाप्रमाण भक्षणकरै और ऊपरसे चीता, हरड, आमला और बहेडा इनका काढा बना शीतलकर सहत मिलाकर पीवे तो सुरामेह दूर होवे । अथवा मेघबन्धरस भक्षण करै और ऊपरसे दारुहलदी, नागरमोथा, देवदारु, हरड, आमला और बहेडा इनका काढा पीवे तो—सुराप्रमेह नष्ट होवे ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

अथ सुरामेहः ।

सुरामेहीसुरातुल्यमुपर्यच्छमधोघनम् ॥ ९७ ॥

अर्थ—जिसका मूत्र सुराकीसमान ऊपर तो स्वच्छ और नीचे गाढा होय तो उसको सुरामेह जानना ॥ ९७ ॥

अथ मृगमालारसः ।

मार्कण्डीत्रपुपंशीर्षंसुवर्गं मृगशृङ्गकम् ।
कार्पासबीजंमज्जाचतुल्यमङ्कोलबीजकम् ॥ ९८ ॥
पेषयेन्महिषीतक्रैर्दिनैकंवटकीकृतम् ।
मासद्वयंसदाखादेन्मृगमालाप्रमेहजित् ॥
अक्षपाठाभयादार्वीकषायमनुपाययेत ॥ ९९ ॥

अर्थ—भुई खखसा, सीसा, अगर, हिरनके सींगकी भस्म, बिनौलोंकी मींग, और अंकोलके बीज यह सब समान भागलेकर एक दिन भैंसके तक्रमें पीसकर दोदोमासेकी गोली बनालेवे, एक गोली प्रतिदिन खावे और ऊपरसे बहेडा, पाढ, हरड और दारुहलदीका काढा पीवे । यह मृगमाला रस प्रमेहको दूर करैहै ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

अथोत्कटप्रमेहोपायः ।

त्रिनिष्कंकेतकीमूलंघृष्ट्वाजलेनपाययेत् ।
जयंत्यावाजयायुक्तंमेहंहन्तिसमुत्कटम् ॥ १०० ॥

अर्थ—१२ मासे केतकीकी जडको जलमें पीसकर जैयंती या अरणीके साथ सेवनकरनेसे—उत्कट प्रमेहरोग नष्ट होताहै ॥ १०० ॥

अथ सिकतामेहः ।

मृत्साणून्सिकतामेहीसिकतारूपिणोमलान् ॥ १०१ ॥

अर्थ–जिस प्रमेहमें छोटे छोटे बालू रेतकीसमान कण मूते. उसको सिकतामेह कहतेहैं ॥ १०१ ॥

अथ नागेन्द्रगुटिका ।

मृतनागस्यभागैकंभागैकेनशुभाभया ।
दार्वीकोलफलंधात्रीमुष्कबीजंपलंपलम् ॥ १०२ ॥
कनकस्यफलंचैवपिष्ट्वातद्गुटिकाकृता ।
नागेन्द्रगुटिकाख्यातातक्रैःपीत्वातिमेहजित् ॥ १०३ ॥
निशामृताद्विनिष्कञ्चमधुनालेहयेदनु ।
देवविद्यावटीचात्रअनुपानञ्चयोजयेत् ॥ १०४ ॥

अर्थ–सीसेकीभस्म, वंशलोचन, हरड, दारुहलदी, बेर, आमला, मोखाके बीज और कनक धतूरेके फल प्रत्येक एक एक पल लेकर जलसे पीसकर गोली बनाले. इन गोलियोंको तक्रके साथ खावे, पश्चात् हलदी और गिलोयको सहतमें मिलाकर आठ मासे चाटे. अथवा इसीप्रकार अनुपानके साथ देवविद्यावटी सेवनकरे, इससे प्रमेहरोग दूर होताहै ॥ १०२–१०४ ॥

अथ शुक्रमेहः ।

शुक्राभंशुक्रमिश्रंवाशुक्रमेहीप्रमेहति ॥ १०५ ॥

अर्थ–शुक्रकीसमान अथवा शुक्रमिला मूत उतरे. उसको शुक्रमेह कहतेहैं ॥ १०५ ॥

अथ मेहद्विरदसिंहरसः ।

पारदाभ्रकयोर्भस्ममृतंलोहाष्टमंसमम् ।
टंकणञ्चैवमध्वाज्यंप्रत्येकंसूततुल्यकम् ॥ १०६ ॥
चण्डालीराक्षसीपुष्पैर्दिनंमर्द्यंनिरुध्यच ।
मूषायामन्तरेपक्वंदिनैकंतच्चचूर्णयेत् ॥ १०७ ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयंरसःक्षौद्रैर्द्विमाषकम् ।

लिहेच्चानुपिबेत्तक्रैर्निष्कैकंटंकणंसदा ॥
पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रदेयंशुक्रप्रमेहजित् ॥ १०८ ॥

अर्थ-पारे और अभ्रककी भस्म प्रत्येक एक एक तोला, लोहेकी भस्म आठ तोले, सुहागेकी खीलें, सहत और घृत प्रत्येक एक एक तोला, इन सबको एकत्र कर शिवलिंगी और चोरक गंधद्रव्यके फूलोंके रसमें एक दिन खरल करके मूषामें रख मुख बंदकर दिनभर पकावे, जब शीतल हो जाय तब चूर्ण करले, तो मेहद्विरदसिंहनामक रस तैयार हो । इसको सहतके साथ दो मासे खावे, पश्चात् चार मासे सुहागेकी खीलोंका चूर्ण तक्रके साथ पीवे. इस औषधिको सेवनकरनेसे अथवा पंचवक्त्ररसको सेवन करनेसे शुक्रमेह दूर होताहै ॥ १०६-१०८ ॥

अथ शीतमेहः ।

शीतमेहीसुबहुशोमधुरश्चातिशीतलम् ॥ १०९ ॥

अर्थ-वारंवार मधुर और अत्यन्त शीतलमूत्र उतरे, उसको शीतमेह कहते हैं ॥ १०९ ॥

अथ नित्यारोग्येश्वरो रसः ।

सूतंमृताभ्रवंगाभ्यांतुल्यभागंप्रकल्पयेत् ।
महानिम्बोत्थबीजस्यचूर्णंयोज्यंत्रिभिःसमम् ॥ ११० ॥
मधुनालेहयेन्मापंलालामेहस्यशान्तये ।
सक्षौद्ररजनींवात्रलिह्यान्निष्कत्रयंसदा ॥
असाध्यंनाशयेन्मेहंनित्यारोग्येश्वरोरसः ॥ १११ ॥

अर्थ-पारा. अभ्रककीभस्म और वंग यह तीनों समानभाग और बकायनके बीजोंका चूर्ण तीनोंकी बराबर लेवे, सबको मिलाकर सहतके साथ प्रतिदिन एक मासे भक्षण करे तो लालामेह दूर होवे । यहां ३॥ डेढ तोला हल्दीके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटे । यह नित्यारोग्येश्वर रस असाध्यप्रमेहकोभी नष्ट करदेताहै, ॥ ११० ॥ १११ ॥

अथ मेहहरोपायः ।

पाठार्जुनविडंगानांकषायंमधुसंयुतम् ।

अनुपानंप्रयुंजीतमेहंहन्तिचिरन्तकम् ॥
गुंजामूलंपिबेत्क्षीरैरनुपानंप्रशस्यते ॥ ११२ ॥

अर्थ—पाढ, अर्जुनकी छाल और बायबिडंग इनके काढेमें सहत डालकर पीनेसे अथवा चोंटलीकी जडको दूधमें पीसकर पीनेसे बहुतदिनोका प्रमेहरोग नष्ट होताहै ॥ ११२ ॥

अथ शनैर्मेहः।

शनैःशनैःशनैर्मेहीमन्दंमन्दंप्रमेहति ॥ ११३ ॥

अर्थ—धीरे धीरे थोडा थोडा मूत्र, उसको शनैर्मेह कहतेहैं ॥ ११३ ॥

अथ लालामेहः।

लालातन्तुयुतंमूत्रंलालामेहेनपिच्छिलम् ॥ ११४ ॥

अर्थ—लारके समान तंतुयुक्त और पिच्छिल मूत्र उतरे, उसको लालामेह कहतेहैं ॥ ११४ ॥

अथ शनैर्मेहलालमेहोपायः।

प्रमेहगजसिंहोऽत्रदेयस्तदनुपानकम्।
पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रमहानिम्बस्यबीजकम् ॥
अनुपानंप्रदातव्यंतस्यमेहस्यशान्तये ॥ ११५ ॥

अर्थ—प्रमेहद्विरदसिंहरस अनुपानके साथ, अथवा पंचवक्त्र रस बकायनके बीजोंके अनुपानके साथ सेवन करनेसे शनैर्मेह और लालामेह नष्ट होताहै॥११५॥

अथ पिष्टमेहः।

संहृष्टरोमाविष्टेनपिष्टवद्बहुलंसितम् ॥ ११६ ॥

अर्थ—पिसे चावलोंके पानीकी समान सफेद और बहुतमूत्र तथा मूतनेके समय रोमांच हो आवे, उसको पिष्टप्रमेह जानना ॥ ११६ ॥

अथ मेहोपायः।

वंगभस्ममृतंसूतंतुल्यंक्षौद्रैर्विमर्दयेत्।
द्विगुंजंलेहयेन्नित्यंहन्तिमेहंचिरन्तनम् ॥ ११७ ॥

अर्थ—वंगकीभस्म और पारेकी भस्म दोनो समानभाग लेकर सहतमें मर्दन कर दो गुंजाप्रमाण प्रतिदिन सेवन करे तो बहुत दिनोंका प्रमेह दूर होवे॥११७॥

अथ बहुमूत्रजमेहः ।

शोषस्तापोऽङ्गकार्श्यञ्चबहुमूत्रंतृषाभ्रमः ।
अस्वास्थ्यंसर्वगात्रेषुमेहोऽयंबहुमूत्रजः ॥ ११८ ॥

अर्थ-शोष, ताप, अंगकृशता, बहुमूत्र, प्यास, भ्रम और सर्वशरीरमें पीड़ा होय. उसको बहुमूत्र प्रमेह कहतेहैं ॥ ११८ ॥

अथ तारकेश्वररसः ।

मृतंसूतंमृतंवंगंमृतलौहाभ्रकंसमम् ।
मर्दयेन्मधुनाचाह्निरसोऽयंतारकेश्वरः ॥ ११९ ॥
माषमेकंलिहेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रंप्रणाशयेत् ।
उदुम्बरफलंपक्कंचूर्णितंकर्षमात्रतः ॥
संलेह्यंमधुनासार्द्धमनुपानंसुखावहम् ॥ १२० ॥

अर्थ-पारेकीभस्म, वंगकीभस्म, लोहेकीभस्म, अभ्रककी भस्म यह सब समानभाग लेकर एकदिन सहतके साथ खरल करै तो तारकेश्वर रस सिद्ध हो, इसको एक मासेभर सहतके साथ खानेसे बहुमूत्ररोग दूर होताहै । इसके ऊपर पके गूलरोंका चूर्ण दो तोले सहतके साथ खावे ॥ ११९ ॥ १२० ॥

अथ प्रमेहोपायः ।

पंचवक्ररसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितत् ।
महानिम्बस्यबीजानिषण्निष्कंपेषितानिच ॥ १२१ ॥
पलंतण्डुलतोयेननिष्कद्वयघृतेनच ।
एकीकृत्यपिबेन्नित्यमनुपानंप्रमेहजित् ॥ १२२ ॥

अर्थ-दोगुंजा पंचवक्ररसको सेवन कर पश्चात् बकायनके बीज तीन तोले, चावलोंका जल चार तोले, घृत एकतोला इनसबको मिलाकर पान करै तो प्रमेह रोग दूर होवै ॥ १२१ ॥ १२२ ॥

अथ क्षारमेहः ।

गंधवर्णरसस्पर्शैःक्षारेणक्षारतोयवत् ॥ १२३ ॥

अर्थ-खारी जलकी समान गंधवर्ण रस और स्पर्शहो, उसको क्षारमेह कहतेहैं ॥ १२३ ॥

अथ चन्द्रप्रभावटी ।

मृतसूतभ्रकाशीशमेलाजातीफलंजटा ।
मधुकंमधुयष्टीचधात्रीदाडिमशर्करा ॥ १२४ ॥
कर्पूरंखादिरंसारंशताह्वाकण्टकारिक ।
अम्लवेतसतुल्यांशंदिनैकंलांगलीद्रवैः ॥ १२५ ॥
भावयेन्मेषीदुग्धैश्चनागवल्ल्यादिनंदिनम् ।
वटिकाबदराकारानाम्नाचंद्रप्रभावटी ॥ १२६ ॥
भक्षयेत्तीव्रमेहार्तोमेहान्हन्तिसुदुस्तरान् ।
धात्रीपटोलपत्राणांकषायंवाघृतान्वितम् ॥
सक्षौद्रंपाययेच्चानुसर्वमेहप्रशान्तये ॥ १२७ ॥

अर्थ–पारेकीभस्म, कसीस, इलायची, जायफल, बालछड, महुआ, मुलेठी, आमला, अनार, मिश्री, कपूर, खैरसार, सोया, कटेरी और अमलबेंत यह समान भागलेकर एक दिन कलिहारीके रसमें, एक दिन भेंसके दूधमें और एकदिन पानोंके रसमें भावना देकर बेरकी बराबर गोली बनालेवै । इसको चंद्रप्रभावटी कहतेहैं, यह दुस्तरप्रमेहरोगको दूर करैहै । इसके ऊपर आमला और पटोलपत्र इनका क्वाथ सहत और घृतके साथ पीवे तो सर्वप्रकारके प्रमेह रोग दूर होवें ॥ १२४–१२७ ॥

अथ हारिद्रमेहः ।

हारिद्रमेहीकटुकंहरिद्रासन्निभंदहत् ॥ १२८ ॥

अर्थ–कटुरसान्वित, हलदीकी समान रंगवाला और दाहयुक्त मूते, उसको हारिद्रमेह कहतेहैं ॥ १२८ ॥

अथ हारिद्रमेहोपायः ।

मृतंसूतंमृतंवंगमर्जुनस्यत्वचंसिता ।
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेशाल्मलीमूलजद्रवैः ॥ १२९ ॥
दिनान्तेवाटिकाकर्षामात्राप्रशान्तये ।
द्रवैःशाल्मलिमूलानांवेदविद्यावटीतथा ॥ १३० ॥

अर्थ-पारेकीभस्म, वंगकीभस्म, अर्जुनकी छाल और मिश्री इनको समान भागलेकर सेमरकी जडके रसमें एकदिन खरलकर सायंकाल एक मासेकी गोली बनालेवे, एक गोली प्रतिदिन खावे अथवा सेमलके जडके रसकेसाथ वेदविद्यावटी सेवन करै तो हारिद्रमेह नष्ट होताहै ॥ १२९ ॥ १३० ॥

अथ रक्तमेहः ।

विस्रमुष्णंसलवणंरक्ताभंरक्तमेवच ॥ १३१ ॥

अर्थ-दुर्गन्धयुक्त, गरम, नमकीन और रुधिरकीसमान लालमूत्र उतरे, उसको रक्तमेह कहतेहैं ॥ १३१ ॥

अथ रक्तमेहोपायः ।

वीरकाष्ठकषायञ्चबोलयुक्तंपिबेदनु ।
वासायामूलकंक्काथंसघृतंपाययेन्निशि ॥ १३२ ॥
विद्यावागीश्वरोऽप्यत्रतद्द्रव्यश्चानुपाययेत् ।
रक्तमेहप्रशान्त्यर्थंयोज्यंवामृतवज्रकम् ॥ १३३ ॥
द्विकर्षंमूषलीमूलंचूर्णंक्षौद्रसितायुतम् ।
कर्षंकंलेहयेच्चानुरक्तमेहप्रशान्तये ॥ १३४ ॥

अर्थ-अर्जुनकी छालके काढेको बोलकेसाथ पीवे, अथवा अड्सेकी जड़का काथ रात्रिमें घीकेसाथ पीकर विद्यावागीश्वररसको सेवनकरे या हीरेकी भस्मको सेवन करे किंवा दो तोले मुसलीके चूर्णको सहतके और चीनीकेसाथ सेवनकरनेसे रक्तमेह नष्ट होताहै ॥ १३२-१३४ ॥

अथ मांजिष्ठमेहः ।

विस्रंमांजिष्ठमेहेनमंजिष्ठासलिलोपमम् ॥ १३५ ॥

अर्थ-दुर्गन्धित और मँजीठके क्काथके समान मूत्र उतरे, उसको मांजिष्ठमेह कहतेहैं ॥ १३५ ॥

अथ मांजिष्ठमेहोपायः ।

मंजिष्ठाचन्दनंकर्षंक्काथश्चाप्यनुपाययेत् ।
मृगमालारसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितम् ॥ १३६ ॥

अर्थ-दो रत्तीभर मृगमाला रसको भक्षण कर पश्चात् मँजीठ और लालचन्दनके क्काथका पान करे तो मांजिष्ठमेह दूर होवे ॥ १३६ ॥

अथ नीलमेहः ।

नीलमेहेननीलाभंकालमेहमयोनिभम् ॥ १३७ ॥

अर्थ—नीलामूत्र उतरे, उसको नीलमेह कहतेहैं । लोहेकी रंगकी समान मूत्र उतरे, उसको कालमेह कहतेहैं ॥ १३७ ॥

अथ हरिशंकररसः ।

मृतसूताभ्रकंतुल्यंधात्रीफलनिजैर्द्रवैः ।
सप्ताहंभावयेत्खल्वेयोगोऽयंहरिशंकरः ॥ १३८ ॥
माषमेकंवटींखादेन्नीलकालप्रशान्तये ।
महानिम्बस्यबीजानिपूर्ववत्तण्डुलोदकैः ॥ १३९ ॥
सघृतंपाययेच्चानुअसाध्यंसाधयेत्क्षणात् ।
अनेनैवानुपानेनपंचवक्त्ररसोहितः ॥ १४० ॥

अर्थ—पारेकी भस्म और ताँवेकी भस्म समानभाग ले सातदिन आमलोंके रसमें खरलकर भावना देवे, इसको हरिशंकर रस कहतेहैं । इसकी एक एक मासेकी गोली बनाकर एकगोली प्रतिदिन खावे तो नीलमेह और कालमेह नष्ट होवे । और इस हरिशंकर रसपर बकायनके बीज चावलोंके जलमें पीसकर घीके साथ अनुपान करे । इसी अनुपानके साथ पंचवक्त्ररसका सेवनकरना हितकारी है ॥ १३८ ॥ १३९ ॥ १४० ॥

अथ वसामेहः ।

वसामेहीवसामिश्रंवसाभंमूत्रयेन्मुहुः ॥ १४१ ॥

अर्थ—चर्बीयुक्त और चर्बीके रंगकी समान वारंवार मूते, उसको वसामेह कहतेहैं ॥ १४१ ॥

अथ मेहकुलांतकरसः ।

सूतंवंगंमृतंतुल्यंमृताभ्रंसूतकात्रिधा ।
लशुनंसर्वतुल्यांशंनिष्कमेकंविचूर्णयेत् ॥ १४२ ॥
बदराभांवटींकुर्यान्नाम्नामेहकुलान्तकः ।
लशुनंछागमूत्रेणवसामेहीचपाययेत् ॥ १४३ ॥

अर्थ-पारेकी भस्म एकभाग, वंगकी भस्म एकभाग, अभ्रककीभस्म दो भाग. लहशुन छ भाग इन सबको एकत्र पीसकर वेरकी बराबर गोली बना लेंव, इसको मेहकुलान्तक रस कहतेहैं । इस रसको सेवन करनेके पश्चात् लहशुनको बकरीके मूत्रमें पीसकर पीवे, इससे वसामेह नष्ट होताहै ॥ १४२ ॥ १४३ ॥

अथ वसामेहोपायः ।

पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रमहानिम्बस्यबीजकम् ।
तण्डुलोदकपानेनसघृतैर्मेहजिद्भवेत् ॥ १४४ ॥

अर्थ-पंचवक्त्ररसको सेवन करै पश्चात् बकायनके बीजोंको चावलोंके जलमें पीसकर घृत मिलाकर सेवन करै तो वसामेह नष्ट होवे ॥ १४४ ॥

अथ मज्जमेहः ।

मज्जाभंमज्जमिश्रंवामज्जमेहीमुहुर्मुहुः ॥ १४५ ॥

अर्थ-मज्जाकी समान अथवा मज्जामिश्रित मूत्र वारंवार उतरै उसको मज्जामेह कहतेहैं ॥ १४५ ॥

वसामेहिचिकित्सायातांचिकित्सांप्रयोजयेत् ॥ १४६ ॥

अर्थ-जो चिकित्सा वसामेहमें कहीहै वही चिकित्सा मज्जामेहमें करनी ॥ १४६ ॥

अथ क्षौद्रमेहः ।

कषायंमधुरंरूक्षंक्षौद्रवत्क्षौद्रमेहकम् ॥ १४७ ॥

अर्थ-कषेला, मीठा, रूखा और सहतकी समान मूत्र. उसको क्षौद्रमेह कहतेहैं ॥ १४७ ॥

अथ क्षौद्रमेहोपायः ।

मृतंसूतंमृतंवंगमर्जुनस्यत्वचंसिता ।
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेशाल्मल्यामूलजैर्द्रवैः ॥ १४८ ॥
दिनान्तेवटिकाकार्यामासमात्रप्रमेहहा ।
एषाइन्द्रवटीनाम्नामधुमेहप्रशान्तये ॥ १४९ ॥
त्रुटिंशाल्मलिमूलानांमधुनाचानुपाययेत् ।
प्रमेहगजसिंहोऽत्रदेयोवानन्दभैरवः ॥
अनेनैवानुपानेनवेदविद्यावटीह्यपि ॥ १५० ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, वंगकी भस्म, अर्जुनकीछाल और मिश्री यह सबसमान-भाग लेकर एकदिन सेमलकी जड़के रसमें खरल करके एकएक मासेकी गोली बनालेवै, इसको इन्द्रवटी कहतेहैं, प्रतिदिन एक गोली खावे और ऊपरसे सेमलकी जड और छोटी इलायची सहतके साथ पीसकर सेवन करै तो क्षौद्रमेह (मधुमेह) दूर होवे। प्रमेह गजासिंहरस, आनन्दभैरव-रस अथवा वेद्विद्यावटी, उक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसे भी मधुमेह नष्ट होताहै ॥ १४८–१५० ॥

अथ हस्तिमेहः।

हस्तीमत्तइवाजस्रंमूत्रंवेगविवर्जितम्।
खलसीकंविदग्धश्चहस्तिमेहस्यलक्षणम् ॥ १५१ ॥

अर्थ–मत्तहाथीकी समान पुनः पुनः वेगरहित, तारसंयुक्त और रुकरुकके मूते, उसको हस्तिमेह कहतेहैं ॥ १५१ ॥

अथ हरगौरीसृष्टिरसः।

शुद्धसूतंचतुर्भागंसूतार्द्धंमृतताम्रकम्।
गंधकश्चद्वयोस्तुल्यंमस्तुनामर्दयेद्दिनम् ॥ १५२ ॥
गोलकंबद्धयेद्वस्त्रेवालुकायंत्रगंपचेत्।
मन्दाग्निनापचेत्तावद्यावत्तताश्चवालुकाः ॥ १५३ ॥
स्पर्ष्टंनशक्यतेतापमथोद्धृत्यविचूर्णयेत्।
धात्रीफलरसेभाव्यसप्तधागोक्षुरस्यच ॥ १५४ ॥
श्लक्ष्णचूर्णंततःकृत्वाविंशद्भागान्प्रकल्पयेत्।
भागैकंपूर्वजंचूर्णंसर्वंक्षीरेणगोलयेत् ॥ १५५ ॥
निष्कद्वयंवटींकुर्याद्घृतमध्येविपाचयेत्।
स्वांगशीतलतांखादेत्प्रत्यहंपाचितांघृतैः ॥ १५६ ॥
महिषीक्षीरकर्षैकमनुपानञ्चसर्वदा।
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ॥
दुग्धौदनंघृतंपथ्यंशाकंचिंचाफलम्भवेत् ॥ १५७ ॥

अर्थ—शुद्धपारा चार भाग, ताँबेकी भस्म दो भाग, गंधक छे भाग इनको दहीके तोड़में एकदिन खरलकर गोलाबना वस्त्रमें बाँध मन्द मन्द अग्निसे वालुकायंत्रमें पकावे, जबतक वालुका अत्यंत गरम और हाथ नहीं धरा जाय ऐसी न हो जावे तबतक पकावे, फिर निकाल कर चूर्ण करले. फिर इसको आमलोंके और गोखुरुओंके रसमें सातबार भावना देकर बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इसके बीस भाग करले । एक भागको दूधमें मिलाकर गोला बना लेवे. उस गोलेकी आठ आठ मासेकी गोली बनाकर घीमें पकावे. जब स्वयं शीतल होजाय तब एक गोली प्रतिदिन खावे, अनुपान दो तोले भैंसका दूध । यह हरगौरी सृष्टिरस सर्वप्रकारके प्रमेहरोगोंको दूर करैहै । दुग्धान्न. घृत. शाक और इमली इसपर पथ्य है ॥ १५२–१५७ ॥

अथ प्रमेहहरतैलम् ।

निशागोक्षुरकारिष्टसोमवल्कलजांमुलैः ।
लोध्रपद्मसमंजिष्ठाचंदनागुरुदीप्यकैः ॥
पटोलमुस्तभल्लातैर्युक्तंतैलंविपाचयेत् ॥ १५८ ॥

अर्थ—तेल एकसेर, जल चार सेर और कल्कके लिये हलदी, गोखुरू, नीम, सफेदखैर. कड़वी तोरई, लोध, पद्माख, मजीठ. लालचन्दन अगर, अजवायन. पटोल, नागरमोथा और भिलावा यह सब पावभर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर शरीरमें मर्दन करनेसे—वातज, कफज और पित्तज प्रमेह दूर होतेहैं । परन्तु त्रिदोषज अर्थात् सान्निपातिक प्रमेहके दूर करनेके लिये तेल एकसेर लेवे, घृत और तेल मिले हुए एकसेर अर्थात् घृत आधासेर, तेल आधासेर. डालकर पकावे, इसको यमक कहतेहैं ॥ १५८ ॥

अथ कफप्रमेहोपद्रवाणि ।

अविपाकोरुचिश्छर्दिर्निद्राकासःसपीनसः ।
उपद्रवाःप्रजायन्तेमेहिनांकफजन्मनाम् ॥ १५९ ॥

अर्थ—अन्नका परिपाक न होना, अरुचि, वमन, निद्रा, खांसी और पीनस यह सब उपद्रव कफजप्रमेहरोगमें उत्पन्न होतेहैं ॥ १५९ ॥

अथ पित्तप्रमेहोपद्रवाणि ।

बस्तिमेहनयोस्तोदोमुष्कावदरणंज्वरः ।
दाहतृष्णाम्लिकामूर्च्छाविड्भेदःपित्तजन्मनाम् १६०॥

अर्थ—वस्ति और लिंगमें पीडा होवे, अण्डकोषोंका पककर फटजाना, ज्वर, दाह, तृषा, खट्टी डकार, मूर्च्छा और मलभेद, यह उपद्रव पित्तज प्रमेहमें होतेहैं ॥ १६० ॥

अथ वातप्रमेहोपद्रवाणि ।

वातजानामुदावर्त्तंघर्महृद्ग्रहलोलता ।
शूलमुन्निद्रताशोषःकासःश्वासश्चजायते ॥ १६१ ॥

अर्थ—उदावर्त्त, घर्म्म, हृदयमें पीडा, लोलता, शूल, निद्रानाश, शोष, खाँसी और श्वास यह उपद्रव वातजप्रमेहमें होतेहैं ॥ १६१ ॥

अथ प्रमेहिमृत्युचिह्नानि ।

यथोक्तोपद्रवारिष्टमतिप्रस्रुतमेवच ।
पिडकापीडितंगाढंप्रमेहोहन्तिमानवम् ॥ १६२ ॥

अर्थ—ऊपर कहे हुए अविपाकादि सर्व उपद्रव होवें और अत्यन्त शुक्रस्राविन तथा पिडिकाओंसे अधिकतर पीडितहो, ऐसा प्रमेहरोगी निश्चय मरणको प्राप्त होना है ॥ १६२ ॥

अथ दशमूलघृतम् ।

उपद्रवाणांशान्त्यर्थंघृतमत्रैवकथ्यते ।
दशमूलीशठीदन्तीदेवदारुपुनर्नवा ॥ १६३ ॥
मूलंस्नुह्यर्कयोःपथ्याभूकदम्बश्चपुष्करम् ।
करञ्जंवारुणंमूलंपिप्पलीचसमंसमम् ॥ १६४ ॥
प्रतिदशपलंयोज्यंकुलत्थबदरीयवाः ।
इत्येवंषोडशपलंसर्वमेकत्रपाचयेत् ॥ १६५ ॥
अष्टत्रिंशद्गुणेतोयेपादशेषंसमाहरेत् ।
वस्त्रपूतःकषायःसपुनःपाच्यइमैःसह ॥ १६६ ॥
चव्यंद्विपिप्पलीभार्ङ्गीवचात्रिवृद्विडङ्गकम् ।
लोध्रंपिण्याकशुण्ठीचप्रत्येकंपलमात्रकम् ॥ १६७ ॥
चूर्णितंयोजयेदत्रघृतप्रस्थयुतंपचेत् ।
घृतावशेषमुत्तार्यकर्षमात्रंप्रयोजयेत् ॥ १६८ ॥

प्रमेहोपद्रवाणाञ्चशमनंपरमंहितम् ।
पिडिकाव्रणकासश्चसर्वोपद्रवशान्तिकृत् ॥ १६९ ॥

अर्थ–अब पूर्वोक्त उपद्रवोंके शान्त करनेके लिये यहां घृत कहतेहैं । गायका घी दोसेर, क्वाथके लिये दशमूल, कचूर, दन्ती, देवदारु, पुनर्नवा, थूहरकी जड, आककीजड, हरड, भूमिकदम्ब, पोहकरमूल, करंजमूल, वरनाकी जड और पीपल दश दश पल, कुलथी, बेर, जौ, यह प्रत्येक सोलह सोलह पल, जल सबसे अडतालीस गुना, शेष चतुर्थांश और कल्कके लिये पीपल, गजपीपल, चव्य, भारंगी, वच, निसोत, वायविडंग, लोध, तिलोंकी खल और सोंठ, प्रत्येक चार चार तोले। सबको मिला यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, यह घृत प्रमेहजनित पिडिका, व्रण और कासादि सम्पूर्ण उपद्रवोंको शान्त करेहै ॥ १६३–१६९ ॥

अथान्योपायः ।

सुभावितंसारजलैलाहिपिष्टाशिलोद्भवाः ।
शालिघृतैश्चभुञ्जानःशालिजांगलजैरसैः ॥ १७० ॥

अर्थ–सारजलमें छोटी इलायची और शिलाजीतको पीसकर सेवन करे, और घृत तथा जांगलदेशके जीवोंके मांसरसके साथ शालिधानोंके भातका भोजन करे ॥ १७० ॥

अथ शुक्रमातृकावटिका ।

गोक्षुरबीजंत्रिफलापत्रमेलारसांजनम् ।
धन्याकश्चविकाजीरंतालीशंटङ्कदाडिमौ ॥ १७१ ॥
प्रत्येकार्द्धपलंदत्त्वागुग्गुलोःकार्षिकन्तथा ।
रसाभ्रलौहगंधानांप्रत्येकञ्चपलंक्षिपेत् ॥ १७२ ॥
सर्वमेकीकृतंवैद्योदण्डयन्त्रेर्विमर्दयेत ।
घृतभाण्डेतुसंस्थाप्यमासमेकन्तुखादयेत् ॥ १७३ ॥
दाडिमस्वरसेनैवच्छागीदुग्धेनवाम्भसा ।
चन्द्रनाथेनगदितावटिकाशुक्रमातृका ॥ १७४ ॥
विंशन्मेहान्निहन्त्याशु [illegible]पित्तसमुद्भवान् ।

द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्राश्मरीगदान् ॥
बलवर्णाग्निजननीज्वरदोषनिषूदनी ॥ १७५ ॥

अर्थ—गोखुरूके बीज, त्रिफला, तेजपात, छोटीइलायची, रसौत, धनियाँ, चव्य, जीरा, तालीशपत्र, सुहागा और अनार प्रत्येक दो दो तोले, गूगुल एकतोला, पारा, अभ्रक, लोहा और गंधक, प्रत्येक चार चार तोले. सबको एकत्र पीसकर घृतके बासनमें रख देवे। इसको प्रतिदिन एकमासे भर बकरीके दूधके साथ अथवा अनारके रसके साथ या जलके साथ सेवन करे। यह शुक्रमातृकावटिका श्रीचंद्रनाथने कहीहै। यह—तीसप्रकारके प्रमेह,वातपित्तोद्भव प्रमेह द्वन्द्वज सन्निपातोद्भव प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र और पथरीको दूर करैहै। यह वटिका—बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाली है तथा ज्वरको दूर करै है॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥

अथ सोमेश्वररसः।

शालार्जुनकलोध्राणांकदम्बागुरुचन्दनम्।
अग्निमन्थनिशाद्वन्द्वंधात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥ १७६ ॥
उशीरणमूलञ्चभागमेषांपलार्द्धकम्।
रसगंधकधन्याभ्रमेलापत्रंचपद्मकम् ॥ १७७ ॥
लौहंरसांजनंपाठाविडंगंटङ्कजीरके।
प्रत्येकंपलिकंभागंपलार्द्धंगुग्गुलोरपि ॥ १७८ ॥
घृतेनवटिकाकृत्वाखादेत्षोडशरक्तिकाम्।
गहनानन्दनाथेनरसोयत्नेननिर्मितः ॥ १७९ ॥
सोमेश्वरोमहातेजावातमेहंनिहन्त्यलम्।
एकजंद्वन्द्वजंचोग्रंसन्निपातसमुद्भवम् ॥ १८० ॥
मूत्राघातंमूत्रकृच्छ्रंकामलाञ्चहलीमकम्।
भगंदरोदराशांसिविविधाःपीडकाव्रणम् ॥ १८१ ॥
विस्फोटार्बुदकण्डूश्चरक्तपित्ताम्लपित्तके।
यकृत्प्लीहोदरंगुल्मं…लार्शःकासविद्रधीन् ॥ १८२ ॥

लवणाग्निजनकोग्रहदौर्गुण्यनाशनः ।
छागीदुग्धानुपानेननारिकेलजलेनवा ॥ १८३ ॥
शीतेनपाकतैलेनयवयूषादियोगतः ।
कुर्याद्युक्त्यापवित्रोऽपियुक्त्यावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ १८४ ॥

अर्थ—सालकी छाल, अर्जुनकी छाल, लोध, कदम्ब, अगर, चन्दन, अरणी, हलदी, दारुहलदी, आमला, अनार, गोखुरू, जामुन और खस प्रत्येक दो दो तोले, पारा, गन्धक, धान्याभ्रक, इलायची, तेजपात, पद्माख, लोहा, रसौत, पाढ़, बायविडंग, सुहागा और जीरा प्रत्येक चार चार तोले, गूगुल दो तोले, सबको भलेप्रकारसे पीसकर घीमें मिलाके सोलह सोलह रत्तीकी गोली बनालेवै, यह सोमेश्वररस श्रीमान् गहनानन्दनाथने बड़े यत्नोंसे निर्माण कियाहै । यह सोमेश्वररस महातेजस्वीहै, तथा वातजप्रमेह, एकदोषोंसे उत्पन्न हुआ मेह, दो दोषोंसे उत्पन्न हुवा मेह, तीनों दोषोंसे उत्पन्नहुवा मेह, उपद्रवयुक्त, बहुतदिनोंका मेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगन्दर, उदररोग, बवासीर, अनेकप्रकारकी पिड़िका, व्रण, विस्फोटक, अर्बुद, कण्डू, रक्तपित्त, अम्लपित्त, यकृत्, प्लीहोदर, गुल्म, शूल, अर्श, खाँसी और विद्रधिरोगको दूर करैहै । बल, वर्ण और अग्निको वढ़ानेवाला और ग्रहबाधाको हरनेवाला है । अनुपान—बकरीका दूध, अथवा नारियलका जल या शीतल सिद्धतैल वा जौ आदिका यूष है ॥ १७६–१८४ ॥

अथ मेहमुद्गरवटिका ।

रसांजनंविडंदारुबिल्वगोक्षुरदाडिमाः ।
भूनिम्बपिप्पलीमूलंत्रिकण्टत्रिफलात्रिवृत् ॥ १८५ ॥
प्रत्येकंतोलकंदेयंलोहचूर्णन्तुतत्समम् ।
पलैकंगुग्गुलुंदत्त्वाघृतेनवटिकांकुरु ॥ १८६ ॥
मषैकानिर्मिताचेयंमेहमुद्गरसंज्ञिनी ।
श्रीमद्गहननाथेनलोकनिस्तारकारिणा ॥ १८७ ॥
अनुपानंप्रकर्त्तव्यंछागीदुग्धंजलञ्चवा ।
विंशन्मेहंनिहन्त्याशुमूत्रकृच्छ्रंहलीमकम् ॥ १८८ ॥

अश्मरीकामलापाण्डुमूत्र घातमरोचकम् ।
षडर्शांसिव्रणंकुष्ठंभगन्दर[illegible]रिका ॥
सुखिनेयदिकर्त्तव्यात्रिसुगन्धिसमन्विताः ॥ १८९ ॥
गोक्षुरंगोक्षुरबीजः ।

अर्थ–रसौत, बिडनोन, देवदारु, बेल, गोखुरू, अनार, बकायन, पीपरामूल बड़ीकटेरी, अग्निदौन, जवासा, हरड़, बहेड़ा, आमला और निसोत प्रत्येक एक एक तोला, सबकी बराबर लोहेका चूर्ण और गूगुल चार तोले लेवै, सबको एकत्र पीसकर घृतके योगसे एकएक मासेकी गोली बनावे, इसको मेहमुद्गरवटिका कहतेहैं । यह गहनानन्द वैद्यने लोगोंको आरोग्यकरनेके लिये रचीहै । एकगोली प्रतिदिन बकरीके दूधके या जलके साथ खावे । यह गोली–बीसप्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डुरोग, मूत्राघात, अरोचक, छे प्रकारकी बवासीर, व्रण, कुष्ठ, भगन्दर और मसूरिका रोगको दूर करैहै । और जो यह सुखीमनुष्यके लिये बनावै तो इसमें दालचीनी इलायची और तेजपातका चूर्ण डालदेवे ॥ १८५–१८९ ॥

अथ प्रमेहपिडिका तैलम् ।

कणामधुककुष्ठैलारेणुकारजनीद्वयैः ।
समंगाशारिवालोध्रधातकीभिर्विपाचितम् ।
शोधनंरोपणंतैलंपिडिकायांप्रशस्यते ॥ १९० ॥
कणाभिःकल्कः । जलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ–पीपल, मुलैठी, कूठ, इलायची, रेणुका, हलदी, दारुहलदी, मजीठ, अनन्तमूल, लोध और धायके फूल, इनके कल्कसे सिद्ध किया हुआ तैल–शोधन, रोपण और प्रमेहजनित पिडिकाओंको दूर करैहै ॥ १९० ॥

अथ सर्वप्रमेहहरचूर्णम् ।

त्रिफलामुस्तकंदारुहरिद्रादेवदारुच ।
तत्क्वाथंमतिमान्मेहान्बहुपत्ररजंजयेत् ॥ १९१ ॥

अर्थ–त्रिफला, नागरमोथा, दारुहलदी, देवदारु, इनके काढेमें अभ्रकका चूर्ण डालकर पीनेसे बीसप्रकारके प्रमेह दूर होतेहैं ॥ १९१ ॥

अथ रुद्रासनक्वाथः ।

लोध्रमूर्वाशठीबिल्वभार्ङ्गीकुष्ठविडंगकम् ।
प्रियंग्वतिविषावह्निभूनिम्बकटुरोहिणी ॥ १९२ ॥
चातुर्जातकयुग्मञ्चकन्दुकंचेन्द्रवारुणी ।
यवानीपुष्करंपाठाग्रन्थिचव्यंफलत्रयम् ॥ १९३ ॥
कर्षसममम्लकरसेक्वाथेपादावशेषिते ।
सुशीतलेविनिक्षिप्यतस्मिन्प्रस्थद्वयंमधु ॥ १९४ ॥
पक्षैकंरक्षयेद्भूमौसिद्धंरुद्रासनंभवेत् ।
प्रमेहार्शांसिकुष्ठानिपाण्डुत्वंग्रहणीक्रुमीन् ॥ १९५ ॥

अर्थ–लोध, मूर्वा, कचूर, वेल, भारंगी, कूट, वायविडंग, फूलप्रियंगु, अतीस, चीता, चिरायता, कुटकी, चातुर्जात (इलायची, नागकेशर, तेजपात, दालचीनी) दो भाग, कन्द इन्द्रायन, अजवायन, पोहकरमूल, पाढ, पीपरामूल, चव्य, हरड, बहेडा और आमला प्रत्येक दो दो तोले, आठसेर नींबू या इमलीके रसमें पकावे जब दो सेर जल शेष रहे तब उतारले शीतल होनेपर चौसठतोले सहत मिलादेवे । फिर इसको पन्द्रह दिनतक पृथ्वीमें गाड देवे तो रुद्रासन सिद्ध हो, यह रुद्रासन–प्रमेह, बवासीर, कोढ, पाण्डुरोग, संग्रहणी और क्रमिरोगको दूर करेहै ॥ १९२–१९५ ॥

जातःप्रमेहीमधुमेहिनोवानसाध्यरोगःसहिबीजदोषात् ।
येचापिकेचित्कुलजाविकाराभवन्तितांश्चप्रवदन्त्यसाध्यान्

अर्थ–मधुमेहवाले मनुष्यसे उत्पन्न हुआ जो प्रमेहवान् मनुष्य उसका प्रमेह; बीजके दोषके कारण साध्य नहीं है और जो जिसके कुलमें परंपरासे विकार चलेआतेहैं वहभी साध्य नहीं है ॥ १९६ ॥

इति श्रीमदायुर्वेदोद्धारकशालिग्रामवैश्यकृते रसरत्नाकरे रसचन्द्रिकाभाषायां प्रमेहचिकित्सा नामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथ स्थौल्यचिकित्सा ।

श्रमचिन्ताव्यवायाध्वक्षौद्रजागरणप्रियः ।
हन्त्यवश्यमतिस्थौल्यंयवश्यामाकभोजनः ॥ १ ॥
व्यायामयुक्तोऽजीर्णाशीयवगोधूमभोजनः ।
सन्तर्पणकृतैर्दोषैःस्थौल्ययुक्तोविमुच्यते ॥ २ ॥
प्रशस्तश्चप्रियङ्गुश्चश्यामाकयवकायवाः ।
चूर्णकाकोद्रवायुक्तैःकुलत्थैश्चतथाहितैः ॥ ३ ॥
आढकीनाञ्चबीजानिपटोलामलकैःसह ।
भोजनान्तेप्रशस्यन्तेपानानुष्णमधूदकम् ॥ ४ ॥
अरिष्टांश्चानुपानार्थेमेदोमांसकफापहान् ।
अतिस्थौल्यविनाशायप्रविभज्यप्रयोजयेत् ॥ ५ ॥
अस्वप्नश्चव्यवायश्चव्यायामंचिन्तनानिच ।
स्थौल्यमिच्छन्परित्यक्तंक्रमेणातिविवर्द्धयेत् ॥ ६ ॥
प्रातरध्युषितंवारिसेवितंस्थौल्यनाशनम् ।
उष्णमन्नस्यमण्डंवापिबन्कृशतनुर्भवेत् ॥ ७ ॥
केचित्क्षारत्वेनकर्षणत्वात्कौपंजलमाहुः ॥

अर्थ–परिश्रम, चिन्ता, मैथुन, मार्गचलना, मधुपान, रात्रिमें जागना, जौ और समेकाभोजन यह सब स्थूलताको अवश्य दूर करैहै । कसरत करनेवाला और अजीर्णमें भोजन करनेवाला मनुष्य जौ और गेहूँका भोजनकरै तो सन्तर्पण दोषसे उत्पन्न हुई स्थूलता नष्ट होजावै । कंगनी, समा, यवक, यव, चूर्णक और कोदों इन सब धान्योंका अन्न पटोल, आमला, कुलथी और अरहरके यूषके साथ भोजनकरै, भोजनके अंतमें किंचित् गरमजलके साथ सहतको पीवे ॥ १–७ ॥

अथ व्योषाग्निगुग्गुलुः ।

व्योषाग्नित्रिफलामुस्तविडंगंगुग्गुलुं समम् ।
खादेत्सर्वाञ्जयेद्व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान् ॥ ८ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, हरड, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग और गूगुल इन सबको समानभागलेकर सेवन करनेसे मेद, कफ, वात और आमवातजनित दुरोग दूर होतेहैं ॥ ८ ॥

अथ त्रिफलाद्यंवृनम् ।

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः ।
निम्बारग्वधषड्ग्रन्थासप्तपर्णनिशाद्वयैः ॥ ९ ॥
गुडूचीन्द्रसुराकृष्णाकुष्ठसर्षपनागरैः ।
तैलमेभिः समैःपक्वंसुरसादिरसाप्लुतम् ॥ १० ॥
पानाभ्यंजनगंडूषनस्यबस्तिषुयोजितम् ।
स्थूलतालस्यकण्ठादीञ्जयेत्कफकृतान्गदान् ॥ ११ ॥

अर्थ–तिलका तेल चारसेर, क्वाथके वास्ते सुरसागणकी औषधि चौंसठपल, जल ५१२ पल, शेष बत्तीसपल रक्खे और कल्कके लिये हरड, बहेडा, आमला, अतीस, निसोत, चीता, अडूसा, नीम, अमलतास, वच, सतवन, हलदी, दारुहलदी, गिलोय, इन्द्रजौ, कपूरकचरी, पीपल, कूठ, सरसों और सोंठ यह सब एकसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकरे । इस तेलका पान, अभ्यंजन, गँडूष, नस्य और बस्तिमें व्यवहार करनेसे स्थूलता, आलस्य, कण्ठ, आदिके रोग और कफकृतरोग दूर होतेहैं ॥ ९–११ ॥

अथ दुर्गन्धहरोद्वर्तनम् ।

चिंचापत्रस्वरसंम्रक्षितकल्कादियोजितंजयति ।
दुग्धहरिद्रोद्वर्त्तनमचिरादेहस्यदौर्गन्ध्यम् ॥ १२ ॥
तिन्तिडीपत्रस्वरसेप्रथमतःकल्कादिम्रक्षणंकृत्वा ।
पिष्टादुग्धहरिद्रोद्वर्त्तनम् ।
हरितकीलोध्रमरिष्टपत्रचूतत्वचोदाडिमवल्कलश्च ।
एषोऽङ्गरागःकथितोऽङ्गनानांजम्बाःकषायश्चनराधिपानाम्

अर्थ—इमलीके पत्तोंके रसमें कल्कादि म्रक्षणपूर्वक पीसके दूध और हरिद्राके द्वारा उद्वर्त्तन करनेसे बहुत दिनोंकी देहकी दुर्गन्ध दूर होतीहै हरड़, लोध, नीमके पत्ते, आमकी छाल और अनारकी छाल इनका उबटन और जामुनका क्काथ स्त्रियोंको और राजाओंको प्रशस्त है ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथ वाडवाग्निरसः।

शुद्धसूतंसमंगंधंताम्रंतालंसमंसमम्।
अर्कक्षीरैर्दिनंमर्द्यंक्षौद्रैर्लेह्यंद्विगुंजकम् ॥ १४ ॥
पलंक्षौद्रंपलंतोयमनुपानंपिबेत्सदा।
वाडवाग्निरसोनामस्थौल्यश्चापिनियच्छति ॥ १५ ॥

अर्थ—शुद्धपारा. गंधक, ताँबा और हरिताल, इन सबको समानभाग लेकर एक दिन आकके दूधमें खरलकर सहतमें मिला दो रत्तीभर भक्षण करे, ऊपरसे चारतोले सहत और चारतोले जलका अनुपान करै। यह वाड़वाग्निरस स्थूलताको दूर करैहै ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ लोहरसायनम्।

गुग्गुलुस्तालमूलीचत्रिफलाखदिरंवृषम्।
त्रिवृतालम्बुषाचैवनिर्गुण्डीचित्रकंस्नुही ॥ १६ ॥
एषांदशपलान्भागांस्तोयंपंचाढकेपचेत्।
पादशेषंततःकृत्वाकषायमवतारयेत् ॥ १७ ॥
पलद्वादशकंदेयंतीक्ष्णंलोहंसुचूर्णितम्।
पुराणसर्पिषःप्रस्थंशर्कराष्टपलान्वितम् ॥ १८ ॥
पचेत्ताम्रमयेपात्रेसुशीतेचावतारयेत्।
प्रस्थार्द्धंमाक्षिकंदेयंशिलाजतुपलद्वयम् ॥ १९ ॥
एलात्वचःपलार्द्धंश्चविडंगानिपलत्रिकम्।
मरिचंचांजनंकृष्णाद्विपलंत्रिफलान्वितम् ॥ २० ॥
पलद्वयन्तुकाशीशंश्लक्ष्णचूर्णीकृतंबुधैः।
चूर्णंकृत्वासुमथितंस्निग्धभांडेनिधापयेत् ॥ २१ ॥

ततःसंशुद्धदेहस्तु भक्षयेदक्षमात्रकम् ।
अनुपानंपिबेत्क्षीरंजांगलानांरसंतथा ॥ २२ ॥
वातश्लेष्महरंश्रेष्ठंकुम्भमेहोदरापहम् ।
कामलापाण्डुरोगञ्चश्वयथुंसभगन्दरम् ॥ २३ ॥
मूर्च्छामोहविषोन्मादगराणिविविधानिच ।
स्थूलानांकर्षणंश्रेष्ठंमेदुरेपरमौषधम् ॥ २४ ॥
अर्थेनातिमहेण कुक्षिंपातालसन्निभाम् ।
बल्यंरसायनंमेध्यंवाजीकरणमुत्तमम् ॥ २५ ॥
श्रीकरंबुद्धिजननंवलीपलितनाशनम् ।
नाश्नीयात्कदलीकन्दंकांजिकंकरमर्दकम् ॥
करीरंकारबिल्वञ्चषट्ककराणिवर्जयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ—गूगुल, मुसली, हरड, बहेड़ा, आमला, खैर, अडूसा, निसोत, गोरखमुण्डी, सम्हालू, चीता और थूहर, यह प्रत्येक दश दश पल लेकर पाँच आढ़क जलमें पकावे, जब जल सवा आढ़क शेष रहै तब उतारकर छान लेवे, पश्चात् इसमें बारह पल लोहेका चूर्ण सोलह पल पुराना घी और आठ पल बूरा मिलाकर ताँबेके बासनमें पकावे, शीतल होनेपर उतारले। फिर इसमें सोलह तोले सहत आठ तोले शिलाजीत, दो तोले दालचीनी, दो तोले इलायची, बारह तोले बायविडंग, काली मिरच, रसौत, पीपल और त्रिफला, प्रत्येक दो दो पल और दो पल कसीस, इन सबका चूर्ण मिलाकर करछीसे एकमएक करले, फिर इसको चिकने बासनमें भरके रखदेवे। पश्चात् वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्ध होकर इसमेंसे दो तोले खावे, ऊपरसे दूध और जांगलदेशीय जीवोंके मांसके रसका अनुपान करै। यह वातश्लेष्म, कुष्ठ, प्रमेह, उदररोग, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, भगन्दर, मूर्च्छा, मोह, विषोन्माद, अनेक प्रकारके विषविकार, स्थूलता, इनको दूर करै है और मेदरोगकी परम औषधि है। बलकारक, रसायन, मेधाजनक, उत्तम वाजीकरण, लक्ष्मीको बढानेवाली और वलीपलितनाशक है! इस लोह रसायनके ऊपर केला, कन्द, कांजी, करौंदा, करील, करेला यह छे ककार छोड देवे ॥ १६–२६ ॥

अथ बिडंगादिलौहम् ।

विडंगनागरक्षारकाललौहरजोमधु ।
यवामलकचूर्णञ्चप्रयोगःस्थौल्यनाशनः ॥ २७ ॥

काललौहवज्रादिजारितपुटितंसर्वेषांसमभागमितिनि-श्चलकरः । लौहस्यमहावीर्यत्वेनप्राधान्यान्मिलितसर्वचूर्णसमत्वंयुक्तमिति त्रिविक्रमदेवः । मधुनावलेहः ।

अर्थ–वायविडंग, सोंठ, जवाखार, जौ और आमला, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवे, सबको एकत्र पीसकर सहतके साथ सेवन करनेसे स्थूलता नष्ट होती है ॥ २७ ॥

अथ त्र्यूशनादिलौहम् ।

त्र्यूषणंत्रिफलाचव्यं-तुर्लवणमभ्रकम् ।
वागुजीलौहचूर्णञ्चभक्षयेन्मधुसर्पिषा ॥ २८ ॥
परंस्थौल्यहरंवह्निबलवर्णविवर्द्धनम् ।
श्रेष्ठंरसायनंमेह-कुष्ठघ्नंयन्त्रणांविना ॥ २९ ॥

चतुर्लवणंकडकचांविनासर्वचूर्णसमम् ।
लौहंनवायसादिवत्क्रिया ।

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, चव्य, सेंधानोन, कालानोन, बिडनोन, समुद्रनोन अभ्रक, बापची, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण, इन सबको एकत्र पीसकर सहत और घीकेसाथ सेवनकरै । यह स्थौल्यताको दूरकरैहै, अग्निको बढानेवाला, बलवर्णवर्द्धक, श्रेष्ठ रसायन; तथा मेह और पीडारहित कुष्ठको हरैहै ॥ २८॥२९ ॥

अथ त्रिकत्रयाद्यंलौहम् ।

त्रिकत्रयत्रिवृद्दन्तीशशीभल्लातकानिच ।
लौहंस्थौल्यंनिहन्त्याशु महावातरिवाम्बुदम् ॥ ३० ॥

त्रिकत्रयं-पूर्वोक्तंशशीकर्पूरम् ॥

इति स्थौल्यादिकारः ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, वायविडंग, चीता, निसोत, दन्ती, कचूर और भिलावा, यह सब समानभाग, और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवे, सबको एकत्र पीसकर सेवनकरनेसे स्थूलता दूरहोतीहै ॥ ३० ॥

इति स्थौल्याधिकारः ॥

अथोदरचिकित्सा।

सर्वमेवोदरंप्रायोदोषसंहतिजंमतम्।
अतोवातादिशमनीक्रियासर्वाप्रशस्यते ॥ १ ॥
वह्निमन्दत्वमायातिकुक्षौदोषप्रपूरिते।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्मन्दाग्नौमलसंचयात् ॥ २ ॥
रुद्धास्वेदाम्बुवाहीनिजनयत्युदरंनृणाम्।
आध्मानमामताव्यश्चगतिरल्पाकृशाङ्गता ॥ ३ ॥
शोथःसदनमंगानांदाहस्तन्द्राविवर्णता।
संगोविड्वातपद्धयाश्चश्वयथुश्चाशुलक्षणम् ॥ ४ ॥

इति पूर्वरूपम्।

अर्थ–सर्वप्रकारके उदररोग दोषोंके संचय होनेसे होतेहैं, इसकारण इसमें वातादि त्रिदोषोंको शान्तकरनेवाली चिकित्साकरै। वातादि दोष कोखमें पूरित होजानेसे अग्नि मंद होती है, वह मंदाग्नि अजीर्णसे, मलिन अन्न भक्षण करनेसे और मलसंचयसे, स्वेदवह अम्बुवह स्रोतोंको रोक करके उदररोगको उत्पन्न करती है। आध्मान, आमता, अल्पगति, कृशाङ्गता, शोथ, अवसन्नता, दाह, तन्द्रा, विवर्णता, मलरोध, अधोवायुका रोध और पैरोंमें सूजन, यह सब उदररोगके पूर्व लक्षण हैं ॥ १–४ ॥

अथोदररोगहरतक्रयोगाः।

वातोदरीपिबेत्तक्रंपिप्पलीलवणान्वितम्।
शर्करामरिचोपेतंस्वादुपित्तोदरीपिबेत् ॥ ५ ॥
यवानीसैन्धवाजाजीव्योषयुक्तंकफोदरी।
पिबेन्मधुयुतंतक्रंव्यक्ताम्लंनातिपेलवम् ॥ ६ ॥

मधुतैलवचाशुण्ठीशताह्वाकुष्ठसैन्धवैः।
युक्तं प्लीहोदरीजातंसव्योषन्तूदकोदरी॥ ७॥
वृद्धोदरीतुहपुषादीप्यकाजाजिसैंधवैः।
पिबेच्छिद्रोदरीतक्रंपिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्।
त्र्यूषणक्षारलवणैर्युक्तंत्रैदोषिकोदरी॥ ८॥

नातितनु।

अर्थ–वातोदररोगी पीपलका चूर्ण और सैंधानोन मिलाकर तक्र पीवे। पित्तोदररोगी शर्करा और कालीमिरचोंका चूर्ण डालकर तक्र पान करै। कफोदररोगी अजवायन, सैंधानोन, जीरा और त्रिकुटेका चूर्ण तथा सहत मिलाकर खट्टा तक्र पीवे। प्लीहोदररोगी सहत, तेल, बच, सोंठ, सोंफ, कूठ और सैंधानोन मिलाकर तक्रपान करै। जलोदररोगी त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर तक्र पीवे। बद्धोदर रोगी हाऊबेर, अजवायन, जीरा और सैंधेनोनका चूर्ण डालकर तक्र पीवे। छिद्रोदररोगी पीपलका चूर्ण और सहतके साथ तक्र पीवे। और सन्निपातोदररोगी त्रिकुटा, जवाखार और सैंधानोन डालकर तक्रपान करै॥ ५-८॥

अथ सामुद्रादिचूर्णम्।

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानिक्षारंयवानीमजमोदकञ्च।
सपिप्पलीचित्रकशृंगवेरंहिंगुंविडंचेतिसमानिकुर्यात्॥ ९॥
एतानिचूर्णानिघृतप्लुतानिभुंजीतपूर्वंकवलंप्रशस्तम्।
वातोदरीगुल्ममजीर्णयुक्तंवायुप्रकोपंग्रहणीञ्चदुष्टाम्॥
अर्शांसिदुष्टानिचपाण्डुरोगंभगन्दरांश्चैवनिहन्तिसद्यः १०॥

अर्थ–सामुद्रनोन, कालानोन, सैंधानोन, जवाखार, अजवायन, अजमोदा, पीपल, चीता, अदरख, हींग और बिडनोन, यह सब औषधि समानभाग लेकर चूर्ण करले, इस चूर्णको घीमें मिलाकर भोजनके पहिले ग्रासमें भक्षण करै। इससे वातोदर, गुल्म, अजीर्णादि नानाप्रकारके रोग, वायुप्रकोप, दुष्टसंग्रहणी, दुष्टबवासीर, पाण्डुरोग और भगंदर रोग दूर होताहै॥ ९॥ १०॥

अथ पित्तोद्भवेविशेषः।

पित्तोद्भवेतुबलिनंपूर्वमेवविरेचयेत्।
अथवानिर्बलंक्षीरबस्तिशुद्धंविरेचयेत्॥ ११॥

अर्थ-पित्तोदर रोगी जो बलवान् होय तो प्रथम जुल्लाव देवे और जो निर्बल होय तो क्षीरबस्तिके द्वारा दस्त करावे ॥ ११ ॥

अथ नारायणचूर्णम्।

यवानीहपुषाधान्यत्रिफलासोपकुंचिका।
कारवीपिप्पलीमूलमजगंधाशठीवचा ॥ १२ ॥
शताह्वाजीरकंव्योषंस्वर्णक्षीरीचचित्रका।
द्वौक्षारौपौष्करंमूलंकुष्ठंलवणपंचकम् ॥ १३ ॥
विडंगंचसमांशानिदन्त्याभागत्रयंतथा।
त्रिवृद्विशालेद्विगुणेसातलास्याच्चतुर्गुणा ॥ १४ ॥
एतन्नारायणाख्यंचचूर्णंरोगगणापहम्।
नैनत्प्राप्यातिवर्त्तन्तेरोगाविष्णुमिवासुराः ॥ १५ ॥
तक्रेणोदरिभिःपेयोगुल्मिभिर्बदराम्बुना।
आनद्धवातेसुरयावातरोगेप्रसन्नया ॥ १६ ॥
दधिमण्डेनविट्संगेदाडिमाम्बुभिरर्शसिः।
परिकर्त्तेचवृक्षाम्लैरुष्णाम्बुभिरजीर्णके ॥ १७ ॥
भगंदरेपाण्डुरोगेश्वासेकासेगलग्रहे।
हृद्रोगेग्रहणीरोगेकुष्ठेमन्देऽनलेज्वरे ॥ १८ ॥
दंष्ट्राविषेमूलविषेसागरेकृत्रिमेविषे।
तथार्हस्निग्धकोष्ठेनपेयमेतद्विरेचनम् ॥ १९ ॥

अर्थ-अजवायन, हाऊबेर, धनियाँ, त्रिफला, कलौंजी, कालाजीरा, पीपरामूल, वनतुलसी, कचूर, वच, सोया, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, सत्यानाशी कटेरी, चीता, जवाखार, सज्जी, पोहकरमूल, कूठ, पाँचोंनोन और बायबिडंग सब समानभाग, दन्ती तीन भाग निसोत दो भाग, इन्द्रायन दो भाग और सातला चारभाग इन सबको एकत्र पीसकर बारीक चूर्ण करले। यह नारायणनामवाला चूर्ण सर्व रोगोंको नष्ट करैहै। इसको तक्रके साथ सेवन करनेसे उदररोग, बेरके काढ़ेके साथ सेवन करनेसे-गुल्मरोग, सुराके साथ सेवनकरनेसे-आनद्धवात, प्रसन्नानामवाली मदिराके साथ पीनेसे-वातरोग, दधिमंडके

साथ सेवन करनेसे-मलबद्धता, अनारके रसके साथ सेवन करनेसे-बवासीर, विषांविल नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे-परिकर्त्तिका (उदरमें कतरनीसे काटनेकी समान पीडा) और प्रथम स्निग्ध कोष्ठ करके गरम जलके साथ सेवन करनेसे अजीर्ण, भगन्दर, पाण्डुरोग, श्वास, खाँसी, गलग्रह, हृदयरोग, संग्रहणी, कोढ, मन्दाग्नि, ज्वर, जंगमविष, स्थावर विष और कृत्रिम विष, यह सब रोग दस्त होकर दूर होजातेहैं ॥ १२-१९ ॥

अथोदरादिरोगहरक्काथः ।

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठीतिक्तामृतादार्वभयाकषायः ।
सर्वांगशोथोदरकासशूलश्वासान्वितंपाण्डुगदंनिहन्ति २०॥

अर्थ-पुनर्नवा, नीम, पटोल, सोंठ, कुटकी, गिलोय, देवदारु और हरड इनका क्काथ पीनेसे-सर्वाङ्गशोथ, उदररोग, खांसी, शूल, श्वास और पाण्डुरोग दूर होताहै ॥ २० ॥

अथ बिन्दुघृतम् ।

अर्कक्षीरंपलेद्वेचस्नुहीक्षीरंपलानिषट् ।
पथ्याकम्पिल्लकंश्यामाशम्याकगिरिकर्णिका ॥ २१ ॥
नीलिनीत्रिवृतादन्तीशंखिनीचित्रकन्तथा ।
एतेषांपलिकैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २२ ॥
अथास्यमलिनेकोष्ठेबिन्दुमात्रंप्रदापयेत् ।
यावतोऽस्यपिबेद्बिन्दूंस्तावद्वेगान्विरिच्यते ॥ २३ ॥
गुल्मकुष्ठमुदावर्त्तंश्वथुञ्चभगन्दरम् ।
शमयेदुदराण्यष्टौवृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
एतद्बिन्दुघृतन्नामयेनात्यक्तोविरिच्यते ॥ २४ ॥
जलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ--गायका घी २ दो सेर, जल आठ सेर और कल्कके लिये आकका दूध दोपल, थूहरका दूध छे पल, हरड, कबीला, अनन्तमूल, अमलतास, कोयल, नील, निसोत, दन्ती, शंखपुष्पी और चीता, प्रत्येक चार चार तोले । यथाविधिसे घृतको पकाकर जितने इसके बिन्दु पान करै उतने ही दस्त होंगे यह

गुल्म, कोढ, उदावर्त्त, सूजन, भगन्दर और आठ प्रकारके उदररोगोंका नाश करैहै, जैसे इन्द्रका वज्र वृक्षोंको नाश करैहै ॥ २१-२४ ॥

अथ नाराचघृतम्।

लोध्रचित्रकचव्यानिविडंगंत्रिफलात्रिवृत्।
शंखिन्यतिविषाव्योषमजमोदानिशाद्वयम् ॥ २५ ॥
दन्तीचकार्षिकंसर्वंगोमूत्रस्यपलाष्टकम्।
चतुष्पलंस्नुहीक्षीरंराजवृक्षफलंतथा ॥ २६ ॥
एतैश्चतुर्गुणेतोयेघृतप्रस्थंविपाचयेत्।
उदरंचामवातञ्चप्लीहगुल्मभगन्दरान् ॥ २७ ॥
निहन्त्यचिरयोगेनगृध्रसीस्तम्भमूरुजम्।
बृहन्नाराचकन्नामघृतमेतद्यथामृतम् ॥ २८ ॥

अर्थ-गायका घी दोसेर, गोमूत्र एकसेर थूहरका दूध सोलह तोले, लोध, चीता, चव्य, बायबिडंग, हरड, आमला, बहेडा, निसोत, शंखपुष्पी, अतीस, सोंठ, मिरच, पीपल, अजमोदा, हलदी, दारुहलदी और दन्ती इनका क्वाथ आठसेर, यथाविधिसे इस घृतको पकाकर सेवन करनेसे उदररोग आमवात, प्लीहा, गुल्म, भगन्दर, गृध्रसी और ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै। यह बृहन्नाराच नामवाला घृत अमृतकी समान है ॥ २५-२८ ॥

अथ बृहदग्निमुखचूर्णम्।

स्वर्जिक्षारंयवक्षारभल्लातंगजपिप्पली।
अजमोदावचामुस्तादेवदारुविडंगकम् ॥ २९ ॥
पाठादारुनिशाहिंगुधात्रीदाडिमपुष्करम्।
वृद्धदारत्रिवृच्चित्रायवानीजीरकद्वयम् ॥ ३० ॥
कर्पूरोनागरंभार्ङ्गीमरिचंचाम्लवेतसम्।
मण्डूरमभयाशुण्ठीचातुर्जातकरंजकम् ॥ ३१ ॥
आरग्वधंतथापंचलवणानिविचूर्णयेत्।
शिग्रुब्रध्नत्वचक्षारंवारुणीपत्रचिंचिका ॥ ३२ ॥

तिलकाण्डकोकिलाक्षःक्षारश्चैवापमार्गजम् ।
तुल्यांशंमातुलुंगाम्लैर्भावनात्रयभावितम् ॥ ३३ ॥
मुस्ताक्काथैस्त्रिधाभाव्यमार्द्रकोत्थद्रवैस्त्रिधा ।
बृहदग्निमुखोनाम्नाकर्षैकमुदरापहम् ॥ ३४ ॥
गोमूत्रैर्वासुरापानैरारनालैरथापिवा ।
असाध्योदरसाध्यश्चगुल्मंहन्तित्रिदोषजम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-सज्जी, जवाखार, भिलावा, गजपीपल, अजमोदा, वच, नागरमोथा, देवदारु, बायविडंग, पाढ, दारुहलदी, हींग, आमला, अनार, पोहकरमूल, विधारा, निसोत, इमली, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, कपूर, सोंठ, भारंगी, कालीमिरच, अमलवेंत, मंडूर, हरड़, सोंठ, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात, करंज, अमलतास, पाचोंनोन, सेंजिनेकी छाल और जड, इन्द्रायणके पत्ते, इमली, तिलकांड, तालमखाना और चिरचिटा इन छहों औषधियोंका खार, यह सब समान भाग लेकर बारीक चूर्ण पीस विजोरे नीबूके रसकी तीन भावना देवे, फिर नागरमोथेके काढेकी तीन भावना देवे, पश्चात् अदरखके रसकी तीन भावना देवे तो बृहदग्निमुख नामवाला चूर्ण तैयार हो। मात्रा दो तोलेकी है। अनुपान-गोमूत्र या सुरा अथवा कांजी है, यह साध्यासाध्य उदररोग और त्रिदोषज गुलमरोगको नष्ट करैहै ॥ २९-३५ ॥

अथ त्रैलोक्यसुन्दररसः ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंमृताभ्रंसैन्धवंविषम् ।
कृष्णजीरंविडंगञ्चगुडूचीसत्त्वमेवच ॥ ३६ ॥
वचाचैवयवक्षारंप्रत्येकंस्याद्रसार्द्धकम् ।
निर्गुण्डिकाद्रवैश्चाह्निबीजपूररसैर्दिनम् ॥ ३७ ॥
मर्दयेच्छोषयेत्सोऽयंरसस्त्रैलोक्यसुन्दरः ।
गुंजाद्वयंघृतेलेह्यंवातोदरकुलान्तकम् ॥ ३८ ॥
पलैकंचित्रकंश्लक्ष्णंद्विगोमूत्रशकृज्जलैः ।
पाच्यंपादावशेषञ्चघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ३९ ॥

पलैकश्चयवक्षारंपिः ।पक्त्वावतारयेत् ।
तत्कार्षिकंपिबेच्चानुस्निग्धमुष्णञ्चभोजयेत् ॥ ४० ॥

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग और सैंधानोन, अभ्रककी भस्म, मीठा, कालाजीरा, वायविडंग, गिलोयका सत्त्व, वच और जवाखार, प्रत्येक १॥ डेढभाग, इन सबका बारीक चूर्णकर एक दिन सम्हालूके रसमें और एकदिन विजौरे नीबूके रसमें खरलकर सुखालेवे तो त्रैलोक्यसुन्दर रस तैयार हो । इसको दो गुंजाभर घृतके साथ खावे, इससे वातोदर दूर होताहै । घृत दो सेर, गोमूत्र चारसेर, गोवरका रस चार सेर और कल्कके लिये चीतेकी जडका चूर्ण चार तोले और जवाखार चार तोले सबको मिलाकर घृत सिद्धकर त्रैलोक्यसुन्दर रसपै अनुपान करै ॥ ३९–४० ॥

अथोदरारिरसः ।

रसेनताम्रायसभस्मगंधंशिलाहरिद्राजयपालतुल्यम् ।
शिलाजतुंटंकणकञ्चसर्वंविमर्द्यसम्यक्परिभावयेच्च ॥ ४१ ॥
निर्गुण्डिकात्र्यूषणभृंगराजचित्रार्कतोयेनादिनप्रमाणम् ।
क्वाथेननिम्बस्यदिनप्रमाणंसिद्धोरसःस्यादुदरारिसंज्ञः ॥
यथाशनिर्भूधरपक्षपातेतथारसोऽयंह्युदरंनिहन्ति ॥ ४२ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, ताँबेकी भस्म, लोहेकी भस्म, गंध, मनशिल, हलदी, जमालगोटा, शिलाजीत और सुहागा, यह सब समानभाग लेकर बारीक चूर्ण बना सम्हालू, सोंठ, मिरच, पीपल, भांगरा, चीता और आकके रसमें एकदिन खरल करै फिर नीमके काढेमें एकदिन खरल करै तो उदरारिनाम-वाला रस तैयार हो । जैसे वज्र पर्वतोंके शिखरोंको तोड डालताहै वैसेही यह उदरारि रस उदररोगोंको नष्ट करता है ॥ ४१॥४२ ॥

अथ वैश्वानरी वटी ।

शुद्धसूतंसमंगंधंमृतायःसशिलाजतु ।
रसमानंप्रकर्त्तव्यंरसस्यद्विगुणंविषम् ॥ ४३ ॥
त्रिकटुश्चित्रकंकुष्टंनिर्गुण्डीमुसलीरजः ।
अजमोदादशांशेनप्रत्येकञ्चप्रकल्पयेत् ॥ ४४ ॥
पंचांगनिम्बक्वाथेनभावनाचैकविंशतिः ।

·ंगराजरसेसप्त· त्वाक्षौद्रेणलोडयेत् ॥ ४५ ॥
भक्षयेद्‌·रीमात्रांवटिकांतांदिवानिशि ।
श्ले·ोदरंदि हन्त्याशुद्य म्नावैश्वानरीवटी ॥ ४६ ॥
देवदारुवह्निमूलकल्कंक्षीरानुपाययेत् ।
भोजनंव्योषदुग्धंचकुलत्थेनरसेनवा ॥ ४७ ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, लोहेकीभस्म और शिलाजीत, यह सब समानभाग, मीठा दो भाग, सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, कूठ, सम्हालू, मुसली और अजमोदा, यह प्रत्येक औषधि दशांशभाग लेवे, सबका बारीक चूर्ण कर पंचांगनिम्ब (नीमके फल, फूल, पत्र, मूल, छाल) के क्वाथमें इक्कीस भावना देवे, पश्चात् भांगरेके रसमें सातभावना देवे फिर इसमें सहत मिलाकर बेरकी बराबर गोली बनालेवे, एकगोली रातमें तथा दिनमें भक्षण करे तो कफोदर दूर होवे, इसको वैश्वानरवटी कहतेहैं, अनुपान देवदारु और चीतेकी जडका कल्क दूधके साथ त्रिकुटेका चूर्ण, दूध और कुलथीके रसके साथ भोजन करे ॥ ४३–४७ ॥

अथ जलोदरारिरसः ।

रसेनगंधद्विगुणंशिलाचाशिलाचबीजंजयपालकस्य ।
फलत्रयंत्र्यूषणकञ्चचित्रंसर्वंविचूर्ण्यापिविभावयेच्च ४८
दन्तीस्नुहीभृंगरसेपृथक्चसंभाव्यसंशोष्यचसप्तवारान् ।
वयोबलंवीक्ष्यमिदंददीतजातेविवेकेचददीतपथ्यम् ४९॥
अल्पंसतक्रंशिशिरानुपायीजातेबलेतत्पुनरेवदद्यात् ।
तक्रेणरोगःसमुपैतिशान्तिंसिद्धोरसोनामजलोदरारिः ५०

अर्थ–पारा एकभाग, गंधक दो भाग, मैनशिल दो भाग, हलदी दोभाग, जमालगोटा दो भाग, हरड दो भाग, बहेडा दो भाग, आमला दो भाग, सोंठ दो भाग, मिरच दोभाग, पीपल दोभाग और चीता दो भाग इन सबका बारीक चूर्णकर, दन्ती, थूहर और भांगरेके रसमें पृथक् पृथक् सात भावना देकर सुखालेवे । अवस्था और बलको बिचारकर इस रसको सेवनकरे । अनुपान थोडासा तक्र और शीतल जल है । यह जलोदरारि सिद्धरस तक्रके साथ शीघ्रही जलोदर रोगको नष्ट करेहै ॥ ४८–५० ॥

अथ वडवाग्निमुखरसः ।

हिंगुत्रिकटुत्रिफलादेवदारुनिशाद्वयम् ।
भल्लातकंशिग्रुफलंकटुकींचविकांवचाम् ॥ ५१ ॥
शुण्ठीतुल्यंपंचपटुतुल्यंदध्नाविपेषयेत् ।
अन्तर्धूमगतोदग्धःक्षारोयंवडवानलः ॥ ५२ ॥
त्रिदिनंमदिरायुक्तंपिबेद्वाकांजिकैःसह ।
मंदोष्णेनाथवापेयमुदरंगुलमशूलनुत् ॥ ५३ ॥

अर्थ–हींग, त्रिकुटा, त्रिफला, देवदारु, हल्दी, दारुहलदी, भिलावा, सैंजिनेके बीज, कुटकी, चव्य, बच, सोंठ, पाँचोंनोन, यह सब समानभाग लेवे और सबकी बराबर दही लेवे, इन सब औषधियोंको दहीमें पीसकर अन्तर्धूममें दग्धकरै तो वडवानल नामवाला क्षार सिद्ध हो । इसको तीनदिन मदिराके साथ या कांजीके साथ अथवा शृतशीत जलके साथ सेवनकरे तो उदररोग, गुल्म और शूल नष्ट होताहै ॥ ५१–५३ ॥

अथाग्निकुमाररसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंशुद्धतालंमनःशिला ।
तुल्यांशंचैत्रकंमूलंयवमास्रजैर्द्रवैः ॥ ५४ ॥
जम्बीरैश्चतथामर्द्यंतद्गोलंग्रावसंपुटे ।
रुद्ध्वाबहिर्माषपिष्टैस्तयोर्लेप्यश्चसंपुटम् ॥ ५५ ॥
गोधूमपिष्टिकावाथविलिप्यावस्त्रमृत्तिका ।
विशोष्यपाचयेद्यन्त्रेद्विपडयामंसुवालुके ॥ ५६ ॥
क्रमवृद्ध्याग्निनापाच्यंस्वांगशीतंसमुद्धरेत् ।
दशमांशंविषंदत्त्वाविषांशंमृतताम्रकम् ॥ ५७ ॥
ज्वालामुख्याद्रवैःसर्वंभावयित्वात्रिसप्तधा ।
न्यूषणश्वसजीरार्द्रद्रवैर्भाव्यंत्रिसप्तधा ॥ ५८ ॥
रसोह्यग्निकुमारोऽयंसेव्यंगुजाद्वयंसदा ।

ताम्बूलपत्रसंयुक्तमुदरंवातगुल्मजित् ।
काकजंघाकषायश्चह्यनुपानंसदापिबेत् ॥ ५९ ॥

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहरिताल, शुद्धमनशिल और चीतेकी जड़, इन सबको समानभाग लेकर यव और मसूरके क्राथमें तथा जम्बीरीनींबूके रसमें खरलकर गोला बनालेवे, उस गोलेको पत्थरके सम्पुटमें रख ऊपरसे उड़दोंकी पिट्टीका लेपकर बन्दकर देवे, अथवा गेहूंकी पिट्टीसे लेपकर कपरौटी करै फिर सुखाकर आठ प्रहरतक वालुकायंत्रमें पकावे, क्रमसे बढाकर अग्नि देवे, स्वांगशीतल होजानेपर निकालकर चूर्णकरले, फिर इसमें दशभाग विष, विषका चौथा भाग मराहुआतांबा मिलाकर कलिहारीके रसमें इक्कीसवार भावना देवे तो अग्निकुमाररस सिद्ध हो, इसको निरन्तर पानमें रखकर दो गुंजाभर खावे और ऊपरसे काकजंघाका अनुपान करै इससे वातगुल्म दूर होताहै ॥५८-५९॥

अथ वह्निवीर्य्योरसः ।

चतुःसूतस्यगंधाष्टौरजनीत्रिफलाशिला ।
प्रत्येकंस्याद्विभागेनत्रिवृज्जैपालचित्रकम् ॥ ६० ॥
प्रत्येकञ्चैकभागंस्यात्त्र्यूषणंजीरदन्तिका ।
प्रत्येकमष्टभागंस्यातश्लक्ष्णीकृत्यविचूर्णयेत् ॥ ६१ ॥
जयन्तीस्नुक्पयोभृंगीतथाचैरण्डतैलकैः ।
प्रत्येकेनक्रमाद्भाव्यंसप्तवारंपृथक्पृथक् ॥ ६२ ॥
वह्निवीर्यरसोनामनिष्कमुष्णजलैःपिबेत् ।
विरेचनंभवेत्तेनतक्रभक्तंससैन्धवम् ॥ ६३ ॥
दिनान्तेदापयेत्पथ्यंवर्जयेच्छीतलंजलम् ।
नाभ्युत्तरेजलंस्राव्यंकुर्याद्धस्तिजलोदरम् ॥ ६४ ॥

अर्थ-पारा चारभाग, गंधक आठभाग, हलदी, हरड, बहेडा, आमला, मनशिल, प्रत्येक एक एकभाग, निसोत एकभाग, जमालगोटा एकभाग, चीता एकभाग, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, दन्ती प्रत्येक आठ आठ भाग लेकर सबका बारीक चूर्ण करले, फिर इसको अरणी, थूहर और भांगरेके रसकी तथा अण्डीके तेलकी पृथक् पृथक् सात भावना देवे तो वह्निवीर्य नामवाला रस सिद्ध हो, इसको चारमासेभर गरम जलके साथ सेवन करनेसे जुलाब होजाताहै।

तिनके अंतमें तक्र और सेंधेनोनके साथ भात भोजन करै। इसके ऊपर शीतल जल कदापि न पीवे। इसके सेवन करनेके पश्चात् नाभिकी उत्तरकी ओर जलस्राव करै। इससे जलोदररोग दूर होताहै ॥ ६०-६४ ॥

अथ श्लेष्मशैलेन्द्ररसः ।

गंधकंपारदंशुद्धंत्र्यूषणंजीरकद्वयम् ।
शटीशृंगीयवानीचपुष्करंरामठंतथा ॥ ६५ ॥
सैन्धवंयावशूकश्चटंकणंगजपिप्पली ।
जातीकोषाजमोदाचवचायासलवंगकौ ॥ ६६ ॥
धौतूरंकानकंबीजंकट्फलंचव्यकन्तथा ।
प्रत्येकंतोलकंचैषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥ ६७ ॥
पाषाणेविमलेपात्रेघृष्टंपाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसंदत्त्वाअर्कंचित्रकदन्तिका ॥ ६८ ॥
शिग्रुवर्गफंजिकावासानिर्गुण्डीगणिकारिका ।
धत्तूरंकृष्णजीरंचपारिभद्रकपिप्पली ॥ ६९ ॥
कण्टकार्यार्द्रकंतत्रमूलान्येतानिचाहरेत् ।
एवंमूलरसंदत्त्वाघृष्टमातपशोषितम् ॥ ७० ॥
गुंजाप्रमाणवटिकांकारयेच्चचिकित्सकः ।
ततश्चतुर्वटींखादेन्नित्यमार्द्रकसंयुताम् ॥ ७१ ॥
उष्णतोयानुपानंचसर्वव्याधिंनियच्छति ।
विंशतिंश्लैष्मिकांश्चसन्निपातान्सुदारुणान् ॥ ७२ ॥
प्रमेहान्विंशतिंचैवपंचगुल्मंतथापरम् ।
उदराष्टकदुर्नामआमवातंविनाशयेत् ॥ ७३ ॥
पंचपांड्वामयान्हन्तिक्रिमिस्थौल्यामयापहा ।
यथाशुष्केन्धनेवह्निस्तथाचाग्निविवर्द्धनम् ॥
श्लेष्मशैलेन्द्रकोह्ययंरसेन्द्रःपरिकीर्तितः ॥ ७४ ॥

अर्थ-शुद्धगंधक, शुद्धपारा, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, कालाजीरा, कचूर, काकडाशिंगी, अजवायन, पोहकरमूल, हींग, सैंधानोन, जवाखार, सुहागा, गजपीपल, जायफल, अजमोदा, वच, जवासा, लौंग, कनक धतूरेके वीज. कायफल और चव्य, प्रत्येक एकएक तोला लेकर सबका बारीक चूर्णकर उत्तम पत्थरके खरलमें डालकर पत्थरकी मूसलीसे खरल करै, फिर इसमें बेलकी जडका रस, आक, दन्ती, पुनर्नवा, भारंगी, अडूसा, अरणी, कालाजीरा, पारिभद्र, पीपल, कटेरी और अदरख इन सबकी जडका रस डालकर घोटे फिर धूपमें सुखाकर चौटलीकी बराबर गोली बनाले, प्रतिदिन चारगोली अदरखके रसके साथ खावे और ऊपरसे गरमजलका, अनुपानकरे, यह सर्वप्रकारके रोग, बीसप्रकारके प्रमेह, दारुणसन्निपात, २० प्रकारके कफरोग, पाँचप्रकारके गुल्म, आठप्रकारके उदररोग, बवासीर, आमवात, पांचप्रकारके पाण्डुरोग कृमिरोग और स्थौल्यरोगको दूर करताहै। जिसप्रकार सूखे काष्ठमें अग्नि वढतीहै, उसीप्रकार यह कुम्भशैलेन्द्ररुद्ररस अग्निको बढावै है ॥ ६९-७४ ॥

अथ ब्रह्मवटी।

विडंगंदाडिमंकुष्ठंनिम्बत्वग्दहनंवचा।
त्र्यूषंपाठादेवदारुनिशाव्याघ्रनखाभया ॥ ७५ ॥
बिल्वकंरोहिणीचैलात्रिवृत्प्रत्येकमक्षिकम्।
जैपालबीजचूर्णंचदन्तीमूलंपलंपलम् ॥ ७६ ॥
ब्रह्मदण्डीरसप्रस्थंपलमाज्यंपुरातनम्।
पूर्वकल्कयुतंपाच्यंमृद्वग्निनासुपाचितम् ॥ ७७ ॥
भक्षयेद्बदराकारांनित्यंब्रह्मवटींशुभाम्।
चतुःषष्ठ्युत्तरव्याधीन्साध्यासाध्यान्निहन्त्यलम् ॥७८॥

अर्थ-बायबिडंग, अनार, कूट, नीमकीछाल, चीता, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ, देवदारु, हलदी, व्याघ्रनख, हरड, बेल, कुटकी, इलायची और निसोत प्रत्येक दो दो तोले, जमालगोटेका चूर्ण और दन्तीकी जड प्रत्येक चार चार तोले, ब्रह्मदंडीका रस चौंसठ तोले, पुराना घी चार तोले, इन सबको मिलाकर मृदु अग्निसे पकावे, पश्चात् बेरकी बराबर गोलियें बना लेवे, इनको

ब्रह्मवटी कहतेहैं। प्रतिदिन एक गोली खावे, इससे चौंसठ प्रकारकी साध्यासाध्य उत्तर व्याधियाँ नष्ट होतीहैं ॥ ७९-७८ ॥

अथोदरादिरोगप्रयोगः।

स्नुह्यर्कदन्तीधववह्निफञ्जीशोथारिपाशीशनकन्दकन्दः।
जामातृपालिन्धीमाणाग्निबाणाबंडांगतालंखरमंजरीकः ७९
प्रत्येकशःक्षीरचतुष्पलांशस्तथापलाशस्यसमैःसमैःस्यात्।
चतुर्गुणेक्वाथजलाष्टशेषेपचेद्विधिज्ञोविधिशुद्धलौहम्॥८०॥
चूर्णीकृतंतत्पुटितंपुटेनतन्तुच्युतंषोडशिकंपलानाम्।
वर्षाभुभल्लातकवह्निदन्तीत्रिवृद्गवाक्षीरविबुद्धमूलम्८१॥
कंचुकीतालमूलीचपीवरीगिरिकर्णिका।
नीलिनीचबृहत्पत्रंशम्याकबलमासनम्॥ ८२ ॥
चतुष्पलांशंक्वथिताष्टशेषंस्नुह्यर्कदुग्धेनपलाष्टकेन।
दत्त्वापचेत्ताम्रमयेचपात्रेपलैर्द्विरष्टौहविषस्तथैव॥
अमूनिचूर्णानिचसिद्धशीलेक्षिपेत्तथालोहरजःसमानि॥
लवणानिचसर्वाणिक्षाराःपंचोपणानिच॥
मरिचंचाजमोदाचहिंगुभल्लातकानिच॥ ८४ ॥
चित्रकस्तालमूलीचगवाक्षीत्रिवृतामृता।
वर्षाभूशूरणोमाणोविडंगंदन्तिग्रन्थिकम्॥ ८५ ॥
पलंमाक्षिकचूर्णस्यकंगुष्ठस्यशिलाजतोः।
गुग्गुलोर्गन्धकस्यापिपारदस्यपलंपृथक्॥ ८६ ॥
शीतेपलाष्टकंक्षौद्रंदत्त्वामधुघृतान्वितम्।
लोहचूर्णेनसंघृष्यलोहपात्रेचिरंभिषक्॥ ८७ ॥
विधिज्ञोक्तेनविधिनाहिताहारविहारवान्।
अनुपानंतथासात्म्यंकुर्वन्नित्यंनिरामयः॥ ८८ ॥
उदरेषुचसर्वेषुशोथेषुविविधेषुच।

अर्शोरोगविशेषेणगुल्मपाण्डौसकामले ॥
विधिनोक्तेनकुर्वाणोनरोरोगान्नविन्दति ॥ ८९ ॥
वह्निर्भल्लातकम् । सोथारिः पुनर्नवा ।

अर्थ—थूहर, आक, दन्ती, धवा, भिलावा, भारंगी, पुनर्नवा, वरना, चमकाराल, वनजमींकन्द, कुलकुल, करियावासाङ, मानकन्द, चीता, शान्ता, पियाबाँसा, चिरचिटा और ढाक प्रत्येकका क्षार, चार चार पल लेकर चौगुने जलमें पकावे, जब आठवाँभाग जल शेष रह जाय तब उतारले, पश्चात् शुद्ध लोहेको अग्निमें पकाकर बारंबार इस क्षार जलमें बुझाकर जारण करे। फिर पुनर्नवा, भिलावा, चीता, दन्ती निसोत, गोरखककडी, आककीजड, क्षीरकंचुकी, मुसली, सतावर, अपराजिता, नीलकावृक्ष, वटपत्र, अमलतास, खिरेटी और विजयसार प्रत्येक औषधि चार पल, जल सबसे चौगुना लेवे, सबको मिलाकर औटावे, जब जल आठवाँभाग शेष रहे तब उतार लेवे, फिर इस काथमें थूहरका दूध चार पल, आकका दूध चार पल और गायका घी सोलहपल मिलाके ताँबेके पात्रमें पकावे, जब गाढा होजाय तब पूर्वोक्त लोहका चूर्ण १६ पल पाँचोंनोन, त्रिक्षार, पंचकोल, मिरच, अजमोदा, हींग, भिलावा चीता, मुसली गोरखककडी, निसोत, गिलोय, पुनर्नवा, जमींकन्द, मानकन्द, वायविडंग दन्तीकीजड और पीपलामूल प्रत्येकका चूर्ण एक पल, सोनामाखीका चूर्ण मुरदासिंग, शिलाजीत, गूगुल, गंधक और पारा प्रत्येक एक पल, शीतल होनेपर आठ पल सहत मिला देवे, सहत, घृत और लोहेके चूर्णके साथ लोहेके पात्रमें घिसकर उत्तम बासनमें भरके रखदेवे। मात्रानुसार सेवन करे। इसके ऊपर हित आहार और विहार करे। यथायोग्य अनुपान करै। इससे मनुष्य नीरोग होजातेहैं। यह—सर्वप्रकारके उदररोग, विविध प्रकारके शोथरोग अर्शरोग, गुल्म, पाण्डुरोग और कामलादि रोगोंको दूर करैहै ॥ ७९-८९ ॥

अथ वह्निकुमाररसः।

गुल्मरामठटंकानिसैन्धवंधान्यजीरकं ।
यवानीमरिचंशुण्ठीलवंगैलाविडंगकम् ॥ ९० ॥
प्रत्येकंतोलकंचूर्णंलोहचूर्णन्तुतत्समम् ।
रसस्यगंधकस्यापिपलैकंकज्जलीशुभा ॥ ९१ ॥
घृतेनमधुनाखाद्योरसोवह्निकुमारकः ।

यकृत्प्लीहोदरानाहंहन्तिगुल्मंहलीमकम् ॥ ९२ ॥
बलवर्णाग्निजननःकान्तिपुष्टिविवर्द्धनः ।
मासमेकंप्रकर्त्तव्यंयुक्त्यावातुटिवर्द्धनम् ।
श्रीमद्गहननाथेनरचितोविश्वसंपदि ॥ ९३ ॥

अर्थ–गठिवन. हींग. सुहागा, सेंधानोन. धनियां. जीरा, अजवायन, काली-मिरच, सोंठ. लौंग, इलायची और वायविडंग. प्रत्येक एक एक तोला लेकर सबका बारीक चूर्ण करले और लोहेका चूर्ण सबकी बराबर लेवे. पारा और गंधककी कज्जली चार तोले लेवे. सबको मिलाकर घृत और सहतके साथ सेवन करे तो यह वह्निकुमारनामवाला रस यकृत. प्लीहा. उदररोग. आनाह, गुल्म और हलीमक रोगको दूर करेहै. बल. वर्ण और अग्निको बढावेहै, कान्ति और पुष्टिको करेहै. इसको क्रमवृद्धिसे एक महीनेतक सेवन करे । यह श्रीमद् गहननाथ वैद्यने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै ॥ ९०–९३ ॥

अथ पिप्पल्यादि लोहम् ।

पिप्पलीमूलपिण्डाभत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवैः ।
योजितोनियतंहन्तिलोहःसर्वोदरामयम् ॥ ९४ ॥
पिण्डाभो गंधरसः । इन्दुः कर्पूरम् ।
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णंग्राह्यम् । नवायसमत्र श्रेष्ठम् ।

अर्थ–पीपरामूल. बोल, नागरमोथा. वायविडंग. चीता, हरड, बहेडा, आमला. सोंठ. पीपल, मिरच. कपूर और सेंधानोन इन सबका चूर्ण एकभाग और लोहेका चूर्ण सबकी बराबर लेवे. सबको बारीक पीसकर सेवन करे तो सर्वप्रकारके उदररोग दूर होवें ॥ ९४ ॥

अथ त्रिकट्वाद्यं लोहम् ।

त्रिकटुत्रिफलादन्तीमार्गत्रिमदशुण्ठकैः ।
पुनर्नवासमायुक्तैर्युक्तोहन्तिसुदुर्जयम् ।
लौहःशोथोदरस्थौल्यंमेदोगदसमंसमम् ॥ ९५ ॥
मार्गोऽपामार्गः । शुण्ठको मूलकशुण्ठकः ।

अर्थ–सोंठ. मिरच. पीपल. हरड. बहेडा, आमला, दन्ती. चिरचिटा, नागरमोथा. वायविडंग. चीता. मूर्खामूली और पुनर्नवा यह सब द्रव्य समान-

भाग लेकर सबका चूर्णकर सबकी बराबर लोहेका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे शोथोदर, स्थूलता और मेदरोग नष्ट होताहै ॥ ९५ ॥

अथ शोथोदरादिलौहम्।

पुनर्नवामृतावह्निगवाक्षीमानकंस्नुही।
सूर्यावर्त्तार्कमूलञ्चपृथगष्टपलंजले ॥ ९६ ॥
पादशेषेशृतंद्रोणेसुपूतेवस्त्रछानिते।
विधिवन्मारितंपूतंपुटितंपुटनौषधैः ॥ ९७ ॥
लौहचूर्णाष्टपलिकंपचेदाज्यसमंभिषक्।
अर्कस्यद्विपलंक्षीरंस्नुहीक्षीरंचतुष्पलम् ॥ ९८ ॥
पलद्वयंकौशिकस्यगंधकस्यपलन्तथा।
पलार्द्धंपारदंतत्रविधिवच्छोधितंक्षिपेत् ॥ ९९ ॥
सिद्धेऽवतारितेचूर्णंवक्ष्यमाणंनिधापयेत्।
कंगुष्टवह्निकन्दालांगवाक्ष्याघंटकर्णजम् ॥ १०० ॥
पलाशस्यचबीजानांकंचुकीतालमूलिका।
त्रिफलाद्याःक्रिमिरिपोस्त्रिवृद्दन्तीभवन्तथा ॥ १०१ ॥
सूर्यावर्त्तागवाक्ष्यश्चत्र्यपाभूवज्रवह्निचम्।
एषांलौहसमांमात्रांभाण्डेस्निग्धेसुगोपिते ॥ १०२ ॥
संस्थापितेततःशुद्धोगुटीःकुर्याद्विचक्षणः।
येचशोथाःक्षुद्रवाराश्चिरकालानुबन्धिनः ॥ १०३ ॥
उदराःपाण्डुरोगाश्चकामलाःसहलीमकाः।
अर्शोभगन्दरंगुल्मंक्रिमिकुष्ठहरंपरम् ॥ १०४ ॥
येचान्येविविधारोगाश्चिरकालानुबंधिनः।
तेसर्वेनाशमायान्तिप्रयोगादस्यशासनात् ॥ १०५ ॥
नातःपरतरंकिंचिच्छोथोदरविनाशनः ॥ १०६ ॥

अत्रपुनर्नवादीनामष्टद्रव्याणांप्रत्येकमष्टपलम्।
वज्रवल्लीअस्थियुक्।

अर्थ–पुनर्नवा, गिलोय, चीता, गोरखककडी, मानकन्द थूहर, सूर्यावर्त्त और आककीजड, प्रत्येक आठ आठ पल लेकर एक द्रोण जलमें औटावे, जब चौथाभाग जल शेषरहे तब उतारकर निर्मलवस्त्रमें छान लेवे, फिर इस क्काथमें पुटपाकविधिसे माराहुवा लोहा आठपल, घी आठपल, आकका दूध दोपल, थूहरका दूध चारपल, गूगुल दोपल, गंधक चारतोले, पारा दो तोले मिलाकर पकावे, जब पककर गाडा होजाय तब मुरदासिंग, चीता, जमीकन्द, गोरखककडी, घण्टाकर्ण, टाकके बीज, क्षीरकंचुकी, मुसली, हरड, बहेडा, आमला, वायविडंग, निसोत, दन्ती, हुलहुल, इन्द्रायण, पुनर्नवा और हाडजोडा इन सबका चूर्ण लोहेकी समान मिलाकर उत्तम चिकने वासनमें भरके रखदेवे । पश्चात् इसकी गोलियें बनालेवे । यह–असाध्य शोथरोग, उदररोग, पाण्डुरोग कामला, हलीमक, बवासीर, भगन्दर, गुल्म, कृमिरोग, कुष्ठरोग और अन्यान्य असाध्य तथा बहुतदिनोंके रोगोंको दूरकरै है । शोफोदरको दूर करनेवाली इससेपरे कोई दूसरी औषधि नहीं है ॥ ९६–१०६ ॥

अथोदररोगिणामहितानि ।

औदकानूपजंमांसंशाकंपिष्टकृतंतिलाः ।
व्यायामाध्वदिवास्वप्नंयानपानंविवर्जयेत ॥ १०७ ॥
तथोष्णलवणाम्लानिविदाहीनिगुरूणिच ।
नाद्यादन्नानिजठरीतोयपानंविवर्जयेत् ॥ १०८ ॥

इत्युदराध्यायः ।

अर्थ–जलचरजीवोंका मांस, अनूपदेशके जीवोंका मांस, शाक, पिट्ठी, तिल, व्यायाम, मार्गचलना, दिनमें सोना, अश्वादिपै चढना, मद्यपान, उष्ण, लवण, अम्ल, दाहजनक और भारी द्रव्य तथा जलपान, यह सब उदररोगी त्याग देवे ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

इति उदररोगाधिकारः ।

अथ यकृत्प्लीहोदरचिकित्सा ।

विदाह्यभिष्यन्दिरतस्यजन्तोःप्रदुष्यचात्यर्थमसृक्कफश्च ।
प्लीहाभिवृद्धिंकुरुतःप्रसिद्धांप्लीहाह्वमेनंजठरंवदन्ति ।
तद्वामपार्श्वेपरिवृद्धिमेतिविशेषतःसीदतिचातुरोऽत्र ॥ १ ॥
प्लीहानिर्वेदनःश्वेतःकठिनःस्थूलएवच ।

महापरिग्रहःशीतःश्लेष्मसंभवउच्यते ॥ २ ॥
सज्वरःसपिपासश्चस्वेदनस्तीव्रवेदनः ।
पीतमादौविशेषेणप्लीहापैत्तिकउच्यते ॥ ३ ॥
नित्यमाबद्धकोष्टश्चनित्योदावर्त्तपीडितः ।
वेदनाभिःपरीतश्चप्लीहावातिकउच्यते ॥ ४ ॥
क्रमोविदाहसंमोहौवैमल्यंगात्रगौरवम् ।
रक्तोदभ्रममूर्च्छाभिर्ज्ञेयंरक्तजलक्षणम् ॥ ५ ॥
त्रयाणामपिरूपाणिप्लीहासाध्येभवन्तिहि ।
स्नेहस्वेदविरेकादिविधेयंप्लीहरोगिणे ।
अग्निकर्म्मचकुर्वीतभिषग्वातकफोत्थजे ॥ ६ ॥

अर्थ—विदाही और अभिष्यन्दि द्रव्य भोजनकरनेवाले मनुष्योंके रक्त और कफ अत्यन्तदूषित होकर उदरके वामपार्श्वमें प्लीहाको बढ़ाकर शरीरमें अप्रसन्नता उत्पन्न करतेहैं. इसीको प्लीहारोग कहतेहैं। कफसे उत्पन्न हुई प्लीहा पीडारहित. सफेद, कठिन. स्थूल. दृढमूल और शीतल होतीहै। पित्तसे उत्पन्नहुई प्लीहा ज्वर. प्यास. घर्म्म. अत्यन्त पीडा. और पीतवर्णतायुक्त होतीहै। वातसे उत्पन्नहुए प्लीहारोगमें हरसमय मलबद्धता. उदावर्त्त और पीडा होतीहै रुधिरसे उत्पन्नहुए प्लीहारोगमें कान्ति, दाह. मोह. विमलता. अंगभार. पीडा. भ्रम शूलकी समान पीडा और मूर्च्छा होती है। जिसमें तीनोंदोषोंके लक्षण मिलें वह प्लीहारोग असाध्य होताहै। सर्वप्रकारके प्लीहारोगोंमें स्नेह, स्वेद और विरेचनादि विधि तथा कफवातज प्लीहारोगमें अग्निकर्म्म विधि करनी चाहिये ॥ १–६ ॥

अथ प्लीहहरचूर्णम्।

यवानिकाचित्रकयावशूकपड्ग्रन्थिदन्तीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेताद्विनिहन्तिचूर्णमुष्णाम्बुनामस्तुचतत्रनित्यम् ७ ॥

अर्थ—अजवायन. चीता, जवाखार, पीपलामूल. दन्ती और पीपल इन सब का समान भाग चूर्ण गरम जल और दहीके पानीके साथ सेवन करनेसे प्लीहारोग दूर होताहै ॥ ७ ॥

अथान्यप्रयोगः ।

तालपुष्पभवःक्षारःसगुडःप्लीहनाशनः ॥ ८ ॥

अर्थ-ताड़के फूलोंका खार गुड़के साथ सेवन करनेसे प्लीहारोग दूर होता-है ॥ ८ ॥

अथान्यत्प्लीहघ्नचूर्ण ।

रसेनजम्बीरफलस्यशंखनाभीरजःपीतमवश्यमेव ।
कर्षप्रमाणंशमयेदशेषंप्लीहामयंकूर्म्मसमानमाशु ॥ ९ ॥
सप्तरात्रान्निहन्त्याशुप्लीहानमतिदारुणम् ।
प्लीहजिच्छरपुंखायाःकल्कस्तक्रेणसेवितः ॥ १० ॥

अर्थ-शंखनाभिका चूर्ण जम्भीरीनींबूके रसके साथ सेवनकरनेसे प्लीहा-रोग दूर होताहै । शरफोंके चूर्णको तक्रके साथ पीनेसे प्लीहारोग दूर होताहै ॥ ९ ॥ १० ॥

अथाभयालवणम्।

पारिभद्रपलाशार्कस्नुह्यपामार्गचित्रकम् ।
वरुणाग्निमन्थमुष्कश्वदंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥ ११ ॥
पूतिकास्फोटकुटजकोषातक्यःपुनर्नवाः ।
समूलपत्रशाखाश्चक्षोदयित्वाप्युलूखले ॥ १२ ॥
तिलनालप्रदीप्ताग्निसुदग्धंभस्मशीतलम् ।
क्षारप्रस्थंगृहीत्वातुन्यसेत्पात्रेदृढेनवे ॥ १३ ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ।
पूर्ववत्क्षारकल्केनसाधयेच्चविचक्षणः ॥ १४ ॥
प्रस्थमेकंचलवणंतदर्द्धश्चहरीतकी ।
तुल्याम्बुभागंगोमूत्रंसाधयेन्मृदुनाग्निना ॥ १५ ॥
किंचिद्द्रास्येनसान्द्रेणसम्यक्सिद्धन्तुरक्षयेत् ।
अजाजीत्र्यूषणंहिंगुयवानीपुष्करंशटी ॥ १६ ॥
एतैरर्द्धपलैर्भागैश्चूर्णीकृत्यप्रदापयेत् ।

लवणञ्चाभयानामभक्षणीयंयथाबलम् ॥ १७ ॥
व्याधीनवेक्ष्यमतिमाननुपानंयथाहितम् ।
यावत्कोष्ठगतान्रोगान्निहन्त्याशुनसंशयः ॥ १८ ॥
यकृत्प्लीहोदरानाहगुल्माष्ठीलाग्निसादजित् ।
प्रतितून्यार्त्तहृद्रोगशर्कराश्मविनाशनम् ॥ १९ ॥
लवणंसैन्धवम् ।

अर्थ-फरहद, ढाक, आक, थूहर, चिरचिटा, चीता, वरना, अगेथू, मोखा, गोखुरू, कटेरी कटाई, पूतिकरंज, लाल कचनार, कुडा, कडवी तोरई और पुनर्नवा, इन सब औषधियोंको मूल पत्र और शाखाओं सहित लेकर ऊखलीमें कूटकर तिलकी लकडियोंकी अग्निमें जलावे, जब यह शीतल होजाय तब इसमेंसे दो सेर क्षार लेकर एक द्रोण जलमें उत्तमपात्रमें पकावे, जब चौथा भाग शेष रहै तब उतारकर, छानलेवे, फिर इस छनेहुए क्षारजलमें सेंधानोन दो सेर, हरड एकसेर और गोमूत्र सोलह सेर, मिलाकर मंद मंद अग्निसे पकावे. जब गाढा होजाय तब जीरा, सोंठ, पीपल, काली मिरच, हींग, अजवायन. पोहकरमूल और कचूरका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोले मिलादेवे । इस अभयालवणको बलाबलका विचार कर भक्षण करे । व्याधिको विचारकर अनुपान करे । यह अभयालवण सर्वप्रकारके कोष्ठगत रोग, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, आनाह, गुल्म, आष्ठीला, मन्दाग्नि, प्रतूनिवात, हृदयरोग, शर्करा और पथरीरोगको दूर करैहै ॥ ११-१९ ॥

अथ गुडपिप्पली ।

पलैकंगुडमादायपिप्पलीञ्चतथैवच ।
हिंगुत्रिकटुकादीनांसैन्धवानांद्विमापिकम् ॥ २० ॥
चित्रकञ्चविडञ्चैवद्वौक्षारौशिखरीन्तथा ।
तालपुष्पंकोकिलाक्षंचिंचाक्षारंसफेनकम् ।
स्नुहीक्षीरसमायुक्तंप्लीहज्वरविनाशनम् ॥ २१ ॥

अर्थ-गुड चारतोले, पीपल चारतोले, हींग, त्रिकुटा, सेंधानोन, चीता, बिरिया संचरनोन, जवाखार, सज्जी, चिरचिटा, तालके फूल, तालमखाना, इमलीका

क्षार, समुद्रफेन और थूहरका दूध, प्रत्येक दो दो मासे लेकर गुडपाकविधिसे पाक करके सेवन करनेसे प्लीहज्वर विनष्ट होताहै ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ चित्रकघृतम् ।

चित्रकस्यतुलाक्वाथेघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
आरनालन्तुद्विगुणंदधिमण्डंचतुर्गुणम् ॥ २२ ॥
पंचकोलकतालीसक्षारैर्लवणसंयुतैः ।
द्विजीरकनिशायुग्मेमरिचन्तत्रदापयेत् ॥ २३ ॥
प्लीहगुल्मोदराध्मानपांडुरोगारुचिज्वरान् ।
बस्तिहृत्पार्श्वकट्यूरुप्लीहोदावर्त्तपीनसान् ॥ २४ ॥
हन्यात्पीतंतदर्शोघ्नंशोथघ्नंवह्निदीपनम् ॥
पुनर्नवकरंजापिभस्मकञ्चनियच्छति ॥ २५ ॥

दधिमण्डो दधिमस्तु ।
क्षारो यवक्षारः ।
लवणं सैन्धवं केचित्तु द्वौक्षारौपंचलवणानिददति ।

अर्थ–गायका घी दो सेर, चीतेका क्वाथ १२॥ साढे बारहसेर, काँजी चारसेर, दहीका तोड़ आठसेर और कल्कके लिये पंचकोल, तालीसपत्र, जवाखार, सज्जी, पाँचोंनोन जीरा, कालाजीरा, हलदी, दारुहलदी और कालीमिरच प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे । इस घृतको सेवन करनेसे प्लीहा, गुल्म, उदररोग आध्मान, पाण्डुरोग, अरुचि, ज्वर, बस्तिरोग, हृदयरोग, पसलियोंकी पीड़ा, कटिरोग, ऊरुरोग, प्लीहा, उदावर्त्त, पीनस, बवासीर और सूजन दूर होतीहै, तथा अग्नि दीपन होतीहै ॥ २२–२५ ॥

अथ महारोहितकघृतम् ।

रोहीतकात्पलशतंक्षोदयेद्दृढशाठकम् ।
साधयित्वाजलद्रोणे चतुर्भागावशेषितम् ॥ २६ ॥
घृतप्रस्थंसमावाप्यच्छागीक्षीरंचतुर्गुणम् ।
तस्मिन्दद्यादिमान्सर्वान्भागतश्चाक्षसंमितान् ॥ २७ ॥

व्योषंफलत्रिकंहिंगुयवानीतुम्बुरंविडम् ।
अजाजीकृष्णलवणंदाडिमंदेवदारुच ॥ २८ ॥
पुनर्नवांविशालांचयवक्षारंसपौष्करम् ।
विडंगंचित्रकंचैवहपुषांचविकांवचाम् ॥ २९ ॥
एतैर्घृतंविपक्वञ्चस्थापयेद्राजनेशुभे ।
पाययेच्चपलंमात्रांव्याधिंबलमवेक्ष्यच ॥ ३० ॥
रसकेनाथयूषेणपयसावापिभोजयेत् ।
उपयुक्तेघृतेतस्मिन्व्याधीन्हन्यादिमान्बहून् ॥ ३१ ॥
यकृत्प्लीहोदरञ्चैवप्लीहशूलंयकृत्तथा ।
कुक्षिशूलंयकृच्छूलंपार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ३२ ॥
विबन्धशूलंशमयेत्पाण्डुरोगान्सकामलान् ।
छर्द्यतीसारशूलघ्नंतंत्रीज्वरविनाशनम् ॥
महारोहितकंनामप्लीहघ्नंतुविशेषतः ॥ ३३ ॥

अर्थ—गायका घी दोसेर, बकरीका दूध, आठसेर क्वाथके लिये रोहेडा, साढे-बारहसेर और सूखेबेर चारसेर, जल बत्तीस सेर, शेष चारसेर और कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, हींग, अजवायन, धनियां, बिरिया संचरनोन, जीरा, कालानोन, अनारकी छाल, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायण, जवाखार, पोहकरमूल, वायबिडंग, चीता, हाऊबेर, चव्य और बच, प्रत्येक दो दो तोले लेवे। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकर उत्तम बासनमें भरके रखदेवे। इसको चार तोलेभर व्याधि और बलको विचारकर सेवन करे। मांसरस, मृगादिका यूष, और दूधके साथ भोजन करे। यह घृत नाना प्रकारके रोग, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, प्लीहशूल, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, अरुचि, विबन्धशूल, पाण्डुरोग, कामलारोग, वमन, अतिसार, शूल और तंत्रीज्वरको दूर करैहै यह महारोहितक घृत विशेष करके प्लीहारोगको दूर करै है ॥ २६–३३ ॥

अथ वंगेश्वरोरसः ।

सूतभस्मवंगभस्मपलैकैकंविमर्दयेत् ।

गंधकं त्रिफलाताम्रं प्रत्येकञ्च चतुष्पलम् ॥ ३४ ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तं मेलकीकृतम् ।
रुद्ध्वाथ भूधरे पच्यात्पुटकेन समुद्धरेत् ॥ ३५ ॥
एष वंगेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदरं जयेत् ।
घृतेर्गुञ्जाद्वयं लेह्यं निष्कं श्वेतपुनर्नवा ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ ३६ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म एकपल, वंगकी भस्म एकपल, गंधक, त्रिफला और ताँबा प्रत्येक चार चार पल, सबको एकत्र कर एकदिन आकके दूधमें खरल करै, पश्चात् गोला बनाकर भूधरयंत्रमें फूंक देवे तो वंगेश्वर रस सिद्ध हो । इसको दो रत्तीभर घृतके साथ सेवन करै, पश्चात् चार मासे सफेद पुनर्नवाको अथवा हलदीको गोमूत्रमें पीसकर पीवे तो प्लीहा, गुल्म और उदररोग दूर होवे॥३४–३६॥

अथ प्लीहाशनिरसः ।

मृतेन वंगं तु समं नियोज्यं तत्तुल्यखण्डेन च गंधकेन ।
विमर्दयेदर्करसेन योज्यं विलिप्य मूषां च पुटं ददीत ॥ ३७ ॥
देयो रसस्तेन विभावयेच्च रसो भवेद्वासुकिभूषणाख्यः ।
सप्लीहगुल्मस्य च नाशनाय विनिर्मितो भेषजरूपवज्रः ॥३८॥

अर्थ–पारा, वंग, खांड और गंधक यह सब समानभाग लेकर आकके दूधमें खरल कर गोला बनालेवे, पश्चात् इस गोलेसे मूषाके मध्यभागको लीप कर पुट देवे, फिर आकके रसकी भावना देवे तो वासुकीभूषण रस सिद्ध हो यह प्लीहा और गुल्मको नाश करनेके लिये भेषजरूप वज्र निर्माण किया-है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अथाग्निगर्भावटिका ।

शुद्धं रसं पलं ग्राह्यं गंधकं द्विपलं भवेत् ।
लोहं टंकं वचा कुष्ठं रामठं त्रिकटुं निशाम् ॥ ३९ ॥
रसार्द्धभागमानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ।
माणालवचंटाकर्णानां त्रिफलानां रसेन च ॥ ४० ॥
रक्तीषोडशमानेन वटिका परिनिर्मिता ।

अग्निगर्भेयमुदिताप्लीहगुल्मोदरापहा ॥ ४१ ॥
शूलघ्नीयकृतंहन्यादष्ठीलांकामलानिच ।
हलीमकंचपाण्डुत्वंक्रिमिकुष्ठविनाशिनी ॥ ४२ ॥
चंद्रनाथेनगदितारसमङ्गलभूषिता ।
लवंगयोगेकर्त्तव्यामहाग्निदायिनीमता ॥ ४३ ॥
आनाहकासशमनीव्रणविस्फोटनाशिनी ।
संग्रहग्रहणींहन्याच्छ्लेष्मदोषोद्भवामपि ॥ ४४ ॥

अर्थ–शुद्धपारा एक पल, गंधक दोपल, लोहा, सुहागा, वच, कूट, हींग, त्रिकुटा और हलदी प्रत्येक दो दो तोले ले सबका एकत्र चूर्ण कर मानकन्द, जमीकन्द, घंटाकर्ण और त्रिकुटेके रसमें खरल करे, पश्चात् सोलह सोलह रत्तीकी गोली वनालेवे, इनको अग्निगर्भा कहतेहैं। यह प्लीहा, गुल्म, शूल, उदररोग यकृत्, अष्ठीला, कामला, हलीमक, पाण्डुरोग, क्रिमि और कुष्ठरोगको नष्ट करैहै। यह रसरूपी मंगलसे भूषित श्रीमान् चन्द्रनाथने कही है, इनको लवंगके साथ सेवन करनेसे अग्निदीपन होतीहै, तथा आनाह, खाँसी, व्रण विस्फोट और कफसे उत्पन्न हुई संग्रहणी दूर होतीहै ॥ ३९–४४ ॥

अथ रोहितकाद्यंलौहम् ।

त्रिकत्रयसमायुक्तंरोहीतकयुतंत्त्रयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्चयकृतंहन्तिदारुणम् ॥ ४५ ॥
अत्रत्रिकटुत्रिफलात्रिमदसर्वचूर्णसमंलौहम् ॥

अर्थ–हरड, वहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, बायविडंग, चीता और रोहेडा यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण एकत्र पीसकर सेवन करनेसे प्लीहा, अग्रमांस और यकृत् रोग दूर होताहै ॥ ४५ ॥

अथ यकृत्प्लीहोदरहरलौहम् ।

लौहार्द्धमभ्रकंशुद्धंसूतमभ्रार्द्धभागिकम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात्त्रिफलांसार्द्धचाभ्रकात् ॥ ४६ ॥
द्विरष्टवारिणोभागमष्टशेषन्तुकारयेत् ।

तेनच। विशेषेणसमेनाज्येनयत्नतः ॥ ४७ ॥
रसेनबहुपुत्रायाद्विगुणंक्षीरसम्मितम् ।
लौहमप्यापचेद्दव्यांपात्रेचायसिमृन्मये ॥ ४८ ॥
दिव्यौषधिहतंलौहंपुटितंपुटनौषधैः ।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तुवह्निनामृदुनाशनैः ॥ ४९ ॥
अभ्रकंनिहतंकृष्णसूतकंविधिमूर्च्छितम् ।
अयसश्चार्द्धभागैस्तुआदौपाकेविनिक्षिपेत् ॥ ५० ॥
कन्दकापालिकाचव्यंविडंगंसबृहद्दलम् ।
शरपुंखाचपाठाचचित्रकंचमहौषधम् ॥ ५१ ॥
लवणानिचसर्वाणिसक्षारंवृद्धदारकम् ।
दीप्यकश्चतथासिक्थंलौहाभ्रकसमंक्षिपेत् ॥ ५२ ॥
प्लीहोदरयकृद्गुल्मान्हन्तिक्षाराग्निभिर्विना ।
प्रयोगोऽयंमहावीर्योलौहोलौहविदांवरः ॥ ५३ ॥
प्लीहोदरविनाशायदद्याद्द्वेद्वेपुटेपृथक् ।
मानेनघण्टाकर्णेनसूरणेनाधिकंपुनः ॥ ५४ ॥
मिलितलौहाभ्रकात्रिगुणात्रिफला ।
शतावरीरसलौहाभ्रकाद्दिगुणंक्षीरंच ।
कन्दकापालिकेआकन्दःमूरणोवा ।

अर्थ–लोहे और अभ्रकसे तिगुना त्रिफला लेकर १६ सोलहगुने जलमें पकावे जब आठवाँ भाग जल शेष रह जाय तब उतारले, पश्चात् इसमें लोहे और अभ्रकसे दुगुना सतावरका रस और दूध, लोहा १ एकभाग, अभ्रक आधा-भाग, पारा चौथाई भाग और आककी जड़, चव्य, वायविडंग, पटानी लोध, शरफोंका, पाढ़, चीता, सोंठ, पाँचोंनोन, जवाखार, विधारा, अजवायन और मोम प्रत्येक १॥ डेढ़ भाग मिला देवे । पश्चात् इसको दोबार पुटपाककी विधिसे पकावे, और मानकन्द, जमीकन्द और घंटाकर्णादि औषधियोंके रसमें भावना देवे । इसको सेवन करनेसे प्लीहा, गुल्म और नानाप्रकारके (संसारमें प्लीहाको

दूर करनेवाली अनेक औषधियाँ हैं, परन्तु इस प्लीहोदरलोहके समान एकभी काम नहीं करती यह प्लीहोदरलोह स्वयं ब्रह्माजीने रोगी मनुष्योंके हितार्थ निर्माण कियाहै) उदररोग दूर होतेहैं ॥ ४६–५४ ॥

अथ त्रिलोचनरसः ।

त्रिलोचनोहरिःपक्षीपार्वतीनागभूषणम् ।
दरदंतीक्ष्णपुष्पौचवसूरुधिरवासकाः ॥ ५५ ॥
विडंगसैंधवंहिंगुपटोलामृतमुस्तकम् ।
गोक्षुरंमरिचंवह्निचविकैरण्डपिप्पली ॥ ५६ ॥
देवदारुसमंचूर्णंगुडेनवटकीकृतम् ।
उदरंकुक्षिरोगश्चप्लीहंगुल्मंविनाशयेत् ॥ ५७ ॥
नेत्ररोगंपार्श्वशूलंशिरःशूलंप्रमेहकम् ।
हृच्छूलमरुचिंसर्वंदुर्नामंचाश्मरींपराम् ।
मूत्रकृच्छ्रंतथावातंसर्वमेतद्व्यपोहति ॥ ५८ ॥

इतियकृत्प्लीहोदराऽध्यायः ।

अर्थ–पारा, गूगुल, सोनामाखी, सोरठकी मट्टी, सीसा, हरिताल, सिंग्रफ, ईस्पात्, रसौत, गंधक, ताँबा, अडूसा, वायबिडंग, सैंधानोन, हींग, पटोल, गिलोय, नागरमोथा, गोखुरू, काली मिरच, चीता, चव्य, अरण्ड, पीपल और देवदारु यह सब समान भागले सबका बारीक चूर्णकर गुडमें मिलाकर गोलियें बना लेवै । इन गोलियोंके खानेसे–उदररोग, कुक्षिरोग प्लीहा, गुल्म, नेत्ररोग. पार्श्वशूल, शिरःशूल, प्रमेह, हृदयशूल, अरुचि, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और वातरोग दूर होताहै ॥ ५५–५८ ॥

इति यकृत्प्लीहरोगाध्यायःसमाप्तः ।

अथ शोथाधिकारः ।

अथ वातशोथलिङ्गानि ।

श्वयन्तेयस्यगात्राणिस्वपन्तीवरुजन्तिच ।
पीडितान्युन्नमन्त्याशुवातशोथंतमादिशेत् ॥ १ ॥

यश्चाप्यरुणवर्णाभःशोथोनक्तंप्रशाम्यति ।
स्नेहोष्णमर्द्दनाभ्याञ्चप्रणश्येत्सतुवातिकः ॥ २ ॥

अर्थ–जिस शोथरोगीका गात्र सूज जावे और सुन्न होजावे, वेदनायुक्त तथा सूजनकी जगह दाबनेमे शीघ्रही ऊपरको उठ आवे, उसको वातिक सूजन कहतेहैं। तथा जिसकी सूजन लालरंगकी हो, रात्रिमें शांत होजाय, तथा स्नेह और उष्ण मर्दनके द्वारा आराम होजाय उसको भी वातज शोथ कहतेहैं ॥ १॥२ ॥

अथ पित्तशोथलिङ्गानि ।

यःपिपासाज्वरार्त्तश्चपूयतेऽथविदह्यते ।
स्विद्यतेक्लिश्यतेगंधीसपैत्तश्वयथुःस्मृतः ॥ ३ ॥
यःपीतमुखनेत्रत्वक्पूर्वंमध्यात्प्रशूयते ।
अनुत्वक्चातिसारीचपित्तशोथःसउच्यते ॥ ४ ॥

अर्थ–प्यास, ज्वर, सूजनकी जगह राध टपके, दाह हो, स्निग्ध, क्लिष्ट और दुर्गंध हो, उसको पित्तज शोथ कहतेहैं तथा जिस शोथरोगीका मुख नेत्र और चर्म्म पीलाहो, मध्यमे लेकर पूर्वतक सूजन, पतले चर्मयुक्त और अति सारसंयुक्त होवे तो भी पैत्तिक शोथ कहतेहैं ॥ ३॥४ ॥

अथ कफशोथलक्षणानि ।

यःशीतलःसक्तनतिःपाण्डुःकण्डूयतेऽपिच ।
निपीडितोनोन्नमतिःश्वयथुःसकफात्मकः ॥ ५ ॥
यस्यशस्त्रगणच्छेदाच्छोणितंनप्रवर्त्तते ।
कृच्छ्रेणपिच्छांस्रवतिसचापिकफसंभवः ॥ ६ ॥

अर्थ–जो सूजन शीतल, नरम, पाण्डुवर्ण, खुजलीसंयुक्त और दबानेसे ऊपरको न उठे उसको भी कफज सूजन कहतेहैं तथा जिस सूजनमें शस्त्रके छेदनेसे रक्तस्राव न हो और अत्यन्त कष्टके साथ पिच्छिलपदार्थ निकले उसको भी कफज सूजन कहतेहैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ वातशोथचिकित्सा ।

पटोलपत्रवेत्राग्रकाकमाचीसुवर्चला ।
शाकान्नेनिम्बवर्षाभूवालमूलकमेवच ॥ ७ ॥

शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपंचमूलीशृतंजलम् ।
वातिकेश्वयथौशस्तंपानाहारपरिग्रहे ॥ ८ ॥

अर्थ—शाकके लिये पटोलपत्र, बेंतका अग्रभाग, मकोयका शाक, ब्रह्मसौंचली, नीम, पुनर्नवा और कच्चीमूली तथा सोंठ, पुनर्नवा, अरण्ड और पंचमूल, इन सबको जलमें सिद्ध कर शीतल करै, यह शृतशीतल जल वातके शोथमें पान और आहारके समय देना चाहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ त्रिविधशोथचिकित्सा ।

पृश्निपर्णीघनोदीच्यशुण्ठीसिद्धन्तुपैत्तिके ।
श्लैष्मिकेपिप्पलीमूलंदारुनागरचित्रकैः ॥ ९ ॥
दशमूलंसदाशस्तंवातशोथेविशेषतः ।
वातजेतैलमैरण्डंविड्ग्रहेपयसापिबेत् ॥ १० ॥

अर्थ—पित्तज शोथमें पिठवन, मोथा, सुगंधवाला और सोंठको औटाकर सिद्ध कियाहुआ जल, कफज शोथमें पीपरामूल, देवदारु, सोंठ और चीतेका औटाकर सिद्ध कियाहुआ जल, वातशोथमें दशमूलका क्काथ, तथा वातज मलरुद्ध शोथमें दूधके साथ अंडीका तेल हितकारी हैं ॥ ९ ॥ १० ॥

अथ सर्वशोथचिकित्सा ।

क्षीराशनःपित्तकृतेतुशोथेत्रिवृद्गुडूचीत्रिफलाकषायः ।
पिबेद्गवांमूत्रविमिश्रितंवाफलत्रिकाचूर्णमथाक्षमात्रम् ॥११॥
पुनर्नवाविश्वत्रिवृद्गुडूचीशम्याकपथ्या[illegible]रुकल्कम् ।
शोथेकफोत्थेमहिषाक्षमूत्रयुक्तंपिबेद्वासलिलंतथैषाम् ॥१२॥
अजाजिपाठाघनपंचकोलव्याघ्रीरजन्यासुखतोयपीताः ।
शोथंत्रिदोषंविरजंप्रवृद्धंनिघ्नन्तिभूनिम्बमहौषधेच ॥ १३ ॥
बिल्वपत्ररसंपातुःशोषणंश्वयथौत्रिजे ।
विट्संगेचैव[illegible]ग्निविदध्यात्कामलामपि ॥ १४ ॥

अर्थ—पित्तज शोथरोगमें—दूधका भोजन करै, तथा निसोत, गिलोय और त्रिफलेका क्काथ अथवा त्रिफलेका चूर्ण गोमूत्रके साथ पान करै। कफशोथमें—पुनर्नवा, सोंठ, निसोत, गिलोय, अमलतास, हरड, देवदारु और भैंसिया

गूगुल गोमूत्रके साथ पीसकर अथवा इनका क्वाथ बनाकर पान करै । जीरा, पाढ, नागरमोथा, पंचकोल, कटेरी, हलदी, चिरायता और सोंठ, इनका क्वाथ गरमागरम पीनेसे बहुत दिनोंका शोथज रोग दूर होताहै । त्रिदोषज शोथरोगमें बेलके पत्तोंका रस पान करनेसे मलरोध, बवासीर और कामलारोग दूर होताहै ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथ पथ्यादिः ।

पथ्यामृताभार्ङ्गिपुनर्नवाग्निदार्वीनिशादारुमहौषधानाम् ।
क्वाथंप्रपीयोदरपाणिपादरक्ताश्रितंहन्त्यचिरेणशोथम् ॥१५॥

अर्थ–हरड, गिलोय, भारंगी, पुनर्नवा, चीता, दारुहलदी, हलदी, देवदारु और सोंठ इनका क्वाथ पीनेसे उदर, हस्त, पाद और रक्तगत शोथरोग दूर होताहै ॥ १५ ॥

अथ पुनर्नवाष्टकम् ।

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठीतिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ॥
सर्वांगशोथोदरपार्श्वशूलश्वासान्वितंपाण्डुगदंनिहन्ति १६॥

अर्थ–पुनर्नवा, नीम, पटोल, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी और हरड इनका क्वाथ पीनेसे सर्वांगगत शोथ, पार्श्वशूल और श्वासयुक्त पाण्डुरोग दूर होताहै ॥ १६ ॥

अथ सौवर्चलाद्यं घृतम् ।

सौवर्चलंयवक्षारंयवानीपंचकोलकम् ।
मरिचंदाडिमंपाठाधन्याकमम्लवेतसम् ॥ १७ ॥
वारिबिल्वश्चकर्षांशंक्काथयेत्सलिलाढके ।
तत्क्काथेनघृतप्रस्थंपाच्यंघृतावशेषकम् ।
शोथार्शोगुल्ममेहार्त्तोघृतंसेव्यंप्रशान्तये ॥ १८ ॥

अर्थ–कालानोन, जवाखार, अजवायन, पंचकोल, कालीमिरच, अनार, पाढ, धनियाँ, अमलवेंत, सुगंधबाला और बेल प्रत्येक दो दो तोले लेकर एक आढक जलमें औटावे, जब चौथा भाग जल शेष रहे तब उतारकर छान लेवे, पश्चात् इसमें एक प्रस्थ घृत मिलाकर पकावे, जब तैयार हो जाय तब सेवन करै इससे शोथ, बवासीर गुल्म, प्रमेह, यह सब रोग दूर होतेहै ॥ १७॥१८ ॥

अथ शुण्ठ्यादिक्काथः ।

शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपंचमूलंशृतंजलम् ।
वातिकेश्वयथौशस्तंपानाहारेपरिग्रहे ॥ १९ ॥

अर्थ–सोंठ, पुनर्नवा, अरण्ड और पंचमूल इनका क्काथ पानाहारके समय पान करनेसे वातज सूजन दूर होती है, ॥ १९ ॥

अथ पुनर्नवाद्यंघृतम् ।

पुनर्नवाचित्रकदेवदारुपंचोषणक्षारहरीतकीनाम् ।
कल्केनपक्कंदशमूलतोयेघृतोत्तमंशोथनिषूदनञ्च ॥ २० ॥

अर्थ–गायका घी दो सेर, क्काथके लिये दशमूल साठपल, पाकके लिये जल ५१२ पाँचसौ बारह पल, शेष बत्तीस पल और कल्कके लिये पुनर्नवा, चीता, देवदारु, पंचोषण, जवाखार और हरड़, प्रत्येक चार चार तोले लेवैं, सबको मिलाकर घृतको सिद्ध करै इसको सेवन करनेसे–शोथ रोग दूर होताहै॥२०॥

अथ मानकघृतम् ।

मानकक्काथकल्काभ्यांघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
एकजंद्वन्द्वजंशोथंत्रिदोषञ्चव्यपोहति ॥ २१ ॥

अर्थ–गायका घी दो सेर, मानकन्दका क्काथ दो सेर, जल आठसेर और कल्कके लिये मानकन्द आधसेर लेवै । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै यह घृत एकज, द्वन्द्वज और त्रिदोषज शोथरोगको दूर करताहै ॥ २१ ॥

अथ शुष्कमूलाद्यंघृतम् ।

शुष्कमूलकवर्षाभूदारुरास्नामहौषधैः ।
पंचमभ्यंजनंतैलंसशूलंश्वयथुंजयेत् ॥ २२ ॥

अर्थ–तिलका तेल दो सेर, जल आठसेर और कल्कके लिये सूखीमूली, पुनर्नवा, देवदारु, रास्ना और सोंठ यह सब आधसेर लेवैं । सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै । यह तेल शूलयुक्त शोथरोगको दूर करताहै ॥ २२ ॥

अथ बृहच्छुष्कमूलाद्यं तैलम् ।

मूलकंदशमूलञ्चकणामूलंपुनर्नवा ।
प्रत्येकंप्रस्थमानञ्चव रिण्यष्टगुणेपचेत् ॥ २३ ॥

तेनाष्टभागशेषेणतैलस्याद्धाढकंतथा ।
दापयेत्तैलतुल्येनगोमूत्रंकुशलोभिषक् ॥ २४ ॥
मूलकंचामृताशुण्ठीपटोलंचपलाबला ।
पाठापुनर्नवामूलंवालोशीरञ्चशिग्रुकम् ॥ २५ ॥
निर्गुण्डीन्द्रयवश्यामाकरञ्जंवासकन्तथा ।
कणाहरीतकीशुण्ठीवचापुष्करमुस्तकम् ॥ २६ ॥
रास्नाविडंगंचव्यञ्चहरिद्रेद्वेचधान्यकम् ।
द्विक्षारंसैन्धवंपत्रंदेवदारुसपद्मकम् ॥ २७ ॥
शठीकरिकणाबिल्वमंजिष्ठाचततःक्रमात् ।
प्रत्येकार्द्धपलंचैषांपेषयित्वाततःक्षिपेत् ॥ २८ ॥
अभ्यंगेनास्यतैलस्ययेगुणाःसन्तिताञ्छृणु ।
नानाशोथाश्चनश्यन्तिवातपित्तकफोद्भवाः ॥ २९ ॥
आमोद्भवाश्चयेकेचिद्विशेषेणजलाशयाः ।
अवश्यंनिर्जलादेहाभविष्यन्तिनसंशयः ॥ ३० ॥

अर्थ–मूली, दशमूल. पीपरामूल, पुनर्नवा, प्रत्येक दो दो सेर लेकर आठगुने, जलमें पकावे, जब आठवाँ भाग शेष रहे तब उतारकर छान लेवे. पश्चात् इसमें अर्द्ध आढक तेल, अर्द्ध आढक गोमूत्र, मूली, गिलोय, सोंठ, पटोल, पीपल, खिरेटी, पाठ, पुनर्नवा, सुगन्धबाला, खस, सँजिनेकी जड, निर्गुण्डी, इन्द्रयव, श्यामलता, करंज, अडूसा, पीपल, हरड, सोंठ, बच, पोहकरमूल, नागरमोथा, रास्ना, बायबिडंग, चव्य, हलदी, दारुहलदी, धनियाँ जवाखार, सज्जी, सेंधानोन, तेजपात, देवदारु, पद्माख. कचूर, गजपीपल, बेल और मँजीठ प्रत्येक दो दो तोले ले सबको पीसकर मिलादे और उत्तम रीतिसे पाककर इस तेलसे शरीरादिकको मलनेसे नानाप्रकारके शोथरोग दूर होतेहैं ॥ २३–३० ॥

अथ दशमूलहरीतकी ।

द्विपंचमूलस्यकृतेकषायेकंसेऽभयानाञ्चशतंगुडाश्च ।
लेहेसुशीतेचविनीयचूर्णंव्योषंत्रिसौगन्ध्यसुखास्थितेच ३१
प्रस्थार्द्धमानंमधुनःसुशीतेकिंचिच्चचूर्णादपियावशूकात् ।

एकाभयांप्राश्यततश्चलेहाच्छुक्तिंनिहन्तिश्वयथुंप्रवृद्धम् ३२॥
श्वासज्वरारोचकमेहगुल्मप्लीहत्रिदोषोदरपाण्डुरोगान्।
कार्श्यामवातावसृगम्लपित्तंवैवर्ण्यमूत्रानिलशुक्रदोषान् ३३

अर्थ—दशमूल चारसेर, हरड १०० एकसौ, जल बत्तीस सेर, शेष आठसेर गुड सवाछेसेर, इनको पकावै, जब पकते पकते गाढा होजाय तब इसमें त्रिकुटेका चूर्ण, त्रिसुगंधिका चूर्ण और जवाखार प्रत्येक चार तोले और सहत आधसेर मिला देवै। प्रतिदिन एक हरड और कुछ लेह खावै तो अत्यंत बढा हुआ शोथरोग, श्वास, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, प्लीहा, त्रिदोषोदर, पाण्डुरोग, कृशता, आमवात, रुधिरविकार, अम्लपित्त, विवर्णता, मूत्र, वात और शुक्रके दोष दूर होतेहैं ॥ ३१-३३ ॥

अथ मण्डूरचूर्णम्।

श्लक्ष्णचूर्णञ्चमण्डूरंगोमूत्रेपाचयेद्दिनम्।
वज्रवल्ल्यारसैःपेष्यंचिताकुड्मलसंयुतम्॥
भक्षितंचाक्षमात्रञ्चह्यसाध्यंश्वयथुंजयेत्॥ ३४॥

अर्थ—मण्डूरका उत्तमरीतिसे चूर्ण कर गोमूत्रके साथ पका वज्रवल्लीके रसमें पीसकर चीतेकी कलियोंके चूर्णके साथ पीनेसे असाध्य शोथरोग भी दूर होताहै ॥ ३४ ॥

अथ योगत्रयम्।

काकमाचीरसैःपेष्यंमृतलोहञ्चशोथजित्।
हरीतक्याःकषायेणहन्तिपानाच्छिलाजतु॥ ३५॥

अर्थ—मारेहुए लोहेको मकोयके रसके साथ या हरडके क्वाथके साथ शिलाजीतको पीनेसे शोथरोग दूर होताहै ॥ ३५ ॥

अथ कटुकाद्यं लौहम्।

कटुकात्र्यूषणंदन्तीविडंगंत्रिफलातथा।
चित्रकोदेवदारुश्चत्रिवृद्दारुणापिप्पली॥ ३६॥
चूर्णान्येतानितुल्यानिद्विगुणंस्यादयोरजः।
क्षीरेणतुल्यमेतच्चश्रेष्ठंश्वयथुनाशनम्॥ ३७॥
सर्वचूर्णाद् द्विगुणंलौहम्।

अर्थ—कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल, दन्ती, वायविडंग, हरड, बहेडा, आमला, चीता, देवदारु, निसोत और गजपीपल इन सबका चूर्ण एकभाग और लोहेका चूर्ण दोभाग लेवै, सबको मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसे शोथरोग दूर होताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथ करञ्जपत्रप्रलेपः ।

करञ्जपत्रलेपेनसारनालेनशोथजित् ॥
कोकिलाक्षकषायेणलेपःसर्वाङ्गशोथजित् ॥ ३८ ॥

अर्थ—करंजके पत्तोंको काँजीमें पीसकर लेप करनेसे अथवा तालमखानेको पीसकर लेपकरनेसे शोथरोग दूर होताहै ॥ ३८ ॥

अथ माणकघृतम् ।

माणकक्काथकल्काभ्यांघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
एकजंद्वन्द्वजंशोथंत्रिदोषञ्चव्यपोहति ॥
माणकस्यपलशतंजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ३९ ॥
तन्त्रान्तरदर्शनात् ।

अर्थ—गायका घी दोसेर, मानकन्दका क्वाथ आठसेर और कल्कके लिये मानकन्द आधसेर लेवै, फिर मिलाकर घृतको सिद्ध करै । यह घृत—एकज, द्वन्द्वज और त्रिदोषज शोथरोगको दूर करैहै ॥ ३९ ॥

अथ भल्लातकादिप्रलेपादीनि ।

खण्डखाद्येश्वरमताऽमृतसारनवायसम् ।
लोहान्येतानिसर्वाणियोजयन्तिभिषग्विदः ॥ ४० ॥
भल्लातकयाजयेच्छोथंसतिलाकृष्णमृत्तिका ।
महिषीनवतीतंवालेपाद्दुग्धतिलान्वितम् ॥ ४१ ॥
लेपोऽरुष्करशोथंनिहन्तितिलदुग्धमधुकनवनीतैः ।
तत्तरुतलमद्भिर्वासालदलैर्वातिचिरेण ॥ ४२ ॥
सालदलस्यचूर्णमाहुः ।
कान्तकामकलेपोवालेपोवातिलदुग्धयोः ।
भल्लातःश्वयथुंहन्ति ।नंवातिलदुग्धयोः ॥ ४३ ॥

वानरकच्छूधूलीशोथेगोमयघर्षालेपौकार्य्यौ ।
वृश्चिकपत्रीपीडाशोथेविधिनादुग्धस्थालीस्वेदः ॥ ४४ ॥
प्रायोभिघातादनिलःसरक्तःशोथंसवातंप्रकरोतिसद्यः ।
तत्राविसर्पत्वन्मात्रतन्वञ्चकार्यंविषघ्नंविषजेतुकर्म ॥ ४५ ॥

अर्थ–खण्डखाद्य लोह, अमृतसार लोह, नवायसादि लोह, शोथरोगमें देने चाहिये । तिल, कालीमट्टी और भिलावा इनके द्वारा लेप करनेसे अथवा भैंसके दूधका मक्खन, दूध और तिल इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे शोथरोग दूर होताहै । भिलावा, तिल, दूध, मुलैठी और माखन इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा भिलावेके वृक्षकी तलेकी मट्टी और सालके पत्तोंके चूर्णको एकत्र मिलाकर लेप करनेसे शोथरोग दूर होताहै । मोथेका लेप करनेसे अथवा तिलोंको दूधमें पीसकर लेप करनेसे किंवा तिल, भिलावे, इनको दूधमें पीसकर सेवन करनेसे शोथरोग दूर होताहै । कौंछकी फलियोंके लगानेसे उत्पन्न हुआ शोथ गोबरके घिसने तथा लेप करनेसे आराम होताहै । बिछवाघासके लगानेसे उत्पन्न हुआ शोथ दूधकी हाँडीको गरम करके स्वेद देनेसे शोथरोग दूर होताहै । प्रायः अभिघातसंयुक्त वायु रुधिरके साथ मिलकर वातसंयुक्त शोथको उत्पन्न करताहै । जो शोथ क्रमसे फैले नहीं उसपै चर्मसंशोधक लेपादि करै । तथा विषज शोथरोगमें विषघ्न कर्म करे ॥ ४०–४५ ॥

अथ शोथरोगेऽपथ्यानि ।

पिष्टान्नमम्लंलवणानिमद्यंशुल्बंदिवास्वप्नमजागरञ्च ।
स्त्रियोघृतंतैलपयोगुरूणिशोथंजिघांसुःपरिवर्जयेच्च ॥ ४६ ॥

इति शोथरोगाध्यायः ।

अर्थ–पिष्टान्न, खटाई, लवण, मदिरा, सूखामांस, दिनमें सोना, रात्रिमें जागरण, स्त्रीसंसर्ग, घृत, तेल, दूध और भारी द्रव्य शोथरोगी त्याग देवै ॥ ४६ ॥

इति शोथाधिकारः ।

अथ ब्रध्नवृद्ध्यधिकारः ।

तत्रादौ वातवृद्धिचिकित्सा ।

प्रपौण्डरीकमधुकरास्नाकुष्टपुनर्नवैः ।
सरलागुरुभद्राख्यैर्वातजंसंप्रलेपयेत् ॥ १ ॥

निचुलैरण्डमूलानियवगोधूमसक्तवः ।
एतैश्चवातजंस्निग्धैःसुखोष्णैःसंप्रलेपयेत् ॥ २ ॥
गुग्गुलुंरुबुतैलंवागोमूत्रेणपिबेन्नरः ।
वातवृद्धिंनिहन्त्याशुचिरकालानुबन्धिनीम् ।
सक्षीरंवापिबेत्तैलंमासमेरण्डसंभवम् ॥ ३ ॥

पित्तानुबन्धे ।

पुनर्नवायास्तैलंवातैलंनारायणन्तथा ।
पानेबस्तौरुबोस्तैलंपेयंवादशकाम्भसा ॥ ४ ॥

पुनर्नवायाःक्वाथकल्कौ ।

दशकं दशमूलम् ।

इति वाते ।

अर्थ-पुण्डेरिया, मुलैठी, रास्ना, कूठ, पुनर्नवा, धूपसरल, अगर और मोथा इन सबको पीसकर लेप करनेसे वातज वृद्धिरोग दूर होताहै । हिज्जल, अरंडकी जड़, जौ और गेहूँ इनके सत्तू स्निग्ध और उष्ण करके लेप करनेसे वातज अन्त्र-वृद्धिरोग दूर होताहै । गृगुल अथवा अंडीका तेल गोमूत्रके साथ पान करनेसे वातज वृद्धिरोग दूर होताहै । अण्डीका तेल दूधके साथ पीनेसे पित्तानुबंध वातजवृद्धि रोग दूर होताहै। पुनर्नवेका तेल और नारायणतेल पान और बस्ति-कर्ममें प्रयोग करनेसे, अथवा अण्डीका तेल दशमूलके क्वाथके साथ पीनेसे वातजवृद्धिरोग दूर होताहै ॥ १-४ ॥

अथ पित्ताण्डवृद्धिचिकित्सा ।

गैरिकाञ्जनमंजिष्ठामधुकोशीरपद्मकैः ।
सचन्दनोत्पलैःस्निग्धैःपैत्तिकंसंप्रलेपयेत् ॥ ५ ॥
पद्मोत्पलमृणालैश्चससर्जार्जुनवेतसैः ।
सर्पिःस्निग्धैःसमधुकैःपैत्तिकंसंप्रलेपयेत् ॥ ६ ॥

अर्थ-गेरू, अंजन, मँजीठ, मुलैठी, खश, पद्माख लालचंदन और कमल यह सब औषधि समानभाग लेकर घृतके साथ पीसकर लेप करनेसे अथवा कमल, कुमुदिनी, मृणाल, सर्ज्जवृक्षकी छाल, अर्जुनवृक्षकी छाल, बेंत और

मुलैठी इनको एकत्र घीके साथ पीसकर लेप करनेसे अण्डवृद्धिरोग दूर होताहै ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ रक्ताद्यण्डवृद्धिचिकित्सा ।

मुहुर्मुहुर्जलौकाभिःशोणितंरक्तजेहरेत् ।
कुर्यात्पैत्तिकवत्सर्वमामेपक्वेचबुद्धिमान् ॥ ७ ॥
कुलत्थोषणपिण्याकैःपिष्टोष्णैश्चोपनाहनम् ।
देवदारुकषायञ्चापिबेन्मूत्रेणमानवः ॥ ८ ॥
त्रिकटुत्रिफलाक्काथंपिबेत्सक्षारसैन्धवम् ।
कफामबद्धकोष्ठेषुविरेकःकफवृद्धिनुत् ॥ ९ ॥
संपिष्टमारनालेनरूपिकामूलवल्कलम् ।
लेपाद्वृद्ध्यामयंहन्तिबद्धमूलमपिध्रुवम् ॥ १० ॥
स्यात्तावच्चटकक्षारःक्षारोवाकृकलासजः ।
सतैलोलवणोलेपःशीघ्रदुर्जयवृद्धिनुत् ।
वचासर्षपकल्केनप्रलेपोवृद्धिनाशनम् ॥ ११ ॥

अर्थ—रक्तजवृद्धिरोगमें बारबार जोंके लगवावे, तथा आम और पक्व वृद्धिरोगमें पैत्तिकवृद्धिरोगकी समान उपचार करे । कुलथी, कालीमिरच और तिलोंकी खल जलके साथ एकत्र पीसकर गरम करके स्वेददेनेसे, देवदारुका काथ गोमूत्रके साथ पीनेसे वृद्धिरोग दूर होताहै । त्रिकुटा और त्रिफला इनका काथ जवाखार और सैंधानोनका प्रक्षेप देकर पान करनेसे कफ और आमसे उत्पन्नहुए वृद्धकोष्ठमें विरेचन होकर कफजन्य वृद्धरोग दूर होताहै । लाल आककी जडकी छाल काँजीके साथ पीसकर लेपकरनेसे अण्डवृद्धिरोग दूर होताहै । चटक पक्षीका क्षार वा कृकलास जन्तुका खार तेल और सेंधेनोनके साथ पीसकर लेप करनेसे अथवा वच और सरसोंको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे वृद्धिरोग दूर होताहै ॥ ७–११ ॥

अथाण्डवृद्धिहरयोगाः ।

गोमूत्रसिद्धांरुबुतैलमिश्रांहरीतकींसैन्धवचूर्णयुक्ताम् ।
खादेन्नरःकोष्णजलेनुपानंनिहन्तिवृद्धिंचिरजांप्रवृद्धाम् १२॥

ऐन्द्रीमूलभवंचूर्णंरु तैलेनमर्दितम् ।
त्र्यहाद्गोपयसापीतंसर्ववृद्धिविनाशनम् ॥ १३ ॥
गव्यं तंसैन्धवसंप्रयुक्तंशम्बूकभाण्डेनिहितंप्रयत्न त् ।
सप्ताहमादित्यकरैर्विपक्वंनिहन्तिकौरण्डमतिप्रवृद्धकम् १४॥
घृतात्पादिकं सैन्धवम् ।

अर्थ—हरडोंको गोमूत्रमें औटाकर अण्डीके तेल और सेंधेनोनके साथ मिलाकर सेवन करै और ऊपरसे गरम जलका अनुपान करै तो वृद्धिरोग दूर होवै । इन्द्रायणकी जड़का चूर्ण अंडीके तेलमें पीसकर गायके दूधके साथ पीनेसे तीनदिनमें सर्वप्रकारके वृद्धिरोग दूर होतेहैं । गायका घी एक भाग, सेंधानोन चौथाई भाग, इनको सम्पुटके भीतर खरल कर सातदिन सूर्यकी गरमीमें पकाकर सेवनकरनेसे कुरण्डरोग दूर होताहै ॥ १२-१४ ॥

अथ गंधर्वहस्तकंतैलम् ।

शतमेरण्डमूलस्यपलेशुण्ठ्यायवाढकम् ।
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ॥ १५ ॥
तेनपादावशेषेणपयसातत्समेनच ।
प्रस्थमेरण्डतैलस्यतन्मूलञ्चचतुष्पलम् ॥ १६ ॥
त्रिपलंशृंगवेरस्यगर्भंदत्त्वाविपाचयेत् ।
तत्पिबेन्नियतःशुद्धोनरःक्षीरान्नभुक्सदा ।
अंत्रवृद्धिंनिहन्त्याशुतैलंगन्धर्वहस्तकम् ॥ १७ ॥

अर्थ—अण्डीका तेल दोसेर, क्वाथके लिये अरण्डकी जड सवासेर, सोंठ, दोपल और जौ चारसेर, पाकके लिये बत्तीस सेर, शेष आठ सेर, दूध आठसेर और कल्कके लिये अरण्डकी जड चारपल और अदरख तीनपल, सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै । इसके ऊपर दूधके साथ भोजन करै, इससे अन्त्रवृद्धिरोग दूर होताहै । १५-१७ ॥

अथान्त्रवृद्धिहरयोगः ।

ससैन्धवंघृताभ्यक्तंताम्रभ [illegible] तपे ।
प्रतप्त [illegible] र्णयाघृष्टातन्मलेनादिवानिशम् ॥ १८ ॥

म्रक्षणादेवकुरण्डंनास्तीत्याहपुनर्वसुः ।
रुद्रजटामूललिप्ताकरटव्यङ्कचर्म्मणा ॥ १९ ॥
अंत्रवृद्धिःशमंयातिचिरजापिनसंशयः ॥ २० ॥
करटवी वृक्षमूषिका अस्या अंकचर्म क्रोडचर्म्म ।

अर्थ-सैंधानोनको घृतमें मिलाकर एक ताँबेके बासनमें लेप कर धूपमेंधर भेड़के रोमोंसे घिसकर लेपकरनेसे जो मल निकले इससे दिनरात घिसनेसे कुरण्डरोग दूर होताहै । रुद्रजटाकी जड़के द्वारा वृक्षमूषिकके क्रोडचर्म्मको लेप कर तिससे कुरण्डको बांधनेसे बहुत दिनोंका अंत्रवृद्धिरोग दूर होताहै ॥ १८-२० ॥

अथ शतपुष्पाद्यं घृतम् ।

शतपुष्पामृतादारुचंदनंरजनीद्वयम् ।
जीरकेद्वेवचानागत्रिफलागुग्गुलुत्वचम् ॥ २१ ॥
समांसीकुष्ठपत्रैलारास्नाशृंगीचचित्रकम् ।
क्रिमिघ्नमश्वगंधाचशैलेयंकटुरोहिणीम् ॥ २२ ॥
सैन्धवंतगरंचैवकुटजातिविषेतथा ।
एतैश्चकार्षिकैःकल्कैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २३ ॥
वृषमुण्डीतिकैरण्डनिम्बपत्रभवोरसः ।
कण्टकार्यास्तथाक्षीरंप्रस्थंप्रस्थंप्रदापयेत् ॥ २४ ॥
सिद्धमेतद्घृतंपीतमंत्रवृद्धिंव्यपोहति ।
वातवृद्धिंपित्तवृद्धिंमेदोवृद्धिमथापिवा ॥ २५ ॥
मूत्रवृद्धिंश्लीपदश्चयकृत्प्लीहानमेवच ।
शतपुष्पाघृतश्चैतद्धन्यादेतन्नसंशयः ॥ २६ ॥

अर्थ-सौंफ, गिलोय, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, जीरा, कालाजीरा, बच, नागकेशर, त्रिफला, गूगुल, दालचीनी, वालछड़, कूठ, तेजपात, इलायची, रास्ना, काकडाशिंगी, लालचीता, बायबिडंग, असगंध, भूरिछरीला, कुटकी, सैंधानोन, तगर, कुड़ा और अतीस प्रत्येकका कल्क, दो दो तोले अडूसेका रस, गोरखमुण्डीका रस, अण्डीका रस, नीमके पत्तोंका रस, कटेरीका रस

और दूध प्रत्येक दो दो सेर और गायका घी दोसेर लेवे,सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । यह शतपुष्पाद्यघृत अंत्रवृद्धि, वातवृद्धि, पित्तवृद्धि, मेदोवृद्धि, मूत्रवृद्धि, श्लीपद, यकृत्, प्लीहा, इन सबको दूर करैहै ॥२१-२६॥

अथ बृहत्सैन्धवाद्यंतैलम् ।

सैन्धवंमदनंकुष्ठंशताह्वांनिचुलंवचाम् ।
ह्रीबेरंमधुकंभार्ङ्गींदेवदारुसनागरम् ॥ २७ ॥
कट्फलंपौष्करंमेदांचविकांचित्रकंशठी ।
विडंगातिविषेश्यामांरेणुकांनीलिनींस्थिराम् ॥ २८ ॥
बिल्वाजमोदेकृष्णांचदन्तींरास्नांप्रपिप्यच ।
साध्यमेरण्डजंतैलंतैलंवाकफवातनुत् ॥ २९ ॥
ब्रध्नोदावर्त्तगुल्मार्शःप्लीहमेहाढ्यमारुतान् ।
आनाहमश्मरींश्चैवहन्यात्तदनुवासनात् ॥ ३० ॥

अर्थ-सैंधानोन, मैनफल, कूठ, सौंफ, हिज्जल, बच, सुगंधबाला, महुवा, भारंगी, देवदारु, सोंठ, कायफल, पोहकरमूल, मेदा,चव्य, चीता, कचूर, बायविडंग, अतीस, करिया वासाऊ, रेणुका, नीलका वृक्ष, शालिपर्णी, बेल, अजमोदा, पीपल, दंती और रास्ना इन सबको पीसकर इनमें अरण्डका तेल या सरसोंका तेल सिद्ध करै । यह तेल-कफ, वात, ब्रध्न, उदावर्त्त, गुल्म, बवासीर प्लीहा,प्रमेह, वात, आनाह और पथरी रोग दूर करताहै ॥ २७-३० ॥

अथ धत्तूरादिलेपः ।

धत्तूरमूलसिद्धार्थंगवांमूत्रेणपेषयेत् ।
प्रलेपनंत्रिभिःकुर्यात्कोष्णंब्रध्नहरंपरम् ॥
घृतंसौरेश्वरंयोज्यंब्रध्नवृद्धिनिवृत्तये ॥ ३१ ॥

अर्थ-धतूरेकी जड़ और सफेद सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर कुछेक गरम कर लेपकरनेसे-ब्रध्नरोग दूर होताहै-सौरेश्वर घृतको पान करनेसेभी ब्रध्नरोग और वृद्धिरोग दूर होताहै ॥ ३१ ॥

अथैकादशायसम् ।

मृतायःपुरुषःशुल्बःखगोदरदगंधकः ।
गगनंपुष्परागश्चशोणितंचेश्वरोरगः ॥ ३२ ॥
विडंगत्रिफलाहिंगुयवानीजीरकद्वयम् ।
स्वर्जीफलवचाशृंगीमरिचंपिप्पलीद्वयम् ॥ ३३ ॥
चवीदुरालभावह्निशुण्ठीद्रावैर्विमर्दयेत् ।
अण्डवातान्त्रवृद्धीश्चकच्छूमुरुगदापहम् ॥
येचअण्डगतारोगास्तान्सर्वानपकर्षति ॥ ३४ ॥

अर्थ–लोहा, पारा, ताँबा, सोनामाखी, सिंग्रफ, गंधक, अभ्रक, पुष्परागमणि, केशर, पीतल, सीसा. यह सब समान ले पश्चात् इनको वायविडंग, त्रिफला, हींग, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, सज्जी. जायफल, बच, काकड़ाशिंगी, कालीमिरच, पीपल, गजपीपल, चव्य, जवासा, चीता, और सोंठके रसमें खरल कर लेप करनेसे अंडवात, अन्त्रवृद्धि, कच्छू, ऊरुरोग, और सर्वप्रकारके अंडगत रोगोंको दूर करैहै ॥ ३२–३४ ॥

अथ सैन्धवादिगुटिका ।

ससैन्धवाकुष्ठकरेणवजाजीसत्रैफलारुष्करवालकश्च ।
विडंगविश्वौष[illegible]मृताभार्ङ्गीवचातस्करदेवदारुकम् ३५ ॥
सनीलिनीसातिविषाजमोदायवानिकापिप्पलिमूलमुस्तकम् ।
चव्यंसकृष्णाशठिचंदनद्वयंसकट्फलावल्गुजबिल्वजंस्थिरम् ॥
दन्तीशताह्वाकटुकाजगंधासवाजिगन्धागजपिप्पलीनाम् ।
मरीचत्रैजातलवंगगंधजातीफलंशैलजजातिपत्री ॥ ३७ ॥
कर्षैकमात्रंक्रमश्लक्ष्णचूर्णपलाष्टकंगुग्गुलुनामधेयम् ।
पलद्वयंलौ[illegible]रजस्तथैवशिलाजतुश्चैवपलंचतुष्कम् ॥ ३८ ॥
सर्वैःसम[illegible]सिताचय[illegible]वटिकाक्षमात्रम् ।
[illegible]भक्ष्यमथोविधेयंमद्यंतथ[illegible]ष्णंपयसाचक्षीरम् ३९ ॥

निहन्तिचाभ्रानुदरंसकृच्छ्रंपाण्डामयंकामलराजरोगम् ।
प्लीहोदरं कुष्ठविकारजञ्चमूत्रामवातंश्वयथून्प्रकल्पम् ॥ ४० ॥
अत्याग्निकारिज्वरनाशनंपरंबलंसुपुष्टिंकुरुतेनराणाम् ।
प्रमेहविंशंकफरोगविंशंचत्वारिंशत्पित्तगदंनिहन्यात् ।
अशीतिवातामयजान्विकारान्नश्यन्तिसर्वमिदंनराणाम् ॥ ४१ ॥

इति अभ्रवृद्ध्यध्यायः ।

अर्थ–सैंधानोन, कूठ, रेणुका, जीरा, त्रिफला, भिलावा, वायबिडंग, सोंठ, चीता, गिलोय, भारंगी, वच, भटेउर, देवदारु, नीलवृक्ष, अतीस, अजमोदा, पीपरामूल, नागरमोथा, चव्य, पीपल, कचूर, सफेद चंदन, लाल चंदन, कायफल, वापची, बेलगिरी, दन्ती, सौंफ, कुटकी, अजगंधा, असगंध, गजपीपल, कालीमिरच, दालचीनी, इलायची, तेजपात, लवंग, सैंजिना, जायफल, भृरिछरीला, और जावित्री, प्रत्येक दो दो तोले, गूगुल आठ पल, लोहा दो पल, शिलाजीत, चार पल, इन सबको एकत्र पीसलेवे, और सबकी बराबर मिश्री मिलादेवे, पश्चात् जलसे मर्दन कर दो दो तोलेभरकी गोलियाँ बनालेवे, प्रतिदिन एकगोली मदिरा, गरम जल और दूधके साथ पान करनेसे–अभ्र, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डुरोग, कामला, राजरोग, प्लीहोदर, कोढ, मूत्ररोग, आमवात, और सूजनको दूर करैहै । अत्यन्त अग्निजनक, ज्वरको दूर करनेवाला, बलकारक, पुष्टिकारक, वीस प्रकारके प्रमेह, चालीस प्रकारके पित्तरोग, अस्सी प्रकारके वातरोग, इन सबको यह दूर करैहै ॥ ३९–४१ ॥

इति अभ्रवृद्ध्यध्यायःसमाप्तः ॥

अथ गलगंडगंडमालाचिकित्सा ।

यवमुद्गपटोलानिकटुरूक्षञ्चभोजनम् ।
छर्दिसरक्तमुक्तिश्चगलगंडेप्रयोजयेत ॥ १ ॥
निचुलंशिग्रुबीजानिदशमूलमथापिवा ।
वातजेगलगंडेतुसुखोष्णोलेपइष्यते ॥ २ ॥
सर्षपाःशिग्रुबीजानिशणबीजातसीयवान् ।
मूलकस्यचबीजानितक्रेणाम्लेनपेषयेत् ॥ ३ ॥

गण्डातिग्रन्थयश्चैवगंडमालाःसुदारुणाः ।
प्रलेपात्तेनशाम्यन्तिविलयंयान्तिचाचिरात् ॥ ४ ॥

अर्थ–जौ, मूंम, पटोल, कटु और रूक्षद्रव्य तथा वमन और रक्तमोक्षण (फस्त) यह सब गलगंडरोगमें प्रयोग करै । हिज्जल और सैंजिनेके वीज अथवा दशमूलको पीसकर गरम करके लेप करनेसे वातज गलगंडरोग दूर होताहै । सरसों, सैंजिनेके बीज, सनके वीज, अलसी, जौ और मूलीके वीजोंको एकत्र कर तक्र और काँजीके साथ पीसकर लेप करनेसे गण्डमाला, गलगण्ड और ग्रन्थिरोग निश्चय दूर होताहै ॥ १–४ ॥

अथ सिन्दूरादितैलम् ।

चक्रमर्दकमूलस्यकल्कंकृत्वाविपाचयेत् ।
केशराजरसेतैलंकटुकंमृदुनाग्निना ॥ ५ ॥
पाकशेषेविनिक्षिप्यसिंदूरमवतारयेत् ।
एतत्तैलंनिहन्त्याशुगंडमालांसुदारुणाम् ॥ ६ ॥

अर्थ–सरसोंका तेल एकसेर, भांगरेका रस चारसेर, कल्कके लिये चकवडकी जड़ पावसेर और सिन्दूर पावसेर इन सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै । यह तेल–दारुणगण्डमाला रोगको दूर करैहै ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ तुम्बीतैलम् ।

विडंगक्षारसिन्धूग्रावासाग्निव्योषद[illegible]ः ।
कटुतुंबीफलरसैःकटुतैलंविपाचयेत् ॥
चिरोत्थमपिनस्येनगलगंडंविनाशयेत् ॥ ७ ॥

उग्रा वचा ।

अर्थ–कडवा तेल एकसेर, कड़वी तोंबीका रस चारसेर और कल्कके लिये वायाविडंग, जवाखार, सैंधानोन, वच, अडूसा, चीता, सोंठ, पीपल, कालीमिरच और देवदारु प्रत्येक दो दो तोले, सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै । इसतेलके द्वारा नास देनेसे गलगण्डरोग दूर होताहै ॥ ७ ॥

अथ शाखोटतैलम् ।

प्रियंगुयष्टीमधु[illegible]सपिप्पलीचन्दन[illegible]स्तानिम्बम् ।

कल्कंविनिक्षिप्यविपाच्यतैलंचतुर्गुणेनस्यविधिप्रयुक्तम् ॥
शाखोटवल्कस्वरसेचसिद्धंहन्यात्प्रवृद्धान्गलगण्डरोगान् ८

अर्थ—कडवा तेल एकसेर, सिहोडेकी छालका रस चारसेर और कल्कके-लिये फूलप्रियंगु मुलैठी, कूठ पीपल, लालचन्दन, नागरमोथा और नीमकी छाल प्रत्येक दो दो तोले लेवे । सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको पकावे । इस तेलको नासके द्वारा व्यवहार करनेसे गलगण्ड रोग दूर होताहै ॥ ८ ॥

अथ निर्गुण्डीतैलम् ।

निर्गुण्डीस्वरसेवापिलांगलीमूलकल्कितम् ।
तैलंनस्यान्निहन्त्याशुगंडमालांसुदारुणाम् ॥ ९ ॥

अर्थ—तेल एकसेर, सम्हालूका रस चार सेर, कल्कके लिये कलिहारीकी जड पावसेर और जल चारसेर ले यथाविधिसे तेलको सिद्ध कर नास लेनेसे घोर गंडमालारोग दूर करैहै ॥ ९ ॥

अथ त्रिफलादिगुटिका ।

त्रिफलायास्त्रयोभागाव्योपाच्चद्विगुणोमतः ।
तस्माच्चद्विगुणंज्ञेयंकांचनालस्यवल्कलम् ॥ १० ॥
एकीकृत्यतुचूर्णेऽस्मिन्समोदेयोऽथगुग्गुलुः ।
क्षौद्रंदशगुणंदद्यात्त्रिफलाचूर्णतोभिषक् ॥ ११ ॥
सर्वासुगण्डमालासुगलगण्डेतथैवच ।
नाडीव्रणेषुगंडेषुगुटिकेयंप्रशस्यते ॥ १२ ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, प्रत्येक एकएक भाग, सोंठ, पीपल, और कालीमिरच, प्रत्येक दो दो भाग, लालकचनार चारभाग और गूगुल सबकी बराबर, इनसब द्रव्योंको एकत्र पीस दशभाग सहत मिलाकर गोली बनालेवे । इनगोलियोंको सेवन करनेसे गण्डमाला, गलगण्ड, नाडीव्रण और गण्डरोग दूरहोताहै ॥ १०–१२ ॥

अथ वचाद्यंचूर्णम् ।

वचाशठीहरिद्रेद्वेदार्वीन्द्रयवमुस्तकम् ।
पथ्याचातिविषाशुण्ठीसर्वंदशपलंपृथक् ॥ १३ ॥

चतुर्द्रोणेम्भसःपक्त्वापादशेषेविपाचयेत् ।
सर्पिःप्रस्थंपलोन्मानैःक्काथ्यद्रव्यैःसुपेषितैः ॥ १४ ॥
प्रक्षिप्यत्रिगुणंक्षौद्रंव्योषचूर्णात्पलानिषट् ।
यथाबलंपिबेत्कालंयथेष्टाहारमेवच ॥ १५ ॥
गंडमालांनिहन्त्याशुबहुवर्षसमुद्भवाम् ।
कासंश्वासंप्रतिश्यायंगलगंडंमुखामयम् ॥ १६ ॥

अर्थ-गायका घी एक सेर, क्काथके लिये बच, कचूर, हलदी, दारुहलदी, देवदारु, इन्द्रजव, नागरमोथा, हरड. अतीस और सोंठ प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल चारद्रोण, शेष एक द्रोण. कल्कके लिये पूर्वोक्त क्काथद्रव्य प्रत्येक एक एक पल यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे जब सिद्ध होजाय तब छानकर तिगुना सहत और छ पल त्रिकुटेका चूर्ण मिलादेवे। इसको बलाबलका विचारकर और समयको देख पान करे और इसपर यथेष्ट भोजन करे। यह बहुत वर्षोंसे उत्पन्न हुए गंडमाला रोगको तथा खाँसी, श्वास, प्रतिश्याय गलगंड और मुखरोगको दूर करैहै ॥ १३-१६ ॥

अथ पंचतिक्तकगुग्गुलुः ।

प्रयोज्योगंडमालायांपंचतिक्तकगुग्गुलुः ।
वनकार्पासिकामूलंतण्डुलैःसहयोजितम् ।
पक्त्वातुपोलिकांखादेदपचीनाशनायतु ॥ १७ ॥

अर्थ-पंचतिक्त गूगुलको सेवन करनेसे गंडमालारोग आराम होताहै। वनकपासकी जड और चावल दोनोंको एकत्र पीस पोलिका बनाकर खानेसे अपचीरोग दूर होताहै ॥ १७ ॥

अथ त्रिगुणाख्यं ताम्रम् ।

द्विभागगन्धेनरसेनभागंदिनंचकुर्याःस्वरसेनघृष्टम् ।
निक्षिप्यताम्रस्यपुटेरसेनतुल्यंमृदातत्रपुटंददीत ॥ १८ ॥
पुटेघृताक्तंमधुनासमेतंफलत्रयेणमधुनाघृतेन ।
भगन्दरघ्नोहिरसोऽयमुक्तोददीतपथ्यंमधुरंहितञ्च ॥ १९ ॥
स्त्रियं दिवास्वापञ्च वर्जयेत् ।

अर्थ-दो भाग गंधक और एक भाग पारा दोनोको एकत्र कुरीधानोके रसमें खरल करै, पश्चात् पारेकी समान ताम्रपुट बनाकर उसमें इनको रख मृत्तिकासे लेप कर पुटपाक करै। यह औषधि घृत और सहतके साथ अथवा त्रिफलेका चूर्ण और सहतके साथ सेवन करनेसे भगन्दर रोग दूर होताहै। पथ्य-मधुर और हितकारक पदार्थ भोजन करै। स्त्रीसंभोग और दिवानिद्रा त्याग देवे॥ १८॥ १९॥

अथ व्योषादितैलम्।

व्योषंविडंगंमधुकंसैन्धवंदेवदारुच।
तैलमेभिःसमंनस्यात्सकृच्छ्रामपचींजयेत्॥ २०॥

अर्थ-तिलोंका तेल एक सेर, जल चार सेर और कल्कके लिये सोंठ, पीपल, कालीमिरच, वायविडंग, मुलेठी, सेंधानोन और देवदारु प्रत्येक दो दो तोले लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर नास लेनेसे अत्यन्त कष्टयुक्त अपची रोग दूर होताहै॥ २०॥

अथ चंदनाद्यंतैलम्।

चन्दनंसाभयालाक्षावचाचकटुरोहिणी।
एभिस्तैलंशृतंपीतंसमूलामपचींजयेत्॥ २१॥

अर्थ-तेल एकसेर, जल चारसेर और कल्कके लिये लाल चंदन, हरड, लाख वच और कुटकी, प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबको मिलाकर तेलको सिद्ध कर पान करनेसे मूलसहित अपचीरोग दूर होताहै॥ २१॥

अथ गुंजाद्यं तैलम्।

गुंजाभयारिश्यामार्कसर्षपैर्मूत्रसाधितम्।
तैलन्तुदशधापश्चात्कणालवणपंचकम्॥ २२॥
मरिचैश्चूर्णितैर्युक्तंसर्वावस्थागतंजयेत्।
अभ्यंगादपचींनाडींवल्मीकार्शोर्बुदव्रणान्॥ २३॥

इति गलगंडगण्डमालाध्यायः।

अर्थ-तिलका तेल एक सेर, गोमूत्र चारसेर और कल्कके लिये गुंजाकी जड, हरड, करियावासाऊ, खर और सरसों प्रत्येक दो दो तोले सबको मिलाकर दशवार पकावे, पश्चात् पीपल, पांचोंनोन और कालीमिरचका चूर्ण मिला-

देवे । इसतेलको शरीरादिमें मर्दन करनेसे अपचीरोग, नाड़ी व्रण, वल्मीकरोग बवासीर, अर्बुद रोग और सर्वप्रकारके व्रण दूर होतेहैं ॥ २२ ॥ २३ ॥

इति गलगंडगंडमालाऽधिकारः समाप्तः ।

अथ श्लीपदचिकित्सा ।

लंघनालेपनस्वेदरेचनैरक्तमोक्षणैः ।
प्रायःश्लेष्महरैरुष्णैःश्लीपदंसमुपाचरेत् ॥ १ ॥
युंज्याल्लघूनिचान्नानियवान्नश्चहितंतथा ।
कटुतैलंकूर्म्ममांसमशान्तोदाहमग्निना ॥ २ ॥

अर्थ—लंघन, प्रलेप, स्वेद, विरेचन, रक्तमोक्षण, श्लेष्मनाशक क्रिया उष्णक्रिया, लघु अन्न, यवान्न, सरसोंका तेल, कछुवेका मांस और अग्निदाह इन सब योगोंसे श्लीपद रोग शान्त होताहै ॥ १ ॥ २ ॥

अथ श्लीपदप्रलेपनानि ।

शाम्यतिपिच्छिलगुटिकासर्षपकल्कोपनाहतःसपदि ।
सैवलतात्वंगच्छतिकरचरणशोथतामपिच ॥ ३ ॥
धत्तूरैरण्डनिर्गुण्डीवर्षाभूशिग्रुसर्षपैः ।
प्रलेपःश्लीपदंहन्तिचिरोत्थमपिदारुणम् ॥ ४ ॥
निष्पिष्टमारनालेनरूपिकामूलवल्कम् ।
प्रलेपःश्लीपदंहन्तिबद्धमूलमपिध्रुवम् ॥ ५ ॥
हिताश्चालेपनेनित्यंचित्रकोदेवदारुच ।
सिद्धार्थशिग्रुकल्कोवासुखोष्णोमूत्रपेपितः ॥ ६ ॥

गोमूत्रेण त्रयो योगाः ।

रजनींगुडसंयुक्तांगोमूत्रेणपिबेन्नरः ।
वर्षोत्थंश्लीपदंहन्तिदद्रुकुष्टंविशेषतः ॥ ७ ॥

अर्थ—सरसोंको पीसकर गोली बना उन गोलियोंका लेप करनेसे हस्तपदगत श्लीपदजनित शोथ दूर होताहै । धतूरा, अरण्ड, सम्हालू, पुनर्नवा, सैंजिना और सरसों, इनसबको गोमूत्रमें पीसकर लेपकरनेसे बहुत पुराना घोर श्लीपदरोग दूर होताहै । लाल आकके वृक्षकी जड़की छालको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे श्लीपदकी सूजन दूर होतीहै । लाल चीता और देवदारु दोनोको गोमूत्रमें पीस-

कर अथवा सफेद सरसों और सैंजिनेकी जड़की छालको गोमूत्रमें पीस कुछ कुछ गरम लेप करनेसे निश्चय शोथसंयुक्त श्लीपद रोग नष्ट होताहै । हलदीके चूर्णको गुड़में मिलाकर गोमूत्रके साथ पीनेसे एक वर्षका श्लीपदरोग और दद्रु कुष्ठ रोग दूर होताहै ॥ ३-७ ॥

अथ कृष्णाद्यो मोदकः ।

कृष्णाचित्रकदन्तीनांकर्षमर्द्धपलंपलम् ।
विंशतिश्चहरीतक्यागुडस्यचपलद्वयम् ॥
मधुनामोदकंखादेच्छ्लीपदंहन्तिदुस्तरम् ॥ ८ ॥

अर्थ-पीपलका चूर्ण एकतोला, चीतेकी जड़का चूर्ण दोतोले और दन्तीकी जड़का चूर्ण चार तोले, हरड, बीस और गुड़ आठ तोले लेवे, सबको गुड़में मिलाकर मोदक बनालेवे । यह मोदक सहतके साथ खानेसे दुस्तर श्लीपदरोग दूर होताहै ॥ ८ ॥

अथ विविधयोगाः ।

जिङ्गिन्यास्तुदलैःपिष्टैःकांजिकेनोष्णतांगतैः ।
स्वेदःश्लीपदनाशायकर्त्तव्यःसंप्रजानता ॥ ९ ॥
स्वेदःस्नेहोपनाहांश्चश्लीपदेऽनिलजेभिषक् ।
मंजिष्ठामधुकंरास्नासहिंस्रासपुनर्नवा ॥ १० ॥
पिष्ट्वारनालैर्लेपोऽयंपित्तश्लीपदनाशनः ।
पूतीकस्वरसंकोष्णंक्षारसैन्धवसंयुतम् ।
पिबेत्कटुकतैलेनश्लीपदानांनिवृत्तये ॥ ११ ॥
गंधर्वतैलभृष्टांहरीतकींगोजलेनयःपिबति ।
श्लीपदबंधनमुक्तोभवत्यसौसप्तरात्रेण ॥ १२ ॥
वर्षाभूत्रिफलाचूर्णंपिप्पल्यासहयोजितम् ॥
सक्षौद्रंविलिहँल्लेहंचिरोत्थंश्लीपदंजयेत् ॥ १३ ॥

अर्थ-जिंगिनीके पत्तोंको काँजीमें पीस गरम कर स्वेद देनेसे श्लीपद रोग दूर होताहै । वैद्य; वातज श्लीपदरोगमें स्वेद, स्नेह और प्रलेप प्रयोग करै । मँजीठ, मुलेठी, रास्ना, कटेरी, और पुनर्नवा यह सब द्रव्य समानभाग लेकर काँजीमें पीस लेप करनेसे श्लीपदरोग दूर होताहै । करंजकी छालका रस गरम करके

जवाखार और सैंधानोनका चूर्ण तथा सरसोंका तेल मिलाकर पान करनेसे श्लीपदरोग आराम होताहै। अरण्डके तेलमें भुनी हुई हरड गोमूत्रके साथ पान करनेसे सात दिनमें श्लीपदरोग दूर होताहै। पुनर्नवा, हरीतकी, आमला, बहेडा और पीपल इन सबका समानभाग चूर्ण सहतके साथ सेवन करनेसे श्लीपदरोग दूरहोताहै ॥ ९-१३ ॥

अथ वृद्धदारचूर्णम्।

त्रिकटुत्रिफलाचव्यंदार्वीवरुणगोक्षुरम्।
अलम्बुषांगुडूचींश्चसमभागानिचूर्णयेत् ॥ १४ ॥
सर्वेषांचूर्णमाहृत्यवृद्धदारस्यतत्समम्।
कांजिकेनचतत्पेयमक्षमात्रंप्रमाणतः ॥ १५ ॥
जीर्णेचापरिहारंस्याद्भोजनंसार्वकालिकम्।
नाशयेच्छ्लीपदंस्थौल्यमामवातंचदारुणम् ॥
गुल्मकुष्ठानिलहरंवातश्लेष्मज्वरापहम् ॥ १६ ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, चव्य, दारुहलदी, बरना, गोखुरू, गोरखमुण्डी और गिलोय इनसबको समानभाग लेकर चूर्ण करले और सर्वचूर्णके बराबर विधारेका चूर्ण मिलादेवे, इसको काँजीके साथ दो तोले-भर पान करनेसे श्लीपदरोग, स्थूलता, दारुण आमवात, गुल्म, कुष्ठ, वातरोग और वातकफज्वर दूर होताहै ॥ १४-१६ ॥

अथ पिप्पल्यादिचूर्णम्।

पिप्पलीत्रिफलादारुनागरंसपुनर्नवम्।
भागैर्द्विपलिकैरेषांतत्समंवृद्धदारकम् ॥ १७ ॥
कांजिकेनपिबेच्चूर्णकर्षमात्रंप्रमाणतः।
जीर्णेचापरिहारंस्याद्भोजनंसार्वकालिकम् ॥ १८ ॥
श्लीपदंवातरोगांश्चहन्यात्प्लीहानमेवच।
अग्निंश्चकुरुतेघोरंभस्मकंचनियच्छति ॥ १९ ॥

अर्थ-पीपल, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, सोंठ, पुनर्नवा, प्रत्येक दो दो पल और सबकी बराबर विधारा लेवे सबका बारीक चूर्ण कर दो तोले

भर काँजीके साथ पान करनेसे श्लीपदरोग वातरोग और प्लीहारोग दूर होता-है । और जठराग्निको भस्माग्निकी समान दीपन करैहै ॥ १७-१९ ॥

अथ निर्गुण्ड्यादिसंधानम् ।

निर्गुंडीतिन्तिडिकाशिखिमन्थदलंपुनर्नवामूलम् ।
भेत्तापाषाणानांगोक्षुरकःपारिभद्रत्वक् ॥ २० ॥
एतैःपलार्द्धैर्योराशिस्ततःस्याद्द्विगुणःखलिः ।
तैलेनसर्षपाणाञ्चतदेकीकृत्ययत्नतः ॥ २१ ॥
शालेर्मण्डेनसंदध्यात्सप्तरात्रंनवेघटे ।
ततःसर्षपतैलेनपिबेत्कर्षप्रमाणतः ॥ २२ ॥
जीर्णेभुञ्जीतशाल्यन्नंमुद्गानांपक्षिणांरसैः ।
पंचाशद्वर्षजातञ्चजातांकुरमपिध्रुवम् ।
त्रिसप्ताहाज्जयत्याशुश्लीपदंनात्रसंशयः ॥ २३ ॥
शिखिमन्थो गणिकारिका । निर्गुंड्यादित्रयस्यपत्रंसर्वेषां चूर्णंसर्षपखलिश्चवस्त्रच्छाननादधःपतितोरौद्रेणशोषितो ग्राह्यः । मिश्रयित्वायोज्यःकटुतैलंमण्डस्त्वालोडनयोग्यः ॥

अर्थ-सम्हालूके पत्ते, इमलीके पत्ते, अरणी, पुनर्नवेकी जड, पाखानभेद, गोखुरू और फरहदकीछाल,प्रत्येक दो दो तोले और इनसे दुगुनी सरसोंकी खल एकत्र कूटकर सरसोंके तेलमें खूब चलाकर मिलादेवे, पश्चात् इसमें चावलों-का माँड मिलाकर एक नवीन मिट्टीके घडेमें भरके सातदिनतक रखवा रहनेदे । फिर इसमें सरसोंका तेल मिलाकर दो तोले प्रमाण पिये तो निश्चय श्लीपदरोग दूर होवे । इस औषधिके जीर्ण होनेपर मूंगमसूरादि दालका यूष और कपोत, लावादि पक्षियोंके मांसका यूष शालिधानके चावलोंके भातके साथ भोजन करे ॥ २०-२३ ॥

अथ दन्त्यादिघृतम् ।

दन्तीमूलंपलंदद्यात्त्रिवृन्मूलपलंतथा ।
त्रिफलातिविषाचित्राविडंगार्द्धपलंपृथक् ॥ २४ ॥

स्नुहीक्षीरसमंतोयेघृतस्यकुडवंपचेत्।
बिन्दुमात्रप्रयोगेणवेगःसमुपजायते॥
दुर्वारश्लीपदंहन्तिवृक्षमिन्द्राशनिर्यथा॥ २५॥
तोये चतुर्गुणे।

अर्थ–गायका घी आधासेर, जल दोसेर, थूहरका दूध आधासेर, और कल्कके लिये दन्तीकीजड़ एकपल, निशोतकी जड एकपल, तथा हरड, बहेडा, आमला, अतीस, लालचीता और बायविडंग, प्रत्येक दो दो तोले लेवे। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, इस घृतको एक बिंदुभर खानेसे जुलाव होताहै, और दुर्वार श्लीपदरोग आराम होताहै॥ २४॥ २५॥

अथ सौरेश्वरघृतम्।

सुरसादेवकाष्टश्चत्रिकटुत्रिफलातथा।
लवणानिचसर्वाणिविडंगान्यथचित्रकम्॥ २६॥
चविकापिप्पलीमूलंगुग्गुलुर्हपुषावचा।
यवाग्रश्चैवपाठाचवचैलावृद्धदारकम्॥ २७॥
कल्कैश्चकार्षिकैरेतैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
दशमूलीकषायेणधान्ययूषद्रवेणच॥ २८॥
दधिमण्डसमायुक्तंप्रस्थंप्रस्थंपृथक्पृथक्।
पक्वंस्यादुद्धृतंकल्कात्पिबेत्कर्षत्रयंहविः॥ २९॥
श्लीपदंकफवातोत्थंमांसरक्ताश्रितंजयेत्।
मेदःश्रितंचवातोत्थंहन्यादेतन्नसंशयः॥ ३०॥
अपचींगंडमालांचअंत्रवृद्धिन्तथार्बुदम्।
नाशयेद्ग्रहणीदोषंश्वयथुंगुदजानिच॥ ३१॥
परमाग्निकरंहृद्यंकोष्ठक्रिमिविनाशनम्।
घृतंसौरेश्वरंनामश्लीपदंहन्तिसेवितम्।
जीवकेनकृतंह्येतद्रोगानीकाविनाशनम्॥ ३२॥

अर्थ—गायका घी दोसेर, दशमूलका क्काथ दोसेर, धानोंका यूष दो सेर काँजी दोसेर, दहीका मंड दोसेर और कल्कके लिये तुलसी, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, सैंधानोन, विडनोन, कालानोन, समुद्रनोन, औद्भिदनोन, वायबिडंग, चीता, चव्य, पीपरामूल, गूगुल, हाऊबेर, बच, जवाखार, पाढ़, बडी इलायची और विधारा प्रत्येक दो दो तोले लेवे। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे। प्रतिदिन तीनकर्ष प्रमाण इस घृतको पीवे, इससे कफवातोद्भव श्लीपदरोग, मांसरक्ताश्रित श्लीपदरोग, मेदाश्रित श्लीपदरोग, वातोत्पन्न श्लीपदरोग अपची, गंडमाला, अन्त्रवृद्धि, अर्बुद संग्रहणीरोग, सूजन, ववासीर, यह सब रोग दूर होतेहैं। अत्यन्त जठराग्निको दीपन करनेवाला हृदयको हितकारी, कोष्ठरोगको दूर करताहै। यह सौरेश्वर घृत निश्चय श्लीपदरोग दूर करेहै ॥ २६–३२ ॥

अथ महासौरेश्वरघृतम्।

सुरसानांपलशतंपंचमूलीद्वयस्यच ।
शतंसंगृह्यसंक्षुद्यजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ३३ ॥
तेनपादावशेषेणघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
धान्ययूषश्चमण्डश्चदध्नःप्रस्थचतुष्टयम् ॥ ३४ ॥
कल्कान्येतानिदेयानित्रिकटुत्रिफलानिच ।
निर्गुण्डीचित्रकश्चैवदेवदारुचयष्टिका ॥ ३५ ॥
पंचानांलवणानांचयवक्षारश्चपिप्पली ।
चविकाहपुपादार्वीगुग्गुलुर्वृद्धदारकम् ॥ ३६ ॥
शठीवचाविडंगैलापाठापालाशकंतथा ।
पिचुभागःप्रदातव्यःपक्तव्यंसुसमाहितैः ॥ ३७ ॥
विरेकान्तरितेकुर्याद्विडालपदमात्रकम् ।
इदंहिविविधान्रोगान्कफवातोद्भवानपि ।
श्लीपदान्विविधान्घोरान्करकर्णाश्रितानपि ॥ ३८ ॥
विद्रधिंचार्बुदश्चापिविविधानुदरस्थितान् ।
ब्रध्नवृद्धिगदांश्चापिमेदोमांसाश्रितानपि ॥ ३९ ॥

रक्ताश्रितान्गदान्हन्तिवृक्षमिंद्राशनिर्यथा।
घोरनाडीव्रणान्छोथान्गंडमालांश्चदारुणान् ॥ ४० ॥
नातःपरतरंश्रेष्ठंविद्यतेश्लीपदेगदे ।
सज्वरंविज्वरश्चैवचिरजंकुलजन्तथा ॥
प्रोक्तंहारीतमुनिनामहासौरेश्वरंघृतम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-गायका घी दो सेर, काथके लिये तुलसी १०० सौ पल, दशमूल १०० पल, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठसेर, धान्ययूष आठसेर, दहीका मण्ड आठसेर कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, सम्हालू, चीता, देवदारु, मुलेठी, पांचोंनोन, जवाखार, पीपल, चव्य, हाऊबेर, दारुहलदी, गूगुल, विधारा, कचूर, वच, वायविडंग, वडी इलायची, पाढ और ढाकके बीज प्रत्येक दो दो तोले लेवे। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै। इसको दो तोलेभर नित्य खाय, इसमे नानाप्रकारके कफवातसे उत्पन्न हुए रोग, विविध प्रकारके श्लीपदरोग, हाथके रोग, कानके रोग, विद्रधि, अर्बुद, अनेकप्रकारके उदररोग, ब्रध्नवृद्धिरोग, मेद, मांस और रुधिरके रोग दूर होतेहैं। तथा घोर नाडीव्रण, सूजन, गंडमाला, इन सबको यह घृत दूर करैहै। इससे परे और कोई दूसरी औषधि श्लीपदरोगकी नहीं है। यह ज्वरयुक्त, ज्वररहित, पुराना और कुलज श्लीपद रोगको दूर करैहै। यह महासौरेश्वर घृत हारीतमुनिने कहाहै ॥ ३३-४१ ॥

अथ वृद्धदारकाद्यंघृतम्।

द्विपलंवृद्धदारस्यतदर्द्धश्चमहौषधम् ॥
पिप्पलीत्रिफलादार्वीचित्रकंसपुनर्नवम् ॥ ४२ ॥
एभिश्चार्द्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
श्लीपदंनाशयत्याशुगृध्रसीशोथशूलनुत् ॥
पाण्डुरोगामवातघ्नंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ ४३ ॥

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठसेर और कल्कके लिये विधारा दोपल सोंठ एकपल, पीपल, त्रिफला, दारुहलदी, चीता और पुनर्नवा, प्रत्येक दोदो तोले लेकर विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै। यह घृत-श्लीपद रोग, गृध्रसीवात, सूजन, शूल, पाण्डुरोग, और आमवातको दूर करैहै, तथा बल, वर्ण और अग्निको बढावे है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

अथ वृद्धदारकघृतंतैलंच ।

घृतप्रस्थंविपक्तव्यंसव्योषंवृद्धदारकैः ।
कल्कैःसौवीरसिद्धंस्याच्छ्लीपदानांनिवृत्तये ॥ ४४ ॥
अग्निंचकुरुतेदीप्तमामवातेचशस्यते ।
एतैःकटुपचेत्तैलंपानाच्छ्लीपदनाशनम् ॥ ४५ ॥
सौवीरं संधानविशेषः तदभावे कांजिकम् ॥

अर्थ—गायका घी अथवा सरसोंका तेल दोसेर, सौवीर नामवाली काँजी आठसेर और कल्कके लिये त्रिकुटा और विधारा दोनो मिलेहुए आधसेर, तथा जल आठसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको अथवा तेलको सिद्ध करे। इस घृत अथवा तेलको पानकरनेसे श्लीपदरोग दूर होताहै ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अथ बिडंगाद्यंतैलम् ।

बिडंगमरिचार्केषुनागरेचित्रकेतथा ।
भद्रदार्वेलकाख्येचसर्वेषुलवणेषुच ॥
तैलंपक्कंपिबेद्वापिश्लीपदानांनिवृत्तये ॥ ४६ ॥

अर्थ—कडवातेल दोसेर, जल आठसेर और कल्कके लिये बायबिडंग, कालीमिरच, आककी जड, सोंठ, चीता, देवदारु, इलायची और पाँचोंनोन प्रत्येक डेढ डेढ तोले । सबको मिलाकर विधिपूर्वक तेलको सिद्धकरे । यह तेल—श्लीपदादि रोगोंको दूर करैहै ॥ ४६ ॥

अथ धान्यादिघृतगुग्गुलुः ।

धात्रीशिवामृतादन्तीवह्निगोक्षुररोहिणी ।
कणादर्वीङ्गुदीपूतिशुण्ठीनांपलपंचकम् ॥ ४७ ॥
प्रत्येकंक्काथयेत्सर्वंजलद्रोणेभिषग्वरः ।
घृतप्रस्थोविपक्तव्योदत्त्वापुरपलाष्टकम् ॥ ४८ ॥
धान्ययूपस्यचप्रस्थेशनैर्मृद्वाग्निनाततः ।
कर्षमात्रन्तुकर्त्तव्यंघृतमेतदनुत्तमम् ॥ ४९ ॥
कठोरंश्लीपदंहन्तिगंडमालांत्रिदोषजाम् ।
चिरोत्थमपिशोथञ्चआमवातंसुदारुणम् ॥ ५० ॥

स्थौल्यंपाण्डुंकामलाञ्चवातश्लेष्मभवांरुजम् ।
जीर्णज्वरंतथाशूलंनाडीव्रणमथार्बुदम् ।
अपचींगंडमालाञ्चसर्वमेतद्व्यपोहति ॥ ५१ ॥

अर्थ–गायका घी दो सेर, धान्ययूष दो सेर, गूगुल एकसेर, क्वाथके लिये आमला, हरड, गिलोय, दन्ती, चीता, गोखुरू, कुटकी, पीपल, दारुहल्दी, हिंगोट, पूतिकरंज और सोंठ प्रत्येक पांचपांच पल, जल बत्तीससेर, शेष आठसेर, इस विधिसे इसघृतगुग्गुलुको सिद्ध कर एककर्ष प्रमाण सेवन करे। यह-कठोर श्लीपद रोग, त्रिदोषज गंडमाला, बहुत पुराना शोथ दारुण आमवात, स्थूलता, पाण्डुरोग, कामला, वातकफोद्भवरोग, जीर्णज्वर, शूल, नाडीव्रण, अर्बुद, अपची, गण्डमाला इनसबको दूर करैहै ॥ ४७–५१ ॥

अथ चक्रेश्वरो रसः ।

ताम्रंगंधंसमंसूतंशुद्धंमर्द्यंदिनत्रयम् ।
मेघनादोनागवल्लीपाठापुनर्नवाद्रवैः ॥ ५२ ॥
गोमूत्रैर्मर्दयेद्गाढंचक्रयन्त्रेदिनंपचेत् ।
माषैकंभक्षयेदेतच्छ्लीपदंहन्तिदुस्तरम् ॥ ५३ ॥
खदिरंपद्मकाष्ठञ्चमधुकञ्चाष्टमाषकम् ।
गवांमूत्रैःसमंपिष्ट्वापिबेच्छ्लीपदशान्तये ॥ ५४ ॥
गर्त्तादधोभवेद्वह्निर्मध्यगर्त्ताद्रसंकुरु ।
चक्रयन्त्रमिदंसिद्धंबाह्यगर्त्तादबृहत्पुटम् ॥ ५५ ॥

अर्थ–शुद्धताँबा एकभाग, शुद्ध गंधक एकभाग, शुद्धपारा एकभाग, इन तीनोको चौलाई, पाढ और पुनर्नवेके रसमें तथा गोमूत्रमें तीन दिन खरल करै एकदिन चक्रयंत्रमें पकावे।इसको एकमासेभर खावे तो निश्चय श्लीपद रोग दूर होवे। इसके ऊपर खैर, पद्माख, सहत, इनको गोमूत्रमें मिलाकर आठमासेभर पीवे। गड्ढेके अधोभागमें अग्नि, मध्यभागमें रस और बाहर बृहत्पुट दीजावे, इसको चक्रयंत्र कहतेहैं ॥ ५२–५५ ॥

अथ नित्यानन्दरसः ।

हिंगूलसंभवंसूतंगंधकंमृतताम्रकम् ।
कांस्यंवंगंहरीतालंतुत्थंशंखंवराटकम् ॥ ५६ ॥

त्रिकटुत्रिफलालौहंविडंगंपटुपंचकम्।
चविकापिप्पलीमूलंहपुषाचवचातथा ॥ ५७ ॥
शठीपाठादेवदारुएलाचवृद्धदारकम्।
एतानिसमभागानिसंचूर्ण्यवटिकांकुरु ॥ ५८ ॥
त्रिवृच्चित्रकदन्तीनांभावयित्वारसैः पृथक्।
हरीतकीरसंदत्त्वापंचगुंजानिभांशुभाम् ॥ ५९ ॥
एकैकांभक्षयेद्रोगीशीतंचानुपयःपिबेत्।
श्लीपदंकफवातोत्थंरक्तमांसाश्रितश्चयत् ॥ ६० ॥
मेदोगतंधातुगतंहंत्यवश्यंनसंशयः।
अर्बुदंगंडमालांचअंत्रवृद्धिंचिरन्तनीम् ॥ ६१ ॥
वातपित्तेश्लेष्मवातेगुदरोगेक्रिमौतथा।
अग्निवृद्धिंकरोत्येवबलवर्णश्चसुस्थताम् ॥ ६२ ॥
श्रीमद्गहननाथेननिर्मितोविश्वसंपदि।
नित्यानन्दरसोनाम्नाश्लीपदव्याधिनाशकः ॥ ६३ ॥
आनन्दयतिलोकेशःशिवोबाणासुरंयथा ॥
तथैवरोगिणांनित्यंब्रध्नवृद्धौचसर्वजे ॥ ६४ ॥
रक्तजेपित्तजेचापिपथ्यंयोज्यंसदाबुधैः।
अभावेवृद्धदारस्यत्रिवृताश्चनियोजयेत् ॥ ६५ ॥

अर्थ-गिग्रफसे निकाला हुआ पारा, गंधक, ताँबेकी भस्म, कांसी, वंग, हरिताल, नीलाथोथा, शंख, कौडी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, लोहा, बायविडंग, पांचोंनोन, चव्य, पीपरामूल, हाऊबेर, वच, कचूर, पाढ, देवदारु, इलायची और विधारा इन सबको समानभागले चूर्णकर निसोत, चीता, दन्ती और हरड प्रत्येकके रसमें अलग२ भावना देकर पांचपांच रत्तीकी गोली बनालेवे। एकगोली प्रतिदिन खाय और ऊपरसे शीतल जलका अनुपान करे। यह-कफवातोद्भव श्लीपदरोग, रक्तमांसाश्रित श्लीपदरोग, मेदोगत-श्लीपदरोग, धातुगत श्लीपदरोग, अर्बुद, गण्डमाला, बहुत पुराना अन्त्रवृद्धि-रोग, वातपित्त, श्लेष्मवात, गुदरोग, क्रिमिरोग इनसबको दूर करैहै। अग्निको

दीपनकरै, वल, वर्ण और सुस्थताको बढावैहै। यह श्लीपदरोगनाशक नित्यानन्द रस श्रीमद्गहननाथ वैद्यने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै। तथा ब्रध्नवृद्धि त्रिदोषज, रक्तज और पित्तज इनसवको हरैहै। इसके ऊपर सदा पथ्य देवे। इसयोगमें जो विधारा नहीं मिले तो निसोत अथवा (समुद्रशोष) लेवे ॥ ५६–६५ ॥

अथ कामदेवरसः।

रसगंधकताम्राणिकाचंसीसंसमंसमम्।
पिप्पलीत्रिवृताशुण्ठीधन्याकंचहरीतकी ॥ ६६ ॥
रसतस्त्रिगुणोग्राह्यःप्रत्येकंचूर्णमेवच।
रसपादंप्रदातव्यंहिंगुचैवयवानिका ॥ ६७ ॥
अर्द्धमाषावटीकार्याखादेदेकांयथाबलम्।
निहन्तिश्लीपदंरोगंदोषत्रयसमुद्भवम् ॥ ६८ ॥
पैत्तिकेभक्षयेद्यूषंश्लैष्मिकेशुण्ठिसैंधवम्।
वातिकेतक्रभक्तानिविष्टम्भंपरिवर्जयेत् ॥ ६९ ॥
कामदेवरसश्चायंतद्वद्देहंकरोत्यलम्।
श्रीमद्गहननाथेनरचितोविश्वसंपदि ॥ ७० ॥

अर्थ–पारा, गंधक, ताँवा, काँच और सीसा प्रत्येक एकभाग, पीपल, निसोत, सोंठ, धनियाँ और हरड प्रत्येक तीनभाग, तथा हींग और और अजवायन प्रत्येक चौथाई भाग, सबको वारीक पीसकर आधे आधे मासेकी गोली बना लेवे। प्रतिदिन एक गोली बलको विचारकर खावे। यह त्रिदोषज–श्लीपदरोगको दूर करैहै। यह औषधि सेवन करके मनुष्योंको चाहिये जो पित्तका श्लीपद होयतो मूँग,माषादिके यूपके साथ भोजन करें। कफका श्लीपद होय तो सैंधेनोनका चूर्ण और सोंठका चूर्ण भक्षण करैं। और वातज श्लीपद होय तो तक्रके साथ भात भोजन करैं, इसपर विष्टम्भी पदार्थ कभी न खावे। यह कामदेव रस देहको कामदेवकी समान करताहै, यह श्रीमद्गहननाथने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै ॥ ६६–७० ॥

अथ पंचाननघृततैलञ्च।

शालञ्चिकापलद्वन्द्वंपलद्वंद्वंपुनर्नवा।
इन्द्रसूरंपलद्वन्द्वंपलैकंचमरीफलम् ॥ ७१ ॥

गुंजादलंपलैकन्तुक्काथयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि ।
पादावशेषेविपचेद्द्रोघृतप्रास्थिकंसुधीः ॥ ७२ ॥
अभयाचित्रकंक्षारंसैन्धवंविश्वभेषजम् ।
एतेषांकर्षमानेनवस्त्रपूतंविचूर्णितम् ॥ ७३ ॥
घृतेसिद्धेप्रदातव्यंतच्चमाषन्तुखादयेत् ।
पंचाननघृतंनामश्लीपदेगदकुम्भिनि ॥ ७४ ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहज्वरशोथविनाशनम् ।
श्रीमद्गहननाथेननिर्मितंविश्वसम्पदि ॥ ७५ ॥
गोमूत्रंश्लैष्मिकेदेयंदुग्धंवातेचपैत्तिके ।
सामान्यभोजनंदेयमनुपानंप्रकीर्तितम् ॥ ७६ ॥
एतत्तैलंप्रकर्त्तव्यंकल्केनवस्तुनाविना ।
घृतेनवाकृतंतैलंघृततुल्योगुणोभवेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ–शालिंच दो पल, पुनर्नवा दो पल, इन्द्रायण दो पल, सुपारी एक पल और चोंटलीके पत्ते एकपल, जल दोसेर, शेष आधसेर, गायका घी दोसेर, और कल्कके लिये हरड़, चीता, जवाखार, सेंधानोन और सोंठ, यह प्रत्येक दो दो तोले लेवे । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । यह पंचाननघृत श्लीपदरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, ज्वर और शोथरोगको दूर करैहै। यह श्रीमद्गहननाथने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै । श्लेष्मज श्लीपद होय तो गोमूत्रका अनुपान करै, जो तेल बनाना होय तो कल्ककी औषधियाँ न गेरै अथवा घृतहीमें तेलको डालकर पकावे तो घृतकी समान गुण करै ॥७१–७७॥

अथ कफवातशोथघ्नलेपः ।

पुनर्नवादारुशिग्रुदशमूलमहौषधैः ।
कफवातकृतेशोथेलेपःकोष्णोविधीयते ॥ ७८ ॥

अर्थ–पुनर्नवा, देवदारु, सँजिनेकी जड़, दशमूल और सोंठ यह सब समान भाग ले जलमें पीस लेपकरनेसे कफवातकृत शोथ दूर होताहै ॥ ७८ ॥

अथ श्लीपदारिलोहः ।

हरीतक्या बिभीतस्य धात्र्याश्चूर्णं सुचूर्णितम् ।
षट्तोलकप्रमाणेन ग्राह्यमेतद्गुणैषिणा ॥ ७९ ॥
तोलद्वयं लोहचूर्णं कान्तलोहस्य जारितम् ।
तोलद्वयं ततो देयं विशुद्धं च शिलाजतु ॥ ८० ॥
कृत्वैकत्र समस्तेषु त्रिफलाक्काथभावना ।
आशु श्लीपदविध्वंसी सर्वव्याधिविनाशनः ।
श्लीपदारिरिति ख्यातो लोहो मुनिभिरर्चितः ॥ ८१ ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला प्रत्येक छे छे तोले, जारित लोहेका चूर्ण दो तोले, शुद्ध शिलाजीत दो तोले इन सबको एकत्रकर त्रिफलेके काढेमें भावना देकर चूर्ण करले । यह श्लीपदरोगको शीघ्रही दूर करताहै इसको श्लीपदारि-लोह कहतेहैं ॥ ७९–८१ ॥

अथ वातरक्तान्तकोरसः ।

गंधकं पारदं लोहं घनतालं मनःशिला ।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ८२ ॥
विडंगं त्रिफला व्योषमब्धिफेनं पुनर्नवा ।
देवदारुं चित्रकं च दार्वी श्वेतापराजिता ॥ ८३ ॥
चूर्णमेषां पृथक्तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
त्रिफला भृंगराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा ॥ ८४ ॥
भावना खलु दातव्या ततः संचूर्ण्य भक्षयेत् ।
मधुना माषमात्रश्च प्रातःकाले दिने दिने ॥ ८५ ॥
कृत्वानुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ।
शाणमात्रं घृतैः कुर्यात्सर्ववातविकारनुत् ॥ ८६ ॥
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजं जयेत् ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्यलम् ॥ ८७ ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहा, अभ्रक, हरिताल, मैनशिल, शिलाजीत, गूगुल, बायविडंग, त्रिकुटा, त्रिफला, समुद्रफेन, पुनर्नवा, देवदारु, चीता, दारुहलदी और सफेद कोयला, इन सब द्रव्योंको समानभाग ले एकत्र चूर्णकर, त्रिफला, और भांगरेके रसकी तीन तीन भावना देकर चूर्ण करले । इसको सहतके साथ एक मासभर प्रतिदिन प्रातःकाल खावे, अनुपान-नीमके पत्ते, पुष्प और छालका चूर्ण कर चारमास घृतके साथ खाय । इससे-सर्वप्रकारके वातविकार, वातरक्त और महाघोर गंभीर तथा सर्वोपद्रवसंयुक्त वातरक्त रोग दूर होता-है ॥ ८२-८७ ॥

इति श्लीपदरोगाधिकारः समाप्तः ।

अथ विद्रधिचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नानि ।

विद्रधिंसर्वमेवात्रत्वरयाव्रणशोथिवत् ।
उपाचरेद्यथादोषंशोणितंचहरेच्छनैः ॥ १ ॥
जलौकःपातनंशस्तंसर्वस्मिन्नेवविद्रधौ ।
मृदुर्विरेकोलघ्वन्नंस्वेदःपित्तोत्तरंविना ॥ २ ॥

अर्थ-सर्वप्रकारके विद्रधिरोगकी चिकित्सा व्रणशोथकी समान करे, तथा दोषानुसार रक्तमोक्षण करावे । सर्वप्रकारके विद्रधिरोगमें जोंकोंको लगवाना अत्युत्तम है । पित्तज विद्रधिको छोडकर बाकी सर्वप्रकारके विद्रधिरोगोंमें मृदु विरेचन, हलका भोजन और स्वेद देवे ॥ १ ॥ २ ॥

अथ वातविद्रधिचिकित्सा ।

वातघ्नमूलकल्कैश्चवसातैलघृताप्लुतैः ।
सुखोष्णोबहुलोलेपःप्रयोज्योवातविद्रधौ ॥ ३ ॥
रास्नाहिंस्रादेवदारुबिल्वमूलाग्निमन्थकैः ।
मातुलुंगाम्लसंपिष्टैःसाज्यैर्लेपोऽत्रवातिके ॥ ४ ॥
स्वेदोपनाहाःकर्त्तव्याःशिग्रुमूलसमन्विताः ।
स्वेदःपयोवेशवाग्कुशरापायसैर्मतः ॥ ५ ॥
उपनाहश्चवातोक्तःप्रयोज्यःशाल्वनादिकः ।
यवगोधूममुद्गैश्चस्विन्नपिष्टैःप्रलेपयेत ॥ ६ ॥

विलीयतेक्षणेनैवअपक्कश्चैवविद्रधिः ।
दशमूल्यमृतापथ्यावर्षाभूदारुनागरैः ॥ ७ ॥
सशिग्रुक्कथितंपेयंज्वरेवातजविद्रधौ ।
पुनर्नवादारुविश्वदशमूलाभयाम्भसा ॥
गुग्गुलुंरुबुतैलंवापिबेन्मारुतविद्रधौ ॥ ८ ॥
कफानुबन्धे गुग्गुलुम् ।
इति वाते ।

अर्थ-वातज विद्रधिरोगमें वातघ्न औषधियोंकी जडको पीसकर घृत, तेल और वसामें मिलाकर कुछ कुछ गरम लेपकरै । रास्ना, कटेरी, देवदारु, वेलकी जड, अरणी, विजौरानीबू और अमलवेंत, इन सबको एकत्र पीसकर घीकेसाथ मिलाकर लेप करनेसे वातज विद्रधिरोग दूर होताहै, विद्रधिरोगमें स्वेद और प्रलेप देना होय तो सैंजिनेकी जडके साथ देवे, तथा दूध, वेशवार, कृशरा और पायसके द्वारा स्वेदप्रदान करै वातमें कहेहुए शाल्वनादि प्रलेप भी विद्रधिरोगमें करने चाहियें । जौ, गेहूं और मूँगको उबालकर पीसके लेपकरनेसे अपक्व-विद्रधि क्षणभरमेंही दूर होजावेगी । दशमूल, गिलोय, हरड, पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ और सैंजिनेकी जड, इनका एकत्र क्काथ बनाकर पीनेसे वातज विद्रधिरोग नष्ट होताहै । पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ, दशमूल और हरड इनके काढेके साथ गूगुल अथवा अण्डीके तेलको सेवन करनेसे वातज विद्रधिरोग दूर होताहै पुनर्नवादिक्काथके साथ गूगुल कफानुबन्ध वातजविद्रधिरोगमें प्रयोग करै ॥३-८॥

अथ पित्तविद्रधिचिकित्सा ।

पैत्तिकेशर्करालाजामधुकैःशारिवायुतैः ।
प्रदिह्यात्क्षीरपिष्टैर्वापयस्योशीरचन्दनैः ।
योगद्वयेऽपिक्षीरेणलेपनंपित्तविद्रधौ ॥ ९ ॥
पयस्या क्षीरकाकोली ।
पंचवल्कलकल्केनघृतमिश्रेणलेपयेत् ॥
सर्पिषाशतधौतेननवनीतेनवागवाम् ॥ १० ॥
त्रिवृद्धरीतकीनाञ्चचूर्णमधुयुतंपिबेत् ॥

पिबेद्वात्रिफलाक्काथंत्रिवृत्कल्काक्षसंयुतम् ॥ ११ ॥
इति पित्ते ।

अर्थ-मिश्री, खीलें, मुलैठी और अनन्तमूल इनको दूधमें पीसकर अथवा-क्षीरकाकोली, खश और लालचन्दन इनको दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे पित्तज विद्रधिरोग दूर होताहै। बड, गूलर, पीपल, पाखर और बेंत इन पाँचवृक्षोंकी छालको पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे पित्तजविद्रधिरोग दूर होताहै। सौ बार धुलेहुए घीका अथवा मक्खनका लेप करनेसे पित्तजविद्रधिरोग दूर होताहै निशोतका चूर्ण और हरडोंका चूर्ण समानभाग ले सहतके साथ सेवन करनेसे अथवा त्रिफलेके क्काथमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पान करनेसे पित्तज विद्रधि रोग दूर होताहै ॥ ९-११ ॥

अथ कफविद्रधिचिकित्सा ।

इष्टकासिकतालोहगोशकृच्चषपांशुभिः ।
मूत्रपिष्टैश्चसततंस्वेदयेच्छ्लेष्मविद्रधौ ॥ १२ ॥
कषायपानैर्वमनैरालेपैरुपनाहकैः ।
हरेद्दोषमभीक्ष्णञ्चतथैवासृगलाम्बुना ॥ १३ ॥
दशमूलीकषायेणसस्नेहेनरसेनवा ।
शोथंव्रणंवाकोष्णेनसशूलंपरिसेचयेत् ॥ १४ ॥
त्रिफलाशिग्रुवरुणदशमूलाम्भसापिबेत् ।
गुग्गुलुंमूत्रसंयुक्तंविद्रधौकफसंभवे ॥ १५ ॥
इति कफे ।

अर्थ-ईट, वालू, लोहा, गोबर और गोबरकी मांदको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे कफजविद्रधिरोग दूर होताहै। कफज विद्रधिरोगमें कषाय,वमन, प्रलेप और स्वेद देकर दोषोंको दूर करे, तथा अलाबुप्रयोगके द्वारा रक्तमोक्षण कार्य्य करे। कुछ उष्ण दशमूलके क्काथ अथवा स्नेहसंयुक्त मांसादिरसके द्वारा परिसेक करनेसे शूलकी समान पीडायुक्त व्रणशोथ दूर होताहै। त्रिफला, सँजिनेकी जड, वरनेकी छाल और दशमूल इनका क्काथ गोमूत्र और गूगुलके साथ पान करनेसे-कफजन्य विद्रधिरोग दूरहोताहै ॥ १२-१५ ॥

अथ भूनिम्बाद्यं चूर्णम् ।

भूनिम्बार्द्धपलंशिलापलयुतंदार्वीपलेद्वेतथा
दार्व्यर्द्धेनपुनर्नवांकुरुसमांदार्वीसमःप्रग्रहः ।
वासादर्द्धयुतंपलन्तुकटुकायोज्यातदर्द्धेनवै
विन्ध्याह्वंचनिशासमानममृताकर्षास्तुपंचैवतु ॥ १६ ॥
सर्ववत्सकसप्तकर्पसहितंसुश्लक्ष्णचूर्णीकृतम्
वासायाःस्वरसेनभावितमिदंत्रीन्पंचवारांस्तथा ।
भूयस्तद्गुडवारिणाप्रतिदिनंपीतंपुरस्तेरवौ ।
पुंसांविद्रधिनाशनन्तुकथितंपथ्यंस्वयंब्रह्मणा ॥ १७ ॥

प्रग्रहः शोणालुफलम् ।
विन्ध्याह्वस्थानेऽश्वामितिपाठेऽश्वगंधा ।

अर्थ–चिरायता दोतोले, हलदी चारतोले, दारुहलदी आठतोले, पुनर्नवा चारतोले, अमलतास आठतोले, अडूसा डेढतोला, कुटकी पौनतोला, छोटी-इलायची चारतोले, गिलोय पाँचतोले और कुडेकी छाल सावतोले लेवे । इन सब औषधियोंका उत्तमरीतिसे चूर्णकर अडूसेके रसकी तीन तथा पाँच भावना देवे । इसको प्रतिदिन प्रातःकाल गुडके शरबतके साथ सेवन करे । यह मनुष्योंके विद्रधिरोगको नाश करनेके लिये स्वयं ब्रह्माजीने कहाहै ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथाभ्यन्तरिकविद्रधिचिकित्सा ।

मधुशिग्रुशृतंतोयंशिलाजतुसमन्वितम् ।
पिबेदभ्यंतरोत्थेचविद्रधावाशुशान्तये ॥ १८ ॥
वरुणादिगणक्काथमपक्केभ्यन्तरोत्थिते ।
उषकादिप्रतीवापंपिबेत्संशमनायवै ॥ १९ ॥

उषकादिगणः ।

अर्थ–लालसेंजिनेका क्काथ शिलाजीतके साथ पान करनेसे आभ्यन्तरिक विद्रधिरोग दूर होताहै । वरुणादिके क्काथमें उषकादि गणस्थ औषधियोंका चूर्ण डालकर पान करनेसे आभ्यंतरिक अपक्कविद्रधिरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥ १९ ॥

इति श्लीपदाध्यायः ।

अथ प्रियंग्वाद्यंतैलम् ।

प्रियंगूधातकीलोध्रकट्फलंतिलसैन्धवम् ।
एतैस्तैलंविपक्तव्यंविद्रधौरोपणंपरम् ॥ २० ॥

तिलो वत्सकः ।
तिलशत्वचमित्यपपाठः सुश्रुतादावदर्शनात् ।
एषां कल्कः । जलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ–तेल दोसेर, जल आठसेर और कल्कके लिये फूलप्रियंगु, धायकेफूल, लोध, कायफल, कुडा और सैंधानोन प्रत्येक दो दो तोले लेवे । इस तेलके प्रयोग करनेसे विद्रधिका घाव भरजाताहै ॥ २० ॥

अथ दशमूलाद्यं तैलम् ।

द्विपंचमूलीत्रिफलाकुलत्थैत्रिवृद्घनैर्मूलकशिग्रुयुक्तैः ।
तैलंतिलैरण्डजमतेदेभिःसिद्धंहितंविद्रधिगुल्मशूले ॥ २१ ॥

दशमूलादिकल्कः जलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ–अरंडका तेल दोसेर, जल आठसेर, कल्कके लिये दशमूल, त्रिफला कुलथी, निशोत, नागरमोथा, मूली, सैंजिनेकी जड और तिल प्रत्येक दोदो तोले लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै । यह तेल विद्रधि और गुल्मशूलको नष्ट करैहै ॥ २१ ॥

अथासाध्यविद्रधिहरक्वाथः ।

वरुणवल्कलक्वाथेपिबेद्रासैन्धवंतथा ।
शिलाजतुसमंहिंगुमसाध्यंविद्रधिंजयेत् ॥ २२ ॥
क्वाथंशिग्रुवचावाथहिंगुसैन्धवचूर्णितम् ।
संयुक्तंप ययेच्छान्त्यैविद्रधिरोगपीडितम् ॥ २३ ॥

इति विद्रध्यध्यायः ।

अर्थ–वरनाकी छालके काढेमें सैंधानोन, शिलाजीत और हींग डालकर पीनेसे अथवा सैंजिनेकी जड और वचके क्वाथमें सैंधानोन और हींगका चूर्ण डालकर पान करनेसे सर्वप्रकारके विद्रधिरोग नष्ट होतेहैं ॥ २२ ॥ २३ ॥

इति विद्रध्यध्यायःसमाप्तः ।

अथ व्रणशोथाधिकारः ।

तत्रादौ वातशोथचिकित्सा ।

आदौविम्लापनंकुर्याद्द्वितीयमवसेचनम् ।
तृतीयमुपनाहंचचतुर्थींपाटनक्रियाम् ॥ १ ॥
पंचमंशोधनंचैवषष्ठंरोपणमिष्यते ।
एतेक्रमाद्व्रणस्योक्ताःसप्तमोवैकृतापहः ॥ २ ॥
मातुलुंगाग्निमन्थौचभद्रदारुमहौषधम् ।
अहिंस्राचैवरास्नाचप्रलेपोवातशोथहा ॥ ३ ॥
कल्कःकांजिकसंपिष्टःस्निग्धःशाखोटकत्वचः ।
सुपर्णइवनागानांवातशोथविनाशनः ॥ ४ ॥
इति वाते ।

अर्थ-प्रथम विम्लापन (मर्दन), द्वितीय अवसेचन, तृतीय प्रलेप, चतुर्थ छेदन, पंचम शोधन, षष्ठ रोपण और सप्तम वैकृतविनाश, यह व्रणकी चिकित्सा करनेकी क्रिया क्रमसे कही है। विजौरानीबू, अरणी, देवदारु, सोंठ, रास्ना और अहिंस्रा इन सबको समानभागले एकत्र पीसकर लेप करनेसे वातात्मक व्रण-शोथरोग दूर होताहै। सिंहोडेकी छालको काँजीमें पीस घी मिलाकर लेप करनेसे वातजनित व्रणशोथ दूर होताहै ॥ १–४ ॥

अथ पित्तशोथचिकित्सा ।

दूर्वांचनलमूलञ्चमधुकंचंदनस्तथा ।
शीतलाश्चगणाःसर्वेप्रलेपःपित्तशोथहा ॥ ५ ॥
शीतलागणा उत्पलादिकाःकोलादिकाः ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः ।
ससर्पिष्कःप्रलेपःस्याच्छोथनिर्वापणःस्मृतः ॥ ६ ॥
सर्पिः शतधौतम् । पंचवल्कलम् ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसशेलुभिः ॥ ७ ॥
चंदनद्वयमंजिष्ठायष्टी[illegible]रुणगैरिकैः ।
शतधौत[illegible]तोन्मिश्रोलेपोरक्तप्रसादनः ॥ ८ ॥

दाहपाकरुजास्रावशोथनिर्वापणःपरः ॥ ९ ॥

शैलुर्बहुवारकः । पूरणं मातुलुंगमूलमिति ।

कंचटंतिलभृष्टंचपिष्टालेपंप्रदापयेत् ।

दाहक्लेदरुजास्रावशोथवैवर्ण्यनाशनम् ॥ १० ॥

इति पित्ते ।

अर्थ–दूव, नीलकी जड, मुलेठी, लालचन्दन और उत्पलादि शीतल गणकी औषधियोंके द्वारा प्रलेप करनेसे पित्तज व्रणशोथ दूर होताहै, बड गूलर, पीपल पाखर और बेंत इनकी छालको पीसकर सौवार धुलेहुए पुराने घीमें मिलाकर लेपकरनेसे पित्तज व्रणशोथ दूर होताहै वडकी छाल, गूलरकी छाल, पीपलकी छाल, पाखरकी छाल, मुलेठी, बिजौरे नीबूकी जड, बेंतकी छाल, लिसोढेकी छाल, लालचन्दन, सफेद चंदन, मँजीठ और गेरू इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर सौवार धुलेहुए पुराने घीमें मिलाकर लेप करनेसे पित्तजव्रणशोथजन्य दूषित रक्त शुद्ध होवे, तथा व्रणकी दाह, पाक, वेदना, राध आदिका गिरना और सूजन दूर होताहै । जलचौलाई और भुनेहुए तिलोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे व्रणकी दाह, क्लेद, पीडा, स्राव, शोथ और विवर्णता दूर होतीहै ॥ ९–१० ॥

अथ कफशोथचिकित्सा ।

अजगंधाश्वगंधाचकालासरलयासह ।

एकोपिचाजशृंग्याश्चप्रलेपःश्लेष्मशोथहा ॥ ११ ॥

अजगंधा क्षेत्रयवानी । अजशृंगी काकडाशृंगी ।

इति कफे ।

अर्थ–तिलवन, असगंध, कलम्बक और धूप सरल इनको एकत्र पीसकर अथवा केवल काकडासिंगीको पीसकर लेपकरनेसे कफजन्य व्रणशोथ दूर होताहै ॥ ११ ॥

अथ त्रिफलाष्टकम् ।

तिलकल्कःसलवणोद्वेहरिद्रेत्रिवृद्घृतम् ।

मधुकंनिम्बपत्राणिप्रलेपःशोथशोधनः ॥ १२ ॥

अर्थ–तिलोंका चूर्ण, सैंधानोन, हलदी, दारुहलदी, निसोत, मुलेठी, और नीमके पत्तोंको एकत्र पीसकर घीमें मिलाके लेपकरनेसे व्रणशोथ दूर होताहै ॥ १२ ॥

अथ व्रणरोपणचिकित्सा ।

निम्बपत्रंतिलादन्तीत्रिवृत्सैन्धवमाक्षिकम् ।
दुष्टव्रणप्रशमनोलेपःशोधनकेसरी ॥ १३ ॥
सुषवीपत्रपत्तूरकर्णमोटकुठेरकाः ।
पृथगेतेप्रलेपेनगंभीरव्रणरोपणाः ॥ १४ ॥
येक्लेदपाकाःस्रुतिगंधवन्तोव्रणामहान्तःसरुजःसशोथाः
प्रयान्तितेगुग्गुलुमिश्रितेनपीतेनशान्तिंत्रिफलारसेन ॥

अर्थ–नीमकेपत्ते, तिल, दन्ती, निसोत और सैंधानोन इन सबको समान भाग लेकर जलके संग पीस सहत मिलाकर लेपकरनेसे दुष्टव्रण शुद्धहोकर आराम होताहै । करेलेके पत्ते, शालिंचशाक, कर्णमोरटलता और तुलसीके पत्ते इनमेंसे एक किसीके पत्तोंको पीसकर प्रलेप करनेसे गंभीर व्रण भरजाताहै त्रिफलेके क्वाथको गूगुलके साथ सेवन करनेसे क्लेद, पाक, स्राव, वेदना और सूजनसहित व्रण नष्ट होजाताहै ॥ १३–१५ ॥

अथ वटिकागुग्गुलुः ।

विडंगत्रिफलाव्योपचूर्णंगुग्गुलुनाशनम् ।
सर्पिपावटिकांकृत्वाखादेद्वाहितभोजनः ।
दुष्टव्रणापचीमेहकुष्ठनाडीव्रणापहः ॥ १६ ॥

अर्थ–बायबिडंग, त्रिफला, त्रिकुटा और गूगुल, इनको एकत्र कर घीमें मिला गोली बनालेवे । इन गोलियोंको सेवन करनेसे–दुष्टव्रण, अपची, प्रमेह कोढ, और नाडीव्रण दूर होताहै ॥ १६ ॥

अथ अमृतागुग्गुलुः ।

अमृतायाःपलशतंदशमूलशतन्तथा ।
पाठामूर्वाबलेद्वेचदार्वीगन्धर्वहस्तकः ॥ १७ ॥
पृथग्दशपलान्भागान्छिंतंचापिहरीतकी ।
विभीतकशतेद्वेचचत्वार्यामलकानिच ॥ १८ ॥
गुग्गुलुप्रस्थसंयुक्तोद्रोणेऽपामुषितंनिशि ।
पूर्वाह्णेक्वाथयेद्धीमांश्चतुर्भागावशेषितम् ॥ १९ ॥

उद्धृत्यस्वान्यविपचेद्दा वल्लेहक्रमाद्घनम् ।
शीतेत्वेतानिसंचूर्ण्यप्रक्षिपेत्पलिकानिच ॥ २० ॥
त्रिफलात्रिवृताव्योषदन्तीच्छिन्नाश्वगंधकाः ।
क्रिमिशत्रुदलंचोचंसूक्ष्मैलानागकेशरम् ॥ २१ ॥
स्वच्छन्दहारचेष्टस्यशीताम्भोवृष्यभोजनम् ।
अमृतागुग्गुलुर्नाम्नासर्वव्रणविशोधनम् ॥ २२ ॥
दुष्टकुष्टविसर्पांश्चहिक्कामेहगरोदरम् ।
प्लीहामयक्ष्महृद्रोगंपाण्डुशोपमसृग्दरम् ॥ २३ ॥
गुल्मार्शोविद्रधीन्भस्मनाडीव्रणभगंदरान् ।
अशीतिवातजान्रोगान्निहन्तिश्वासजित्परान् ॥ २४ ॥
कण्डूकोठाङ्गमर्दामवातशोणितवातहा ।
आत्रेयानुमतोह्येपगुग्गुलुःपरिकीर्त्तितः ॥ २५ ॥

अर्थ-गिलोय सौ पल, दशमूल १०० सौ पल, पाढ, मूर्व्वा, खिरेटी, गंगेरन, दारुहलदी, और अरण्ड, प्रत्येक, दश दश पल, हरड सौ, बहेडे सौ, आमले चारसौ और चौंसटतोले गूगुल पोटलीमें बांधकर सबको एक-द्रोण जलमें रातको भिजो देवे और सवेरेको क्वाथ बनावे, जब चौथा-भाग जल शेषरहे तब उतारकर छान लेवे, पश्चात् इसमें हरड, बहेडा,और आ-मलेकी गुठली निकालकर और गूगुलको पीसकर मिलादेवे, फिर इसको पकावे जब पकते २ गाढा होकर शीतल होजाय तब त्रिफला, निसोत, त्रिकुटा, दन्ती, गिलोय, असगंध, वायविडंग, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले मिलादेवे । इसपै यथेष्ट और वृष्य भोजन करे और शीतलजल पान करे। यह अमृतागूगुल-सर्वप्रकारके व्रणों-को शुद्ध करैहै, तथा दुष्ट कुष्ठ, विसर्प, हिक्कारोग, प्रमेह, विषविकार, उदररोग, प्लीहा, आम, राजयक्ष्मा, हृदयरोग, पाण्डु, शोप, रुधिरविकार, गुल्म, बवासीर, विद्रधि, भग्न, नाडीव्रण, भगंदर, अस्सी प्रकारके वातरोग, श्वासरोग, कण्डू, कोढ, अंगमर्द, आमवात और रक्तवात तथा अन्यान्य रोगोंको दूर करै-है ॥ १७-२५ ॥

अथ गुणवतीवर्त्तिः ।

तुल्यंसर्जरसंलोध्रंसिन्दूरातिविषानिशा ।
अक्षकम्पिल्लश्रीवासगुग्गुलुघृततैलकैः ॥ २६ ॥
तुल्यांशंपेषयेत्पिण्डंतत्तुल्यंसिक्थकंभवेत् ।
मृद्वग्निनापचेत्पात्रेमिश्रितंतंसमुद्धरेत् ॥ २७ ॥
वर्त्तिर्गुणवतीनामयोज्याशीतजलान्विता ।
दुःसाध्यव्रणगण्डेषुहितानाडीव्रणेषुच ।
शोधनेरोपणेचैवस्वास्थ्यमुत्पादयत्यलम् ॥ २८ ॥

अर्थ–राल, लोध, सिंदूर, अतीस, हलदी, बहेडा, कबीला, सरलका गोंद, गूगुल, घृत और तेल यह सब समानभाग और सबकी बराबर मोम लेवे, इनको मंद अग्निसे पकाकर बत्ती बनालेवे, यह बत्ती शीतल जलके साथ व्रण-पर लगावे । इससे असाध्य व्रण, गण्डव्रण और नाडीव्रण शुद्ध होकर मर-जाते हैं ॥ २६–२८ ॥

अथ व्रणशोथलेपः ।

धत्तूरपत्रमूलंसलवणमुष्णंव्रणोत्थितारम्भे ।
दत्तंलेपान्नियतंव्रणशोथंहरतिबहुदुष्टम् ॥ २९ ॥

अर्थ–धतूरके पत्ते और जड़को पीस लवण मिलाके गरमकर व्रणके उत्पन्न होनेके पहलेही लेप करनेसे व्रणशोथ आराम होताहै ॥ २९ ॥

अथ व्रणगजांकुशः ।

दरदःपार्वतीपुष्पंकुनटीपुरुपोरसः ।
शोणितंगंधकोदैत्यःसैंधवातिविषाचवी ॥ ३० ॥
शरपुंखाविडंगश्चयवानीगजपिप्पली ।
मरिचार्कश्चवरुणाधूनकंचहरीतकी ॥ ३१ ॥
मर्द्दितंकटुतैलेनगुटिकांकारयेद्बुधः ।
नाडीव्रणप्रवाहश्चगंडमालांविचर्चिकाम् ॥ ३२ ॥
चिरव्रणंदद्रुकुष्ठंपूतिकन्तुशिरोगदम् ।

पादस्फोटंतथाहस्तंविचर्चींबहुकीटजम् ॥ ३३ ॥

अत्र दरदो हिंगुलः। पार्वती वेङ्गामृत्तिका । पुष्पकं रसांजनं। मणिविशेषो वा । कुनटी मनःशिला । पुरुषो गुग्गुलुः । शोणितं ताम्रम् । दैत्यो लोहः । स्पष्टमपरम् ।

अर्थ-सिंग्रफ, वेंगामट्टी, रसोत, मनशिल, गूगुल, पारा, ताँबा, गंधक, लोहा, सैंधानोन, अतीस, चव्य, शरफोंका, अजवायन, गजपीपल, बायबिडंग, बरना, आक, कालीमिरच, हरड और राल इन सबको समानभाग ले कडवे तेलमें खरल कर गोली बनालेवे । इन गोलियोंको सेवन करनेसे नाडीव्रण, प्रवाह, गण्ड-माला, विचर्चिका बहुत दिनोंका व्रण, दाद, कोढ, दुर्गन्धित व्रण, शिरोरोग पादस्फोट, हस्तस्फोट, विचर्ची और कृमिरोग दूर होतेहैं ॥ ३०-३३ ॥

अथ कर्कोटाद्यंतैलम् ।

वन्ध्याकर्कोटकीपाठाव्याघ्रीकुष्ठपटोलिका ।
अंकोटहस्तिपर्णीचतालगंधकसैन्धवम् ॥ ३४ ॥
मंजिष्ठाकरवीरंचनिशाहिंगुसुवर्चला ।
वचासिन्दूरतुल्यांशंजलेनसहपेषयेत् ॥ ३५ ॥
कल्काच्चतुर्गुणंतैलंतैलात्तोयंचतुर्गुणम् ।
पचेत्तैलावशेषञ्चलेपाद्दुष्टव्रणापहम् ॥ ३६ ॥

इति व्रणरोगाध्यायः ।

अर्थ-कडवातेल दोसेर, जल आठसेर, और कल्कके लिये बाँझककोडा, पाढ, कूट, कटेरी कडवीतोरई, अंकोल, हस्तपर्णी, हरिताल, सैंधानोन, गंधक, मँजीठ, कनेरकी जड, हलदी, हींग, तुलसी, वच और सिंदूर प्रत्येक दो दो तोले लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे इस तेलका लेप करनेसे दुष्टव्रण दूर होताहै ॥ ३४-३६ ॥

इति व्रणरोगाध्यायः समाप्तः ।

अथ शारीरव्रणाद्योव्रणाधिकारः ।

तत्रादौवेद्यकर्तव्यम् ।

परिपक्वंव्रणंवैद्योदारयेदवधानतः ।
नच्छिन्द्यादाममज्ञानान्नतुपक्वमुपेक्षते ॥ १ ॥

गवांदन्तंजलेघृष्टंबिन्दुमात्रंप्रलेपतः ।
अत्यन्तकठिनेचापिव्रणेपाचनभेदनम् ॥ २ ॥
कटुतैलान्वितैर्लेपात्सर्वनिर्मोकभस्मभिः ।
चयःशाम्यतिगण्डस्यप्रकोपःस्फुटतिद्रुतम् ॥ ३ ॥
चिरबिल्वाग्निकोदन्तीचित्रकोहयमारकः ।
कपोतकंकगृध्राणांपुरीपाणिचदारुणम् ॥ ४ ॥

चिरबिल्वः करंजः।अग्निको लांगली अजमोदावा। हयमारः करवीरः।सर्वेषां मूलं एषांसमस्तानांव्यस्तानांचदारुणत्वम्॥

क्षारद्रव्याणिवायानिक्षारोवादारुणः परः ।
द्रव्याणांपिच्छिलानान्तुत्वङ्मूलानिप्रलेपनम् ॥ ५ ॥
यवगोधूममाषाणांविचूर्णानिसमासतः ।
पटोलीतिलयष्ट्याह्वत्रिवृद्दन्तीनिशाद्वयम् ।
निम्बपत्रान्वितोलेपःसपटुर्व्रणशोधनः ॥ ६ ॥

अर्थ—वैद्यको चाहिये कि अत्यन्त चतुरताके साथ पकेव्रणको चीरे और कच्चा व्रण कदापि न चीरे, तथा पके व्रणको तर्क करके चीरनेमें देर नकरे। गायके दाँतको जलमें घिसकर एक बिन्दुमात्र लेप करनेसे अत्यन्त शक्तव्रणभी पक करके अपने आपही फट जाताहै । साँपकी केंचलीकी भस्मको सरसोंके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे गलगण्डगतव्रण शीघ्रही फटकर नष्ट होताहै । करंजुवा, कलिहारी, दन्तीकी जड, चीतेकी जड, कनेरकी जड, और कबूतर, कंक तथा गृध्र इन तीनों पक्षियोंकी विष्ठा, इन सबको एकत्र अथवा अलग अलग तथा क्षारद्रव्य और जवाखार इन औषधियोंके द्वारा अथवा पिच्छिल द्रव्योंकी छाल या मूलके द्वारा लेप करनेसे व्रण विदीर्ण होकर आराम होजाता है जौ, गेहूँ, और उडदोंका चूर्ण तथा पटोल, तिल, मुलैठी, निसोत, दन्ती, हलदी, दारुहलदी, नीमके पत्ते, और सेंधानोन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसे व्रण शुद्ध होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ विडंगादिवटिकागुग्गुलुः ।

विडंगत्रिफलाव्योषचूर्णंगुग्गुलुनासह ।

सर्पिषा वटिकां कृत्वा खादेद्धितभोजनः ।
दुष्टव्रणापचीमेहकुष्ठनाडीविशोधनः ॥ ७ ॥

अर्थ—वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटेका चूर्ण और गूगुल इनको एकत्र घीमें पीसकर गोली बनालेवे, एक गोली प्रतिदिन खावे और इसपर हितकारक भोजन करे । यह गोली—दुष्टव्रण, अपची, प्रमेह और दुष्टनाडीव्रणको दूर करैहै ॥ ७ ॥

अमृतापटोलमूलत्रिफलात्रिकटुक्रिमिघ्नानाम् ।
समभागानांचूर्णंसर्वेसमोगुग्गुलोभागः ॥ ८ ॥
प्रतिवासरमेकैकांगुटिकांखादेदक्षपरिमाणाम् ।
जेतुंव्रणवातासृग्गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुरोगान् ॥ ९ ॥

अथ अमृतावटिकागुग्गुलुः ।

अर्थ—गिलोय, परवलकी जड, त्रिकटु, त्रिफला, और वायविडंग, प्रत्येकका चूर्ण एकभाग और सबकी समान गूगुल लेवे, इन सबको एकत्र पीसकर दो दो तोलेकी गोली बनालेवे, फिर एक गोली प्रतिदिन खाय, इससे व्रण, वातरक्त, गुल्म, उदररोग, सूजन और पाण्डुरोग दूर होताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ जात्याद्यंघृतम् ।

जातीनिम्बपटोलपत्रकटुकादार्वीनिशाशारिवा
मंजिष्ठाभयसिक्थतुत्थमधुकैर्मुक्ताह्वबीजैःसमैः ।
सर्पिःसिद्धमनेनसूक्ष्मवदनामर्माश्रितास्राविणो
गंभीराःसरुजोव्रणाःसगतिकाःशुध्यन्तिरोहन्तिच ॥ १० ॥
जात्यादेस्त्रयस्य पत्रम् । एषां कल्कः ।
जलं चतुर्गुणम् । गतिं नाडीम् ।

अर्थ—गायका घी दोसेर, जल आठसेर, कल्कके लिये चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, पटोलपत्र, कुटकी, हलदी, दारुहलदी, अनन्तमूल, मँजीठ, हरड, मोम, तूतिया, मुलैठी और मुक्ताबीज प्रत्येक दो दो तोले । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, इस घृतको सेवन करनेसे सूक्ष्म मुखवाले, मर्माश्रित, स्रावयुक्त, गंभीर वेदनायुक्त नाडीव्रण, समस्त शुद्धहोकर आराम होजातेहैं ॥ १० ॥

अथ गौराद्यंघृतम्।

गौरहरिद्रामंजिष्ठामांसीमधुकमेवच।
प्रपौण्डरीकंह्रीबेरंभद्रमुस्तंसचन्दनम्॥ ११॥
जातीनिम्बपटोलश्चकरंजंकटुरोहिणी।
मधूच्छिष्टंसमधुकंमहामेदातथैवच॥ १२॥
पंचवल्कलतोयेनघृतप्रस्थंविपाचयेत्।
एषगौरोमहावीर्यःसर्वव्रणविशोधनः॥ १३॥
आगन्तुसहजाश्चैवसुचिरोत्थाश्चयेव्रणाः।
विषमामपिनाडींतुरोहयेच्छीघ्रमेवच॥ १४॥

गौरहरिद्रा दारुहरिद्रा।
जातीनिंबपटोलानां पत्रं करंजस्य फलं मधुकस्य पुष्पम्।

अर्थ-गायका घी दो सेर, वटादि पंचवल्कलोंका क्वाथ आठसेर, जल आठ सेर, तथा कल्कके लिये दारुहलदी, मँजीठ, वालछड, मुलैठी, पुण्डेरिया, सुगंधबाला, नागरमोथा, लालचंदन, चमेलीके पत्ते, निम्बकेपत्र, पटोल, करंजके फल, कुटकी, मोम, महुवेके फूल और महामेदा प्रत्येक दो दो तोले लेवे। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे यह घृत नाडीव्रणको शुद्ध करके भर देताहै॥ ११-१४॥

अथ करंजाद्यंघृतम्।

नक्तमालस्यपत्राणितरुणानिफलानिच।
मालत्याश्चैवपत्राणिपटोलारिष्टयोस्तथा॥ १५॥
द्वेहरिद्रेमधूच्छिष्टंमधुकंतिक्तरोहिणी।
मंजिष्ठाचंदनोशीरमुत्पलंशारिवात्रिवृत्॥ १६॥
एतेषांकार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
दुष्टव्रणप्रशमनंनाडीव्रणविशोधनम्।
सद्यश्छिन्नव्रणानांचकरंजाद्यमिदंशुभम्॥ १७॥

पत्राणि तरुणानि।

अर्थ-उत्तम गायका घी दोसेर, जल आठसेर तथा कल्कके लिये करंजके पत्ते और फल मालतीके पत्ते, पटोलपत्र, नीमके पत्ते, हलदी, दारुहलदी, मोम, महुएके फूल, कुटकी, मँजीठ, लालचंदन, खस, उत्पल, अनन्तमूल और निसोत, प्रत्येक दो दो तोले लेकर विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै यह घृत दुष्टव्रणको शान्त करैहै नाडीव्रणको शुद्ध करैहै,तथा सद्य और छिन्नव्रणको यह घृत हितकारी-है ॥ १५-१७ ॥

अथ विपरीतमल्लतैलम् ।

सिंदूरहिंगुविषकुष्ठरसोनचित्रवालांघ्रिलांगलिककल्कविपक्कतैलं
प्रासादमंत्रयुतहुंकृतमाध्विकेनक्लिन्नव्रणप्रशमनोविपरीतमल्लः १८
खड्गाभिघातगुरुगण्डमहोपदंश-
नाडीव्रणव्रणविचर्चिककुष्ठपामाः ।
एतान्निहन्तिविपरीतकमल्लनाम
तैलंयथेष्टशयनाशनभोजनस्य ॥ १९ ॥

चित्रको रक्तचित्रकः । वालांघ्रिः शरपुंखामूलम् ।
जलं चतुर्गणम् । केचित् कटुतैलमिच्छन्ति ।
तिलतैलेनव्यवहारः प्रासादमंत्रोमाहेश्वरोमंत्रः ।
ओंहाँहींहैंहौंशिवाय स्वाहेतिपठित्वाफेनमपनोद्यम् ॥

अर्थ-तिलका तेल दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये सिंदूर हींग, विष, कूठ, लहसुन, लालचीता, सरफोंकेकी जड और कलिहारीकी जड, प्रत्येक दोदो तोले । सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै । 'ओं हाँ हीं हैं हौं शिवाय स्वाहा' इस मंत्रको पढके झागोंको हटाकर तेलको पान करै यह विपरीत-मल्लतैल क्लिन्नव्रण, खड्गाभिघातव्रण, महागण्ड, महाउपदंश, नाडीव्रण, व्रण, विचर्चिका, कुष्ठ और पामादि रोगोंको दूर करैहै । इसके ऊपर यथेष्ट भोजन और शयन करै ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ कुठारकंतैलम् ।

कुठारकात्पलशतंक्काथयेद्दुल्वनेऽम्भासि ।
तेनपादावशेषेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २० ॥

कल्कैः कुठारापामार्गप्रोष्ठीकामक्षिकासुच ॥ २१ ॥
एतत्कुठारकंनामव्रणशोधनरोपणम् ।
नाडीषुपरमोऽभ्यंगोनिजगागन्तुकीषुच ॥ २२ ॥
प्रोष्ठीका शफरीमत्स्यः ।

अर्थ–तेल एक सेर, क्काथके लिये कुठारक (क्षुद्रलताविशेष) ३ सेर, जल सोलह सेर, शेष चारसेर और कल्कके लिये कुठारक, चिरचिटा, प्रोष्ठीमछली और चिंगिडी मछली प्रत्येक चार चार तोले लेकर विधिपूर्वक तेलको सिद्ध करे, यह तेल मर्दन करनेसे सर्वप्रकारके व्रणोंको शुद्ध करके भर-देवेहै ॥ २०–२२ ॥

अथ दूर्वातैलम् ।

दूर्वास्वरससंसिद्धंतैलंकम्पिल्लकेनच ।
दार्वीत्वचश्चकल्केनप्रधानंव्रणरोपणम् ।
दूर्वास्वरसकल्काभ्यामेकंतैलंतथागतम् ॥ २३ ॥
कम्पिल्लदार्वीकल्केन जलं चतुर्गुणं दत्त्वा परमेकंतैलम् ।

अर्थ–तेल दो सेर, दूबका रस आठ सेर, जल आठ सेर, और कल्कके लिये कुटीहुई दूब आधा सेर लेकर विधिपूर्वक तेलको सिद्धकरे । इस तेलको मर्दन करनेसे सर्वप्रकारके नाडीव्रण दूर होतेहैं । तेल दो सेर, जल आठ सेर और कल्केलिये कबीला और दारुहलदी दोनों मिलेहुए आधसेर इस तेलसे भी व्रण भर जाताहै ॥ २३ ॥

अथ मंजिष्ठाद्यं घृतम् ।

मंजिष्ठाचंदनंमूर्वांपिष्ट्वासर्पिर्विपाचयेत् ।
सर्वेषामग्निदग्धानामेतद्रोपणमिष्यते ॥ २४ ॥
जलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ–गायका घी दोसेर, जल आठसेर और कल्कके लिये मँजीठ, लालचन्दन और मूर्वा यह सब आधसेर सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । यह घृत अग्निदग्ध व्रणोको दूर करैहै ॥ २४ ॥

अथ लांगलीघृतम् ।

लांगलीलोध्रमंजिष्ठाकृष्णामधुककट्फलम् ।
काम्पिल्लंद्वेनिशेमेदेनिम्बपत्रंफलत्रयम् ॥ २५ ॥
घृतेसिक्थंद्विपलिकंदेयंतद्व्रन्धरोपणम् ।
लांगलीकंघृतंनामनाडीदुष्टव्रणापहम् ॥ २६ ॥

अर्थ—गायका घीं दो सेर, जल आठसेर, दूध चारसेर, तथा कल्कके लिये मोम आधपाव और कलिहारीकी जड़, मँजीठ, लोध, पीपल, मुलैठी, कायफल, कबीला, मेदा, महामेदा, हलदी, दारुहलदी, नीमके पत्ते और त्रिफला प्रत्येक दो दो मासे लेवे । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै । यह घृत दुष्टव्रणको नष्ट करैहै ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथ पाटलीतैलम् ।

सिद्धंकल्ककषायाभ्यांपाटल्याःकटुतैलकम् ।
दग्धव्रणरुजास्रावदाहविस्फोटनाशनम् ॥ २७ ॥

अर्थ—पाढके कल्कमें तथा क्वाथमें कडवे तेलको सिद्धकर लगानेसे अग्निदग्धजन्य व्रणकी वेदना, दाह और विस्फोट दूर होजातेहैं ॥ २७ ॥

अथ चन्दनाद्यं यमकम् ।

चन्दनवटशुंगाश्वमंजिष्टामधुकंतथा ।
प्रपौण्डरीकंदूर्वाचधातकीरक्तचंदनम् ॥ २८ ॥
एभिस्तैलंविपक्तव्यंसर्पिःक्षीरसमायुतम् ।
अग्निदग्धेव्रणेश्रेष्ठंम्रक्षणाद्रोपणंपरम् ॥ २९ ॥

अर्थ—तिलका तेल और घी दोसेर, जल आठसेर, दूध आठसेर, तथा कल्कके लिये सफेद चन्दन, वडके अंकुर, मँजीठ, मुलैठी, पुण्डेरिया, दूब, धायके फूल और लालचन्दन, यह सब आधसेर लेकर यथाविधिसे इस चंदनाद्य यमकको सिद्धकर मर्दन करनेसे अग्निदग्ध व्रण नष्ट होजातेहैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

अथ त्वग्विशुद्ध्यादिकराणिलेपनानि ।

मनःशिलालेमंजिष्ठासलाक्षारजनीद्वयम् ।
लेपःसघृतःक्षौद्रस्त्वग्विशुद्धिकरःपरः ॥ ३० ॥

अयोरजःसकाशीशंत्रिफलाकुसुमानिच ।
प्रलेपःकुरुतेसात्म्यंसद्यएवनवत्वचि ॥ ३१ ॥
त्रिफलायाः कुसुमाभावे फलं ग्राह्यम् ।
कालीयकलतामास्थिहेमकालारसोत्तमैः ।
प्रलेपोगोमयरसःसस्रवर्णकरःपरः ॥ ३२ ॥
कालीयकं कालियाकाष्टं । लता प्रियंगुर्दूर्वा वा ।
हेम नागकेशरं । काला मंजिष्टा । रसोत्तमं घृतम् ।
चतुष्पदांघ्रित्वग्लोमखुरशृंगास्थिभस्मना ।
तैलाक्ताचूर्णिताभूमिर्भवेद्रोमवतीपुनः ॥ ३३ ॥

अर्थ–मैनशिल, हरिताल. मँजीठ, लाख. हलदी और दारुहलदी इन सब औषधियोंको पीस घृत और सहतमें मिलाके लेपकरनेसे त्वचा शुद्ध होतीहै। लोहा कसीस और त्रिफलेके फूल एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे तत्काल व्रणपै नवीन खाल जम आतीहै। कलम्बक. फूलप्रियंगु. आमकी गुठली, नागकेशर, मँजीठ और घृत इन सब द्रव्योंको एकत्र पीसके गोवरके रसमें मिलाके प्रलेप करनेसे व्रणकी जगह उत्तमवर्णवाली होजातीहै चतुष्पद जन्तुओंके पाँव, चमडा, रोम, खुर, सींग और हड्डियोंकी भस्मको तेलमें मिलाकर लेप करनेसे व्रणकी जगहमें रोम जम आतेहैं ॥ ३०–३३ ॥

अथ व्रणरोगेऽपथ्यानि ।

लवणाम्लकटूनिचविदाहीनिगुरूणिच ।
वर्जयेदनुपानानिव्रणीमैथुनमेवच ॥ ३४ ॥
नवंधान्यंमाषागुडतिलकुलत्थाम्बुकृशराः
कलायानिष्पावाहरितकिजलानूपपिशितम् ।
हिमापोवन्धूकंलवणकटुकंपिष्टविकृति
दधिक्षीरंतक्रंव्रणिषुसकलंदोषजनकम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–नमक खटाई. मिरचा. गरमपदार्थ. दाहजनक द्रव्य और भारी भोजन, तथा पानद्रव्य. मैथुन. नवीनधान्य. उडद, गुड, तिल, कुलथी, यूष. खिचडी, मटर, निष्पाव. हरडोंका क्वाथ. अनूपदेशके जीवोंका मांस. शीतल-

जल, दुपहरियोंके फूल, लवणरसवाले द्रव्य, चरपरे द्रव्य, विष्टकविकार, दही, दूध और तक्र, यह सब पदार्थ व्रणरोगवाले मनुष्यको अहितकारीहैं ३४॥३५॥

अथ नाडीव्रणचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ गुग्गुल्वादिचूर्णम् ।

गुग्गुलुस्त्रिफलाव्योपैःसमांशैराज्ययोजितैः ।
नाडीदुष्टव्रणशूलभगंदरविनाशनः ॥ ३६ ॥

अर्थ–गूगुल, त्रिफला और त्रिकुटा यह समान भाग लेकर चूर्ण बना घीमें मिलाके सेवन करनेसे नाडीव्रण, दुष्टव्रण और भगंदर रोग दूर होता-है ॥ ३६ ॥

अथ कार्पासतैलम् ।

कुष्ठोदितःपंचतिक्तःगुग्गुलुश्चात्रशस्यते ।
कार्पासमूलरजनीकल्कंदत्त्वाजलेशृतंतैलम् ॥
पूरणमात्राच्चिरजंनाडीव्रणमाशुनाशयति ॥ ३७ ॥

अर्थ–कुष्ठरोगमें कहा हुआ पंचतिक्त गूगुल भी व्रणरोगमें हितकारी है । तेल दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये कपासकी जड और हलदी आध-सेर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर भरनेसे नाडीव्रण (नासूर) आराम होताहै ॥ ३७ ॥

अथ कुम्भीकाद्यंतैलम् ।

कुम्भीकखर्ज्जूरकपित्थबिल्ववनस्पतीनांतुशलाटुवर्गे ।
कृत्वाकपायंविपचेच्चतैलमवाप्यमुस्तासरलाप्रियंगू ॥३८॥
सौगन्धिकामोचरसाहिपुष्पंलोध्राणिदत्त्वाखलुधातकीश्च ।
एतेनशल्यप्रभवाहिनाडीरोहेद्व्रणोवैसुखमाशुचैव ॥ ३९ ॥

अर्थ–तेल दोसेर, जलकुम्भी, खजूर, कैथा, बेल, तथा वटादि पंच वृक्षोंके कच्चे फल इनका क्वाथ आठसेर और कल्कके लिये नागरमोथा, धूपसरल, फूल-प्रियंगु, अनन्तमूल, नागकेशर, लोध और धायके फूल प्रत्येक दो दो तोले लेकर । यथाविधिसे इस तेलको सिद्धकर सेवन करनेसे शल्याघातादिजन्य नाडीव्रण भर जातेहैं ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अथ निर्गुण्डीतैलम्।

समूलपत्रनिर्गुण्ड्यारसैस्तैलंसमैःशृतम्।
हन्तिनाडीव्रणस्फोटान्नस्याभ्यङ्गादिनापचीम् ॥४०॥

अकल्कमेव।

अर्थ–तेल दोसेर जल आठसेर और पत्तोंसहित सम्हालूका रस आठसेर, इस तेलका नास लेनेसे तथा अभ्यंग करनेसे नाड़ीव्रण और अपचीरोग दूर होताहै ॥ ४० ॥

अथ हंसपदीतैलम्।

हंसपद्यारिष्टपत्रंजातीपत्रंततोरसैः।
तत्कल्कैश्चपचेत्तैलंनाडीव्रणनिरोहणम् ॥ ४१ ॥

इति नाडीव्रणाऽध्यायः।

अर्थ–तेल दोसेर, जल आठसेर, हंसपदी, नीमके पत्ते और चमेलीके पत्तोंका स्वरस आठसेर, तथा कल्कके लिये हंसपदी, नीमके पत्ते और चमेलीके पत्ते आधसेर, यथाविधिसे इस तेलको सिद्ध कर लगानेसे नाड़ीव्रण भर-जाता है ॥ ४१ ॥

इति नाडीव्रणचिकित्सा समाप्ता।

अथ भगंदरचिकित्साधिकारः।

अथ सामान्ययत्नानि।

लंघनस्वेदनालेपविम्लापनविरेचनैः।
रक्तमोक्षादिभिःशीघ्रंगुदजांपिडकांजयेत् ॥ १ ॥
तथायत्नंभिषक्कुर्याद्यथापाकंनगच्छति ॥
वटपत्रेष्टकाशुण्ठीगुडूच्यःसपुनर्नवाः ॥ २ ॥
सुपिष्टापिडकारम्भेलेपःशस्तोभगन्दरे।
त्रिफलारससंयुक्तंबिडालास्थिप्रलेपनम् ॥ ३ ॥
भगन्दरंनिहन्त्याशुदुष्टव्रणहरंपरम्।
स्विन्नंवचाकुष्ठहिङ्गुयवानीपटुपञ्चकम् ॥ ४ ॥
सर्पिषापाययेच्चूर्णमम्लेनसुरयापिवा।

स्नुह्यर्कदुग्धदार्वीभिर्वर्त्तिकृत्वाभगन्दरे ॥ ५ ॥
दद्यात्सर्वशरीरस्थांनाडींहन्यात्प्रयोगराट् ।
त्रिवृत्तिलानागदन्तीमञ्जिष्ठासहसर्पिषा ॥ ६ ॥
उत्स दनम्भवेदेतत्सैन्धवंक्षौद्रसंयुतम् ॥ ७ ॥

उत्सादनमुद्वर्त्तनम् ।

रसांजनंहरिद्रेद्वेमंजिष्ठानिम्बपल्लवाः ।
त्रिवृज्ज्योतिष्मतीदन्तीलेपोहन्तिभगन्दरम् ॥ ८ ॥
कुष्ठंत्रिवृत्तिलादन्तीमागध्यःसैन्धवंमधु ।
रजनीत्रिफलातुत्थंहितंव्रणविशोधनम् ॥ ९ ॥
तिलाभयालोध्रमरिष्टपत्रंनिशेवचालोध्रमगारधूमः ।
भगन्दरेचाप्युपदंशनेचदुष्टव्रणेशोधनरोपणीयम् ॥ १० ॥
पयःपिष्टतिलैरण्डयष्टीलेपःसशोणिते ।
खरास्रपक्वंभूरोमचूर्णलेपोभगन्दरम् ॥ ११ ॥
हन्तिदन्त्यग्न्यतिविपालेपस्तद्वच्छुनोस्थिवा ।
नश्येद्भगन्दरःक्षिप्रंक्षालितेत्रिफलाम्भसा ॥ १२ ॥

अर्थ–लंघन, स्वेद, प्रलेप, विम्लापन (मर्दनादि) विरेचन और रक्तमोक्षणादिके द्वारा शीघ्र गुदज पिड़काओंको दूर करे, वैद्य इस प्रकार इस रोगकी चिकित्साकरे कि जिससे यह पके नहीं । बडके पत्ते, ईट, सोंठ, गिलोय और पुनर्नवा इनको एकत्र पीसकर भगन्दररोगके पिडकाओंको उत्पन्न होते ही लेप करनेसे आराम होताहै । विलावकी हड्डियोंको त्रिफलेके रसमें पीसकर लेपकरनेसे भगन्दर और दुष्टव्रण नष्ट होजाताहै । वच, कूठ, हींग, अजवायन और पाँचोंनोन घृतमें भून चूर्ण करके काँजी अथवा सुराके साथ सेवन करनेसे भगंदररोग नष्ट होताहै । थूहरके दूध और आकके दूधमें दारुहलदीके चूर्णको मिलाकर वत्तीवना लगानेसे भगन्दररोग और नासूर दूर होताहै । निसोत, दन्ती, नागकेशर, तिल और मँजीठ इनको घीमें पीसकर सहत और सेंधानोन मिलाकर उबटन करनेसे भगन्दर दूर होताहै । रसोत, हलदी, दारुहलदी, मँजीठ, नीमकेपत्ते, निसोत, मालकांगनी और दन्तीकी जड इनको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे भगन्दररोग दूर

होताहै । कूठ, निसोत, दन्तीकी जड, तिल, पीपल, सैंधानोन, सहत, हलदी, हरड, बहेडा, आमला और तूतिया, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे भगन्दरका व्रण शुद्ध होजाताहै । तिल, हरड, लोध, नीमके पत्ते, हलदी, दारुहलदी, वच, लोध और घरका धुआं यह सब औषधि समानभाग लेकर प्रलेप करनेसे भगन्दर, उपदंश और दुष्टव्रण शुद्ध होताहै । दूध, पिट्ठी, तिल, अरण्ड और मुलेठी इनका प्रलेप करनेसे रक्तदोपजन्य भगन्दररोग दूर होताहै । गधेके रुधिरमें पकाया हुआ भूरोमेका चूर्ण तिसका लेपकरनेसे अथवा कुत्तेकी हड्डियोंका लेपकरनेसे किम्बा त्रिफलेके जलसे धोनेसे भगन्दररोग दूर होताहै ॥ १-१२ ॥

अथ नवकार्षिकगुग्गुलुः ।

त्रिफलापुरकृष्णाभिस्त्रिपञ्चैकांशयोजिता ।
गुटिकाशोथगुल्मार्शोभगन्दरवतांहिता ॥ १३ ॥

अर्थ–हरड़, बहेडा, आमला, प्रत्येक एकएक कर्ष गूगुल पाँच कर्ष और पीपल एक कर्ष इन सब औषधियोंको एकत्र मिलाकर गोली बनालेवे । यह गोली सूजन, गुल्म, बवासीर और भगन्दररोगको नष्ट करैहै ॥ १३ ॥

अथ सप्तविंशतिगुग्गुलुः ।

त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामृतचित्रकम् ।
शठ्येलेपिप्पलीमूलंहपुषासुरदारुच ॥ १४ ॥
तुम्बुरंपुष्करंचव्यंविशालारजनीद्वयम् ।
विडसौवर्चलंक्षारःसैन्धवंगजपिप्पली ॥ १५ ॥
यावन्त्येतानिचूर्णानितावद्द्विगुणगुग्गुलुः ।
कोलप्रमाणांगुटिकांखादेत्तुमधुनासह ॥ १६ ॥
भगन्दरंश्वासकासक्षयजीर्णज्वरोदरम् ।
नाडीदुष्टव्रणानाहकुष्ठपामाश्मरीक्रिमीन् ।
मेहान्त्रवृद्धिहृत्पार्श्वशूलंप्लीहानमेवच ॥ १७ ॥
पंचतिक्तघृतं शस्तम् ।
सप्तविंशतिकोहन्तिगुग्गुलुः सर्वरोगहा ॥ १८ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, गिलोय, चीता, कचूर, इलायची, पीपरामूल, हाऊबेर, देवदारु, धनियाँ, पोहकरमूल, चव्य, इन्द्रायनकी जड, हलदी, दारुहलदी, विरियासंचरनोन, कालानोन, जवाखार, सैंधानोन और गजपीपल इन सबका चूर्ण एकभाग और सबसे दूना गूगुल एकत्र मिलालेवे । प्रतिदिन इसको बेरकी बराबर सहतमें मिलाकर खाय, इससे–भगन्दर श्वास, खाँसी, क्षय, जीर्णज्वर, उदररोग, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, अफारा, कोढ़, पामा, पथरी, कृमिरोग, प्रमेह, अंत्रवृद्धि, हृदयरोग, पार्श्वशूल, प्लीहा, तथा अन्यान्यरोग, दूर होतेहैं । अथवा पंचतिक्त गूगुल तथा सप्तविंशति गूगुलको सेवन करनेसे भगन्दरादि नाना प्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ भगन्दरघ्नप्रयोगः ।

जम्बुकमांसंभक्षयेत्प्रकारव्यंजनादिभिः ।
अजीर्णवर्जीमासेनमुच्येततुभगन्दरात् ॥ १९ ॥
पंचतिक्तघृतंशस्तंपंचतिक्तश्चगुग्गुलुः ।
न्यग्रोधादिर्गणोयस्तुहितःशोधनरोपणः ॥ २० ॥

अर्थ–शृगालके मांसके विविधप्रकारके व्यंजन बनाकर सेवनकरै और अजीर्णमें भोजन न करै तो भगन्दर रोगसे रोगी छूट जातेहैं । पंचतिक्तघृत और पंचतिक्त गूगुलको सेवन करनेसे तथा न्यग्रोधादिगणकी सर्व औषधियोंका क्काथ बनाकर सेवन करनेसे भगंदर रोगके सम्पूर्ण व्रण शुद्ध और भरकर रोग दूर होजाताहै ॥ १९ ॥ २० ॥

अथ विस्यन्दनतैलम् ।

चित्रकार्कौत्रिवृत्पाठेमलपूहयमारको ।
सुधांवचालांगलकींहरितालंसुवर्चिकाम् ॥ २१ ॥
ज्योतिष्मतीश्चसंहृत्यतैलंधीरोविपाचयेत् ।
एतद्विस्यन्दनंनामतैलंदद्याद्भगन्दरे ॥
शोधनंरोपणंचैवसवर्णकरणंपरम् ॥ २२ ॥

मलपू कृष्णोदुम्बरः ।

अर्थ–तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, कल्कके लिये चीता, आक, निसोत, पाढ, कठूमर, कनेर, मालकाँगनी, थूहर, वच, कलिहारी, हरिताल और

सज्जी यह सब औषधियाँ आधसेर,लेकर यथाविधिसे इस तेलको सिद्ध करै,यह तैल-भगन्दर रोगके व्रण शुद्ध करके भरदेताहै और घावके स्थानको उत्तम वर्णवाला करदेताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥

अथ करवीराद्यं तैलम्।

करवीरनिशादन्तीलांगलीलवणाग्निभिः।
मातुलुंगार्कवत्साह्वैःपचेत्तैलंभगन्दरे ॥ २३ ॥
कुटजस्य फलं दग्ध्वा।

अर्थ-तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये कनेरकी जड, हलदी, दन्तीकी जड, कलिहारी, सैंधानोन, चीता, बिजोरेकी जड, आककी जड और भुनेहुए इन्द्रजौ आधसेर यथाविधिसे इसतेलको सिद्ध करै. यह तैल भगन्दर रोगको दूर करैहै ॥ २३ ॥

अथ निशाद्यंतैलम्।

निशार्कक्षीरसिन्धवग्निपुराश्वहनवत्सकैः।
सिद्धमभ्यंजनेतैलंभगन्दरविनाशनम् ॥ २४ ॥

अर्थ-तेल २ दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये हलदी,आकका दूध, सैंधानोन, चीता और गूगुल तथा कनेरकी जड और इन्द्रजौ यह सब आध सेर, इस तेलकी मालिश करनेसे भगन्दर रोग आराम होताहै ॥ २४ ॥

अथ कालाग्निरसः।

शुद्धसूतंसमंगंधंमृतनागंसतुत्थकम्।
जीरकंसैन्धवंतुल्यंतिक्ताकोषातकीद्रवैः ॥ २५ ॥
पिष्टंतल्लेपनाद्धन्तिभक्षणाच्चभगन्दरम्।
रसःकालाग्निनामोऽयंद्विगुंजंमृत्युजिद्भवेत् ॥ २६ ॥

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, मृतसीसा, तूतिया, जीरा और सेंधानोन यह सब औषधि समानभाग ले कुटकी और कडवी तोरइयोंके रसमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा दोरत्तीकी गोली बनाकर प्रतिदिन एक गोली खानेसे भगन्दर रोग दूर होताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथ साध्यासाध्यव्यवस्था।

पूयश्चहरतेपक्वं,कृष्टसाध्योभगन्दरः।
त्रिदोषोत्थमसाध्यंस्यात्क्रिमिजश्चभगन्दरः

आदौसर्वप्रयत्नेनपाकंरक्षेद्भगन्दरे ॥ २७ ॥

अर्थ-भगन्दर पकजाय तो राध निकालदेवे, यह पक्क भगन्दर कष्टसाध्य है। त्रिदोषोत्पन्नभगन्दर तथा कृमिजभगन्दर असाध्य है। सबसे पहिले वैद्यको चाहिये कि जिससे भगन्दर पके नहीं ऐसे यत्नोंसे भगन्दरकी रक्षा करै ॥२७॥

अथ रतिताण्डवरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागन्धंकुमारीरसमर्दितम् ।
त्र्यहान्तेगोलकंकृत्वाहण्डिकान्तेनिरोधयेत् ॥ २८ ॥
तयोःसमेताम्रपात्रेशुद्धेचताम्रलेपिते ।
तद्भाण्डंभस्मनापूर्यचुल्ल्यांतीव्राग्निनापचेत् ॥ २९ ॥
त्रियामान्तेसमुद्धृत्यचूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ।
जम्बीरस्यद्रवैःपिष्ट्वारुद्ध्वासप्तपुटेपचेत् ॥ ३० ॥
गुंजैकंमधुनाज्येनलिह्याद्धन्तिभगन्दरम् ।
मुशलीलशुनंचानुआरनालयुतंपिबेत् ॥ ३१ ॥
कर्त्तव्यंमधुनाहारंदिवास्वप्नंचमैथुनम् ।
वर्जयेच्छीतमाहारंरसेऽस्मिन्रतिताण्डवे ॥ ३२ ॥

अर्थ-पारा १ एकभाग, गंधक २ दोभाग, दोनोंको एकत्र घीकुआरके रसमें तीनदिन खरलकर गोलाबनालेवे, इसपर कपरौटीकरै, फिर दोनोंकी बराबर तांबेके पत्रोंको लेकर, उनको एक हाँडीमें बिछाकर उनके बीचमें गोलेको रख ऊपरसे खूब दाबकर राख भरदेवे, पश्चात् चूल्हेपै चढाकर तीनप्रहरतक प्रचण्ड अग्निदेवे, पश्चात् चूल्हेपरसे उतार स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले, फिर जम्भीरी नीबूके रसमें खरलकर सम्पुटमें रख फूँकदेवे, इसप्रकार सातपुट देवे, इसरसको एक रत्तीभर सहत और घीके साथ सेवन करे तो भगन्दररोग दूर होवे। ऊपरसे मूसली और लहसनके चूर्णको काँजीके साथ पान करे, यह अनुपान है। इसरसको सेवन करनेवाला मनुष्य मधुरभोजन करे, तथा दिनमें सोना, मैथुन और शीतल आहार यह सब इससे त्यागदेवे, इसको रतिताण्डवरस कहते हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथ भूनिम्बादिचूर्णकाथश्च ।

भूनिम्बत्रिफलाकुष्ठवानरीबीजगन्धकम् ।

लशुनञ्चशिलायुक्तंतुल्यंचूर्णंप्रकल्पयेत् ॥ ३३ ॥
उदुम्बरस्यचूर्णन्तुगवांक्षीरेणपाययेत् ।
तत्कषाययुतंचूर्णंरात्रौलेपञ्चशान्तये ॥ ३४ ॥
गुग्गुलुश्चपलान्पञ्चपलैकापिप्पलीतथा ।
त्रिफलापलमेकञ्चत्वगेलाप्रतिकार्षिकम् ॥ ३५ ॥
चूर्णयेन्मधुनाज्येनभुक्त्वाहान्तिभगन्दरम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-चिरायता, कूठ, हरड, बहेडा, आमला, कौंछकेबीज, गंधक, लहसुन और मैनशिलके चूर्णको गायके दूधके साथ अथवा गूलरके चूर्णको गायके दूधके साथ पीनेसे तथा उपरोक्त द्रव्यांके क्काथमें उपरोक्त औषधियोंका चूर्ण डालकर रात्रिमें लेपकरनेसे-भगन्दररोग शान्त होताहै । गूगुल ५ पाँचपल, पीपलका चूर्ण १ एक पल, त्रिफलेका चूर्ण ४ चारतोले, दालचीनी २ दोतोले और छोटी इलायची २ दोतोले सबको एकत्र मिलाकर सहत और घृतके साथ सेवनकरनेसे भगन्दररोग दूर होताहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथ भगन्दरव्रणलेपनानि।

नशस्त्रैश्छेदयेत्प्राज्ञः स्फोटयेल्लेपनादिभिः ।
हारिद्रानिम्बसिन्धूत्थंपिष्ट्वालिम्पेत्स्फुटत्यलम् ॥ ३७ ॥
नरास्थितैललेपेनस्फुटितःशुध्यतिव्रणः ।
ताम्रचूर्णसमंचूर्णंसुतमेकंविमर्दयेत् ॥ ३८ ॥
सैन्धवंसप्तभागञ्चगंधकंनवभागकम् ।
भृंगीद्रवैःसजम्बीरैःसप्ताहंघर्म्ममर्दितम् ॥ ३९ ॥
तैललिप्तंस्फुटत्याशुयदपक्कंभगन्दरम् ।
ताम्रभस्मद्रवैर्मर्द्यंमधुपर्णीपुनर्नवा ॥ ४० ॥
मेषशृंगीदिनैकेनव्रणशोधनरोपणम् ।
कांचनीद्विनिशामुण्डीमंजिष्ठाचशतावरी ॥ ४१ ॥
गंधकंधातकीपुष्पं तुल्यं लवणपंचकम् ।
कन्याद्रवयुतोलेपःकफोत्थेचभगन्दरे ॥ ४२ ॥

अर्थ-भगन्दरके व्रणोंको कदापि शस्त्रसे न चीरै, किन्तु लेपादिसे तोडै। हलदी, नीम और सैंधेनोनको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे अथवा मनुष्यकी हड्डियोंके चूर्णको तेलमें मिलाकर लेप करनेसे भगन्दरके सब व्रण फूटकर सूख जाते हैं। ताँबेके चूर्णको और पारेको एक एक भागलेकर दोनोको एकत्र खरल करै, पश्चात् इसमें सेंधानोन ७ सात भाग और गंधक ९ नौ भाग मिलाकर भांगरेके रसमें और जम्भीरी नींबूके रसमें सात दिनतक धूपमें खरल करै, फिर इसमें तेल मिलाकर लेप करनेसे अपक्क भगन्दर भी फूट जाताहै। ताँबेकी भस्मको मधुपर्णी पुनर्नवा और मेढासिंगीके रसमें एक दिन खरलकर लेप करनेसे व्रण शुद्ध होजातेहैं, और भरजातेहैं । सत्यानाशी कटेरी, हलदी, दारुहलदी, गोरखमुण्डी, मजीठ, सतावर, गंधक, धायके फूल और पाँचोंनोन इन सब औषधियोंको समान भाग ले घीकुआरके रसमें खरलकर कफज भगन्दरपै लेप करै॥ ३७-४२॥

अथ सैन्धवादितैलम्।

सैन्धवंचित्रकंदन्तींपलाशश्चेन्द्रवारुणीम्।
गोमूत्रेऽष्टगुणेपच्याद्ग्राह्यमष्टावशेषकम्॥ ४३॥
क्वाथपादंक्षिपेत्तैलंकृष्णाब्सस्त्वयोमृतम्।
पचेत्तैलावशेषश्चतेनलेप्यंभगन्दरम्॥ ४४॥
असाध्यंसाधयत्याशुपक्कंक्रिमिकुलान्वितम्॥ ४५॥

अर्थ-तिलका तेल १ एक सेर क्वाथके लिये सेंधानोन, चीता, दन्ती, पलाश और इन्द्रायणकी जड़, यह सब कूटेहुए द्रव्य प्रत्येक ३ तीन पल २ दो तोले, पाकके लिये गोमूत्र १२८ एक सौ अट्ठाईस पल, शेष ३२ बत्तीसपल, तथा कल्कके लिये पुटपाकसे मारा हुआ और जारण किया हुआ लोहा २ दोपल, सबको यथाविधिसे मिलाकर तेलको सिद्ध करै। इस तेलका लेप करनेसे पक्क और क्रिमिसंयुक्त असाध्य भगन्दरभी दूर होताहै॥ ४३-४५॥

अथ हरिद्रादितैलम्।

निशासैन्धवसिद्धार्थक्षौद्रगुग्गुलुसंयुता।
वर्त्तिर्भगन्दरेयोज्यातथा[illegible]पहा॥ ४६॥

अर्थ–हलदी, सैन्धवलवण, सफेद सरसों, सहत और गूगुल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बत्ती बना योजनेसे भगन्दर और नाडीव्रण दूर होताहै ॥ ४६ ॥

अथ भगंदरेऽपथ्यानि।

व्यायामंमैथुनंयुद्धंपृष्ठयानंगुरूणिच।
संवत्सरंपरिहरेदपिरूढव्रणोनरः ॥ ४७ ॥

इति भगंदराध्यायः।

अर्थ–व्रणोंके मरजानेपर अर्थात् भगन्दररोगके आराम होजाने परभी एक वर्ष तक व्यायाम, मैथुन, युद्ध, हाथीघोडेआदि सवारियोंपै चढना और भारीद्रव्य इन सबको वर्जदेवे ॥ ४७ ॥

इति भगन्दराध्यायःसमाप्तः।

अथोपदंशचिकित्साधिकारः।

तत्रादौ सामान्ययत्नानि।

स्निग्धस्विन्नशरीरस्यध्वजमध्येसिराव्यधः।
जलौकःपातनंवास्यादूर्ध्वाधःशोधनंतथा ॥ १ ॥
सद्योहिहृतदोषस्यरुक्शोथावुपशाम्यतः।
पाकोरक्ष्यःप्रयत्नेनाशिश्नक्षयकरोहिसः ॥ २ ॥

अर्थ–उपदंशरोगमें प्रथम स्नेह और स्वेद देकर लिंगकी फस्त खोले, अथवा जोंक लगवावे तथा वमन और विरेचन दोनो कराकर शुद्ध करै, इस प्रकार करनेसे सम्पूर्ण दोष दूर होकर तत्काल पीडा और सूजन दूर होजातीहै। परन्तु जिससे उपदंश पके नहीं, ऐसे यत्नोंसे रक्षा करै इसका विशेष ख्याल रक्खै, कारण यह है कि उपदंशके पकनेसे लिंगका अग्रभाग पक अर्थात् सडकर गिरपडता है, इससे लिंग छोटा और असमर्थ हो जाताहै। तथा कोई कोई रोगी परलोकनिवासी भी होजातेहैं ॥ १ ॥ २ ॥

अथ पटोलादित्रिफलादीनि।

पटोलनिम्बत्रिफलागुडूचीक्काथंपिबेद्वाखदिराशनाभ्याम्।
सगुग्गुलुंवात्रिफलायुतंवासर्वोपदंशापहरःप्रयोगः ॥ ३ ॥

प्रपौण्डरीकंमधुकंरास्नाकुष्ठपुनर्नवाः ।
सारलागुरुभद्राख्यैर्वातिकेलेपसेचने ॥ ४ ॥
भद्रो देवदारुः ।

अर्थ-परवल, नीम, त्रिफला, और गिलोयके क्वाथमें अथवा खैर और असनके क्वाथमें गूगुल अथवा त्रिफलेका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके उपदंश नष्ट हो जाते हैं, पुण्डेरिया, मुलेठी, रास्ना, कूठ, पुनर्नवा, सरल, अगर, और देवदारु, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर सेवन करनेसे उपदंश रोग शान्त होता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथ पित्तजोपदंशहरलेपः ।

गैरिकांजनमंजिष्ठामधुकोशीरपद्मकैः ।
सचन्दनोत्पलैःस्निग्धैःपैत्तिकंसंप्रलेपयेत् ॥ ५ ॥

अर्थ- गेरू, रसौत, मँजीठ मुलेठी, खस, पद्माख, लालचंदन और उत्पल, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर घी मिलाके लेप करनेसे पित्तज उपदंश दूर होताहै ॥ ५ ॥

अथपित्तास्रजोपदंशहरसेकदीनि ।

निम्बार्ज्जुनाश्वत्थकदम्बशालजम्बूवटोदुम्बरवेतसेषु ।
प्रक्षालनालेपघृतानिकुर्याच्चूर्णञ्चपित्तास्रभवोपदंशे ॥ ६ ॥

अर्थ-नीम, अर्ज्जुन, पीपल, कदम्ब, शाल, जामुन, बड, गूलर और बेंत, इन सब वृक्षोंकी छालका क्वाथ बनाकर परिषेक करनेसे अथवा इन सब छालोंको पीसकर लेप करनेसे, किम्वा इन सब छालोंके योगसे घृतको सिद्ध-कर सेवन करनेसे या उक्त, छालोंका चूर्ण बनाकर योजनेसे पित्त और रक्त-जन्य उपदंश दूर होताहै ॥ ६ ॥

अथ त्रिफलादिक्वाथः ।

त्रिफलायाःकषायेणभृंगराजरसेनवा ।
व्रणप्रक्षालनंकुर्यादुपदंशप्रशान्तये ॥ ७ ॥

अर्थ-त्रिफलेके काढेसे अथवा भाँगरेके रससे उपदंशको धोनेसे अराम होताहै ॥ ७ ॥

अथोपदंशव्रणादिहरलेपः ।

दार्वीरसांजनंद्राक्षाशंखनाभिपयोमधु ।
तैलाज्यगोमयरसोलेपस्तैःसमभागकैः ॥
सुपिष्टैरुपदंशेस्याद्व्रणश्वयथुदाहहा ॥ ८ ॥

अर्थ—दारुहलदी, रसौत, लाख, शंखनाभि, दूध, सहत, तेल, घृत और गोवरका रस, इन सबको समानभाग ले एकत्र पीसकर लेप करनेसे उपदंशके घाव, सूजन और दाह दूर होजातेहै ॥ ८ ॥

अथोपदंशव्रणरोहणलेपः चूर्णश्च ।

वटप्ररोहार्ज्जुनजम्बुपथ्यालोध्रोहरिद्राचहितःप्रलेपः ।
सर्वोपदंशेषुचरोहणार्थंचूर्णश्चतज्जंविमलांजनेन ॥ ९ ॥

अर्थ—बड़के अंकुर, अर्जुनकी छाल, जामुनकी छाल, हरड़ लोध, और हलदी, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा उक्त औषधिका चूर्ण, फिटकरी और रसौत मिलाकर योजनेसे—उपदंश रोगके घाव भरजातेहैं ॥ ९ ॥

अथ भूनिम्बाद्यं घृतम्।

भूनिम्बनिम्बात्रिफलापटोलकरञ्जजातीखदिराशनाभ्याम् ।
सतोयकल्कैर्घृतमाशुपक्वंसर्वोपदंशापहरंप्रदिष्टम् ॥ १० ॥
करञ्जस्य फलम् । एतद्भक्षणं म्रक्षणञ्च ।

अर्थ—घृत ४ चारसेर, क्काथके लिये चिरायता, नीमकीछाल, पटोलपत्र, करंजकेफल, चमेलीके पत्ते, खैर और विजयसार प्रत्येक एक एक सेर, पाकके लिये जल ६४ चौंसठसेर शेष १६ सोलहसेर और कल्कके लिये भी यही औषधि एक सेर लेवे, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । इस घृतके खानेसे—तथा लगानेसे—सर्वप्रकारके उपदंश दूर होतेहैं ॥ १० ॥

अथोपदंशप्रयोगवर्णनम् ।

घृतान्दियानिचोक्तानिकुष्ठेनाडीव्रणेव्रणे ।
उपदंशेप्रयोज्यानिसेकाभ्यंजनभोजनैः ॥ ११ ॥

अर्थ—जो घृत कुष्ठरोग, नाडीव्रण और व्रणरोगमें कहेहैं, वे सब घृत उपदंश रोगमें सेक, अभ्यंग और भोजनरूपसे व्यवहार करने चाहियें ॥ ११ ॥

अथ गृहधूमाद्यं तैलम् ।

गृहधूमनिशाकिण्वैरेकद्वित्र्यंशकैः क्रमात् ।
तैलं सिद्धं सकण्डूश्च शोथं चैवोपदंशनुत् ॥ १२ ॥

किण्वं सुराबीजम् ।

अर्थ-तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये घरका धुआँ १ एक पल-४ चार तोले-पाँच ५ मासे-३ तीन रत्ती, हलदी २ दो पल-५ पाँच तोले-२ मासे-३ तीन रत्ती और सुराबीज ३ तीनपल-७ सात तोले-७ सात मासे ८ आठ रत्ती लेवे । यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै, यह तेल-कण्डू और सूजनसंयुक्त उपदंश रोगको दूर करैहै ॥ १२ ॥

अथ कोषातक्याद्यं तैलम् ।

यस्य लिंगस्य मांसन्तु शीर्य्यते कृमिभक्षितम् ।
तस्य कोषातकीलवम्बाबीजनागरसाधितम् ॥
तैलं हन्त्यचिराद्घोरं दुष्टव्रणभगन्दरम् ॥ १३ ॥

अर्थ-तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलह सेर, तथा कल्कके लिये कड़वी तोरइयोंके वीज और सोंठ यह सब १ एक सेर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर लगानेसे शीर्णमांस और कृमिभक्षित उपदंश रोग दुष्टव्रण तथा भगन्दर रोग दूर होताहै ॥ १३ ॥

अथ महाशंखलेपः ।

महाशंखजलैः पिष्ट्वा तेन लिङ्गं प्रलेपयेत् ।
लिङ्गरोगं निहन्त्याशु लेपोऽयं व्याधिनाशकः ॥ १४ ॥

अर्थ-मनुष्यकी खोपडीको जलमें पीसकर लेप करनेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ १४ ॥

अथ कुष्ठादिप्रलेपः ।

कुष्ठंपूगंवचातोयैः सारंवाखादिरोत्थितम् ।
जलैः पिष्टप्रलेपोऽयंलिंगरोगहरंपरम् ॥ १५ ॥

अर्थ-कूठ, सुपारी और वचको जलमें पीसकर लेप करनेसे अथवा खैरसारको जलमें पीसकर लेप करनेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ १५ ॥

अथ त्रिफलाप्रयोगः ।

क्षालयेत्रिफलाक्काथैःपक्कंलिंगंपुनःपुनः ।
तच्चूर्णंदेयमात्रेणअंकुरञ्चजयेद्ध्रुवम् ॥ १६ ॥

अर्थ–पकेहुए लिंगको त्रिफलेके क्वाथसे वारंबार धोवे, पश्चात् त्रिफलेकाचूर्ण लिंगपै बुरकादेवे, इससे लिंगपै अंकुर आजातेहैं ॥ १६ ॥

अथ सगन्धकघृतलेपः ।

सगन्धकघृतैर्लेप्यंपक्कंलिंगंसुखावहम् ॥ १७ ॥

अर्थ–गन्धकके चूर्णको घृतमें पीसकर लेपकरनेसे उपदंश रोग नाशको प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥

अथ पंचारविन्दघृतम् ।

मृणालंपद्मबीजानिनालंपद्मञ्चकेशरम् ॥
सर्वंसप्तदलंकुर्यात्रिंशत्पलञ्चगोघृतम् ॥ १८ ॥
घृताच्चतुर्गुणंक्षीरंघृतशेषंविपाचयेत् ।
पाकान्तेचूर्णमेषाञ्चाक्षिप्त्वातदवतारयेत् ॥
भक्षयेल्लिंगरोगघ्नंघृतंपंचारविन्दकम् ॥ १९ ॥

अर्थ–मृणाल, कमलगट्टे, कमलकी डंडी, कमल और कमलकेशर इन सबका चूर्ण ७ सात पल बना रक्खे, पश्चात् ३० तीसपल घृत १२० एकसौ बीस पल दूध इन दोनोको एकत्र पकावे, जब पकते पकते घृत शेष रहजाय तब पूर्वोक्त मृणालादिका चूर्ण ७ सात पल मिलादेवे, इस पंचारविन्दघृतको खानेसे लिंगरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ तुत्थादिलेपः ।

तुत्थटंकणकाशीशंशिलातालंरसांजनम् ।
सौराष्ट्रीसैन्धवञ्चैलांसिन्दूरंरेणुभूषणम् ॥
पिष्ट्वातुक्षौद्रसंयुक्तंलेपंलिंगरुजापहम् ॥ २० ॥

अर्थ–तूतिया, सुहागा, कसीस, मैनशिल, हरिताल, रसौत, सोरठकी मट्टी, सैंधानोन, इलायची, सिन्दूर और कपूर यह सब औषधि समानभाग ले सहतके साथ पीसकर लेप करनेसे लिंगरोग नष्ट होताहै ॥ २० ॥

अथ जीरकादिलेपः ।

कुमारीरससंपिष्टंजीरकंलेपनाद्रुजम् ।
तेनदाहश्चपाकश्चशान्तिमाप्नोतिनिश्चितम् ॥ २१ ॥

अर्थ—घीकुवारके रसमें जीरेको पीसकर, लेपकरनेसे उपदंशका दाह और पाक निवारण होताहै ॥ २१ ॥

अथ लौहरजो लेपः ।

अयोरजस्ताम्ररजास्त्रिफलागैरिकस्तथा ।
उपदंशंनिहन्त्येतद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २२ ॥

अर्थ—लोहा, ताँबेका चूर्ण, त्रिफला और गेरू. इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर लगानेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ २२ ॥

अथ भृङ्गराजादिलेपः ।

मार्कवस्त्रिफलादन्तीताम्रचूर्णमयोरजः ।
उपदंशंनिहन्त्येतद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २३ ॥

इत्युपदंशाऽध्यायः ।

अर्थ—भांगरा, त्रिफला, दन्ती, तांबेका चूर्ण और लोहेका चूर्ण जलमें पीसकर लेप करनेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ २३ ॥

इति उपदंशाऽधिकारः समाप्तः ।

अथ शूकदोषचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नानि ।

शूकदोषेषुसर्वेषुविपर्श्नांकारयेत्क्रियाम् ।
हितंचसर्पिषःपानंपथ्यञ्चापिविरेचनम् ॥ १ ॥
हितंशोणितमोक्षश्चयच्चापिलघुभोजनम् ।
ज्वलतीग्रथिताष्ठीलामर्षपीणांविशेषतः ॥ २ ॥
उपनाशनमांसानांकल्कानांव्रणवद्विधिः ।
पित्तरक्तोत्वणानाञ्चपित्तश्वयथुवत्क्रिया ॥ ३ ॥
सुखोष्णैरुपनाहैश्चसुस्निग्धैरुपनाहयेत् ।

कुम्भिकायांहरेद्रक्तंपक्कायांशोधितेव्रणे ॥ ४ ॥
तिन्दुकात्रिफलालोध्रैर्लेपस्तैलञ्चरोपणे ।
अलज्यांहृतरक्तायामयमेवक्रियाक्रमः ॥ ५ ॥
स्वेदयेद्ग्रथितंशिश्नंनाडीस्वेदेनबुद्धिमान् ।
रक्तविद्रधिवच्चापिक्रियाशोणितजार्बुदे ॥ ६ ॥
कषायकल्कसर्पींषितैलंचूर्णंरसक्रियाम् ।
शोधनेरोपणेचैववीक्ष्यावस्थांविचारयेत् ॥ ७ ॥
अर्बुदंमांसपाकञ्चविद्रधिंतिलतालकम् ।
प्रत्याख्यायप्रकुर्वीतभिषक्तेषांप्रतिक्रियाम् ॥ ८ ॥

इति शूकदोषाधिकारः समाप्तः ।

अर्थ—सर्व प्रकारके शूकदोषोंमें विपन्न क्रिया करे । घृतपान, विरेचन, रक्तमोक्षण और लघुभोजन, यह सब शूकदोषमें विशेष हितकारी हैं । ज्वलिती, ग्रथिता, अष्ठीला और सर्षपी इन चार प्रकारके अधिक मांसयुक्त शूकदोष रोगोंमें व्रणवत् विधिप्रयोग करना चाहिये पित्त और रक्तजन्य शूकदोषरोगमें पित्तज शोथकी समान क्रिया करे, तथा किंचित् गरम, सुस्निग्ध प्रलेप देवे । कुम्भिका नामक शूकदोषमें फस्त खुलवावे और जो वह पक जाय तो व्रणको शुद्धकर पश्चात् तेंदू, त्रिफला और लोधको एकत्र पीस तेलमें मिलाकर लेप करे, इससे घाव भर जाते हैं । अलजी शूकदोषमें भी फस्त खुलवाकर, पश्चात् इसी प्रकार क्रिया करे । ग्रथित शूकदोषमें नाडीस्वेदप्रदान करे । रक्तार्बुदशूकदोषमें रक्तज विद्रधिकी समान चिकित्सा करे । कषाय, कल्क, घृत, तेल, चूर्ण और रसक्रिया यह सब शूकदोषकी अवस्थाके अनुसार वारंवार विचारकर प्रयोग करे । अर्बुद, मांसपाक, विद्रधि और तिलतालक इनको त्यागके चिकित्सा करे अर्थात् इनकी चिकित्सा न करे यह असाध्य हैं ॥ १-८ ॥

इति शूकदोषाधिकारः समाप्तः ।

अथ भग्नचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नानि ।

आदौभग्नंविदित्वातुसेचयेच्छीतलांबुना ।
पंकेनालेपनंकार्यंबन्धनञ्चकुशान्वितम् ॥ १ ॥

कुशा बन्धनद्रव्यम् ।

पलाशोदुम्बरीश्वत्थकदम्बनिचुलत्वचः ।
वंशसर्जार्जुनंवाथकुशार्थमुपकल्पयेत् ॥ २ ॥
सघृतेनास्थिसंहारंलाक्षागोधूममर्ज्जुनम् ।
सन्धियुक्तेऽस्थिभग्नेतुपिबेत्क्षीरेणमानवः ॥ ३ ॥
रसोनमधुलाक्षाज्यंसिताकल्कंसमश्नताम् ।
छिन्नाभिन्नच्युतोऽस्थीनांसन्धानमचिराद्भवेत् ॥ ४ ॥
पीतंवराटिकाचूर्णंद्विगुंजंवात्रिगुञ्जकम् ।
अपक्वक्षीरपीतंस्यादस्थिभग्नप्ररोहणम् ॥ ५ ॥

लाक्षास्थिसंहृत्ककुभाश्वगन्धाचूर्णीकृतानागबलापुरश्च ।
संभग्नयुक्तास्थिरुजंनिहन्यादङ्गानिकुर्यात्कुलिशोपमानि ६

अर्थ—प्रथम भग्नरोगमें अर्थात् जिसकी हड्डी टूटगई हो उसको शीतल जलसे छिड़के, पश्चात् कीचका लेप करे, तथा ढाक, गूलर, पीपल, कदम्ब, जलबेंत, बाँस, शाल और अर्जुनादिकी छालको पीसकर कुशाके संग बाँधे, संधियुक्त हड्डी टूट जावे तो हडसँघारी, लाख, गेहूं और अर्जुन इन सबको घृत और दूधके साथ पीवे, लहशुन, सहत, घी, लाख और खाँड, इन सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे छिन्न, भिन्न और च्युत हड्डी जुडजातीहै । २ दोरत्ती अथवा ३ तीन रत्ती पीली कौडीके चूर्णको कच्चे दूधके साथ सेवन करनेसे टूटी हड्डी जुडजातीहै, लाख, हडसँघारी, अर्जुन, असगंध और गंगेरन इन सब औषधियोंको समानभाग ले चूर्णकर सबकी बराबर गूगुल मिलाकर सेवन करनेसे अस्थिभग्न नष्ट होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथाभागुग्गुलुः ।

आभाफलत्रिकाव्योषैःसर्वैरेभिःसमीकृतैः ।
तुल्योगुग्गुलुर्वायोज्योभग्नसंधिप्रसाधकः ॥ ७ ॥

अर्थ—आभा (वणिकद्रव्यविशेष) त्रिफला और त्रिकुटा यह सब समान भाग और सबकी बराबर गूगुल मिलाकर सेवन करनेसे अस्थिभग्न दूर होता-है ॥ ७ ॥

अथाभिघातजपीडादिहरलेपाः ।

सद्योऽतिघातजनितरोगरुजाश्वयथवःप्रशाम्यन्ति ।
पिष्टकलवणालेपादम्लीकाफलरसाभ्यांवा ॥ ८ ॥
कांजिकेनैवसंपिष्टंशाल्मलीवल्कलंहितम् ।
छागविट्सहितंकोष्णमस्थिभग्नेप्रलेपनम् ॥ ९ ॥

अर्थ–पिष्टक और लवणको इमलीके रसमें पीसकर लेप करनेसे तत्काल अभिघातजनित पीडा और सूजन दूर होतीहै । सेमलकी छालको काँजीमें पीसकर लेप करना हितकारी है। अथवा बकरीकी मेंगनको काँजीमें पीस गरम करके लेपकरना हितकारक है ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ भग्नरोगेऽपथ्यानि ।

लवणंकटुकंक्षारमम्लमैथुनमातपम् ।
व्यायामञ्चनसेवेतभग्नोरूक्षान्नमेवच ॥ १० ॥

अर्थ–नमकीन, चरपरे, खारी, खट्टे, मैथुन, धूप, कसरत और रूखे अन्न, यह सब भग्नरोगमें विशेष अहितकारी हैं ॥ १० ॥

अथ वज्रवल्ल्यादिगुग्गुलुः ।

वज्रवल्ल्यर्जुनोवासाविशालालोहटंकणौ ।
रसगन्धकासिन्धूत्थाःसमभागेनचूर्णयेत् ॥ ११ ॥
चूर्णाद्गुणत्रयंग्राह्यंगुग्गुलुंघृतपिष्टितम् ।
वज्रवल्ल्यादिकोनामगुग्गुलुःपरिनिर्मितः ॥ १२ ॥
गहनानन्दनाथेनभग्नरोगविनाशनः ।
नानाभग्नंनिहन्त्याशुबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥ १३ ॥
कृमिकुष्ठाक्षिरोगाणांहन्ताग्रन्थिव्यथापहः ॥
कटिहृद्रोगशमनआमवातनिषूदनः ॥ १४ ॥

वज्रवल्ली हाडा ।

अर्थ–वज्रवल्ली (हडसँघारी), अर्जुनवृक्षकी छाल, अडूसा, इन्द्रायण, लोहा, सुहागा, पारा, गंधक और सैंधानोन, यह सब औषधि समान भाग ले चूर्ण करै और सब चूर्णसे तिगुना घीमें पिसा हुआ गूगुल मिला देवे ।

यह वज्रवल्ल्यादि गूगुल श्रीमद्गहनानन्द वैद्यने भग्नरोगको नष्ट करनेके लिये निर्म्माण कियाहै । यह—नानाप्रकारके भग्नरोग, कृमिरोग, कुष्ठरोग, नेत्ररोग, ग्रन्थिरोग, कटिरोग, हृदयरोग और आमवातरोगको दूर करैहै । तथा बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ ११–१४ ॥

अथ कोष्ठशुद्ध्यर्थमुपायः ।

मासत्रयंप्रकर्त्तव्यंवज्रवल्लीरसैःसह ।
शुद्ध्यर्थिनेप्रदातव्यंतैलमेरण्डजंशुभम् ॥ १५ ॥

इति भग्नाधिकारः ।

अर्थ—कोठेको साफ रखनेके लिये भग्नरोगीको हडसंघारीके रसके साथ अण्डीका तेल पीनेको देवे ॥ १५ ॥

इति भग्नाधिकारःसमाप्तः ।

अथ कुष्ठचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ कुष्ठभेदवर्णनम् ।

पुण्डरीकंसविस्फोटंपामानंगजचर्म्मकम् ।
काकणंकच्छुकंदद्रुजिह्वकंचाष्टमंस्मृतम् ॥ १ ॥
गलितश्चमहाकुष्टंकापालश्चउदुम्बरम् ।
मण्डलश्चविचर्चाख्यंवैपादिकिट्टिमन्तथा ॥ २ ॥
चर्म्मदद्रुतथासिध्मशतारुःस्यादशस्मृतम् ।
श्वित्रकाख्यंविसर्पश्चविंशभेदाःप्रकीर्त्तिताः ॥ ३ ॥

अर्थ—पुण्डरीक, विस्फोट, पामा, गजचर्म्मक, काकण, कच्छु, दद्रु, जिह्वक, गलित, कापाल, उदुम्बर, मण्डल, विचर्चिका, वैपादिका, किट्टिम, चर्म्मदद्रु, सिध्म, शतारु, श्वित्र और विसर्प इन भेदोंसे कुष्ठ २० बीस प्रकारका है । अथवा यह कुष्ठके २० बीसभेद हैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ सामान्ययत्नानि ।

पक्षेपक्षेचवमनंमासेमासेविरेचनम् ।
षण्मासेचशिरामोक्षंनस्यंसप्तदिनान्तरे ॥ ४ ॥

वातोद्भवेतुसर्पिर्वमनंश्लेष्मोत्तरेषुकुष्ठेषु ।
पित्तोत्तरेषुमोक्षोरक्तस्यविरेचनंचाग्रम् ॥ ५ ॥
प्रच्छलमल्पेकुष्ठेमहतिचशस्तंशिराव्यधनम् ।
बहुदोषःसंशोध्यःकुष्ठीबहुशोनुरक्षताप्राणान् ॥ ६ ॥
वचावासापटोलानांनिम्बस्यफलिनीत्वचः ।
कषायोमधुनापीतोवान्तिकृन्मदनान्वितैः ॥ ७ ॥
विरेचनञ्चकर्त्तव्यंत्रिवृद्दन्तीफलत्रिकैः
नस्यधूमौविधातव्यौद्धावस्तिश्चजानता ॥ ८ ॥
पुराणाःशालिगोधूममुद्गाद्याःकुष्ठिनेहिताः ।
तिक्तशाकंजांगलञ्चपानादौखादिरोदकम् ॥ ९ ॥

अर्थ—कुष्ठरोगी पक्ष पक्ष अर्थात् पन्द्रह पन्द्रह दिनमें वमन, एक एक महीनेमें विरेचन, छे महीनेमें रक्तमोक्षण और सात सात दिनके बाद नास लेवे । वातकुष्ठरोगमें घृतपान, कफज कुष्ठमें वमन, पित्तज कुष्ठरोगमें रक्तमोक्षण और तीक्ष्णविरेचन, क्षुद्र कुष्ठरोगमें अस्त्रकर्म्म और महाकुष्ठरोगमें शिरावेध करै । और बहुत दोषवाले कुष्ठरोगीको इस प्रकार वमन और विरेचनके द्वारा वारंवार शोधन करै, जिससे बलका नाश न होवे । वच, अडूसा, पटोल, नीमकी छाल, प्रियंगुकी छाल और मैनफल, इनका क्काथ बनाकर सहत मिलाकर वमनके लिये कुष्ठ रोगीको पीनेको देवे । नस्य, धूमपान, बस्तिक्रिया, पुराने शालिधानके चावलोंका भात, गेहूं, मूँग, आदिका, यूष, तिक्तशाक, जंगलदेशके जीवोंका माँस और खदिरका जल, यह सब कुष्ठरोगीकेलिये विशेष हितकारी हैं ॥४–९॥

अथान्येऽपिकुष्ठघ्नयोगाः ।

मनःशिलालेमरिचानितैलमार्कपयःकुष्ठहरःप्रदेहः ।
करञ्जबीजैडगजंसकुष्ठंगोमूत्रपिष्टञ्चपरःप्रदेहः ॥ १० ॥
पत्राणिपिष्ट्वाचतुरङ्गुलस्यतक्रेणपत्राण्यनुकाकमाच्याः ।
तैलाक्तगात्रस्यनरस्यकुष्ठान्युद्वर्त्तयेदश्वहनच्छदैश्च ॥ ११ ॥
अश्वहनः करवीरः ।

अर्थ–मैनशिल, हरिताल, काली मिरच, सरसोंका तेल और आकका दूध, इन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै। करंजके बीज चकवड और कूठ, इन तीनों औषधियोंको एकत्र गोमूत्रके संग पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै। कुष्ठरोगीके शरीरमें तेल मलकर अमलतासके पत्ते बोलके साथ पीसकर मर्दन करनेसे अथवा मकोयको पीसकर मर्दन करनेसे–किम्बा कनेरके पत्तोंको पीस कर मर्दन करनेसे कुष्ठरोग दूर होता है ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ षड्योगाः।

आरग्वधःसेडगजःकरञ्जोवासागुडूचीमदनंहरिद्रे।
श्याह्वःसुराह्वःखदिरोधवश्चनिम्बंविडंगंकरवीरकश्च ॥ १२ ॥
ग्रन्थिश्चभौर्ज्जोलशुनःशिरीषःसालोमथोगुग्गुलकृष्णगन्धे।
फणिज्जकोवत्सकसप्तपर्णोपिचूनिकुष्ठंसुमनःप्रवालाः ॥ १३ ॥
वचाहरेणुस्त्रिवृतानिकुम्भोभल्लातकंगैरिकमंजनञ्च।
मनःशिलालेगृहधूमएलाकासीसलोध्राज्जुनमुस्तसर्ज्जा ॥ १४ ॥
आद्यर्द्धरूपैर्विहिताःषडेतेगोपित्तपीताःपुनरेवपिष्टाः।
सिद्धाःपरंसर्षपतैलयुक्ताश्चूर्णप्रदेहाभिषजाप्रयोज्याः ॥ १५ ॥
कुष्ठानिकृत्स्नानिप्रयान्तिनाशंसुरेन्द्रलुप्तंकिटिभंसदद्रुः।
भगन्दराशींस्यपचींसपामांहन्युःप्रयुक्तानचिरान्नराणाम् १६

अर्थ–अमलतास, चकवड़, करञ्ज, अडूसा, मैनफल हलदी और दारुहल्दी, १ गंधविरोजा, देवदारु, खैर, धववृक्षकी छाल, नीमकी छाल, वायबिडंग और कनेर २ गाठिवन, भोजपत्र, लहशुन, शिरीषकी छाल गूलर और संजिनेकी छाल ३ तुलसी, कुडेके बीज, कपास, सनोनेकी छाल, कूठ और चमेलीके पत्ते ४ वच, रेणुका, निसोत, गूगुल, भिलावेके बीज, गेरू और रसोत ५ मनशिल, हरिताल, घरका धुआँ, इलायची, कसीस, लोध, अर्जुन, नागरमोथा और राल ६ इन छे योगोंमेंसे एक किसी योगका क्वाथकर गोलोचनके संग पीनेसे अथवा पीसकर लेप करनेसे, या इनका चूर्ण सहतमें मिलाकर लेप करनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठ और भगन्दर, ववासीर, तथा, अपची आदि रोग दूर होतेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथ हरिद्राद्यं तैलम् ।

हरिद्रेपथ्याकुष्टश्चघनंसहरितालकम् ।
बिभीतकंमुस्तकश्चकटुतैलंमनःशिला ॥ १७ ॥
एतद्विचूर्ण्यसंमिश्र्यरौद्रेतुपरिपाचयेत् ।
विचर्चिकापामादद्रुखञ्जकुष्टहरंपरम् ॥ १८ ॥

अर्थ--हलदी, दारुहलदी, कूठ, अभ्रक, हरिताल, बहेड़ा, नागरमोथा और मैनशिल, इन सब औषधियोंको समानभाग ले सरसोंके तेलमें मिलाय धूपमें पकाकर परिषेक करनेसे विचर्चिका, पामा, दद्रु, खञ्ज आदि कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथदद्र्वादिकुष्ठहरप्रलेपाः ।

पल्लवैरर्कपूतीकस्नुहारग्वधजातिजैः ।
उद्वर्त्तनंसगोमूत्रैःसर्वत्वग्दोषनाशनम् ॥ १९ ॥
विडंगैडगजाकुष्टंनिशासिन्धूत्थसर्षपैः ।
धान्याम्लपिष्टोलेपेनदद्रुकुष्टविनाशनः ॥ २० ॥
तुल्योरसःशाल्मलतरोस्तुषेणसचक्रमर्दोऽप्यभयाविमिश्रः।
पानीयभक्तेनतदम्बुपिष्टोलेपःकृतोदद्रुगजेन्द्रसिंहः २१
प्रपुन्नाडस्यबीजानिधात्रीसर्जरसःस्नुही ।
सौवीरपिष्टंदद्रूणामेतदुद्वर्त्तनेहितम् ॥ २२ ॥
चक्रमर्दसमापथ्यालेपाद्दद्रुविनाशिनी ।
लेपनाद्भक्षणाद्वापितृणकंदद्रुनाशनम् ॥ २३ ॥
सक्षारंगंधकंलेपात्कटुतैलेनसिध्मजित् ।
सगन्धकंकासमर्दबीजकंमूलकंतथा ॥ २४ ॥
कदलीक्षारसंयुक्तारजनीसिध्मनाशिनी ।
तक्रमूलकबीजाभ्यांप्रलेपःसिध्मनाशनः ॥ २५ ॥
चक्राह्वयंस्नुहीक्षीरंभावितंमूत्रसंयुतम् ।
रवितप्तंहिकिंचिच्चलेपनांकिट्टिभापहम् ॥ २६ ॥

आरग्वधस्यपत्राणिचारनालेनपेषयेत् ।
दद्रुकिट्टिमकुष्ठानिहन्तिसिध्मानमेवच ॥ २७ ॥
एडगजकुष्ठसैन्धवसौवीरकसर्षपैःसंक्रिमिघ्नैः ।
कृमिसिध्मदद्रुमण्डलकुष्ठानांनाशनोलेपःपरमः ॥२८॥
एडगजातिलसर्षपकुष्ठंमागधिकालवणद्वयमस्तु ।
वर्षशतोपचितामपिकण्डूंनाशयतीहविचर्चिकदद्रुः॥२९॥

जलेन पिष्ट्वा तद्देशे लेपः ।

नारिकेलोदकेन्यस्तस्तण्डुलःपूतिकांगतः ।
लेपाद्विपादिकांहन्तिचिरकालानुबन्धिनीम् ॥ ३० ॥
शुक्तिकाभस्मासिन्धूत्थसर्पिःसर्जरसंपयः ।
पादस्फोटनहालेपःतिक्तालाबुव्यवस्थितः ॥ ३१ ॥

अर्थ-आक, पूतिकरञ्ज, थूहर, अमलतास और चमेलीके पत्तोंको गोमूत्रमें पीसकर मर्दनकरनेसे सर्वप्रकारके चर्म्मरोग दूर होतेहैं । बायविडंग, चकवड, कूट, हलदी, सेंधानोन और सरसों इन सबको समानभाग ले कांजीमें पीसकर लेप करनेसे दद्रु कुष्ठ नष्ट होताहै । राल, तुष, चकवड और हरड इन सबको भातकी कांजीमें पीसकर लेपकरनेसे दद्रु कुष्ठ रोग दूर होताहै । चकवडके बीज, आमला, राल और थूहर इन सबको कांजीमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा चकवड और हरडको जलमें पीसकर लेपकरनेसे या चीनाधानको पीसकर लेपकरनेसे वा भक्षणकरनेसे दद्रुकुष्ठ नष्ट होताहै । गंधकका चूर्ण और जवाखार सरसोंके तेलमें मिलाकर लेपकरनेसे अथवा गंधक, कसौंदीके बीज, मूलीके बीज केलेका खार और हलदी एकत्र पीसकर लेपकरनेसे या तक्रके साथ मूलीके बीजोंको पीसकर लेपकरनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै । चकवडके बीजोंको थूहरके दूधमें और गोमूत्रमें भावना देकर धूपमें गरमकर लेपकरनेसे किटिम कुष्ठ नष्ट होताहै । अमलतासके पत्तोंको कांजीमें पीसकर लेपकरनेसे दद्रु, किटिम और सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै । चकवड, कूट, सेंधानोन, कांजी, सरसों और बायविडंग, इन सबको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे कृमि, सिध्म, दद्रु और मण्डल कुष्ठ नष्ट होताहै । चकवड,तिल, सरसों, कूट, पीपल, सेंधानोन, कालानोन, और दहीका तोड़, इन सबको एकत्र जलके साथ पीसकर लेपकरनेसे

कण्डू, विचर्चिका और दद्रुकुष्ठ विनष्ट होताहै । नारियलके जलमें चावलोंको भिजो देवे, जब उसमें वास आनेलगे तब पीसकर लेपकरनेसे विपादिका कुष्ठरोग विनष्ट होताहै । सर्पकी भस्म, सैंधानोन, घृत, राल और दूध, इन सबको समानभाग लेकर एक दिन कडवे कद्दूके बीचमें रक्खे, पश्चात् लेप करनेसे—पादस्फोट दूर होता है ॥ १९.–३१ ॥

अथ नवकषायः ।

त्रिफलापटोलरजनीमंजिष्ठारोहिणीवचानिम्बैः ।
एषकषायोऽभ्यस्तोनिहन्तिकफपित्तजंकुष्ठम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—हरड़, बहेड़ा, आमला, पटोल, हलदी, मँजीठ, कुटकी, वच और नीमकी छाल, इन सबको समानभाग ले क्राथ करके पीनेसे कफ पित्तज कुष्ठ नष्ट होता है ॥ ३२ ॥

अथ कुष्ठहरक्राथाः ।

पटोलखदिरारिष्टत्रिफलाकृष्णवेत्रजम् ।
तिक्तासिनःपिबेत्क्राथंसर्वकुष्ठंव्यपोहति ॥ ३३ ॥
काकोदुम्बरिकारिष्टविडंगव्योपयासकम् ।
कल्कंलिप्त्वाजयेत्कुष्ठंकुटजत्वक्छृताम्बुना ॥ ३४ ॥

अर्थ—पटोल, खैर, नीमकी छाल, हरड़ बहेड़ा आमला कृष्णवेत, कुटकी और विजयसारकी छाल, इनका क्राथ पीनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठ रोग नष्ट होतेहैं । कठूमर, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल और जवासा यह सब समभाग लेकर कुडेकी छालके क्राथमें पीसकर, लेप करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

अथ पंचतिक्तघृतम् ।

निम्बंपटोलंव्याघ्रींचगुडूचींवासकन्तथा ।
कुर्याद्दशपलान्भागानेकैकस्यसुकुट्टितान् ॥ ३५ ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थंपचेत्तेनात्रिफलागर्भसंयुतम् ॥ ३६ ॥
पंचतिक्तमितिख्यातंसर्पिःकुष्ठविनाशनम् ।
अशीतिंवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्चपैत्तिकान् ॥ ३७ ॥

विंशतिंश्लैष्मिकांश्चैवपानादेवापकर्षति ।
दुष्टव्रणक्रिमीनर्शःपंचकासांश्चनाशयेत् ॥ ३८ ॥

अर्थ—गायका घी दो सेर, क्काथके लिये नीमकी छाल, कटेरी, गिलोय और अडूसा प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये हरड, बहेडा और आमला ऽ॥ आधसेर । यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, यह पंचतिक्त घृत कुष्ठरोग, अस्सी प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग, बीस प्रकारके कफके रोग, दुष्टव्रण, कृमिरोग, बवासीर और पाँच प्रकारकी खाँसीको दूर करैहै ॥ ३५–३८ ॥

अथ सर्वकुष्ठघ्नचिकित्सा ।

सपिप्पलीकासहतालमूलासवेल्ववासासशशाङ्कलेखा ।
सायोमलासामलकासतैलासर्वाणिकुष्ठान्यपहन्तिलीढा ३९

शशाङ्कलेखा बाकुचीबीजम् । सायोमला समण्डूरा ।

विडंगत्रिफलाकृष्णाचूर्णंलीढ्वासमाक्षिकम् ।
हन्तिकुष्ठंकृमीन्मेहान्नाडीव्रणभगन्दरान् ॥ ४० ॥
शक्राशनंसमादायप्रशस्तेऽहनिचोद्धृतम् ।
तच्चूर्णंमधुसर्पिभ्यांलिह्यात्क्षीरघृताशनः ॥ ४१ ॥
हत्वाचसर्वकुष्ठानिजीवेद्वर्षशतद्वयम् ।
बाकुचीबीजसंजातदधिसारंसमाक्षिकम् ॥
लीढ्वाचानुपिबेत्तक्रमेतत्स्यात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ ४२ ॥

दधिसारं नवनीतम् ।

अर्थ—पीपल, मुसली, बायविडंग, अडूसा, बापचीके बीज, मण्डूर और आमला इन सब औषधियोंको समानभाग ले तिलके तेलमें मिलाकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं । बायविडंग, हरड, बहेडा, आमला और पीपल इन सब औषधियोंको समान भाग ले सहतमें मिलाकर चाटनेसे—कोढ, कृमि, प्रमेह, नाडीव्रण और भगन्दर रोग दूर होते हैं । शुभदिनमें भाँगको उखाड लावे, पश्चात उत्तम रीतिसे वारीक चूर्णकर सहतमें मिलाकर चाटे और दूध तथा घृतके साथ भोजन करै तो सर्व प्रकारके कुष्ठरोग दूर होजातेहैं, तथा

२०० दो सौ वर्ष पर्यन्त जीता रहताहै । बापचीके बीजोंके योगसे निकाला हुवा नौनी घी सहतमें मिलाकर चाटे और ऊपरसे तक्र पीवे, इससे सर्व प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं ॥ ३९-४२ ॥

अथान्येऽपिकुष्ठहरयोगाः ।

पिबतिसकटुतैलंगन्धपाषाणचूर्णं
रविकिरणसुतप्तंपामनोयःपलार्द्धम् ।
त्रिदिनंतदनुसिक्तंक्षीरभोजीतुशीघ्रं
भवतिकनकदीप्तिःकामचारीमनुष्यः ॥ ४३ ॥

त्रिभिर्दिनैः पलार्द्धं भक्ष्यम् ।

गन्धकचूर्णमिश्रितकटुतैलेनगात्रम्रक्षणेन ।
दुग्धेनभोक्तव्यंवातातपंवर्जयित्वातिष्ठेत् ॥ ४४ ॥
एकस्तिलस्यभागौद्वौसोमराज्यास्तथैवच ।
भक्ष्यमाणमिदंप्रातर्गुह्यदद्रुविनाशनम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—कड़वे तेलमें दो तोले गंधकको मिलाकर तीन दिनतक सेवन करे, तथा इसीको धूपमें गरमकर कुष्ठरोगीके शरीरपै मले और केवल दुग्धान्न पथ्य है । इससे निश्चय कुष्ठरोग दूर होताहै, और शरीर सुवर्णकी समान दीप्तिमान् होता है । गंधकके चूर्णको कड़वे तेलमें मिलाकर शरीरपै मले, इसपै वायु सेवन और धूप सेवन करना त्याग देवे, केवल दूधके साथ अन्न भक्षण करे । एकभाग तिल और दोभाग बापचीके बीज, दोनोको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे—गुह्यदेशके दाद दूर होतेहैं ॥ ४३-४५ ॥

अथैकविंशतिगुग्गुलुः ।

चित्रकत्रिफलाव्योषमजाजीकारवीवचाम् ।
सैन्धवातिविषेकुष्ठंचव्यैलायावशूकजम् ॥ ४६ ॥
विडंगान्यजमोदाचमुस्तान्यमरदारुच ।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावन्मात्रन्तुगुग्गुलुम् ॥ ४७ ॥
संमर्द्यसर्पिषासार्द्धंगुटिकांकारयेद्भिषक् ।
प्रातर्भोजनकालेवाभक्षयेच्चयथाबलम् ॥ ४८ ॥

हन्त्यष्टादशकुष्ठानिकृमिदुष्टव्रणानिच ।
ग्रहण्यर्शोविकारांश्चमुखामयगलग्रहान् ॥ ४९ ॥
गृध्रसीमथगुल्मञ्चभग्नंचापिनियच्छति ।
व्याधीन्कोष्ठगतांश्चान्याञ्जयेद्विष्णुरिवासुरान् ॥ ५० ॥

अर्थ—चीता, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल जीरा, सौंफ, वच, सेंधानोन, अजीम, कूठ, चव्य, इलायची, जवाखार, वायबिडंग, अजमोदा, नागरमोथा और देवदारु, इन सब औषधियोंका चूर्ण समानभाग और सबकी बराबर गूगुल ले, सबको घृतमें मिलाकर गोली बनालेवे, इसको प्रातःकाल और भोजनके समय सेवन करनेसे अठारह प्रकारके कुष्ठ, कृमि, दुष्टव्रण, संग्रहणी, बवासीर मुखरोग, गलग्रह, गृध्रसी, गुल्म, भग्न, कोठगतरोग और अन्यान्यरोग दूर होतेहैं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथ गुग्गुलुपंचतिक्तघृतम् ।

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां
भागान्पृथक्दशपलान्विपचेद्घटेऽपाम् ।
अष्टांशशेषितरसेनसुनिश्चितेन
प्रस्थंघृतस्यविपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥ ५१ ॥
पाठाविडंगसुरदारुगजोपकुल्या-
द्विक्षारनागरनिशामिपिचव्यकुष्ठैः ।
तेजोवतीमरिचवत्सकदीप्यकाग्नि-
रोहिण्यरुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥ ५२ ॥
मंजिष्ठयातिविषयावरयायवान्या
संशुद्धगुग्गुलुपलैरपिपंचसंख्यैः ।
तत्सेवितंविधमतिप्रबलंसमीरं
सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यथकुष्ठमीदृक् ॥ ५३ ॥
जत्रूर्द्ध्वसर्वगदगुल्मगुदोत्थमेहान्
यक्ष्मारुचिश्वसनपीनसकासशोपम् ।

हृत्पाण्डुरोगमलविद्रधिवातरक्त-
माज्यंविनाशयतिगुग्गुलुपञ्चतिक्तम् ॥ ५४ ॥

अर्थ—गायका घी २ दोसेर, क्राथके लिये नीमकी छाल, गिलोय, अडूसेकी छाल, पटोल और कटेरी प्रत्येक दशपल, पाकके लिये जल ३२ सेर, शेष, ८ सेर, तथा कल्कके लिये पाढ, बायबिडंग, देवदारु, जवाखार, गजपीपल, सज्जी, सोंठ, हलदी, सोया, कूठ, तेजबल, कालीमिरच, इन्द्रजौ, अजमोदा चीता, कुटकी, भिलावा, बच, पीपरामूल, मँजीठ, अतीस, त्रिफला और अजवायन प्रत्येक२दो दो तोले तथा शुद्धगूगुल दश१०तोले लेकर यथाविधिसे इस गूगुलपंचतिक्तघृतको सिद्ध करें । यह गूगुलपंचतिक्तघृत अत्यन्त प्रबल वात, सन्धि, अस्थि और मज्जागत कुष्ठ, ऊर्ध्वजत्रुरोग, गुल्म, गुदजरोग, प्रमेहरोग, राजयक्ष्मा, अरुचि, श्वास, पीनस, खाँसी, शोष, हृदयरोग, पाण्डुरोग, गलरोग, विद्रधिरोग, वातरक्त और विशेष करके कुष्ठरोगको नष्ट करैहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

अथ महाभल्लातकम् ।

निम्बंगोपारुणाकटीत्रायन्तीत्रिफलाघनम् ।
पर्पटीवल्गुजानन्तावचाखादिरचन्दनम् ॥ ५५ ॥
पाठाशुण्ठीशटीभार्ङ्गीवासाभूनिम्बवत्सकम् ।
श्यामेन्द्रवारुणीमूर्वाविडंगन्तुविसानलम् ॥ ५६ ॥
हास्तिकर्णमृतात्रेकापटोलंरजनीद्वयम् ।
कणारग्वधसप्ताश्वकृष्णवेत्रोच्चटाफलम् ॥ ५७ ॥
भूकन्दंतिलपर्णश्चाजिङ्गीपद्माचमूषली ।
विष्वक्सेनाचकैटर्य्यःशरपुंखाचकञ्चुकी ॥ ५८ ॥
एतेषांद्विपलान्भागाञ्जलद्रोणेविपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषेणकषायमवतारयेत् ॥ ५९ ॥
भल्लातकसहस्राणिच्छित्वात्रीण्यम्मणेऽम्भसि ।
चतुर्भागावशिष्टंतुकषायंपरिकल्पयेत् ॥ ६० ॥
तौकषायौसमादायवस्त्रपूतौसमाचरेत् ।

भल्लातकस ·स्राणांमज्जानंतत्रदापयेत् ॥ ६१ ॥
·डस्यचतुलांदत्त्वालेह ·ः·धुसाधयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तसैन्धवानांपलंपलम् ॥ ६२ ॥
दीप्यकस्यपलंचैवचातुर्जातपलन्तथा ।
संचूर्ण्यप्रक्षिपेत्सिद्धेघृतभाण्डेनिधापयेत् ॥ ६३ ॥
महाभल्लातकोह्येषमहादेवेननिर्म्मितः ।
प्राणिनान्तुहितार्थायजयेच्छीघ्रंनिषेवितः ॥ ६४ ॥
श्वित्रमौदुम्बरंदद्रुंऋष्यजिह्वंसकाकणम् ।
·ण्डरीकंचचर्म्माख्यंविस्फोटंमण्डलंतथा ॥ ६५ ॥
कण्डूंकपालकुष्ठञ्चविसर्पंसविपादिकम् ।
वातरक्तमुदावर्तंपाण्डुरोगव्रणक्रिमीन् ॥ ६६ ॥
अर्शांसिषट्प्रकाराणिकासंश्वासंभगन्दरम् ।
सदाभ्यासेनपलितमामवातंसुदारुणम् ॥ ६७ ॥
नियंत्रणंचकथितंसर्वत्रापिचशस्यते ।
अग्निंचकुरुतेदीप्तंदीपनंपरमुत्तमम् ॥ ६८ ॥
अनुपानंप्रयोक्तव्यंछिन्नाक्काथंपयोऽथवा ।
अम्लञ्चसर्वथात्याज्यंशाकमेवविशेषतः ॥ ६९ ॥

अर्थ–नीमकी छाल, अनन्तमूल, अतीस, कुटकी, त्रायमाणा, हरड़, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, बापचीके बीज, करिया वासाऊ, वच, खैर, लालचंदन, पाढ़, सोंठ, कचूर, भारंगी, अडूसा, चिरायता, कुडेके बीज, कालानिसोत, इन्द्रायण, मूर्वा, वायविडंग, कमलकेशर, पीपल, चीतेकी जड़, पलाश, गिलोय, गोरखमुण्डी, परवल, हलदी, दारुहलदी, अमलतासकी छाल, आककी जड़, कृष्णबेंत, उच्चटाफल, जंगली जमीकन्द, लालचन्दन, मँजीठ, स्थलकमल, मुसली, फूलप्रियंगु, शरफोंका, कायफल और कञ्चुकी (क्षीरीशवृक्षकी छाल) प्रत्येक आठ आठ तोले लेकर एकद्रोण जलमें पकावे, जब आठवाँभाग जल शेष रहे तब उतार ले। पश्चात् १००० एकहजार भिलावोंको लेकर टुकडे करके

३२ बत्तीससेर जलमें पकावे, जब आठसेर जल शेष रहे तब उतार लेवे, पश्चात् कपडेमें छानकर दोनो क्राथोंको मिलालेवे, फिर इसमें उपरोक्त भिलावोंकी गिरी और ६। सवा छेसेर गुड मिलाके पकावे जब पकते पकते लेहकी समान होजाय तब सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा और सैंधेनोनका चूर्ण प्रत्येक चार चार तोले, अजवायनका चूर्ण ४ चार तोले और चातुर्जातकका चूर्ण ४ चार तोले डालदेवे, सिद्ध होजानेपर इसको एक उत्तम चिकने घीके बासनमें भरके रखदेवे। यह महाभल्लातक श्रीगिरिजापतिने संसारके प्राणियोंके हितके लिये निम्र्माण कियाहै। इसको सेवन करनेसे श्वित्रकुष्ठ, औदुम्बरकुष्ठ, दद्रु, ऋष्यजिह्व, काकण, पुण्डरीक, चर्म्माख्य, विस्फोट, मण्डल, कण्डू, कपालकुष्ठ, विसर्प, विपादिका, वातरक्त, उदावर्त्त, पाण्डुरोग, व्रण, कृमि, छे प्रकारकी बवासीर, खाँसी, श्वास, भगन्दर और सदा अभ्यास कर सेवन करनेसे पलितरोग, दारुण आमवात, यह सब रोग दूर होतेहैं। इसको निर्यन्त्रण-कहाहै सर्वत्र प्रशस्त है। अग्निको दीपन करै, और दीप्ताग्निवाले मनुष्योंको परमोत्तम है। अनुपान–गिलोयका क्वाथ या दूध। सर्वप्रकारकी खटाई और विशेष करके सम्पूर्ण शाक खाना वर्जित हैं ॥ ५९–६९ ॥

अमृतभल्लातकीकुष्ठेऽपिकार्या ।

अर्थ–अमृतभल्लातकी भी कुष्ठरोगमें प्रयोग करना चाहिये ॥

अथ पंचतिक्तघृतम् ।

निम्बंपटोलंव्याघ्रींश्चगुडूचींवासकंतथा ॥
कुर्य्याद्दशपलान्भागानेकैकस्यसुकुट्टितान् ॥ ७० ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थंपचेत्तेनत्रिफलागर्भसंयुतम् ॥ ७१ ॥
पंचतिक्तमितिख्यातंसर्पिःकुष्ठविनाशनम् ।
अशीतिंवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्चपैत्तिकान् ॥ ७२ ॥
विंशतिंश्लैष्मिकांश्चैवपानादेवापकर्षति ।
दुष्टव्रणकृमीनर्शःपंचकासांश्चनाशयेत् ॥ ७३ ॥

अर्थ–गायका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये नीमकीछाल, पटोल, कटेरी, गिलोय और अडूसेकी छाल, प्रत्येक कुटी हुई दश दश पल, पाकके लिये जल

३२ बत्तीससेर, शेष आठ ८ सेर कल्कके लिये त्रिफलेका चूर्ण ॥ आधसेर, यथाविधिसे इसको सिद्ध करे । यह पंचतिक्तघृत–सर्वप्रकारकेकुष्ठोंको नष्ट करैहै तथा ८० अस्सी प्रकारके वातरोग, ४० चालीसप्रकारके पित्तरोग, २० बीस-प्रकारके कफ रोग, दुष्टव्रण, कृमि, बवासीर और पाँचप्रकारकी खाँसीको दूर करैहै ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अथ खदिरादिपंचतिक्तकंघृतम्।

खदिरारग्वधव्योषत्रिवृच्चित्रकदन्तिका ।
पटोलत्रिफलारिष्टहरिद्राबाकुचीफलम् ॥ ७४ ॥
कटुकातिविषापाठात्रायन्तीधन्वयासकम् ।
कुष्ठंकरञ्जबीजानिशारिवेन्द्रसवत्सकैः ॥ ७५ ॥
भल्लातकंविडंगानिगुग्गुलुश्चेतिकल्कितैः ।
पंचतिक्तकषायेणसर्पिःसिद्धंपिबेन्नरः ॥ ७६ ॥
हन्त्यष्टकुष्टानिग्रंथिंगलगण्डंतथैवच ॥ ७७ ॥
विषविस्फोटवीसर्पकण्डूदुष्टव्रणानपि ॥
रोगानन्यांश्चविविधान्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ७८ ॥

अर्थ–गायका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये नीमकीछाल, पटोल, कटेरी, गिलोय और अडूसा प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ सेर, तथा कल्कके लिये खैर, अमलतास, त्रिकुटा, नीमकी छाल, निसोत, चीता, दन्ती, पटोल, त्रिफला, हलदी, बावचीके बीज, कुटकी, अतीस, पाढ, धमासा, त्रायमाणा, कूट, करंजकेबीज, अनन्तमूल, गारीगर, कुडेकेबीज भिलावे, बायबिडंग और गूगुल ३॥ आधसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, अठारह प्रकारके कोढ, ग्रन्थिरोग, गलगण्डरोग, विषविकार, विस्फोट, वीसर्प, कण्डू, दुष्टव्रण तथा अन्यान्यरोगोंको यह घृत दूर करै है ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथ तिक्तकंघृतम्।

त्रिफलाद्विनिशावासायासपर्पटत्रायणकान्।
...दुरालभाकटुकानिम्बान्प्रत्येकंद्विपलोन्मितान् ॥ ७९ ॥

क्राथयित्वाजलद्रोणेपादशेषेणतेनतु ।
घृतप्रस्थंपचेदक्षैःपिप्पलीघनचंदनैः ॥ ८० ॥
त्रायन्तीशत्रुभूनिम्बैस्तत्पीतंतिक्तकंघृतम् ।
निहन्तिकुष्ठान्यर्शांसिश्वयथुंग्रहणीगदम् ॥ ८१ ॥
पाण्डुरोगंविसर्पञ्चजीवानामपिशस्यते ॥ ८२ ॥

अर्थ–गायका घी २ दोसेर, काथके लिये हरड, बहेडा, आमला, हलदी, दारुहलदी, अडूसा, जवासा, पित्तपापडा, सुगंधवाला, त्रायमान, कुटकी और नीमकीछाल, प्रत्येक ८ आठतोले, जल ३२ बत्तीससेर, शेष आठसेर, तथा कल्कके लिये बहेडा, पीपल, नागरमोथा, लालचंदन, त्रायमान, कुडेकेबीज और चिरायता आधसेर ले, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, यह घृत–कुष्ठरोग, बवासीर, सूजन, संग्रहणी, पाण्डुरोग और विसर्परोगको नष्ट करैहै॥७९–८२॥

अथ महातिक्तकंघृतम् ।

सप्तच्छदंप्रतिविषांशम्याकंतिक्तरोहिणींपाठाम् ।
मुस्तमुशीरंत्रिफलांपटोलपिचुमर्दपर्पटकम् ॥ ८३ ॥
धन्वयवासंचन्दनमुपकुल्येपद्मकरजन्यौच ।
षड्ग्रन्थांसविशालांशतावरींशारिवेचोभे ॥ ८४ ॥
वत्सकबीजंवासांमूर्वाममृतांकिराततिक्तञ्च ।
कल्कान्कुर्यान्मतिमान्यष्ट्याह्वंत्रायमाणाञ्च ॥ ८५ ॥
कल्कस्तुचतुर्भागोजलमष्टगुणंरसोऽमृतफलानाम् ।
द्विगुणोघृतात्प्रदेयस्तत्सर्पिःपाययेत्सिद्धम् ॥ ८६ ॥
कुष्ठानिरक्तपित्तंप्रबलान्यर्शांसिरक्तवाहीनि ।
विसर्पमम्लपित्तंवातासृक्पाण्डुरोगांश्च ॥ ८७ ॥
विस्फोटकान्सपामानुन्मादकान्कामलांज्वरकण्डूम् ।
हृद्रोगगुल्मपिडकानम्लपित्तमसृग्दरंगंडमालांच॥ ८८॥

हन्यादेतत्सद्यःपीतंकालेयथाबलंसर्पिः ।
योगशतैरप्यजितान्महाविकारान्महातिक्तम् ॥ ८९ ॥
अमृतफलानां आमलकीफलानाम् ।

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दोसेर, जल ८ आठसेर, आमलोंका रस ४ चार सेर, तथा कल्कके लिये सतवनकी छाल, अतीस, अमलतासकी मज्जा, कुटकी, पाढ, नागरमोथा, खस, हरड, बहेडा, आमला, नीमकी छाल, पित्तपापडा, धमासा, लालचंदन, पीपल, गजपीपल, पद्माख, हलदी, दारुहलदी, वच, इन्द्रायन, सतावर, गौरिया वासाऊ, करिया वासाऊ, इन्द्रजौ, अडूसा, मूर्वा, गिलोय, चिरायता, मुलेठी और त्रायमाणा यह सब ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे यह घृत सिद्ध करे । यह घृत सर्वप्रकारके कुष्ठ, रक्तपित्त, प्रबल और रुधिरकी बहनेवाली बवासीर, विसर्प, अम्लपित्त, वातरक्त, पाण्डुरोग, विस्फोटक, पामारोग, उन्माद, कामला, ज्वर, कण्डू, हृदयरोग, गुल्म, पिडका, अम्लपित्त, प्रदर और गण्डमालादि रोगोंको दूर करैहै । सैकडों योगोंसे जिन रोगोंको आराम नहीं हुआहै, उन सबको यह महातिक्त घृत दूर करताहै ॥ ८३–८९ ॥

अथ वज्रकंघृतम् ।

वासागुडूचीत्रिफलापटोलंकरञ्जनिम्बासनकृष्णवेत्रम् ।
तत्क्वाथकल्केनघृतंविपक्वंतद्वज्रकंकुष्ठहरंप्रदिष्टम् ॥ ९० ॥
विशीर्णकर्णाङ्गुलिहस्तपादःकृम्यर्दितोभिन्नमलोऽपिमर्दः ।
पौराणिकांकान्तिमवाप्यजीवेद्व्याहतोवर्षशतञ्चकुष्ठी ९१॥

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये अडूसा, गिलोय, हरड, बहेडा, आमला, पटोल, करंजके बीज, नीमकी छाल, असन वृक्षकी छाल और कृष्णबेंत प्रत्येक दो दो तोले । और काथके लिये उपरोक्त काथकी औषधि प्रत्येक चार चार पल, पाकके लिये जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर रक्खे । सबको यथाविधिसे मिलाकर विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करे, यह वज्रक घृत कुष्ठको नष्ट करैहै । इस घृतको सेवन करनेसे गलगई है हाथपावोंकी अंगुलियाँ जिनकी, तथा जिनके कीडे पड गयेहैं और वारंवार दस्त आतेहैं, उन कुष्ठरोगियोंको रोगसे छुटाकर पौराणिक कान्तिको प्राप्त कर १०० सौवर्षपर्यंत जिवाताहै ॥ ९० ॥ ९१ ॥

अथ बृहद्गुग्गुलोःपंचतिक्तकंघृतंतैलञ्च ।

पटोलवासकारिष्टकरञ्जव्याघ्रिकामृता ।
प्रत्येकंविंशतिपलाञ्जलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ९२ ॥
पादशेषेरसेतस्मिन्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
कल्कैरक्षरसैदारुत्रिफलात्र्यूषणाग्निभिः ॥ ९३ ॥
पृथ्वीकातिविषापाठाचव्येन्द्रयवदीप्यकैः ।
मूर्वाक्षारद्वयाजाजीवचाकृमिहरैर्युतैः ॥ ९४ ॥
कटुकासप्तपर्णाभ्यांपुरस्याष्टपलेनतु ।
सर्वकुष्ठान्यसृक्पित्तंविसर्पपूतिकोष्टताम् ॥ ९५ ॥
वातपित्तकफोद्भूतान्गदांस्तांस्तान्पृथग्विधान् ।
पानात्प्रशमयत्येतद्गुग्गुलोःपंचतिक्तकम् ॥ ९६ ॥
सिद्धश्चैतेनविधिनातैलप्रस्थःसगुग्गुलुः ।
पानाभ्यंजननस्येषुयुक्तःपूर्वगुणावहः ॥ ९७ ॥

अर्थ–गायका घी या तिलका तेल २ दो सेर, क्वाथके लिये पटोल, अडूसा, नीमकी छाल, करंजकेबीज, कटेरी और गिलोय प्रत्येक २० बीसपल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये देवदारु, त्रिफला, कालाजीरा, त्रिकुटा, चीता, अतीस, पाढ, इन्द्रजौ, अजवायन, मूर्वा, चव्य, जवाखार, सज्जी, जीरा, वच, वायविडंग, कुटकी और सतवनकी छाल, प्रत्येक २ दो दो तोले, गूगुल ८ आठपल, यथाविधिसे घृत या तेलको सिद्ध-कर सेवन करनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठ और रक्तपित्तादि नानाप्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

अथ मार्कवघृतम् ।

महौषधंमहामेदानिम्बपत्रंचसर्षपाः ।
मनःशिलाचसिन्दूरंपद्मचारिण्यवल्गुजम् ॥ ९८ ॥
हरिद्रेहरितालंचत्रिफलापीतगंधकम् ।
एतानिसमभागानिकर्षार्द्धञ्चप्रयोजयेत् ॥ ९९ ॥

सर्पिषश्चपलान्यष्टौदेवदारुरसंशुभम् ।
द्विगुणंत्रिगुणंक्षीरंगोमूत्रंचचतुर्गुणम् ॥ १०० ॥
ताम्रभाण्डेतुसंस्थाप्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
चतुर्भागावशेषन्तुसकल्कमवतारयेत् ॥ १०१ ॥
अग्नौक्षिप्तन्तुनिःशब्दंजलयुक्तंविचक्षणः ।
अभ्यंगपानयोगाच्चतदासर्वगदाञ्जयेत् ॥ १०२ ॥
अष्टादशानांकुष्ठानांदद्रूणांश्वित्रिणांतथा ।
कुष्ठनाडीषुमर्त्यानांदुष्टानांकीटिनांतथा ॥ १०३ ॥
असृक्स्रावपरीतायेयेचत्यक्तभिपक्क्रियाः ।
विसर्पग्रहग्रस्तानांशीर्णाङ्गानांविशेषतः ॥ १०४ ॥
सर्वधातुगतेकुष्ठेपतितभ्रूशिरोग्रहे ।
घर्घराव्यक्तघोषाणांतथासर्वाङ्गपीडिनाम् ॥ १०५ ॥
पानाऽभ्यंगेतथानस्येबास्तिकर्म्मणिनित्यशः ।
सप्तरात्रप्रयोगेणसर्वकुष्ठानिनाशयेत् ॥ १०६ ॥
द्विसप्ताहप्रयोगेणपूर्णचन्द्रनिभाननः ।
जातकेशनखश्मश्रुर्भातिषोडशवर्षवत् ॥ १०७ ॥
अनङ्गसदृशःसाक्षात्सर्वामयविवर्जितः ।
एतद्घृतंमहाश्रेष्ठंभार्गवेणविनिर्मितम् ॥ १०८ ॥
प्रजानाञ्चहितार्थायसर्वव्याधिहरंशुभम् ।
महामार्कवनामेदंघृतंसर्वापराजितम् ॥ १०९ ॥

अर्थ–गायका घी १ एकसेर, देवदारुका रस या क्वाथ २ दो सेर, गायका दूध ३ तीन सेर, गोमूत्र ४ चारसेर, तथा कल्कके लिये सोंठ, महामेदा, नीमके पत्ते, सरसों, मनशिल, सिन्दूर, स्थलकमल, बापचीकेबीज, हलदी दारुहलदी, हरिताल, आमला, बहेडा, हरड और पीलाचंदन, प्रत्येक एक एक तोले, यथाविधिसे इस घृतको तांबेके पात्रमें मृदु अग्निमें शनैः शनैः पकावे, जब चौथा भाग शेष रहे तब उतार लेवे । जल समेत इस घीको अग्निमें गेरे, जो

यह घी शब्द न करे तो जानो कि सिद्ध होगया । इस घीको पीनेसे—अथवा इसके मालिश करनेसे—सर्व प्रकारके रोग, अठारह प्रकारके कोढ, दाद, श्वित्र-कुष्ठ, दुष्टनाडीव्रण दुष्टकीटि रोग, रक्तस्रावयुक्त कुष्ठरोग, असाध्यकुष्ठ, विसर्प-रोग, शीर्णांग, सर्वप्रकारके धातुगत कुष्ठ, पतितभ्रुकुटीरोग, शिरोग्रह, घर्घर-शब्द, अव्यक्तशब्द, सर्वाङ्ग पीडितरोग, यह सब रोग दूर होजातेहैं । इस घीको पीनेसे, मलनेसे और निरंतर सात रोजतक ब[illegible]तिकर्म्ममें प्रयोग करनेसे सर्व-प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं । इसको दो सप्ताहतक सेवन करनेसे [illegible]र्णचन्द्रमाकी समान मुख होजाताहै, तथा बाल, नख और डाढ़ी, यह सब उत्पन्न होजातेहैं तथा सोलह वर्षके पुरुषकी समान छविवाला होजाताहै और सर्वप्रकारके रोगोंसे रहित होकर साक्षात् कामदेवकी समान होजाताहै । यह महाश्रेष्ठ महामार्कंर नामवाला घृत संसारके उपकारके लिये श्रीमान् भृगुजीने निर्म्माण कियाहै, सर्व रोग नाशक और उत्तम है ॥ ९८–१०९ ॥

अथ बृहद्गुडूचीतैलम् ।

शतंछिन्नरुहायाश्चजलद्रोणेविपाचयेत् ।
तेनपादावशेषेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ११० ॥
क्षीरंचतुर्गुणन्तस्यकल्कान्येतानियत्नतः ।
अश्वगन्धाविदारीचकाकोलीहरिचंदनम् ॥ १११ ॥
शतावरीचातिबलाश्वदंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥
क्रिमिघ्नंत्रिफलारास्नात्रायमाणाचशारिवा ॥ ११२ ॥
जीवन्तीग्रन्थिकंव्योपंबाकुचीभेकपर्णिका ।
विशालामुद्गपर्णीचमंजिष्ठावन्दनीनिशा ॥११३॥
शताह्वासप्तपर्णीभिःकार्षिकाणिप्रकल्पयेत् ।
पानाभ्यंजननस्येषुदातव्यन्तुभिषग्वरैः ॥ ११४ ॥
वातरक्तमुदर्दञ्चकुष्ठान्यष्टादशैवतु ।
हनुस्तम्भंप्रमेहञ्चकामलांपाण्डुतांतथा ॥ ११५ ॥
विस्फोटञ्चविषञ्चापिव्रणनाडीभगन्दरम् ।
विचर्चि[illegible]गंगात्रगण्डंहन्तिसर्वान्विशेषतः ॥ ११६ ॥

एतत्तैलरसश्चैववलीपलितनाशनः ।
आत्रेयनिर्मितंचैवबलवर्णकरंस्मृतम् ॥ ११७ ॥

अर्थ-तिलका तेल २ दो सेर दूध आठसेर, क्वाथके लिये गिलोय ८६। सवा छे सेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर और कल्कके लिये असगंध, विदारीकन्द, काकोली, हरिचन्दन, सतावर, गंगेरन, कंघी, गोखुरू, कटेरी, बडी कटेरी, वायविडंग, हरड, बहेडा, आमला, गयसन, त्रायमाणा, अनन्तमूल, जीवन्ती, गठिवन, त्रिकुटा, वापची, मण्डूकपर्णी, इन्द्रायण, मुगवन, मजीठ, काली शारिवा, हल्दी, सोया और लज्जावन्ती ये प्रत्येक २ दो दो तोले, लेकर यथाविधिसे इस तेलको सिद्ध करे, इसका पान, अभ्यंजन और नस्यकर्म्ममें प्रयोग करनेसे वातरक्त, उदर्द, अठारह प्रकारके कोढ, हनुस्तम्भ, प्रमेह, कामला, पाण्डुरोग, विस्फोट, विषदोष, नाडीव्रण, भगन्दर, विचर्चिका, गात्रकण्डू और वलीपलित रोगोंको दूर करैहै । बलकारक और वर्णको उत्तम करैहै । यह तैलोंमें उत्तम तेल श्रीमान आत्रेयजीने निर्माण कियाहै ॥ ११०-११७ ॥

अथ तृणकतैलम् ।

सर्षपकरञ्जकोषातकीतैलोनान्यथेङ्गुदीनाञ्च ।
कुष्ठेषुहितानाञ्चतैलंश्रेष्ठञ्चखदिरस्य ॥ ११८ ॥
मांजिष्ठारुग्निशाचक्रमर्दारग्वधपल्लवैः ।
तृणकस्वरसेसिद्धंतैलंकुष्ठहरंकटु ॥ ११९ ॥

अर्थ-सरसों, करञ्ज, कड़वी तोरई, हिंगोट और खैरका तेल अथवा कुष्ठको हितकारक किसी अन्य औषधिका तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये मँजीठ, कूट, हल्दी, चकवड और अमलतासके पत्ते ऽ॥ आधसेर और चीनाधानोंका स्वरस ८ आठसेर, सबको विधिपूर्वक मिलाकर तेलको सिद्ध करे, यह तेल कुष्ठरोगको नष्ट करैहै ॥ ११८ ॥ ११९ ॥

अथ महातृणकतैलम् ।

हरिद्रात्रिफलादारुहयमारकचित्रकम् ।
सप्तच्छदश्चनिम्बत्वक्करञ्जोवालकंनखी ॥ १२० ॥
कुष्ठमेडगजाव्रीजंलांगलीगणिकारिका ।
जातीपत्रञ्चदार्वीत्वक्हरितालंमनःशिला ॥ १२१ ॥

कलिङ्गंबिल्वकंचक्षीरञ्चगुग्गुलुन्तथा ।
गुडत्वक्मरिचंचोचंकुंकुमंग्रन्थिपर्णकम् ॥ १२२ ॥
सर्ज्जपर्णासखदिरविडंगंपिप्पलीवचा ।
घनरेण्वमृतायष्टीकेशरंध्यामकंविषम् ॥ १२३ ॥
विश्वकट्फलमंजिष्ठाबोलंतुम्बीफलन्तथा ।
स्नुहीशम्याकयोःपत्रंवागुजीबीजमासिके ॥ १२४ ॥
एलाज्योतिष्मतीमूलंशिरीषोगोमयाद्रसः ।
चन्दनेकुष्ठनिर्गुण्डीविशालामल्लिकाद्वयम् ॥ १२५ ॥
वासाश्वगन्धेब्राह्मीचश्याद्वश्चम्पककुड्मलम् ।
एतैःकल्कैःपचेत्तैलंतृणकस्वरसद्रवम् ॥ १२६ ॥
सर्वत्वग्रोगहरणंमहातृणकसंज्ञितम् ॥ १२७ ॥

अर्थ–कड़वातेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, चीनाधानोंका स्वरस ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये हलदी, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, कनेरकीजड. चीतेकीजड, सतवनकी छाल, नीमकीछाल, दोनोंकरञ्ज सुगंधवाला, नखद्रव्य, कूठ, पमाडकेबीज, अरणी, कलिहारी, चमेलीके पत्ते, दारुहलदी. दालचीनी. हरिताल, मनशिल, इन्द्रजौ,लालचंदन, आकका दूध, गूगुल. काली मिरच, तेजपात, केसर, गठिवन, राल, तुलसी, खैर, बायविडंग, पीपल, वच. नागरमोथा. रेणुका. गिलोय, मुलेठी, नागकेशर, सुगंधतृण, मीठाविष. सोंठ, कायफल, मँजीठ, बोल, तोंबी, थूहरके पत्ते, अमलतासकेपत्र बापचीकेबीज. बालछड, इलायची, मालकांगनीकी जड, सिरसकी छाल, गोबरका रस. लालचंदन. सफेदचन्दन, कूठ, सम्हालू, इन्द्रायण, बेला, वनबेला, अडूसा, असगंध. ब्राह्मी, श्रीवास और चम्पेकीकली. यह सब औषधि १ एकसेर ले, सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे इस तेलसे सर्वप्रकारके चर्मदोष दूर होते-हैं ॥ १२०–१२७ ॥

अथ वज्रतैलम् ।

सप्तपर्णकरंजार्कमालतीकरवीरकम् ।
मूलंस्नुहीशिरीषाभ्यांचित्रकास्फोतयोरपि ॥ १२८ ॥

करंजबीजंत्रिकटु त्रिफलारजनीद्वयम् ।
सिद्धार्थकं विडंगंचप्रपुन्नाडंचसंहरेत् ॥ १२९ ॥
मूत्रपिष्टैःपचेत्तैलमेभिःकुष्ठविनाशनम् ।
अभ्यंगाद्वज्रकंनामनाडीदुष्टव्रणापहम् ॥ १३० ॥
केचित्कुष्ठहरन्तैलमितिकुष्ठविनाशनम् ॥ १३१ ॥
सर्षपकरंजादितैलं पक्तव्यं न तु तिलतैलम् ।

अर्थ—कडवातेल २ दोसेर, गोमूत्र ८ आठसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये सतोनेकी छाल, आककीजड, करंजकीछाल, मालतीके पत्र, कनेरकीजड, थूहरकीजड, सिरसकीजड, चीतेकीजड, अपराजिताकीजड, करंजके बीज,सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, हलदी, दारुहलदी, सफेद सरसों, वायविडंग और पमाड यह सब द्रव्य ऽ॥ आधसेर ले, यथाविधिसे इस तेलको पकाकर मर्दन करनेसे सर्वप्रकारके कोढ़ दुष्टव्रण और नाडीव्रण दूर होतेहैं ॥ १२८–१३१ ॥

अथ बृहन्मरिचाद्यंतैलम् ।

मरिचंत्रिवृतादन्तीक्षीरमार्कंशकृद्रसः ।
देवदारुहरिद्रेद्वेमांसीकुष्ठंकुचन्दनम् ॥ १३२ ॥
विशालाकरवीरंचहरितालंमनःशिला ।
चित्रकोलांगलाख्याचविडङ्गंचक्रमर्दकम् ॥ १३३ ॥
शिरीषःकुटजोनिम्बःसप्तपर्णस्नुहामृता ।
शम्याकोनक्तमालोऽब्दःखदिरंपिप्पलीवचा ॥ १३४ ॥
ज्योतिष्मतीचपलिकाविषस्यद्विपलंभवेत् ।
आढकंकटुतैलस्यगोमूत्रन्तुचतुर्गुणम् ॥ १३५ ॥
मृत्पात्रेलोहपात्रेवाशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
पक्त्वातैलपरंह्येतन्म्रक्षयेत्कोष्टिकान्व्रणान् ॥ १३६ ॥
पामाविचर्चिकादद्रुकण्डूविस्फोटकानिच ।
विलयःपलितच्छायानीलीव्यंगंतथैवच ॥ १३७ ॥

अभ्यंगेनप्रणश्यन्तिसौकुमार्यञ्चजायते ।
प्रथमेवयसिस्त्रीणांयासांनस्यञ्चदीयते ॥ १३८ ॥
परामपिजरांप्राप्यनस्तनायान्तिनम्रताम् ।
वलीवर्द्दस्तुरंगोवागजोवावायुपीडितः ।
त्रिभिरभ्यङ्गनैर्गाढंभवेन्मारुतविक्रमः ॥ १३९ ॥

अर्थ—सरसोंका तेल ८ आठसेर, गोमूत्र ३२ बत्तीससेर, जल बत्तीस सेर, तथा कल्कके लिये कालीमिरच, निसोतकी जड, दन्तीकीजड, चीता, वायविडंग, शिरस, सतोना, आकका दूध, मोवरकारस, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, वालछड, कूट, लालचंदन, इन्द्रायणकी जड़, कनेरकी जड़ हरिताल, मेनशिल, कलिहारीकी जड़, कुडेकी छाल, नीमकी छाल, थूहरका दूध, गिलोय, अमलतासके पत्र, करंजकी छाल, नागरमोथा, खैर, पीपल, वच और मालकांगनी, यह सब औषधि कुटीहुई प्रत्येक चार चार तोले, तथा मीठा विष ८ आठ तोले लेवे । सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर मर्दन करनेसे कुष्ठ, व्रण, पामा, विचर्चिका, दाद, कण्डू, विस्फोट, वलीपलितरोग, छाया, नीलता और व्यंग (झाँई) यह सब रोग दूर होजातेहैं, तथा सुकुमारता उत्पन्न होतीहै। स्त्रियोंको बाल्यावस्थामें इसतेलका नास देनेसे वृद्धावस्थामें स्त्रियोंके स्तन नहीं नवतेहैं अर्थात् वृद्धावस्थामेंभी स्तन पुष्ट रहतेहैं। वायुसे पीड़ित बैल, घोडा और हाथी इस तेलके तीन दिन मलनेसे वातविकारसे मुक्त होकर पवनकी समान पराक्रमी होजातेहैं। ॥ १३२–१३९ ॥

अथ बृहत्सोमराजीतैलम् ।

सोमराजीतुलाक्काथेतथादद्रुघ्नकस्यच ।
विपचेत्कार्षिकैरेतैःकटुतैलाढकंभिषक् ॥ १४० ॥
चित्रकंलाङ्गलाख्यञ्चनागरंकुष्ठमेवच ।
हरिद्रानक्तमालञ्चहरितालंमनःशिला ॥ १४१ ॥
स्थौणेयंकरवीरञ्चसप्तपर्णार्कगोमयम् ।
खदिरोनिम्बपत्रञ्चमरिचंकासमर्दकम् ॥ १४२ ॥
सुपिष्टंनिक्षिपेत्सर्वंगोमूत्राढकमेवच ।
सिद्धमभ्यंगतोहन्तिकुष्ठान्यष्टादशद्रुतम् ॥ १४३ ॥

रोगांश्च मृगभवान्सर्वान्कृमिवर्णाविवर्णताम् ।
पाण्डुकण्डूविसर्पांश्चशीर्णचर्मादिदार्ढ्यकृत् ॥ १४४ ॥

अर्थ–कडुवातेल ८ आठसेर, गोमूत्र ३२ बत्तीससेर, क्वाथके लिये बापचीके बीज सवाछे ६। सेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, चकवड ६। सवाछेसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा क्वाथके लिये चीतेकी जड, कलिहारीकी जड, सोंठ, कूठ, हलदी, बडीकरंज, हरिताल, मनशिल, गठिवन, कनेरकी जड, सतौनेकी छाल, गोबरका रस, आकका दूध, खैर, नीमके पत्ते, मिरच और कसौंदी प्रत्येक कुटेहुए दो दो तोले सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे। इस तेलको शरीरादिमें मर्दन करनेसे १८अठारह प्रकारके कोढ, रजोदोषजन्य वातरक्तादिरोग, कृमि, व्रण और विवर्णता दूर होतीहै १४०–१४४

अथ विषतैलम् ।

नक्तमालंहरिद्रेद्वेअर्कंतगरमेवच ।
करवीरंवचाकुष्ठमास्फोतारक्तचंदनम् ॥ १४५ ॥
मालतीसप्तपर्णश्चमंजिष्ठासिन्धुवारिका
एषामर्द्धपलान्भागान्विषस्यापिपलंभवेत् ॥ १४६ ॥
चतुर्गुणेगवांमूत्रेतैलपात्रंविपाचयेत् ।
श्वित्रविस्फोटकिटिमकीटलूताविचर्चिका ॥ १४७ ॥
कण्डूकच्छूविकारांश्चयेव्रणाविषदूषिताः ।
विषतैलमिदंनाम्नासर्वव्रणविशोधनम् ॥ १४८ ॥

अर्थ–कडुवातेल ८ आठसेर, जल ८ आठसेर, गोमूत्र ३२ बत्तीससेर तथा कल्कके लिये करंजकी छाल, हलदी, दारुहलदी, आकका दूध, तगर कनेरकी जड, वच, कूठ, सफेदकोयलकी जड, लालचंदन, मालतीके पत्ते सतौनेकी छाल, मजीठ, और सम्हालूके पत्ते यह सब कुटेहुए प्रत्येक २ दो दो तोले और मीठाविष ४ चार तोले लेकर, यथाविधिसे इस तेलको सिद्ध करे। इस तेलको शरीरादिमें मलनेसे श्वित्रकुष्ठ, विस्फोट, किटिम, कीट, लूता, विचर्चिका, कण्डू, कच्छू और विषदूषित व्रण, दूर होजातेहैं । यह विषतैल–सर्वप्रकारके व्रणोंको शुद्ध करतेहै ॥ १४५–१४८ ॥

अथ पुण्डरीककुष्ठलक्षणानि ।

पुण्डरीकदलंताम्रंश्वेतरक्तंघनंगुरुम् ।
गलगण्डसरागश्चपुण्डरीकंकफाधिके ॥ १४९ ॥

अर्थ–पुण्डरीक (कमल) के पत्तेकी समान आकृतिवाला, ताँबेकी समान छविवाला, सफेद और लालरंगका, घन और भारी, तथा गलगण्डकी समान वर्णवाला पुण्डरीक कुष्ठ होताहै. यह पुण्डरीक कुष्ठ कफकी अधिकतासे होताहै ॥ १४९ ॥

अथ महातालेश्वरोरसः ।

तालंताप्यंशिलासूतंशुद्धसैन्धवटंकणम् ।
समांशंचूर्णयेत्खल्वेसूताद्द्विगुणगंधकम् ॥ १५० ॥
गंधतुल्यंमृतंताम्रंजम्बीरैर्दिनपंचच ।
मर्द्यंषड्भिःपुटेपाच्यंभूधरेसंपुटोदरे ॥ १५१ ॥
पुटेपुटेद्रवैर्मर्द्यंसर्वमेतच्चषट्पलम् ।
द्विपलंमारितंताम्रंलोहभस्मचतुःपलम् ॥ १५२ ॥
जम्बीराम्लेनतत्सर्वंदिनंमर्द्यंपुटेल्लघु ।
त्रिंशदंशंविषंचास्यक्षेप्यंसर्वंविचूर्णयेत् ॥ १५३ ॥
महिषाज्येनसंमिश्र्यनिष्कार्द्धंपुण्डरीकनुत् ।
मध्वाज्यैर्बाकुचीचूर्णंकर्षमात्रंलिहेदनु ॥ १५४ ॥
सर्वान्कुष्ठान्निहन्त्याशुमहातालेश्वरोरसः ॥ १५५ ॥

अर्थ–हरिताल, सोनामाखी, मैनशिल, पारा, सेंधानोन और सुहागा प्रत्येक १ एक भाग, गन्धक २ दो भाग और ताँबेकी भस्म २ दो भाग सबको एकत्र पीसकर जम्भीरी नीबूके रसमें ५ पाँच दिनतक खरलकरै, पश्चात् गोलाबनाकर सम्पुटमें रख भूधरयंत्रमें छे पुटदेवे और प्रत्येक पुटपर जम्भीरी नीबूके रसमें खरल करै, पश्चात् भूधरयंत्रमें पकाई हुई औषधि ६ छेपल, ताँबेकी भस्म २ दो पल और लोहेकी भस्म ४ चारपल इन तीनोको जम्भीरी नीबूके रसमें एक दिन खरलकर लघुपुटमें पकावे, फिर इसमें ३० तीस भाग मीठा विष मिलाकर चूर्ण करलेवे, इसको भैंसके घीमें मिलाकर दो मासेभर खानेसे पुण्डरीक

कुष्ठ नष्ट होताहै, ऊपरसे बापचीके चूर्णको सहत और घृतमें मिलाकर दो तोले भर खावे, यह अनुपान है। यह महातालेश्वर रस-सर्व प्रकारके कुष्ठोंको दूर करैहै ॥ १५०-१५५ ॥

अथ भानुतैलम्।

अर्कक्षीरंस्नुहीक्षीरंभृङ्गधत्तूरयोर्द्रवम्।
द्रवंजम्बीरगोमूत्रंप्रत्येकंपलविंशतिम् ॥ १५६ ॥
तिलतैलंपलांस्त्रिंशत्सर्वमेकत्रपाचयेत्।
तैलावशेषमुत्तार्यतत्रचूर्णंविनिक्षिपेत् ॥ १५७ ॥
कांचनीधातकीपुष्पंमंजिष्ठाचशतावरी।
गंधकंपंचलवणंद्विनिशावत्सनाभकम् ॥ १५८ ॥
प्रतिचार्द्धपलंयोज्यमेकीकृत्यविमर्दयेत्।
घर्म्मस्थःसर्वकुष्ठानिभानुतैलंनिहन्त्यलम् ॥ १५९ ॥

अर्थ-तिलका तेल ३० तीसपल, तथा आकका दूध, थूहरका दूध, भाँगरेका रस, धतूरेका रस, जम्भीरी नींबूका रस और गोमूत्र प्रत्येक २० बीस पल, सबको एकत्र मिलाकर विधिपूर्वक पकावे, जब केवल तेल ही शेष रहे तब उतार लेवे, पश्चात् इस तेलमें सत्यानाशी कटेरी, धायके फूल, मँजीठ, सतावर, गंधक, सेंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, समुद्रलवण, हलदी, दारुहलदी और वत्सनाभ विष प्रत्येकका दो दो तोले चूर्ण डालकर एकत्र करे, फिर इसको मर्दन कर धूपमें धरदेवे, इस तेलको शरीरादिमें मलनेसे-निश्चय सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १५६-१५९ ॥

अथ वडवानलरसः।

हिंगूलसम्भवंसूतंगंधकंमृतताम्रकम्।
सम्यक्शुद्धंतथाकान्तंवंगंचापिशिलाजतुम् ॥ १६० ॥
तुत्थंरसांजनंचैवतालकंशंखमेवच।
वराटकंचापितुल्यंजैपालीद्विगुणीकृतम् ॥ १६१ ॥
हवुषांपंचलवणंपंचैवकटुकानिच।
विडंगंपिप्पलीमूलंप्रियंगुरजमोदकम् ॥ १६२ ॥

द्राक्षारौकुष्ठमेलाचलवङ्गंजीरकद्वयम् ।
शटीदन्तीत्रिवृच्चैवत्रिफलागजापि॰ ली ॥ १६३ ॥
सर्वमेकत्रसंचूर्ण्यभावयेत्रिफलाजलैः ।
सप्तधाखलुपाषाणेप्रचण्डातपशोषितम् ॥ १६४ ॥
हरीतकीरसेनाथपुनःसंचूर्ण्ययत्नतः ।
पंचरक्तीप्रमाणन्तुवटिकांकारयेद्भिषक् ॥ १६५ ॥
एकैकांखादयेत्प्रातःशृङ्गवेररसाप्लुताम् ।
हन्ति॰ष्ठंतथामेदआममारुतमेवच ॥ १६६ ॥
श्लीपदं॰॰॰मालाञ्चगलगण्डंभगन्दरम् ।
नाडीदुष्टव्रणञ्चैवअन्त्रवृद्धिञ्चदारुणाम् ॥ १६७ ॥
अम्लपित्तंरक्तपित्तंपक्तिशूलंहलीमकम् ।
वातरक्तंवातकफमुपदंशंसपीनसम् ॥ १६८ ॥
पंचगुल्मांस्तथानाहंप्लीहशोथज्वरानपि ।
उदराणितथाकासान्रसोऽयंवाडवानलः ॥ १६९ ॥

अर्थ–सिंग्रफसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगंधक, ताँबेकी भस्म, शुद्ध-कान्तलोह, शुद्धवंग, शुद्धशिलाजीत, नीलाथोथा, रसौत. हरिताल. शंखकी भस्म, कौडीकी भस्म, हाऊबेर, सैंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, समुद्रनोन, साँभरनोन, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, कूठ, छोटी इलायची, लौंग, फूलप्रियंगु अजमोदा, वायबिडंग. पीपरामूल. जीरा, कालाजीरा, कचूर, दन्ती, निसोतकीजड, हरड, बहेडा, आमला और गजपीपल प्रत्येक एकभाग तथा जमालगोटेके बीज २ भाग लेवे, सबको एकत्र पीसकर सातबार त्रिफलेके काथमें भावना देकर धूपमें खरल करे, फिर इसी प्रकार हरडके काथमें भावना देकर पाँच पाँच रत्तीकी गोली बनालेवे, प्रतिदिन प्रातःकाल एक गोली अदरखके रसमें मिलाकर खावे, इससे–कुष्ठरोग, मेदरोग, आमवात, श्लीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण. दारुण अंत्रवृद्धि. अम्लपित्त, रक्तपित्त, परिणामशूल, हलीमक, वातरक्त, वातकफ, उपदंश, पीनसरोग, पंचगुल्म, आनाह, प्लीहा, सूजन, ज्वर. उदररोग और खाँसी दूर होतीहै । इसको वाड़वानल रस कहतेहैं ॥ १६०–१६९ ॥

अथ वृद्धदारकघृतम्।

वृद्धदारकमूलानामाढकंतर्ज्जनीकृतम्।
जलद्रोणेपचेद्धीमानाढकेचावशेषितम् ॥ १७० ॥
घृतप्रस्थंपचेत्तेनदत्त्वामूलंपलाष्टकम्।
सर्पिरेतन्महावीर्यंरसायनमनुत्तमम् ॥ १७१ ॥
वातपित्तकफोत्थश्चद्वन्द्वजंसान्निपातिकम्।
नानावर्णंजयेत्पुंसांश्लीपदंशीघ्रमेवच ॥ १७२ ॥

अर्थ–गायका घी दोसेर, कल्कके लिये विधारेकी जड ऽ॥ आधसेर जल ८ आठसेर, क्राथके लिये विधारेकी जड ४ चारसेर, पाकके लिये जल ३२ बत्तीस सेर, शेष ८ आठसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, यह घृत महावीर्यवान्, उत्तम रसायन, वात पित्त और कफसे उत्पन्न हुआ, द्वन्द्वज, सान्निपातिक और नाना वर्णके श्लीपद रोगोंको दूर करैहै ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥

अथ विस्फोटकुष्ठलिङ्गानि।

स्फोटंकण्डूंतीव्रदाहंमण्डलंस्निग्धपाण्डुता।
पाणौकच्छूस्फिचौक्लेदंकुष्ठविस्फोटलक्षणम् ॥ १७३ ॥

अर्थ–स्फोटक, खुजली और तीव्रदाह, हो मण्डलाकार चिह्न होवे, चर्म्म स्निग्ध और पाण्डु वर्णहो, हाथमें खुजली और नितम्बोंमें क्लेद हो, उसको विस्फोटक कुष्ठ कहतेहैं ॥ १७३ ॥

अथ कनकसंकोचरसः।

[illegible]तस्वर्णा[illegible]शुद्धसूतंत्रिभिःसमम्।
अम्लैर्मर्द्यन्तुतद्गोलंपिष्ठ्वातुल्यंचगन्धकम् ॥ १७४ ॥
कटुतैलयुतंपाच्यंलौहेचमृदुनाग्निना।
द्रवैर्जीर्णेविचूर्ण्याथवह्निमूलकटुत्रिकैः ॥ १७५ ॥
त्वग्विडङ्गवि[illegible]स्तुल्यैःत्रिगुणंत्रिफलाविपात्।
अजामूत्रेदिनंपिष्ट्वागुञ्जैकांभक्षयेद्वटीम् ॥ १७६ ॥
निष्कैकंबाकुचीतैलंपिबेद्विस्फोटकुष्ठजित्।
रसःकनकसंकोचोद्विगुंजंयोजयेत्क्रमात् ॥ १७७ ॥

अर्थ सोनेकी भस्म १ एक भाग, अभ्रककी भस्म १ एक भाग, सोंठ १ एक-भाग पारेकी भस्म ३ तीन भाग, सबको एकत्र नीबूके रसमें खरलकर गोला बनालेवे, फिर इसमें छे भाग गंधक मिलाकर पीसलेवे, पश्चात् इसको कड़वे तेलमें मिलाकर लोहेके पात्रमें मन्द मन्द अग्निसे पकावे, जब पकजावे, तब चीतेकी जड, त्रिकुटा, दालचीनी, वायबिडंग और विषका चूर्ण प्रत्येक एक भाग और त्रिफलेका चूर्ण प्रत्येक तीन भाग मिलाकर बकरीके मूत्रमें एकदिन खरलकर एक एक रत्ती भरकी गोली बनालेवे, एक गोली प्रतिदिन खाय और ऊपरसे चारमासे बापचीका तेल पीवे तो विस्फोट कुष्ठ नष्ट होवे । यह कनकसंकोच रस क्रमसे एक रत्तीसे लेकर दो रत्तीतक खाय ॥ १७४–१७७ ॥

अथ कुष्ठान्तकोरसः ।

शुद्धसूतंद्विधागन्धंनिर्गुण्डीबाकुचीरसैः ।
दि[illegible]मर्दयेत्पाच्यंयामंलवणयंत्रके ॥ १७८ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेत्तुल्यैस्त्रिफलाबाकुचीफलैः ।
तुल्यांशंभृंगचूर्णश्चसर्वमेकत्रपाचयेत् ॥ १७९ ॥
पलाशखदिरक्वाथंगोमूत्रैर्लोहभाजने ।
दिनैकान्तेवटींकुर्यान्निष्कैकंभक्षयेत्सदा ॥ १८० ॥
कुष्ठंविस्फोटकंहन्तिनाम्नाकुष्ठान्तकोरसः ।
मर्दनंभानुतैलेनआतपेकारयेत्सदा ॥ १८१ ॥

अर्थ–शुद्धपारा १ एक भाग शुद्धगंधक २ दोभाग, इनको एकत्र सम्हालू और वापचीके रससे एकदिन खरलकर एक प्रहरतक लवणयंत्रमें पकावे, स्वांगशीतल होनेपर निकालकर चूर्णकर बराबर त्रिफला वापचीके वीज और दालचीनीका चूर्ण मिलाकर पलाश और खैरके क्वाथ और गोमूत्रमें एकदिन-तक पकावे परन्तु लोहेके बासनमें पकावे, पश्चात् चार चार मासेकी गोली बनालेवे, प्रतिदिन एक गोली खाय तो निश्चय विस्फोटक कुष्ठ नष्ट होजाय । विस्फोटक कुष्ठपै भानु तेलको धूपमें सदैव मर्दन करै ॥ १७८–१८१ ॥

अथ गजचर्मकुष्ठलक्षणानि ।

पारदंगंधकंताम्रंशिलाजतुशिलामृता ।
मेघनादाश्वगंधाढ्यंतुल्यंक्षौद्रेविमर्दयेत् ॥
उद्धृतंलेपयेन्मासाद्गजचर्म्मविनश्यति ॥ १८२ ॥

अर्थ-पारा, गन्धक, ताँबा, शिलाजीत, मैनशिल, गिलोय, चौलाईकी जड और असगंध, इन सब औषधियोंको समानभाग ले उत्तम रीतिसे चूर्णकर सहतमें मिलाके खरलकर एक महीनेतक शरीरपै लेप करनेसे गजचर्म्म कुष्ठ नष्ट होताहै ॥ १८२ ॥

अथ काकणघ्नवटी ।

लोहभस्मविषंवह्निकटुकात्रिकटुत्रयम् ।
तुल्यांशंचूर्णितंभाव्यंक्काथेनानेनतद्दिनम् ॥ १८३ ॥
पथ्यानिम्बविडंगानिखदिरंवासकामृता ।
जलैरष्टावशेषन्तुकषायंभावनेहितम् ॥ १८४ ॥
मासमात्रंलिहेत्क्षौद्रैःकाकणंहन्तितद्वटी ।
इन्द्रवारुणिकामूलंवागुचीत्रिफलाग्निभिः ॥ १८५ ॥
निम्बस्यवह्निशुण्ठीश्चमरिचंचूर्णयत्समम् ।
गोमूत्रैःपाययेत्कर्षमनुपानेनभक्षयेत् ॥ १८६ ॥

अर्थ-लोहेकी भस्म, विष, चीता, कुटकी, सोंठ, मिरच और पीपल, इन सबको समानभाग लेकर हरड, नीमकी छाल, वायविडंग, खैर, अडूसा और गिलोय इनको अष्टावशेष काथमें भावना देकर एक एक मासेभरकी गोली बना सहतके साथ खानेसे काकणकुष्ठ नष्ट होताहै इसके ऊपर इन्द्रायणकी-जड, बावचीके बीज, हरड, बहेडा, आमला चीतेकी जड, नीमकी छाल, भिलावेके बीज, सोंठ और कालीमिरच इन सब औषधियोंको समानभाग ले चूर्ण कर २ दो तोलेभर गोमूत्रके साथ पान करै ॥ १८३-१८६ ॥

अथ वज्रानलम् ।

वज्रीक्षीररविक्षीरंधुस्तूरंचित्रकद्रवम् ।
सर्वांशंतिलतैलंचगोमूत्रेणसमंपचेत् ॥ १८७ ॥
तत्तैलंपाचयेद्यत्नाद्द्रव्याण्येतान्यतःपचेत् ।
गन्धकाग्निशिलातालंविडंगातिविषाविषम् ॥ १८८ ॥
तिक्ताकोपातकीकुष्ठंवचामांसीकटुत्रयम् ।
हरिद्रादारुयष्टयाह्वसर्ज्जक्षारश्चजीरकम् ॥ १८९ ॥

कर्षांशंदेवकाष्ठश्चचूर्णन्तैलेविमिश्रयेत् ।
वज्रतैलमिदंख्यातंमर्दनात्सर्वकुष्ठजित् ॥ १९० ॥

अर्थ-थूहरकादूध,आककका दूध,धतूरेका रस और चीतेकी जड़का रस,प्रत्येक १ एकसेर, तिलकातेल ४ चारसेर और गोमूत्र ४ चारसेर इन सब द्रव्योंको एकत्र पकावे, जब केवल तेल शेष रहे तब उतार लेवे पश्चात् इस तेलमें गंधक, चीतेकीजड, मैनशिल, हरिताल,बायबिडंग, अतीस, विष, चिरायता, कडवीतोरई, कूट, बच, बालछड़, त्रिकुटा, हलदी,दारुहलदी, सज्जी, जीरा और देवदारु प्रत्येकका चूर्ण २ दोतोले मिलादेवे,तो वज्रतैल सिद्धहो, इस तेलको मर्दनकरनेसे-सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १८७-१९० ॥

अथ सूर्यकान्तरसः ।

ताप्यंगन्धंशुद्धसूतंशिलाजत्वम्लवेतसम् ।
मृतताम्राभ्रकंतुल्यंमध्वाज्यगुडमिश्रितम् ॥ १९१ ॥
मासैकंजिह्मगंहन्तिसूर्यकान्तोमहारसः ।
मुण्डीपंचाङ्गचूर्णश्चवाकुचीतुल्यचूर्णकम् ।
मध्वाज्यसंयुतंकर्षंलेहयेदनुपानकम् ॥ १९२ ॥

अर्थ-सोनामाखी, गंधक, पारा, शिलाजीत, अमलबेंत, ताँबा और अभ्रक इन सबको समानभाग ले सहत, घी और गुड़में मिलाकर एकमासेभर खाय तो यह सूर्यकान्तनामवाला रस-जिह्मग कुष्ठको दूर करैहै, ऊपरसे गोरखमुण्डीके पत्ते, मूल, पुष्प फल और छालका चूर्ण और बापचीका चूर्ण सहत या घृतमें मिलाकर दोतोलेभर खावे, यह अनुपान है ॥ १९१ ॥ १९२ ॥

अथ कुष्ठकुठाररसः ।

भस्मसूतसमोगन्धोमृतायस्ताम्रगुग्गुलुः ।
त्रिफलाविषमुष्टिश्चचित्रकंचशिलाजतु ॥ १९३ ॥
त्येवंचूर्णितंकुर्यात्प्रत्येकंनिष्कषोडश ।
चतुःषष्टिकरंजस्यबीजचूर्णंप्रकल्पयेत् ॥ १९४ ॥
चतुःषष्टिवटीचक्रेमध्वाज्याभ्यांविलोडयेत् ।
स्निग्धभाण्डगतंखादेद्द्विनिष्कंगलितंचयत् ॥ १९५ ॥
रसःकुष्ठकुठारोऽयंगलत्कुष्ठनिकृन्तनम् ।

पथ्यंत्रिमधुरैर्देयंदत्तभोजनलेपनम् ॥ १९६ ॥
पंचांगतण्डुलीमूलंमधुपुष्पाचधान्यकम् ।
सितयाभक्षयेत्कर्षमतितापप्रशान्तये ॥ १९७ ॥
लिह्यान्नागबलामूलंमध्वाज्यैर्वातितापनुत् ॥ १९८ ॥

अर्थ–रससिन्दूर, गन्धक, लोहा, ताँवा, गूगुल, हरड, बहेड़ा, आमला, कलिहारीकी जड, चीतेकीजड़ और शिलाजीत प्रत्येक आठ तोले ले बारीक चूर्ण करै, पश्चात् इस चूर्णमें ३२ बत्तीस तोले करंजके बीजोंका चूर्ण मिलाकर उत्तम प्रकारसे सहत और घृतके साथ खरलकर ६४ चौंसठ वटी बनालेवे, उन गोलियोंको एक उत्तम चिकने बासनमें भरके रख देवे, इस कुष्ठकुठाररसको चार मासेभर खानेसे–गलितकुष्ठ नष्ट होताहै, इसके ऊपरसे पंचांगयुक्त चौलाईकी-जड, दन्तीकी जड और धनियाँके चूर्णमें बूरा मिलाकर २ दोतोलेभर अथवा गंगेरनकी जडका चूर्ण २ दो तोलेभर सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे कुष्ठरोगीकी रोगजनित अत्यन्तज्वाला निवारण होतीहै । इसमें रोगीको घृत, बूरा और सहत सेवन करना और लेप करना पथ्यहै ॥ १९३–१९८ ॥

अथ लंकेश्वररसः ।

भस्मसूतार्कलोहानांकृष्णागंधकटंकणम् ।
कुष्ठतुल्यकतुल्यांशंमर्द्यंधुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ १९९ ॥
दिनैकंतद्वटीकुर्यान्माषमात्रश्चभक्षयेत् ।
रसोलंकेश्वरोनाम्नाप्रसूतमण्डलप्रणुत् ॥ २०० ॥
गन्धकंत्रिफलाचूर्णंनिर्विर्षींगुग्गुलुंसमम् ।
लिहेदेरण्डतैलेनकर्षैकमनुपानकम् ॥ २०१ ॥

अर्थ–रससिन्दूर, ताँवा, लोहा, पीपल, गन्धक, सुहागा और कूठ, इन सब औषधियोंको समान भागलेकर धतूरेके रसमें एकदिन खरलकर एक एक मासेकी गोली बनालेवे, प्रतिदिन एक गोली खावे तो यह लंकेश्वरनामक रस मण्डल-कुष्ठको नष्ट करैहै । इसके पश्चात् गन्धक, त्रिफला, निर्विषीतृण और गूगुलका चूर्ण करके अण्डीके तेलके साथ पान करै ॥ १९९–२०१ ॥

अथ कुष्ठान्तकोरसः ।

शुद्धसूतंविषंगन्धंतुल्यंताप्यंशिलाजतु ।

शुद्धतीक्ष्णंमृतंलौहंसर्वंमर्द्यंदिनत्रयम् ॥ २०२ ॥
काकमाचीदेवदाल्योःकर्कोटैश्चद्रवैर्दृढम् ।
मर्द्दयेद्भूधरेपच्यात्रिदिनन्तुतुषाग्निना ॥ २०३ ॥
निष्कार्द्धंलेहयेत्क्षौद्रैःरसःकुष्ठनिकृन्तनः ।
भल्लातवाकुचीपथ्याविडंगंचित्रकंतथा ॥ २०४ ॥
जीरकंबदरीमूलंकटुतैलेङ्गुदेनतु ।
भक्षयेदनुपानोऽयंहन्तिकुष्ठंविचर्चिकाम् ॥ २०५ ॥

अर्थ–पारा, विष, गन्धक, सोनामाखी, शिलाजीत, तीक्ष्णलोह और काल-लोह, इन सब औषधियोंको समान ले उत्तमप्रकारसे चूर्णकर मकोयके रसमें एकदिन, देवदालीके रसमें एकदिन और ककोडेके रसमें एकदिन खरलकर भुसकी अग्निसे तीनदिन तक भूधरयंत्रमें पकावे, स्वांगशीतल होनेपर चूर्णकरले, इसको दोमासेभर सहतके साथ चाटे तो कुष्ठरोग दूरहोवे। इस औषधिके सेवनके पश्चात् भिलावा, बापचीकेबीज, हरड, बायविडंग, चीतेकीजड, जीरा और बेरकी जड़ यह सब समानभाग ले चूर्णकर कडवेतेल अथवा हिंगोटकेतेलके साथ पान करै, यह अनुपान है। इससे निश्चय विचर्चिका कुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २०२–२०५ ॥

अथ बालकादिप्रलेपः ।

बालकंमाक्षिकंलोहंनागकेशरपत्रकम् ।
चंदनञ्चमृणालानिभार्ङ्गीचतुर्गुणानिच ।
घृतंकुष्ठेविलेपोऽयंअतिदाहहरःपरः ॥ २०६ ॥

अर्थ–सुगन्धबाला, सोनामाखी, लोहेकीभस्म, नागकेशर, तेजपात, लाल-चंदन और खस, प्रत्येक एक २ भाग, और सबसे चौगुनी भारंगी सबको एकत्र कर घृतके साथ पीसकर लेप करनेसे कुष्ठजन्य शरीरकी दाह दूर होतीहै २०६

अथ रसादिलेपः ।

रसंटंकणगंधार्कक्षीरंस्नुकपयसापिच ॥ २०७ ॥
पिप्पलीचंदनं[illegible]ष्ठघृततुल्येनपाचयेत् ।
लेपोऽ[illegible]लैश्चर्म्मकुष्ठकुलान्तकः ॥ २०८ ॥

अर्थ-पारा, सुहागा, गंधक, आककादूध, थूहरकादूध, पीपल, लालचंदन, और कूठ, इन सब औषधियोंको समानभाग ले घृतमें पकाकर बिजौरेनींबूके रसमें मिलाकर लेपकरनेसे चर्म्मगत सम्पूर्ण कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ २०७ ॥२०८॥

अथ कूष्माण्डबीजादिलेपः ।

कूष्माण्डचक्रमर्द्दाभ्यांबीजंपथ्याचसैन्धवम् ।
क्षीरैस्तक्रैःकांजिकैर्वापिष्टालेपंचदद्रुजित् ॥ २०९ ॥

अर्थ-पेठेकेबीज, चकवडकेबीज, हरड और सेन्धव लवण, इनको एकत्र दूध और तक्र अथवा काँजीके साथ पीसकर लेपकरनेसे-दाद दूर होताहै ॥२०९॥

अथ पारदादिलेपः ।

पारदंटंकणंगंधंमूषलीचार्द्रकद्रवैः ।
दिनंमर्द्यंव्रणेलेपःसिध्महन्तिमहद्ध्रुतम् ॥ २१० ॥

अर्थ-पारा, सुहागा और गंधक इनको एकत्र मुसली और अदरखके रसमें एकदिन खरलकर लेपकरनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २१० ॥

अथ वेतालरसः ।

अभ्रकंमृतलौहश्चशुद्धसूतंशिलाजतु ।
ताप्यंबाकुचिबीजानित्रिफलामुसलीसमम् ॥ २११ ॥
सव्योषंचूर्णितंलेह्यंमधुनानिष्कमात्रकम् ।
मासकंनाशयेत्सिध्मवेतालोऽयंमहारसः ॥ २१२ ॥

अर्थ-अभ्रक, लोहेकी भस्म, पारा,शिलाजीत, सोनामाखी, बापचीके बीज, हरड, बहेडा, आमला, मुसली, सोंठ, मिरच और पीपल, इन सब औषधियों-को समानभाग ले सहतमें मिलाकर चार चार मासेकी गोली बनालेवे,एकमासे प्रतिदिन सेवन करनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २११ ॥ २१२ ॥

अथ लंकाधिपेश्वरोरसः ।

सूताभ्रंशुण्ठिभस्मानिगन्धंतालंशिलाजतु ।
अम्लवेतसतुल्यांशंचाम्लेनमर्दयेत्ततः ॥ २१३ ॥
मध्वाज्याभ्यांवटीं[illegible]र्याद्द्विगुंजंभक्षयेत्सदा ।
कुष्ठंहन्तिनसन्देहोरसोलंकाधिपेश्वरः ॥ २१४ ॥

त्रिफलानिम्बमंजिष्ठावचापटोलमूलकम् ।
कटुकीरजनीतुल्यंक्वाथोऽयमनुपानतः ॥ २१५ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, सोंठ, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, अमलबेंत, इन सब औषधियोंको समानभाग लेकर चूर्णकर काँजीके साथ खरल कर २ दोरत्ती सहत और घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै । इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् त्रिफला, नीमकीछाल, मँजीठ, वच, पटोल, मूली, कुटकी और हलदीका क्वाथ पान करै ॥ २१३–२१५ ॥

अथ चक्रमर्दादिलेपः ।

चक्रमर्दस्यबीजानिकणाश्वेताश्वसर्षपाः ।
कुष्ठेद्वेरजनीतुल्यंतक्रैःपिष्ट्वाप्रलेपयेत् ।
सर्वकुष्ठहरोलेपोनात्रकार्याविचारणा ॥ २१६ ॥

अर्थ–पमाडकेबीज, पीपल, सफेदसरसों, कूठ, हलदी और दारुहलदी इन सब औषधियोंको समानभाग ले तक्रमें पीसकर लेप करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं ॥ २१६ ॥

अथ कुष्ठशैलेन्द्ररसः ।

तालकंमरिचंकुष्ठंकाचटङ्कनिशावचा ।
निर्गुण्डीनिम्बकरलाबीजंवादलमेववा ॥ २१७ ॥
प्रत्येकंतोलकंचूर्णंचूर्णतुल्यन्तुगुग्गुलुः ।
बाकुच्याःपलिकंग्राह्यंपलंसूतंचगंधकम् ॥ २१८ ॥
लोहस्यद्विपलंचात्रत्रिफलाजलशोधितम् ।
षण्मासावटिकाकार्यागोमूत्रेणनिषेविता ॥ २१९ ॥
कुष्ठशैलेन्द्रवज्राख्योलेहोऽयममृतोपमः ।
अष्टादशानिकुष्ठानिकण्डूदद्रुसकुष्ठकम् ॥ २२० ॥
विद्रधिंगण्डमालाश्चगर्दभामुपगर्दभाम् ।
प्लीहगुल्मोदरान्हन्तिकासंश्वासंहलीमकम् ॥ २२१ ॥
कामलापाण्डुरोगांश्चश्वयथुंश्चामवातजम् ।
चन्द्रनाथमुखाच्छ्रुत्वागहनानन्दभाषितः ॥ २२२ ॥

एषलोहरसोदिव्योमेधायुर्बलदायकः ।
कालदेशवयोवह्नीन्दृष्ट्वावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ २२३ ॥
अनुपानंप्रकर्त्तव्यंवातिकेविश्वकुण्डली ।
पटोलमुद्गैःपित्तेचपर्पटेनापिवारिणा ॥ २२४ ॥
अंकोठदलनीरेणच[illegible]मर्दरसैःकफे ।
केवलेवातिकेपैत्तेगोमूत्रंपरिवर्ज्जयेत् ॥ २२५ ॥
मूत्रस्थानेप्रकर्त्तव्यंछागीदुग्धंनसंशयः ॥ २२६ ॥

अर्थ–हरिताल, मिरच, कूठ, कांच, सुहागा, हलदी, वच, सम्हालूके पत्ते, नीमकी छाल, करेलेके बीज या पत्ते, प्रत्येक एकएक तोले लेकर सबका चूर्ण कर ले और सब चूर्णकी बराबर वापचीके बीज ४ चार तोले,पारा चार ४ तोले, गंधक ४ चार तोले और त्रिफलेके क्राथसे शुद्ध किया हुआ लोहेका चूर्ण ८ आठतोले, इन सब द्रव्योंको एकत्र गोमूत्रमें खरल कर छे छे मासेकी गोली बना लेवे, इसको कुष्ठशैलेन्द्रवज्राख्यरस कहतेहैं । यह रस अमृतके समानहै, तथा अठारह प्रकारके कोढ कण्डू, दद्रु, कुष्ठ, विद्रधि, गण्डमाला, गर्दभा, उपगर्दभा, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, खाँसी, श्वास, हलीमक, कामला, पाण्डुरोग और आमवातसे उत्पन्न हुई सूजनको दूरकरैहै । यह श्री-गुरुचन्द्रनाथके मुखसे सुनकर महाराज गहनानन्दने भाषणकिया है । यह लोहरस दिव्य मेधा, आयु और बलको बढानेवाला है । इसको समय, देश, उमर और अग्निको देखकर कमती बढती करै । अनुपान–वाताधिक्यमें सोंठ और गिलोय, पित्ताधिक्यमें पटोल, मूंग और पित्तपापडेका क्राथ, तथा कफाधिक्यमें अंकोलके पत्तोंका रस और चकवडके पत्तोंका रस और केवल वात और पित्तरोगमें गोमूत्रको छोडकर बकरीके दूधके साथ गोलियें बनावे २१७–२२६

अथ पूर्णचन्द्रलेपः ।

करंजेडगजानिम्बंगुडावा[illegible]चिकुष्ठके ।
तालकंमरिचंमुस्तंगोमूत्रकर्दमैःसह ॥ २२७ ॥
सर्व[illegible]ष्ठहरोलेपोगहनानन्दनिर्म्मितः ।
दहेद्दावानलेयद्वत्प्रदाघतृणसं[illegible] ॥ २२८ ॥

पूर्णचन्द्रकनामायंकुष्ठनाशोभवेत्तथा ।
यथाचन्द्रोनिशांमन्दांतमसःपरिवर्जयेत् ॥ २२९ ॥

अर्थ-करंज, चकवड, नीम, थूहरकादूध, बापचीके बीज, कूठ, हरिताल, कालीमिरच और नागरमोथा, इन सबको समानभाग लेकर गोमूत्र और कर्दमके साथ पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै ॥ २२७-२२९ ॥

अथ सप्तामृतलेपः ।

शतमूलीरसश्चैवकृष्णामूल्यामृताकुची ।
चक्रंचैडगजावज्रीसमभागेनलेपयेत् ॥ २३० ॥
वातरक्तंनिहन्त्याशु कुष्ठमन्यंविनाशनम् ।
सप्तामृतोभवेल्लेपोगदापन्नेनिशाकरः ॥
श्रीमद्गहननाथेननिर्मितोविश्वसम्पदि ॥ २३१ ॥

अर्थ-सतावरका रस, श्यामालता, गिलोय, बाकुची, अमलतासके पत्र, चकवड और थूहरकादूध, यह सब समानभाग ले पीसकर लेपकरनेसे वातरक्त और सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ २३० ॥ २३१ ॥

अथ मित्रतैलम् ।

राजवृक्षदलस्याष्टपलंशुद्धंसमुद्धरेत् ।
तथासप्तच्छदस्याष्टपलंशुद्धंविचक्षणः ॥ २३२ ॥
एतत्क्वाथेपचेत्तैलंपलान्पंचभिषग्वरः ।
स्नुक्पयोगंधकंपथ्याकरलाबीजमेवच ॥ २३३ ॥
तोलैकमानंतैलेषुदद्यात्पाचनकालतः ।
तैलमूर्च्छनहेत्वर्थेकृष्णवल्लीविषाकुची ॥ २३४ ॥
एषांतोल चतुर्थ [illegible]त्तैलपाकार्थसिद्धये ।
श्रीमद्गहननाथेनमित्रतैलंविनिर्मितम् ।
हन्तिवज्रंतथाकुष्ठंकृमिदोषंविशेषतः ॥ २३५ ॥

अर्थ-तेल ५ पांच पल, क्वाथके लिये अमलतासके पत्र ऽ॥ आधसेर और सतवनकीछाल ऽ॥ आधसेर, जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर, तथा कल्कके लिये थूहरकादूध, गन्धक, हरड और करेलेके बीज प्रत्येक एक एक तोला लेवे, सबको

यथाविधिसे मिलाकर तेलको सिद्ध करै, इसतेलको मूर्च्छितकरनेके लिये काली तुलसी, अतीस और बापची प्रदान करै। यह तेल—कुष्ठ और कृमिदोषको विशेष करके नष्ट करैहै ॥ २३२–२३५ ॥

अथ धात्र्यादिलेपः।

धात्र्यक्षपथ्याकृमिशत्रुवह्निभल्लातकावल्गुजलोहभृङ्गैः।
भागाभिवृद्धैस्तिलतैलमिश्रैःसर्वाणिकुष्ठानिनिहन्तिलेहः २३६
जारितपुटितचूर्णंभृंगराजमूलंमिलितचूर्णादनुरूपम्।
तिलतैलेनसम्मर्द्यलेह्यंक्रमेणवृद्धिस्तदन्तरेअवश्यनिर्वृणत्वम्।

अर्थ—आमला १ एकभाग, बहेडा २ दोभाग, हरड ३ तीनभाग, वायविडंग ४ चारभाग, चीता ५ पाँचभाग, भिलावा ६ छेभाग, बापचीके बीज सातभाग, लोहा ८ आठभाग और भांगरेकीजड ९ नौभाग, सबको एकत्र चूर्ण करके तिलके तेलमें मिलाकर चाटनेसे सर्व कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं ॥२३६॥

अथ बृहत्यादिलोहम्।

बृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितः।
लोहंकुष्ठंनिहन्त्याशुसर्वरोगहरोऽपिसः ॥ २३७ ॥
नागो नागकेशरचूर्णम्। तिलसारो निस्तुपतिलः।

अर्थ—बृहती, शर्करा, नागकेशर और निस्तुपतिल प्रत्येकका चूर्ण १ एकभाग तथा लोहेका चूर्ण सबको समान ले, मिलाकर सहत और घृतके साथ चाटनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं ॥ २३७ ॥

अथ योगराजलोहः।

त्रिफलावाकुचीबीजंभृंगराजकटुत्रिकम्।
गुडूच्यैडगजाबीजंकेशराजसमुस्तकम् ॥ २३८ ॥
धात्रीखदिरसिन्धूत्थंयमानीजीरकद्वयम्।
कान्तक्रामविडंगानिसर्वचूर्णानिकारयेत् ॥ २३९ ॥
लोहंसर्वसमंह्येपयोगराजइतिस्मृतः।
सर्वकुष्ठविकारेषुविहितोलोहकोविदैः ॥ २४० ॥

अर्थ—त्रिफला, बापचीके बीज, भांगरा, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पमाडकेबीज, कुकुरभांगरा, नागरमोथा, आमला, खैर, सैंधानोन, अजवायन, जीरा,

कालाजीरा, भद्रमोथा और बायबिडंग प्रत्येकका चूर्ण १ एक भाग, तथा सबकी बराबर लोहेका चूर्ण एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे–सर्व कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं ॥ २३८–२४० ॥

अथ बृहत्पंचनिम्बचूर्णम् ।

पुष्पकालेतुपुष्पाणिफलकालेफलानिच ।
संगृह्यपिचुमर्दस्यत्वग्मूलानिदलानिच ॥ २४१ ॥
द्विरंशानिसमाहृत्यभागिकानिप्रकल्पयेत् ।
त्रिफलात्र्यूषणंब्रह्मीश्वदंष्ट्रारुष्कराग्निका ॥ २४२ ॥
विडंगसारवाराहीलौहचूर्णामृताःसमाः ।
हरिद्राद्वयावल्गुजव्याधिघाताःसशर्कराः ॥ २४३ ॥
कुष्ठेन्द्रयवपाठाश्चकृत्वाचूर्णंसुसंयुतम् ।
खदिरासननिम्बानांघनक्काथेनभावयेत् ॥ २४४ ॥
सप्तधापंचनिम्बन्तुमार्कवस्वरसेनतु ।
स्निग्धशुद्धतनुर्धीमान्योजयेच्चशुभेदिने ॥ २४५ ॥
मधुनातिक्तहबुषाखादिराशनवारिणा ।
लेह्यमुष्णांबुनावापिकोलवृद्ध्यापलम्भवेत् ।
जीर्णेचभोजनंकार्यंस्निग्धंलघुहितंचयत् ॥ २४६ ॥
विचर्चिकादुम्बरपुण्डरीककपालदद्रूकिटिमालसादि ।
शतारुविस्फोटविसर्पमालांकफप्रकोपंत्रिविधंकिलासम् २४७
भगन्दरश्लीपदवातरक्तजाड्यान्ध्यनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।
सर्वप्रमेहान्प्रदरांश्चसर्वान्दंष्ट्राविषंमूलविषंनिहन्ति ॥२४८॥
स्थूलोदरःसिंहकृशोदरश्चसुश्लिष्टसन्धिर्मधुनोपयोगात् ।
समोपयोगादपियेदशन्तिसर्पादयोयान्तिविनाशमाशु ।
जीवेच्चिरंव्याधिजराविमुक्तःशुभेरतश्चन्द्रसमानकान्तिः२४९

अर्थ–नीमकेफूल, नीमकेफल, नीमकी छाल, नीमकीजड और नीमकेपत्ते प्रत्येक २दो भाग लेकर उत्तम प्रकारसे चूर्णकर भांगरेके रसमें सातवार भाव-

ना देकर चूर्णकरके रखदेवे, तथा हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पी , ब्राह्मी, गोखुरू, भिलावा, चीता, बिडंग सार, बाराहीकन्द, लोहा, गिलोय, हलदी, दारुहलदी, वापचीकेबीज. अमलतास, कूठ, इन्द्रजौ और पाढ प्रत्येक-का चूर्ण१एक भाग लेवे,पश्चात् उस चूर्णको खैर,असनवृक्षकी छाल और नीमकी छाल इनके अष्टावशेष गाढे क्काथमें सातबार भावना देकर भले प्रकारसे चूर्ण करले फिर इस चूर्णमें पूर्वोक्त भावित पंचनिम्बका चूर्ण और शर्करा एक भाग मिलादेवे। इस चूर्णको बुद्धिमान वैद्य रोगीको वमन विरेचनादिसे शुद्ध कराकर शुभ दिनमें देवे । यह चूर्ण कफपित्तोत्पन्न रोगोंमें सहतके साथ वातपित्तोद्भव रोगोंमें पंचतिक्तघृतके साथ, कफोत्पन्न रोगोंमें खैर और असनके क्काथकेसाथ अथवा गरमजलके साथ सेवन करे, प्रथम इस चूर्णको एक तोलेखावे पश्चात् क्रमवृद्धि-से चार तोलेतक सेवन करे, जब यह चूर्ण जीर्ण होजावे तब स्निग्ध और हलका भोजन करे। यह चूर्ण विचर्चिका, उदुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, दद्रु, किटिभ, आलस. शतारु, विस्फोट, विसर्पमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारके किलासकुष्ठ, भगन्दर, श्लीपद, वातरक्त, जाड्यान्ध्य, नाड़ीव्रण, शीर्परोग, सर्वप्रकारके प्रमेह, सर्वप्रकारके प्रदर सर्वप्रकारके दंष्ट्राविप, मूलविप, स्थूलोदर सिंहकृशोदररोग और सुश्लिष्टसन्धिरोगोंको सहतके साथ सेवन कराहुआ निश्चय नष्ट करताहै । इस चूर्णको सेवन करनेवाले मनुष्यके सर्पादिकाविष नहीं चढता-है, तथा साँप आदि काटकर अपने आपही मरजाते हैं और वह मनुष्य बहुत दिनोंतक जीता रहता है और जरा व्याधिसे विमुक्त होजाताहै, तथा चन्द्रमाके समान कान्तिवाला होजाताहै ॥ २४१-२४९ ॥

अथामृतांकुरलौहम् ।

हुताशमुखसंशुद्धंपलमेकंरसस्यवै ।
पलंलो[illegible]स्यपलंभल्लातकस्य च ॥ २५० ॥
गन्धकस्यपलंचैकमभ्रकस्यच[illegible]गुलोः ।
हरीतकीविभीतक्योश्चूर्णंकर्षद्वयंद्वयोः ॥ २५१ ॥
अष्टमासाधिकंतत्रधात्र्याःपाणितलानिपट् ।
घृतंद्व[illegible]शत्रिफलाजलम् ॥ २५२ ॥
एवं[illegible]त्वापचेत्ताम्रेशौल्वेचावि धिपूर्वकम् ।
पाकमेतस्यजानीयात्पाक[illegible]लोहपाकवित् ॥ २५३ ॥

विबुद्धःप्रातरुत्थायगुरुदेवद्विजार्चकः ।
रक्तिकादिक्रमेणैवसूतभ्रामरमर्दितम् ॥ २५४ ॥
लोहेलौहस्यदण्डेनकुर्यादेतद्रसायनम् ।
अनुपानंचकुर्वीतनारिकेलोदकंपयः ॥ २५५ ॥
सर्वकुष्ठहरंश्रेष्ठंवलीपलितनाशनम् ।
पाण्डुमेहामवातघ्नंवातरक्तरुजापहम् ॥ २५६ ॥
कृमिशोथाश्मरीशूलदुर्नामवातकोपनुत् ।
क्षयंहन्तिमहाश्वासमत्यर्थंशुक्रवर्द्धनम् ।
अग्निसंदीपनंहृद्यंकान्त्यायुर्बलवर्द्धनम् ॥ २५७ ॥

विवर्ज्यशाकाम्लमपिस्त्रियश्च
सेव्योरसोजांगललावकादेः ।
शाल्योदनंषष्टिकसाज्यमुद्गं
क्षौद्रंशुभक्षीरमिहक्रियायाम् ॥ २५८ ॥
सात्म्यञ्चगुर्वादिबृहत्करञ्ज-
शिलाजतुक्षौद्रयुतंपयश्च ।
सर्पिर्युतोभक्षयतोविहंगात्
प्रपूर्यतेदुर्बलदेहधातुः ॥ २५९ ॥
कृष्णस्यपक्षस्यसितेतुपक्षे
त्रिपंचरात्रेणयथाशशांकः ॥ २६० ॥

अर्थ—अग्निमें पुटपाकसे शुद्ध कियाहुवा पारा १ एकपल, लोहा १ एकपल, ताँबा १ एकपल, भिलावा १ एकपल, गन्धक १ एकपल, अभ्रक १ एकपल, गूगुल १ एकपल, हरड़ २ दो कर्ष, बहेड़ा २ दो कर्ष, आमला २ दो तोले ८ आठमासे, गायका घी ८ आठपल और त्रिफलेका क्वाथ ३२ बत्तीसपल लेवे, यथाविधिसे ताँबेके पात्रमें अथवा लोहेके पात्रमें पाकको जाननेवाला वैद्य लोहपाकके समान पकावे। बुद्धिमान् वैद्य प्रातःकाल उठकर गुरु, देव और ब्राह्मणोंका पूजन करके लोहेके बासनमें करके लोहेके दण्डेसे इस रसायनको मर्दन

करै, इसको एकरत्तीके क्रमसे बढ़ाकर खावे । अनुपान नारियलका जल । यह सर्वप्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करैहै, पलीपलित नाशक, पाण्डुरोग, प्रमेह, आमवात, वातरक्त,क्रिमि,सूजन,पथरी,शूल,बवासीर,वातकोप,क्षय और महाश्वास रोगको दूर करैहै । शुक्रवर्द्धक, अग्निप्रदीपक, हृदयको हितकारी, कान्ति, आयु और बलको बढावैहै । इसपै शाक, खटाई और स्त्रीप्रसंग त्यागदेवे । जांगल और लावकादि पक्षियोंका मांस, शालिधानोंका भात, साठीधान, घी, मूँग, सहत, और दूध सेवन करना हितकारी है और स्वभावके माफिक भारी पदार्थ, बृहत्करंज, शिलाजीत, दूधयुक्त सहत, दूधसहित घी सेवन करै । इससे दुर्बल और धातुक्षीणवाले मनुष्य धातुपूरण होजातेहैं । जिसप्रकार कृष्णपक्षमें तीन दिनतक और शुक्लपक्षमें पाँच दिनतक चन्द्रमा पूर्ण रहताहै इसीप्रकार इसको करनेवाला मनुष्य पूर्णवीर्य होताहै ॥ २५०–२६० ॥

अथामृतार्णवलौहम् ।

त्रिकटुत्रिफलालौहंसमभागंविचूर्णितम् ।
सर्वेषामपिचूर्णानामर्द्धभागंशिलाजतु ॥ २६१ ॥
गुडूचीस्वरसैर्देयाभावनारविरश्मिभिः ।
वारत्रयंततःशुष्कंघृतेनसहमर्दयेत् ॥ २६२ ॥
मासमात्रंचमधुनामर्दितंभक्षयेन्नरः ।
हन्त्यष्टादशकुष्ठानिवातरक्तंसुदुस्तरम् ॥
जयेदर्शांसिसर्वाणिप्रमेहमुदराणिच ॥ २६३ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला और लोहा प्रत्येक १ एकभाग और सबसे आधाभाग, शिलाजीत एकत्र मिलाकर चूर्णकरै, पश्चात् इसचूर्णको गिलोयके रसकी धूपमें तीनवार भावनादेकर सुखादेवे, फिर इसमें घी मिलाकर घीके साथ खरल कर एकमासे सहतमें मिलाकर खावे । यह अठारह प्रकारके कोढ, दुस्तर वातरक्त सर्वप्रकारकी बवासीर,प्रमेह और उदररोगोंको दूर करैहैं ॥ २६१–२६३ ॥

अथ समशर्करगुग्गुलुः ।

यावर्ककसुरदारुसैन्धवंमुस्तकत्रुटिवचायमानिका ।
व्योपदीप्यकनिशेफलत्रिकं जीरकद्वयविडङ्गचित्रकम् २६४

कार्षिकंसमभृणंप्रयोजितंसंयुतंपुरपलैश्चपञ्चभिः ।
पेषितंदृषदिशर्करासमंतप्तसर्पिषिविनिक्षिपेत्ततः ॥ २६५ ॥
वातरक्तमुदरंभगन्दरप्लीहियक्ष्मविषमज्वरंगरम् ।
श्वित्रकुष्ठमखिलंव्रणामयंविद्रधिभ्रमगदांश्चदारुणान् २६६॥
गृध्रसीश्चगुदजाग्निमन्दतांहन्तिकुष्ठजनितानियानिच ।
वज्रमिन्द्रकरविच्युतंयथाहन्तिशैलकुलमुद्धतंद्रुतम् ॥२६७॥
अनुपानपरीहारवर्ज्जितंसर्वकालसुखदंनिरत्ययम् ॥
सेव्यमानमिदमश्विनिर्म्मितंगुग्गुलोर्हिवटकंरसायनम् २६८

अर्थ–जवाखार, देवदारु, सैंधानोन, नागरमोथा, छोटीइलायची, बच, अजवायन, सोंठ, मिरच, पीपल, अजमोदा, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, जीरा, कालाजीरा, बायबिडंग और चीता, प्रत्येक दो दो तोले, गूगुल ५ पांचपल, बूरापांच ५ पल, इन सबको एकत्र पीसके तप्तघृतमें डालकर पकावे, इसको सेवन करनेसे वातरक्त, उदररोग, भगन्दर, प्लीहा,राजयक्ष्मा, विषमज्वर, विषविकार, श्वित्रकुष्ठ, व्रणरोग, विद्रधि, भ्रमरोग, गृध्रसीवात, गुदजरोग, मंदाग्नि और कुष्ठसे उत्पन्न हुए रोग दूर होजातेहैं । जैसे इन्द्रके हाथसे छूटाहुआ वज्र पर्वतोंको तोडता है, इसीप्रकार यह रोगोंके समूहको नष्ट करैहै । इसपै अनुपान तथा परहेज करनेकी कोई आवश्यकता नहींहै और निरन्तर सेवन किया हुआ सबकालमें सुखदेनेवाला है । यह गुग्गुलुरसायन श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने रचा है ॥ २६४–२६८ ॥

अथ श्वेतकुष्ठहरलेपः ।

श्वित्रिणोहृतदोषस्यहृतरक्तस्यचासकृत् ।
खदिराम्बुयवान्नश्चभोजनं चेतामिष्यते ॥ २६९ ॥
वायस्येडगजाकुष्ठकृष्णाभिर्लेडकाकृता ।
बस्तमूत्रेणसंपिष्टाप्रलेपाच्छित्रनाशिनी ॥ २७० ॥
वायसी काकमाची ।
स्नुहार्कजातीमालतीकसुवर्णाहलिपल्लवैः ।
गोमूत्रपिष्टैर्लेपोऽयंश्वित्रार्शोव्रणकुष्ठहा ॥ २७१ ॥

कुडवोवागुजीबीजाहरितालपलान्विताः ।
गवांमूत्रेण संपिष्यलेपःश्वित्रहरःपरः ॥ २७२ ॥
धात्रीखदिरयोःक्वाथंपिष्ट्वावल्गुजसंयुतम् ।
कुन्देन्दुधवलंश्वित्रंसद्योहन्तिनसंशयः ॥ २७३ ॥

अर्थ—श्वित्रकुष्ठरोगीको बारंबार रक्तस्राव कराकर खैरका क्वाथ और यवान्न भोजन करावे । मकोय, पमारकेबीज, कूठ और पीपल, इन सबका चूर्णकर गोली बना बकरीके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे श्वित्ररोग दूर होताहै । थूहरके पत्र, आककेपत्र, चमेलीकेपत्र, करंजकेपत्र और अमलतासके पत्र,एकत्र गोमूत्रके साथ पीसकर लेपकरनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २६९—२७३ ॥

अथारग्वधाद्यं तैलम् ।

आरग्वधंधवंकुष्ठंहरितालंमनःशिला ।
द्वेरजन्यौपचेत्तैलंचतुर्गुणजलेभिषक् ॥
एतेनाभ्यज्यश्वित्रीचक्षिप्रंश्वित्रंविनश्यति ॥ २७४ ॥

इति कुष्ठरोगाऽध्यायः ।

अर्थ—तिलकातेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये अमलतासकेपत्र, धववृक्षकी छाल,हरिताल, मैनशिल, हलदी और दारुहलदी ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तैलको सिद्धकर शरीरादिमें मर्दन करनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २७४ ॥

इति कुष्ठरोगाधिकारः समाप्तः ।

अथ शीतपित्तादिचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ शीतपित्तहराभ्यङ्गादीनि ।

अभ्यंगंकटुतैलेनसेकश्चोष्णाम्बुभिस्ततः ।
उदर्देवमनंकार्यंपटोलारिष्टवारिणा ॥ १ ॥
त्रिफलापुरकृष्णाभिर्विरेकश्चात्रशस्यते ।
सिद्धार्थरजनीकल्कैःप्रपुन्नाडतिलैःसह ॥ २ ॥
कटुतैलेनसंमिश्र्यमेतदुद्वर्तनंहितम् ।
दूर्वानिशायुतोलेपःकच्छुपामाविनाशनः ॥ ३ ॥

कृमिदद्रुहरश्चैवशीतापित्तापहःस्मृतः ।
निशारग्वधसिन्धूत्थविडंगैडगजेष्टका ॥ ४ ॥
दूर्वापर्णीसकाकघ्नैरुदर्देलेपनंहितम् ।
कासघ्नः कासमर्दकः ।
शुष्कमूलकस्वरसेनकौलत्थेनरसेनवा ॥ ५ ॥
भोजनंसर्वदाकार्यंलावतित्तिरजेनवा ।
पटोलत्रिफलानिम्बगुडूचीमुस्तचंदनैः ॥ ६ ॥
समूर्वारोहिणीपाठारजनीसदुरालभा ।
काषायंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥ ७ ॥
कण्डूत्वग्दोषविस्फोटविषवीसर्पनाशकः ।
अग्निमन्थभवंमूलंपिष्टंपीतंचसर्पिषा ॥ ८ ॥
शीतपित्तोदर्दकोठान्सप्ताहादेवनाशयेत् ॥ ९ ॥

इति शीतपित्तादिरोगाध्यायः ।

अर्थ–शीतपित्तरोगमें कड़वे तेलके द्वारा अभ्यंग और गरम जलके द्वारा सेक करना हितकारी है। उदर्दरोगमें परवल और नीमकी छाल क्काथके द्वारा वमन और त्रिफला, गूगुल और पीपलके क्काथके द्वारा विरेचन करावे । सफेदसरसों, हलदी, चकवडके बीज और तिल, इनको कडवे तेलमें पीसकर लेप करनेसे शीतपित्त और उदर्दरोग दूर होताहै । दूब और हलदी एकत्र पीसकर लेप-करनेसे कच्छू पामा, कृमि, दद्रु और शीतपित्तरोग नष्ट होताहै । हलदी सम्हालूकेपत्ते, सैंधानोन, बायविडंग,चकवडके बीज,ईंट,दूब,शालिपर्णी और कसौंदी इन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसे उदर्दरोग दूर होताहै । सूखीमूलीके यूष कुलथीके यूष, तथा लवा और तित्तिरपक्षीके मांसके यूषकेसाथ भोजन करना शीतपित्त रोगमें हितकारक है । परवल,त्रिफला, नीमकीछाल, गिलोय, नागरमोथा. लालचन्दन, मूर्वा, कुटकी, पाढ, हलदी और जवासा इन सबका क्काथ बनाकर पानकरनेसे पित्तश्लेष्मज्वर, कण्डू, चर्म्मदोष,विस्फोट,विषविकार और विसर्परोग नष्टहोताहै । अरणीकीजडको पीसकर घृतके साथ पीनेसे शीतपित्त उदर्द और कोढरोग एक सप्ताहमें ही दूर होजाताहै ॥ १–९ ॥

इति शीतपित्तादिरोगचिकित्सासमाप्ता ।

अथाम्लपित्तचिकित्साधिकारः ।

तत्रादावम्लपित्तघ्नवमनादियोगाः ।

अम्लपित्तेचवमनंपटोलारिष्टवारिभिः ।
कारयेन्मदनक्षौद्रसैन्धवेनसमन्वितैः ॥ १ ॥
वामयेदम्लपित्तार्त्तंहिलमोचीरसेनवा ।
विरेचनंत्रिवृच्चूर्णमधुधात्रीद्रवान्वितम् ॥ २ ॥
प्रयोज्यमथवाखण्डत्रिवृताचूर्णमाक्षिकैः ।
ज्वलन्तमिवचात्मानंमन्यमानंसुशोधयेत् ॥ ३ ॥
ऊर्द्ध्वगंवमनैर्धीमानधोगंरेचनैर्हरेत् ।
सम्यग्वान्तविरिक्तस्यसुस्निग्धस्यानुवासनम् ॥ ४ ॥
आस्थापनंचिरोद्भूतेदेयंदोषाद्यपेक्षया ।
पानार्थंतिक्तभूयिष्ठमभीक्ष्णमिहयोजयेत् ॥
यवगोधूमशालीनिलाजारससितामधु ॥ ५ ॥

अर्थ—अम्लपित्तरोगमें परवल और नीमकीछालकी क्वाथके साथ मैनफल, सहत और सैंधानोन मिलाकर वमन करानेके लिये देवे और विरेचन करानेके-लिये निसोतका चूर्ण, सहत और आमलेकारस एकत्र मिलाकर या बूरा, निसोतका चूर्ण और सहत एकत्र मिलाकर देवे । ऊर्द्ध्वग अम्लपित्तरोगीको वमनद्वारा और अधोग अम्लपित्तरोगीको विरेचन द्वारा शुद्ध करे । और सम्यक्प्रकारसे वमन और विरेचनके द्वारा शुद्ध होजाय तो रोगीको स्निग्ध करके अनुवासन बस्ति करावे और जो रोग बहुत दिनोका होजाय तो आस्थापन (निरूहबस्ति) प्रयोगकरे । अम्लपित्त रोगीको पीनेके लिये कड़वे पानीय द्रव्य और पथ्यके लिये जौ, गेहूँ, शालिधान, खीलें, मांसरस और मूँगादिका यूष तथा सहत देवे ॥ १–५ ॥

अथाम्लपित्तघ्नक्वाथानि ।

धात्रीरसोघृतैर्भृष्टोमधुयुक्तोऽम्लपित्तहृत् ॥ ६ ॥
धात्रीरसोयवक्काथसंपीतोमधुनातथा ।
यवकृष्णापटोलानांक्वाथंक्षौद्रयुतंपिबत् ॥ ७ ॥

तेषांवाविश्वयुक्तानांशूलारुच्यम्लपित्तहा ।
किराताब्दामृताशुण्ठीक्वाथःसद्योऽम्लपित्तजित् ॥ ८ ॥

अर्थ-घीमें भुनाहुआ आमलोंकारस सहतके साथ पीनेसे अम्लपित्त रोग नाश होजाताहै । आमलोंका रस सहतके साथ, जौका क्वाथ सहतके साथ, जौ, पीपल और परवल इनका मिलाहुआ क्वाथ सहतके साथ अथवा जौ, पीपल, पटोल और सोंठ इन चार औषधियोंका मिश्रित क्वाथ सहतके साथ अथवा चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इनका क्वाथ पीनेसे बहुत शीघ्र अम्लपित्त रोग नष्ट होताहै ॥ ६-८ ॥

अथ दशाङ्गक्वाथः।

वासामृतापर्पटकनिम्बभूनिम्बमार्कवैः ।
त्रिफलाकुलकैःक्वाथःसक्षौद्रश्चाम्लपित्तहा ॥ ९ ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय, पित्तपापड़ा, नीमकीछाल, चिरायता, भांगरा, हरड, बहेडा, आमला और पटोलका क्वाथ सहत मिलाकर पान करनेसे-अम्लपित्तरोग दूर होताहै ॥ ९ ॥

अथ वासादिक्वाथः ।

सिंहास्यामृतभण्टाकीक्वाथंपीत्वासमाक्षिकम् ।
अम्लपित्तंजयेज्जन्तुःकासंश्वासंज्वरंवमिम् ॥ १० ॥
फलत्रयंपटोलंचतिक्ताक्वाथःसितायुतः ।
पीनःक्लीतकमध्वक्तोज्वरच्छर्द्यम्लपित्तजित् ॥ ११ ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और कटेरी इनके क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे अम्लपित्त, खाँसी, श्वास, ज्वर और वमन दूर होताहै । हरड, बहेडा, आमला, परवल और कुटकी, इनका क्वाथ बूरा सहत और मुलेठीके चूर्णके साथ पीनेसे ज्वर और वमन संयुक्त अम्लपित्तादि रोग दूर होतेहैं ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ समसत्तकचूर्णम् ।

जुङ्गामृताश्वेतपुनर्नवानांशक्राशनस्यापिचमार्कवस्य ।
चूर्णंसिताक्षौद्रयुतंघृतेनलीढ्वापयःपेयमतन्द्रितेन ॥ १२ ॥
सामञ्चवायुंग्रहणींप्रदुष्टांकासावसादंज्वरमम्लपित्तम् ।
शोथंतथापाण्डुमरोचकञ्चप्रमेहमुग्रंपरिणामशूलम् ॥ १३ ॥

स्निग्धान्नभोक्तुःपुरुषस्यशीघ्रंनिहन्तिसर्वंकफपित्तरोगम् ।
रसायनोवह्निबलप्रदश्चदुर्णामहन्तासमसप्तकोयम् ॥ १४ ॥

अर्थ–विधारा, गिलोय, सफेद पुनर्नवा, भांग और भांगरा, इनका चूर्ण समानभाग लेकर बूरा, सहत और घृतके साथ चाटे, पश्चात् दूध पीवे और स्निग्धभोजन करे तो सामवायु, संग्रहणी, खाँसी, अम्लपित्त, ज्वर और सूजन आदि रोग दूर होतेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथ सुपक्वजम्बीररसः ।

सुपक्वजम्बीररसःसायंपीतोऽम्लपित्तजित् ।
धन्याकंचन्दनंमुस्तंयवश्चेतिसमांशिकम् ॥ १५ ॥
लेहःक्षौद्रयुतोहन्यादम्लपित्तारुचिज्वरान् ॥ १६ ॥

अर्थ–उत्तम पकेहुए जम्भीरी नीबूकारस सायंकाल पान करनेसे अम्लपित्तरोग दूरहोताहै । धनियाँ, लालचंदन, नागरमोथा, और जौ यह चारों औषधि समान भाग लेकर भलेप्रकारसे पीसकर सहतके साथ चाटनेसे–अम्लपित्त, अरुचि और ज्वर दूर होताहै ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथैलादिमन्थः ।

एलापटोलघनचन्दनधान्यधात्री-
वांशीवराङ्गदलनागकणाभयाभिः ।
लेहःसिताज्यमधुभिःसितयाथपित्तं
हंत्यम्लपित्तमरुचिज्वरदाहशोषान् ॥ १७ ॥

अर्थ–छोटीइलायची, पटोल, नागरमोथा, लालचंदन, धनियाँ, आमला, वंशलोचन, दालचीनी, तेजपात, गजपीपल और हरड, इन सब औषधियोंको बारीक पीसकर बूरा, घी और सहत मिलालेवे, इसको बूरांके साथ खावे तो पित्त, अम्लपित्त, अरुचि, ज्वर, दाह और शोषदूर होताहै ॥ १७ ॥

अथाम्लपित्तजवान्तिनुच्चूर्णम् ।

गुडाभयाभृंगराजचूर्णन्तद्भववान्तिनुत् ॥ १८ ॥

अर्थ–गुड, हरड और भांगरेका चूर्ण, एकत्र सेवन करनेसे अम्लपित्तोद्भव वमन दूरहोताहै ॥ १८ ॥

अथ द्राक्षाघृतम् ।

द्राक्षामृतोशीरकिरातपद्मत्रायन्तिधात्र्यब्दपटोलधान्यैः ।
सचन्दनेन्द्रैःशृतमम्लपित्तकासाग्निसादज्वरजिद्घृतंस्यात् १९

अर्थ—उत्तम गायका घी २ दोसेर, जल ८ आठसेर तथा कल्कके लिये दाख गिलोय, खस, चिरायता, पद्माख, त्रायमाणा, आमला, नागरमोथा, पटोल, धनियाँ, लालचंदन और इन्द्रजौ, यह सब औषधि ऽ॥ आधसेर ले, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, इस घृतको पान करनेसे अम्लपित्त, खाँसी मन्दाग्नि और ज्वर दूर होताहै ॥ १९ ॥

अथ खण्डपिप्पली ।

कणाचूर्णस्यकुडवंषट्पलंहविपन्तथा ।
वरीरसात्पलान्यष्टौक्षीरप्रस्थद्वयन्तथा ॥ २० ॥
खण्डप्रस्थंपचेत्तत्रसिद्धेसंचूर्ण्यधान्यकम् ।
शुण्ठीद्विजीरपथ्याब्दमांसीधात्रीत्रिजातकम् ॥ २१ ॥
पृथक्द्वादशमासंहिषण्मासंनागकेशरम् ।
खदिरंमरिचंशीतेक्षिपेत्क्षौद्रपलत्रयम् ॥
शूलाम्लपित्तवान्त्यग्निमान्द्यजित्खण्डपिप्पली ॥ २२॥

अर्थ—पीपलकाचूर्ण ऽ॥ आधसेर, गायका घी ६ छेपल, शतावरका रस ८ आठपल,गायका दूध ४ चारसेर और खाँड २ दो सेर इन सब द्रव्यों-को एकत्र मिलाकर पकावे, जब पाक पूर्ण होजाय तो धनियाँ, सोंठ, जीरा, कालाजीरा, हरड, नागरमोथा, बालछड, आमला, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, प्रत्येकका चूर्ण १२ बारह मासे, नागकेशर, खैर और काली-मिरच, प्रत्येकका चूर्ण ६ छे मासे और सहत ३ तीन पल मिलादेवे । यह खण्डपिप्पली—शूल, अलमपित्त वमन और मंदाग्निको नष्ट करैहै ॥ २०–२२ ॥

अथ द्वितीयखण्डपिप्पली ।

पिप्पल्याःकुडवंचूर्णपलषोडशकंघृतम् ।
वरीरसात्पलान्यष्टौषोडशामलकीरसात् ॥ २३ ॥
खण्डप्रस्थंपयःप्रस्थद्वयेपक्त्वाधिकंक्षिपेत् ।

धात्रीधान्याभयाजाजीत्रिजाताम्सुचूर्णितम् ॥ २४ ॥
कर्षार्द्धं जीरकंकुष्ठंनागरंनागकेशरम् ।
जातीफलंमरीचंचशीतेमधुपलत्रयम् ॥ २५ ॥
अम्लपित्तरुचिश्छर्दिश्वासकासज्वरापहम् ।
अग्निसन्दीपनंहृद्यंखण्डपिप्पलिनामकम् ॥ २६ ॥
अक्षिकं कार्षिकं पृथक् ॥

अर्थ–पीपलकाचूर्ण १ एककुडव, गायका घी १६ सोलहपल, सतावरकारस ८ आठ पल, आमलोंका रस १६ सोलहपल, खाँड २ दो सेर गायका दूध २ दो सेर, यथाविधिसे पकावे, जब पाक समाप्त होजाय तो आमला, धनियाँ, हरड, कालाजीरा, दालचीनी, छोटी इलाची, तेजपात और सुगन्धवाला, प्रत्येकका चूर्ण २ दो तोले, सफेद जीरा, कूठ, सोंठ, नागकेशर, जायफल और कालीमिरच, प्रत्येक १ एक तोले और सहत ३ तीनपल मिलादेवे । यह द्वितीयखण्ड पिप्पली, अम्लपित्त, अरुचि, श्वास, खाँसी और ज्वरको नष्ट करतीहै । अग्निको दीपनकरतीहै और हृदयको हितकारीहै ॥ २३–२६ ॥

अथ खण्डशुण्ठी ।

शुण्ठीचूर्णस्यकुडवंखण्डप्रस्थंसमावपेत् ।
दत्त्वाद्विकुडवंसर्पिःक्षीरप्रस्थत्रयेपचेत् ॥ २७ ॥
पाकसिद्धेक्षिपेच्चूर्णंकणाधात्रीत्रिजातकम् ।
वांशीद्विजीरकंपथ्याह्वब्दधान्यंत्रिशाणिकम् ॥ २८ ॥
षण्मासंमरिचंनागंशीतेतुत्रिफलंमधु ।
शूलाम्लपित्तहृल्लोपवात्यामानिलनाशनम् ॥ २९ ॥
बलवर्णदमायुष्यंखण्डशुण्ठीरसायनम् ॥ ३० ॥

अर्थ–सोंठकाचूर्ण ऽ॥ आधसेर, खाँड २ दोसेर, गायका घी १ एक सेर और गायका दूध छे सेर, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै, जब पाक पूर्ण हो जाय तो–पीपल, आमला, छोटी इलायची, तेजपात, दालचीनी, वंशलोचन, जीरा, कालाजीरा, हरड, नागरमोथा और धनियाँ प्रत्येकका चूर्ण १॥ डेढ़ तोले, कालीमिरच और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण ६ छे मासे तथा सहत ३ तीनपल

मिलालेवे । इस खण्डशुण्ठीको सेवन करनेसे शूल, अम्लपित्त, हृदयरोग, वमन और आमवातरोग नष्ट होताहै तथा बलकी वृद्धि होती है वर्णको उज्ज्वल करैहै आयुको बढावे है और रसायन है ॥ २७–३० ॥

अथाग्निमुखताम्रम् ।

गन्धकेनाक्षमात्रेणसूततुल्येननिर्म्मिता ।
कज्जलीयातयालेप्यंताम्रपात्रन्तुतत्समम् ॥ ३१ ॥
अर्जुनत्वग्रसैःसार्द्धंपक्वोदुम्बरपल्लवे ।
आच्छाद्यपंचलवणैश्चूर्णैश्चापिच[illegible]ण्मये ॥ ३२ ॥
अन्धमूषागतंध्मातंतात्सिद्धंभक्षयेन्नरः ।
शाणकंरक्तिकावृद्ध्यामासमात्रंप्रयोगतः ॥ ३३ ॥
अम्लपित्तंक्षयंशूलंजरत्पित्तं[illegible] ।
सप्तरात्रप्रयोगेणशरीरंनिर्म्मलंभवेत् ॥ ३४ ॥

अर्थ–पारा २ दो तोले और गंधक २ दो तोले दोनोको एकत्र खरल कर कज्जलीबना उस कज्जलीसे तांबेके पत्तोंको लेप करके अर्जुनकी छालके रसमें पकाकर गूलरके पक्के पत्तोंसे आच्छादितकर पंचलवण चूर्णके साथ मट्टीके अन्धमूषामें पकावे । इसको एक रत्तीके क्रमसे चारमासे तक खावे,इससे–अम्ल-पित्त, क्षय, शूल, दारुणज रक्तपित्त, यह सब सात रोजमें दूर होजातेहैं और शरीर निर्म्मल होजाताहै ॥ ३१–३४ ॥

अथ वातपित्तान्तकोरसः ।

मृतसूताभ्रमुण्डार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गंधकंमर्दयेत्तुल्यंयष्टीद्रा[illegible]द्रवैः ॥ ३५ ॥
धात्रीशतावरीद्रावैर्द्रवैःक्षीरविदारिजैः ।
दिनैकंमर्दयेत्खल्वेसिताक्षौद्रयुतावटी ॥ ३६ ॥
निष्कमात्रंनिहंत्याशु पित्तंपित्तज्वरंक्षयम् ।
दाहंतृष्णांभ्रमंशोषंवातपित्तान्तकोरसः ॥ ३७ ॥
सिताक्षीरंपिबेच्चा[illegible]यष्टिकाथंसिता[illegible]तम् ।
पिबेद्वापि[illegible]शान्त्यर्थंशीततोयेनच[illegible]नम् ॥ ३८ ॥

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, मुण्डलोह, ताँबा, तीक्ष्णलोह, सोना-माखी, हरिताल और गंधक यह सब द्रव्य समान भाग लेकर मुलेठी, दाख और गिलोयके क्काथमें एकदिन आमले और सतावरके रसमें एकदिन एवं विदारी-कन्दके रसमें एकदिन खरलकर गोली बना लेवे इन गोलियोंको खांड और सहतके साथ सेवन करनेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा, भ्रम और शोष दूर होताहै। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् बूरा और दूध अथवा मुलेठी-का क्काथ और बूरा या लाल चन्दन और शीतल जल पान करे॥ ३५–३८॥

अथ पंचाननावटिका।

शुद्धसूतंपलार्द्धञ्चशुद्धगन्धकतत्समम्।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपलंलिप्त्वामूषान्तरेक्षिपेत्॥ ३९॥
तंसिद्धंताम्रमादायपलमेकंसमाहरेत्।
पारदस्यपलंचैकंगन्धकस्यपलन्तथा॥ ४०॥
पुटशुद्धस्यलौहस्यगगनस्यपलंपलम्।
यमानीशतपुष्पाचटङ्कणक्षारमेवच॥ ४१॥
प्रत्येकमेपाञ्चपलंतदन्यस्यपलार्द्धकम्।
घण्टकर्णभृंगराजमण्डूराणांतथैवच॥ ४२॥
प्रत्येकंचसमादायसर्वमे[illegible]त्रकारयेत्।
त्रिकटुत्रिफलादन्तीचविकाशुक्कजीरकम्॥ ४३॥
चित्रकञ्चनिशापाङ्गात्रिवृताम[illegible]णकस्यच।
पिप्पलीमूलकस्याथप्रत्येकेनरसेनच॥ ४४॥
आर्द्रकस्यरसैःपिष्ट्वागुटिकांसंप्रकल्पयेत्।
पंचाननावटीख्यात[illegible]सर्वरोगविनाशिनी॥ ४५॥
अम्लपित्तगजेन्द्रस्यप्रशमीचरसायनी।
महाग्निकारिणीचैषापरिणाम[illegible]रापरा॥ ४६॥
शोथपाण्डामयंहन्तिप्लीहग[illegible]ल्मोदरापहा।
गु[illegible]योमांसरसाहिताः॥ ४७॥

पक्वाम्रंनारिकेलश्चद्राक्षातालफलानिच।
यथेष्टंभक्षयेद्रोगीनिःशङ्कोचितमेवतत् ॥ ४८ ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, दो २ तोले शुद्ध गंधक, २ तोले दोनोकी कज्जलीकर चार तोले ताँबेके पत्रोंपै प्रलेप करे, पश्चात् ताँबेके पत्रोंको मूषामें रख पुट देवे। इस प्रकार शुद्ध किया हुआ ताँबा ४ चारतोले, पारा ४ चार तोले, सोया ४ चार तोले और सुहागा ४ चार तोले, एवं घण्टकर्ण, भांगरा, कुकुर भांगरा और मण्डूर, प्रत्येक दो दो तोले लेकर भले प्रकारसे सबका बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इस चूर्णको त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, दन्ती, सफेदजीरा, चीता, हलदी, चिरचिटा, निसोत, मानकन्द, पीपरामूल और अदरख प्रत्येकके रसमें एकबार खरलकर गोली बना लेवे। इनको पंचानना वटिका कहतेहैं। यह सब रोग नाशक हैं। यह अम्लपित्तरूपी गजेन्द्रको शान्त करनेवाली है रसायनहै अत्यन्त जठराग्निको दीपन करनेवाली, परिणाम शूलको नष्ट करनेवाली, तथा सूजन, पाण्डुरोग, प्लीहा, गुल्म और उदररोगको दूर करैहै। इसपै भारी और वीर्य्य-वर्द्धक अन्नपान, दूध और मांसरस हितकारी है। पके हुए आम, नारियल, दाख, ताडके फल, इन सबका भक्षण करना हितकारी है। और इसपै यथेष्ट भोजन करे, तथा सदैव निःशंक चित्त रहै ॥ ३९–४८ ॥

अथ पानीयभक्तवटिका।

त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामृताचित्रकम्।
यमानीहवुषाहिङ्गुतुम्बुरंलवणत्रयम् ॥ ४९ ॥
भल्लातंशतपुष्पाचधन्याकंजीरकद्वयम्।
अजमोदावचाशृंगीरोहिषंबृहतीद्वयम ॥ ५० ॥
बालोवृद्धिबलैबाणात्तथामुण्डतिकाद्वयम्।
कुठारच्छिन्नकर्णौचलक्षःपीतःशुभाञ्जनः ॥ ५१ ॥
सूर्यावर्त्तात्रिवृद्द-तीभद्रोत्कटपुनर्नवा।
भार्ङ्गीपर्णासमूलश्चमेधावीन्द्राशनःशटी ॥ ५२ ॥
तेजोवतीगवाक्षीचनीलिन्यौशरपुङ्खकम्।
करिकर्णपलाशश्चगृः नाख्यौशतावरी ॥ ५३ ॥

गोधावत्यल[illegible]षकोबृहत्पत्र[illegible]लाहलौ ।
सर्पदंष्ट्राकणामूलंराजानौभृंगकेशयोः ॥ ५४ ॥
[illegible]रकशम्याकवलेन्द्रस्वरसन्तथा ।
दण्डोत्पलंरु[illegible]कञ्चसुदर्शःस्वरमञ्जरी ॥ ५५ ॥
तालमूल्यास्थिसंहारःघण्टकर्णोरुदन्तिका ।
कर्षमात्रञ्चसंग्राह्यमेषाञ्चैवपृथक्पृथक् ॥ ५६ ॥
एकपत्रीकृतंव्योमकृष्णकञ्चपलाष्टकम् ।
आम्लभक्ताम्लपानीयेस्थापयेच्चदिनत्रयम् ॥ ५७ ॥
शुष्कंचूर्णीकृतंपश्चात्पुटयेद्गोमयाग्निना ।
प्राणास्थिसंहृत्कन्दानांभृंगार्द्रत्रिफलारसैः ॥ ५८ ॥
एवंहतस्यलौहस्यपट्टफलस्ययथाक्रमम् ।
पश्चादेकीकृतंसर्वंपुटयेदार्द्रमालयोः ॥ ५९ ॥
पारदार्द्धपलंशुद्धंगन्धकस्यपलन्तथा ।
सर्वमेकीकृतंश्लक्ष्णंपेषयेदार्द्रकाम्बुना ॥ ६० ॥
षण्मासकमिताञ्चैवगुटिकांपाययेत्सदा ।
गुटीत्रयंभक्षयित्वाअम्लंचानुपयःपिबेत् ॥ ६१ ॥
नागार्ज्जुनेनमुनिनानिर्मिताहितकारिणा ।
सर्वरोगहरीचैषागुटिकाचामृतोपमा ॥ ६२ ॥
अनेनवर्द्धतेपुष्टिरग्निवृद्धिश्चजायते ।
सर्वरोगाविनश्यन्तिचामाजीर्णज्वरादयः ॥ ६३ ॥
अम्लपित्तञ्चगुदजंग्रहणींन्नाशयेदपि ।
कामलांपांडुरोगञ्चवलीपलितनाशनम् ॥ ६४ ॥
कांजिकाम्लञ्चमाषञ्चमूलकंचैवभक्षयेत् ।
सकलाशकुनाभक्ष्यामांसञ्चसकलन्तथा ॥ ६५ ॥
वार्य्यन्नंदधिशाकञ्चतक्रञ्चापियथेच्छया ।

सर्वान्नंतिन्तिडीवर्ज्यमम्लमात्रंचभक्षयेत् ॥ ६६ ॥
नभक्षयेच्छुष्कशाकंक्षीरंचैवविवर्जयेत् ।
मधुकंनारिकेलंचवर्ज्जनीयंविशेषतः ॥ ६७ ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा. आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, गिलोय, चीता, अजवायन, हाऊबेर, हींग, तुम्बुरु, तीनों लवण, भिलावा, सोया, धनियाँ, सफेदजीरा, कालाजीरा, अजमोदा, बच, काकडाशिंगी, रोहिपतृण, कटेरी, कटाई, सुगन्धबाला, वृद्धि, खिरैटी, कटसरैया, मुण्डी, बडीमुण्डी, कुठारक, छिन्नकर्ण, सफेदसैंजिना, पीला सैंजिना, हुलहुल, निसोत, दन्तीकी जड, प्रसारन, पुनर्नवा, भारंगी, तुलसीकी जड, ब्राह्मी, भंग, कचूर, चव्य, गंगेरन, नील, कालानिसोत, शरफोंका, हस्तिकर्ण, पलाश, काकादनी, मकोय, सतावरी, गोधापदी, बडी गोरखमुण्डी, पठानी लोध, कुलाहल, विछाटी, पीपरामूल, भांगरा, कुकुरभांगरा, विधारा, अमलतास, बीजबंद, सम्हालू, दण्डोत्पल, अरण्ड, जामुन, चिरचिटा, मुसली, हड संघारी, घंटाकर्ण और रुदन्ती, प्रत्येक औषधिका चूर्ण दो दो तोले लेवे, पश्चात् एकपत्री किया हुआ कृष्णाभ्रक लेकर भातकी काँजीमें तीन दिनतक स्थापन करे, फिर सुखाके चूर्णकर आरने उपलोंकी अग्निके द्वारा पुट देवे, ऐसा अभ्रक ८ पल लेवे, मानकन्द, अस्थिसंहार, भांगरा, अदरख और त्रिफलेके रससे मारा हुआ लोहा ६ पल लेवे, फिर सबको एकत्र करके अदरख और मालाकन्दके रसकी पुट देवे, पश्चात् २ दो तोले शुद्ध पारा और ४ चार तोले शुद्ध गंधक दोनोकी कज्जली बना मिला देवे, सबको अदरखके रसमें बारीक पीसकर छे छे मासेकी गोली बना लेवे । प्रतिदित तीन गोली खावे । अनुपान कांजी और जल है । यह पानीयभक्तवटिका रोगी मनुष्योंके हितके लिये श्रीमान् नागार्ज्जुन ऋषिने निर्म्माणकी है । सर्व रोगोंको हरनेवाली, अमृतकी समान पुष्टिकारक, अग्निजनक सर्वरोग नाशक आम और जीर्णज्वरादिको दूर करैहै । तथा अम्लपित्त, गुदज रोग, संग्रहणी, कामला, पाण्डुरोग और वलीपालित रोगको दूर करैहै । इसपै कांजी, उडद और मूली भक्षण करना हितकारीहै । तथा सर्व प्रकारके मत्स्य, मांस, जल, अन्न, दधि, शाक और तक्र यह यथेच्छ भोजन करे । सर्व प्रकारके अन्न, केवल इमलीको छोडकर सर्व प्रकारकी खटाई भक्षण करे । सूखाशाक, दूध, मधु और नारियल इनको त्याग देवे ॥ ४९-६७ ॥

अथ नारिकेलामृतम् ।

नारिकेलफलप्रस्थंसुपिष्टंघृतभार्जितम् ।
प्रस्थंप्रस्थंसमादायशुण्ठ्याश्चूर्णस्यतद्युतम् ॥ ६८ ॥
द्विपात्रंनारिकेलाम्बुतत्समंक्षीरमेवच ।
धात्र्याश्चस्वरसःप्रस्थंखण्डस्यापितुलांन्यसेत् ॥ ६९ ॥
एकीकृत्यपचेत्सर्वंशनैर्मृद्वग्निनाभिपक्व ।
सिद्धशीतेप्रदातव्यंचूर्णंतत्रसुशुण्डितम् ॥ ७० ॥
त्रिकटोःसचतुर्ज्जातप्रत्येकन्तुपलोन्मितम ।
धात्रीजीरकयुग्मञ्चधन्याकंग्रन्थिपर्णकम् ॥ ७१ ॥
तुगापयोदचूर्णानित्रिकर्षञ्चपृथक्पृथक् ।
मधुनःपलानिचत्वारिस्निग्धेभांडेनिधापयेत् ॥ ७२ ॥
कर्षप्रमाणंकर्त्तव्यंरसंयूपंपिबेदनु ।
अम्लपित्तंनिहन्त्याशुशूलंचैवसुदुस्तरम् ॥ ७३ ॥
परिणामभवंशूलंपृष्ठशूलञ्चनाशयेत् ।
अन्नोपरिहृतंशूलंहृच्छूलञ्चसुदुस्तरम् ॥ ७४ ॥
सर्वशूलहरंश्रेष्ठंवायोर्वेगंयथागिरिः ।
कण्ठदाहञ्चहृद्दाहंछर्दिंतृष्णांसुदारुणाम् ॥ ७५ ॥
कासंपंचविधंचैवरक्तपित्तंसुदारुणम् ।
पीनसंचप्रतिश्यायंयक्ष्माणंविनिहन्तिच ॥ ७६ ॥
परंवाजीकरंश्रेष्ठंबलपुष्टिविवर्धनम् ॥
अग्निसन्दीपनकरंरसायनमिदंशुभम ॥ ७७ ॥
मूत्ररोगेषुसर्वेषुवातरोगेषुशस्यते ॥
गुदजानिचसर्वाणितांस्तान्रोगान्निहन्तिच ॥ ७८ ॥
रोगानीकविनाशायलोकानुग्रहहेतुना ।
अश्विभ्यांनिर्मितंश्रेष्ठममृताख्यंरसायनम् ॥ ७९ ॥

अर्थ–पिसी हुई और घीमें भुनी हुई नारियलकी गिरी २ दो सेर सोंठका चूर्ण २ दोसेर, नारियलका जल १६ सोलह सेर, गायका दूध १६ सोलह सेर, आमलोंका रस २ दोसेर और खांड १२॥ सेर लेवे सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे पकावे, जब पककर सिद्ध होकर शीतल होजाय तब सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, नागकेशर, छोटीइलायची और तेजपात प्रत्येकका चूर्ण ४ चार तोले, आमला, सफेदजीरा, कालाजीरा, धनियाँ, गठिवन, वंशलोचन और नागरमोथा, प्रत्येकका चूर्ण तीन ३ तोले और सहत आधसेर मिलाकर एक चिकने बासनमें भरके रख देवे। इसमेंसे प्रतिदिन २ दो तोले खाय और मांसरस या मूँगादिके यूषका अनुपान करे। अम्लपित्त, दुस्तरशूल, परिणाम शूल, पृष्ठशूल, अन्न भक्षण करनेके पश्चात् उत्पन्न हुआ शूल, दारुण हृदयशूल और सर्व प्रकारके शूलोंको दूर करैहै। कण्ठदाह, हृदयदाह, वमन, तृषा, पाँच प्रकारकी खाँसी, दारुण रक्तपित्त, पीनस, प्रतिश्याय, राजयक्ष्मा, सर्व प्रकारके मूत्ररोग, वातरोग, सर्व प्रकारके गुदाके रोग, इन सबको यह निश्चय नष्ट करैहै। श्रेष्ठ बाजीकरण, बलकारक, पुष्टिजनक, अग्निप्रदीपक और उत्तम रसायन है। रोगोंको नाश करनेके लिये और संसारके उपकारके लिये श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने यह उत्तम नारिकेलामृत रचा है॥ ६८–७९॥

अथामलक्यादिलौहम्।

आमलापिप्पलीचूर्णंतुल्ययासितयासह।
रक्तपित्तहरोलौहोयोगराजइतिस्मृतः॥ ८०॥
बल्योऽग्निदीपनोवृष्योमहाम्लपित्तनाशनः।
पित्तोत्थान्वातपित्तोत्थान्निहन्तिविविधान्गदान्॥८१॥

अर्थ–आमलोंका चूर्ण १ एक भाग, पीपलका चूर्ण एकभाग, बूरा दो भाग और लोहा ४ चार भाग सबको एकत्र मिला लेवे। यह बलकारक, अग्निप्रदीपक, वीर्यजनक, तथा रक्तपित्त, अम्लपित्त, पित्तोद्भवरोग, वातपित्तोद्भव रोग और नाना प्रकारके रोगोंको दूर करैहै॥ ८०॥ ८१॥

अथ लौहामृतलौहम्।

चित्रकंत्रिफलादन्तीविदारींमार्कवंबलाम्।
पीवरींतालमूलंचपृथगष्टपलोन्मिताः॥ ८२॥

अक्षधात्रीशिवानाञ्चप्रस्थंप्रस्थंसुकुट्टितम् ।
विपाच्यसलिलद्रोणेसुपूतेऽष्टांशशोषिते ॥ ८३ ॥
प्रस्थंचायोरजःशुद्धंगन्धकंचतदर्द्धकम् ।
खण्डस्यकुडवंदत्त्वानारिकेलपयस्तथा ॥ ८४ ॥
एकीकृत्यपचेल्लौहंरसेनसहसर्पिषा ।
अवतार्य्यततःशीतेमधुनोऽष्टपलंक्षिपेत् ॥ ८५ ॥
त्रिकटुंत्रिफलांदन्तींविडंगंनागकेशरम् ।
पलाशबीजंत्रिवृतांहवुषांजीरकद्वयम् ॥ ८६ ॥
तालीशपत्रधन्याकंवराङ्गंवंशलोचनम् ।
भागतःपलिकंचूर्णंमाक्षिकञ्चपलद्वयम् ॥ ८७ ॥
शिलाजतुरजस्तद्वत्क्षिप्त्वाभाण्डेनिधापयेत् ।
लौहेलौहेनसंघृष्यमधुदत्त्वाघृतार्द्धिकम् ॥ ८८ ॥
कृत्वाचानुपिबेत्क्षीरंजलंवानारिकेलजम् ॥
त्र्यहंमाषमितंकृत्वावर्द्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ ८९ ॥
गुरुवृष्यान्नपानानिपयोमांसरसाःशुभाः ।
सेवनीयाःप्रयत्नेनपावकंवीक्ष्यचात्मनः ॥ ९० ॥
उत्थिताग्निंचभुञ्जीतकर्तव्यापेक्षयाबलात् ।
एवङ्कुर्वन्नवंकान्तंप्राप्नुयाद्देहमात्मनः ॥ ९१ ॥
तेजस्वीबलवान्वाग्मीनिर्व्याधिर्भातिदेववत् ।
अस्योपयोगात्सततं[illegible]रिहृष्यति ॥ ९२ ॥
अम्लपित्तंतथाशूलमग्निमान्द्यंक्षयंज्वरम् ।
ग्रहणींपाण्डुरोगञ्चपरिणामभवंरुजम् ॥ ९३ ॥
येचकुक्षिगतारोगामंदानलभवाश्चये ।
तान्सर्वान्नाशयेद्रोगान्लौहामृतरसायनम् ॥ ९४ ॥

इति अम्लपित्ताऽध्यायः ।

अर्थ–चीता, हरड, बहेडा, आमला, दन्तीकीजड, विदारीकंद, भांगरा, खिरैंटी, सतावर और मुसली प्रत्येक आठ आठ पल, हरड, बहेडा और आमला प्रत्येक २ दोसेर, पाकके लिये जल ३२ सेर, शेष ४ चार सेर, लोहे-का चूर्ण २ दोसेर, शुद्धगंधक १ एकसेर, खांड आधसेर, नारियलका जल आधसेर और गायका घी २ सेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे पकावे, जब पाक पूर्ण होजाय तो ८ आठपल सहत, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, दन्ती, बायबिडंग, नागकेशर, ढाककेबीज, निसोत, हाऊबेर, जीरा, कालाजीरा, तालीशपत्र, धनियाँ, दालचीनी और वंशलोचन प्रत्येकका चूर्ण चारतोले, सोनामाखी ८ आठतोले और शिलाजीतका चूर्ण ८ आठतोले, मिलाकर लोहेके पात्रमें करके लोहेके डंडेसे चलावे । पश्चात् इसमें घृतसे आधा सहत मिलाकर इसको सेवनकरे और ऊपरसे दूध, अथवा नारियलका जल पानकरे । तीन दिनतक एकमासे पर्यन्त खावे पश्चात् एक एक रत्ती रोज बढाताजाय । इसपै भारी वृष्य अन्न, पान, दूध और मांसरस हित-कारी है । जठराग्निको विचारकर क्षुधाके समय इसको सेवन करे । इससे मनुष्य नवीन और कांतिमान् होतेहैं । तेजस्वी, बलवान्, सुन्दर वाणी युक्त और निरोगी, देवोंके स्वरूपकी समान शरीरवाले होतेहैं । इसको सेवन करने-वाला मनुष्य मदिरा पीनेवाले मनुष्यकी समान निरन्तर आनन्दमें मग्न रहता-है । यह लोहामृतरसायन–अम्लपित्तशूल, मंदाग्नि, क्षय, ज्वर, संग्रहणी, पाण्डुरोग, परिणामभवरोग, कुक्षिगतरोग और मंदाग्निसे उत्पन्न हुए रोगोंको दूरकरैहै ॥ ८२–९४ ॥

इति अम्लपित्तचिकित्सासमाप्ता ।

अथ विसर्पचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नाः ।

विरेकवमनालेपसेचनासृग्विमोक्षणैः ।
उपाचरेद्यथादोषंविसर्पानुविदाहिभिः ॥ १ ॥
पूर्वंविसर्पेऽसृङ्मोक्षंकुर्य्याल्लंघनरूक्षणम् ।
पटोलपिचुमर्दाभ्यांपिप्पल्यामदनेनच ॥ २ ॥
विसर्पवमनंशस्तंतथाचेन्द्रयवैःसह ।

मदनंमधुकंनिम्बंवत्सकस्यपलानिच ॥ ३ ॥
मदनश्चविधातव्यंविसर्पेकफपित्तजे ॥ ४ ॥

अर्थ—विसर्परोगमें विरेचन, वमन, प्रलेप, सेक और रक्तमोक्षण, यह सब उपचार करने चाहियें, तथा विदाही क्रियाके द्वारा दोषानुसार विसर्प रोगकी चिकित्सा करे । विसर्परोगमें सबसे प्रथम रक्तमोक्षण, लंघन और रूक्ष-क्रिया प्रयोग करे । पटोल, नीम, पीपल, मैनफल और इन्द्रजौके द्वारा विसर्प-रोगीको वमन करावे । मैनफल, मुलैठी, नीम और इन्द्रजौ इनके द्वारा कफपित्तज विसर्परोगमें वमन करावे ॥ १-४ ॥

अथ विरेचनादियोगाः ।

त्रिवृच्चूर्णंसमालोड्यसर्पिषापयसापिवा ।
उष्णाम्बुनाचपातव्यंविसर्पेचविरेचनम् ॥ ५ ॥
द्राक्षारग्वधकाश्मर्य्यत्रिफलामण्डबीजकैः ।
त्रिवृद्धरीतकीभिश्चविसर्पेशोधनंहितम् ॥ ६ ॥
पुराणाजांगलरसैःशस्ताःशालियवादयः ।
अतिस्निग्धंहिमंपित्तेरूक्षंश्लेष्मणियोजयेत् ॥ ७ ॥

अर्थ—निसोतका चूर्ण घृतके साथ अथवा दूधके साथ या गरम जलके साथ विरेचन करानेके लिये विसर्प रोगीको देवे । दाख, अमलतास, कुम्भेर, हरड, बहेडा, आमला और अरण्डके बीजोंका क्वाथ तथा निसोत और हरडका क्वाथ विसर्प रोगमें विरेचन करानेके लिये देवे । पुराने शालिधानोंके चावल, यव आदि अन्न और जांगलदेशके पशु पक्षियोंके मांसका रस विसर्प रोगमें हितकारी है । वातजविसर्प रोगमें स्निग्ध क्रिया, पित्तज विसर्प रोगमें शीतल क्रिया और कफज विसर्परोगमें रूक्ष क्रिया करनी चाहिये ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

अथ वातजविसर्पचिकित्सा ।

कुष्ठंशताह्वासुरदारुमुस्तावाराहिकुस्तुम्बुरुकृष्णगन्धाः ।
वातेऽर्कवंशार्त्तगलाश्चयोज्याःसेकेषुलेपेषुतथाघृतेषु ॥ ८ ॥
रास्नानीलोत्पलंदारुचन्दनंमधुकंबला ।
क्षीरसर्पिर्युतोलेपोवातवीसर्पनाशनः ॥ ९ ॥

अर्थ–कूठ, सोया, देवदारु,नागरमोथा, वाराहीकंद, धनियाँ,सैंजिना, आक, बाँस और नीलीकटसरैया इनके काथसे परिषेक अथवा इन सबको पीसकर घृतके साथ मिलाकर प्रलेप करनेसे वातज विसर्प रोग नष्ट होताहै। रास्ना, नीलोत्पल, देवदारु, चन्दन, मुलेठी और खिरैटीको दूधमें पीसकर घृत मिलाकर लेपकरनेसे वातज विसर्प रोग दूर होताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ पित्तजविसर्पचिकित्सा ।

प्रपौण्डरीकमंजिष्ठापद्मकोशीरचन्दनैः ।
सयष्टीन्दीवरैःपित्तेक्षीरपिष्टैःप्रलेपनम् ॥ १० ॥
कशेरुशृङ्गाटकपद्मगुन्द्रासशैवलासोत्पलकर्दमाश्च ।
वस्त्रान्तराःपित्तकृतेविसर्पेलेपाविधेयाःसघृत ःसुशीताः ११

अर्थ–पुण्डेरिया, मँजीठ, कमल, खश, लालचन्दन, मुलेठी और नीलेकमल इन सबको दूधमें पीसकर प्रलेपकरनेसे पित्तजन्य विसर्प नष्ट होताहै, कशेरू, सिंवाड़े, कमल, गुन्द्रतृण, सिवार, उत्पल और कर्दम इन सबको घृतके साथ पीसकर वस्त्रपै लपेटकर लेपकरनेसे पित्तज विसर्प रोग दूर होताहै ॥ १० ॥ ११॥

अथान्येऽपिपित्तविसर्पघ्नयोगाः ।

सघृतंलेपनंश्रेष्ठंजम्बूत्वक्पंचवल्कलम् ।
प्रदेहःपरिसेकश्चशस्यतेपंचवल्कलैः ॥ १२ ॥
पद्मकोशीरमधुकैश्चन्दनैर्वाप्रशस्यते ।
सेकोमधूदकैर्दुग्धैःशर्करेक्षुरसैःसह ॥ १३ ॥
यवचूर्णंसमधुकंसघृतंस्यात्प्रलेपनम् ॥ १४ ॥
मृणालंचन्दनंलोध्रमुशीरंकमलोत्पलम् ।
शारिवामलकीपथ्यालेपःपित्तविसर्पहा ॥ १५ ॥

अर्थ–जामुनकीछाल और पंचवल्कलको एकत्र पीस घीमें मिलाकर लेपकरनेसे, अथवा केवल पंचवल्कलोंको पीसकर लेपकरनेसे, या पंचवल्कलोंका काढ़ा बनाकर सींचनेसे विसर्परोग नष्ट होताहै । पद्माख, खश, मुलेठी, लालचंदन, इनका काढ़ा बनाकर परिषेक करनेसे अथवा इन सबको पीसकर लेप करनेसे विसर्प नष्ट होताहै । महुएके जलसे या खाँड और ईखके रसको मिलाकर दूधके सींचनेसे अथवा जौका चून और मुलहटीको घीमें पीसकर प्रलेप करनेसे

विसर्प रोग नष्ट होताहै। कमलकी नाल, चन्दन, लोध, खश, कमल, कुमुद, शारिवा, आमला और हरड़ इनको पीसकर लेप करनेसे पित्तज विसर्प रोग नष्ट होताहै ॥ १२-१५ ॥

अथ कफजविसर्पहरचिकित्सा।

गायत्रीसप्तवर्णाब्दधवारग्वधदारुभिः।
कुरुण्टकैर्भवेल्लेपोविसर्पेश्लेष्मसम्भवेः ॥ १६ ॥
धवेत्यत्र वासेति कुरुण्टकैरित्यत्र कुटन्नकै-
रिति च न पाठश्चरकादावदर्शनात् ॥
त्रिफला पद्मकोशीरसमंगाकरवीरकम् ॥
दशमूलमनन्ताचलेपःश्लेष्मविसर्पहा ॥ १७ ॥

अर्थ-खैर, सतौनेकीछाल, नागरमोथा, धवबृक्षकीछाल, अमलतासके पत्ते देवदारु और पियावाँसा इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर लेपकरनेसे कफजन्य विसर्परोग आराम होताहै। हरड़, बहेड़ा, आमला, पद्माख, खश, मँजीठ, कनेरकी जड, नलकी जड, दशमूल और अनन्तमूल इन सबको पीसकर लेप करनेसे श्लेष्मजन्य विसर्प रोग दूर होताहै ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथ सर्वविसर्पचिकित्सा।

पटोलचंदनारिष्टगुडूचीवृषपद्मका।
क्काथोल्पपंचमूलाद्वासघृतोवातिकेहितः ॥ १८ ॥
मुस्तारिष्टपटोलानांक्काथःसर्वविसर्पहा।
धात्रीपटोलमुद्गानामथवापिघृतान्वितः ॥ १९ ॥
पटोलारिष्टदार्वीत्वक्तिक्तात्रायन्तिकासमाः।
सयष्टीमधुकाःसर्वान्विसर्पान्घ्नन्तिपानतः ॥ २० ॥

अर्थ-परवल, लालचंदन, नीमकीछाल, गिलोय, अडूसा और पद्माख, इनका क्काथ अथवा पंचमूलका क्काथ घृतके साथ पानकरनेसे वातजन्य विसर्परोग दूर होताहै। नागरमोथा, नीमकी छाल और पटोल इन तीन औषधियोंका काढा बनाकर पीनेसे सर्वप्रकारके विसर्परोग नष्ट होतेहैं। आमला, पटोल और मूँगका क्काथ घृतके साथ पान करनेसे सर्वप्रकारके विसर्परोग दूर होतेहैं,

पटोल, नीमकी छाल, दारुहलदी, कुटकी, त्रायमाणा और मुलेठीका क्काथ पीनेसे सर्वप्रकारके विसर्प रोग नष्ट होतेहैं ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

अथ बृहदमृतादिक्काथः ।

अमृताविषपटोलंनिम्बपत्रैरुपेतं
त्रिफलखदिरसारव्याधिघातंचतुल्यम् ।
क्कथितमिदमशेषंगुग्गुलोर्भागयुक्तं
जयतिविषविसर्पंकुष्ठमष्टादशाख्यम् ॥ २१ ॥

अर्थ—गिलोय, अडूसा, पटोल, नीमकेपत्ते, हरड, बहेडा, आमला, खैरसार और अमलतासका गूदा इनके क्काथमें गूगुल डालकर पीनेसे विषविकार, विसर्परोग और अठारह प्रकारके कोढ दूर होतेहैं ॥ २१ ॥

अथामृतादिक्काथः ।

अमृतवृषपटोलंमुस्तकंसप्तपर्णं
खदिरमसितवेत्रंनिम्बपत्रंहरिद्रे ।
विविधविषविसर्पान्कुष्ठविस्फोटकण्डून्
अपनयतिमसूरींशीतपित्तज्वरञ्च ॥ २२ ॥
अत्र विरेकार्थं गुग्गुलुं केचित्क्षिपन्ति ।

अर्थ—गिलोय, पटोल, नागरमोथा, सतवनकी छाल, खैर, कृष्णबेंत, नीमके पत्ते, हलदी और दारुहलदी, इन सब औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे नाना प्रकारके विषविकार, अनेक प्रकारके विसर्परोग, कुष्ठ, विस्फोट, कण्डू, मसूरिका, शीतपित्त और ज्वर दूर होताहै । इस काथसे दस्त कराने होय तो गूगुल डालकर पान करे ॥ २२ ॥

अथ विसर्पेपिकुष्ठाद्युक्तस्योपयोगित्वम् ।

कुष्ठेषुयानिसर्पींषिव्रणविस्फोटकेषुच ।
विसर्पेतानियुञ्जीतपानालेपनसेचनैः ।
विशेषेणमहातिक्तंकुष्ठोक्तंयोजयेद्भिषक् ॥ २३ ॥

अर्थ—कुष्ठरोगमें, व्रण रोगमें और विस्फोट रोगमें जो जो घृत कहेहैं वह सब विसर्परोगमें पान,प्रलेप और सेचनके लिये देवे । विशेष करके कुष्ठरोगमें कहा हुआ महातिक्त घृत विसर्परोगमें विशेष हितकारी है ॥ २३ ॥

अथ कालाग्निरुद्ररसः ।

मृतंताम्राभ्रतीक्ष्णानांभस्ममाक्षिकगन्धकम् ।
वन्ध्याकर्कोटकद्रावैस्तुल्यंमर्द्यंदिनावधि ॥ २४ ॥
वन्ध्याकर्कोटिकापिष्टास्थाप्यंलेप्यंमुदाबहिः ।
भूधराख्येपुटेपच्यादिनैकंतंविचूर्णयेत् ॥ २५ ॥
रसःकालाग्निरुद्रोयंदशाहेनविसर्पनुत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तमनुपानंप्रकल्पयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ–ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, तीक्ष्णलोहेकी भस्म, सोनामाखी और गंधक यह सब औषधे समानभाग लेकर बाँझककोडेके रसमें एकदिन खरल करे, फिर बाँझककोडेको पीस उसमें पूर्वोक्त खरल किये हुए द्रव्यको रख कपरमिट्टी कर एकदिन भूधरयंत्रमें पकावे, जब स्वांग शीतल होजाय तब चूर्ण करले, यह कालाग्निरुद्ररस–दशरोजमें विसर्प रोगको दूर करैहै, अनुपान–पीपल और सहत है ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथ विसर्पेऽपथ्यानि ।

त्यजेद्विदाहिपानान्नंविरुद्धंस्वपनंदिवा ।
क्रोधप्रवातव्यायामसन्तापंचाग्निसूर्ययोः ॥ २७ ॥

इति विसर्पाऽध्यायः ।

अर्थ–विदाहि अन्नपान, दुग्धमत्स्यादि विरुद्ध द्रव्य, दिवानिद्रा, क्रोध, प्रबल वायु, व्यायाम, अग्निका ताप और धूप यह सब विसर्परोगी अवश्य त्याग करदेवे ॥ २७ ॥

इति विसर्प रोगाऽध्यायः ।

अथ विस्फोटचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामन्ययत्नपूर्वककार्ययोगः ।

तत्रादौलंघनंकार्यंवमनंलघुभोजनम् ।
तथादोषबलंवीक्ष्ययुक्तियुक्तंविरेचनम् ॥ १ ॥
पटोलेन्द्रयवारिष्टवचामदनसाधितम् ।
प्रदद्याद्वमनेक्वाथंविस्फोटेकफपित्तजे ॥ २ ॥

अर्थ—विस्फोटकरोगमें प्रथम लंघन, वमन, हलका भोजन और दोषानुसार युक्तिके साथ विरेचन करावे। पटोल, इन्द्रजौ, नीमकीछाल बच और मैनफल इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे कफपित्तज विसर्प रोग आराम होताहै ॥ १ ॥२॥

अथाशेषविस्फोटचिकित्सा ।

यूषैःसनिम्बैर्मुद्गाद्यैःपटोलाद्यैश्चतिक्तकैः ।
लंघितंभोजयेद्वैद्योजीर्णशालियवादिकम् ॥ ३ ॥
शिरीषोशीरनागाह्वहिंस्राभिर्लेपनाद्द्रुतम् ।
विषवीसर्पविस्फोटाःप्रशाम्यन्तिनसंशयः ॥ ४ ॥
चं·नंनागपुष्पंचतण्डुलीयकशारिवे ।
शिरीषवल्कलंजातीलेपःस्याद्दाहनाशनः ॥ ५ ॥
शिरीषयष्टीनतचन्दनैलामांसीहरिद्राद्वयकुष्ठबाणैः ॥
लेपोदशाङ्गःसघृतःप्रदिष्टोविसर्पकण्डूज्वरशोथहारी ६॥
शिरीषोदुम्बरौजम्बूसेकलेपनयोर्हिताः ॥ ७ ॥

अर्थ—लंघन कराये हुए विस्फोट रोगीको नीम मूँगादि या पटोलादि कड़वे द्रव्योंके यूपके साथ पुराने चावल अथवा यवादि अन्न भोजन करनेके लिये देवे। शिरसकी छाल, खश, नागकेशर और कटेरी यह सब समान भाग ले जलके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे शीघ्रही विषविकार, विस्फोट और विसर्परोग शान्त होताहै। लाल चन्दन, नागकेशर, चौलाई, अनन्तमूल, शिरसकी छाल और चमेलीके पत्ते समान भाग लेकर लेप करनेसे विस्फोटजन्य दाह दूर होताहै। शिरसकी छाल, मुलेठी, तगर, लालचंदन, इलायची, बालछड, हलदी, दारुहलदी, कूठ और रामसर यह सब समानभाग ले घृतके साथ पीसकर लेपकरनेसे विसर्प, कण्डू, ज्वर और सूजन दूर होताहै। शिरसकी छाल, गूलरकी छाल और जामुनकी छाल, पीसकर लेप करनेसे अथवा इनका क्वाथ बनाकर सींचनेसे विस्फोट और विसर्पादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३-७ ॥

अथ वातजादिविस्फोटकचिकित्सा ।

द्विपंचमूलीरास्नातुदार्व्युशीरदुरालभाः ।
धान्यमुस्तामृताक्वाथोवातविस्फोटनाशनः ॥ ८ ॥
द्राक्षाकाश्मर्य्यखर्ज्जूरपटोलारिष्टपर्पटैः ।

लाजाकुलत्थदुःस्पर्शैःक्काथःपित्तेसितायुतः ॥ ९ ॥
भूनिम्बनिम्बत्रिफलायासेन्द्रयवबालकैः ।
सपटालाब्दैःक्काथःसक्षौद्रःकफजेहितः ॥ १० ॥
पटालामृतभूनिम्बवासकारिष्टपर्पटैः ।
खदिराब्दयुतैःक्काथःविस्फोटार्त्तिज्वरापहः ॥ ११ ॥

अर्थ–दशमूल, रास्ना, दारुहलदी, खश, धमासा, धनियाँ, नागरमोथा और गिलोय, इनका काथ पान करनेसे वातजन्य विस्फोट दूर होतेहैं। दाख, कुम्भेर, खजूर, पटोल, नीमकीछाल, पित्तपापड़ा, खीलें, कुलथी और धमासा इनका क्काथ बना बूरा मिलाके पानकरनेसे पित्तजनित विसर्प रोग दूर होताहै। चिरायता, नीमकी छाल, हरड़, बहेडा, आमला, धमासा, इन्द्रजौ, सुगंधवाला, पटोल और नागरमोथा इनके क्काथमें सहत डालकर पान करनेसे कफजन्य विस्फोट दूर होतेहैं। परवल, गिलोय, चिरायता, अड़ूसा, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, खैर और नागरमोथा इनका काढ़ा पीनेसे विस्फोट और ज्वर दूर होताहै ॥ ८–११ ॥

अथ विस्फोटकादिहरक्काथाः।

पटोलत्रिफलारिष्टगुडूचीमुस्तचन्दनैः ।
समूर्वारोहिणीपाठारजनीसदुरालभा ॥ १२ ॥
कषायंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मरुजापहम् ।
कण्डूत्वग्दोषविस्फोटविषवीसर्पनाशनम् ॥ १३ ॥
भूनिम्बवासाकटुकापटोलफलत्रिकंचन्दननिम्बसिद्धः ।
विसर्पदाहज्वरवक्त्रशोषविस्फोटतृष्णावमिनुत्कषायः॥१४॥

अर्थ–पटोल, हरड, बहेडा, आमला, नीमकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, लालचंदन, मूर्वा, कुटकी, पाढ, हलदी और धमासा इन सबका क्काथ बनाकर पीनेसे पित्तश्लेष्मकी पीडा, कण्डू, चर्मदोष, विस्फोट, विषदोष और विसर्परोग नष्ट होजाताहै। चिरायता, अड़ूसा, कुटकी, पटोल, हरड, बहेडा, आमला, लालचंदन और नीमकी छाल, इन औषधियोंका क्काथ बनाकर पीनेसे विसर्प, दाह, ज्वर, मुखशोष, विस्फोट, तृषा और वमन दूर होतेहैं ॥ १२–१४ ॥

अथ पञ्चतिक्तघृतम् ।

पटोलसप्तच्छदनिम्बवासाफलत्रिकाच्छिन्नरुहाविपक्कम् ।
तत्पंचतिक्तंघृतमाशुहन्तित्रिदोषविस्फोटविसर्पकण्डू ॥ १५ ॥

अर्थ—गायका घी दो सेर, त्रिफलेका काथ आठसेर, जल आठसेर और कल्ककेलिये पटोल, सतवनकी छाल, नीमकी छाल, अडूसेकी छाल, हरड, वहेडा, आमला और गिलोय यह सब आधसेर ले यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे । यह घृत—त्रिदोषज विस्फोट, विसर्प और कण्डूको नष्ट करैहै ॥ १५ ॥

अथ महापद्मकघृतम् ।

पद्मकंद्विनिशायष्टित्रुटिशेलूनतामयाः ।
शिरीषक्रिमिजिह्वाक्षासिक्थतुत्थकपित्थकैः ॥ १६ ॥
पत्रनागाह्वलोध्रैश्चकल्कैःसिद्धंजलेघृतम् ।
विस्फोटाञ्ज्वरवीसर्पान्दोषकीटक्षताधिकान् ।
हन्तिनाडीमगस्त्योक्तंमहापद्मकसंज्ञितम् ॥ १७ ॥

अर्थ—गायका घी २ दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये पद्माख, हलदी, दारुहलदी, मुलेठी, छोटी इलायची, लिसोडे, तगर, कूट, सिरसकी छाल,बायविडंग, दाख, मोम, तूतिया, कैथा, तेजपात, नागकेशर और लोध, यह सब आधसेर ले, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे । इस घृतको सेवन करनेसे विस्फोट, ज्वर, विसर्पादि रोग दूर होतेहैं ॥ १६॥१७॥

अथ विस्फोटकव्रणरोपणतैलम् ।

कम्पिल्लंधातकीमूर्वाविडंगागुरुचन्दनैः ।
पटोलत्रिफलारिष्टबलालोध्रप्रियंगुभिः ॥
कलिंगेनाथखदिरैस्तैलंपक्कन्तुरोपणम् ॥ १८ ॥

इति विस्फोटाऽध्यायः ।

अर्थ—तेल दो सेर, जल आठसेर, कवीला, धायके फूल, मूर्वा, बायबिडंग, अगर, चंदन, पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल, खिरैटी, लोध, खैर, फूलप्रियंगु और इन्द्रजौ इनका क्काथ ८ आठसेर और कल्कके लिये येही औषधि आध सेर ले यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै । इस तेलका प्रयोग करनेसे विस्फोटकके घाव भरजातेहैं ॥ १८ ॥

इति विस्फोटाऽध्यायः ।

अथ स्नायुकचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नानिलेपाश्च ।

विसर्पभेषजंसर्वंस्नायुकेऽपिप्रयोजयेत् ।
स्नेहस्वेदप्रलेपादिकर्म्मकुर्याद्यथाक्रमम् ॥ १ ॥
स्वेदात्स्नायुकमत्युग्रं भेककांजिकसाधितम् ।
हन्तिहिज्जलकंबीजंपिष्टंतद्रप्रलेपनात् ॥ २ ॥
शोभाञ्जनमूलदलैःकाञ्जिकपिष्टैश्चसलवणैर्लेपः ।
हन्तिस्नायुकरोगंयद्वामोचत्वचोलेपः ॥ ३ ॥

अर्थ–जो औषधि विसर्प रोगमें कहीहै वही औषधि स्नायु रोगमें भी देनी चाहिये, यथाक्रमसे स्नायुक रोगमें स्नेह, स्वेद और प्रलेपादि क्रिया प्रयोग करे । मेडकको काँजीमें ओटाकर बफारा देनेसे स्नायुक रोग आराम होताहै। अथवा हिज्जलके बीजोंको पीसके प्रलेप करनेसे स्नायुक रोग दूर होताहै । सैंजिनेकी जड और पत्तोंको काँजीमें पीस लवण मिलाकर लेप करनेसे अथवा केलेकी छालको पीसकर लेप करनेसे स्नायुक रोग दूर होताहै ॥ १–३ ॥

अथ स्नायुकहरलेपादीनि ।

सप्तपर्णशिफाकल्कःपानालेपप्रयोगतः ।
त्र्यहात्स्नायुकरोगघ्नोदृष्टोवारसहस्रशः ॥ ४ ॥
गव्यंसर्पिस्त्र्यहंपीत्वानिर्गुण्डीस्वरसंत्र्यहम् ।
पिबेत्स्नायुकमत्युग्रंहन्त्यवश्यंनसंशयः ॥ ५ ॥
हिंगुवांशीजतोयेनमूलंवाकारवेल्लजम् ।
घृतेनैरण्डमूलंवापिबेत्स्नायुकशान्तये ॥ ६ ॥

इति स्नायुकरोगाध्यायः ।

अर्थ–सतोनेकी जडको पीसकर पान करनेसे अथवा लेप करनेसे तीन दिनमें स्नायुक रोग दूर होताहै । प्रथम गायके घीको पीकर पश्चात् सम्हालुके पत्तोंका रस पीवे तो तीन दिनमें ही स्नायुक रोग दूर होवे । वंशलोचनके क्वाथमें हींग अथवा करेलेकी जड़को पीसकर सेवन करनेसे या अरंडकी जडको घृतके साथ पीसकर सेवन करनेसे स्नायुकरोग दूर होताहै ॥ ४–६ ॥

इति स्नायुरोगाध्यायः ।

अथ मसूरीचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नानि ।

तत्रादौ वमनं युंज्यात्तथा लंघनपाचनम् ॥
सर्वेषां वमनं पूर्वं पटोलारिष्टवालकैः ॥ १ ॥
कषायैश्च वचावत्सयष्ट्याह्वफलकल्कितैः ।
सक्षौद्रं पाययेद्ब्रह्म्या रसं वा हैलमोचिकम् ॥ २ ॥
श्वेतचंदनकल्काक्षं हिलमोचीभवं रसम् ।
पिबेन्मसूरिकारम्भे नैम्बं वा केवलं रसम् ॥ ३ ॥

अर्थ—मसूरिका रोगमें प्रथम वमन, लंघन और पाचन करावे । मसूरिका रोगमें सबसे प्रथम पटोल, नीम और सुगंधबाला इनके रसके द्वारा अथवा वच, इन्द्रजौ, मुलैठी और मैनफल इनके क्वाथके द्वारा वमन करावे । मसूरिकाके उत्पन्न होनेके पहिले ही ब्रह्मीका रस सहत डालकर या हिलमोचिकाके रसमें सहत डालकर अथवा सफेद चंदनको हिलमोचिकाके रसमें पीसकर पीनेको देवे ॥ १–३ ॥

अथ मसूरिकाहरयोगः ।

सुषवीपत्रनिर्यासं हरिद्राचूर्णसंयुतम् ।
रोमान्तीज्वरविस्फोटमसूरीशान्तये पिबेत् ॥ ४ ॥
वान्तस्य रेचनं देयं वमनं चाबलेस्य वै ।
उभाभ्यां हृतदोषस्य विशुद्ध्यन्ति मसूरिकाः ॥ ५ ॥
निर्विकारालपपूयाश्च पच्यन्ते चाल्पवेदनाः ।
रुद्राक्षं मरिचैर्युक्तं पीतं पर्युषिताम्बुना ।
त्र्यहात्पापरुजं हन्ति दृष्टं वारसहस्रशः ॥ ६ ॥

अर्थ—करेलेकारस अथवा करेलेको पीसकर हलदीका चूर्ण मिलाकर पीनेसे रोमान्ती ज्वर विस्फोट और मसूरिका रोग दूर होताहै । छर्दिवाले मनुष्यको विरेचन और जो दुर्बल होय तो फिरभी वमन करावे । इन दोनों विधियोंसे मसूरिका दोषहीन होकर शुद्ध होजातीहैं, निर्विकार, अल्पराधवाली, शीघ्र पक जातीहै और थोडी पीडा होतीहै । रुद्राक्ष और कालीमिरच दोनोको एकत्र बासी जलमें पीस कर तीन दिनतक सेवन करनेसे मसूरिका रोग दूर होताहै ४–६ ॥

अथान्येऽपिमसूरिकाहरयोगाः ।

बिल्वस्यकण्टकाःसप्तसंयुक्तामरिचेनच ।
पि[illegible]र्व्युषिततोयेनपीताःपापरुजापहाः ॥ ७ ॥
यावत्संख्याममूर्य्यङ्गेतावद्भिःशेलुजैर्दलैः ।
छिन्नैरातुरनाम्नातुगुडीचेतिनवर्द्धते ॥ ८ ॥
चैत्रासितभूतदिनेरक्तपताकान्वितास्नुहीभवान् ।
धवलित[illegible]लसन्यस्तापापरुजंदूरतोधत्ते ॥ ९ ॥
वानीरबिल्वजनितक्काथंपर्युषितमुत्तमेदिवसे ।
[illegible]रोगःपिबतांनभवेद्ध्रुवंचेत् ॥ १० ॥

अर्थ—बेलके सात काँटे और कालीमिरचोंको एकत्र वासी जलमें पीसकर सेवन करनेसे मसूरिका रोग दूर होताहै। शरीरमें जितनी मसूरिकाकी फुंसी होवें, उतनेही लिसोडेके पत्तोंको रोगीका नाम लेलेकर छेदता जावे, इससे मसूरिकाकी फुंसी नहीं बढ़तीहैं। चैत्रके महीनेमें कृष्णपक्षके प्रथम दिन थूहरके पत्तोंपे लाल पताका बना सफेद कलशमें रखनेसे वसन्त रोग दूरहोताहै। बेंत और बेलका क्वाथ बनाकर बासी जलके साथ चैत्र महीनेके उत्तम दिनमें पीनेसे निश्चय पापरोग नाशहोताहै ॥ ७–१० ॥

अथ मसूरिकाहरधूपम् ।

वेणुत्वक्स्वरसोलाक्षाकार्पासास्थिमयूरकः ।
यवपिष्टंविषंसर्पिर्वचाब्राह्मीसुवर्चला ॥ ११ ॥
आदौधूपाद्यथालाभमेतैर्वाशुमसूरिका ।
नश्यन्त्यल्परुजापूयानिर्विकाराभवन्तिच ॥ १२ ॥

अर्थ—बाँसकी छालकारस, लाख, बिनोले, तृतिया, जौकाचून, विष, घी, बच, ब्राह्मी और ब्रह्मसुवर्चला, इनमेंसे जितनी ओषधि मिलें उनकी धूपदेवे। इससे निश्चय मसूरिका रोग नष्ट होताहै तथा मसूरिका रोगकी पीडा दूर होतीहै राधरहित होजातीहै और दोषरहित होजातीहै ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ वातजमसूरिकाचिकित्सा ।

द्विपंचमूलीरास्नाचदार्व्युशीरंदुरालभाः ।
सामृतंधान्यकंमुस्तंजयेद्वातसमुत्थिताम् ॥ १३ ॥
गुडूचीमधुकंरास्नापंचमूलंकनिष्ठकम् ।
चंदनंकाश्मर्यफलंबलामूलंविकंकतम् ॥
पाककालेमसूर्य्यान्तुवातजायांप्रयोजयेत् ॥ १४ ॥

अर्थ–दशमूल, रास्ना, दारुहलदी, खश, गिलोय, धनियाँ और नागरमोथा इनका क्वाथ पीनेसे वातजनित मसूरिका रोग नष्ट होताहै । गिलोय, मुलेठी, रास्ना, स्वल्पपंचमूल, लालचंदन, कुम्भेरका फल, खिरैटीकी जड और विकंकत, इनका क्वाथ वातजनित मसूरिकाकी फुंसियोंके पकनेके समय पीनेको देवे ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथ पित्तजमसूरिकाचिकित्सा ।

श्यामापर्पटकारिष्टचंदनद्वयरेणुकैः ।
धात्रीतिक्तवृषोशीरयासैश्चक्कथितंजलम् ॥ १५ ॥
पीतंमसूरिकांहन्तिपित्तजांदाहसंयुताम् ।
द्राक्षाकाश्मर्यखर्जूरपटोलारिष्टवासकैः ।
लाजामलकदुःस्पर्शैःसितायुक्तन्तुपैत्तिके ॥ १६ ॥

शर्कराप्रक्षेपः ।

अर्थ–श्यामलता, पित्तपापडा, नीमकीछाल, सफेदचन्दन, लालचंदन, रेणुका, आमला, कुटकी, अडूसा, खश और धमासा, यह सब समानभाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे दाहसंयुक्त पित्तजन्य मसूरिका रोग दूर होताहै । दाख, कुम्भेर, खजूर, पटोल, नीमकी छाल, अडूसेकी छाल, खीलें, आमला और धमासा इनका क्वाथ बना बूरा डालकर पीनेसे पित्तजन्य मसूरिका रोग दूर होताहै ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथ कफपित्तजमसूरिकाचिकित्सा ।

शिरीषोदुम्बराश्वत्थशेलुन्यग्रोधवल्कलैः ।
प्रलेपःसघृतःशीघ्रंव्रणवीसर्पदाहहा ॥ १७ ॥

शेलूककृतशीताम्भःसेकेवाकायशोधने ।
दुरालभांपर्पटकंभूनिम्बंकटुरोहिणीम् ॥ १८ ॥
श्लैष्मिक्यांपित्तजायान्तुपानेनिःक्काथ्यदापयेत् ।
अमृतादिकषायन्तुजयेत्पित्तकफान्विताम् ॥ १९ ॥

अर्थ—सिरसकीछाल, गूलरकीछाल, पीपलकीछाल, लिसोडेकीछाल, और वडकी छाल, इन सबको घृतकेसाथ पीसकर प्रलेप करनेसे माताराेगके घाव, विसर्प और दाह दूर होताहै । लिसोडेकी छालके शीतल क्काथके सींचनेसे मसूरिका रोग आराम होताहै । धमासा, पित्तपापडा, चिरायता और कुटकी इनके क्काथके पीनेसे श्लैष्मिक और पित्तज मसूरिकारोग दूर होताहै । अमृतादि क्काथके पीनेसे पित्तश्लैष्मिक मसूरिका रोग दूर होताहै ॥ १७-१९ ॥

अथ निम्बादिक्काथः।

निम्बंपर्पटकांपाठांपटोलंकटुरोहिणीम् ।
वासांदुरालभांधात्रीमुशीरंचंदनद्वयम् ॥ २० ॥
एषनिम्बादिकःख्यातःसितयाचसमन्वितः ।
हन्तित्रिदोषमसूरींज्वरवीसर्पसम्भवाम् ।
उत्थितांप्रविशेद्यातुपुनस्ताबाह्यतोनयेत् ॥ २१ ॥

अर्थ—नीमकीछाल, पित्तपापडा, पाढ, पटोल, कुटकी, अडूसेकीछाल, धमासा, आमला, खश, सफेदचंदन और लालचंदन इनका क्काथ बना मिश्री मिलाके पीनेसे त्रिदोषजमसूरिका, ज्वर और विसर्प रोग नष्ट होताहै २०॥२१

अथ मसूरिकाहरक्काथोरसश्च ।

कांचनालत्वचःक्काथःस्वर्णमाक्षिकचूर्णितः ।
निहत्यान्तःप्रविष्टान्तुमसूरींबाह्यतोनयेत् ॥ २२ ॥
बिल्वपत्ररसेनैवमूर्च्छितःपारदोरसः ।
हिलमोचीरसोहन्तिपीतोमधुसमायुतः ।
मसूरींवंजांशीघ्रमस्थिजांसर्वदेहजाम् ॥ २३ ॥

अर्थ—कचनारकी छालके क्काथमें सोनामाखीका चूर्ण डालकर पीनेसे अन्तःप्रविष्ट मसूरिका शरीरके बाहर निकल आतीहैं । बेलके पत्तोंके रससे मूर्च्छित-

कियेहुए पारेको हुलहुल शाकके रसके और सहतके साथ सेवन करनेसे अस्थिजात और सर्वदेहजात सर्व प्रकारका मसूरिका रोग नष्ट होता है ॥ २२ ॥ २३ ॥

अथ पटोलादिक्काथः ।

पटोलकुण्डलीमुस्तवृषधन्वयवासकैः ।
भूनिम्बनिम्बकटुकापर्पटैश्चशृतंजलम् ॥ २४ ॥
मसूरींशमयेदामंपक्वांश्चैवविशोधयेत् ।
नातःपरतरंकिंचिद्विस्फोटज्वरशान्तये ॥ २५ ॥

अर्थ–पटोल, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, नागरमोथा, अडूसेकी छाल, धमासा, चिरायता और पित्तपापडा इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे अपक्वमसूरिका शमन होतीहैं, पक्वमसूरिका शुद्ध होतीहैं, तथा विस्फोट और ज्वर निश्चय नष्ट होताहै ॥ २४ ॥ २५ ॥

अथ पटोलमूलादिप्रयोगौ ।

पटोलमूलारुणतण्डुलीयकंपिबेद्धरिद्रामलकल्कसंयुतम् ।
मसूरिविस्फोटविदाहशान्तयेतदेवरोमान्तिवमिज्वरापहः२६
पटोलमूलारुणतण्डुलीयकंतथैवधात्रीखदिरेणसंयुतम् ।
पिबेज्जलंसुक्वथितंसुशीतलंमसूरिकारोगविनाशनंपरम्२७ ॥

अर्थ–पटोलकीजड, लालचोलाई, हलदी और आमला एकत्र पीसकर सेवनकरनेसे मसूरिका और विस्फोटजन्य दाह तथा रोमान्तिकज्वर और वमन दूर होताहै । पटोलकी जड, लाल चौलाई, आमला और खैर इनका क्वाथ शीतलकर पीनेसे निश्चय मसूरिकारोग नष्ट होताहै ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथ खदिराष्टकः ।

खदिरत्रिफलारिष्टपटोलामृतवासकैः ।
क्काथोऽष्टकोगोजयतिरोमान्तिकमसूरिकाः ।
कुष्ठविस्फोटवीसर्पकण्ड्वादीनापिपानतः ॥ २८ ॥

अर्थ–खैर, हरड, आमला, बहेडा, पटोल, गिलोय, अडूसेकी छाल और नीमकी छाल, इनका क्वाथ पीनेसे रोमान्तिक मसूरिका रोग, कुष्ठ, विस्फोट, वीसर्प और कण्ड्वादि रोग दूर होतेहैं ॥ २८ ॥

अथ मसूरिकापाककालिकयोगाः ।

पाककालेतुसर्वास्ताविशोषयतिमारुतः ।
तस्मात्संबृंहणंकार्य्यंनतुपथ्यंविशोषणम् ॥ २९ ॥
गुडूचीमधुकंद्राक्षामोरटंदाडिमैःसह ।
पाककालेतुदातव्यंभेषजंगुडसंयुतम् ॥
तेनपाकंव्रजत्याशुनचवायुःप्रकुप्यति ॥ ३० ॥

अर्थ—पकनेके समय मसूरिका पवन सुखादेतीहै, इसकारण इसपै विशोपक पथ्य नहीं देवे, पुष्टिकारक पथ्य देवे । गिलोय, मुलेठी, दाख, मोरटलता और अनारकी छाल, इनका क्वाथ बना गुड डालके मसूरिकाके पकनेके समय पीवे, इससे मसूरिका शीघ्रही पकजातीहै और वात कुपित नहीं होता॥२९॥३०॥

अथ वादरचूर्णादियोगाः ।

लिह्याद्वावादरंचूर्णंपाचनार्थंगुडेनतु ।
अनेनाशुविपच्यन्तेवातपित्तकफात्मिकाः ॥ ३१ ॥
शूलाध्मानपरीतस्यकम्पमानस्यवायुना
धन्वमांसरसाःशस्ताईषत्सैन्धवसंयुताः ॥ ३२ ॥
पंचमुष्टिकयूपस्तुदोषत्रयहरंपरम् ।
साधितोदशमूलार्द्धंशृतेनधन्वजोरसः ।
हन्तिकम्पंप्रलापंचेत्यनुभूतमनेकधा ॥ ३३ ॥

अर्थ—बेरोंका चूर्ण गुड़में मिलाकर सेवन करनेसे भी मसूरिका पकजातीहैं । शूल और आध्मानसे पीड़ित तथा वायुसे कम्पायमान मनुष्यको जंगलदेशके जीवोंके मांसका रस सैंधानोनके साथ सेवन करनेसे विशेष लाभ होताहै । बेर, कुलथी, मूँग, मूली और सोंठ इनका यूप पीनेसे त्रिदोषज मसूरिका रोग दूर होजाताहै । दशमूलके साथ, जांगलमांसका रस बनाकर पीनेसे कम्प और प्रलाप दूर होताहै ॥ ३१–३३ ॥

अथ मुखकण्ठरोगघ्नयोगौ ।

जातीपत्रंसमंजिष्ठादार्वीपूगफलंशमी ।
धात्रीफलंसमधुकंक्वथितंमधुसंयुतम् ॥ ३४ ॥

मुखरोगेकण्ठरोगेगण्डूषान्नंप्रशस्यते ।
कुष्ठाभयारजोलिह्यान्मधुनाकण्ठशुद्धये ॥ ३५ ॥

अर्थ—चमेलीके पत्ते, मँजीठ, दारुहलदी, सुपारी, छीकर, आमला और मुलेठी इनके क्वाथमें सहत डालकर गण्डूष धारण करनेसे मुखरोग और कण्ठरोग दूर होताहै । कूठ और हरडका चूर्ण सहतके साथ चाटनेसे कण्ठ शुद्ध होजाताहै ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथाष्टांगकावलेहादियोगाः ।

अष्टांगकावलेहोवाकवडश्चार्द्रकादिभिः ।
शेलुत्वक्त्रिफलादार्वीक्काथोरोचनयायुतः ॥ ३६ ॥
अक्ष्णोःसेकंप्रशंसन्तिगवेधुमधुकाम्बुना ।
मधुकंत्रिफलामूर्वादार्वीत्वङ्नीलमुत्पलम् ॥ ३७ ॥
उशीरंलोध्रमंजिष्ठाप्रलेपाश्च्योतनेहिताः ।
गवेधुमधुसिन्धूत्थघृतंवैकंकतंसमम् ।
नेत्रयोरंजनाद्धन्तिशोषंविस्फोटदुर्ज्जयम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—अष्टांगावलेह सेवनकरनेसे, अथवा अदरखके रसादिका कवल धारण करनेसे या लिसोडेकी छाल, हरड़, बहेड़ा, आमला और दारुहलदी इनका क्वाथ गोलोचनके साथ पीनेसे, या गरहेडुआ और मुलेठीके क्वाथसे आँखोंको सींचनेसे विशेष लाभ होताहै । मुलैठी, हरड़, आमला, बहेडा, मूर्वा, दारुहलदीकी छाल, नीलोत्पल, खश, लोध और मँजीठ इनके प्रलेपके द्वारा नेत्रोंमें आश्च्योतन प्रयोग करनेसे अथवा गरहेडुआ,सहत,सैंधानोन, घृत और विकंकत इनको पीस नेत्रोंमें अंजन लगानेसे शीघ्र ही विस्फोट रोग दूर होताहै॥३६–३८॥

अथ मसूरिकान्तकरसः ।

अथशुद्धस्यसूतस्यमूर्च्छितस्यमृतस्यच ।
धवलापिप्पलीधात्रीरुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ।
पापरोगान्तकोयोगःपृथिव्यामेवदुर्लभः ॥ ३९ ॥

इति मसूरिकारोगाध्यायः ।

अर्थ-शुद्ध और मूर्च्छित पारेकी भस्म, सफेद कोयल, पीपल, आमला और रुद्राक्ष इन सब औषधियोंको समानभाग लेकर सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे सर्वप्रकारके मसूरिका रोग दूर होतेहैं ॥ ३९ ॥

इति मसूरिकारोगाध्यायः ।

अथ क्षुद्ररोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादावजगल्लिकेन्द्रलुप्तचिकित्सा ।

तत्राजगल्लिकामामांजलौकाभिरुपाचरेत् ।
शुक्तिसौराष्ट्रिकाक्षारकल्कैश्चालेपयेन्मुहुः ॥ १ ॥
इन्द्रलुप्ते सिराविद्धा शिलाकाशीशतुत्थकैः ।
लेपयेत्परितः कल्कैस्तैलं वाऽभ्यञ्जने हितम् ॥ २ ॥
कुटन्नटंशिखीजातीकरञ्जकरवीरजैः ।
अवगाढपदश्चैव प्रच्छयित्वा पुनः पुनः ॥ ३ ॥
गुञ्जाफलैश्चिरं लिम्पेत्केशभूमिं समन्ततः ॥ ४ ॥

अर्थ-अब क्षुद्ररोगोंकी चिकित्सा वर्णन करतेहैं-सीप, सोरठकी मट्टी और जवाखार इन तीनोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अजगल्लिका रोग दूर होताहै । इन्द्रलुप्तरोगमें शिरावेध करावे, हरिताल, कसीस और तूतिया इनको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे अथवा शिरमें तेल मर्दन करनेसे इन्द्रलुप्त रोग नष्ट होताहै । श्योनाक, चीता, चमेली, करंज और कनेर सबको एकत्र पीसकर, वारंवार मस्तकपै गाढा प्रलेप कर ढक देवे अथवा चोटलियोंको पीसकर मस्तकपै सर्वत्र प्रलेप करनेसे इन्द्रलुप्त रोग आराम होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथेन्द्रलुप्तहरलेपः ।

हस्तिदंतमसीलेपः सतैलमिन्द्रलुप्तजित् ॥ ५ ॥
हस्तिदंतमसीं कृत्वा मुख्यां चैव रसाञ्जनम् ।
लोमानि तेन जायन्ते नृणां पाणितलेष्वपि ॥ ६ ॥
भल्लातकबृहतीफलगुञ्जामूलफलेभ्य एकेन ।
मधुसहितैर्विलिप्तं सुरपतिलुप्तं शमं याति ॥ ७ ॥

अर्थ-हाथीके दांतकी स्याहीको तेलमें मिलाकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त नष्ट होताहै। हाथीके दाँतकी स्याहीमें रसौत मिलाकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त रोग दूर होताहै इसको हथेलीमें भी लगानेसे रुयें जमआतेहैं । भिलावेंकी गुठली बृहतीके फल, चौंटली और चौंटलीकी जड इन चारोंमेंसे किसी एकको सहतके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे निश्चय इन्द्रलुप्त रोग आराम होताहै ॥ ६-७ ॥

अथान्योपिलेपः ।

बृहतीफलसंपिष्टंगुञ्जाफलश्चेन्द्रलुप्तस्य ।
कनकनिघृष्टस्यसतोदातव्यंप्रच्छितस्यसदा ॥ ८ ॥
मधुकेन्द्रीवरमूर्वातिलाज्यगोक्षीरभृंगलेपेन ।
अचिराद्भवन्तिकेशाघनदृढमूलायतानृजवः ॥ ९ ॥

अर्थ-बृहतीके फल और गुंजा दोनोको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा कनक-धतूरेको पीसकर मस्तकपै प्रलेप करके मस्तकको ढकलेवे, इससे इन्द्रलुप्त रोग दूर होताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ मालत्यादितैलम् ।

मालतीकरवीराग्निनक्तमालविपाचितम् ।
तैलमभ्यञ्जनेशस्तमिन्द्रलुप्तविनाशनम् ॥ १० ॥
इदंहित्वरितंहन्तिदारुणंनियतंनृणाम् ॥ ११ ॥
अग्निश्चित्रकः गोमूत्रेण पाकः ।

अर्थ-मालतीके पत्र कनेर, चीता और करंजकी छाल यह सब ऽ॥ भेर लेकर यथाविधिसे तेलको पकावे । यह तेल बहुत शीघ्र इन्द्रलुप्त और दारुणक रोगको दूर करेहै ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ स्नुह्यादितैलम् ।

स्नुहीपयःपयोर्कस्यमार्कवोलांगलीविषम् ।
मूत्रमाजंसगोमूत्रंरक्तिकासेन्द्रवारुणी ॥ १२ ॥
सिद्धार्थतीक्ष्णतैलंचगर्भंदत्वाविपश्चिता ।
वह्निनामृदुनापक्वंतैलंखालित्यनाशनम् ॥ १३ ॥
कूर्म्मपृष्ठसमानापिरूक्षायारोमवर्जिता ।
दिग्धामानेनजायेतऋक्षणानीरलोमसा ॥ १४ ॥

लांगलिविषं लागलीमूलम् । रत्तिका गुंजामूलम् । तीक्ष्णं ज्योतिष्मतीमूलम् । केचिच्च सिद्धार्थतीक्ष्णतैलमिति श्वेतसर्षपतैलं वदन्ति ।

अर्थ–तिलकातेल २ सेर गोमूत्र ४ सेर, बकरीका मूत्र ४ सेर तथा कल्कके लिये थूहरकादूध, आककादूध, भांगरा, कलिहारीकी जड, चोटली इन्द्रायणकीजड, सफेद सरसों और मालकांगुनीकी जड यह सब ऽ॥ सेर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । इस तेलको सिरमें मलनेसे खालित्यरोग दूर होता है ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथादित्यपाकतैलम् ।

वटावरोहकेशिन्योश्चूर्णेनादित्यपाचितम् ।
गुडूचीस्वरसेतैलमभ्यङ्गात्केशरोपणम् ॥ १५ ॥

केशिनी भूकेशी । एवं चतुर्गुणम् ।

अर्थ–वडके अंकुर, भूकेशीका चूर्ण और गिलोयके रसमें तेलको मिलाकर धूपमें पकाकर शिरमें मलनेसे शिरमें बाल जम आतेहैं ॥ १५ ॥

अथ यष्टिमध्वादि तैलादीनि ।

तैलंसयष्टीमधुकैःक्षीरेधात्रीफलैःस्मृतम् ॥
नस्यंदत्तंजनयतिकेशाञ्श्मश्रूणिचाप्यथ ॥ १६ ॥
श्वेतसर्षपकल्केनस्नानंदारुणकापहम् ।
कार्य्योदारुणकेमूर्ध्निप्रलेपोमधुसंयुतः ॥ १७ ॥
पियालबीजमधुकैःकुष्टमिश्रैःससैन्धवैः ।
काञ्जिकस्थास्त्रिसप्ताहंमासाद्दारुणकापहाः ॥ १८ ॥

अर्थ–तेल २ सेर, दूध ८ सेर और कल्कके लिये मुलेठी और आमला दोनो ऽ॥ सेर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । इस तेलका नास लेनेसे केश और श्मश्रु उत्पन्न होजातेहैं । सफेद सरसोंको पीसकर शरीरपर मलकर स्नान करनेसे या मस्तकपर प्रलेप करनेसे दारुणक रोग दूर होताहै । चिरोंजीकी जड, मुलेठी, कूठ और सेंधानोन यह चारों औषध समानभाग लेकर २१ दिनतक काँजीमें स्थापन करे, पश्चात् इससे लेप करनेसे एक महीनेमें दारुणकरोग दूर होता है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथान्यावपिदारुणकहरयोगौ ।

नागरंगफलत्वग्भिःस्नानंलेपनकन्तथा ॥ १९ ॥
सहनीलोत्पलकेशवयष्टीमधुतिलैःसहशामलकम् ।
चिरजातमपिशीर्षेदारुणरोगंशमंनयति ॥ २० ॥

अर्थ–नारंगीके छिलकेको पीसकर स्नान करनेसे अथवा मस्तकमें प्रलेप करनेसे शीघ्रही दारुणक रोग नष्ट होताहै । नीलोत्पल, पुन्नागपुष्प, मुलेठी और तिल प्रत्येक एक १ भाग और आमला ४चारभाग लेकर सबको एकत्र पीसकर मस्तकपै प्रलेप करनेसे बहुत दिनोंका दारुणक रोग दूर होताहै ॥१९ ॥ २० ॥

अथ चित्रकादितैलम् ।

चित्रकंदन्तिमूलंचकोपातकिसमन्वितम् ।
कल्कंपिष्ट्वापचेत्तैलंकेशशत्रुविनाशनम् ॥ २१ ॥

अर्थ–तेल २ सेर, जल ८ सेर और चीता, दन्तीकी जड, तथा कडवी तोरई यह सब आध ऽ॥ सेर ले यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । इस तेलको शिरमें मर्दन करनेसे दारुणक रोग दूर होताहै ॥ २१ ॥

अथ गुञ्जातैलम् ।

गुञ्जाफलैःशृतंतैलंभृङ्गराजरसेनतु ।
कण्डूदारुणहृत्कुष्ठकपालव्याधिनाशनम् ॥ २२ ॥

अर्थ–तेल २ सेर, भांगरेकारस ८ सेर, तथा कल्कके लिये चोंटलीकी जड ऽ॥ सेर ले, यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । यह तेल कण्डू, दारुणक और कपाल कुष्ठको नष्ट करेहै ॥ २२ ॥

अथ भृंगराजतैलम् ।

भृङ्गराजस्त्रिफलोत्पलशारिवलौहपुरीषसमन्वितकारि ।
तैलमिदंपचदारुणहारिकुञ्चितकेशघनास्थिरकारि॥२३॥

अर्थ–तिलकातेल दो सेर, भांगरेका रस आठसेर और कल्कके लिये हरड, बहेडा, आमला, नीलेकमल, अनन्तमूल, लोहेकामल और आमकी गुठली यह सब आध ऽ॥ सेर ले, यथाविधिसे तेलको सिद्ध कर शरीरपै मर्दन करनेसे केश सघन, कुञ्चित और दृढ होजातेहैं ॥ २३ ॥

अथ हरिद्राद्यंतैलम् ।

हरिद्राद्वयभूनिम्बत्रिफलारिष्टचन्दनैः ।
एतत्तैलमरुंषीणांसिद्धमभ्यंजनेहितम् ॥ २४ ॥

अर्थ–तेल दोसेर, जल ८ सेर और कल्कके लिये हलदी, दारुहलदी, चीता, हरड, बहेडा, आमला, नीमकी छाल और लालचंदन यह सब ऽ॥ आधसेर ले, यथाविधिसे तैलको सिद्ध करे । यह तेल निश्चय अरुंषिका रोगको नष्ट करैहै ॥ २४ ॥

अथ वंशतैलम् ।

कटुतैलमरूंषिघ्नंमूत्रेवंशफलैःस्मृतम् ॥ २५ ॥

अर्थ–कडवातेल २ दोसेर, गोमूत्र ८ आठसेर और कल्कके लिये बांसके फल कुटेहुए चावल ऽ॥ आधसेर ले, यथाविधिसे तेलको सिद्ध कर मस्तकपै मलनेसे अरुंषिका रोग दूरहोताहै ॥ २५ ॥

अथ काकमाचीतैलम् ।

काकमाचीरसेसिद्धंकटुतैलंचतुःपलम् ।
मनःशिलासोमराजीबीजसिन्दूरगन्धकैः ॥ २६ ॥
शाणमात्रैस्तदभ्यंगाद्धन्त्यवश्यमरुंषिकाम् ।
पामांविचर्चिकाश्चैवतथान्याञ्छिरसोव्रणान् ॥ २७ ॥

अर्थ–कडवातेल १ एकसेर, मकोयका रस ४ चार सेर और कल्कके लिये मैनशिल, बापचीकेबीज, सिन्दूर और गंधक प्रत्येक ६ छे मासे ले, यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे, इस तेलको मस्तकादिमें मर्दन करनेसे अरुंषिका, पामा, विचर्चिका और शिरोव्रण नष्ट होतेहैं ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथ पलितघ्नप्रयोगौ ।

लोहमलामलककल्कैःसजवाकुसुमैर्नरःसदास्नायी ।
पलितानीहनपश्यतिगंगास्नायीवपातकानि ॥ २८ ॥
शिरसि लेपं कृत्वा चिरं स्थातव्यम् ।
नवदग्धशंखचूर्णंकांजिकसहितंहिसीसकंघृष्ट्वा ।
लेपात्कचानर्कदलानवद्धांन्शुभ्रान्करोतिनीलिभैवान् २९

अर्थ–लोहेका मैल, आमला और गुडहरकेफूल, एकत्र पीसकर मस्तकपै प्रलेप कर पश्चात् स्नान करनेसे पलित रोग दूर होताहै। तत्काल जलाया हुवा शंखका चूना और सीसा इनको काँजीमें पीसकर मस्तकपर प्रलेप करे और शिरमें आकके पत्ते बांधले तो धवलबाल नीले होजातेहैं॥ २८॥ २९॥

अथाकालपालितघ्नयोगः।

धात्रीफलंद्वयंपथ्येद्वेतथैकंविभीतकम्।
लोहचूर्णस्यकर्षन्तुकर्षार्द्धंचूतमज्जतः॥ ३०॥
पिष्ट्वालोहमयेभाण्डेस्थापयेदुषितांनिशाम्।
लेपोनिहन्यादचिरादकालपलितंमहत्॥ ३१॥

अर्थ–आमले २, हरड २, बहेडा १, लोहकाचूर्ण दो तोले और आमकी मज्जा १ एक तोला, इन सब द्रव्योंको एकत्र पीस एकलोहेके बासनमें भरके रखदेवे, दूसरे दिन प्रातःकाल मस्तकपै लेप करनेसे अकालमें केशोंका पकना दूर होजाताहै॥ ३०॥ ३१॥

अथ धात्रीफलादियोगः।

त्रिफलाचूर्णसंयुक्तंलोहचूर्णंविनिःक्षिपेत्।
ईषत्पक्वेनारिकेलेभृंगराजरसान्विते॥ ३२॥
मासकन्तुविनिःक्षिप्यसम्यग्दत्त्वासमुद्धरेत्।
ततःशिरोमुण्डयित्वालेपंदत्त्वाभिषग्वरः॥ ३३॥
संवेष्ट्यकदलीपत्रैर्मोचयेत्सप्तमेदिने।
क्षालयेत्त्रिफलाक्वाथैःक्षीरमांसरसाशिनः।
अकालपलितस्यैतत्कृष्णीकरणमुत्तमम्॥ ३४॥

अर्थ–त्रिफलेका चूर्ण और लोहेकाचूर्ण दोनोंको एकत्र भांगरेके रसमें मिलाकर एक नारियलके भीतर भरके एक महीनेतक रक्खा रहने देवे, पश्चात् शिरको मुंडवाकर लेप करै और केलेके पत्तोंको शिरपै बाँध देवे, फिर सातदिनमें खोले और त्रिफलेके क्वाथसे शिरको धोवे। दूध और मांसके साथ अन्नका भोजन करे :तो अकालमें बालोंका सफेद होजाना दूर होजाता है॥ ३२॥ ३३॥ ३४॥

अथौण्ड्रपुष्पनस्यम् ।

ओड्रकुसुमस्वरसोमधुतुल्योनस्यतःपलितम् ।
योगशतैरप्यजितंमासाज्जयतिनाश्चर्य्यम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-गुड़हरके फूलोंका स्वरस, सहतमें मिलाकर नासलेनेसे १ एक महीनेमेंही अकालमें बालोंका पकजाना दूरहोकर केश कृष्णवर्ण होजातेहैं ॥ ३५ ॥

अथ चन्दनादितैलम् ।

चन्दनंमधुकंमूर्वात्रिफलानीलमुत्पलम् ।
कान्तावटावरोहश्चगुडूचींविषमेवच ॥ ३६ ॥
लौहचूर्णतथाकेशीशारिवेद्वेतथैवच ।
मार्कवस्वरसेनैवतैलंमृद्वग्निनापचेत् ॥ ३७ ॥
शिरस्युत्पतिताःकेशाजायन्तेयेनकुंचिताः ।
दृढमूलामूलाढ्याश्चतथाभ्रमरसन्निभाः ॥
नस्येनाकालपलितंनिहत्यात्तैलमुत्तमम् ॥३८ ॥

अर्थ-तिलका तेल २ दो सेर, भांगरेका स्वरस ८ आठसेर, तथा कल्कके-लिये लालचंदन, मुलेठी, मूर्वा, आमला, हरड, बहेडा, नीलेकमल, फूलप्रियंगु, वटांकुर, गिलोय, मृणाल, जारण करके पुटसे पकाया हुवा लोहा, भृंकेशी, अनन्तमूल और कारिया वासाऊ, यह सब औषधि ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे, इस तेलको शिरमें मलनेसे बाल कुंचित, दृढमूल और भौंरेकी समान कृष्णवर्ण होजातेहैं, इस तेलसे नासलेनेसे, अकालमें उत्पन्न हुवा पलित रोग दूर होजाताहै ॥ ३६-३८ ॥

अथ नीलविन्दुतैलम् ।

अंजनंमधुकंकृष्णंतार्क्षजंशारिवोत्पलम् ।
त्रिफलानीलिकापत्रंकाशीशंमुस्तकंतिलाः ॥ ३९ ॥
आम्रास्थितालपत्रंचफलंपिण्डीतकस्यच ।
जम्ब्वाम्रार्जुनपत्राणिकूर्म्मपित्तंसतुत्थकम् ॥ ४० ॥
भूकेशःशिंशपाश्चैवमार्कवंसत्रिकण्टकम् ।
पृथक्कर्षसमान्भागान्तथालौहरजःसमम् ॥ ४१ ॥

तैलप्रस्थमजाक्षीरंधात्रीभृंगरसाढकम् ।
पक्कन्तुलौहभाण्डस्थंशिरसोऽभ्यङ्गनस्ययोः ॥ ४२ ॥
यत्नेनयोजयेत्तैलंवराङ्गेविनिपातयेत् ।
पतन्तिविन्दवोयत्रकृष्णत्वमुपजायते ॥ ४३ ॥
भवन्तिकुटिलाःशीघ्रंकेशाःषट्पदकोपमाः ।
खालित्यंपलितंचैवइन्द्रलुप्तञ्चनाशयेत् ॥ ४४ ॥
मेध्यंमंगल्यमायुष्यंबलवर्णकरंशिवम् ।
नीलबिन्दुरितिख्यातंविश्वामित्रेणपूजितम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—तेल २ दोसेर, बकरीका दूध, आमलोंका रस और भांगरेका रस यह तीनो मिले हुए ४ चारसेर और कल्कके लिये कालासुरमा, मुलेठी, सफेद सुरमा, अनन्तमूल, कमल, हरड, बहेडा, आमला, नीलके पत्ते, हीराकसीस, नागरमोथा, तिल, आमलेकी गुठली,ताड़के पत्र, मैनफल, जामुनकेपत्ते, आमकेपत्ते, अर्जुनकेपत्ते, कछुएकापित्त, तूतिया, भूकेशी, सीसमकी छाल, भांगरा और गोखुरू प्रत्येक दो दो तोले तथा लोहेका चूर्ण२ दो तोले और अर्जुनकी छालका काथ४चारसेर ले यथाविधिसे लोहेके बासनमें तेलको सिद्ध करे। इस तेलका नासदेवे या शिरमें मर्दनकरे। इस तेलके विन्दु शिरपे डालनेसे शीघ्रही कुटिलकेश भौंरेके समान कृष्णवर्ण होजातेहैं। तथा खालित्यरोग, पलितरोग और इन्द्रलुप्तरोग दूर होताहै। यह तेल—मेधाको बढावेहै, मंगलदायक है अवस्थाको स्थापन करेहै, बल और वर्णको बढावेहै। इसको नीलविन्दु तेल कहतेहैं ॥ ३९–४५ ॥

अथ बृहद्भृङ्गराजतैलम् ।

भृङ्गराजरसेकंसेकेशराजरसेतथा ।
त्रिफलायारसेकंसेक्षीरकंसेसुसाधितम् ॥ ४६ ॥
कंसंचतिलतैलस्यलौहपात्रेतुपाकवित् ।
कल्कंमृणालशालूकमंजिष्ठापीतशालकम् ॥ ४७ ॥
नीलिकापद्मबीजञ्चशटीमुस्तंपुनर्नवा ।
वरावाद्यालकंकेशीकेशराजंसकेशरम् ॥ ४८ ॥

मण्डूरंचाम्रबीजञ्चश्यामानन्ताप्रियंगुका ।
पाकलंमधुकंझिण्टादेवदारुसपद्मकम् ॥ ४९ ॥
ह्रीवेरंचन्दनंपत्रमेथीमधुरिकावरी ।
न्यग्रोधोरोचनातुत्थंमाहेन्द्रीकेतकीकेशी ॥ ५० ॥
उत्पलंचौण्ड्रपुष्पंचनीलीलताक्षबीजकम् ।
रास्नाचगैरिकंदार्वीपुण्डरीकंरसाञ्जनम् ॥ ५१ ॥
जीवनीयगणोलाक्षाश्रीखंडंभद्रमुस्तकम् ।
त्वक्पत्रंत्वावुपामूलंकृष्णागुरुचलोध्रकम् ॥ ५२ ॥
दत्त्वापलोन्मितैर्भागैःशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
शिरोमध्यगतान्रोगान्नेत्ररोगांश्चसर्वशः ॥ ५३ ॥
हन्तिवातञ्चपित्तंपलितञ्चकालसंभवम् ।
खालित्यमिन्द्रलुप्तञ्चहन्यादेतन्नसंशयः ॥ ५४ ॥
कचान्नीलतरान्कुर्यात्सुस्निग्धान्कुटिलांस्तथा ।
नस्याभ्यंजनपानेचतैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥ ५५ ॥
यत्रतैलरसस्यास्यपतन्तिविन्दवःशुभाः ।
तत्रकेशाःप्रजायंतेनृणांपाणितलेष्वपि ॥ ५६ ॥
अजातेकेशेमस्तेचजातेनष्टेचवापुनः ।
तत्रोपजायतेकेशोहन्तिदारुणकंतथा ॥ ५७ ॥

अर्थ—तिलकातेल आठसेर, भांगरेका रस ८ आठसेर, कुकुरभांगरेका रस ८ आठसेर, त्रिफलेका क्वाथ ८ आठसेर, गायका दूध ८ आठसेर और कल्कके लिये कमलकी नाल, कमलकी जड, मँजीठ पियासाल, नील कमलगट्टा, कचूर, नागरमोथा, पुनर्नवा, हरड, बहेडा, आमला, भृङ्गकेशी, खिरेटी, कुकुरभांगरा, नागकेशर, मण्डूर, आमके बीज, कारियाबामाऊ, गोरियाबामाऊ, फूलप्रियंगु, कूठ, मुलठी, पियावासा, देवदारु, पद्माख, सुगंधवाला, लालचंदन, तेजपात, मेथी, सौंफ, शतावर, वडके अंकुर, गोरोचन, तृतिया, वडीइन्द्रायण, केतकी, मांसरोहिणी, उत्पल, जवाकेफूल, नीली, बहेडेके बीज,

रास्ना, गेरू, दारुहलदी, पुण्डेरिया, रसौत, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मुलहठी, मुगवन, मषवन, लाख, लालचंदन, नागरमोथा, दालचीनी, तेजपात, पीले केलेकी जड, कालीअगर और लोध, प्रत्येक औषधि चार चार तोले लेकर यथाविधिसे सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे तेलको पकावे। यह तेल–कुटिल केशोंको नील और चिकने करैहै। इसको नस्य, अभ्यंजन और पान, इनमें प्रयोग करै। यह तेल–शिरोरोग, नेत्ररोग, वातरोग, पित्तरोग, अकालोत्पन्न पलितरोग, खालित्यरोग और इन्द्रलुप्त रोगको दूर करैहै। इस तेलरूपी रसके जिस जिस स्थलमें बिन्दु गिरतेहैं वहीं केश उत्पन्न होजातेहैं, यहाँतक कि हथेलीमें भी बाल जमआतेहैं। जिस स्थानमें केश नहीं उत्पन्न हुए हैं और जिन स्थानोंमें उत्पन्न होकर नष्ट होगयेहैं, उन सब स्थानोंमें इस तेलको लगानेसे शीघ्रही केश उत्पन्न होजातेहैं यह तेल दारुणकको भी दूर करैहै ॥ ४६–५७ ॥

अथ यौवनपिडकालेपाः।

लोध्रनागवलालेपस्तारुण्यपिडकापहः।
तद्वद्गोरोचनायुक्तंमरिचंमुखलेपनात् ॥ ५८ ॥
सिद्धार्थकवचालोध्रसैन्धवैश्चप्रलेपनम्।
वरण्डश्चनिहन्त्याशुपिडकांयौवनोद्भवाम् ॥ ५९ ॥
व्यंगेषुचार्जुनत्वचामंजिष्ठावासमाक्षिका।
लेपःसनवनीतावाश्वेताश्वखुरजामसी ॥ ६० ॥
श्वेताश्वखुरदग्धनवनीतेनसमलेपः।

अर्थ–लोध और गंगेरनको पीसकर प्रलेप करनेसे मुखके मुहासे दूर होजातेहैं गोरोचन और कालीमिरच, दोनोको एकत्र पीसकर अथवा सफेद सरसों, बच, लोध और सैंधानोन, इनको एकत्र पीसके लेप करनेसे मुखके मुहासे दूर होजातेहैं अर्जुनकी छालको अथवा मँजीठको सहतमें पीसके या सफेद रंगके घोडेके खुरको अग्निमें जला स्याही बना नौनीमें मिलाकर लेप करनेसे व्यंग रोग दूर होताहै ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

अथ व्यंगरोगहरयोगाः।

रक्तचंदनमंजिष्ठाकुष्ठलोध्रप्रियंगवः।

वटाङ्कुरामसूराश्चव्यंगघ्नामुखकान्तिदाः॥ ६१॥

व्यस्तसमस्तेन।

मधुनादाडिमार्द्रत्वग्लेपोव्यंगविनाशनः॥

व्यंगजिद्वरुणत्वग्वाछागदुग्धप्रपेपिता॥ ६२॥

अर्थ-लालचंदन, मँजीठ, कूठ, लोध, फूलप्रियंगु, वडके अंकुर और मसूर इन सबको एकत्र पीसकर अथवा प्रत्येकको अलग अलग पीसकर प्रलेप करनेसे व्यंगरोग नष्ट होकर मुखकी कांति वढतीहै। सहत, अनारकी छाल, अदरख और दालचीनी इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे व्यंगरोग दूर होताहै। बरनेकी छालको बकरीके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे भी व्यंगरोग दूर होताहै ६१॥६२

अथ व्यंगादिरोगघ्नयोगाः।

केवलान्पयसापिष्ट्वातीक्ष्णाञ्शाल्मलिकंटकान्।

आलिप्तंत्र्यहमेतेनभवेत्पद्मोपमंमुखम्॥ ६३॥

श्वेतंपुनर्नवामूलंसर्पाक्षीमूलसंयुतम्।

उद्वर्त्तनंहरेत्स्त्रीणामक्षिच्छायाश्चदुःसहाः॥ ६४॥

महिषीक्षीरसंपिष्टमंजनंरक्तचंदनम्।

कृतोलेपोनिहन्त्याशुमक्षिकांगण्डयोःस्थिताम्॥ ६५॥

अर्थ-केवल तीक्ष्ण सेमलके कांटोंको दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे तीन दिनमें ही व्यंग (झाई) रोग नष्ट होकर मुख कमलके समान सुंदर होजाताहै। सफेद पुनर्नवाकी जड और सर्पाक्षीकी जडको एकत्र पीसकर उद्वर्त्तन करनेस स्त्रियोंकी अक्षिच्छाया दूर होजातीहै। रसौत और लालचंदन भैसके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे गण्डस्थित मक्षिकारोग दूर होजाताहै॥ ६३-६५॥

अथ मक्षिकादिचिकित्सा।

मनःशिलातथालोध्रंद्विनिशासर्षपाःसमम्।

वारिपिष्टोहितोलेपोवदनेमक्षिकांहरेत्॥ ६६॥

माक्षिकंतालकंतुत्थंराजावर्त्तशिलाजतु।

महिषाक्षंसर्वंतुल्यंपेषयेन्माहिषीपयैः ॥ ६७ ॥
सप्ताहंमर्दयेद्गाढंव्यंगघ्नंकान्तिवर्द्धनम् ।
महिषीक्षीरमथितमेतदुद्वर्त्तनंहितम् ॥ ६८ ॥
मुखवर्णकरंस्त्रीणांतिलकालंचनाशयेत् ॥ ६९ ॥

अर्थ—मैनशिल, लोध, हलदी, दारुहलदी और सरसों इन सबको एकत्र पीसकर मुखपै प्रलेप करनेसे मक्षिका नामक काले रंगके दाग दूर होकर मुख उज्ज्वल कान्तियुक्त होजाताहै। सोनामाखी, हरिताल, तूतिया, राजावर्त्त (रेवटी) शिलाजीत और भैंसिया गूगुल यह सब औषधि समानभाग ले एकत्र भैंसके दूधमें पीसके मुखपै प्रलेप करनेसे एक सप्ताहमें व्यंग दूर होकर मुख कांतियुक्त होजाताहै । भैंसकी नौनीको मुखपै मलनेसे स्त्रियोंके मुखकी कान्ति बढतीहै ॥ ६६-६९ ॥

अथ प्रथममंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

चतुर्गुणंगवांक्षीरंक्षीरार्द्धंतिलतैलकम् ।
मंजिष्ठाद्विनिशालोध्रतुवरीतालकंशिला ॥ ७० ॥
लाक्षागोरोचनाकुष्ठंतथाचकुंकुमद्वयम् ।
गैरिकंशिखितुत्थञ्चवटवृक्षस्यपत्रकम् ॥ ७१ ॥
नागकेशरकालीयपद्मबीजञ्चकेशरम् ।
पारदंगंधकंपत्रंत्वचञ्चप्रतिकार्षिकम् ॥ ७२ ॥
सर्वंपाच्यंतैलशेषंम्रक्षणान्माक्षिकापहम् ।
वदनञ्चेन्दुतुल्यंस्यात्सप्तरात्रान्नसंशयः ॥ ७३ ॥

अर्थ—तिलका तेल २ दो सेर, गायका दूध आठ ८ सेर और कल्कके लिये मँजीठ, हलदी, दारुहलदी, दोनो प्रकारकी केशर, गेरू, तूतिया, वड़के पत्ते, नागकेशर, कलम्बक, कमलगट्टा और कमलकेशर, पारा, गंधक, तेजपात और दालचीनी प्रत्येक दोतोले लेकर यथाविधिसे तेलको तय्यार कर मुखपै मालिश करनेसे ७ सात रात्रिमेंही मुखगत मक्षिका रोग नष्ट होकर मुखचंद्रमाके समान शोभायमान होजाताहै ॥ ७०-७३ ॥

अथ द्वितीयमंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

मधुयष्टीपलेवारांद्वात्रिंशच्चपलानिवै ।
पादशेषोभवेत्काथोक्काथांशंतिलतैलकम् ॥ ७४ ॥
पुनर्मरिचमंजिष्ठेप्रत्येकंचपलार्द्धकम् ।
तैलशेषंपचेत्सर्वंलेपोऽयंमुखवर्णकृत् ॥ ७५ ॥

अर्थ–मुलैठी ८ आठ तोले जल बत्तीस ३२ पल, शेष १ सेर, तिलकातेल ८ आठ तोले और कल्कके लिये काली मिरच २ दो तोले और मँजीठ २ दो तोले लेकर यथाविधिसे तेलको पकावे. जब तेल शेष रहजाय तब उतारलेवे । इस तेलको मुखपै मलनेसे व्यंगरोगादि नष्ट होकर मुख उज्ज्वल होजाता है ॥७४ ॥ ७५ ॥

अथ तृतीयमंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

मंजिष्ठामधुकंलाक्षामातुलुंगंसयष्टिकम् ।
कर्षप्रमाणैरेतैस्तुतैलस्यकुडवंपचेत् ॥ ७६ ॥
अजाक्षीरञ्चद्विगुणंशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥
नीलिकापिडकाव्यंगानभ्यंगादेवनाशयेत् ॥ ७७ ॥
मुखंप्रसन्नोपचितंवलीपलितवर्जितम् ।
सप्तरात्रप्रयोगेणमुखंस्यात्कांचनप्रभम् ॥ ७८ ॥

अर्थ–तिलका तेल ऽ॥आधसेर, बकरीका दूध एकसेर और मँजीठ, मुलेठी, लाख, बिजोरानीबू और महुवा, प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे तेलको सिद्ध करे । इस तेलको मुखादिमें मर्दन करनेसे नीलिका, पिड़का, व्यंगादि मुखदूषितरोग सात दिनमें नष्ट होजातेहैं ।मुखमंडल उज्ज्वल और कांचनके तुल्य दीप्तिमान् होजातांहै और वलीपलितादि रोग दूर होजातेहैं ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथ कुंकुमाद्यंतैलम् ।

कुंकुमंकिंशुकंलाक्षामंजिष्ठारक्तचंदनम् ।
कालीयकंपद्मकञ्चमातुलुंगस्यकेशरम् ॥ ७९ ॥
कुसुम्भंमधुयष्टीचफलिनीमदयन्तिका ।

निशिगोरोचनापद्ममुत्पलश्चमनःशिला ॥ ८० ॥
काकोल्यादिसमायुक्तैरेतैरक्षसमैर्भिषक् ।
लाक्षारसपयोभ्याश्चतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ८१ ॥
कुंकुमाद्यमिदन्तैलमभ्यंगात्कांचनोपमम् ।
करोतिवदनंसद्यःपुष्टिलावण्यकान्तिदम् ॥ ८२ ॥
सौभाग्यलक्ष्मीजननंवशीकरणमुत्तमम् ॥ ८३ ॥

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, लाखका क्वाथ २ दोसेर, गायका दूध २ दो सेर, जल आठ ८ सेर और कल्कके लिये सर, ढाकके बीज, लाख, मँजीठ, लालचंदन, कलम्बक, पद्माख, विजोरे नीबूकी केशर, कुसुमके बीज, मुलेठी, फूलप्रियंगु, मोतियाकेफूल, हलदी, दारुहलदी, मैनशिल, गोरोचन, कमल, कुमुद, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि और वृद्धि प्रत्येक दो दो तोले लेकर, यथाविधिसे तैलको सिद्ध करै। इस तेलको मुखपै मलनेसे तत्कालही मुख कांचनके समान होजाताहै। यह तेल पुष्टि, लावण्य, कान्ति, सौभाग्य और लक्ष्मीको देवैहै। तथा उत्तम वशीकरण है ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

अथ गुदनिर्गमनिवृत्त्युपायः ।

कोमलंपद्मिनीपत्रंयःखादेच्छर्करान्वितम् ।
एतन्निश्चित्यनिर्दिष्टंनतस्यगुदनिर्गमः ॥ ८४ ॥
वृक्षाम्लकंचचांगेरीशुण्ठीपाठायवाग्रजम् ।
तक्रेणशीलयेत्पायुभ्रंशार्त्तानलदीपनम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–कमलके कोमल पत्तोंको बूराके साथ सेवन करनेसे काँच निकलनी बंद होजातीहै। विषांविल, चांगेरी, सोंठ, पान और जवाखार. इन सबको तक्रमें पीसके सेवन करनेसे गुदभ्रंश रोगवाले मनुष्यकी अग्नि दीपन होजातीहै ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

अथ चांगेरीघृतम् ।

चांगेरीकोलदध्यम्लयवक्षारसमायुतम् ।
घृतमुत्क्वथितंदेयंगुदभ्रंशरुजापहम् ॥ ८६ ॥
बदरस्य क्वाथः । दधिचांगेर्य्याः स्वरसः ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, चांगेरीका रस २ दोसेर, बेरोंका क्वाथ २ दोसेर खट्टादही २ दोसेर और जवाखार ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तेलको पकावे । इस तेलको मर्दन करनेसे गुदभ्रंश दूरहोताहै ॥ ८६ ॥

अथ मूषिकादितैलम् ।

मूषिकामांसकुडवंदशमूलंपलोन्मितम् ।
चित्रकंद्विपलंचात्रक्वाथश्चाष्टगुणेऽम्भसि ॥ ८७ ॥
पादावशेपंकर्त्तव्यंतैलंपाच्यंपयःसमम् ।
जीवनीयैस्तुतत्पादैःपचेन्मृद्वग्निनाभिषक् ॥ ८८ ॥
अभ्यंगान्नाशयत्याशुगुदभ्रंशंसुदारुणम् ।
भगंदरंगुदेशूलंनाडीदुष्टव्रणापहम् ॥ ८९ ॥

इति क्षुद्ररोगाध्यायः ।

अर्थ-तिलका तेल ४ चारसेर, गायकादूध ४ चारसेर, कल्कके लिये चूहे-का मांस ऽ॥ आधसेर, दशमूलकी औषधि प्रत्येक एक एक पल, चीना दो २ पल, जल १२८ एकसौ अट्ठाईस पल और कल्कके लिये जीवनीय गण १ एक सेर ले,यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे। इस तेलको गुह्यदेशमें मर्दन करनेसे दारुण गुदभ्रंश, भगन्दर, गुदशूल, नाडीव्रण और दुष्टव्रण नष्ट होजातेहैं ॥ ८७-८९॥

इति क्षुद्ररोगाध्यायः ।

अथ मुखरोगचिकित्साधिकारः ।

नत्रादौसामान्ययत्नाः ।

मुखदन्तमूलगलजाःप्रायोरोगाःकफास्त्रभूयिष्ठाः ।
तस्मात्तेपामसकृद्रक्तंविस्रापयेद्दुष्टम् ॥ १ ॥
शुद्धिर्नस्यंकवडाःकटुतिक्ताःकफरक्तहरंकर्म्म ।
यवतृणधान्ययुक्तंरूक्षैर्यूपादिकंहितंतेषु ॥ २ ॥

अर्थ-मुखरोग, मसूड़ेकेरोग और गलरोग, यह सब प्रायः कफ और रक्तजन्य होतेहैं, इस कारण इन सब रोगोंमें वारंवार दुष्ट रुधिरको निकलवाना चाहिये और वमन, विरेचन, नस्य, कटु और तिक्त द्रव्योंका कवल तथा कफ और दूषित रक्त नाशक क्रिया करनी चाहिये । उक्तरोगोंमें यव और तृणधानोंका भोजन रूक्षद्रव्योंके यूषादिके साथ पथ्य है ॥ १ ॥ २ ॥

अथौष्ठस्फुटनादिचिकित्सा।

ओष्ठप्रकोपेवातोत्थेशाल्वनेनोपनाहयेत् ।
मस्तिष्केचैवनस्येचतैलंवातहरंस्मृतम् ॥ ३ ॥
श्रीवेष्टकंसर्ज्जरसंगुग्गुलुंसुरदारुच ।
यष्टीमधुकचूर्णञ्चविदध्यात्प्रतिसारणम् ॥ ४ ॥
त्रिकटुःसर्जिकाक्षारःक्षारश्चयवशूकजः ।
क्षौद्रयुक्तंविधातव्यंएतच्चप्रतिसारणम् ॥ ५ ॥
प्रियंगुत्रिफलालोध्रंसक्षौद्रंप्रतिसारणम् ।
हितंचत्रिफलाचूर्णमधुयुक्तंप्रलेपनम् ॥ ६ ॥
तैलाक्तंसर्ज्जचूर्णंचजलधौतमनेकधा ।
लेपतःशतशोदृष्टमोष्ठस्फुटननाशनम् ॥ ७ ॥

अर्थ—वातजन्य ओष्ठप्रकोपमें शाल्वनस्वेदका प्रयोगकरे, और मस्तिष्करोगमें नासके लिये वातनाशक तेल प्रयोग करने चाहिये । श्रीवेष्टक, राल, गुग्गुलु, देवदारु और मुलेठी इन सब औषधोंका चूर्णकर प्रतिसारण करनेसे, अथवा सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जी और जवाखार इनको एकत्र पीस सहतमें मिलाके प्रतिसारण करनेसे या फूलप्रियंगु, हरड, बहेडा, आमला और लोध इनको भले प्रकारसे पीस सहतमें मिलाकर प्रतिसारण करनेसे अथवा त्रिफलेके चूर्णको सहतमें मिलाकर प्रलेप करनेसे या सज्जीको वारंवार जलमें धोकर तेलमें मिलाके लेप करनेसे ओष्ठस्फुटन दूर होजाताहै ॥ ३–७ ॥

अथ शीतादप्रशमनार्थमुपायाः ।

काशीशलोध्रकृष्णामनःशिलालप्रियंगुचव्योत्थम् ।
चूर्णमधुसंयुक्तंशीतादेपूतिमांसहरम् ॥ ८ ॥
कुष्ठंदार्वीलोध्रमब्दंसमंगापाठातिक्तातेजनीपीडिकाच ।
चूर्णंशस्तंघर्षणंतद्द्विजानांरक्तस्रावंहन्तिकण्डूरुजञ्च ॥ ९ ॥
प्रपौण्डरीकंमधुकंत्रिफलोत्पलसाधितम् ।
तैलंघृतंवानस्येनशीतादंप्रशमंनयेत् ॥ १० ॥

अर्थ—कसीस, लोध, पीपल, मैनशिल, हरिताल, फूलप्रियंगु और चव्य, इन सब औषधियोंका चूर्ण सहतमें मिलाकर शीतादरोगमें देनेसे पूतिमांस दूरहोताहै । कूठ, दारुहलदी, लोध, नागरमोथा, मँजीठ, पाढ कुटकी, चव्य, और असवरग, इनके चूर्णसे मसूढोंको घिसनेसे मसूढोंमेंसे रुधिरका निकलना, कण्डू, और पीड़ा दूर होजातीहै । पुण्डरिया, मुलेठी, त्रिफला, और कमलके साथ सिद्ध किये तेल या घीसे नास देनेसे शीतादरोग दूर होताहै ॥ ८-१० ॥

अथ दन्तपुप्पुटकादिचिकित्सा ।

दन्तपुप्पुटकेकार्यंतरुणेरक्तमोक्षणम् ।
सपंचलवणक्षारंसक्षौद्रंप्रतिसारणम् ॥ ११ ॥
विस्राविते दन्तवेष्टेव्रणन्तुप्रतिसारयेत् ।
शस्त्रेणदन्तवैदर्भेदन्तमूलानिशोधयेत् ॥ १२ ॥
ततःक्षीरंप्रयुंजीतक्रियाःसर्वाश्चशीतलः ।
तैलंमधुककाकोलीशर्करासाधितंहितम् ॥ १३ ॥
विद्रधौकटुतिक्तोष्णरूक्षैःकवललेपनम् ॥ १४ ॥

अर्थ—नवीनदन्तपुप्पुट रोगमें रक्तमोक्षण (फस्त) कराना हितकारीहै । पांचोंनोन और जवाखारको सहतमें मिलाकर दन्तवेष्ट रोगमें रक्तमोक्षण कराकर पश्चात् प्रतिसारणके द्वारा व्रण नष्ट करे । दन्तवैदर्भ रोगमें दन्तमूलोंको शुद्ध करके पश्चात् दूध और सर्व प्रकारकी शीतल क्रियाकरे । मुलेठी, काकोली और खांडके द्वारा सिद्ध किये हुए तेलसे भी दन्तवैदर्भ रोग दूर होताहै । कटु, तिक्त, रूक्ष और उष्ण द्रव्योंसे कवल और लेपनके द्वारा दन्तविद्रधि रोगकी चिकित्सा करनी चाहिये ॥ ११-१४ ॥

अथ दन्तचालचिकित्सा ।

चलद्दन्तास्थिरकरंकार्यंबकुलचर्वणम् ।
दन्तचालेहितंश्रेष्ठंतिलोग्राचर्वणंहितम् ॥ १५ ॥
दन्तकालेतुगण्डूषोबकुलत्वक्कृतोहितः ।
क्काथोवादशमूलस्यसस्नेहःकवलग्रहः ॥ १६ ॥
भद्रमुस्ताःपाठाव्योषविडंगारिष्टपल्लवैः ।

गोमूत्रपिष्टैर्गुटिकांछायाशुष्कांप्रकल्पयेत् ।
तांनिधायमुखेदद्यादन्तचालंजयेद्ध्रुवम् ॥ १७ ॥

अर्थ–मौलसिरीकी छालको चावनेसे चलदन्त रोग (दांतोंकाहिलना) स्थिर होजाताहै । तिल, और वच दोनोको मिलाकर चावनेसे अथवा मौलसिरीके रसके द्वारा कवल धारण करनेसे या दशमूलके क्राथको घृत या तेलके साथ कुल्ले करनेसे, या नागरमोथा, हरड़, सांठ, मिरच, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्ते इन सब औषधियोंको पीस गोलीवना छायामें सुखाकर मुखमें धारण करनेसे हिलतेहुए दांत स्थिर होजातेहैं ॥ १६–१७ ॥

अथ सहाचरतैलम् ।

तुलाघृतांनीलसहाचरस्यद्रोणेऽम्भसःसंस्रवणंयथावत् ।
कृत्वाचतुर्भागरसेचतैलंपचेच्छनैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥ १८ ॥
कल्कैरनन्ताखदिरारिमेदाजम्ब्वाम्रयष्टीमधुकोत्पलानाम् ।
तत्तैलमाश्वेवघृतंमुखेनस्थैर्य्यंद्विजानांविदधातिसद्यः १९॥

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, क्राथके लिये कटसरैया ६। सवाछे सेर, जल ३२ वत्तीस सेर, शेष ८ आठसेर और कल्कके लिये अनन्तमूल, खैर, दुर्गंध खैर, जामुन, आम,मुलैठी और कमल ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तैलको सिद्धकर मुखमें धारण करनेसे चलदन्त स्थिर होजातेहैं ॥१८॥१९॥

अथ बकुलाद्यंतैलम् ।

बकुलस्यफलंलोध्रंवज्रवल्लीकुरुण्टकम् ।
चतुरंगुलबघोलंवाजिकर्णोविनाशनम् ॥ २० ॥
एषांकषायकल्काभ्यांतैलपक्वंमुखेधृतम् ।
स्थैर्य्यंकरोतिदन्तानांचलतांपवनेनच ॥ २१ ॥

अर्थ–तिलका तेल २ दो सेर, जल वत्तीस सेर, क्राथके लिये मौलसिरीके फल, लोध, वज्रवल्ली, कटसरैया, अरण्ड, बबूर और पियासाल यह सब ऽ६। सवाछेसेर, शेष ८ आठसेर और कल्कके लियेभी येही सब औषधि ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तैलको सिद्ध करै । इस तैलको मुखमें धारण करनेसे वायुजन्य चलदन्त स्थिर होजातेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ कृमिदन्तकचिकित्सा ।

बृहत्यास्तुफलंपिष्ट्वासर्पिषासहदापयेत् ।
अस्यधूमोमुखेनैवधार्योदन्तरुजापहः ॥ २२ ॥
नीलीवायसजंघास्तुवज्रीणांमूलमेकैकम् ।
संचर्व्यदशनविधृतंदशनक्रुमिपातनंसद्यः ॥ २३ ॥
दन्तमूलक्रुमिहरंवासामूलस्यचर्वणम् ।
बीजपूरकमूलन्तुवागुजीबीजसंयुतम् ॥ २४ ॥
वर्त्तीकृतंदन्तदत्तंक्रुमिदन्तकनाशनम् ।
स्नुहार्कयोर्वादुग्धेनदन्तच्छिद्रप्रपूरणम् ॥ २५ ॥
फलान्यम्लानिशीताम्बुरूक्षान्नंदन्तधावनम् ।
तथातिकठिनान्भक्ष्यान्दन्तरोगीविवर्जयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ–कटाईके फलोंको घृतमें पीसकर उनका धुआँ मुखमें धारण करनेसे दन्तगतपीडा दूर होजातीहै । नील, या काकजंघा अथवा थूहरकी जडको चाबकर दाँतोंमें धारण करनेसे तत्काल दांतोंके कीडे गिर पडतेहैं । अडूसेकी जडको चावनेसे दन्तमूलगत कृमि नष्ट होजातेहैं । बिजौरेकी जड और बाप-चीके बीज दोनोको एकत्र पीस बत्ती बनाके दाँतोंमें रखनेसे कृमिदन्तकरोग दूर होताहै । थूहरका दूध अथवा आकका दूध दाँतोंमें भरनेसेभी कृमिदन्तक-रोग नष्ट होताहै । दन्तरोगी अम्लफल, शीतलजल, रूखा अन्न, दतौन और अत्यन्त कठिन पदार्थोंका भोजन त्याग देवे ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथोपजिह्वादिचिकित्सा ।

बलाक्काथोमाक्षिकसैन्धवगृहधूममालतीयुक्तः ।
गण्डूषेणनिहन्यादुपजिह्वांकण्ठशालूकञ्च ॥ २७ ॥
वचामतिविषांपाठांरास्नांकटुकरोहिणीम् ।
निःक्काथ्यपिचुमर्दञ्चकवलंतत्रयोजयेत् ॥ २८ ॥
क्षीरसिद्धेषुमुद्गेषुयूषश्चाप्यशनेहितः ।
मरिचातिविषापाठावचाकुष्ठाम्बुदैस्तथा ॥ २९ ॥
क्षौद्रयुक्तैःससिन्धूत्थैर्गलशुण्डींप्रघर्षयेत् ।

उपजिह्वांतथाहन्तिगलशुण्डीमशेषतः ॥
गलशुण्डीहरंतद्वच्छेफालीमूलचर्वणम् ॥ ३० ॥

अर्थ-खिरेटीके क्वाथमें सहत, सैंधानोन, वरकाधुआँ और मालतीके फूलांका चूर्ण मिलाकर गण्डूष धारण करनेसे उपजिह्विका और कण्ठशालूक रोग दूर होताहै । वच, अतीस, पाढ. रास्ना, कुटकी और नीमकीछाल, इनका क्वाथ बना कवल धारण करनेसे उपजिह्विका और कण्ठशालूक रोग दूर होताहै । दूधके साथ मूँगका यूप बनाकर उपजिह्विका और कंठशालूक रोगमें पथ्य देवे । कालीमिरच, अतीस, पाढ, वच, कूठ और नागरमोथा इन सब औषधियोंका चूर्ण कर सहत और सेंधानोन मिलाकर घिसनेसे गलशुण्डी रोग और उपजिह्वा रोग दूर होताहै । हारसिंगारकी जडको चाबनेसे गलशुण्डीरोग दूर होताहै ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

अथ रोहिणीचिकित्सा ।

साध्यानांरोहिणीनांचहितंशोणितमोक्षणम् ।
छर्द्दनंधूमपानञ्चगण्डूषोनस्यकर्म्मच ॥ ३१ ॥
वातिकन्तुगतेरक्तेलवणैःप्रतिसारयेत् ।
क्वाथोबृहत्पंचमूलाद्गण्डूषश्चात्रशस्यते ॥ ३२ ॥

अर्थ-साध्य कण्ठरोहिणी रोगमें रक्तमोक्षण, वमन, धूमपान, गण्डूषधारण और नस्यकर्म्म प्रयोग करना चाहिये । वातज कण्ठरोहिणी रोगमें प्रथम रक्तमोक्षण कराकर पश्चात् सेंधानोनके चूर्णके द्वारा प्रतिसारण अथवा बृहत्पंचमूलके क्वाथका गण्डूष धारण करनेसे विशेष लाभ होताहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथ कालकचूर्णम् ।

गृहधूमयवक्षारःपाठाव्योषरसांजनम् ।
तेजोह्वात्रिफलालौहंचित्रकंचेतिचूर्णितम् ॥ ३३ ॥
सक्षौद्रंधारयेदेतद्गलरोगविनाशनम् ।
कालकन्नामतच्चूर्णंदन्तस्यगलरोगनुत् ॥ ३४ ॥
तेजोह्वा चक्री । लौहं जारितपुटितम् ।

अर्थ-घरकाधुआँ, जवाखार, पाढ, सोंठ, मिरच, पीपल, रसौत, चव्य, हरड, बहेडा, आमला, लोहा और चीतेकी जड़ इन सबको एकत्र पीस सहत

मिलाके मुखमें धारण करनेसे दन्तरोग और गलरोग दूर होताहै,इसको कालकचूर्ण कहतेहैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

अथ पीतकचूर्णम् ।

मनःशिलायवक्षारोहरितालंससैन्धवम् ।
दार्वीत्वक्चेतितच्चूर्णमाक्षिकेणसमायुतम् ॥ ३५ ॥
मूर्च्छितंघृतमण्डेनकण्ठरोगेषुधारयेत् ।
मुखरोगेषुचश्रेष्ठंपीतकन्नामकीर्त्तितम् ॥ ३६ ॥

अर्थ—मैनाशिल, जवाखार, हरिताल, सेंधानोन और दारुहलदीकी छाल, यह सब समानभाग ले सहत मिला घृतसे मूर्च्छित कर मुखमें धारण करनेसे कण्ठरोग और मुखरोग नष्ट होताहै ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथाशेषदन्तरोगचिकित्सा ।

जातीपत्रपुनर्नवातिलकणाकौरण्टचकुष्ठंवचा ।
शुण्ठीदीप्यहरीतकंसमघृतंचूर्णमुखेधारितम् ॥ ३७ ॥
वातघ्नंकृमिकण्डुशूलदलनंसर्वामयघ्नंसकृत् ।
दुर्गन्धादिसमस्तदोषविमलंदन्तश्चवज्रायते ॥ ३८ ॥
सप्तच्छदोशीरपटोलमुस्तहरीतकीतिक्तकरोहिणीभिः ।
यष्ट्याह्वराजद्रुमचन्दनैश्चक्काथोहरेत्पाकमुखंनरस्य ३९
ताम्रपात्रेक्षणंपाच्यंअभयाचूर्णितंमधु ।
कठिनागुटिकाकार्यादन्तैर्धार्याकृमिंहरेत् ॥ ४० ॥

अर्थ—चमेलीके पत्ते, पुनर्नवा, तिल, पीपल, पियावाँसा, कूठ, वच, सोंठ, अजवायन और हरड यह सब द्रव्य समानभाग लेकर मुखमें धारण करनेसे वात, कृमि, कण्डू, शूल और दुर्गन्धादि सम्पूर्ण दोष दूर होकर दन्त निर्म्मल और वज्रके समान दृढ होजातेहैं। सतोनेकी छाल खश, पटोल, नागरमोथा, हरड, कुटकी, अमलतास और लालचंदनका क्वाथ बनाकर पीनेसे मुखपाक रोग दूर होजाताहै। हरडका चूर्ण और सहत दोनोको ताँबेके वासनमें मंद अग्निसे पकाकर शक्त गोली बनाकर दाँतोंमें रखनेसे दाँतोंके कीडे गिरजातेहैं ॥ ३७—४० ॥

अथ कृमिशूलादिचिकित्सा ।

कौशिकंहिंगुसौराष्ट्रींपिष्ट्वाचैवसमंजलैः ।
गुटिकांधारयेद्दन्तेकृमिशूलहरंपरम् ॥ ४१ ॥
यवचिञ्चाजयापुंखामूलंवाचूर्णमाहरेत् ।
चलद्दन्तादृढकराःप्रत्येकंदन्तघर्षणात् ॥ ४२ ॥
जातीकुरुण्टपत्रंवाचर्वयेत्प्रातरुत्थितः ।
स्थिराश्चचलितादन्तातत्काष्ठदंतधावनात् ॥ ४३ ॥

अर्थ–गूगुल, हींग और सोरठकी मिट्टी समानभाग ले जलमें पीसकर गोली बना दाँतोंमें रखनेसे कृमिशूल रोग नष्ट होताहै । शंखिनी, जयन्ती और शरफोंकेकी जड, इनमेंसे किसीएकका चूर्ण कर दाँतोंको घिसनेसे हिलतेहुए दाँत दृढ होजातेहैं।चमेलीके पत्ते,अथवा पियाबाँसेके पत्ते प्रातःकाल उठकर चाबनेसे तथा चमेलीकी लकडी या बाँसेकी लकडीसे दतोन करनेसे चलदन्त स्थिर होजातेहैं ॥ ४१–४३ ॥

अथान्यापिकृमिशूलादिचिकित्सा ।

मुण्डीशुण्ठीवचाकुष्ठंपाठाक्षौद्रविनिश्चितम् ।
गुटिकांधारयेद्दन्तेकृमिशूलहराभवेत् ॥ ४४ ॥
त्रिसूतंरौप्यमेकन्तुजम्बीराणांद्रवैर्युतम् ।
जम्बीरफलमध्यस्थंवस्त्रेवद्धात्र्यहंपचेत् ॥ ४५ ॥
क्षारमध्येसमुद्धृत्यगुटिकाभंततःपुनः ।
भावितंभानुदुग्धेनतालकंसूक्ष्ममुण्डितम् ॥ ४६ ॥
तन्मध्येगुटिकांक्षिप्त्वावस्त्रेबद्धादिनत्रयम् ।
मधुभाण्डगतंपच्यादुद्धृत्यचास्यधारितम् ॥ ४७ ॥
चलांश्चगलितान्दन्तान्सप्ताहात्कुरुतेदृढम् ॥ ४८ ॥

अर्थ–गोरखमुण्डी, सोंठ, बच, कूठ और पाढ यह सब औषधि समानभाग ले चूर्ण कर सहत मिलाकर गोली बना दाँतोंमें रखनेसे दन्तगत कृमिशूल नष्ट होजाताहै । पारा ३ तीनभाग और रूपा एक १ भाग, दोनोको एकत्र खरल करै, पश्चात् इसमें जम्भीरीनीबूका रस मिलाकर जम्भीरी नीबूके भीतर रख

वस्त्रसे बांध तीन दिनतक पकावे, पश्चात् खूब बारीक पिसी हुई हरितालको आकके दूधमें भावना दे जवाखारके साथ पूर्वोक्तमें मिलाकर गोली बना उक्त जम्भीरी नीबूमें भर वस्त्रसे बाँध सहतसे भरेहुए भाँडेमें डालकर ३ तीन दिनतक पकावे । इस औषधिको मुखमें धारण करनेसे ७ सात दिनमेंही चलदन्त निश्चल होजातेहैं ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अथ गलरोगचिकित्सा ।

पारदंविमलाताप्यंत्रिकटुस्ताम्रसैन्धवम् ।
तुल्यंगवांजलैःपिष्टंसुखोष्णंलेपयेन्मुहुः ॥ ४९ ॥
त्रिदिनात्कण्ठशालूकंगलगंडश्चनाशयेत् ।
तजोह्वांत्रिफलांलोहंचित्रकंचूर्णयेत्समम् ॥ ५० ॥
सक्षौद्रंलेपयेत्कण्ठंगलरोगप्रशान्तये ।
समंगाधातकीलोध्रश्यामापद्मकरेणुभिः ॥
अवचूर्ण्यंपाचनीयंयुञ्ज्याच्चमुखधावनम् ॥ ५१ ॥

अर्थ—पारा, विमला (सोनामाखीभेद) सोनामाखी, सोंठ, मिरच, पीपल, ताँबा और सेंधानोन यह सब औषधि समानभाग लेवे, फिर इनको गोमूत्रमें पीस किंचित् गरम करके बारंबार प्रलेप करनेसे ३ तीन दिनमेंही गलगण्ड और कंठशालूक रोग दूर होताहै । चव्य, हरड, बहेडा, आमला, लोहा, चीता, यह सब औषधि समान भाग ले बारीक चूर्ण करै, पश्चात् इस चूर्णमें सहत मिलाकर कण्ठमें लेप करनेसे गलरोग दूर होताहै । मँजीठ, धायके फूल, लोध, कारिया-बासाऊ, पद्माख और रेणुका इनका क्वाथ बनाकर अथवा चूर्ण कर तिस क्वाथ या चूर्णसे मुख धोनेसे सर्व प्रकारके गलरोग दूर होजातेहैं ॥ ४९-५१ ॥

अथ पूतिगन्धहरयोगाः ।

वनकुष्ठैलाधान्याकयष्टीमध्वेलवालुकैः ।
वदनस्थंपूतिगंधंहरतिमुरालशुनगंधंच ॥ ५२ ॥
चूर्णैः कवलः ।
कोपफलकुष्ठमरुवकभृंगैर्वर्त्तिःकृताधृतावक्त्रे ।
घोरमुखपूतिगंधंहत्वाकुरुतेऽतिकमनीयम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—नागरमोथा, कूठ, छोटीइलायची, धनियाँ, मुलैठी और एलुआ, इन सब औषधियोंका कवल धारण करनेसे अथवा कपूरकचरी, लहशुन और

एलुआ इनका चूर्ण कर कवल धारण करनेसे मुखकी दुर्गन्ध दूर होतीहै । जायफल, कूठ, मरुवेके फूल और भांगरा, इन सब द्रव्योंको एकत्र पीस वत्ती बनाकर मुखमें धारणकरनेसे मुखकी घोर दुर्गन्ध दूर होजातीहै ॥५२॥५३॥

अथेरिमेदाद्यंतैलम् ।

इरिमेदत्वक्पलशतमापोथ्यखण्डशःकृत्वा ।
तोयाढकैश्चतुर्भिर्निःक्काथ्यंचतुर्दशाहेन ॥ ५४ ॥
क्काथेनतेनमतिमांस्तैलस्याद्धाढकंपचेत् ।
कल्कैरक्षप्रमाणैर्मंजिष्ठालोध्रमधुकानाम् ॥ ५५ ॥
कट्फललाक्षान्यग्रोधमुस्तसूक्ष्मैला ।
कर्पूरागुरुपद्मकलवंगकंकोलजातीनाम् ॥ ५६ ॥
फलपत्तंगगैरिकवराङ्गगजकुसुमधातकीनाम् ।
सिद्धंभिषग्विदध्यादिदंमुखोत्थेषुरोगेषु ॥ ५७ ॥
परिशीर्णदन्तविद्रधिशौषिरशीतादन्तहर्षेषु ।
कृमिदन्तहरणचलितप्रकृष्टमांसावशीर्णेषु ॥ ५८ ॥
मुखादौकुष्ठेकार्यंप्रागुक्तेष्वामयेषुतैलमिदम् ॥ ५९ ॥

अर्थ-तिलका तेल ८ आठसेर, क्काथके लिये खैर ६। सवाछेसेर, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष ८ आठ सेर, इस क्काथको चौदह दिनमें पकावे, तथा कल्कके लिये मँजीठ, लोध, मुलेठी, कायफल, लाख, वटांकुर, नागरमोथा, छोटीइलायची, कपूर, अगर, पद्माख, लौंग, कंकोल, जायफल, चमेलीके फूल, लालचंदन, गेरू, दालचीनी, नागकेशर और धायके फूल,प्रत्येक २ दो तोले ले, यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे, यह तेल-सर्वप्रकारके मुखरोग, शीर्णदन्त, दन्तविद्रधि, शौषिर, शीताद, आदि रोगोंको दूर करैहै ॥ ५४-५९ ॥

अथ लाक्षाद्यंतैलम् ।

तैलंलाक्षारसंक्षीरंपृथक्प्रस्थेसमंपचेत् ।
चतुर्गुणेरिमेदक्काथेद्रव्यैश्चपलसम्मितैः ॥ ६० ॥
लोध्रकट्फलमंजिष्ठापद्मकेशरपद्मकैः ।
चन्दनोत्पलयष्ट्याह्वैस्तैलंगण्डूषधारणम् ॥ ६१ ॥

द लनंदन्तचालञ्चदन्तमोक्षंकपालिकाम्।
शीतादंपूतिवक्त्रत्वमरुचिंविरसास्यताम्॥
हन्यादाशुगदानेतान्कुर्याद्दन्तानपिस्थिरान्॥ ६२॥

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, लाखका क्वाथ २ दो सेर, गायका दूध २ सेर, दुर्गन्ध खैरका क्वाथ ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये–लोध, कायफल, मँजीठ, कमलकेशर, पद्माख, लालचंदन, कमल और मुलेठी, प्रत्येक ४ चार तोले ले यथाविधिसे तेलको पकाकर गण्डूष धारण करनेसे दालन, दन्तचालन, दन्तमोक्षादि, नाना प्रकारके दंतगत और मुखगत रोग दूर हो जाते हैं॥ ६०–६२॥

अथ सहकारिवटिका।

एलालतालवलिकाफलशीतकोष–
कोलद्विकानिखदिरस्यकृतेकषाये।
तुल्यांशकानिदशभागमितेनिधाय
प्रोद्भिन्नकेतकिपुटेचपुटंविपाच्य॥ ६३॥
प्रागंशतुल्यशशिनाभितदेकशस्तं
पिष्टानवेनसहकाररसेनहस्तौ।
लिप्त्वायथाभिलषितांगुटिकांविदध्या–
त्स्त्रीपुंसयोर्वदनसौरभवल्गुतास्यात्॥ ६४॥

अर्थ–इलायची, लताकस्तूरी, लवंगफल, कपूर, जायफल, कंकोल और अगर यह सब औषधि समानभाग ले दशगुने खैरके क्वाथमें मिलाकर केतकीपुटमें स्थापन कर पकावे, शीतल होनेपर निकाल लेवे, पश्चात् इसमें पूर्वभागकी समान एकभाग कपूर और एक भाग कस्तूरी मिला लेवे, फिर कलमी आमके रसको हथेली लेपकर पूर्वोक्त औषधिकी गोलियें बनालेवे। इन गोलियोंको मुखमें धारण करनेसे स्त्री पुरुष दोनोंका मुखमण्डल सुगंधित और कमनीय होजाताहै॥ ६३॥६४॥

अथ स्वल्पखदिरवटिका।

खदिरस्यतुलांसम्यग्जलद्रोणेविपाचयेत्।
अष्टभागावशेषेणदद्यादत्रघनीकृते॥ ६५॥

जातीकपूरपूगानिकंकोलकफलानिच ।
इत्येषागुटिकाकार्यासुखसौभाग्यवर्द्धिनी ॥ ६६ ॥
दन्तोष्ठमुखरोगेषुजिह्वाताल्वाशयेषुच ॥ ६७ ॥

अर्थ–६ छेसेर खैरके टुकडोंको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावे, जब आठमा भाग शेष रहजाय तब उतारकर छान लेवे, पश्चात् इस छनेहुए क्काथको फिर पकावे, जब गाढा होजाय तब जावित्री, कपूर, शीतलचीनी, सुपारी और जायफल, प्रत्येक ४ चार तोले मिलाकर गोली बनालेवे। यह गोली–सुख और सौभाग्यको बढानेवालीहै, तथा मुखरोग, तालुरोग और दन्तरोगादिको दूर करैहै ॥ ६५–६७ ॥

अथ बृहत्खादिरवटिका ।

गायत्रिसारतुलामरिमेदवल्कलानां
सार्द्धतुलायुगलमम्लघटैश्चतुर्भिः ।
निःक्वाथ्यपादमवशिष्यसुवस्त्रपूतं
भूयःपचेदथशनैर्मृदुनानलेन ॥ ६८ ॥
तस्मिन्घनत्वमुपगच्छतिचूर्णमेषां
क्षिप्रंक्षिपेच्चकवडग्रहभागिकानाम् ॥
एलामृणालसितचंदनचंदनाम्बु ।
श्यामातमालविकषाघनलौहयष्टी ॥ ६९ ॥
लज्जाफलत्रयरसांजनधातकीभिः
श्रीपुष्पगैरिककटंकटकट्फलानाम् ।
पद्माह्वलोध्रवटरोहयवासकानां
मांसीनिशासुरभिवल्कलसंयुतानाम् ॥ ७० ॥
कक्कोलजातिफलकोषलवंगकानि
चूर्णीकृतानिविदधीतपलांशिकानि ।
शीतेऽवतार्य्यघनसारचतुष्पलञ्च
क्षिप्त्वाकलायसदृशींगुटिकांप्रकुर्यात् ॥ ७१ ॥

शुष्कामुखेविनिहिताविनिवारयन्ति ।
रोगान्गलौष्ठरसनाद्विजतालुजातान् ।
कुर्यान्मुखेसुरभितांपटुतारुचिञ्च
स्थैर्यंपरंदशनगंरसनालघुत्वम् ॥ ७२ ॥

अर्थ—खैरसार १२॥ साढ़ेबारहसेर और दुर्गन्धखैरकी छाल ३१। सवाइकतीस सेर, पाकके लिये काँजी ४ द्रोण, शेष १ एकद्रोण रक्खै इस काढेको उत्तम रीतिसे छानकर फिर पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब छोटी इलायची, खश, सफेदचंदन, लालचंदन, सुगंधवाला, करियावासाऊ, श्यामतमालकी छाल, मँजीठ, नागरमोथा, अगर, मुलेठी, लज्जावंती, हरड़, वहेडा, आमला. रसौत, धायकेफूल, पुण्डेरिया, गेरू, दारुहलदी, कायफल, पद्माख, लोध, वडके अंकुर, धमासा, बालछड, हलदी, कुन्दुरु, दालचीनी, शीतलचीनी, जायफल, जावित्री और लौंग प्रत्येक चार चार तोले, मिलादेवे, जब शीतल होजाय तब १६ सोलह तोले कपूरका चूर्ण मिलाकर मटरकी समान गोलियें बनालेवे । इन गोलियोंको सुखाकर मुखमें धारण करनेसे—गलरोग, ओष्ठरोग जिह्वारोग, दन्तरोग और तालुरोग दूर होतेहैं । मुखमें सुगंधि पटुता, और रुचि उत्पन्न होतीहै ॥ ६८–७२ ॥

अथ सप्तामृतरसः ।

मृतसूताभ्रकंतुल्यंमृतलोहंशिलाजतु ।
गुग्गुलुश्वशिलाताप्यंसमांशंमधुनालिहेत् ॥
मासमात्रप्रयोगेणमुखरोगंविनाशयेत ॥ ७३ ॥

इति मुखरोगचिकित्साध्यायः ।

अर्थ—पारेकीभस्म, अभ्रककीभस्म, लोहेकीभस्म, शुद्धशिलाजीत, शुद्धगूगुल मैनशिल और सोनामाखी यह सब समानभाग ले चूर्ण कर सहतमें मिलाकर चाटनेसे एक महीनेमें ही सर्वप्रकारके मुखरोग दूर होजातेहैं और दांतोंमें दृढ़ता उत्पन्न होतीहै और जिह्वामें कोमलता उत्पन्न होतीहै ॥ ७३ ॥

इति मुखरोगचिकित्सासमाप्ता ।

अथकर्णरोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौसामान्ययत्नाः ।

सामान्यकर्णरोगेषुघृतपानंरसायनम् ।
अव्यायामोऽशिरःस्नानंदिवास्वप्नमभाषणम् ॥ १ ॥
कपित्थमातुलुंगाम्बुश्रृंगवेररसैःशुभैः ।
सुखोष्णैःपूरयेत्कर्णंकर्णशूलोपशान्तये ॥ २ ॥

कपित्थस्य फलम् ।

लशुनार्द्रकशिग्रूणांसुरङ्ग्यामूलकस्यच ।
कदल्याःस्वरसःश्रेष्ठंकदुष्णःकर्णपूरणे ॥ ३ ॥

सुरंगी रक्तशोभांजनः ।

अर्थ—सामान्य कर्णरोगोंमें घृतपानही रसायनहै । व्यायाम (कसरत) नहीं करना, शिरसे स्नान नहीं करना, दिनमें नहीं सोना और वहुत कम बोलना यह सब कर्णरोगोंमें विशेष हितकारी हैं । कैथा, बिजोरेनींबूका रस और अदरखका रस इनको गरम करके कानमें डालनेसे—कर्णशूल नष्ट होताहै । लहशुन, अदरख, सँजिना, लालसँजिना, मूली और केला इनका किंचित् गरम रस कानमें भरनेसे शूल नष्ट होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ कर्णशूलहरयोगाः ।

आर्द्रकसूर्यावर्त्तशोभाञ्जनमूलकस्वरसाः ।
मधुतैलसैन्धवयुताःपृथगुक्ताःकर्णशूलहराः ॥ ४ ॥
कोष्णशिग्रुरसःकर्णेतिलतैलेनशूलनुत् ।
अर्कपत्रपुटेदग्धःस्नुहीपत्रभवोरसः ॥
कदुष्णःपूरणादेवकर्णशूलनिवारणः ॥ ५ ॥
अर्कस्यपत्रंपरिणामपीतमाज्येनलिप्तंशिखिनावतप्तम् ।
आपीड्यतोयंश्रवणेनिषिक्तंनिहन्तिशूलंबहुवेदनाञ्च ६॥

अर्थ—अदरख, हुलहुल और सैंजिनेकी जडका रस अलग २ सहत, तेल, सैंधानोनके साथ कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होताहै । किंचित् गरम सैंजिनेका रस तिलोंके तेलमें मिलाकर कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होताहै ।

आकके पत्तोंके पुटमें पकायाहुवा थूहरके पत्तोंका रस किंचित् गरम करके कानमें डालनेसे निश्चय कर्णशूल, नष्ट होताहै । आकके पकेहुए पीले पत्तोंपै घृत चुपडके आगमें गरम कर कानमें निचोड़नेसे कर्णशूल और अत्यन्त पीडा दूर होजातीहै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथान्येऽपिकर्णशूलप्रयोगाः।

तीव्रशूलयुतेकर्णेसशब्देक्लेदवाहिनि ।
बस्तमूत्रंक्षिपेत्कोष्णंसैन्धवेनसमन्वितम् ॥ ७ ॥
अंगारपूर्णात्तैलाक्तादश्वत्थदलखल्लकात् ।
च्युतंतैलंजयेत्सद्यःपूरणात्कर्णवेदनाः ॥ ८ ॥

अर्थ—कानमें शूलकी समान तीव्र वेदना, शब्द और क्लेद होय तो बकरेके मूत्रमें सैंधेनोनका चूर्ण डाल गरम करके कानमें डाले । पीपलके पत्तोंको तेल या घी मिलाके खरल कर अंगारोंकी आगपै धरदेवे, उन अंगारोंमेंसे जो तेलकी बूँदें टपकें, उन बूँदोंको कानमें डालनेसे कानकी पीडा दूर होतीहै ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ हिंग्वाद्यंतैलम्।

हिंगुतुम्बुरुशुण्ठीभिःसाध्यंतैलन्तुसार्षपम् ।
कर्णशूलेप्रधानन्तुपूरणंहितमुच्यते ॥ ९ ॥

अर्थ—सरसोंका तेल २ दो सेर और कल्कके लिये हींग, कडवी तोंबी और सोंठ यह सब आधसेर लेकर, यथाविधिसे तेलको पकावे । इस तेलको कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होताहै ॥ ९ ॥

अथ रास्नादिगुग्गुलुः।

रास्नाघृतैरण्डसुराह्वविश्वंतुल्यंपुरेणाथविमर्द्यखादेत् ।
वातामयीकर्णशिरोगदीचनाडीव्रणीचापिभगन्दरीच॥१०॥

अर्थ—रास्ना, घृत, अरण्ड, देवदारु, सोंठ, यह सब समानभाग और सबकी बराबर गूगुल ले एकत्र खरल कर सेवन करनेसे वातरोग, कर्णरोग, शिरोरोग, नाडीव्रण और भगंदर रोग नष्ट होजातेहैं ॥ १० ॥

अथ क्षारतैलम्।

बालमूलकशुण्ठीनांक्षारोहिंगुसनागरम् ।
शतपुष्पावचा[illegible]देवदारुशिग्रुरसांजनम् ॥ ११ ॥

सौवर्चलंयवक्षारःस्वर्जिकोद्भिदसैन्धवम्।
मातुलुंगरसंचैवकदल्यारसएवच ॥ १२ ॥
तैलमेभिर्विपक्तव्यंकर्णशूलहरंपरम्।
बाधिर्य्यंकर्णनादश्चपूयास्रावश्चदारुणः ॥ १३ ॥
पूरणादस्यतैलस्यकृमयःकर्णसंश्रिताः।
क्षिप्रंविनाशंगच्छन्तिकृष्णात्रेयस्यशासनात् ॥ १४ ॥
क्षारतैलमिदंश्रेष्ठंमुखकर्णामयापहम्।
मधुप्रधानंशुक्तञ्चमधुशुक्तंतथापरम् ॥ १५ ॥
जम्बीरस्यफलरसंपिप्पलीमूलसंयुतम्।
मधुभाण्डेविनिक्षिप्यधान्यराशौनिधापयेत् ॥ १६ ॥
मासेनतज्जातरसंमधुशुक्तमुदाहृतम् ॥ १७ ॥

अर्थ–तिलकातेल, दोसेर, बिजोरे नीबूकारस २ दोसेर, केलेका रस २ सेर और कल्कके लिये कच्ची सूखी मूलीका खार.हींग,सोंठ, सोया, बच, कूठ, देव· दारु, सैंजिनेकी जडकी छाल, रसौत, कालानोन, जवाखार, सज्जी, औद्भिदनोन और सैंधेनोनका चूर्ण प्रत्येक ऽ॥ आधसेर लेकर, यथाविधिसे तेलको पकावे। यह तेल कर्णशूल, बधिरता, कर्णनाद, पूयस्राव और कानके कीडोंको दूर करैहै, तथा मुख और सम्पूर्ण कानके रोगोंको दूर करैहै। यह क्षारतैल कृष्णात्रेयने कहाहै। अनुपान;मधुप्रधान शुक्त तथा मधुशुक्त है मधुशुक्त बनानेकी विधि यह है कि जम्भीरी, निम्बूका रस और पीपलामूलके चूर्णको सहतसे भरेहुए वासनमें डालके धानोंके ढेरमें धरदेवे, पश्चात् १ एक महीनेके वाद निकाललेवे, उस बासनकेही रसको मधुशुक्त कहतेहैं ॥ ११–१७ ॥

अथ कर्णरोगहरनस्यम्।

गुडविश्वाम्बुनानस्यंनादबाधिर्ययोर्हितम् ॥ १८ ॥

अर्थ–सोंठके काथमें गुड डालकर नास देनेसे कर्णनाद और बधिरता दूर होतीहै ॥ १८ ॥

अथ स्वर्जिकाद्यंतैलम्।

स्वर्जिकामूलकंशुष्कंहिंगुकृष्णामहौषधम्।
शतःष्पाचतैस्तैलंपक्त्वाशुक्तचतुर्गुणम् ॥ १९ ॥

प्रणाद२ लबाधिर्यस्रावश्चाशुव्यपोहति ॥ २० ॥

अर्थ—तेल दो २ सेर, काँजी ८ आठसेर और कल्कके लिये सज्जी, सूखी-मूली, हींग, पीपल, सोंठ और सोया यह सब ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे। इस तेलको कानमें डालनेसे कर्णनाद, कर्णशूल, बधिरता और पूयस्राव दूर होताहै ॥ १९ ॥ २० ॥

अथ दशमूलीतैलम्।

दशमूलीकषायेणतैलप्रस्थंविपाचयेत्।
एतत्कल्कंप्रदायैवबाधिर्येपरमौषधम् ॥ २१ ॥

अर्थ—तेल २ दो सेर, दशमूलका काथ ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये भी दशमूलका चूर्ण ऽ॥ आधसेर लेकर, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे बधिरता दूर होतीहै ॥ २१ ॥

अथ बिल्वतैलम्।

फलंबिल्वस्यमूत्रेणपिष्ट्वातैलंविपाचयेत्।
साजक्षीरंतद्धिहरेद्बाधिर्यंकर्णपूरणम् ॥ २२ ॥

अर्थ—तेल २ दोसेर, बकरीकादूध ८ आठसेर और कल्कके लिये गोमूत्रमें पिसाहुवा बेल ऽ॥ आधसेर लेकर; यथाविधिसे तेलको सिद्ध कर कानमें डालनेसे बधिरता दूर होजातीहै ॥ २२ ॥

अथ जातीतैलम्।

जम्ब्वाम्रपत्रंतरुणंसमांशंकपित्थकर्पासफलञ्चसार्द्रम्।
क्षुत्त्वारसन्तंमधुनाविमिश्रंस्रावापहंसंप्रवदन्तितज्ज्ञाः २३॥
चूर्णाधिकन्तुताम्बूलंसंचर्व्यास्यरसेनतु।
पूरणान्निपतन्त्याशुमृताःकारण्डकादयः ॥ २४ ॥
नीलबह्लारसस्तैलमिन्धुकांजिकसंयुतम्।
कदुष्णापूरणात्कर्णेनिःशेषकृमिपातनम् ॥ २५ ॥
घृष्टंरसांजनंनार्याःक्षीरेणक्षौद्रसंयुतः।
प्रशस्यतेचिरोत्थेचसस्रावेपूतिकर्णके ॥ २६ ॥
निर्गुण्डीस[illegible]तैलंसिन्धुधूमरजोगुडः।

पूरणात्पूतिकर्णस्यशमनोमधुसंयुतः ॥
जातीपत्ररसेतैलंविपक्कंपूतिकर्णजित् ॥ २७ ॥

अर्थ–कच्चे जामुनके पत्ते, कच्चे आमके पत्ते, कच्चा कैथाका फल, कच्चे कपासके फल और अदरख इनको समानभाग ले कूटकर रस निकाललेवे, पश्चात् इस रसमें सहत मिलाकर कानमें डालनेसे पूयादिस्राव दूर होताहै । पानमें अधिक चूना लगाकर पानको चावके तिसका रस कानमें डालनेसे कानके समस्त कीड़े मरजातेहैं । नीलबोनेका रस, तेल, सैंधानोन और काँजी इनको एकत्र किंचित् गरम करके कानमें डालनेसे कानके सब कीड़े गिरजातेहैं । स्त्रीके दूधमें रसौतको विसकर सहत मिलाके कानमें डालनेसे बहुत दिनोंका स्राव युक्त पूतिकर्ण नष्ट होजाताहै । सम्हालूका रस, तेल, सैंधानोन, घरके धुँएका चूर्ण, गुड़, और सहत एकत्र मिलाकर कानमें डालनेसे पूतिकर्णरोग दूर होताहै । चमेलीके पत्तोंके रसमें तेलको पकाकर कानमें डालनेसे पूतिकर्ण रोग दूर होजाताहै॥२३–२७॥

अथ कुष्ठादितैलम् ।

कुष्ठहिंगुवचादारुशताह्वाविश्वसैन्धवम् ।
पूतिकर्णापहंतैलंबस्तमूत्रेण साधितम् ॥ २८ ॥

अर्थ–तिलकातेल २ दोसेर, वकरीका मूत्र ८ आठसेर तथा कल्कके लिये कूठ, हींग, वच, दारुहलदी, सोया, सोंठ और सेंधानोन. यह सब ऽ॥ आधसेर लेकर यथानियमसे तेलको सिद्ध कर कानमें भरनेसे पूतिकर्ण रोग शान्त होताहै ॥ २८ ॥

अथ बृहच्छम्बूकाद्यं तैलम् ।

प्रस्थंशम्बूकमांसस्यकटुतैलश्चतत्समम् ।
कुष्ठंभृंगोरजोवासाह्यर्कपत्रंस्नुहीघनम् ॥ २९ ॥
बिल्वंशालिश्चपत्रंचकेशरंनागकेशरम् ।
द्राक्षाचातिविषाचैवयष्टीमधुकमेवच ॥ ३० ॥
शटीचैरण्डकार्पासभृङ्गकेशरजस्यच ।
एतेषांकर्षमादायपचेत्तलंभिषग्वरः ॥ ३१ ॥
तस्यपूरणमात्रेणकर्णनाडीप्रशाम्यति ।

बाधिर्यंकर्णनादश्च:यास्त्रावंसुदारुणम् ॥ ३२ ॥
चक्षूरोगंशिरोरोगंनाशयेत्तिमिरार्बुदम् ॥ ३३ ॥

अर्थ–कडवातेल २ दो सेर, शम्बूकका मांस २ दो सेर, तथा कूठ, दालचीनी, पित्तपापडा, अडूसा, आकके पत्ते, थूहरके पत्ते, नागरमाथा, बेल, शालिंचके पत्र, केशर, नागकेशर, दाख, अतीस, मुलेठी, कचूर, अरण्ड, कपास, भांगरा और कुकुरभांगरा यह सब ऽ॥ आधसेर लेकर, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्णनाडी, बधिरता, कर्णनाद, नेत्ररोग, शिरोरोग, तिमिररोग और अर्बुदरोग नष्ट होता है ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३॥

अथ शम्बूकाद्यंतैलम् ।

शम्बूकमांसकल्केनकटुतैलंविपाचयेत् ।
अस्य पूरणमात्रेणकर्णनाडीप्रशाम्यति ॥ ३४ ॥

अर्थ–कडवा तेल २ दोसेर और शम्बूकका मांस ऽ॥आधसेर दोनोंको मिलाकर यथाविधिसे टपकाकर कानमें डालनेसे कर्णनाडी रोग नष्ट होताहै ॥३४॥

अथ धुस्तूरतैलम् ।

निशागन्धपलेपक्वंकटुतैलंपलाष्टकम् ।
धुस्तूरपत्रजरसेकर्णनाडीजिदुत्तमम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–कडवातेल १ एकसेर,धतूरेके पत्तोंका स्वरस ४ चार सेर और कल्कके लिये हलदी ४ चार तोले और गंधक चार ४ तोले ले यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्ण नाडी रोग दूर होताहै ॥ ३५ ॥

अथ कर्णस्फोटचिकित्सा ।

केतकीशिग्रुलवणमारनालेनपेषयेत् ॥
कर्णमूलस्थितंस्फोटंलेपनाच्चव्यथापहम् ॥ ३६ ॥
पुत्रजीवस्यमज्जानंजलेपिष्ट्वाप्रलेपयेत् ।
शोथंहन्ति गलेकर्णे कर्णस्फोटंविशेषतः ॥ ३७ ॥

अर्थ–केतकी, सैंजिना, सैंधानोन और कांजी इन चारोंको एकत्र पीसके लेपकरनेसे कर्णमूलस्थित पीडा और स्फोटक नाश होजातेहैं । पतिजियाके फलोंकी मींगको जलमें पीसके लेप करनेसे कर्णशोथ, गलशोथ और कर्णस्फोट नष्ट होताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथ कर्णपालीवृद्धियोगः ।

मूषलीकन्दमूलञ्चमहिषीनवनीतयुक् ।
गोलयित्वाक्षिपेद्भाण्डेधान्यराशौनिवेशयेत् ॥ ३८ ॥
सप्ताहादुद्धृतेलेपंकर्णपालीविवर्द्धनम् ।
चर्म्मचटस्यरक्तेनलेपात्कर्णंविवर्द्धते ॥ ३९ ॥
अश्वगन्धावचाकुष्ठंगजपिप्पलिकासमम् ।
महिषीनवनीतेनलेपात्कर्णंविवर्द्धते ॥ ४० ॥

अर्थ—मुसलीकी जडको भैंसके माखनमें मिलाके गोला वनालेवे, उस गोलेको एकबासनमें स्थापनकर उस वासनको धानोंके ढेरमें धरदेवे, सात ७ दिनके बाद उसको निकालकर कानमें प्रलेप करनेसे कर्णपाली बढतीहै। चर्म्मचटके रुधिरको लेप करनेसे कर्ण बढताहै। असगन्ध, वच, कूठ और गजपीपल समान भाग ले भैंसके दूधमें पीसकर लेप करनेसे कर्णपाली बढतीहै ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथ जीवनाद्यंतैलम् ।

कल्केनजीवनीयेनतैलंपयसिसाधितम् ।
आनूपमांसक्काथेनपालिशोषणवर्द्धनम् ॥ ४१ ॥

अर्थ—तेल २ दोसेर, क्वाथके लिये अनूपदेशके जीवोंके मांस आठसेर और कल्कके लिये जीवनीयगणकी औषधि आधसेर लेकर यथाविधिमें तेलको पकाकर कानोंमें मलनेसे शुष्क कर्णपाली वढजातीहै ॥ ४१ ॥

अथ गन्धकतैलम् ।

निशागन्धपलेद्वेतुकटुतैलंपलाष्टकम् ।
धूर्त्तपत्ररसेसिद्धंकर्णनाडीजिदुत्तमम् ॥ ४२ ॥

अर्थ—कडवातेल १ एकसेर, गंधक और हलदी प्रत्येक चारतोले धतूरेके पत्तोंका रस २ दोसेर ले यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्णनाडीरोग नष्ट होताहै ॥ ४२ ॥

अथ निर्गुण्डीतैलम् ।

निर्गुण्डीस्वरसैःतैलंसिन्धुधूमरजोगुडः ।
पूरणात्पूतिकर्णस्यशमनोमधुसंयुतः ॥ ४३ ॥

अर्थ—कडवातेल, २ दो सेर, सम्हालूकारस ८ आठसेर और कल्कके लिये सेंधानोन, घरका धुआँ और गुड ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे तेलको पकाकर सहतके साथ प्रयोग करनेसे पूतिकर्ण रोग शांत होताहै ॥ ४३ ॥

अथ शतावरीतैलम् ।

शतावरीवाजिगन्धापयस्यैरण्डबीजकैः ।
तैलंपक्कंसमंक्षीरंपालीनांपुष्टिवर्द्धनम् ॥ ४४ ॥

इति कर्णरोगाध्यायः ।

अर्थ—तेल २ दो सेर, गायका दूध २ सेर और कल्कके लिये शतावर, असगंध, विदारीकन्द और अरण्डके बीज ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे तेलको सिद्धकर कानमें मलनेसे कर्णपाली पुष्ट होतीहै ॥ ४४ ॥

इति कर्णरोगाध्यायः ।

अथ नासारोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ व्योषादिचूर्णम् ।

व्योषचित्रकतालीशतिन्तिडीचाम्लवेतसम् ।
सचव्यजाजीतुल्यांशंएलात्वक्पत्रपादिकम् ॥ १ ॥
तच्चव्योषादिकंचूर्णंपुराणगुडसंयुतम् ।
पीनसश्वासकासघ्नंरुचिस्वरकरम्परम् ॥ २ ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, चीतेकी जड, तालीसपत्र, इमली, अमलबेंत, चव्य और जीरा प्रत्येक औषधिका चूर्ण १ एक भाग और दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायची प्रत्येकका चूर्ण चौथाई भाग लेकर सबको एकत्र पीस पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करनेसे पीनस, श्वास और कास रोग दूर होताहै, तथा रुचि और स्वरको करैहै ॥ १ ॥ २ ॥

अथ दाडिमाद्यंचूर्णम् ।

यःपिबतिशयनकालेशयनारूढःसुशीतलंभूरि ।
सलिलंपी[illegible]ःसोऽपिचमुच्यतेऽत्रयोगेन ॥ ३ ॥
द्वेपलेदाडिमाद[illegible]खण्डा[illegible]पिपलद्वयम् ।

त्रिसुगन्धिपलश्चैकंचूर्णमेकत्रकारयेत् ॥
दीपनंरुचिरंस्वर्य्यंपीनसज्वरकासनुत् ॥ ४ ॥

अर्थ-जो मनुष्य रात्रिमें सोतेहुए शय्यापर शीतल जलको पीताहै उसका पीनसरोग निश्चय दूर होजाताहै। अनारकी छाल २ दोपल खांड ८ आठपल, सोंठ २ दोपल, पीपल २ दोपल, कालीमिरच २ दोपल, छोटी इलायची १ एकपल, तेजपात १ एक पल और दालचीनी १ एकपल, सबको एकत्र पीसकर चूर्ण करलेवे। यह चूर्ण-अग्निप्रदीपक रुचिकारक, स्वरको शुद्ध करनेवाला, पीनस रोगको हरनेवाला ज्वरको नष्ट करनेवाला और खाँसीको दूर करैहै ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथ त्रिफलाद्यंचूर्णम्।

त्रिफलाचपलासैन्धवचूर्णसक्षौद्रमशितमथसायम्।
पीनसशोषश्वासाञ्जयतीहकफसंभवान्वितम् ॥ ५ ॥

अर्थ-हरड़, बहेडा, आमला, पीपल और सेंधानोन यह सब औषधि समान भाग ले बारीक चूर्णकर सहतके साथ सायंकालमें सेवन करनेसे पीनस, शोष श्वास और कफजनित रोग दूर होतेहैं ॥ ५ ॥

अथ पाठाद्यंतैलम्।

पाठाद्विरजनीमूर्वापिप्पलीजातिपल्लवैः।
दन्त्याचतैलंसंसिद्धंनस्यंसम्पक्कपीनसे ॥ ६ ॥

अर्थ-पाढ़, हलदी, दारुहलदी, मूर्वा, पीपल, चमेलीके पत्ते और दन्तीकी जड़ यह सब औषधि कल्कके लिये ऽ॥ आधसेर और तेल २ दोसेर ले इस तेलको पकाकर नास देनेसे पक्कपीनस रोग शान्त होताहै ॥ ६ ॥

अथ कलिंगाद्यंतैलम्।

कलिङ्गहिंगुमरिचलाक्षासुरसकट्फलैः।
कुष्ठोग्राशिग्रुजन्तुघ्नैरवपीडःप्रशस्यते ॥ ७ ॥
तैरेवमूत्रसंयुक्तैःकटुतैलंविपाचयेत्।
पीनसेपूतिनस्येचशमनंकीर्त्तितंपरम् ॥ ८ ॥

अर्थ-इन्द्रजौ, हींग, मिरच, लाख, तुलसी, कायफल, कूठ, बच, सैंजिना और वायविडंगके द्वारा अवपीड (नस्यविशेष) प्रयोग करनेसे पीनस और

पूतिनस्य रोग दूर होतेहैं । कडवातेल २ दो सेर, गोमूत्र ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये इन्द्रजौ, हींग, कालीमिरच, लाख, तुलसी, कायफल, कूठ, बच, सैंजिना और वायविडंग यह सब ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे तेलको पकाकर नास देनेसे पीनस और पूतिनस्य रोग दूर होताहै ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ चित्रहरीतकी ।

चित्रकस्यामलक्याश्चगुडूच्यादशमूलजम् ।
शतंशतंरसंदत्त्वापथ्याचूर्णाढकंगुडात् ॥ ९ ॥
शतंपचेद्घनीभूतेपलंद्वादशकंक्षिपेत् ।
व्योषत्रिजातयोःक्षारात्पलार्द्धमपरेऽहनि ॥ १० ॥
प्रस्थार्द्धंमधुनोदत्त्वायथाग्र्यद्यादमैथुनः ।
वृद्धयेऽग्नेःक्षयंकासंपीनसंदुस्तरंक्रमीन् ॥
गुल्मोदरार्त्तदुर्णामश्वासान्हन्तिरसायनम् ॥ ११ ॥

अर्थ–चीतेकी जडका रस १२॥ साढे बारह सेर, आमलोंका रस १२॥ साढे बारह सेर, गिलोयका रस १२॥ साढे बारह सेर दश मूलका क्वाथ साढे-बारह सेर, हरडका चूर्ण ८ आठसेर और गुड १२॥ साढे बारह सेर सबको मिलाके पकावे, जब देखे कि खूब गाढा होगया तब सोंठका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, कालीमिरचोंका चूर्ण, छोटी इलायचीका चूर्ण, दालचीनीका चूर्ण, और तेजपानका चूर्ण प्रत्येक १२ बारह पल और जवाखार का चूर्ण २ दो तोले मिलादेवे । फिर एक दिनके बाद १ एक सेर सहत मिलादेवे । इस औषधिको सेवन करनेसे अग्नि बढ़तीहै तथा क्षय, खांसी, पीनस, दुस्तरकृमि, गुल्म, उदररोग, बवासीर और श्वासको यह महारसायन नष्ट करैहै ॥९–११॥

अथ पूतिनस्यादिचिकित्सा ।

व्याघ्रीदन्तीवचाशिग्रुसुरसव्योषसैंधवैः ।
पाचितंलवणंतैलंपूतिनामागदंजयेत ॥ १२ ॥
त्रिकटुविडंगसैन्धवबृहतीफलशिग्रुदन्तीभिः ।
तैलंगोजलसिद्धंनस्येस्यात्पूतिनस्यस्य ॥ १३ ॥
पूयास्त्ररक्तपित्तघ्नकषायलवणानिच ।

चिरोत्थेतत्रयुञ्जीतनाडीव्रणहरंविधिम् ॥ १४ ॥
सोषणंगुडसंयुक्तंशिग्रुर्दध्यम्लभोजनम् ॥ १५ ॥

अर्थ-कटेरी, दन्तीकी जड, बच, सांजिना, तुलसी, त्रिकुटा और सैंधानोन, इन सब औषधियोंके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे पूतिनस्यरोग दूरहोताहै। त्रिकुटा, बायबिडंग, सैंधानोन, कटाईकेफल, सैंजिना, दन्तीकी जड, और गोमूत्र, इनकेसाथ तेलको पकाकर नस्यदेनेसे पूतिनस्यरोग दूर होताहै। नाकमेंसे राध और रुधिर निकलताहोय तो रक्तपित्त नाशक पाचन और नस्यादि देवे। कालीमिरचोंका चूर्ण, सैंजिनेकी जडका चूर्ण और गुड, इन तीनोंको मिला कर सेवन करनेसे प्रतिश्याय रोग दूरहोताहै, इसपै खट्टा दहीखावे ॥ १२-१५॥

अथ गृहधूमाद्यंतैलम् ।

व्योषंपृथक्समस्तंवाजम्बीरमथवार्द्रकम् ।
गुडयुक्तंप्रतिश्यायीप्राग्भुक्तमुपयोजयेत् ॥ १६ ॥
अर्शोऽर्बुदन्तुशस्त्रेणच्छेदयेत्कर्त्तितंतथा ।
गृहधूमकणादारुक्षारनक्ताह्वसैन्धवैः ॥
सिद्धंशिखरिबीजैश्चतैलंनासार्शसांहितम् ॥ १७ ॥

नक्ताह्वं करंजबीजम् ।

अर्थ-सोंठ, पीपल और कालीमिरच, इन तीनोको अलग अलग अथवा एकत्र पीसकर जम्भीरी निम्बूके रसके साथ या अदरखके रसके साथ अथवा गुडके साथ भोजनके पहिले खानेसे प्रतिश्याय रोग दूर होताहै । नासिकामें अर्शांकुर वा अर्बुद होय तो शस्त्रसे छेदन करे। घरका धुआँ, पीपल, देवदारु, जवाखार, करंजके बीज, सेंधानोन और चिरचिटेके बीज इनसब औषधियोंके साथ तैलको पकाकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूर होताहै॥ १६॥ १७॥

अथ करवीराद्यंतैलम् ।

करवीरस्यनक्तस्यमालत्यास्फोतयोरपि ।
पुष्पकल्कैःशृतंतैलंनासार्शोनाशनंपरम् ॥ १८ ॥

अर्थ-कनेर, हलदी, मालती और अपराजिताके फूलोंका कल्क बना तिस कल्कसे तेलको सिद्धकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूर होताहै ॥१८॥

अथ चित्रकाद्यंतैलम् ।

चित्रकचविकादीप्यकनिदिग्धिकाकरंजबीजलवणार्कैः ।
गोमूत्रयुक्तसिद्धंतैलंनासार्शसांहितंपरम् ॥ १९ ॥

इति नासारोगाध्यायः ।

अर्थ–तेल २ दोसेर, गोमूत्र ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये चीता, चव्य, अजवायन, कटेरी, करंजके बीज, सैंधानोन, और आक ले यथाविधिसे तैलको सिद्धकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूर होताहै ॥ १९ ॥

इति नासारोगाध्यायः ।

अथ चक्षूरोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सामान्ययत्नाश्चिकित्साच ।

प्राग्रूपएवाभिस्यन्देतीक्ष्णगण्डूषधारणम् ।
कारयेदुपवासश्चकोपादन्यत्रवातजात् ॥ १ ॥
श्रीवासातिविषालोध्रैश्चूर्णितैरल्पसैन्धवैः ।
अव्यक्तेऽक्षिगदेकार्यंप्रोतस्थैर्गुण्डलंबहिः ॥ २ ॥

श्रीवासो देवदारुः ।

अर्थ–नेत्राभिष्यन्दरोगके पूर्वरूपमें ही तीक्ष्ण द्रव्योंका गण्डूष धारण करे और वातजको छोडकर नेत्राभिष्यन्द रोगमें लंघन करावे । श्रीवास (देवदारु) अतीस, लोध, और थोडासा सैंधानोन, सबको एकत्र पीस वस्त्रमें बाँध पोटली बना दोनो आँखोंमें लगावे तो अव्यक्त नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ १ ॥ २ ॥

अथ नेत्ररोगादिचिकित्सा ।

लंघनालेपनस्वेदशिरव्यधविरेचनैः ।
उपाचरेदभिष्यन्दमञ्जनाश्च्योतनादिभिः ॥ ३ ॥
आक्षिकुक्षिभवारोगाःप्रतिश्यायव्रणज्वराः ॥
पंचैतेपंचरात्रेणरोगानश्यन्तिलंघनात् ॥ ४ ॥

अर्थ–लंघन, प्रलेप, स्वेद, शिरावेध, विरेचन, अञ्जन और आश्च्योतनादि द्वारा नेत्राभिष्यन्द रोगकी चिकित्सा करे । नेत्ररोग, कुक्षिरोग, प्रतिश्याय, व्रण और ज्वर यह पाँचरोग पाँचदिनमें केवल लंघन करानेसे ही दूर होजाते-हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथाक्षिरोगेपाचनानिपथ्यश्च ।

स्वेदःप्रलेपस्तिक्तानांसेकस्स्रावचतुष्टयम् ।
लंघनंचाक्षिरोगाणामामानांपाचनानिषट् ॥ ५ ॥
अंजनंपूरणंक्काथपानमामेनशस्यते ।
स्नानंचसर्पिषःपानंतथैवगुरुभोजनम् ॥ ६ ॥
पथ्यंपटोलकर्कोटतण्डुलीयकवास्तुकैः ॥
घृतसिद्धैःसवार्त्ताकैःमुद्गयूषेणजाङ्गलैः ॥ ७ ॥

अर्थ–स्वेद, प्रलेप, तिक्तद्रव्योंका सेक, स्राव, लंघन, पाचन, अंजन पूरण, क्काथपान, घृतपान और भारी पदार्थोंका भोजन यह सब अपक्क नेत्ररोगमें प्रयोग करना चाहिये । घृतमें सिद्ध किये हुए पटोल, ककोडे, चौलाई, बथुआ और बैंगनका शाक, मूंगका यूष और जांगल देशके जीवोंके मांसका यूष यह सब इसमें पथ्य हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

अथ नवदृक्कोपहरयोगाः ।

धात्रीफलनिर्यासोनवदृक्कोपंनिहन्तिपूरणतः ।
शिखरीजमूलंताम्रजेभाजनेस्तोकसैन्धवोन्मिश्रम् ॥८॥
मस्तुनिघृष्टंभरणाद्धरतिद्विनवलोचनात्कोपम् ॥ ९ ॥
पथ्याकल्कोघृतेभृष्टौबहिर्लेपोऽक्षिकोपहा ॥ १० ॥
सैन्धवदारुहरिद्रागैरिकपथ्यारसांजनैःपिष्टैः ।
दत्तोबहिःप्रलेपोभवत्यशेषाक्षिरोगहरः ॥ ११ ॥

अर्थ–आमलोंका रस नेत्रोंमें भरनेसे नवीनदृष्टि रोग दूर होताहै । चिरचिटेकी जड, थोडासा सैंधानोन और दहीका पानी इनको एकत्र ताँबेके बासनमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे नवीन नेत्ररोग दूर होताहै । हरडको पीस घृतमें भूनकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे नेत्र रोग दूर होताहै । सैंधानोन, देवदारु, हलदी, गेरू, हरड और रसौत इन सबको एकत्र पीस नेत्रोंके ऊपर लगानेसे नाना प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ ८–११ ॥

अथाक्षिरोगप्रलेपाः ।

गिरिमृच्चन्दननागरखटिकासंयोजितोबहिर्लेपः ।
कुरुतेवचयामिश्रोलोचनमगदंनसन्देहः ॥ १२ ॥
भूम्यामलकीघृष्टासैंधवगृहवारियोजिताताम्रे ।
जाताघनत्वमक्ष्णोर्जयतिबहिर्लेपतःपीडाम् ॥ १३ ॥
बृहत्यैरण्डमूलत्वक्छिग्रोर्मूलंससैन्धवम् ।
अजाक्षीरेणपिष्टंस्याद्वर्त्तिर्वाताक्षिशूलनुत् ॥ १४ ॥

अर्थ—गेरू, लालचंदन, सोंठ, खडियामिट्टी और बच इन सबको एकत्र पीस नेत्रोंके ऊपर प्रलेप करनेसे अनेक प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं भुईआमला और सेंधेनोनको काँजीके द्वारा तांबेके बासनमें गाढा घिसकर नेत्रोंपै लेप करनेसे नेत्रोंकी पीडा दूर होतीहै । कटाई, अरण्डकी जडकी छाल, सैंजिनेकी जड और सेंधानोन, इनको एकत्र बकरीके दूधमें पीस बत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे वातजन्य नेत्ररोग दूर होताहै ॥ १२–१४ ॥

अथाभिष्यन्दपित्ताक्षिरुक्चिकित्सा ।

हरिद्रेमधुकंपथ्यादेवदारुचपेषयेत् ।
आजेनपयसाश्रेष्ठमभिस्यन्देतदञ्जनम् ॥ १५ ॥

पथ्यास्थाने द्राक्षा इत्यपि पाठः ।

गैरिकंसैंधवंकृष्णानागरंचयथोत्तरम् ।
पिष्टद्भिरशनोऽद्भिर्वागुटिकाञ्जनमिष्यते ॥ १६ ॥
मंजिष्ठाचन्दनानन्तालेपःपित्ताक्षिशूलनुत् ।
प्रपौण्डरीकयष्ट्याह्वनिशामलकपद्मकैः ॥
शीतैःसितासमायुक्तैःसेकःपित्ताक्षिशूलनुत् ॥ १७ ॥

अर्थ—हलदी, दारुहलदी, मुलहटी, हरड, (कोई वैद्य हरडके स्थानमें दाख डालते हैं) और देवदारु इन सबको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें आंजनेसे नेत्रगत अभिष्यन्द रोग दूर होताहै । गेरू १ एक भाग, सेंधानोन २ दो भाग पीपल ३ तीन भाग, सोंठ ४ चार भाग, इन चारोंको दूने जलमें पीसकर गोली बना नेत्रोंमें लगानेसे नेत्ररोग दूर होताहै। मँजीठ, लालचंदन और अनन्त-

मूल इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे पित्तजनित चक्षुशूल दूर होताहै । पुण्डेरिया, मुलेठी, हलदी, आमला, पद्माख और खांड इनको एकत्र पीसकर शीतल प्रलेप करनेसे पित्तजनित नेत्रशूल नष्ट होताहै ॥ १५-१७ ॥

अथ कफाक्षिरोगचिकित्सा ।

शुण्ठीनिम्बदलैःपिष्टैःसुखोष्णैःस्वल्पसैंधवैः ।
धार्यश्चक्षुषिसंक्षेपाच्छोथकण्डूव्यथापहः ॥ १८ ॥
वल्कलंपारिभद्रस्यतैलकांजिकसैन्धवम् ।
कफोद्भूताक्षिरोगघ्नंतरुघ्नंकुलिशंयथा ॥ १९ ॥

अर्थ-सोंठ, नीमके पत्ते और थोडासा सेंधानोन इनको एकत्र पीस किंचित् गरम करके नेत्रोंमें लगानेसे थोडे ही दिनोंमें नेत्रोंकी सूजन, कंडू और पीडा शान्त होतीहै । फरहदकी छाल, तेल, कांजी और सेंधानोन इन सबको एकत्र ताँबेके बासनमें घिस अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे कफजनित नेत्ररोग दूर होताहै ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ बिल्वांजनम् ।

बिल्वपत्ररसःपूतःसैन्धवाज्यलवणान्वितः ।
ताम्रेवराटिकाघृष्टोधूपितोगोमयाग्निना ॥ २० ॥
स्तन्येनालोडितश्चाक्ष्णोःपूरणाच्छोथशूलनुत् ।
अभिस्यन्देऽधिमन्थेचरक्तस्रावेचशस्यते ॥ २१ ॥
गोमयं छायाशुष्कम् ।

अर्थ-बेलके पत्तोंके स्वरसको वस्त्रमें छानकर सेंधानोन और घृत मिलाकर ताँबेके बासनमें रख लेवे, पश्चात् इसमें कौडीको घिसकर सूखे उपलोंकी अग्निसे धूपित कर स्त्रीके दूधमें आलोडन करके आँखोंमें भरनेसे नेत्रोंकी सूजन, शूल, अभिष्यन्द, अधिमन्थ और रक्तस्राव दूर होताहै ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ वातकफाक्षिरोगचिकित्सा ।

सलवणकटुतैलंकांजिकंकांस्यपात्रे
घनितरुपलघृष्टंधूपितंगोमयाग्नौ ॥
सपवनकफकोपंछागदुग्धावसिक्तं
जयतिनयनशूलंस्रावशोथंसरागम् ॥ २२ ॥

अर्थ–सैंधानोन, कडवातेल और काँजी इन तीनोको काँसीके पात्रमें पत्थरकी मुँगरीसे घिसे, जब गाढा होजाय तब उपलोंकी अग्निसे धूपित कर नेत्रोंमें लगावे तो वातश्लैष्मिक नेत्ररोग शान्त होताहै । और इस औषधिको बकरीके दूधमें मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे नेत्रशूल, चक्षुस्राव, चक्षुशोथ और नेत्रोंकी लाली दूर होजातीहै ॥ २२ ॥

अथ वासादिक्काथः ।

अटरूषाभयानिम्बधात्रीमुस्ताक्षकू (कु) लकैः ।
रक्तस्रावंकफंहन्तिचक्षुष्यंवासकादिकम् ॥ २३ ॥

अर्थ–अडूसा, हरड, नीमकी छाल, आमला, नागरमोथा, बहेडा और पटोल यह सब औषधि समान भाग ले क्काथ बनाकर पीनेसे नेत्रोंका रक्तस्राव और कफ दूर होताहै ॥ २३ ॥

अथ बृहद्वासकादिक्काथः ।

वासाघनंनिम्बपटोलपत्रंतिक्तामृताचन्दनवत्सकत्वक् ।
कलिंगदार्वीदहनंसनागरंभूनिम्बधात्र्यप्यभयाविभीतम् २४
श्यामायवक्काथमथाष्टशेषंपिबेदिमंपूर्वदिनेकषायम् ।
तैमिर्यकण्डूपटलार्बुदञ्चशुक्रंसरागंव्रणमव्रणञ्च ॥ २५ ॥
काचञ्चपैल्वञ्चमहारुजञ्चनक्तान्ध्यरोगंश्वयथुंसशूलम् ।
वासादिरेषःप्रथितप्रभावोनिहन्तिसर्वान्नयनामयांश्च ॥२६॥

अर्थ–अडूसा, नागरमोथा, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, गिलोय, लालचंदन, कुडेकी छाल, इन्द्रजौ, दारुहलदी, चीतेकी जड, सोंठ, चिरायता, आमला, हरड, बहेडा, करियावासाऊ और जौ यह सब औषधि समान भाग ले अष्टावशेष क्काथ बनाकर दूसरे दिनमें पीनेसे नेत्रगत तिमिररोग, कण्डू, पटल, अर्बुद, शुक्र, रक्तवर्णता, व्रण, काच, पिल्व, आभ्यंतरपीडा, रात्र्यन्धता और शूलसदृश वेदना युक्त शोथ रोग दूर होताहै ॥ २४–२६ ॥

अथाशेषाक्षिरोगघ्नक्काथः ।

गुडूचीत्रिफलाक्काथोमधुनासहयोजितः ।
पीतःसर्वाक्षिरोगघ्नःकृष्णाचूर्णावचूर्णितः ॥ २७ ॥

विभीतकशिवाधात्रीपटोलारिष्टवासकैः।
क्वाथोगुग्गुलुनापेयःशोथशूलाक्षिपाकनुत्॥ २८॥
सपिल्वंसव्रणंशुक्रंरागादींश्चविनाशयेत्।
एतैश्चापिघृतंपक्वंरोगांस्तांश्चव्यपोहति॥ २९॥
गुग्गुलोः कल्कः।

अर्थ–गिलोय, हरड, आमला और बहेडा, इनका क्वाथ बना पीपलका चूर्ण और सहत मिलाकर पीनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होजातेहैं। हरड, बहेडा, आमला, पटोल, नीमकी छाल और अडूसेकी छालका क्वाथ बना शुद्ध गूगुल मिलाकर पान करनेसे अक्षिरोग, अक्षिशूल और अक्षिपाक, तथा पिल्वरोग, व्रणराग, शुक्ररोग और रक्तवर्णतादि नाना प्रकारके नेत्ररोग, दूर होतेहैं। घी दो सेर, क्वाथके लिये हरड बहेडा, आमला, पटोल, नीमकी छाल और अडूसेकी छालका क्वाथ ८ आठ सेर तथा कल्कके लिये गूगुल ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे अक्षिशोथ, अक्षिशूलादि सम्पूर्ण पूर्वोक्त रोग दूर होजाते हैं॥ २७–२९॥

अथ चन्दनाद्यावर्त्तिः।

चन्दनंगैरिकंलाक्षामालतीकणिकाःसमाः।
व्रणशुक्रहरावर्त्तिःशोणितस्यप्रसादिनी॥ ३०॥

अर्थ–लालचंदन, गेरू, लाख, मालती और पीपल, यह सब औषधि समान भाग ले वत्ती बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे नेत्रव्रण और शुक्र रोग दूर होता है, तथा रुधिरकी प्रसन्नता उत्पन्न होतीहै॥ ३०॥

अथ चन्द्रोदयावर्त्तिः।

हरीतकीवचाकुष्ठंपिप्पलीमरिचानिच।
विभीतकस्यमज्जाचशंखनाभिर्मनःशिला॥ ३१॥
सर्वमेतत्समंकृत्वाछागीक्षीरेणपेषयेत्।
वर्त्तिश्चन्द्रोदयानामनृणांदृष्टिप्रसादिनी॥ ३२॥
नाशयेत्तिमिरंकण्डूंपटलान्यर्बुदानिच।

अधिकानिचमांसानि श्वरात्रौनपश्यति ॥
अपिद्विवार्षिकंपुष्पंमासेनैकेनसाधयेत् ॥ ३३ ॥

अर्थ–हरड, बच, कूठ, पीपल, कालीमिरच, बहेडेकी मींग, शंखनाभि और मैनशिल, यह सब औषधि बकरीके दूधमें पीसकर बत्ती बना नेत्रोंमें लगानेसे दृष्टि प्रसन्न होतीहै, तथा तिमिररोग, कण्डू, पटलरोग, अर्बुदरोग, अधिक मांसरोग, रात्र्यन्धता और दोवर्षका फूला दूर होजाताहै ॥ ३१–३३ ॥

अथ त्रिकट्वादिवर्तिः ।

त्रीणिकटूनिकरञ्जफलानिद्विरजनीसहसैन्धवकञ्च ।
बिल्वतरोर्वरुणस्यचमूलंवारिचरंदशनंप्रवदन्ति ॥ ३४ ॥
हन्तितमस्तिमिरंपटलञ्चपिच्चिटशुक्रमथार्ज्जुनकञ्च ।
अंजनकंजनरञ्जनकंचदृगंचनपश्यतिवर्षशतञ्च ॥ ३५ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, करंजकेफल, हलदी, दारुहलदी, सैंधानोन, बेलकीजड, वर्नाकी जड और शंखनाभि, यह सब औषधि समान भाग ले एकत्र पीसकर आँखोंमें आँजनेसे–तमोरोग, तिमिररोग, पटलरोग, पिच्चट, शुक्र, अर्जुन और रात्र्यन्धरोग दूर होताहै ॥ ३४–३५ ॥

अथ नागार्जुनवटिका ।

त्रिफलाव्योषसिन्धूत्थंयष्टीतुत्थंरसांजनम् ।
प्रपौण्डरीकंजन्तुघ्नंलोध्रंताम्रंचतुर्द्दश ॥ ३६ ॥
द्रव्याण्येतानिसंक्षुभ्यवर्तिःकार्यानताम्बुना ।
नागार्जुनेनलिखितास्तम्भेपाटलिपुत्रके ॥ ३७ ॥
नाशिनीतिमिराणाञ्चपटलानांतथैवच ।
सद्यःप्रकोपंस्तन्येनस्त्रियोविजयतेध्रुवम् ॥ ३८ ॥
किंशुकस्वरसेनाथपैल्वपुष्पकरक्तता ।
अंजनाल्लोध्रतोयेनआसन्नतिमिरंजयेत् ॥ ३९ ॥
टिरंसञ्छादितनेत्रवस्तमूत्रेणसंयुता ।
उन्मीलयतिकृच्छ्रेणप्रसादंचाधिगच्छति ॥ ४० ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानोन, मुलैठी, तूतिया, रसौत, पुण्डेरिया, वायविडंग, लोध और ताँवा, यह सब औषधि समान भागलेकर भलेप्रकारसे पीस लेवे, फिर अनन्तमूलके काढेमें भावनादे वत्ती वनाके नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग और पटलरोग दूर होताहै। स्त्रीके दूधमें वत्तीबनाकर नेत्रोंमें लगानेसे तत्काल प्रकोप नष्ट होताहै। टेसूके स्वरसमें वत्तीबनाकर नेत्रोंमें लगानेसे विल्वपुष्पक और रक्तवर्णता रोग दूर होताहै। लोधके क्काथमें अंजनबनाकर लगानेसे–आसन्नतिमिररोग दूर होताहै ॥ और वकरीके मूत्रमें वत्तीवनाकर दोनों नेत्रोंमें लगानेसे बंदनेत्र खुलजाते हैं ॥ ३६–४० ॥

अथ चन्द्रप्रभावर्तिः।

अंजनंश्वेतमरिचंपिप्पलीमधुयष्टिका।
विभीतकस्यमज्जाचशंखनाभिर्मनःशिला ॥ ४१ ॥
एतानिसमभागानिछागीक्षीरेणपेषयेत्।
छायाशुष्कीकृतांवर्तिनेत्रेषुचप्रयोजयेत् ॥ ४२ ॥
अर्बुदंपटलंकाचंतिमिरंरक्तराजिकाम्।
अधिमांसंमलश्चैवयश्चरात्रौनपश्यति ॥
वर्त्तिश्चन्द्रप्रभानामजात्यन्धमपिसाधयेत् ॥ ४३ ॥
श्वेतमरिचं शोभांजनबीजम्।

अर्थ–अंजन, सैंजिनेके बीज, पीपल, मुलेठी, वहेडेकी मींग, शंखनाभि और मैनशिल यह सब औषधि समान भाग ले वकरीके दूधमें पीस वत्तीवनाकर छायामें सुखादेवे। इनको नेत्रोंमें लगानेसे अर्बुद, पटल, काच, तिमिर, रक्तराजिका, अधिमांस, मल, रात्र्यन्धता और जन्मांधता दूर होतीहै ॥ ४१–४३ ॥

अथ तिमिरहरयोगाः।

चंदनत्रिफलापूगपलाशतरुशोणितैः।
पिष्टैरियंकृतावर्तिरशेषतिमिरापहा ॥ ४४ ॥
नीलोत्पलंविडंगानिपिप्पलीरक्तचंदनम्।
रसाञ्जनंसैन्धवञ्चनक्तंतिमिरनाशनम् ॥ ४५ ॥

बिसंधात्रीफलरसैर्दिनैकंपरिभावितम्।
अंजनंताम्रसहितंप्रगाढतिमिरप्रणुत्॥ ४६॥
द्विनिशासैन्धवंत्र्यूपंबीजंकारञ्जकंसमम्।
भृंगराजयुतंमर्द्यंतिमिरंपटलंहरेत्॥ ४७॥
मनःशिलाहतंनागंनागाद्विगुणरूप्यकम्।
किंचित्कर्पूरसंमर्द्यंद्रोणपुष्परसैर्दिनम्।
वर्त्तिरेषाह्यभिष्यन्दिनाशायगजकेसरी॥ ४८॥

अर्थ-लालचंदन, हरड़, बहेड़ा, आमला और सुपारी इन सब औषधियोंको ढाकके रसमें पीस वत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग दूर होताहै। नीले-कमल, बायबिडंग, पीपल, लालचंदन, रसौत और सैंधानोन यह सब औषधि एकत्र पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे तत्काल तिमिर रोग दूर होताहै। कमलकन्द (भँसीडे) को आमलोंके रसमें भावना दे पश्चात् अंजन और ताँबा मिला वत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे प्रगाढ़ तिमिररोग दूर होताहै। हलदी, दारुहलदी, सैंधानोन, सोंठ, मिरच, पीपल और करंजके बीज यह सब औषधि समान भाग ले भांगरेके रसमें खरलकर नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग और पटलरोग दूर होताहै। मैनशिलसे मारा हुआ सीसा १ एकभाग, रूपा २ दो भाग और कुछ थोडासा कपूर इन तीनोंको गूमाके रसमें खरल कर वत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे नेत्राभिष्यन्द रोग दूर होताहै॥ ४४-४८॥

अथ तारकाद्यावटिका।

तारंताम्रंरसंसीसंकर्पूरंखर्परंतथा।
रसांजनंकांस्यशंखंहंसपद्याद्रवैर्दिनम्॥
वर्तिंकृत्वाञ्जनाद्धन्तिसमस्तंनेत्रजामयम्॥ ४९॥

अर्थ-चाँदी, ताँबा, पारा, सीसा, कपूर, खपरिया, रसौत, काँसी और शंख इन सब औषधियोंको एकत्र हंसपदीके रसमें एकदिन खरल कर वत्ती बना लेवे, इन वत्तियोंको आँखोंमें लगानेसे सर्व प्रकारके नेत्र रोग दूर होतेहैं॥ ४९॥

अथ नेत्राञ्जनम्।

टंकणंरसकंपिष्ट्वाजम्बीरैःकांस्यभाजने।
पक्ष्मरोगंकण्डूंरक्तस्रावञ्चनाशयेत्॥ ५०॥

निशाद्वयाभयामांसीकुष्ठकृष्णाविचूर्णिताः।
सर्वनेत्रामयंहन्यादेतत्सौगतमंजनम् ॥ ५१ ॥

अर्थ–खपरिया और सुहागेको काँसीके बासनमें स्थापन कर जम्भीरी नीबूका रस डालके खरल करे, फिर इसको आँखोंमें लगानेसे पक्ष्मरोग, कण्डू और रक्तस्राव दूर होताहै। हलदी, दारुहलदी, हरड़, बालछड, कूठ और पीपल. यह सब समानभाग ले अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे–सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर, होतेहैं ॥ ५० ॥ ५१ ॥

अथ शुक्रादिरोगहराञ्जनम्।

कण्टकारीकृतंक्वाथंवस्त्रपूतंपुनःपचेत्।
घनीभूतंसमादायलौहभाण्डेनिधापयेत् ॥ ५२ ॥
मात्रामादायतस्माद्धिमाणिमंथेनयोजयेत्।
घृष्ट्वानेत्रेऽञ्जितायस्तुसर्वनेत्रगदाञ्जयेत् ॥ ५३ ॥
शुक्रकाचाजकाजातवर्त्मार्बुदमथापिवा।
अभिष्यन्दंविशेषेणपटलंचापिनाशयेत्।
अञ्जन नांवरंचैतत्तिमिरान्तकरंपरम् ॥ ५४ ॥

अर्थ–कटेरीका क्वाथ बनाकर वस्त्रमें छान लेवे, फिर आगपै पकावे जब पकते पकते गाढा होजाय तब उतारकर लोहेके बासनमें करके रख देवे। पश्चात् इसमेंसे कुछ थोडासा लेकर उसमें सेंधानोनको घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगानेसे सर्वप्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं। विशेष करके यह औषधि शुक्र,काच, अजका, वर्त्मरोग, अर्बुद, अभिष्यन्द. पटल और तिमिर रोगको दूर करैहै। यह सर्वप्रकारके अंजनोंमें श्रेष्ठ अंजन है ॥ ५२–५४ ॥

अथ दशमूलघृतम्।

दशमूलाम्बुनापक्वंघृतंदुग्धश्चतुर्गुणम्।
त्रिफलाकल्कसंयुक्तंतिमिरेराजतेपिबेत् ॥ ५५ ॥

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, दशमूलका क्वाथ दो २ सेर, दूध ८ आठ सेर और कल्कके लिये कूटाहुआ त्रिफला ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे–तिमिररोग दूर होताहै ॥ ५५ ॥

अथ त्रिफलाचूर्णम्।

यस्त्रैफलंचूर्णमपथ्यवर्जीसायंसमश्नातिहविर्मधुभ्याम्।
विमुच्यतेनेत्रगतैर्विकारैर्भृत्यैर्यथाक्षीणधनोमनुष्यः॥ ५६॥

अर्थ—पथ्यको सेवन करनेवाला जो मनुष्य त्रिफलेका चूर्ण सहत और घृतके साथ सन्ध्याके समय सेवन करताहै, उसके सर्व प्रकारके नेत्र रोग दूर होजातेहैं॥ ५६॥

अथ स्वल्पत्रिफलाघृतम्।

त्रिफलाक्काथकल्काभ्यांसपयस्कंशृतंघृतम्।
तिमिराण्यचिराद्धन्तिपीतमात्रंनिशामुखे॥ ५७॥

अर्थ—गायका घी २ दोसेर, त्रिफलेका क्काथ २ दोसेर, गायका दूध दोसेर, और कल्कके लिये कूटाहुआ त्रिफला ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे संध्याके समय पान करनेसे बहुत दिनोंका तिमिररोग दूर होताहै॥ ५७॥

अथ मध्यमत्रिफलाघृतम्।

त्रिफलात्र्यूषणंद्राक्षामधुकंकटुरोहिणी।
प्रपौण्डरीकंसूक्ष्मैलाविडंगंनागकेशरम्॥ ५८॥
नीलोत्पलंशारिवेद्वेचंदनंरजनीद्वयम्।
कार्षिकैःपयसातुल्यंद्विगुणंत्रिफलारसम्॥ ५९॥
घृतप्रस्थंपचेदेतत्सर्वनेत्ररुजापहम्।
तिमिरंरक्तसंस्रावंपटलंकाचमर्बुदम्॥ ६०॥
विसर्पंप्रदरंकण्डूंरक्तंश्वयथुमेवच।
खालित्यंपलितंचैवकेशानांपतनंतथा॥ ६१॥
विषमज्वरमर्शांसिशुक्रमाशुव्यपोहति।
अन्येचबहवोरोगानेत्रजायेचवर्त्मजाः॥ ६२॥
तान्सर्वान्नाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा।
नचैवास्मात्परंकिंचिद्दृष्टपिभिःकाश्यपादिभिः॥
दृष्टिप्रसादनंदृष्टंयथस्यात्त्रैफलंघृतम्॥ ६३॥

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, दूध दो सेर त्रिफलेका काथ ४ चारसेर, और कल्कके लिये हरड, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, दाख मुलेठी, कुटकी, पुण्डेरिया, छोटी इलायची, बायबिडंग, नागकेशर, नीलोत्पल, अनंतमूल, करियावासाऊ, लालचंदन, हलदी और दारुहलदी, प्रत्येक २ दो दो तोले ले, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरे। इस घृतको पान करनेसे तिमिर, काच, पटलादि सर्वप्रकारके नेत्ररोग, विसर्प, प्रदर, कण्डू, शोथादि नानाप्रकारके नेत्ररोग नाश होतेहैं ॥ ९८–६३ ॥

अथ बृहत्त्रिफलाघृतम् ।

त्रिफलायारसप्रस्थंभृंगराजरसस्यच ।
वृषस्यचरसप्रस्थंशतावर्याश्चतत्समम् ॥ ६४ ॥
अजाक्षीरंगुडूच्याश्चआमलक्यारसन्तथा ।
प्रस्थंप्रस्थंसमाहृत्यसर्वैरेभिर्घृतंपचेत् ॥ ६५ ॥
कल्कःकणासिताद्राक्षात्रिफलानीलमुत्पलम् ।
मधुकंक्षीरकाकोलीमधुपर्णीनिदिग्धिका ॥ ६६ ॥
तत्साधुसिद्धंविज्ञायशुभेभाण्डेनिधापयेत् ।
अर्द्धपानमधःपानंमध्येपानंचशस्यते ॥ ६७ ॥
यावन्तोनेत्रजारोगास्तान्पानादपकर्षति ।
सरक्तेचातिरक्तेचदुष्टेचातिस्रुतेऽपिच ॥ ६८ ॥
नक्तान्ध्येतिमिरेकाचेनीलिकापटलार्बुदे ।
अभिष्यन्देऽधिमंथेचपक्ष्मकोपेसुदारुणे ॥ ६९ ॥
नेत्ररोगेषुसर्वेषुवातपित्तकफेषुच ।
अदृष्टिंमंददृष्टिंचकफवातप्रदूषिताम् ॥ ७० ॥
स्रवतींवातपित्ताद्यासकण्डूासन्नदूरदृक् ।
गृध्रदृष्टिफलंसद्योबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥ ७१ ॥
सर्वनेत्रामयंहन्यात्त्रिफलंमहद्घृतम् ॥ ७२ ॥

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, त्रिफलेका काथ दो २ सेर, भांगरेका रस २ दो सेर, शतावरका रस २ सेर अडूसेका रस २ दोसेर, बकरीका दूध दो २

सेर, गिलोयकारस दो २ सेर, आमलोंकारस २ दोसेर, और कल्कके लिये पीपल, मिश्री, दाख, हरड, बहेडा, आमला, नीलोत्पल, मुलेठी, क्षीरकाकोली, गिलोय और कटेरी, यह सब ऽ॥ आधसेर ले, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको पकावे, जब पककर तयार होजाय तब उत्तम बासनमें भरकर रखदेवे, इसको भोजनके पहिले, भोजनके पश्चात्, और भोजनके मध्यमें पीवे, इस घृतको पान करनेसे सर्वप्रकारके नेत्ररोग दूर होजातेहैं । यह बृहत् त्रिफला घृत रक्तयुक्त नेत्ररोग अतिरक्तयुक्त, दुष्टरक्त युक्त अतिस्रुत नेत्ररोग, रात्र्यन्धरोग, तिमिर रोग, काच, नीलिका, पटल, अर्बुद, अभिष्यन्द, अधिमन्थ, दारुण पक्ष्मकोप, वात पित्त और कफसे उत्पन्न हुए नेत्ररोग अदृष्टि, मंददृष्टि, कफ वातसे दूषित दृष्टि, नेत्रस्राव, वात और पित्तसे उत्पन्न हुई नेत्रोंमें कण्डू, और समीपकी वस्तु दूर दीखे, इन सब रोगोंको दूर करेहै, तथा दृष्टिको गीधकी समान करेहै, बल, वर्ण और अग्निको बढावैहै, और सर्व प्रकारके नेत्ररोगोंको हरैहै ॥ ६४–७२ ॥

अथ भृंगराजतैलम् ।

भृंगराजरसप्रस्थेयष्टीमधुपलेनच ।
तैलस्यकुडवंपक्कंसद्योदृष्टिंप्रसादयेत् ॥
नस्याद्वलीपलीतघ्नंमासेनैतन्नसंशयः ॥ ७३ ॥

अर्थ–तेल ऽ॥ आधसेर, भांगरेकारस २ दोसेर, और कल्कके लिये मुलेठी चारतोले ले, यथाविधिसे तेलको पकाकर शरीरादिमें मलनेसे तत्काल दृष्टि प्रसन्न होतीहै । इस तेलका नास लेनेसे एक महीनेमें वलि और पलित रोग दूर होजातेहैं ॥ ७३ ॥

अथ गोमयाद्यंतैलंमधुरघृतञ्च ।

गवांशकृत्क्काथविपक्कमुत्तमंहितंचतैलंतिमिरेषुनस्यतः ।
घृतंहितंकेवलमेवपैत्तिकेछागाविकंयन्मधुरैर्विपाचितम् ७४

अर्थ–गोबरके काथके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे तिमिर रोग दूर होताहै । और मधुरवर्गकी औषधियोंके साथ बकरी या भेडके घृतको पकाकर सेवन करनेसे पैत्तिक नेत्ररोग दूर होताहै ॥ ७४ ॥

अथ नृपवल्लभतैलम् ।

जीवकऋषभकामेदाद्राक्षांशुमतीनिदिग्धिकाबृहती ।
मधुकंबलाविडंगंमंजिष्ठाशर्करारास्ना ॥ ७५ ॥
नीलोत्पलंश्वदंष्ट्राप्रपौण्डरीकंपुनर्नवालवणम् ।
पिप्पल्यःसर्वेषांभागैरक्षांशिकैःपिष्टैः ॥ ७६ ॥
तैलंवायदिसर्पिर्दत्त्वाक्षीरंचतुर्गुणंपक्वम् ।
आत्रेयनिर्मितमिदंतैलंनृपवल्लभंनाम ॥ ७७ ॥
तिमिरंपटलंकाचंनक्तान्ध्यंचार्बुदंतथान्ध्यञ्च ।
श्वेतंचलिंगनाशंनाशयतिनीलिकाव्यंगम् ॥ ७८ ॥
मुखनासादौर्गन्ध्यंपलितंचाकालजंहनुस्तम्भम् ।
कासंश्वासंशोषंहिक्कांस्तम्भंतथान्ध्यतांनेत्रे ॥ ७९ ॥
मुखजाड्यमर्द्धभेदंरोगंबाहुग्रहंशिरःस्तम्भम् ।
रोगानथोर्द्धजत्रोःसर्वानचिरेणनाशयति ॥ ८० ॥

नस्यात्पत्वात्तैलकुडवः साध्यः ।
अतोक्षांशिकैश्चतुर्भागैः मासकचतुष्टयैः ।
यद्वाऽक्षरूपो भागस्तथा प्रस्थः साध्यः ।

अर्थ–तिलका तेल या गायका घी २ दोसेर, गायका दूध ८ आठसेर, और कल्कके लिये जीवक, ऋषभक, मेदा, दाख, शालपर्णी, कटेरी, बृहती, मुलेठी खिरैटी, बायबिडंग, मँजीठ, चीनी, रास्ना, नीलेकमल, गोखुरू, पुण्डेरिया पुनर्नवा, सैंधानोन और पीपल यह सब पिसी हुई औषधिऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तेलको पकावे। इसको नृपवल्लभ तेल कहतेहैं, यह श्रीमान् आत्रेयजीने रचाहै। यह तेल या घी तिमिर, पटल, काच, नक्तान्ध्य, अर्बुद, आन्ध्य, श्वेत, लिंगनाश, नीलिका, व्यंग, मुख और नाककी दुर्गन्ध, अकालज पलितरोग, हनुस्तम्भ, कास, श्वास, शोष, हिक्का, स्तम्भरोग, नेत्रोंमें अँधेरा, मुखकी जड़ता अर्द्धभेद, बहुग्रह, शिरःस्तम्भ और ऊर्द्ध्व जत्रुको दूर करैहै, इसका नास लेना चाहिये ॥ ७५–८० ॥

अथ तोयस्रावचिकित्सा ।

अजस्रंयस्यचाप्यश्रुस्वच्छंस्रवतिचक्षुषः ।
तोयस्रावन्तुतंविद्याद्विकारंमारुतात्मकम् ॥ ८१ ॥
पानीयेननिघृष्टंहिफलंहिज्जलजंशुभम् ।
अश्रुपातंनिहन्त्याशुवृद्धानामपिचाञ्जनात् ॥ ८२ ॥

अर्थ–जिसके दोनों आंखोंमें सदेव स्वच्छ आंसू टपकें, उसके तोयस्राव रोग जानना, यह तोयस्राव रोग वातजन्य है । हिज्जलके फलोंको पानीमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगानेसे तोयस्राव दूर होताहै ॥ ८१ ॥ ८२ ॥

अथाजिततैलम् ।

तैलस्यपचेत्कुडवंमधुकस्यपलेनकल्कपिष्टेन ।
आमलकीरसप्रस्थंक्षीरप्रस्थेनसंयुतंकृत्वा ॥ ८३ ॥
अजितंनाम्नातैलंतिमिरंहन्यान्निमिप्रोक्तम् ।
विमलांकुरुतेदृष्टिंनष्टामप्यानयेत्तद्रत् ॥ ८४ ॥

अर्थ–तैल ऽ॥ आधसेर, आमलोंका रस २ दोसेर, गायका दूध २ दोसेर, और कल्कके लिये मुलैठी चार ४ [illegible] विधिसे तैलको सिद्धकर इस अजित तैलका नाम लेनेसे तिमिर [illegible] [illegible], और दोनों नेत्रोंकी ज्योति निर्मल होजातीहै ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

अथामृताघृतगुग्गुलुः ।

अमृतावृषपटोलंचंदनंमुस्ततिक्ता–
कुटजकुटजबीजंपूतनाकांडतिक्ता ।
दहनविटपिमूलंदीर्घमूलायवश्च
कलिनरुफलधात्रीसर्वतोभद्राविश्वम् ॥ ८५ ॥
समचरणकृतानांक्वाथमादायचैषां
विधिवदितिपचेत्तंसर्पिषःप्रस्थमेकम् ।
भिषगपिविधिपूर्वंशोधयित्वापुरस्य
वसुपलपरिमाणंकल्कमत्रैवदत्त्वा ॥ ८६ ॥

सुतिथिदिवसचन्द्रेभास्करंपूजयित्वा
नयनगदगदीयःसर्पिरेतच्चकुर्यात् ।
असिअसितसमुत्थानर्बुदान्काचशुक्रान्
पटलतिमिररोगान्पिल्वकण्ड्वामयांश्च ॥ ८७ ॥
विविधनयनदोषानश्रुपातामवातान्
समशनदिनपूर्वोभोजनान्तेनिहन्ति ॥ ८८ ॥
दहनविटपी लांगली दीर्घमूला श्यामालता ।

अर्थ–गिलोय, अडूसा, परवल, लालचंदन, नागरमोथा, कुटकी, छाल, इन्द्रजौ, हरड़, चिरायता, कलिहारीकीजड, करियावासाऊ, जौ, बहेडा, आमला, कुम्भेर और सोंठ, इनका क्वाथ, दो २ सेर, गायका घी दो २ सेर शुद्ध गूगुल १ एकसेर, शुभदिनमें चंद्रमा और सूर्य देवका पूजन करके इसको पकावे । यह–सर्व प्रकारके नेत्ररोग, ८० अस्सी प्रकारके अर्बुदरोग काचरोग, शुक्ररोग, पटलरोग, तिमिररोग, पिल्वरोग, कण्डूरोग, नानाप्रकारके नेत्रविकार और आम वातोद्भव अश्रुपातरोग, इन सबरोगोंको यह घृतगूगुल भोजनके अंतमें खायाहुवा हरैहै ॥ ८९–८८ ॥

अथ वासामृतगुग्गुलुः ।

वासामृतानिम्बपटोलपत्रंफलत्रयाणांविधिवत्कषाये ।
भिषक्पचेद्गुग्गुलुकल्कमाज्यंजेतुंनराणांनयनोत्थदोपान्॥८९॥
नेत्रामयान्सर्वसमुद्भवांश्चनिहन्तिशीघ्रंनयनाश्रुपातम् ।
रागाश्रुशोथंपटलार्बुदश्चमलंसकण्डूतिमिरंचकाचम् ॥९०॥
महद्रुजंचैवतथामवातंसर्वाणिकुष्ठानिचवातरक्तम् ।
रसायनंसर्पिरनुत्तमश्चयथानुपानंभिषजाप्रयोज्यम् ॥ ९१ ॥

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, क्वाथकेलिये अडूसा, गिलोय, नीमकी-छाल, पटोलपत्र, हरड़, बहेडा, आमला, यह सब औषधि ४ चारसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, और कल्कके लिये गूगुल ऽ॥ आधसेर ले सबको मिलाकर यथाविधिसे सिद्ध करै । यह सर्व प्रकारके नेत्ररोग, तोयस्राव, पटलादि सर्व प्रकारके नेत्ररोग और आमवात, कुष्ठादि अन्यान्य नाना प्रकारके रोग यथानुपानके साथ दूर करैहै ॥ ८९–९१ ॥

अथ सर्व ... र्णसमंलांहम् ।

...फलात्वचमायसश्च ...र्णसहयष्टीमधुकंसमांशयुक्तम् ।
म...नासहसर्पिषादिनान्तेपु ...षोनिष्परिहारमाददीत॥९२॥
तिमिराक्षिसरक्तराजिकण्डूक्षणदान्ध्यार्बुददाहतोद...लान् ।
पटलं...काचपिल्वंशमयत्येवनिषेवितःप्रयोगः॥९३॥
नचकेवलमेवलोचनानांसुहितोरोगनिबर्हणायपुंसाम् ।
दशनश्रवणोर्द्ध...ण्ठजानांप्रशमेहेतुरयंतथामयानाम्॥९४॥
गुदजानिभगन्दरंप्रमेहंप्लीहानंकुष्ठहलीमकंकिलासम् ।
प...ता...विनाशयेत्तथाग्निंचिरंतनश्चकरोतिसुप्रचण्डम्॥९५॥
दयिताभुजपंजरोपगूढःस्फुटचन्द्राभरणासुयामिनीषु ।
सुरतानिमुहुर्निषेवतेऽसौपुरुषोयोगवरंनिषेवमाणः॥९६॥
मुखंचनीलोत्पलतुल्यगंधिशिरोरुहाश्चाञ्जनमेचकप्रभाः ।
भवेच्चगृध्रस्यसमानलोचनःश्रुतंधरोवर्षशतंचजीवति॥९७॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, दालचीनी, और मुलेठी, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण, सबको मिलाकर सहत और घृतके साथ सन्ध्यासमय सेवन करे, इसपे कुछ परहेज नहीं करे इससे तिमिररोग, रक्तराजिका, क्षणद, अन्धरोग, अर्बुद, दशशूल पटल, शुक्ररोग, काचरोग, और पिल्वादि विविध प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं। यह केवल नेत्ररोगोंकोही दूर नहीं करताहै, परन्तु अन्यान्य दन्तरोग श्रवणरोग, ऊर्द्ध्वरोग, कण्ठरोग, गुदजरोग, भगन्दर, प्रमेह, प्लीहा, कोढ, हलीमक, किलास और पलितादि रोगोंको भी दूर करैहै। इस योगको सेवन करनेवाला स्त्रीके भुजारूपी पिंजरेमें आयाहुवा मनुष्य चन्द्रमाके समान प्रफुल्लित होजाताहै और वारंवार मैथुन करनेमें तत्पर रहताहै, मुख नीलोत्पलकी गंधके समान सुगंधित होजाताहै, शिरके बाल अंजनकी समान कृष्णवर्ण होजातेहैं, नेत्र गीधकी समान ज्योतिवाले होजातेहैं। कर्ण अत्यन्त श्रेष्ठहोजातेहैं, और १०० सौ वर्षतक जीतारहैहै॥९२–९७॥

अथ षडङ्गरसः ।

लक्ष्मीहरिहरःकाशीत्रिफला...ह्मी...णी ।
कामिनीगुग्गु...दन्तीघोपागुग्गुल...बालकम्॥९८॥

सर्वमेतत्समाहृत्यवातारितैलमर्दितम् ।
पुष्पितंस्फुटितंचक्षुःपटलंवातदूषितम् ॥ ९९ ॥
मुखपाकंकृमिदन्तंरक्तजंपूतिनासिकम् ।
घ्राणस्तनादिरोगश्चपूतिकर्णंप्रशाम्यति ॥ १०० ॥

अर्थ-हलदी, पारा, सोरठकी मिट्टी, हरड, बहेडा, आमला, कुटकी, फूलप्रियंगु, गूगुल, दन्ती, कडवीतोरई, गिलोय और सुगंधबाला यह सब औषधि एकत्र पीसकर अंडीके तेलमें खरल करे, इस औषधिको सेवन करनेसे आँखोंके फूले, स्फुटरोग, वातदूषित पटल रोग, मुखपाक रक्तजनित कृमि और दन्तरोग पूतिनासिका, घ्राणरोग, स्तनादिरोग और पूतिकर्ण रोग दूर होताहै ॥ ९८-१०० ॥

अथ नक्तान्ध्यचिकित्सा ।

दध्नानिघृष्टंमरिचंरात्र्यन्धाञ्जनमुत्तमम् ।
सफरीमत्स्यकक्षारोनक्तान्ध्यंहन्तिचाञ्जनात् ॥१०१॥
कणाछागशकृन्मध्येपक्कातत्रसुपेषिता ॥
अंजनाद्धन्तिनक्तान्ध्यंतद्वत्सक्षौद्रसर्पिषा ॥ १०२ ॥
नदीजशंखत्रिकटून्यथाञ्जनंमनःशिलाद्वेचनिशेगवांशकृत् ।
सचन्दनेयंगुडिकांजनेषुप्रशस्यतेरात्रिदिनेपुपश्यताम् १०३
केशराजास्वितंसिद्धंमत्स्याण्डंहन्तिभक्षितम् ।
नक्तान्ध्यंनियतंनृणांसप्ताहात्पथ्यसेविना ॥ १०४ ॥

अर्थ-काली मिरचको दहीमें घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगानेसे रतोंधा दूर होताहै। सफरी मछलीके खारका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे रतौंधा दूर होताहै। पीपलको बकरीकी मेंगनमें रख आगमें पकाकर पीस लेवे, इस अंजनको नेत्रोंमें लगानेसे, अथवा घृत और सहतको मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे-रतौंधा दूर होताहै । सैंधानोन, शङ्ख, सोंठ, मिरच, पीपल, रसौत, मैनशिल, हलदी, दारुहलदी, गोबर और लालचंदन इन सबको एकत्र पीसकर गोली बनालेवे, इन गोलियोंको नेत्रोंमें आँजनेसे अन्धता रोग दूर होताहै । मछलीके अंडेको कुकुरभांगरेके रसमें पकाकर भक्षण करनेसे-एकसप्ताहमें नक्तान्ध्य रोग दूर होजाताहै, इसपै पथ्यसे रहै ॥ १०१-१०४ ॥

अथ पिच्चटादिचिकित्सा ।

हरिद्रात्रिफलालोध्रमधुकंरक्तचंदनम् ।
भृंगराजरसेपिष्ट्वाघर्षयेल्लौहभाजने ॥ १०५ ॥
तथाताम्रेचसप्ताहंकृत्वावर्त्तिश्चचाञ्जयेत् ।
पिच्चटीधूमदर्शीचतिमिरोपहतेक्षणः ॥ १०६ ॥
प्रातर्निश्यञ्जयेन्नित्यंसर्वनेत्रामयापहम् ।
इडामूत्रेणभूधात्रीमूलंपिष्ट्वाचवर्त्तिका ॥
नवनीतेनसंयुक्ताहन्तिपुष्पंचिरंतनम् ॥ १०७ ॥

अर्थ–हलदी, हरड, बहेडा, आमला, लोध, मुलेठी और लालचंदन यह सब औषधि समान भाग लेकर भांगरेके रसमें पीसकर सातदिन लोहेके पात्रमें और सात दिन तांबेके पात्रमें घिसे, फिर इसकी बत्ती बनाकर प्रातःकाल और रात्रिमें आंखोंमें आंजनेसे पिच्चट, धूमदर्शन, तिमिरादि सर्वप्रकारके नेत्र रोग दूर होतेहैं । भुईआमलेको गौके मूत्रमें पीसकर बत्तीबना नोनीघी मिलाके नेत्रोंमें आंजनेसे बहुत दिनोंका नेत्रोंका फूला दूर होजाता है ॥ १०५–१०७ ॥

अथ पुष्पचिकित्साक्रमिपातनश्च ।

शम्बुकंनवराटंवादग्धंचैतद्विचूर्णयेत् ।
अंजनंनवनीतेनहन्तिपुष्पंचिरन्तनम् ॥ १०८ ॥
अंजनान्नाशयेत्पुष्पंक्षौद्रेर्वास्वर्णमाक्षिकम् ।
अपामार्गस्यबीजानिमरिचंकण्टकारिका ॥ १०९ ॥
अर्कक्षीरेत्र्यहंतत्तुशुष्कंमृद्वग्निनापचेत् ।
तत्पृष्ठेच्छादनंपात्रंसरन्ध्रंलेपयेद्बहिः ॥ ११० ॥
इत्थंतदुत्थितंधूमंनेत्रेकर्णमुखेऽथवा ।
नासायांग्राहयेद्धूमंक्रमिपातोभवत्यलम् ॥ १११ ॥

अर्थ–शम्बुक अथवा कौडीकी भस्मको नोनीघीमें मिलाकर नेत्रोंमें अंजन लगानेसे पुष्परोग दूर होताहै । सोनामाखीको सहतमें मिलाकर अंजन लगानेसे पुष्परोग दूर होताहै । चिरचिटेके बीज, कालीमिरच और कटेरी,

इनको एकत्र आकके दूधमें तीन दिनतक सुखाके मंद मंद आगमें पकावे और ऊपर छेदोंवाला पात्र ढकदेवे और बाहरसे लीपदेवे, इसमेंसे जो धुआँ निकले उस धुयेंको कान, नेत्र, मुख और नासिकामें ग्रहण करे तो सब कृमि गिर पडतेहैं ॥ १०८-१११ ॥

इति चक्षुरोगाधिकारः ।

अथ शिरोरोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ वातशिरोरोगेयत्नाः ।

वातिकेशिरसोरोगेस्नेहस्वेदानुवासनान् ।
पानानिउपनाहांश्चकुर्याद्वातामयापहान् ॥ १ ॥
पयोऽनुपानंसेवेतघृतंतैलमथापिवा ।
स्वेदोपनाहान्कुर्वीतकृशरापायसादिभिः ॥ २ ॥
कुष्ठमेरण्डमूलन्तुलेपात्कांजिकपेषितम् ।
शिरोऽर्त्तिनाशयत्याशुपुष्पंवामुचुकुन्दजम् ॥ ३ ॥
पंचमूलीशृतंक्षीरंनस्यदद्याच्छिरोगदे ॥ ४ ॥

अर्थ-वातिक शिरोरोगमें स्नेह, स्वेद, अनुवासन, पान और उपनाह स्वेद यह सब वातनाशक करने चाहिये । दूधका अनुपान या घृत और तेल, इसमें विशेष हितकारीहैं । दूध और कृशरादिके द्वारा स्वेद और प्रलेपादिका प्रयोगकरे । कूठ और अरंडकी जडको काँजीमें पीसकर प्रलेप करनेसे, अथवा मुचकुन्दके फूलोंको जलमें पीसकर प्रलेप करनेसे मस्तककी पीडा दूर होतीहै । पंचमूलके साथ औटाए दूधका नास देनेसे शिरोरोगकी पीडा दूर होतीहै ॥ १-४ ॥

अथ शिरोरोगेचर्म्मबन्धनविधिः ।

आशिरोव्यायतञ्चर्म्मकृत्वाष्टांगुलिमुद्रितम् ।
तेनावेष्ट्यशिरोऽधस्तान्माषकल्केनलेपयेत् ।
निश्चलस्योपविष्टस्यतैलैरुष्णैःप्रपूरयेत् ॥ ५ ॥
धारयेदारुजःशान्त्यैयामंयामार्द्धमेववा ॥
एषएवविधिःकार्यःतथाकर्णाक्षिपूरणे ॥ ६ ॥

अर्थ-आठ अंगुल ऊंचा और मस्तकके चारों ओर आजाय ऐसे चमडेसे रोगीके मस्तकको लपेटकर बांधे और उसके नीचेकी संधियोंको उडदके-

चूनसे बंद करदेवे, और रोगीके मस्तकपै भी उडदोंके चूनकाही लेप करदेवे, पश्चात् रोगीको निश्चल बैठा करके उसमें गरम गरम तेलको भरदेवे, एक प्रहर या अर्द्ध प्रहर अर्थात् जबतक पीडा रहे तब तक तेल धारण करे रहे, यही विधि कान और आँखोंके भरनेमें भी करनी चाहिये ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ नागरसिद्धनस्यादियोगाः ।

नागरकल्कविमिश्रंक्षीरंनस्येनयोजितंपुंसाम् ।
नानादोषोद्भूतांशिरोरुजांहन्तितीव्रतराम् ॥ ७ ॥
मृणालविसशालूकचंदनोत्पलकेशरैः ।
स्निग्धशीतैःशिरोदद्यात्तद्वदामलकोत्पलैः ॥ ८ ॥
यष्ट्याह्वचन्दनानन्ताक्षीरसिद्धंघृतंहितम् ॥ ९ ॥

अर्थ—सोंठके कल्कको दूधमें मिलाकर नास देनेसे नाना प्रकारके दोषोंसे उत्पन्न हुआ शिरोरोग दूर होताहै । कमलकी नाल, कमलकी जड भसींडे, लाल चंदन, कमल और कमल केशर, अथवा आमला और उत्पल इनका शीतल क्काथ स्निग्ध करके शिरपै प्रयोग करनेसे शिरोरोग दूर होताहै । मुलैठी लालचंदन और अनन्तमूल तथा दूध, इनके साथ सिद्ध किया हुवा घृत पीनेसे शिरोरोग दूर होताहै ॥ ७–९ ॥

अथ सद्यःशूलहरयोगौ ।

कृष्णाह्वशुण्ठीमधुकंशताह्वोत्पलपाकलैः ।
जलपिष्टैःशिरोलेपःसद्यःशूलनिवारणः ॥ १० ॥
देवदारुनतंकुष्ठंनलदंविश्वभेषजम् ।
लेपःकांजिकपिष्टोहितैलयुक्तःशिरोऽर्त्तिनुत् ॥ ११ ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, मुलैठी, सोंफ, कमल और कूठ इनका जलमें पीसके सिरपै लेप करनेसे तत्काल शिरःशूल दूर होजाताहै । देवदारु, तगर, कूठ, खश और सोंठ, यह सब औषधि काँजीमें पीस तेल मिलाकर लेप करनेसे शिरोरोग दूर होताहै ॥ १० ॥ ११ ॥

अथ शिरोर्तिहरयोगाः ।

त्रिकटुकपुष्करबीजरजनीरास्नातुरंगगन्धानाम् ।
क्काथःशिरोऽर्त्तिजालंनासापीतोनिवारयति ॥ १२ ॥

· तोत्पलंचन्दनकुष्ठयुक्तंशिरोरुजायांसघृतःप्रलेपः ।
प्रपौण्डरीकंसुरदारुकुष्ठंयष्टयाह्वमेलाकमलोत्पलेच ॥
शिरोरुजायांसघृतःप्रदेहोलोहैर्वकैःपद्मकरोचकैश्च ॥ १३ ॥

अर्थ–सोंठ,मिरच, पीपल, पोहकरमूल, विजयसार, हलदी, रास्ना और असगंध इनका क्काथ नासिकाके द्वारा पीनेसे सर्व प्रकारकी शिरकी पीडा दूर होतीहै । तगर, कमल, लालचंदन और कूठ यह सब औषधि एकत्र पीस घृतमें मिलाकर प्रलेप करनेसे शिरकी पीडा शान्त होतीहै । पुण्डेरिया, देवदारु, कूठ, मुलेठी, इलायची कमल और कुमुद, मण्डूर, वक, पद्माख, और रोचक (गठिन भेद) यह सब औषधि समानभाग ले घृतमें पीसके प्रलेप करनेसे शिरकी पीडा दूर होतीहै ॥ १२॥१३ ॥

अथ जीवकाद्यंतैलम् ।

जीवकर्षभकौद्राक्षामधुकंमधुकाम्बुना ।
नीलोत्पलंचंदनंचविदारीशर्करातथा ॥ १४ ॥
तैलप्रस्थंपचेदाभिःशनैःपयसिषड्गुणे ।
जांगलस्यतुमांसस्यतुलार्द्धस्यरसेनतु ॥ १५ ॥
सिद्धमेतद्भवेन्नस्यंतैलमर्द्धावभेदकम् ।
बाधिर्यंकर्णशूलञ्चतिमिरंगलशुण्डिकाम् ॥ १६ ॥
वातिकंपैत्तिकंचैवशीर्षरोगानियच्छति ॥ १७ ॥

अर्थ–तिलोंकातेल २ दोसेर, दूध १२ बारह सेर, जांगलदेशके जीवोंके मांसकारस ६। सवाछे सेर, मुलेठीका क्काथ २ दोसेर, कल्कके लिये जीवक, ऋषभक, दाख, मुलेठी, नीलकमल, लालचन्दन, विदारीकन्द और खांड, यह सब ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे तेलको पकाकर नासलेनेसे अर्द्धावभेदक, बधिरता, कर्णशूल, तिमिर, गलशुण्डिका और वातज तथा पित्तज शिरोरोग दूर होतेहैं ॥ १४–१७ ॥

अथ षड्बिन्दुतैलम् ।

एरण्डमूलंतगरंशताह्वाजीवन्तिरास्नासहसैन्धवञ्च ।
भृङ्गंविडङ्गंमधुयाष्टिकाचविश्वौषधंकृष्णतिलस्यतैलम् ॥ १८ ॥
आजं · यस्तैलविमिश्रितञ्चचतुर्गुणेभृंगरसेविपक्कम् ।

षड्बिन्दवोनासिकयाविधेयाःशीघ्रंनिहन्युःशिरसोविकारान् १९
च्युतांश्चकेशांश्चलितांश्चदन्तानबद्धमूलान्सुदृढीकरोति ।
सुवर्णदृष्टिप्रतिमश्चचक्षुर्बलंचबाहोरधिकंददाति ॥ २० ॥

अर्थ–तिलोंकातेल २ दोसेर, भांगरेका रस आठ ८ सेर, बकरीका दूध आठ ८ सेर और कल्कके लिये अरण्डकीजड़, तगर, सोया, जीवन्ती, रास्ना, सैंधानोन, भाँगरा, बायबिडंग, मुलेठी और सोंठ यह सब औषधि ऽ॥ आध सेर ले यथाविधिसे तेलको पकावे,इस तेलका नास लेनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होकर केश दृढमूल और नेत्रोंकी ज्योति उज्ज्वल होजातीहै ॥ १८–२० ॥

अथ दशमूलतैलम् ।

दशमूलकषायेणपयसाद्विगुणेनच ।
कल्कतश्चाष्टवर्गेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २१ ॥
तत्तैलंविहितंश्रेष्ठंसर्वदावातरोगिणे ।
शिरःकर्णाक्षिशूलेषुसर्वत्रैवप्रशस्यते ॥ २२ ॥

अर्थ–तेल २ दोसेर, दूध ४ चारसेर, दशमूलका क्राथ ८ आठसेर और कल्कके लिये अष्टवर्ग ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकरे । यह तेल सर्वप्रकारके शिरःशूल, कर्णशूल और चक्षुशूलको दूर करताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥

अथ द्वितीयषड्बिन्दुतैलम् ।

शुण्ठीविडंगयष्ट्याह्वैःभृंगतोयश्रृतंघृतम् ।
षड्बिन्दुनस्यदानेनसर्वानूर्द्ध्वगदाञ्जयेत् ॥ २३ ॥

अर्थ–तिलका तेल २ दोसेर, भाँगरेका रस ८ आठसेर और कल्कके लिये सोंठ, बायबिडंग और मुलेठी ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे तेलको पकावे । इस तेलका नास लेनेसे ग्रीवाके ऊर्ध्वगत शिरोरोगादि सम्पूर्ण रोग दूर होतेहैं ॥ २३ ॥

अथ वरुणाद्यं घृतम् ।

वरुणशतसुतायामेषशृङ्गीकरंजौ
वरककुभजयन्तीशिग्रुश्योनाग्निमन्थः ।
वसिरवसुगुडूचीबिम्बिशौरीद्वयंच
कुशदहनजटाजशृंगिमालूरविश्वम् ॥ २४ ॥

बृहतियुगलमूलंमोरटानांद्विप्रस्थं
वसुगुणजलदानादष्टभागावशेषम् ॥ २५ ॥
विपच्यमायूरमथापिमांसप्रस्थंतथाक्षीरसमंवरायाः ।
प्रस्थंचसर्पिर्मधुकंकिरातंरास्नागुडूचीपिचुमर्दरात्रिः ॥ २६ ॥
प्रत्येकशःसार्द्धपलञ्चकल्कंदत्त्वातुसर्वंविपचेद्विधिज्ञः ।
भ्रूशंखमन्याशिरसांविकारास्त्रिदोषजोद्वन्द्वजएवनातः ।
नानाप्रकारेशिरसोविकारेतथाययथादन्तिबधेमृगेन्द्रः ॥ २७ ॥

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, क्वाथके लिये वरनाकी छाल, शतावर, मेढाशिंगी, करंज, वडीकरंज, अर्जुनकीछाल, जयन्ती, सैंजिना, श्योनाक, अरणी, सफेद खिरेंटी, आककी जड़, बेल, सोंठ, गिलोय, कुँदुरू, नीली कटसरैया, पीलीकटसरैया, कुशा, चीता, बालछड, काकड़ाशिंगी, बृहती, कटेरी और अंकोलकी जड, यह सव औषधि २ दोसेर, पाकके लिये जल १६ सोलहसेर, शेप २ दोसेर, मोरका मांस २ दोसेर और त्रिफला २ दोसेर, जल १६ सोलहसेर, शेप २ दोसेर, गायका दूध २ दोसेर और कल्कके लिये मुलेठी, चिरायता, रास्ना, गिलोय, नीमकी छाल और हलदी प्रत्येक दो दो तोले ले, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरे । इस घृतको सेवन करनेसे सर्व प्रकारके शिरोरोगादि अनेक रोग दूर होतेहैं ॥ २४–२७ ॥

अथ मयूराद्यं घृतम् ।

दशमूलीबलारास्नामधुरैस्त्रिफलैःसह ।
मधुरंपक्षपित्तान्त्रशकृत्पादास्यवर्जितम् ॥ २८ ॥
जलेपक्त्वाघृतप्रस्थंतस्मिन्क्षीरसमंपचेत् ।
मधुरैःकार्पिकैःकल्कैःशिरोरोगार्दितापहम् ॥ २९ ॥
कर्णनासाक्षिजिह्वास्यगलरोगविनाशनम् ।
मयूराद्यमिदंख्यातमूर्द्ध्वजत्रुगदापहम् ॥ ३० ॥
दशमूलादिनातुल्योमयूरइहगृह्यते ।
अन्येत्वाकृतिमानेनमयूरग्रहणंविदुः ॥ ३१ ॥

आखुभिःकुक्कुटैर्हंसैःशशैश्चापिहिबुद्धिमान् ।
कल्केनानेनविपचेत्सर्पिरूर्द्ध्वगदापहम् ॥ ३२ ॥

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, दशमूल, खिरैटी, रास्ना, त्रिफला और जीवनीय दशक, इन औषधियोंका क्काथ ४ सेर, पक्ष, पित्त, अन्त्र, विष्ठा, पाद, और मुखको छोड़कर मोरके शेष अंगोंके मांसका क्काथ ४ चारसेर, और कल्कके लिये जीवनीय दशक ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे घृतको पकावे । यह–शिरोरोग, कर्णरोग, नासिका रोग, नेत्ररोग, जिह्वा रोग, और गलरोगको दूर करैहै । यह मयूराद्य घृतविशेष करके ऊर्द्ध्वजत्रु रोगको दूर करैहै । यहाँ दशमूलादि औषधियोंके समान मयूरका मांस लिया जाताहै । और अन्य वैद्य आकृतिसे ही मोरके मांसको ग्रहण करतेहैं । मूसा, मुरगा, हंस और शशकके मांसके कल्कमें भी घृतको सिद्धकरना चाहिये, यह सब घृत ऊर्द्ध्वरोगको दूरकरैहै ॥ २८–३२ ॥

अथ द्वितीयमयूराद्यंघृतम ।

शतंमयूरमांसस्यदशमूलबलातुलाम् ।
द्रोणेम्भसःपचेत्क्षुत्वातस्मिन्पादस्थितेततः ॥ ३३ ॥
निक्षिप्यपयसोद्रोणेपशेत्तत्रघृताढकम् ।
प्रपौण्डरीकवर्गोक्तैर्जीवनीयैश्चभेषजैः ॥ ३४ ॥
मेधाबुद्धिस्मृतिकरमूर्द्ध्वजत्रुगदापहम् ।
मायूरमेतन्निर्दिष्टंसर्वानिलहरंशुभम् ॥ ३५ ॥
मन्याकर्णशिरोनेत्ररुजापस्मारनाशनम् ।
विषवातामयश्वासविषमज्वरकासनुत् ॥ ३६ ॥

अर्थ–गायका घी ८ आठसेर, मोरकामांस १२॥ साढेबारहसेर, दशमूल और खिरैटीका क्काथ १२॥ साढेबारहसेर, दूधबत्तीस ३२ सेर, और कल्कके-लिये प्रपौण्डरीकवर्गकी सम्पूर्ण औषधि और जीवनीयगणकी समस्त औषधि यह सब २ दो सेर लेकर यथाविधिसे घृतको पकावे । यह घृत मेधा, स्मरणशक्ति और बुद्धिको बढावैहै । ऊर्द्ध्वजत्रुरोगको दूर करैहै । तथा सर्वप्रकारके वातरोग, मन्यारोग, कर्णरोग, शिरोरोग,नेत्ररोग, अपस्मार, विषविकार, वातरोग, श्वास, विषमज्वर और खाँसीको दूर करैहै ॥ ३३–३६ ॥

अथ त्र्यूषणादिगुटिका ।

त्रीणिकटूनितथातिविषाणिक्षारयुतौत्रिफलात्रिवृतानि ।
दन्तिनिवासकलोध्रनतानिचन्दनवारीभकणामृतकानि ३७
ग्रन्थिकपुष्करमूल..स्यतिक्तककट्फलकेन्दुयवस्य ।
त्वग्दलमेघनीलोत्पलकस्यवालमूलालसजातिफलस्य३८॥
द्रव्यमितंपिचुमात्रक्रमेणचाष्टपलानितथायसकस्य ।
अष्टपलन्तुशिलाजतुकस्यशुभयाकृतंत्र्यक्षसमम् ॥ ३९ ॥
शुभवासरखादनकालशुभंमुखदारुणरोगशिरोव्यथनम् ४०
हन्तिभ्रमंपटलंतिमिरञ्चपिष्टकशुक्रमथार्बुदकञ्च ।
पलितहंरसुखकामकरंयुवतीरमणेपिबदुग्धसमम् ॥ ४१ ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, अतीस, जवाखार, सज्जी, हरड़, बहेडा, आमला, निसोत, दन्ती, अडूसा, लोध, तगर, लालचंदन, सुगन्धबाला, गजपीपल, गिलोय, गाठिवन, पोहकरमूल, नागरमोथा, कुटकी, कायफल, इन्द्रजौ, दालचीनी, तेजपात, मोथा, नीलोत्पल, कच्चीमूली, हरिताल, और जायफल, प्रत्येकका चूर्ण २ तोले, लोहेका चूर्ण आठ ८ पल, शिलाजीत ८ आठ पल, और वंशलोचन ८ आठपल, सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर गोली बनालेवे । इन गोलियोंको उत्तम दिन उत्तम समयमें खावे, इससे मुख दारुणरोग, शिरकीपीडा, भ्रम, पटल, तिमिर, पिष्टक, शुक्र, नेत्रार्बुद और पलितादि रोग दूर होतेहैं और सुखपूर्वक कामदेवको बढावेहै, और स्त्रीसंसर्गमें दूधके साथ पीवे ॥ ३७–४१ ॥

अथ सूर्योदयरसः ।

मृतसूताभ्रकंतीक्ष्णंगंधंताम्रंमृतंसमम् ।
स्नुहीक्षीरैर्दिनंमर्द्यंभक्षयेन्माषमात्रकम् ॥ ४२ ॥
मधुनामर्दितंभक्षेल्लोहपात्रेदिनेदिने ।
सप्ताहात्सूर्यावर्तादीञ्छिरोरोगान्निवर्त्तयेत् ।
सूर्योदयरसोनाम्नासर्व..र्द्धगदापहः ॥

अर्थ—मृतपारा, अभ्रक,ईस्पात, गंधक और ताँबा यह सब औषधिं समान-भाग ले थूहरके दूधमें एकदिन खरल कर गोली बनालेवे, इसको प्रतिदिन एक-मासेभर खावे। इस औषधिको लोहेके पात्रमें सहतके साथ खरलकर सेवन करनेसे ७ सात दिनमें ही सूर्यवर्त्तादि नाना प्रकारके शिरोरोग दूर होतेहैं। यह सूर्योदय रस सर्व ऊर्ध्वरोगोंको दूर करैहै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

अथ महालक्ष्मीविलासरसः ।

लौहमभ्रंविषंमुस्तंत्रिफलात्रिकटुन्तथा ।
धुस्तूरंवृद्धदारञ्चबीजमिन्द्राशनस्यच ॥ ४४ ॥
गोक्षुरकद्वयश्चैवपिप्पलीमूलमेवच ।
एतेषान्तुसमंचूर्णंरसैर्धुस्तूरकस्यच ॥ ४५ ॥
निष्पिष्यवटिकाकार्याबदरास्थिप्रमाणतः ।
अनु[illegible]भक्ष्यंशुण्ठीचूर्णंद्विमासकम् ॥ ४६ ॥
आर्द्रकस्यरसश्चैवतोलकद्वयमेवच ॥
महालक्ष्मीविलासोऽयंसन्निपातनिवारकः ॥ ४७ ॥

अर्थ—लोहा, अभ्रक, विष,नागरमोथा,हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, धतूरेके बीज, विधारेके बीज; भांगरेके बीज, गोखुरूके बीज और पीपरामूल यह सब औषाधि समान भाग लेकर धतूरेके रसमें खरलकर वेरकी गुठलीकी बरावर गोली बनालेवे, २ दो मासे सोंठके चूर्णके साथ खावे, पश्चात् दो २ तोले अदरखका रस पान करे। यह महालक्ष्मीविलास रस सन्निपातको दूर करैहै ॥ ४४–४७ ॥

अथ सूर्यावर्तहरयोगः ।

दशमूलीकषायन्तुसर्पिःसैन्धवसंयुतम् ।
नस्यमर्द्धावभेदघ्नंसूर्यावर्त्तशिरोऽर्तिनुत् ॥ ४८ ॥
[illegible]तमालपल्लवरसेखरमंजरीकल्केननवनीतम् ।
नस्येनजयतिनियतंसूर्यावर्त्तंसुदुर्वारम् ॥ ४९ ॥
सूर्यावर्तंनिहन्त्याशु नस्येनैवप्रयोगराट् ।
कल्याणकंपिबेत्सर्पिःसूर्यावर्त्तनिपीडितः ॥ ५० ॥

अर्थ-दशमूलका क्काथ और सैंधेनोनके साथ घृतको पकाकर नास लेनेसे अर्द्धावभेदक और सूर्यावर्त्त नामक शिरोरोग नष्ट होताहै। अमलतासके पत्तोंका रस और चिरचिटेका कल्क, इनके साथ नौनी वी मिलाकर नासलेवे और पथ्यसे रहे, उससे सूर्यावर्त्त रोग दूर होताहै। चिरचिटेके बीजोंका कल्क और भांगरेके रसके साथ बकरीका दूध मिलाकर सूर्यकी तपनमें पकाकर नास लेनेसे सूर्यावर्त्त रोग दूर होताहै पूर्वोक्त कल्याणक घृतको पीनेसेभी सूर्यावर्त रोग दूर होताहै ॥ ४८-५० ॥

अथ सूर्य्यावर्त्तादिचिकित्सा।

शारिवोत्पलकुष्ठानिमधुकंचाम्लपेषितम्।
सर्पिस्तैलयुतोलेपःसूर्यावर्त्तार्द्धभेदयोः।
एषएवप्रयोक्तव्यःशिरोरोगक्षयात्मके ॥ ५१ ॥
भृंगराजमूलं कांजिकेन पिष्ट्वा नस्यं देयं मस्तकशूलं हन्ति।
पटोरिमूलं पिष्ट्वा शिरोल्लेपाच्च शूलं हन्ति ॥

इति शिरोरोगाध्यायः।

अर्थ-करियावासाऊ, कमल, कूठ और मुलेठी इनको एकत्र काँजीमें पीस घृत और तेलमें मिलाकर मस्तक और ललाटपै प्रलेप करनेसे सूर्यावर्त्त और अर्द्धाबभेदक रोग दूर होताहै। भांगरेकी जडको काँजीमें पीसकर नास लेनेसे मस्तकशूल दूर होताहै पेटारीकी जडको पीसकर माथेपै प्रलेप करनेसे शिर-शूल दूर होताहै ॥ ५१ ॥

इति शिरोरोगाध्यायःसमाप्तः।

अथ प्रदरचिकित्साधिकारः।

तत्रादौ वातजप्रदरचिकित्सा।

दध्नासौवर्चलाजाजीमधुकंनीलमुत्पलम्।
पिबेत्क्षौद्रयुतंनारीवातासृग्गदपीडिता ॥ १ ॥
कुशमूलं समुद्धृत्यपिबेत्त[illegible]लवारिणा ॥
एतत्पीत्वात्र्यहान्नारीप्रदरात्प्रमुच्यते ॥ २ ॥
बलामंशुमतींद्राक्षांलाक्षांक[illegible]करो[illegible]हणीम्।

कारवीकृष्णलवणंशारिवांलोध्रचंदनम् ॥ ३ ॥
वातासृग्गदशान्त्यर्थंपिबेद्दध्नावराङ्गना ॥ ४ ॥

अर्थ–कालानोन, जीरा, मुलेठी और नीलोत्पल यह सब औषधि समानभाग ले दहीमें पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे स्त्रियोंका वातज प्रदर रोग दूर होताहै । कुशकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर सेवन करनेसे ३ तीन दिनमेंही स्त्रियोंका प्रदर रोग दूर होताहै । खिरेंटी, शालपर्णी, दाख, लाख, कुटकी, सौंफ, कालानोन, अनंतमूल, लोध और लालचंदन इनको एकत्र दहीमें पीसकर सेवन करनेसे वातजनित प्रदररोग दूरहोताहै ॥ १–४ ॥

अथ पित्तजादिप्रदरचिकित्सा ।

धात्रीरसंसितायुक्तंयोनिदाहापहंपिबेत् ।
जीवनीयोपसिद्धंचपयःसमधुशर्करम् ॥ ५ ॥
पीतश्चसृग्गदंहन्तिपित्तजंरक्तजंतथा ।
काकजानुकमूलंवामूलंकार्पासमेववा ॥ ६ ॥
पाण्डुप्रदरशान्त्यर्थंपिबेत्तण्डुलवारिणा ।
रोहितकमूलकल्कंपाण्डवेऽसृग्गदेपिबेत् ॥ ७ ॥
अशोकवल्कलक्वाथंशृतंदुग्धंसुशीतलम् ।
यथाबलंपिबेत्प्रातस्तीव्रासृग्गदनाशनम् ॥ ८ ॥
समंगाधातकीपुष्पंमूलंनीलोत्पलस्यच ।
एतत्क्षीरेणपातव्यंस्त्रीणांप्रदरनाशनम् ॥ ९ ॥

अर्थ–आमलोंके रसमें बूरा डालकर पीनेसे योनिदाह दूर होताहै । जीवनीयगणकी औषधियोंके साथ दूधको पकाकर सहत और बूरा मिलाके पीनेसे रक्तज और पित्तज प्रदररोग दूर होताहै । काकजंघाकी जड, अथवा कपासकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर सेवन करनेसे पाण्डुवर्ण युक्त प्रदररोग दूर होजाताहै । रोहितककी जडको पीसकर पीनेसेभी पाण्डुवर्ण प्रदररोग दूर होताहै अशोककी छालको दूधमें औटाकर शीतल करके बलको देखकर प्रातःकाल पीवे तो अत्यन्त तीव्र प्रदररोग दूर होताहै । मँजीठ, धायके फूल और नीलोत्पलकी जडको एकत्र दूधके साथ पीसकर सेवन करनेसे स्त्रियोंका प्रदर रोग दूर होताहै ॥ ५–९ ॥

अथ दार्व्यादिक्काथः।

दार्वीरसांजनवृषाब्दकिरातबिल्व-
भल्लातकैश्वसुकृतोमधुनाकषायः।
पीतोजयत्यतिबलंप्रदरंसमूलं
पीतासिताऽरुणविलोहितनीलशुक्रम् ॥ १० ॥

अर्थ-दारुहलदी, रसौत, अडूसा, नागरमोथा, चिरायता, बेल और भिलावा इनके क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रदर रोग दूर होतेहैं ॥ १० ॥

अथ सर्वप्रदरचिकित्सा।

गुडेनवादरंचूर्णमोचमामंतथापयः।
पीतालाक्षाचसघृतापृथक्प्रदरनाशनाः ॥ ११ ॥

अर्थ-सूखे बेरोंके चूर्णमें गुड मिलाकर अथवा कच्चे केलेको दूधमें पीसकर पीनेसे या लाखको घीके साथ पीनेसे सर्व प्रकारके प्रदररोग दूर होजातेहैं ११॥

अथ चन्दनादिचूर्णम्।

चंदनंवरुणंलोध्रमुशीरंपद्मकेशरम्।
नागपुष्पश्चबिल्वश्चभद्रमुस्तकशर्करा ॥ १२ ॥
ह्रीवेरंचैवपाठाचकुटजस्यफलंत्वचम्।
शृंगवेरंसातिविषाधातकीसरसांजनम् ॥ १३ ॥
आम्रास्थिजम्बूसारास्थितथामोचरसोऽपिच।
नीलोत्पलंसमंगाचसूक्ष्मैलादाडिमत्वचम् ॥ १४ ॥
चतुर्विंशतिमेतानिसमभागानिकारयेत्।
तण्डुलोदकसंयुक्तंमधुनासहयोजयेत् ॥ १५ ॥
योगंलोहितपित्तानामर्शसांज्वरिणान्तथा।
मूर्च्छामदोषसृष्टानांतृषार्त्तानांप्रदापयेत् ॥ १६ ॥
अतीसारेतथाच्छर्द्यांस्त्रीणाश्चरक्तसंग्रहे ॥

प्रच्युतानांचगर्भाणांस्थापनंपरमुच्यते।
अश्विभ्यांसम्मतोयोगोरक्तपित्तनिबर्हणः॥ १७॥

अर्थ—चंदन, वरनाकीछाल, लोध, खश, कमलकेशर, नागकेशर, बेल, नागर मोथा, चीता, सुगंधवाला, पाढ, कुडेकीछाल, इन्द्रजौ, अतीस, धायकेफूल, रसौत, आमकी गुठली, जामुनकी गुठली, मोचरस, नीलकमल, मँजीठ, छोटी इलायची और अनारके फलकीछाल, यह औषधि समान भाग ले चूर्ण कर चावलोंके जलके साथ और सहत मिलाकर सेवन करनेसे रक्तपित्त, बवासीर, ज्वर, मूर्च्छा, आमदोष, तृषा, अतीसार, वमन और स्त्रियोंके रुधिरके विकार दूर होतेहैं। यह योग गिरते हुए गर्भको स्थापित करैहै, और अश्विनी कुमारोंकी सम्मतिसे रचागयाहै और रक्तपित्त नाशक है ॥ १२—१७॥

अथ प्रदरान्तकलौहः।

लौहंताम्रंहरितालंवंगमभ्रंवराटिका।
त्रिकटुत्रिफलाचित्रंविडंगंपटुपञ्चकम्॥ १८॥
चविकापिप्पलीशंखंवचाहबुषपाकलम्।
शटीपाठादेवदारुएलाचवृद्धदारकम्॥ १९॥
एतानिसमभागानिसंचूर्ण्यवटिकांकुरु।
शर्करामधुसंयुक्तंघृतेनभावयेत्पुनः॥ २०॥
रक्तंशीतंतथानीलंपीतंप्रदरदुस्तरम्।
कुक्षिशूलंकटीशूलंयोनिशूलंचसर्वगम्॥ २१॥
मन्दाग्निमरुचिंपाण्डुकृच्छ्रश्वासकासनुत्।
आयुःपुष्टिकरंबल्यंबलंवर्णप्रसादनम्॥ २२॥

अर्थ—लोहा, ताँबा हरिताल, वंग, अभ्रक, कौडी, त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, बायविडंग, पाँचोंनोन, चव्य, पीपल, शंख, वच, हाऊबेर, कूठ, कचूर, पाढ, देवदारु, इलायची और विधारा, यह सब औषधि समान भाग लेकर पीसलेवे, पश्चात इसमें बूरा और सहत मिलाकर घीमें भावना देकर गोली बना लेवे। यह प्रदरान्तक लौह—रक्तशीत नील और पीत प्रदर, कुक्षि, शूल, कटिशूल,

योनिशूल, सर्वप्रकारके शूल, मंदाग्नि, अरुचि, पाण्डुरोग, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, खाँसी इन सबको दूर करैहै आयु और पुष्टिको करैहै; बलको बढावैहै बल और वर्णको प्रसन्न करैहै ॥ १८–२२ ॥

अथ पुष्यानुगंचूर्णम् ।

पाठाजम्बाम्रयोर्मध्यंशिलोद्भेदंरसांजनम् ।
अम्बष्ठकींमोचरसंसमंगापद्मकेशरम् ॥ २३ ॥
बाह्लीकातिविषामुस्तंबिल्वंलोध्रंसगैरिकम् ।
कट्फलंमरिचंशुण्ठीमृद्वीकारक्तचंदनम् ॥ २४ ॥
कट्वङ्गवासकानन्ताधातकीमधुकार्ज्जुनम् ।
पुष्येणोद्धृत्यतुल्यानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत ॥ २५ ॥
तानिक्षौद्रेणसंयोज्यापाययेत्तण्डुलाम्बुना ।
अर्शोरक्तातिसारेषुरक्तंयच्चोपवेश्यते ॥ २६ ॥
दोषागन्तुकृतायेचबालानांतांश्चनाशयेत् ।
योनिदोषंश्वेतनीलंरक्तश्वेतंसपीतकम् ॥ २७ ॥
स्त्रीणांश्यावारुणंयच्चतत्प्रसह्यानिवर्त्तयेत् ।
चूर्णंपुष्यानुगंनामहितमात्रेयपूजितम् ॥ २८ ॥
शिलोद्भेदःपाषाणभेदी अम्बष्ठकी दाक्षिणे ख्याता ।

अर्थ–पाढ, जामुनकी गुठली, आमकी गुठली, पाषाणभेद, रसौत, मोइया, मोचरस, मँजीठ, कमलकेशर, केशर, अतीस, नागरमोथा, बेल, लोध, गेरू, कायफल, कालीमिरच, सोंठ, दाख, लाल चंदन, श्योनाक, अडूसा, अनन्तमूल, धायके फूल मुलेठी और अर्जुनकी छाल यह सब औषधि पुष्यनक्षत्रमें उखाड लावे, पश्चात् सबको समानभाग लेकर बारीक पीस लेवे, इसमें सहत मिलाकर चावलोंके जलके साथ पान करे । यह बवासीर, रक्तातिसार, रुधिरविकार, बालकोंके आगन्तुक दोष, योनिदोष, श्वेत, नील, रक्तश्वेत, पीत, श्याम और लालरंगके प्रदर रोगको दूर करैहै । यह पुष्यानुग चूर्ण आत्रेयका पूजित है ॥ २३–२८ ॥

अथ शीतकल्याणकघृतम् ।

कुमुदंपद्मकोशीरंगोधूमोरक्तशालयः ।
मुद्गपर्णीपयस्याचकाश्मरीमधुयष्टिका ॥ २९ ॥
बलातिबलयोर्मूलमुत्पलंतालमस्तकम् ।
विदारीशतपुत्रीचशालपर्णीसजीवका ॥ ३० ॥
फलंत्रपुषबीजानिप्रत्यग्रंकदलीफलम् ।
एषामर्द्धपलान्भागान्गव्यक्षीरञ्चतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
पानीयंद्विगुणंदत्त्वाघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
प्रदरेरक्तगुल्मेतुरक्तपित्तेहलीमके ॥ ३२ ॥
बहुरूपंचयत्पित्तंकामलायाश्चशोणिते ।
अरोचकेज्वरेजीर्णेपाण्डुरोगेमदेभ्रमे ॥ ३३ ॥
तरुणीचाल्पपुष्पाचयाचगर्भंनविन्दति ।
अहन्यहनिचस्त्रीणांभवतिप्रीतिवर्द्धनम् ॥ ३४ ॥

फलं त्रिफला प्रत्यग्रमपक्वकदलीफलम् ।

अर्थ—कुमोदिनी, कमल, खश, गेहूँ, लाल शालिधानोंके चावल, मुगवन, काकोली, कुम्भेर, मुलेठी, खिरेटी, कंघी, उत्पल, ताडका मस्तक, विदारीकन्द, शतावर, शालपर्णी, जीवक, त्रिफला, खीरेके बीज, और केलेकी कच्चीफली, प्रत्येक दो दो तोले लेकर कल्कबना लेवे, गायका दूध ८ आठसेर जल ४ चार सेर, और गायका घी २ दो सेर लेवे, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको पकावे। यह घी प्रदर, रक्तगुल्म, रक्तपित्त, हलीमक, बहुरूप पित्त, कामला, रुधिरविकार, अरुचि, जीर्णज्वर, पाण्डुरोग, मद, भ्रम, इन सब रोगोंको दूर करैहै। जिन स्त्रियोंके अल्पपुष्प है, और जो गर्भको नहीं ग्रहण करतीहैं, उनके भी इस घृतके प्रभावसे गर्भ रहजाताहै। और मनुष्योंकी दिन दिन प्रति स्त्रियोंमें प्रीति बढ़तीहै ॥ २९–३४ ॥

अथाशोकघृतम् ।

अशोकवल्कलप्रस्थंतोयद्रोणेविपाचितम् ।
तेनपादावशेषेणजीरकेनतथैवच ॥ ३५ ॥

घृतप्रस्थं [illegible]क्षिप्यचतथापरम् ।
तण्डुलाम्बुत्वजाक्षीरंप्रस्थंप्रस्थंपृथक्पृथक् ॥ ३६ ॥
केशराजरसस्यापिप्रस्थमेकंभिषग्वरः ।
जीवनीयैःप्रियालैश्चपरुषैःसरसांजनैः ॥ ३७ ॥
यष्टयाह्वाशोकमूलंचमृद्वीकाचशतावरी ।
तण्डुलीयकमूलंचकल्कैरेभिःपलार्द्धकैः ॥ ३८ ॥
शर्करायाःपलान्यष्टौगर्भदत्त्वासुचूर्णितम् ।
पुष्ययोगेनतत्पीतंनिहन्यात्सर्वदोषजम् ॥ ३९ ॥
श्वेतंनीलंतथाकृष्णंप्रदरंहन्तिदुस्तरम् ।
कुक्षिशूलंकटीशूलंयोनिशूलंचसर्वगम् ॥ ४० ॥
मन्दाग्निमरुचिंपाण्डुंकृशतांश्वासकासक[illegible] ।
आयुःपुष्टिकरंधन्यंबलवर्णप्रसादनम् ॥
देयमेतद्वरंसर्पिर्विष्णुनापरिकीर्त्तितम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, चावलोंका जल २ दो सेर बकरीका दूध २ दोसेर, कुकुरभांगरेका रस २ दो सेर, काथके लिये अशोककी छाल १ एकसेर, जल ८ आठसेर, शेष दोसेर, जीरा २ दोसेर, जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर और कल्कके लिये जीवनीय दशक, चिरौंजी, फालसा, रसौत, मुलेठी, अशोकके जडकी छाल, दाख, शतावर और चौलाईकी जड दो दो तोले ले यथाविधिसे घृतको पकावे, जब सिद्ध होकर शीतल होजाय तब ८ आठपल सफेद्‌-बूरा मिला देवे इसको पुष्यनक्षत्रमें पीवे, तो सर्वदोषज, श्वेत, नील और कृष्ण इन सर्व प्रकारके दुस्तर प्रदर रोगोंका नाश होताहै । तथा कुक्षिशूल, कटिशूल, योनिशूल, सर्वप्रकारके शूल, मंदाग्नि, अरुचि, पाण्डुरोग, कृशता, श्वास, खाँसी, यह सब रोग दूर होतेहैं । आयु और पुष्टिको करैहै, धन्य, बल और वर्णको प्रसन्न करैहै । यह घृत श्रीमान् विष्णु भगवान्ने रचाहै ॥३९–४१॥

अथ शिलाजतु[illegible] ।

हितश्चात्रविशेषेणलेहोऽयं[illegible]जाष्टकः ।
शुद्धसूतंसमंगन्धंरक्तोत्पलदलद्रवैः ॥ ४२ ॥

यामंमर्द्यंपुनर्मर्द्यंपूर्वादर्द्धंविनिक्षिपेत् ।
कौटजंत्रिफलानिम्बंपटोलघननागरैः ॥ ४३ ॥
भावितानिदशाहानिरसेद्वित्रिगुणेतथा ।
शिलाजतुपलान्यष्टौतावतीसितशर्करा ॥ ४४ ॥
त्वक्क्षीरीपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्यपलोन्मिता ।
निदिग्धिकाफलमूलाभ्यांपलंयुञ्ज्यात्रिजातकम्॥४५॥
मधुनःपलसंयुक्तंकुर्यादक्षसमान्गुडान् ।
दाडिमाम्बुपयःपक्षिरसतोयसुवासनान् ॥ ४६ ॥
तांभक्षयित्वाऽपिबेन्निरन्नोभुक्तएववा ।
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरान् ॥ ४७ ॥
पूतिकृन्मूत्रशुक्रादिदोषमेहमहोदरम् ।
कासासृक्रक्तपित्तंचप्रदरंरक्तसम्भवम् ।
तान्सर्वान्सुतरान्हन्तिसर्वदोषहराःशिवाः ॥ ४८ ॥

अर्थ–प्रदर रोगमें कुटजाष्टक विशेष हितकारीहै। पारा और गंधक दोनोंको समानभाग लेकर लालकमलके पत्तोंके रसमें खरल करे, जब एकप्रहर होजाय तब आधारस निकालके आधेको खरल करे पश्चात् कुडेकी छाल, त्रिफला, नीमकी छाल, पटोल, नागरमोथा और सोंठ इनके दुगुने या तिगुने रसमें १० दिन भावनादेवे । फिर इसमें आठ ८ पल शिलाजीत, मिश्री ८ आठपल, वंशलोचन, पीपल, आमला, काकडाशिंगी एक पल और जड सहित कटेरी और त्रिजातक प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले और सहत चारतोले मिलाकर दोदो तोलेकी गोलियाँ बना लेवे, इस रसको अनारके रसके साथ या दूधके साथ अथवा पक्षियोंके मांसके रसके साथ निन्ने या भोजनके ऊपर खावे । यह रस पाण्डुरोग, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा, तमकरोग, बवासीर, भगंदर, मूत्र शुक्रादि दोष, प्रमेह, महोदर, खाँसी, रक्तपित्त, रक्तप्रदर, इन सब रोगोंको दूर करैहै ॥ ४२–४८ ॥

अथ प्रदरान्तकोरसः ।

शुद्धसूतंतथागंधंशुद्धवंगकरूप्यकम् ।
खर्परंचवराटंचशाणमानंपृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥
तृतीयतोलकंग्राह्यंलौहचूर्णंददौसुधीः ।
कन्यानीरेणसंमर्द्यदिनमेकंभिषग्वरः ॥
असाध्यप्रदरंहन्तिभक्षणान्नात्रसंशयः ॥ ५० ॥

इति प्रदराध्यायः ।

अर्थ–पारा, गंधक, वंग, रूपा, खपरिया और कौडी प्रत्येकका चूर्ण चार चार मासे और लोहेका चूर्ण तीन तोले ले, सबको एकत्र मिलाकर घीकुवारके रसमें एकदिन खरल कर गोली बनालेवे । यह गोली असाध्य प्रदर रोगको दूर करैहै ॥ ४९ ॥ ५० ॥

इति प्रदराध्यायः ।

अथसोमरोगचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौसोमरोगनिदानम् ।

स्त्रीणामतिप्रसंगाद्वालोकाद्वाप्रमादादपि ।
आभिचारिकदोषाद्वागरदोषात्तथैवच ॥ १ ॥
आपःसर्वशरीरेषुक्षुभ्यन्तिप्रस्त्रवन्तिच ।
तासांताःप्रच्युताःस्थानान्मूत्रमार्गंव्रजन्तिहि ॥ २ ॥
प्रसन्नाविमलाःशीताःनिर्गन्धानीरुजःसिताः ।
स्त्रवन्तिचातिमात्रन्तुदौर्बल्यंशक्तिहीनता ॥ ३ ॥
शिरसःशिथिलत्वंचमुखतालोश्वशोपणम् ।
मूर्च्छाजृम्भाप्रलापंचदग्धंवाचातिमात्रतः ॥ ४ ॥
भक्ष्यभोज्यैश्वपेयैश्चतृप्तिंनलभतेसदा ।
सोमरोगइतिज्ञेयोदेहसोमक्षयात्स्त्रियाः ॥ ५ ॥
शरीरधारणाच्चापिसोमइत्यभिधीयते ।
सोऽतिकान्तंक्रमेणैवस्त्रवेन्मूत्रमभीक्ष्णशः ।
मूत्रातिसारमप्येवंतमाहुर्बलनाशनम् ॥ ६ ॥

अर्थ—अत्यन्त मैथुन, शोक, परिश्रम, अभिचार, और विषदोष, इन सब कारणोंसे स्त्रियोंके सर्व शरीरगत जल क्षोभित होकर गिरैहै, तब वह अपने स्थानसे हटकर मूत्रके मार्गसे निकलताहै । प्रसन्न, विमल, शीतल निर्गन्ध, पीडा रहित, सफेद रंगका अधिक जल मूत्रमार्गसे निकलताहै । इससे स्त्रियोंके दुर्बलता, शक्तिहीनता, मस्तकमें शिथिलता, मुखशोष, तालुशोष मूर्च्छा, जम्भाई, प्रलाप और शरीरमें रूक्षता उत्पन्न होतीहै । तथा भक्ष्य, भोज्य और पेय पदार्थोंके पीनेसे कदापि तृप्ति नहीं होवैहै । स्त्रियोंके शरीरमें सोमके नाश होनेसे सोमरोग होताहै । शरीरके धारण करनेसे इसको सोमरोग कहतेहैं जिस सोमरोगमें अतिक्रमसे वारंवार योनिके द्वारा अत्यन्त मूत्र निर्गत होवे. उसको मूत्रातिसार कहतेहैं । इससे स्त्रियोंका बल कम होताहै ॥ १–६ ॥

अथ सोमरोगचिकित्सा ।

कदलीनांफलंपक्वंधात्रीफलरसंमधु ।
शर्करापयसापेयंसोमधारणमुत्तमम् ॥ ७ ॥
माषचूर्णञ्चमधुकंविदारीमधुशर्करा ।
पयसापाययेत्प्रातस्त्वपांधारणमुत्तमम् ॥ ८ ॥

अर्थ--केलेकी पकी हुई फली, आमलोंका रस, सहत, बूरा और दूध, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर पीनेसे स्त्रियोंका सोमधातु निकलना बंद होजाताहै । उडदोंका चूर्ण, मुलेठी, विदारीकंद सहत और बूरा, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर दूधके साथ पीनेसे सोमरोग दूर होजाताहै ॥७–८॥

अथ धात्रीघृतम् ।

धात्रीफलरसप्रस्थेविदार्याःस्वरसेतथा ।
तृणपंचरसप्रस्थेघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ९ ॥
क्षीरस्यापिशतावर्याःप्रस्थंप्रस्थंरसस्यच ।
दत्त्वामृद्वग्निनावैद्यःपचेत्सिद्धंविधानतः ॥ १० ॥
सुशीतेप्रक्षिपेच्चूर्णमेषाञ्चापिपलंपलम् ।
मधुकंत्रिवृताश्चैवक्षारंचवृद्धदारकम् ॥ ११ ॥
शर्करायाःपलान्यष्टौमधुनश्चपलाष्टकम् ।
चूर्णंदत्त्वाप्रमथितंहन्त्याशुतृणदाहकम् ॥ १२ ॥

मूत्रकृच्छ्रं कृच्छ्रञ्चबहुमूत्रंविनाशयेत् ।
पित्तजान्विविधान्व्याधीन्वातजांश्चसुदुस्तरान् ।
करोतिशुक्रोपचयंसर्पिरेतदनुत्तमम् ॥ १३ ॥

इति सोमरोगाध्यायः ।

अर्थ—उत्तम गायका घी २ दो सेर, आमलोंका रस, २ सेर विदारीकंद का रस दो २ सेर, तृणपंचमूलका रस २ दो सेर, दूध २ दो सेर और शतावरका रस २ दो सेर ले सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे । जब पक कर शीतल होजाय तब मुलेठी, निसोत, जवाखार और विधारा, प्रत्येकका चूर्ण ४ चार चार तोले, बूरा ८ आठ पल और सहत आठ ८ पल मिलादेवे, यह घृत तृषा, दाह, मूत्रकृच्छ्र, कृच्छ्र,बहुमूत्र नाना प्रकारके पित्तरोग और विविध प्रकारके वातरोगोंको दूर करै है । यह उत्तम घी शुक्रको संचय करै है ॥ ९–१३ ॥

इति सोमरोगाध्यायः समाप्तः ।

अथ योनिव्याधिचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौसामान्यचिकित्सा ।

योनिव्यापत्सुभूयिष्ठंशस्यतेकर्मवातजित् ।
वस्त्यभ्यङ्गपरीषेकप्रलेपपिचुधारणम् ॥ १ ॥
कदंबमूलवल्कञ्चखदिराङ्गरामिश्रितम् ।
मासंनारीपिबेत्कालेयोनिशूलनिपीडिता ॥ २ ॥
रास्नाश्वगन्धावासाभिःशृतंवाशूलनुत्पयः ॥ ३ ॥

अर्थ—योनिव्याप्त रोगमें वातनाशक क्रिया, बस्तिकर्म्म, अभ्यंग, सेचन, प्रलेप और पिचु (रुई आदिका फोहा) धारण, यह सब हितकारी हैं । कदम्बकी जडकी छाल और खैरके अंगारोंका एकत्र चूर्ण करके जलके साथ एक महीने-तक पीवे तो योनिशूल दूर होवे । रास्ना, असगंध और अडूसा, इन तीनो औषधियोंके साथ दूधको पकाकर पीनेसे योनिशूल दूर होताहै ॥ १–३ ॥

अथ योनिशूलादिहरयोगाः ।

वासोपकुंचिकाजाजीवचारास्नाचचित्रकः ।
यमानीसैन्धवंक्षारंपिष्ट्वाभृष्टाघृतेनतु ॥ ४ ॥

योनिजंमर्मशूलघ्नंपेयमुष्णोपकादिभिः ।
शतावरीघृतंशस्तंयोनिपित्तविकारनुत् ॥ ५ ॥
रक्तयोन्यांयथादोषंप्रदरघ्नोहितोविधिः ।
पेटिकामूललेपाच्चयोनिभिन्नाप्रशाम्यति ॥ ६ ॥
मुसलीमूललेपाच्चप्रविष्टाच्चबहिर्न्नयेत् ।
पिष्ट्वाशम्बूकजंमांसंपक्वंतिन्तिडिसंयुतम् ॥ ७ ॥
लेपमात्रेणनारीणांयोनिकन्दहरंपरम् ।
घोषाख्यपुष्पलेपेनकन्दःशान्तिंव्रजेद्ध्रुवम् ॥ ८ ॥

अर्थ—अडूसा, कालाजीरा, जीरा, बच, रास्ना, चीतेकी जड, अजवायन, सैंधानोन और जवाखार इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर घृतमें भूनकर गरम जल आदिके साथ पीनेसे योनि शूल नष्ट होताहै। शतावरी घृत योनिजात-पित्तके विकारोंमें विशेष हितकारी है। रक्तस्राव युक्त योनिरोगमें प्रदरनाशक औषधादि देवे। पेटारीकी जडको पीसकर प्रलेप करनेसे योनिभिन्नारोग दूर होताहै। मुसलीकी जडको पीसकर प्रलेप करनेसे भी उक्तरोग दूर होताहै। पक्की इमलीके साथ शम्बूकके मांसको पीसकर लेप करनेसे अथवा तोरइयोंको पीसकर प्रलेप करनेसे योनिकन्द रोग दूर होताहै ॥ ४–८ ॥

अथ फलघृतम् ।

मंजिष्ठामधुकंकुष्ठंत्रिफलाशर्करावला ।
मेदाकाकोलीमूलंमूलश्चैवाश्वगन्धजम् ॥ ९ ॥
अजमोदाहरिद्रेद्वेहिंगुकःकटुरोहिणी ।
उत्पलंकुमुदंद्राक्षाकाकोल्याचंदनद्वयम् ॥ १० ॥
एतेषांकार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
शतावरीरसंक्षीरंघृताद्देयंचतुर्गुणम् ॥ ११ ॥
सर्पिरेतन्नरःपीत्वास्त्रियंनित्यंवृषायते ।
पुत्रान्संजनयेन्नारीमेधाढ्यान्प्रियदर्शनान् ॥ १२ ॥
याचैवाऽस्थिरगर्भास्यादयाचवाजनयेत्मृता ।
स्वल्पायुषंवाजनयेद्याचकन्यांप्रसूयते ॥ १३ ॥

योनिदोषेरजोदोषेपरिस्रावेचशस्यते ।
प्रजावर्द्धनमायुष्यंसर्वग्रहनिवारणम् ॥ १४ ॥
[illegible]लघृतंह्येतदश्विभ्यांनिर्मितंपुरा ।
अनुक्तंलक्ष्मणामूलंक्षिपन्त्यत्रचिकित्सकाः ॥ १५ ॥
जीववत्सैकवर्णायाघृतमत्रतुगृह्यते ।
अरण्यगोमयेनात्रवह्निज्वालाप्रदीयते ॥ १६ ॥

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, शतावरका रस ८ आठ सेर, गायका दूध ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये–मँजीठ, मुलेठी, कूठ, हरड, बहेडा, आमला, मिश्री, खिरेंटी, मेदा, लक्ष्मणा, काकोली, असगंधकी जड, अजमोदा, हलदी, दारुहलदी, हींग, कुटकी, उत्पल, कुमुद, दाख, काकोली, क्षीरकाकोली, लालचंदन और सफेद चंदन प्रत्येक दो दो तोले लेवे, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे। इस घृतको पीनेसे मनुष्य वृषकी समान स्त्रियोंमें आचरण करताहै। और जो स्त्री पीवे तौ उत्तम बुद्धिवाले और सुंदर स्वरूपवाले पुत्रोंको उत्पन्न करती है, जिन स्त्रियोंके गर्भ नहीं रहता है, जिन स्त्रियोंके मरेहुए पुत्र उत्पन्न होतेहैं, जिनके पुत्र उत्पन्न होकर मरजातेहैं और जिन स्त्रियोंके कन्यायें उत्पन्न होतीहैं, योनिदोषवाली, रजोदोषवाली और परिस्राव रोगमें यह घृत महाहितकारी है। प्रजावर्द्धक, आयुको बढानेवाला और सर्वग्रहनाशक है। यह फलघृत पूर्वकालमें श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने रचाहै। जिन गायोंका बछडा जीता है, और जिनका रंग बछडेके रंगसे मिलताहो, उन गायोंका यहाँ घी लेना चाहिये। आरनेउपलोंकी आगसे इस घृतको पकावे ॥ ९–१६ ॥

अथ गुह्यस्थानरोमहरलेपौ ।

दग्ध्वाशंखंक्षिपेद्रंभास्वरसेतच्चपेषितम् ।
तुल्याललेपनाद्धन्तिरोमगुह्यादिसम्भवम् ॥ १७ ॥
रंभा कदली तस्याः स्वरसः । आलं हरितालम् ।
रक्तांजनापुच्छचूर्णयुक्तन्तैलन्तुसार्षपम् ।
सप्ताहमुषितंहन्तिमूलाद्रोमाण्यसंशयः ॥ १८ ॥

अर्थ–शंखकी भस्मको केलेके रसमें पीसकर, पश्चात् बराबर हरिताल मिलाके लेप करनेसे गुह्यादि स्थानोंमें उत्पन्नहुए रोम दूर होजातेहैं। रक्तांजनके

पुच्छके चूर्णको सरसोंके तेलमें मिला सातदिन तक बासीकर पश्चात् लेपकरनेसे मूलसहित रोम गिरजातेहैं ॥ १७॥१८ ॥

अथारग्वधादितैलम् ।

आरग्वधमूलपलंकर्पद्वितयन्तुशंखचूर्णस्य ।
हरितालस्यचखरस्यमूत्रप्रस्थेकटुतैलम् ॥ १९ ॥
पक्वंतैलन्तुदत्त्वासशंखहरितालचूर्णितंलेपात् ।
निर्मूलयतिरोमाण्यन्येषांसम्भवोनैव ॥ २० ॥
खरो गर्द्दभः शंखहरितालयोर्मिलित्वा पादिकत्वम् ।

अर्थ—कडवातेल २ दो सेर, गधेकामूत्र ८ आठसेर, अमलतासकी जड़ ४ चारतोले, शंखका चूर्ण ४ चारतोले, हरितालका चूर्ण ४ चार तोले ले, यथाविधिसे तेलको पकावे, पश्चात् इसतैलमें चौथाई भाग शंख और हरितालका चूर्ण मिलाकर मलनेसे मूल सहित बाल गिर जातेहैं ॥ १९॥२० ॥

अथ कर्पूरादितैलम् ।

कर्पूरभल्लातकशंखचूर्णक्षारोयवानांचमनःशिलाच ।
तैलंविपक्वंहरितालमिश्रंरोमाणिनिर्मूलयतिक्षणेन २१॥

अर्थ—कडवातेल २ दोसेर, कल्कके लिये कपूर, भिलावा, शंखका चूर्ण, जवाखार और मैनशिल ले, यथाविधिसे तेलको पकावे, फिर इसतेलमें चौथाईभाग हरितालका चूर्ण मिलाकर मर्दन करनेसे मूलसहित रोम नाश होतेहैं॥२१॥

अथ लोमहरक्षारतैलम् ।

शुक्तिशंबूकशंखानांदीर्घवृन्तात्समुस्ककात् ।
दग्ध्वाक्षारंसमादायखरमूत्रेणगालयेत् ॥ २२ ॥
क्षाराष्टभागंविपचेत्तैलंवैसार्षपंबुधः ।
इदमन्तःपुरेदेयंतैलमात्रेयपूजितम् ॥ २३ ॥
बिन्दुरेकःपतेद्यत्रतत्ररोमनजायते ।
मदनादिव्रणेतैलमश्विभ्यामेवनिर्मितम् ॥ २४ ॥
अर्शसांकुष्ठरोगाणांपामादद्रुविचर्चिकाम् ।
क्षारतैलमिदंश्रेष्ठंसर्वक्लेदहरंपरम् ॥ २५ ॥

अर्थ–सीप, शम्बूक, शंख, श्योनाक, और मोखा, इनको एकत्र जलाकर क्षार ग्रहण करले, पश्चात् इस क्षारको गधेके मूत्रमें मिलाकर छानलेवे, यह क्षार ऽ॥ आधसेर और सरसोंका तेल ४ चार सेर लेवे, यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे। यह तेल आत्रेय करके पूजितहै। इस तेलका जिस स्थानमें बूंद गिरजाताहै, वहां रोम उत्पन्न नहीं होतेहैं। मदनादिके व्रणमें इस तेलको अश्विनीकुमारोंने कहाहै, बवासीर, कुष्ठरोग, पामा, दद्रु, विचर्चिका. इन रोगोंमें यह तैल श्रेष्ठ है और सर्व क्लेद नाशक है॥ २२–२५॥

अथ वातजपुष्पदोषनिदानं चिकित्सा च।

यस्यावाताहतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते।
यथाशुष्कञ्चकुसुमंमेघोदकसन्वितम्॥ २६॥
कटीशूलंयोनिशूलंबहुरक्तश्चदृश्यते।
औषधंतस्यवक्ष्यामियेनचोत्पद्यतेशुभम्॥ २७॥
कदम्बबृहतीमूलंबिल्वश्चैवचबुद्धिमान्॥ २८॥

अर्थ–जिस स्त्रीके पुष्प वातसे नष्ट होजाताहै, अर्थात् जो स्त्री ऋतुमती नहीं होती. उसके फल अर्थात् सन्तान नहीं होती, जैसे-सूखेफूल मेघके जलके प्राप्त होनेपरभी फलोंको उत्पन्न नहीं करसक्ते। और उससे कटिशूल, योनिशूल और बहुरक्तस्रावादि नानाप्रकारके रोग स्त्रियोंके उत्पन्न होतेहैं, उन रोगोंकी औषधि कहतेहैं–कदम, बृहतीकीजड़ और बेलकी जड़, इनको एकत्र जलमें पीसकर सेवन करनेसे–स्त्रियोंके वातज पुष्पदोष दूर होताहै॥ २६–२८॥

अथ पित्तजपुष्पदोषनिदानं चिकित्सा च।

यस्याःपित्तहतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते।
जम्बूफलसमंचोष्णंतस्यावहतिशोणितम्॥ २९॥
कटीशूलंमहच्चैवउदरेशूलमेवच।
औषधंतस्यवक्ष्यामियेनशीतेनशाम्यते॥ ३०॥
उत्पलंचंदनंकुष्ठंशूलंतगरमेवच।
यष्टीमधुसमायुक्तंसमभागानिकारयेत्॥ ३१॥
अजाक्षीरेणपातव्यंयावद्वहतिशोणितम्।

ततोयोन्यांविशुद्धायामिमांदद्यान्महौषधीम् ॥
लक्ष्मणांक्षीरसंयुक्तांनस्यंपानंचदीयते ॥ ३२ ॥

अर्थ—जिस स्त्रीके पित्तसे पुष्प दूषित होताहै, उसकेभी सन्तान उत्पन्न नहीं होतीहै । उससे स्त्रियोंके जानुदकी समान गरम रक्तस्राव अत्यन्त कटिशूल और उदरशूल उत्पन्न होताहै । अब उनकी औषधि कहतेहैं उत्पल, चन्दन, कूठ, मूली, तगर और मुलेठी यह सब औषधि एकत्र पीसकर बकरीके दूधके साथ पीनेसे विशेष लाभ होताहै । योनिके शुद्ध करनेके लिये यह औषधि देवे लक्ष्मणाकी जडको दूधमें पीस कर पीवे अथवा नास देवे इससे विशेष लाभ होताहै ॥ २९–३२ ॥

अथ कफजपुष्पदोषनिदानचिकित्सा च ।

यस्याःश्लेष्महतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते ।
लक्षणंतस्यवक्ष्यामिभेषजानिपुनस्तथा ॥ ३३ ॥
बहुलंपिच्छिलंस्निग्धंघनंस्रवतिशोणितम् ।
योनौतुशूलंचऋतौपरमंदारुणंतथा ॥ ३४ ॥
दद्यान्महौषधंतस्यैतेनसम्पद्यतेशुभम् ।
त्रिफलात्रिकटूचैवचित्रकस्यजटातथा ॥ ३५ ॥
एतानिसमभागानिछागीदुग्धेनपाययेत् ।
त्रिरात्रंसप्तरात्रंवायावद्वहतिशोणितम् ॥ ३६ ॥
तथायोन्यांविशुद्धायामिमांदद्यान्महौषधीम् ।
लक्ष्मणामूलचूर्णन्तुछागीक्षीरेणपाययेत ॥ ३७ ॥

अर्थ—जिस स्त्रीके कफसे पुष्प दूषित हो, उसके भी सन्तान उत्पन्न नहीं होती, उसके लक्षण कहतेहैं—बहुत तर, पिच्छिल, स्निग्ध और घनरक्तस्राव तथा ऋतुके समय योनिशूल और नाभिशूल उत्पन्न होताहै, अब उसकी औषधि कहतेहैं—हरड, बहेडा, आमला, सोंठ मिरच, पीपल और चीतेकी जड इन सबको एकत्र पीसके बकरीके दूधके साथ जबतक रक्तस्राव हो तबतक सेवन करे । योनि शुद्ध करनेके लिये यह महौषधि देवे कि लक्ष्मणाकी जडके चूर्णको बकरीके दूधके साथ पीवे ॥ ३३–३७ ॥

अथ प्रथमपुष्पप्रवृत्तिदिनफलम् ।

अर्कवारेयदायोषिद्भवेदृतुमतीकिल ।
पुत्रमेकंतदासूतेकाकवन्ध्याभवेद्ध्रुवम् ॥ ३८ ॥
सोमेपुष्पवतीनारीबहुकन्याप्रजायते ।
कदाचिल्लभतेपुत्रंसानारीयत्नतोऽपिवा ॥ ३९ ॥
आदावृतुंयदाप्नोतिमंगलेह्निकुमारिका ।
बहुपुत्रंदुहितरंलभतेप्राप्ययोषिता ॥ ४० ॥
यदापुष्पवतीनारीभवेद्बुधयुतेऽह्न्यपि ।
बहुपुत्रंतदाप्नोतिसमृद्धंराजपूजितम् ॥ ४१ ॥
यदाबलागुरोर्वारेभवेदृतुमतीभुवि ।
लभेद्बहुसुतंसातुभूयिष्ठंपानभोजनैः ॥ ४२ ॥
यदाशुक्रदिनेनारीपुष्पश्चलभतेतदा ।
मूलवन्ध्याभवेत्सापिनारदेनेतिभाषितम् ॥ ४३ ॥
यदाकर्मवशात्पुष्पमाप्नोतिशनिवासरे ।
यावान्पुत्रश्चदुहितातस्यास्तुम्रियतेध्रुवम् ॥ ४४ ॥
वारलक्षणमेतद्धिनारदेनमहात्मना ।
कथितंप्रथमेनार्याःपुत्रवत्याःसुनिश्चितम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–जो स्त्री प्रथम प्रथम रविवारके दिन ऋतुमती होय, उसके केवल एकही पुत्र उत्पन्न होगा, पश्चात् वह बंध्या होजातीहै । जो स्त्री प्रथम सोमवारके दिन ऋतुमती होय, उसके बहुतसी कन्यायें उत्पन्न होतीहैं और पुत्र उत्पन्न नहीं होता और जो होय तो बडे यत्नोंसे होय है, जो स्त्री मंगलवारके दिन रजस्वला होतीहै उसके बहुतसे पुत्र और कन्यायें उत्पन्न होतीहैं । प्रथम जो स्त्री बुधवारके दिन रजस्वला होय उसके समृद्धिमान और राजपूजित बहुतसे पुत्र उत्पन्न होतेहैं । जो स्त्री प्रथम बृहस्पतिवारके दिन रजस्वला होय, उसके पान और भोजनमें बहुतसे पटु पुत्र उत्पन्न होतेहैं । जो स्त्री प्रथम शुक्रवारके दिन रजस्वला होतीहै । वह निश्चय बंध्या होतीहै अर्थात् उसके कदापि संतान नहीं होता है उसके जितने पुत्र और कन्यायें उत्पन्न होवें वह सब मर जातेहैं । यह सब स्त्रियोंके प्रथम ऋतुके दिनोंके लक्षण स्वयं नारदमुनिने कहेहैं ॥ ३८–४५ ॥

अथ ऋतुस्नानानन्तरकर्त्तव्यानि ।

चतुर्थेऽह्नितत:स्नात्वाशुक्लमाल्याम्बराशुचि: ।
इच्छन्तीभर्तृसदृशंपुत्रंपश्येत्पुर:पतिम् ॥ ४६ ॥
पूर्वंपश्येदृतुस्नातायादृशंनरमंगना ।
तादृशंजनयेत्पुत्रंभर्त्तारंदर्शयेदत: ।
मासिमासिरज:स्त्रीणांस्रवतितत्र्यहंत्र्यहम् ॥ ४७ ॥
वत्सराद्द्वादशादूर्ध्वंयातिपंचाशत:क्षयम् ।
सुतन्तुद्वादशनिशासर्वास्तिस्रोऽतिनिन्दिता: ।
एकादशीचयुग्मासुपुत्रोऽन्यासुतुकन्यका: ॥ ४८ ॥
शुक्राधिकाच्चपुरुष:प्रमदारजसोऽधिकात् ।
नपुंसकंसमत्वेनशुक्रशोणितयोर्भवेत् ॥ ४९ ॥

अर्थ–ऋतुमती स्त्री चौथे दिन स्नान करके श्वेतमाला और वस्त्र पहरके पवित्र होकर पुत्रकी इच्छा करती हुई स्वामीके समीप जावे, प्रथम स्वामीहीके दर्शन करे, कारण यह है कि, रजस्वला स्त्री स्नानके अंतमें प्रथम जिसके दर्शन करे, उसीकी समान उसका पुत्र उत्पन्न होता है। प्रत्येक महीनेमें स्त्री तीन तीन दिन तक एक बार ऋतुमती होती है। १३ तेरह वर्षसे लेकर ५० पचास वर्षकी उमर तक होती है। १२ बारह रात्रियोंमें पुत्रोत्पादन होता है। ऋतुकालकी तीन रात्रि और ११ ग्यारह रात्रि गर्भाधानमें अत्यन्त निन्दनीय अर्थात् अनिष्टदायक हैं। ऋतुकालकी युग्मरात्रियोंमें स्त्रीसे मैथुन करनेसे पुत्र और अयुग्म रात्रियोंमें मैथुन करनेसे कन्या उत्पन्न होती है। पुरुषके शुक्र अधिक होनेसे पुत्र और स्त्रीके रजके अधिक होनेसे कन्या, तथा शुक्र और आर्त्तव समान होनेसे नपुंसक होता है ॥ ४६–४९ ॥

अथ गर्भाधाननियमा: ।

पद्मंसंकोचमायातिदिनेऽतीतेयथायथा ।
ऋतावतीतेयोनि:साशुक्रंनात:प्रतीच्छति ॥ ५० ॥
शुद्ध:स्नात्वाव्रजेन्नारीमपत्यार्थीनिरामय: ।
शुक्रशुक्रार्त्तवंसुस्थंसरक्तंमिथुनंमिथ: ॥ ५१ ॥

उत्तानाउन्मनायोषित्तिष्ठेदङ्गैःसुसंस्थितैः ।
तथाहिबीजंगृह्णातिदोषैःस्वस्थानमस्थितैः ॥ ५२ ॥
अवन्ध्यएवसंयोगःस्यादपत्यञ्चकामतः ।
एतेनापिविधानेनशुद्धासुखलुयोनिषु ॥ ५३ ॥
लभन्तेयोषितोगर्भंभेषजैस्तुविशेषतः ॥ ५४ ॥

अर्थ-दिनके अंतमें जिस प्रकार कमल बंद होजाता है, उसी प्रकार ऋतुकालके बीत जानेपर योनि संकुचित होजाती है, इस कारण ऋतुके पश्चात् पुष्प मूँद जाता है, फिर वीर्यको ग्रहण नहीं करता, अतएव स्त्रियोंके ऋतुके समय विधिपूर्वक सन्तानके लिये निरोगी मनुष्य शुद्ध और स्नान करके स्त्रीके पास जावे । इसप्रकार स्त्री पुरुषोंके परस्पर संयोगमें शुद्ध शुक्र और आर्तवके मिलनेसे सन्तान उत्पन्न होती है स्त्री और पुरुष दोनोंके संयोगके समय स्त्री सुखपूर्वक सीधी पाँव फैलाके शयनकर उन्मना हो बीजको ग्रहण करै स्त्रीकी योनि शुद्धहो और इसविधिसे संयोग कियाजावे तो अवश्य सन्तान होवे॥५०-५४॥

अथ गर्भधारण प्रयोगाः ।

कटुतैललवणयुक्तंमूलस्वरसंनिपीयकेशराजस्य ।
लभतेगर्भमवश्यंत्रिदिनंनारीतुदृष्टफलम् ॥ ५५ ॥
सितवर्षाभूमूलंमूलंवातुरगगंधायाः ।
परिणतकपित्थगुटिकाभक्षयेच्चैकवर्णगोक्षीरे ॥ ५६ ॥
पृथगितिपीतंदृष्टंगर्भदपरिचयन्नात्रसन्देहः ।
पुष्योद्धृतंलक्ष्मणामूलंपिष्टंचकन्ययातथैव ॥ ५७ ॥
ऋत्वन्तेघृतदुग्धाभ्यांपीत्वाप्नोत्यबलासुतम् ।
वारिणाशुक्लपक्षेतुपुष्येणतुविशेषतः ॥ ५८ ॥
घृतमंडेनवापीतंनागपुष्परजस्तथा ।
क्राथेनहयगंधायाःसाधितंसघृतंपयः ॥ ५९ ॥
ऋतुस्नाताबलापीत्वागर्भंधत्तेनसंशयः ॥ ६० ॥

अर्थ-कुकुरभांगरेका रस, सरसोंका तेल और सेंधानोन, तीनोंको एकत्र कर पीनेसे ऋतुमती स्त्री गर्भको धारण करती है । सफेद पुनर्नवेकी जड अथवा असगंधकी जड वा पके हुए कैथके गूदेको एक रंगकी गायके दूधमें पीसकर

गोली वनाकर सेवन करनेसे निश्चय ऋतुमती स्त्रियोंके गर्भ रहजाता है। लक्ष्मणाकी जडको पुष्यनक्षत्रमें उखाडकर घीकुआरके रसके साथ पीस घृत और दूध मिलाकर ऋतुके पश्चात् सेवन करनेसे स्त्रियोंके गर्भ रह जाता है। वडके अंकुर पुष्य नक्षत्रमें लाकर जलमें पीसकर सेवन करनेसे वंध्या स्त्री रजस्वला हो जाती है। पुष्यनक्षत्रमें अथवा शुक्लपक्षमें पुन्नागके फूलोंका चूर्ण जलके साथ अथवा घृतमंडके साथ पान करनेसे रजस्वला स्त्रियोंके निश्चय गर्भ रहजाता है। असगंध और घृतको दूधमें सिद्धकर पीनेसे निश्चय ऋतुमती स्त्रियोंके गर्भ रहता है॥ ५९-६० ॥

अथ वन्ध्यागर्भप्रदयोगाः।

अश्वगंधाकषायेणसाधितंशीतलंपयः।
पीत्वाकान्तसमाश्लेषाऋतौवंध्याप्रसूयते ॥ ६१ ॥
पिप्पल्यःशृंगवेरंचमरिचंकेशरन्तथा।
घृतेनसहपातव्यंवन्ध्यागर्भप्रदंपरम् ॥ ६२ ॥
पुत्रजीवकबीजंपीत्वापयसास्यपत्रमूलंवा।
योषिज्जीवद्वत्साजनयतिदीर्घायुषंपुत्रम् ॥ ६३ ॥

अर्थ-वंध्या स्त्री असगंधको दूधमें औटाके शीतल कर पीवे, पश्चात् पतिके साथ रमण करे तो निःसंदेह गर्भ रह जाय। पीपल सोंठ, मिरच और नागकेशरके फूल, इनको एकत्र पीस चूर्णकर घृतके साथ पीनेसे वंध्या स्त्री गर्भको धारण करतीहै। पतिजियाके वीज या पत्र अथवा जडको दूधमें पीसकर सेवन करनेसे स्त्री दीर्घायु पुत्रको जनतीहै॥ ६१-६३ ॥

अथ सोमघृतम।

सिद्धार्थकंवचाब्राह्मीशंखपुष्पीपुनर्नवा।
पयस्यात्रिफलाकुष्ठंतथाकटुकरोहिणी ॥ ६४ ॥
शारिवाद्वययष्ट्याह्वचोरकेसुमनोलता।
वृषपुष्पंमंजिष्ठादेवदारुमहौषधम् ॥ ६५ ॥
पिप्पल्यौभृंगराजश्चनिशाश्यामासुवर्चला।
दशमूलमपामार्गमश्वगन्धाशतावरी ॥ ६६ ॥

जलद्रोणेपचेदेतान्भागैर्द्विपलिकैरिमान् ।
तत्कषायंपरिस्राव्यंघृतस्यार्द्धाढकंपचेत् ॥ ६७ ॥
पाचितंतद्घृतंयुक्त्यागायत्र्याचाभिमंत्रितम् ।
द्विमासगर्भिणीनारीषट्मासादुपयोजयेत् ॥ ६८ ॥
सर्वज्ञंजनयेत्पुत्रंसर्वामयाविवर्जितम् ।
अस्यप्रभावात्कुक्षिस्थःस्फुटवाग्व्याहरत्यपि ॥ ६९ ॥
योनिदुष्टाश्चयानार्योरेतोदुष्टाश्चयेनराः ।
वंध्यापिलभतेगर्भंशूरंपण्डितमानिनम् ॥ ७० ॥
जडगद्गदमूकत्वंपानादेवापकर्षति ।
सप्तरात्रप्रयोगेणसुस्वरंकुरुतेनरम् ॥ ७१ ॥
मासमात्रप्रयोगेतुभवेच्छ्रुतिधरोनरः ।
नाग्निर्दहतितद्वेश्मनवज्रमपहन्तिच ॥ ७२ ॥
नतत्राम्रियतेबालोयत्रास्तेसोमसंज्ञितम् ॥ ७३ ॥
पयस्या क्षीरकाकोली सुमनोलता मालती ।

अर्थ–सफेदसरसों, वच, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, पुर्ननवा, क्षीरकाकोली, हरड, बहेडा, आमला, कूठ, कुटकी, अनंतमूल, करियावासाऊ, मुलेठी, चोरक, मालतीकेफूल, अडूसेकेफूल, मँजीठ, देवदारु, सोंठ, पीपल, गजपीपल, भांगरा, हलदी, कालानिसोत, सुवर्चला, दशमूल, सतावर, चिरचिटा और असगंध प्रत्येक आठ आठ तोले लेकर ३२ बत्तीससेर जलमें पकावे, जब आठसेर जल शेष रहे तब उतारकर छान लेवे, पश्चात् इसको अग्निपै फिर चढ़ादेवे, इसमें ४ चारसेर घी मिलाकर पकावे । इस घृतको त्रिपदी गायत्री मंत्रसे अभिमंत्रितकर दो महीनेकी गर्भवती स्त्री छे महीने तक सेवन करे, इसके सेवन करनेसे सर्वज्ञ और सर्वरोग रहित पुत्रको उत्पन्न करतीहै । इसके प्रभावसे कोखमें स्थितगर्भ स्फुट शब्दवाला बोलताहै । जो स्त्री योनिदुष्टाहै, जिन मनुष्योंका वीर्य दूषित है उन सबके विकारोंको यह सोमघृत निश्चय दूर करैहै । इस घृतका सेवन करनेसे वन्ध्या स्त्री भी शूर, पंडित और मानी पुरुषोंको गर्भमें धारण करतीहै, तथा जडता, गद्गदपना, गूंगापन, यह सब रोग इस घृतके पीनेसे निःसंदेह दूर होजाते

हैं। इसको सात रोजतक सेवन करनेसे मनुष्य उत्तम स्वरवाले होजातेहैं। इस घृतको एक महीनेतक सेवन करनेसे बहरे मनुष्य सुनने लगतेहैं। जिस घरमें यह सोमघृत रहताहै, उस घरमें कदापि अग्नि नहीं लगती, न बिजली गिरे और न बालक मरते हैं ॥ ६४–७३ ॥

अथ पुंसवनविधिःगर्भस्थितिलिङ्गाश्च।

गर्भमासत्रयादर्वाक्कुर्यात्पुंसवनंबुधः।
बलीपुरुषकारोहिदैवमप्यभिवर्त्तते ॥ ७४ ॥

पुंसवनं गर्भस्य पुत्रत्वोत्पादकम्।
गोष्ठजातवटस्य प्रागुत्तरशाखजे उभे शुङ्गे माषौ द्वौ तथा गौरसर्षपौ दध्नि योजितौ दुग्धेन सह पुष्यपीतौ द्रुतापन्नगर्भायाः पुत्रकारकौ भवतः ॥

क्षीरेणश्वेतबृहतीमूलंनासापुटेस्वयम्।
पुत्रार्थंदक्षिणेसिञ्चेद्वामेदुहितृवाञ्छया ॥ ७५ ॥
भिषक्पुंसवनेयुञ्ज्यात्तथासोमघृतादिकम्।
लिंगन्तुसद्योगर्भायायोन्यांबीजस्यसंग्रहः ॥ ७६ ॥
तृप्तिर्गुरुत्वंस्फुरणंशुक्रस्थानानुवर्त्तनम्।
हृदयस्पन्दनंतन्द्राहृग्ग्लानिर्लोमहर्षणम् ॥ ७७ ॥
ततःपरंगर्भचिह्नंपुष्पाभावोऽक्षिपक्ष्मणाम्।
क्षामतागरिमाकुक्षेर्मूर्च्छाछर्दिररोचकाः ॥ ७८ ॥
जृम्भाप्रसेकःसदनंरोमराज्याःप्रकाशनम्।
अम्लेष्टतास्तनौपीनौसस्तन्यौकृष्णचूचुकौ ॥ ७९ ॥

अर्थ–स्त्रियोंके तीन महीनेका गर्भ होजाय तो उनको पुंसवन कर्म्मकरे, कारण यहहै कि, पुरुषार्थ बलवान् है और दैव निर्बल है अर्थात् पीछे रहताहै। पुंसवन-कर्म्म गर्भमें पुत्रको उत्पन्न करनेवालाहै। गौके स्थानमें उत्पन्न हुए बडके उत्तर और पूर्वकी शाखायोंके दो अंकुर, दो उडद और दो सफेद सरसोंके दाने, इनको दहीमें मिलाकर पुष्यनक्षत्रमें दूधके साथ पीनेसे निश्चय गर्भवती स्त्री पुत्रवाली होजातीहै। सफेद कटाईकी जडको दूधमें पीसकर गर्भिणीके दाहिने

नाकके छिद्रमें नास देनेसे पुत्र और बाँए नाकके छिद्रमें नास देनेसे कन्या उत्पन्न होतीहै । और सोम घृतादिको भी पुंसवन कर्ममें देवे । योनिमें बीजका संग्रह, तृप्तिहोना, भारीपन, स्फुरण होना और शुक्र आर्त्तव स्थानमें स्थित होजावे, हृदय कम्प, तन्द्रा, दृष्टिलोप और रोमाञ्च, यह सब लक्षण उस स्त्रीके हैं जिसने तत्काल गर्भ धारण कियाहो । ऋतुधर्मका न होना नेत्रोंके पलक वारंबार खुलें मिचें, क्षामता, कुक्षिभार, मूर्च्छा, वमन, अरुचि, जम्भाई, वारंवार, मुखमें थूक आय जावे, शरीर टूटे, रोमांच होआवे, खट्टीचीजें खानेकी इच्छाहो, दोनो स्तन भारी, तथा स्थूल और उनके दोनोके अग्रभाग काले होजावें, यह सब लक्षण गर्भ रहजानेके पीछेके हैं ॥ ७४-७९ ॥

अथ मासक्रमेण गर्भाङ्गरचनावर्णनम् ।

अव्यक्तंप्रथमेमासिसप्ताहेकललम्भवेत् ।
कललंक्केदभूतोऽपिततश्चबुद्बुदाकृतिः ॥ ८० ॥
द्वितीयेमासिकललाद्घनपेष्यथवार्बुदम् ।
व्यक्तीभवतिमासेऽस्यतृतीयेगात्रपंचकम् ॥ ८१ ॥
मूर्द्धाद्धेंशंखिनीबाहूसर्वसूक्ष्म [illegible] जन्मच ।
[illegible] मयेबाहुमूर्द्धाद्यैर्ज्ञानञ्चसुखदुःखयोः ॥ ८२ ॥
तथासापुष्टिमाप्नोतिकेदारइव [illegible]ल्यया ।
चतुर्थेऽव्यक्तमंगानांचेतनायाश्चपंचमे ॥ ८३ ॥
षष्ठेस्नायुशि[illegible]वर्ण[illegible]ः ।
सर्वैःसर्वाङ्गस[illegible]र्णैर्भागैः[illegible]ष्यातिसप्तमे ॥ ८४ ॥
अतएवहिसंजात[illegible]स्तत्रजीवतिबालकः ।
तेजोऽष्टमेसंचरतिमातृ[illegible]न्वोमुहुःक्रमात् ॥
तेनतौम्लानमुदितौस्यातंजातोनजीवति ॥ ८५ ॥

अर्थ—पहिले महीनेमें गर्भ अव्यक्त अर्थात् गुप्त रहताहै तथा बीजको ग्रहण करनेके पश्चात् शुक्र और रज मिलकर ७ सात दिनमें कललाकृति होजाताहै, पश्चात् क्लेदरूप होकर बुदबुदाकृति होजाताहै । दूसरे महीने

बुद्बुदाकृतिसे घनमांस पेषी होजाताहै। तीसरे महीनेमें मांसपेषीका पंचगात्राकार परिणमन होताहै, अर्थात् मांसपेषीसे मस्तकका अर्द्धभाग, बाहु, शंखिनी और अन्यान्य सूक्ष्म सूक्ष्म अंग उपजतेहैं। और कुछ समयके बाद मस्तकका अपरार्द्ध और सुख दुःखका ज्ञान उत्पन्न होताहै। और जिस प्रकार तडाग तथा नहरोंसे खेत परिपुष्ट होताहै, उसी प्रकार गर्भिणीका गर्भ परिपुष्ट होताहै। चौथे महीनेमें गर्भके सम्पूर्ण अप्रकट अंग प्रकट होजातेहैं, पाँचवें महीनेमें चेतना प्रकट होतीहै। छठे महीनेमें स्नायु, शिरा, रोम, वल, वर्ण, नख और त्वचा उत्पन्न होतीहै सातवें महीनेमें गर्भ सम्पूर्ण अंगयुक्त होजाताहै, इससे इस महीनेका जन्मा हुवा बालक जी जाताहै। आठवें महीनेमें सर्वधातुओंका तेज क्रमसे बारंबार माता और पुत्रमें संचारकरताहै अर्थात् कभी माताका तेज संचार करे और कभी गर्भगत बालकका तेज संचार करे, इसकारण गर्भिणी और गर्भस्थ बालक दोनो म्लान (मुरझाए हुए) और मुदित (प्रसन्न) होतेहैं। अतएव अष्टम मासकी उत्पन्न हुई सन्तान नहीं जीतीहै ॥ ८०-८५ ॥

अथ गर्भविलासरसः।

रसगंधकतुत्थञ्चत्र्यहंजम्बीरमर्दितम्।
त्रिभावितंत्रिकटुनादेयंगुंजाचतुष्टयम्।
गर्भिण्याःशूलविष्टम्भज्वराजीर्णेषुकेवलम् ॥ ८६ ॥

अर्थ-पारा, गंधक और नीलाथोथा, यह तीनो द्रव्य समानभाग लेकर जम्भीरी नीबूके रसमें तीन दिनतक खरल करे, पश्चात् त्रिकुटेके क्वाथमें भावना देकर चार रत्तीभर सेवन करे, इससे गर्भिणियोंका शूल, विष्टम्भ, ज्वर और अजीर्ण रोग दूर होताहै ॥ ८६ ॥

अथ प्रथमगर्भचिन्तामणिरसः।

तुत्थस्थानेस्वर्णंदेयंचिंतामणिरसःस्मृतः ॥ ८७ ॥

अर्थ-उपरोक्त गर्भविलास रसमें स्वर्ण मिलानेसे गर्भचिंतामणि रस होजाताहै, इसकी मात्रा गर्भविलास रसकी समान है और गुणभी गर्भविलासके तुल्य है ॥ ८७ ॥

अथ द्वितीयगर्भचिन्तामणिरसः।

जातीफलंटंकणंचव्योपंपैत्येन्द्ररक्तकम्।
तच्चूर्णंसमभागेनमर्दितंप्रहरद्वयम् ॥ ८८ ॥

जम्बीररसयोगेनवटींकुर्याद्विचक्षणः ।
गुंजाद्वयंप्रमाणेनकृत्वावैद्यःप्रयत्नतः ॥ ८९ ॥
आर्द्रकस्यरसेनैवभक्षयेदुष्णवारिणा ।
निहन्तिसर्वरोगंचभास्करस्तिमिरंयथा ॥ ९० ॥

अर्थ—जायफल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, गंधक और सिंग्रफ इन सबको एकत्र पीसके जम्भीरी नीबूके रसमें दो प्रहर खरलकर दो दो रत्तीकी गोली बनालेवे प्रतिदिन एक गोली अदरखके रसमें मिला कर गरम जलके साथ सेवन करनेसे गर्भिणियोंके सर्व प्रकारके रोग दूर होजातेहैं ॥ ८८–९० ॥

अथ तृतीयगर्भचिन्तामणिरसः ।

रसंतालंतथालौहंप्रत्येकंकर्षमात्रकम् ।
कर्षत्रयंतथाचाभ्रंकर्पूरंवंगताम्रकम् ॥ ९१ ॥
जातीफलंतथाकोषंगोक्षुरंचशतावरी ।
बलातिबलयोर्मूलंप्रत्येकंतोलकंशुभम् ॥ ९२ ॥
वारिणावटिकाकार्याद्विगुंजफलमानतः ।
सन्निपातंनिहन्त्याशुस्त्रीणांचैवविशेषतः ।
गर्भिण्याज्वरदाहंचप्रदरंसूतिकामयम् ॥ ९३ ॥

अर्थ—पारा, हरिताल और लोहा प्रत्येक एक एक कर्ष, अभ्रक, कपूर, वंग. ताँबा, जायफल. जावित्री, गोखुरू और सतावर प्रत्येक तीन तीन कर्ष, दोनो खिरैटियोंकी जड,प्रत्येक एक एक तोले । इन सबको एकत्र पीसकर जलमें दो दो रत्तीकी गोली बना लेवे, प्रतिदिन एक गोली खावे, इससे गर्भिणी स्त्रियोंके ज्वर, दाह, प्रदर, सूतिका और सन्निपातादि रोग दूर होतेहैं ॥ ९१–९३ ॥

अथ गर्भरक्षार्थमुपायाः ।

अतिव्यवायव्यायामदिवास्वप्नप्रजागरान् ।
तीक्ष्णोपचारशोकादीञ्जलपानोत्कटासनम् ॥ ९४ ॥
दारुणानितथान्यानिगर्भिणीपरिवर्ज्जयेत् ।
संप्राप्तेनवमेमासिमैथुनंपरिवर्ज्जयेत् ॥ ९५ ॥
यदिगच्छतिदुर्मेधाकाममोहादचेतनः ।

विपद्यतेतदागर्भएतत्तेनात्रसंशयः ॥ ९६ ॥
गर्भेमहतिद्वितीयस्यास्तुगर्भिण्याःपुष्पदर्शनम् ।
रक्तस्रावोऽथवातत्रापित्तश्लेष्महितोविधिः ॥ ९७ ॥
गर्भोभिघातविषमाशनपीडिताद्यैः
पक्वंद्रुमादिवफलंपततिक्षणेन ॥
मूढंकरोतिपवनःखलुमूढगर्भं
शूलंचयोनिजठरादिषुमूत्रसंगः ॥ ९८ ॥

अर्थ–अत्यन्त मैथुन, परिश्रम, दिनमें सोना, रात्रिमें जागरण, तीक्ष्ण उपचार, शोकादि, उत्कटपान, उत्कटभोजन उत्कट आसन तथा अन्यान्य दारुण विषयोंको गर्भिणी त्याग देवे। आठवें महीनेमें एकवार भी मैथुन न करे। यदि कोई निर्बुद्धि मनुष्य कामान्ध होकर आठवें महीनेमें गर्भिणीसे संगम करे तो गर्भ निश्चय नष्ट होजाताहै । जो गर्भावस्थामें स्त्रियोंके रजोदर्शन अथवा रक्तस्राव होय तो पित्तश्लेष्मनाशक विधि प्रयोग करे । अभिघात, विषमाशन और पीडनादिसे तत्काल गर्भ पतित होजाताहै । जैसे वृक्षसे पके हुए फल क्षणमात्रमें पतित होजातेहैं । वायुसे मूढगर्भ होताहै, तथा योनि, जठरादिकमें शूल और मूत्ररोध होताहै ॥ ९४–९८ ॥

अथाद्यमासतःगर्भशूलचिकित्सा ।

गर्भिण्याःप्रथमेमासिगर्भशूलंप्रजायते ।
चन्दनंमधुकंलोध्रंकेशरंनीलमुत्पलम् ॥ ९९ ॥
शृंगाटकंकशेरुश्चसमभागानिकारयेत् ।
क्षीरेणपाययेत्प्रातर्गर्भधारणमुत्तमम् ॥ १०० ॥
द्वितीयेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा ।
काकोलीक्षीरकाकोलीआमलामधुयष्टिका ॥ १०१ ॥
घृतेनसमभागानिक्षीरेणालोड्यपाययेत् ।
हन्तिशूलंसमुत्पन्नंगर्भधारणमुत्तमम् ॥ १०२ ॥

अर्थ–गर्भिणीके प्रथम मासमें गर्भशूल उपजे तो लालचंदन, मुलेठी, लोध, नीलोत्पल, सिंघाडे और कशेरू, इनका चूर्ण कर दूधके साथ प्रातःकाल

पीवे, यह उत्तम गर्भको धारण करनेवाला है गर्भिणीके दूसरे महीनेमें गर्भ शूल उपजे तो काकोली, क्षीरकाकोली, भुई आमला और मुलेठी, इनका चूर्ण घृत और दूधमें मिलाकर पीनेसे गर्भशूल नष्ट होकर निश्चय गर्भकी रक्षा होती है ॥ ९९–१०२ ॥

अथ तृतीयमासतः गर्भशूलचिकित्सा ।

तृतीयेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा ।
अनन्ताशारिवाक्षीरकाकोलीचवृक्षादनी ॥ १०३ ॥
क्षीरेणपाययेत्प्रातःशूलंहन्तिसुनिश्चयः ।
चतुर्थेमासिगर्भिण्याःशूलंवाजायतेयदि ॥ १०४ ॥
उत्पलस्यचशालूकंयष्टीमधुकमेवच ।
लोध्रेणापिसमंपिष्ट्वापिबेत्क्षीरेणसंयुतम् ॥ १०५ ॥
ततोविजयतेशूलंस्वास्थ्यंचैवोपपद्यते ।
पंचमेमासिगर्भिण्यागर्भेशूलंप्रजायते ॥ १०६ ॥
नीलोत्पलस्यशालूकंपद्मबीजंमृणालकम् ।
शर्करायाःसमंपिष्ट्वाक्षीरेणालोड्यपाययेत् ॥ १०७ ॥
अस्यसेवाप्रसादेनस्वास्थ्यंसम्पद्यतेक्षणात् ॥ १०८ ॥

अर्थ–गर्भिणीके तीसरे महीनेमें गर्भशूल उत्पन्न होय तो दोनो सारिवा, क्षीरकाकोली और बाँदा इन सबको समान भाग ले दूधमें पीसकर सेवन करनेसे गर्भशूल दूर होताहै । चौथे महीनेमें गर्भिणीके गर्भशूल उपजे तो भँसीडे, मुलेठी और लोधको पीसकर दूधके साथ पीवे, इससे निःसंदेह गर्भ-शूल दूर होजाताहै । पाँचवें महीनेमें गर्भशूल उपजे तो नीलोत्पलकी कन्द, कमलगट्टा, मृणाल और शर्करा यह सब समान भाग ले एकत्र पीस दूधमें मिलाकर पीनेसे निश्चय गर्भ शूल दूर होकर गर्भकी रक्षा होतीहै १०३–१०८ ॥

अथ षष्ठमासतःगर्भशूलचिकित्सा ।

षष्ठेमासिभवेद्यस्याःशूलपीडा[illegible]दारुणा ।
नीलोत्पलस्यशालूकंकदलीमा[illegible]चरसस्तथा ॥ १०९ ॥
शर्कराक्षीरकाकोलीजीरकेणसम[illegible] ।

गवांक्षीरेणसप्ताहंपानाच्छूलहरंपरम् ॥ ११० ॥
सप्तमेमासिगर्भिण्याःशूलंसंजायतेयदि ।
शृंगाटकंविसंद्राक्षाकशेरुमधुकंसिता ॥ १११ ॥
तत्सर्वंसमंपिष्ट्वाक्षीरशर्करयासह ।
नारीणांपानयोगेनगर्भस्थापनमुत्तमम् ॥ ११२ ॥

अर्थ—छठे महीनेमें गर्भशूल उत्पन्न होय तो नीलोत्पलकी कन्द, केला, मोचरस, शर्करा क्षीरकाकोली और जीवक, यह सब समानभाग ले दूधके साथ सात दिन पीनेसे दारुण गर्भशूल नष्ट होताहै । सातवें महीनेमें गर्भशूल उत्पन्न होय तो सिंघाडे, भसींडे, दाख, कशेरू, मुलेठी और बूरा यह समानभाग ले पीसकर दूध और मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्भस्थापन होताहै ॥१०९-११२॥

अथाष्टममासीयगर्भशूलंचिकित्सा ।

अष्टमेमासिगर्भिण्याःशूलंसंजायतेयदा ।
[illegible]चशालूकंशृंगाटकद्वयन्तथा ॥ ११३ ॥
मंजिष्ठारक्तशालिंचलोध्रंक्षीरेणसंयुतम् ।
[illegible]त्र्यहंस्त्रीणांगर्भधारणमुत्तमम् ॥ ११४ ॥
[illegible]वमेमासिगर्भिण्यागर्भशूलंसुदारुणम् ।
पिष्ट्वाचक्षीरकाकोलीक्षीरेणसुखमाप्नुयात् ॥ ११५ ॥
दशमेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा ।
[illegible]लबीजानिशालूकंमधुसैन्धवम् ।
गवांक्षीरेणपातव्यंगर्भस्थापनमुत्तमम् ॥ ११६ ॥

अर्थ—आठवें महीनेमें गर्भशूल उपजे तो कमलकन्द, दोनो प्रकारके सिंघाडे, मंजीठ, लालशालिधान और लोध, इनको दूधमें पीसकर सेवन करनेसे तीन दिनमें ही गर्भशूल, दूर होजाताहै । नवमें महीनेमें गर्भशूल उपजे तो क्षीरकाकोलीको दूधमें पीनेसे विशेष लाभ होताहै । दशम महीनेमें गर्भशूल उपजे तो कमल, उत्पलके बीज, शालूक, सहत और सेंधानोनको एकत्र मिलाकर दूधके साथ पीनेसे निश्चय गर्भकी रक्षा होतीहै ॥ ११३-११६ ॥

अथ गर्भशूलहरयोगौ।

चंदनेनमृणालेनपद्मकेशरपद्मकैः।
गर्भप्रदेहंकुर्वीतमधुकेनोत्पलेनच ॥ ११७ ॥
काकोडुम्बरफलजस्वरसोमोचोत्थगर्भोवा।
मधुनापीतःसद्यःशमयतिगर्भस्रुतिंबहुलाम् ॥ ११८ ॥

अर्थ–लालचंदन, खश, कमलकेशर, पद्माख, मुलेठी और उत्पल इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गर्भिणीके उदरपै प्रलेप करनेसे गर्भशूल नष्ट होताहै। कठूमरके फलोंका स्वरस या केलेका मध्यभाग सहतके साथ पीनेसे तत्काल गर्भस्राव दूर होताहै ॥ ११७ ॥ ११८ ॥

अथ बृहद्गर्भचिन्तामणिरसः।

सूतंगंधंतथास्वर्णंलौहंरजतमाक्षिकम्।
हरितालंवंगभस्माप्यभ्रकंसमभागिकम् ॥ ११९ ॥
भावनाखलुदातव्यारसैरेषांपृथक्पृथक्।
ब्रह्मीवासाभृंगराजपर्पटंदशमूलकम् ॥ १२० ॥
सप्तधाभावयेद्वैद्योगुंजामानांवटींचरेत्।
गर्भचिंतामणिरयंपूर्ववत्कथिताःगुणाः ॥ १२१ ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सोना, लोहा, रूपा, सोनामाखी, हरिताल, वंगकी भस्म और अभ्रक, यह सब समान भाग ले पीसकर ब्राह्मी, अडूसा, भांगरा, पित्तपापडा और दशमूलके रसमें अलग अलग सात भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवे, यह गर्भचिंतामणि रस ज्वर और शूलादि रोगोंको दूर करैहै ॥ ११९–१२१ ॥

अथ गर्भविनोदरसः।

त्रिभागंत्रिकटुंदेयंचतुर्भागंचहिंगुलम्।
जातीकोषंलवङ्गश्चप्रत्येकश्चत्रिकार्षिकम् ॥ १२२ ॥
सुवर्णमाक्षिकंचैवपलार्द्धंप्रक्षिपेद्बुधः।
जलेनमर्दयित्वाथचणमात्रावटीकृता।
निहन्तिगर्भिणीरोगंभास्करस्तिमिरंयथा ॥ १२३ ॥

अर्थ-त्रिकुटा३ तीनभाग, सिंग्रफ चार भाग, जायफल,और लौंग प्रत्येक३ तीन भाग, सोनामाखी, ४ चार भाग, इन सबका एकत्र चूर्णकर जलके साथ पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवे। यह गर्भविनोद रस यथानुपानके साथ खानेसे गर्भिणीके सम्पूर्ण रोग दूर करैहै ॥ १२२ ॥ १२३ ॥

अथ गर्भस्थितिस्तच्छूलघ्नयोगश्च ।

घटनप्रवृत्तघटकृतकरयुगसंलग्नकर्दमः पीतः ।
समधुश्छागीक्षीरैर्नियतंसंस्थापयेद्गर्भम् ॥ १२४ ॥
कशेरुशृंगाटकजीवनीयैःपद्मोत्पलैरण्डशतावरीभिः ।
सिद्धंपयःशर्करयाविमिश्रंसंस्थापयेद्गर्भमुदीर्णशूलं१२५

अर्थ-बडेके बनाते समय कुम्हारके हाथमें जो मट्टी लग जातीहै,उस मट्टीको सहत और बकरीके दूधमें मिलाकर पीवे तो गर्भस्थापन होजाताहै। कशेरू, सिंघाडे, जीवनीयगणकी औषधि, कमल, उत्पल, अंड और सतावर इन सब औषधियोंको दूधमें पकाकर पीनेसे-निश्चय गर्भशूल दूर होजाताहै१२४।१२५

अथाष्टधाविकृतगर्भस्वरूपाणि ।

भुग्नोऽनिलेनाविगुणेनततःसगर्भः ।
संख्यामतीवबहुधासमुपैतियोनिम् ॥
द्वारंनिरोध्याशिरसाजठरेणकश्चि-
त्कश्चिच्छरीरपरिवर्त्तितदेहकुब्जः ॥ १२६ ॥
एकेनकश्चिदपरस्तुभुजद्वयेन
तिर्यग्गतोभवतिकश्चिदवाङ्मुखोऽन्यः ।
पार्श्वोपवृत्तगतिरेवतथैवकश्चि-
दित्यष्टधागतिरियंह्यपराचतुर्धा ॥ १२७ ॥

अर्थ-दुष्ट वातसे गर्भ टेढा होकर अनेक प्रकारसे योनिके मुखपर आनकर अडजाताहै, तहाँ कोई गर्भ योनिके मुखको मस्तकसे रोक लेताहै कोई उदरसे योनिद्वारको रोकताहै कोई अपने शरीरको गोलघुमाकर कुबडेपनसे-योनिद्वारको रोकताहै, कोई एकहाथसे, कोई दोनों हाथोंसे योनिद्वारको रोकताहै, कोई तिरछा होकर योनिद्वारको रोकताहै, कोई नीचा मुख होकर योनि-

द्वारको रोकताहै और कोई पसलियोंको टेढ़ा करके योनिं द्वारको रोकताहै, ऐसे आठ प्रकारसे विकृत गर्भकी गति होतीहै । कोई चार प्रकारसे कहतेहैं ॥ १२६ ॥ १२७ ॥

अथ गर्भपातयत्नो गर्भिणीज्वरचिकित्सा च ।

करिदमनदहनमूलंपिष्टंसलिलेनपानतःसद्यः ।
चिरमचिरजंगर्भंमृतममृतंवापातयति ॥ १२८ ॥
ज्वरादिरोगेगर्भिण्यामृदुकुर्याच्चिकित्सितम् ।
तीक्ष्णंहिभेषजंतस्यागर्भवातायकल्पते ॥ १२९ ॥
चन्दनंशारिवालोध्रंमृद्वीकाशर्करान्वितम् ।
क्वाथंकृत्वाप्रदातव्यंगर्भिण्याज्वरनाशनम् ॥ १३० ॥
शर्करा प्रक्षेप्या ।

अर्थ—नागदौनकी जड, और लाल चीतेकी जडको जलमें पीसकर पीनेसे तत्काल थोडे दिनोंका बहुत दिनोंका, मराहुआ और विनामरा हुआ गर्भ पतित होजाताहै । गर्भिणी स्त्रियोंके ज्वरादि रोगोंमें मृदु चिकित्सा करे, क्योंकि तीक्ष्ण औषधियोंके द्वारा चिकित्सा करनेसे गर्भ पतित होजाताहै । चन्दन, अनन्तमूल, लोध, इनका क्वाथ बना मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्भिणियोंका ज्वर दूर होजाताहै ॥ १२८–१३० ॥

अथ सहचरादिः ।

सहचरमुस्तगुडूचीभद्रोत्कटबिल्ववालकैःक्वथितम् ।
पेयंमिश्रंमधुमिश्रंसद्योज्वरशूलनुत्सद्यः ॥ १३१ ॥

अर्थ—कल्सरैया, नागरमोथा, गिलोय, भद्रमोथा, बेल और सुगंधवाला, इनके क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे गर्भिणियोंके तत्काल ज्वर और शूल नाश होताहै ॥ १३१ ॥

अथ गर्भिणीज्वरादिहरक्वाथः ।

एरण्डमूलममृतामंजिष्ठारक्तचन्दनम् ।
दारुपञ्चमतःक्वाथोगर्भिण्य ज्वरनाशनः १३२ ॥

रास्नाछिन्नरुहासकुष्ठसहितैर्मूलैश्चपंचान्वितैः ।
तत्प्रातःक्वथितंसशर्करयुतंक्षौद्रेणसंयोजितम् ॥ १३३ ॥
पीतंहन्तिचगर्भिणीज्वरगदंश्लेष्माभिवृद्धिंपुनः ।
सद्यश्चैवचिकित्सकैश्चकुशलैर्ज्ञात्वापुराणैर्मतम्॥ १३४॥
मुस्तपर्पटदुःस्पर्शकण्टकारीमहौषधम् ।
वातश्लेष्मारुचिहरंगर्भिण्याज्वरनाशनम् ॥ १३५ ॥
आम्रजम्बूत्वचक्काथंलेहयेल्लाजशक्तुभिः ।
अनेनलीढमात्रेणगर्भिणीसारकंजयेत् ॥ १३६ ॥

अर्थ–अरंडकी जड़, गिलोय, मजीठ, लालचंदन, देवदारु और पद्माख यह सब औषधि समानभाग ले क्काथ बनाकर पीनेसे गर्भिणी स्त्रियोंका ज्वर दूर होताहै। रास्ना, गिलोय, कूठ और पंचमूल, यह सब औषधि समानभाग ले क्काथ बना बूरा और सहत डालकर पीनेसे गर्भिणियोंका ज्वर और श्लेष्मा, दूर होताहै। नागरमोथा, पित्तपापडा, धमासा, कटेरी और सोंठ यह सब समान भाग ले क्काथ बनाकर पीनेसे गर्भिणियोंके वात श्लेष्म, अरुचि और ज्वर दूर होताहै। आमकी छाल और जामुनकी छालका क्काथ बना तिसमें खीलोंके सत्तू मिलाकर पीनेसे तत्काल अतीसार रोग दूर होताहै ॥ १३३–१३६ ॥

अथ ह्रीबेरादिक्काथः ।

ह्रीवेराऽरलुरक्तचंदनबलाधन्याकवत्सादनी ।
मुस्तोशीरयवासपर्पटविपाक्काथंपिबेद्गर्भिणी ॥ १३७ ॥
नानावर्णरुजातिसारकगदेरक्तेस्रुतौवाज्वरे ।
योगोऽयंमुनिभिःपुरानिगदितःसूत्यामयेप्युत्तमः॥१३८॥

इति योनिव्यापच्चिकित्सा ।

अर्थ–सुगन्धवाला, श्योनाक, लालचन्दन, खिरैटी, धनियाँ, गिलोय नागरमोथा, खस, धमासा, पित्तपापडा और अतीस, यह सब औषधि समान भाग ले क्काथ करके पीनेसे स्त्रियोंके नाना प्रकारकी पीडा और रक्तस्राव युक्त अतिसार तथा ज्वर रोग दूर होताहै ॥ १३७॥१३८ ॥

इति योनिव्यापच्चिकित्सा समाप्ता ।

अथ प्रसूतिकाव्याधिचिकित्साधिकारः ।

तत्रादौ सुखपूर्वकप्रसवार्थयोगाः ।

पाठालांगलिसिंहास्यमयूरकजटैःपृथक् ।
नाभिबस्तिभगालेपात्सुखंनारीप्रसूयते ॥ १ ॥
परूषकास्थिरामूलले पात्तद्वत्पृथक्पृथक् ।
योनौवासांघ्रिलेपेनमहागर्भाप्रसूयते ॥ २ ॥
गृहाम्बुनागेहधूमपानंगर्भापकर्षणम् ।
गृहाम्बुनाहिंगुसिन्धुचूर्णपानंतथैवच ॥ ३ ॥

अर्थ—पाढ, कलिहारी, अडूसा, मोरशिखा, फालसा और शालिपर्णी इनमें किसी एक औषधिको पीसकर नाभि, बस्ति, अथवा योनिपै प्रलेप करनेसे सुखपूर्वक प्रसव होताहै । अडूसेकी जडको जलमें पीसकर, योनिपै प्रलेप करनेसे सुखसे स्त्री बालकको जनतीहै काँजीके साथ धूम पान करनेसे अथवा काँजीमें हींग और सैंधानोनका चूर्ण डालकर पीनेसे स्त्रियें सुखपूर्वक बालकको जनतीहैं ॥ १–३ ॥

अथान्येपिसुखप्रसवार्थयोगाः ।

मातुलुंगस्यमूलानिमधुकंमधुसंयुतम् ।
घृतेनसहपातव्यंसुखंनारीप्रसूयते ॥ ४ ॥
पुटदग्धसर्पकञ्चुकमसृणमसीकुसुमसारसुहिताक्षी ।
झटितिविशल्याभवतिगर्भवतीमूढगर्भापि ॥ ५ ॥
तुषाम्बुपरिपिष्टेनमूलेनपरिलेपयेत् ।
लांगल्यासरणीसूतेक्षिप्रमेतेनगर्भिणी ॥ ६ ॥

अर्थ—बिजोरे नीबूकी जड और मुलेठीको एकत्र पीस सहत मिलाकर घृतके साथ पीनेसे स्त्रियोंके सुखसे प्रसव होताहै साँपकी कैंचलीको पुटके द्वारा जलाकर मसी बनालेवे, फिर उस मसीमें सहत मिलाकर आँखोंमें लगानेसे मूढगर्भा स्त्रीभी सुख पूर्वक प्रसव करे । कलिहारीकी जडको काँजीमें पीसकर गर्भिणीके दोनों पाँवोंमें प्रलेप करनेसे अत्यन्त शीघ्र प्रसव होताहै ॥ ४–६ ॥

अथ सुखप्रसवार्थसमन्त्रकयत्नाः ।

तालतरूत्तरमूलेमुक्तशिखाकच्छकोद्धृतेनियतः ।
वासामूलेतद्वत्कटिबद्धेतुद्रुतंसूते ॥ ७ ॥
यासौसरस्वतीतीरेजम्भलानामराक्षसी ।
तस्याःस्मरणमात्रेणविशल्यागर्भिणीभवेत् ॥ ८ ॥
अलक्तकेनलिखितागर्भोपरितथाधार्यम् ॥
क्षितिर्जलंवियत्तेजोवायुर्विष्णुःप्रजापतिः ॥ ९ ॥
गर्भस्थांत्वांसदोपान्तुविशल्यामादिशन्तुच ।
प्रसूष्वत्वमविक्लिष्टमविक्लिष्टशुभानने ॥ १० ॥
कार्त्तिकेयद्युतिंपुत्रंकार्त्तिकेयाभिरक्षितम् ।
काचिदप्यनुकूलास्त्रीकर्णेवामेजपेच्छनैः ॥ ११ ॥
विशल्यकरणींविद्यांवक्ष्येयज्ञतवारिणा ॥
सुखीभवतिशूलार्त्तक्षतोवज्रास्त्रकण्टकैः ॥ १२ ॥
गर्भिण्याविषमोगर्भःसमोभवतिनान्यथा ।
ॐक्षिपानिक्षिपउन्मथनिमथप्रथमप्रथममुञ्चमुञ्चस्वाहा १३
अनेन चाष्टौ वारानभिमन्त्र्य गर्भिण्यै पानीयं पातुं देयम् ।
प्राक्चैवनवमान्मासात्सासूतागृहमाश्रयेत् ॥ १४ ॥
देशेप्रशस्तेसम्भारैःसम्पन्नंसाधकेऽहनि ।
तत्रोदीक्षेतसासूतिंसूतिकापरिवारिता ॥ १५ ॥

अर्थ—चोटी और योनीको खोलकर ताड़वृक्षकी उत्तर दिशाकी जड अथवा अडूसेकी जड़को उखाडलावे, फिर गर्भिणीकी कटिपै बाँधनेसे शीघ्र प्रसव होताहै । "यासौ गर्भिणी भवेत्" इस मंत्रको लाखके रंगसे भोजपत्रपै लिखकर गर्भिणीके गर्भपै धारण करे । अथवा "क्षितिर्जलशुभानने" इसमंत्रको गर्भिणीके बाएँ कानमें सुनानेसे स्वामिकार्त्तिकेयकी समान पुत्र उत्पन्न होता है ॥ और "विशल्यकरणी–मुञ्च मुञ्च स्वाहा" इसमंत्रसे जलको आठबार पढ़ कर गर्भिणीको पीनेको देवे । गर्भिणी स्त्री नवें महीनेसे पहिलेही सूतिकागृहमें

चली जावे और वह सूतिकागृह उत्तम देशमें बनाहो, तथा उत्तम तख्ते, कड़ी और ईंटोंसे पटाहो और शुभदिनमें उसकी नींम रक्खी गईहो। प्रसव होनेके पश्चात् मर्यादासे प्रथम कदापि स्त्री बाहर न निकले॥ ७-१५॥

अथ गर्भिणीप्रसवलिङ्गानि।

अद्यश्वःप्रसवेग्लानिःकुक्षेः शिथिलताक्लमः।
अधोगुरुत्वमरुचिःप्रसेकोबहुमूत्रता॥ १६॥
वेदनोरूदरकटीपृष्ठहृद्बस्तिवङ्क्षणे।
योनिभेदरुजातोदस्फुरणस्रवणानिच॥
आधीनामनुजन्मातस्ततोगर्भोदकस्रुतिः॥ १७॥
जातेचाशिथिलेकुक्षौमुक्तेहृदयबंधने।
सशूलेजघनेनारीज्ञेयासातुप्रजायिनी॥ १८॥

अर्थ—ग्लानि, कोखमें शिथिलता, क्लान्ति, अधोभागमें गुरुता, अरुचि, प्रतिश्याय, बहुमूत्रता, ऊरु, उदर, पृष्ठ, हृदय, वस्ति और छाती में पीडा, योनिमें भेदकी समान पीडा, सुईचोभनकी समानपीडा, यंत्रणा स्फुरण और स्राव भगसे जलका गिरना, हृदयबंधनमें शिथिलता और जाँघोंमें शूलकी समान पीडा, यह सब प्रसवहोनेके चिह्न हैं॥ १६-१८॥

अथ प्रसवकालिककृत्यानि।

अतोपस्थितगर्भांतांकृतकौतुकमंगलाम्।
हस्तस्थपुन्नामफलामभ्यक्तोष्णाम्बुसेविताम्॥ १९॥
पाययेत्सघृतांपेयांततोभूशयनेस्थिताम्।
पुनःपुनस्तामभ्यज्यकुर्यात्स्वंकर्मसूतिका॥ २०॥
मृदुपूर्वंप्रवाहेचवाढामाप्रसवाच्चसा॥
हर्षयेत्तांमुहुर्जन्मशब्दैःसंजननायवै।
प्रतियान्तितथाप्राणाःसूतिक्लेशावसादिताः॥ २१॥

अर्थ—स्त्रियोंको गर्भ प्रसवके समय कौतुक और मंगल कार्य्य कराकर पश्चात् प्रसूताके हाथमें पुन्नाम फल देकर योनि आदिमें तेलको मलकर गरमजलसे

स्नानकरावै और घृत संयुक्त पेया मिलाकर भूमिपर सुलादे । इस प्रकार प्रसवतक सूतिकाको वारंवार तेलादिसे अभ्यक्तकर सर्वदा हृष्ट रक्खै, इससे प्रसूतिकाके अनेक प्रकारके क्लेश दूर होतेहैं ॥ १९-२१ ॥

अथाभिमन्त्रिततास्बूलादिभक्षणम् ।

इहामृतञ्चसोमश्चचित्रभानुश्चभामिनि ।
उच्चैःश्रवाश्वतुरगोमन्दिरेनिवसन्तुते ॥ २२ ॥
इदममृतमपांसमुद्धृतंवैतवलघुगर्भमिमंविमुञ्चतुस्त्री ।
तदनलपवनार्कवासवास्तेसहलवणाम्बुधरैर्दिशन्तुशान्तिम् २३
मुक्ताःपाशाविपाशाश्चमुक्ताःसूर्येन्दुरश्मयः ।
मुक्तःसर्वभयाद्गर्भःएह्येहिमाचिरंमाचिरं (स्वाहा) ॥२४॥

अनेन सप्ताभिमंत्रितं जलं पीत्वा स्त्री प्रसूयते ।
ओं चँ क्रँ गर्भफट्ट स्वाहा इदं चूर्णं प्रक्षाथित्वा पर्णे लिखित्वा ताम्बूलं खादितुं देयम् ।

एरण्डस्यवनेकाकोगंगातीरमुपागतः ।
भूतःपिबतिपानीयंविशल्यागर्भिणीभवेत् ॥ २५ ॥

अनेन सप्ताभिमंत्रितं जलं पातुं देयम् ।

अर्थ-"इहामृतञ्चसोमश्च,...स्वाहा" इसमंत्रको पानमें चूनेसे लिखकर गर्भिणीको ताम्बूल खानेको देवे । "एरण्डस्यवने-गर्भिणीभवेत्" इसमंत्रके द्वारा जलको सातवार अभिमंत्रितकर, गर्भिणीको पीनेको देवे । इससे सुखसहित प्रसव होताहै ॥ २२-२५ ॥

अथ पुनरपिसुखप्रसवयोगाः ।

श्वेतापराजितामूलंघ्रातंपीतंजलेनवा ।
नाभिप्रलेपतोवापिसुखंसूतिकरंपरम् ॥ २६ ॥
मातुलुंगस्यमूलानिमधुकंमधुसंयुतम् ।
घृतेनसह[illegible]सुखंनारीप्रसूयते ।
सर्पनिर्मोकसर्पिर्भ्यांधूपोयोनौप्रसूतिकृत् ॥ २७ ॥

प्रत्यक्पुष्पीमूलंनिहितंयोनौगुदेऽथवास्त्रीणाम् ।
बद्धंवाकटिदेशेप्रसवंकुरुतेसुखेनैव ॥ २८ ॥

यद्द पामार्गोत्पाटने मूलं त्रुट्याति ।
तर्हि दुहितुर्जन्मविजानीयादन्यथा सूनोः ।

अर्थ–सफेद अपराजिताकी जड़को जलमें पीसकर सूंघनेसे अथवा पीनेसे या नाभिपै लेप करनेसे सुखपूर्वक प्रसव होताहै। बिजोरे नीबूकी जड़को और मुलेठी-को एकत्र पीसकर सहत और घीके साथ मिलाकर पीनेसे स्त्रियोंके अत्यन्त सुखसे प्रसव होताहै। साँपकी कैंचली और घृत दोनोंको मिलाकर योनिमें धुआँ देनेसे सुखपूर्वक प्रसव होताहै चिरचिटेकी जड़को उखाडकर गर्भिणियोंकी योनिमें गुह्यदेशमें अथवा कटिमें बांधनेसे सुखपूर्वक प्रसव होताहै। चिरचिरटेको उखाडते समय जो उसकी जड टूट जावे तो कन्या उत्पन्न होवे और जो न टूटे तो पुत्र उत्पन्न होवे ॥ २६–२८ ॥

अथ सुखप्रसवार्थयन्त्रेविन्यासः ।

नाडीऋतुवसुभिःसहपक्षदिगष्टादशभिरेवच ।
अर्कभुवनवेदसहितैरुभयंत्रिंशकंपंचदशकंवा ॥ २९ ॥

	३०	३०	३०	
३०	१६	६	८	३०
३०	२	१०	१८	३०
३०	१२	१४	४	३०
	३०	३०	३०	

उभयत्रिंशकः ।

	१५	१५	१५	
१५	८	३	४	१५
१५	१	५	९	१५
१५	६	७	२	१५
	१५	१५	१५	

उभयपञ्चदशकः ।

अर्थ–उपरोक्त ३० तीस, म्प पन्द्रहके यंत्रको लिखकर गर्भिणीको दिखलानेसे शीघ्र प्रसव होताहै ॥ २९ ॥

अथामरापातनं नाडीशुद्धिश्च।

कचवेष्टितयाङ्गुल्याघृष्टेकण्ठेमुखेपतत्यमरा ।
मूलेनलांगलक्यासंलिप्तेपाणिपादेच ॥ ३० ॥
अमरापातनंसद्यःपिप्पल्यादिरजःपिबेत् ।
मूर्ध्निदद्यात्स्नुहीक्षीरममरापातनंपरम् ॥ ३१ ॥
वृद्ध्याद्वित्रिचतुर्मासंगंधकंमदिरान्वितम् ।
तीक्ष्णपर्णद्रवेणादौनाड्याःशुद्ध्यैप्रदीयते ॥ ३२ ॥

अर्थ—बालोंको अंगुलीमें बाँधकर कण्ठ या मुखमें घिसनेसे—निश्चय आंवर (जेर आदि) गिर जातीहै। कलिहारीकी जडको पीसकर गर्भिणीके पाँवों और हाथोंमें प्रलेप करनेसे—तथा पिप्पल्यादि चूर्णको जलकेसाथ पीनेसे निश्चय आंवर पतित होजातीहै । थूहरके दूधको मस्तकपै डालनेसे आंवर गिरजातीहै । गंधकवृद्धिके अनुसार २ । ३ । या ४ मासे मदिरामें मिलाकर कमरखके रसके साथ गर्भिणीको पिलानेसे गर्भिणीकी नाड़ी शुद्ध होजातीहै ॥ ३०–३२ ॥

अथ प्रसूताहितयोगाः।

संस्वेद्यवालुकाद्यैस्तुलंघितायायथाबलम् ।
क्षुधितायाःप्रशंसन्तिपथ्यंलघ्वन्नमेवच ॥ ३३ ॥
पंचकोलकमिश्रन्तुदशमूलमिहेष्यते ।
केवलंदशमूलंवापिप्पलींप्रक्षिपेत्ततः ॥ ३४ ॥
द्वित्रिरात्रंविधिरसौसप्ताहाद्बृंहणंक्रमात् ।
द्वादशाहेनातिक्रान्तेपिशितंनैवयोजयेत् ॥ ३५ ॥

अर्थ—प्रसूता स्त्रीको बालुकादिके द्वारा स्वेद देवे और बलानुसार लंघन करावे, भूंख लगे तो हलकाभोजन खानेको देवे। गर्भिणीस्त्रीको वातश्लेष्म रोगमें आमवात रोगमें और कफरोगमें पंचकोलयुक्त दशमूलका क्वाथ पीनेको देवे । अथवा दशमूलके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेको देवे । जिससे वायुकुपित न होवे और दुष्टरक्त शुद्ध होजाय, ऐसीविधि २–३ रात्रिपर्यन्त गर्भिणीके प्रयोग करे । सातरोजकेबाद बृंहण (पुष्टिकारक) क्रिया प्रदान करे । परन्तु १२बारह दिनसे कम कदापि मांस न देवे ॥ ३३–३५ ॥

मक्कल्लादिशूलप्रयोगाः।

वायुःप्रकुपितंकुर्यात्संरुध्यरुधिरंच्युतम्।
सूतायाहृच्छिरोबस्तिशूलंमक्कल्लसंज्ञितम्॥ ३६॥
यवक्षारंभवेत्तत्रसर्पिषोष्णोदकेनवा।
पिप्पल्यादिगणक्काथंपिबेद्वालवणान्वितम्॥ ३७॥
पिप्पल्यादिकचूर्णंवासुरामण्डेनपाययेत्।
वंशपत्राङ्कुरक्काथःसयवक्षारउत्तमः॥ ३८॥
बिल्वमल्लीमातुलुङ्गमूललेपःशिरोऽर्त्तिनुत्।
घृतंमक्कल्लजिद्योनौरुबूतैलाक्तशूलकम्।
त्र्यूषणंपिप्पलीमूलंदारुचव्यंसचित्रकम्॥ ३९॥
रजन्यौहवुषाजाजीसक्षारंलवणद्वयम्।
कल्कमुष्णाम्बुनापीतंसुखेनाशुविरिच्यते॥ ४०॥

अर्थ—वायुके कुपित होनेसे प्रसूताओंके गिरता हुवा रुधिर बंद होजाताहै, और हृदय, बस्ति तथा मस्तकमें मक्कल्ल नामक शूल उत्पन्न होताहै। जवाखारके चूर्णको घीके साथ या गरम जलके साथ पीनेसे किंवा पिप्पल्यादि गणका क्काथ सेंधेनोनके साथ पीनेसे या पिप्पल्यादि गणकी औषधियोंका चूर्ण सुरामण्डके साथ सेवन करनेसे अथवा बाँसके कल्लोंके क्काथमें जवाखार डालकर पीनेसे प्रसूता स्त्रियोंके मक्कल्ल नामक शूल नष्ट होताहै। हींग, बेलकेफूल और बिजोरेकी जडको पीसकर प्रलेप करनेसे प्रसूता स्त्रियोंके शिरःशूल नष्ट होताहै। घी और अण्डीका तेल मिलाकर योनिपै प्रलेप करनेसे योनिशूल दूर होताहै। सोंठ, मिरच, पापल, पीपरामूल, चव्य, देवदारु, चीतेकी जड, हलदी, दारुहलदी, जीरा, जवाखार, सैंधानोंन और कालानोन, इनका चूर्ण गरमजलके साथ पीनेसे प्रसूतास्त्रियोंके सुखसहित जुल्लाब होजाता है॥ ३६-४०॥

अथ निदानपूर्विकासूतिकारोगसम्प्राप्तिः।

मासमध्यर्द्धमासंवायावद्वापुष्पदर्शनम्।
अंगमर्दोज्वरःकंपःपिपासागुरुगात्रता॥ ४१॥

शोथःशूलातिसारौचसूतिकारोगदर्शनम् ।
मिथ्योपसे त्संक्लेशाद्विषमाजीर्णभोजनात् ॥ ४२ ॥
सूतिकायाश्चयेरोगाजायन्तेदारुणाःस्मृताः ।
ज्वरातीसारशोथश्चशूलानाहबलक्षयाः ॥ ४३ ॥
तंत्रारुचिप्रसेकाद्याःकफवातामयोद्भवाः ।
कृच्छ्रसाध्याहितेरोगाःक्षीणमांसबलाग्नितः ॥ ४४ ॥
तेसर्वेसूतिकानाम्नारोगास्तेचाप्युपद्रवाः ।
यत्नेनोपाचरेत्स्मतांदुःसाध्योहिगदामयः ॥ ४५ ॥

अर्थ—प्रसूतास्त्रियोंके एक महीनेके भीतर या आधेमहीनेके भीतर पुनः ऋतुहोतेहुए अंगवेदना, ज्वर, पियास, कम्प, गात्रभार, शोथ, शूल और अतीसार यह सब रोग उत्पन्न होवें तो उनके सूतिका रोग जानना । मिथ्योपचार, संक्लेश, विषमभोजन और अजीर्णमें भोजन करनेसे सूतिकावाली स्त्रियोंके ज्वर, अतिसार, शोथ, शूल, आनाह, बलक्षय, तन्द्रा, अरुचि, प्रसेकादि दारुण कफवातोत्पन्न रोग उत्पन्न होतेहैं । इस रोगके होनेसे प्रसूता स्त्रियोंके मांस, बल और अग्नि; क्षय होजातीहै, इस कारण कृच्छ्रसाध्य होताहै । अतएव अत्यन्त यत्नोंसे सूतिकाकी चिकित्सा करे ॥ ४१-४५ ॥

अथ सूतिकारोगचिकित्सा ।

लंघनाभ्यंजनस्वेदैःकटुतीक्ष्णोष्णपेयया ।
शौष्कमूलककोलत्थैर्यूषैर्मांसरसैःशुभैः ॥ ४६ ॥
दशमूलीकृतःक्काथःसाज्यःसूतीज्वरापहः ।
आमशूलरुजायान्तुधान्यशुण्ठीसमन्विता ॥ ४७ ॥
धान्यपंचकयुक्तावादशमूलीप्रशस्यते ।
क्काथेनगुर्वीनिर्दिष्टाह्रीवेरादिश्चशस्यते ॥ ४८ ॥

अर्थ—लंघन, अभ्यंग, स्वेद, कटु, तीक्ष्ण, उष्णपेया, सूखीमूलीका यूप, कुलथीका यूष और मांसरस, इनके द्वारा सूतिका रोगकी चिकित्सा करे । दशमूलका क्काथ घृतके साथ पीनेसे सूतिका स्त्रियोंका ज्वर दूर होताहै । धनियाँ

सोंठके साथ दशमूलका क्वाथ या धान्यपंचक संयुक्त दशमूलका क्वाथ या बृहत्पंच मूलका क्वाथ अथवा ह्रीवेरादिका क्वाथ:पीनेसे सूतिका स्त्रियोंका आमशूल दूर होताहै ॥ ४६–४८ ॥

अथान्यापिसूतीरोगचिकित्सा ।

सहाचरकृतःक्वाथःपिप्पलीचूर्णमिश्रितः ।
दीपनीज्वरशोथामसूतिकारोगनाशनः ॥ ४९ ॥
पीतझिण्टीकृतःक्वाथोनिशापर्युषितोजयेत् ।
सूतिरोगहरश्चैवतथातन्मूलचर्व्वणम् ॥ ५० ॥
ध्मापयित्वानलेलौहंमुद्गयूषेनिषेचयेत् ।
पंचमूलस्यवाक्वाथेपिप्पलीसलिलेऽथवा ।
पीतंयूषादितच्छीघ्रंसर्वसूतीरुजापहम् ॥ ५१ ॥

अर्थ–सफेद कटसरैयाके क्वाथमें पीपलका चूर्ण पीनेसे सूतिका स्त्रियोंके अग्नि दीपन होतीहै और सूजन ज्वर और आमशूलका नाश होताहै । पीली कटसरैयाका क्वाथ बासी करके पीनेसे अथवा पीली कटसरैया चाबनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं । लोहेको अग्निमें गरम करके मूंगके यूषमें पंचमूलके क्वाथमें और पीपलके क्वाथमें वुझाकर उन यूषादिकोंके पीनेसे सूतिकादिके सम्पूर्ण रोग दूरहोजातेहैं ॥ ४९–५१ ॥

अथ सहचरादिक्वाथः ।

सहाचरपुष्करवेतसमूलंवैकङ्कतदारुकुलत्थसमम् ।
शृतशीतससैन्धवहिंगुयुतंसद्योज्वरसूतिकशूलहरम् ॥ ५२ ॥

अर्थ–कटसरैया, पोहकरमूल, बेंतकी जड, विकंकत, देवदारु और कुलथी यह सब बराबर लेकर क्वाथ बना शीतलकर हींग और सैंधानोन प्रक्षेपकर पीनेसे सूतिकावाली स्त्रियोंके तत्काल ज्वर और शूलादि रोग दूर होतेहैं ॥५२॥

अथ दशमूल्यादियूषः ।

दशमूलीमुद्गमाषयवकोलकुलत्थजम् ।
क्वाथंतक्रयुतंपक्वायूषःकार्यःसजीवकः ॥
ससैन्धवोघृतेभृष्टःपयोभुंजीततेनच ॥ ५३ ॥

अर्थ–दशमूल, मूंग, उडद, जौ, सूखीमूली और कुलथी इनका क्काथ बनाकर तक्र और जीरेके साथ पकाकर सेंधानोन और घी मिलाकर दूधमें भूनकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रसूतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ५३ ॥

अथ सूतिकोपद्रवघ्नयोगाः ।

सिद्धंद्विपंचमूलाभ्यांपयःशार्करपादधृक् ।
सूतिकोपद्रवंहन्तिपीतमात्रंनसंशयः ॥ ५४ ॥
देवदारुवचाकुष्ठंपिप्पलीविश्वभेषजम् ।
कट्फलंमुस्तकंनिम्बंतिक्ताधानाहरीतकी ॥ ५५ ॥
गजकृष्णांचदुःस्पर्शांगोक्षुरंधन्वयासकम् ।
बृहत्यतिविषाच्छिन्नाकर्कटंकृष्णजीरकम् ॥ ५६ ॥
समभागान्वितैरेतैःसिन्धुरामठसंयुतम् ।
क्काथमष्टावशेषन्तुप्रसूतांपाययेत्स्त्रियम् ॥ ५७ ॥

अर्थ–दशमूलको दूधमें औटाकर चौथाईभाग बूरा डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं। देवदारु, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, कायफल, नागरमोथा, नीमकी छाल, कुटकी, धनियाँ, हरड, गजपीपल, कटेरी, गोखुरू, धमासा, बृहती, अतीस, गिलोय, काठ, आमला और कालाजीरा यह सब औषधि समानभाग ले अष्टावशेष काढा करे, इस काढेमें सेंधानोन और हींग डालकर पीनेसे प्रसूता स्त्रियोंके शूल, मूर्च्छादि सूतिकारोग दूर होतेहैं ॥५४–५७॥

अथ पिप्पल्यादियूषः ।

पिप्पलीदेवकाष्ठञ्चभद्रमुस्तकएवच ।
अगुरुंपिप्पलीमूलंश्लक्ष्णपिष्टञ्चकारयेत् ॥ ५८ ॥
तक्रेणसहसंयुक्तंपिबेद्यूषैर्विचक्षणा ।
एतेनघृतयुक्तेनपीतमात्रेणनिश्चितम् ॥ ५९ ॥

अर्थ–पीपल, देवदारु, नागरमोथा, अगर और पीपलामूल इन सबको बारीक पीस तक्रके साथ यूष बनाकर पीनेसे प्रसूता स्त्रियोंके सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

अथ यवाद्यंघृतम्।

यवकोलकुलत्थानांशालिमूलंतथैवच।
क्राथयेदप्रमत्तश्चसुपूतेसलिलाढके॥ ६० ॥
तत्पादावस्थितंक्राथंसर्पिर्युक्तंसजीरकम्।
पक्कंघृताक्षमात्रेणसैन्धवेनसमायुतम्॥ ६१ ॥
एतेनैवचयूषेणचाश्नीयाच्छालिषष्टिकम्॥
सूतिकोपद्रवंहन्तिभुक्तमात्रन्नसंशयः॥ ६२ ॥

अर्थ–जौ, सूखीमूली, कुलथी और शालिधानोंकी जड, यह सब २ दोसेर लेकर ८ आठसेर जलमें पकावे जब २ दोसेर जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवे, पश्चात् इसमें घी और जीरा मिलाकर पकावे, फिर सेंधानोन मिलाकर दोतोले प्रमाण सेवन करे, पश्चात् उक्त यूपके साथ शालि और साठी धानोंका भात भोजन करे तो मर्व प्रकारके सूतिका रोग दूरहोतेहैं॥ ६०–६२ ॥

अथ भद्रोत्कटाद्यंघृतम्।

समूलपत्रक्राथन्तुशतंभद्रोत्कटस्यच।
वारिद्रोणेनसंसाध्यस्थाप्यंपादावशेषकम्॥ ६३ ॥
घृतप्रस्थंविपक्तव्यंगर्भंदत्त्वातुकार्षिकम्।
व्योषंसपिप्पलीमूलंचित्रकंजीरकन्तथा॥ ६४ ॥
पंचमूलीकनिष्ठश्चरास्नैरण्डसमायुतम्।
यवसिन्धुयवक्षारंस्वर्जिकाकृष्णजीरकम्।
सिद्धमेतद्घृतंसद्योनिहन्यात्सूतिकागदान्॥ ६५ ॥

अर्थ–बकरीकामूत्र ४ चारसेर, क्राथके लिये भद्रमोथेकी जड और पत्र १२॥ साढ़ेबारह सेर, जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलहसेर और कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, लालचीतेकी जड़, जीरा, स्वल्पपंचमूल, रास्ना, अरंडकीजड़, जौ, सैंधानोन, जवाखार, सज्जी और कालाजीरा, यह सब १ एकसेर लेकर इस घृतको सेवन करनेसे अग्निमांद्यादि रोग दूर होते हैं॥ ६३–६५ ॥

अथ पिप्पल्यादिघृतम् ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचित्रकोहस्तिपिप्पली ।
चव्यंनिशावचाकुष्ठंधान्यंभार्ङ्गीयमानिका ॥ ६६ ॥
व्याघ्रीचेन्द्रयवाःपथ्याबृहतीबिल्वपेषिका ।
मरिचानिविडंगानिकल्कैरेतैश्चपादिकैः ॥ ६७ ॥
यवंकोलकुलत्थानांनिर्यूहेचचतुर्गुणे ।
दधिप्रस्थंपयःप्रस्थंदत्त्वाप्रस्थोन्मितंघृतम् ॥ ६८ ॥

अर्थ—गायका घी ४ चारसेर, दहीचार ४ सेर, दूध ४ चारसेर, यव, बेर और कुलथीका क्काथ १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये पीपल, पीपलामूल, चीतेकी जड, गजपीपल, चव्य, हल्दी, बच, कूठ, धनियाँ, भारंगी, अजवायन, कटेरी, इन्द्रजौ, हरड, बृहती, बेलकागूदा, कालीमिरच और वायविडंग, यह सब १ एकसेर लेकर, इस घृतको पान करनेसे तथा मलनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं ॥ ६६—६८ ॥

अथ बृहत्सूतिविनोदरसः ।

शुण्ठ्याभागोभवेदेकोद्वौभागौमरिचस्यच ।
पिप्पल्याश्चत्रिभागंस्यादर्द्धभागश्चरोमकम् ॥ ६९ ॥
जातीकोषस्यभागौद्वौद्वौभागौतुत्थकस्यच ।
सिन्धुवारजलेनैवमर्द्दयेदेकयामतः ॥
मधुनासहभोक्तव्यंसूतिकातङ्कनाशनम् ॥ ७० ॥

अर्थ—सोंठ १ एकभाग, कालीमिरच २ दोभाग, पीपल तीन भाग, रोमकलवण अर्द्धभाग, जायफल २ दोभाग और तूतियाकी भस्म २ दोभाग, सबको एकत्र सम्हालूके रसमें एकप्रहर खरलकर गोली बनालेवे, इसको सहतके साथ सेवन करनेसे सूतिकारोग दूर होताहै ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथ धात्रीदूषितस्तन्यशुद्ध्यर्थयोगः ।

सक्षीरौवाप्यदुग्धौवादोषान्प्राप्यस्तनौस्त्रियः ।
प्रदूष्यमांसरुधिरंस्तनरोगायकल्पते ॥ ७१ ॥

मधुरंचाविवर्णञ्चप्रशमंतत्प्रशस्यते।
तत्रवातात्मकेस्तन्येदशमूलीजलंपिबेत् ॥ ७२ ॥
पित्तदुष्टेऽमृताभीरुपटोलारिष्टचन्दनम्।
धात्रीकुमारश्चपिबेत्क्वाथयित्वाशराविकः ॥ ७३ ॥
कफदुष्टेपिबेन्मूत्रंत्रिफलाकटुरोहिणी।
युक्ताकिराततिक्तेनपिबेद्धात्रीशिशुस्तथा॥
धात्रीस्तन्यविशुद्ध्यर्थंमुद्गयूषरसाशनः ॥ ७४ ॥

अर्थ–प्रसूता स्त्रीके वातादिदोष दूधसंयुक्त अथवा दूधहीन स्तनोंमें प्राप्त हो मांस और रुधिरको दूषित करके स्तनरोगको उत्पन्न करते हैं। जिस प्रसूता स्त्रीका दूध मधुर, सुन्दरवर्ण और निर्मल हो, उसको शुद्ध स्तन्य जानना। वातके द्वारा दूध दूषित होवे तो प्रसूतिकाको दशमूलका क्वाथ पिलावे। पित्तसे दूध दूषित होवे तो गिलोय, सतावर, पटोल, नीमकी छाल और लालचंदनका क्वाथ धात्री (धाय) और बालकको पीनेको देवे। प्रसूता स्त्रीका दूध कफसे दूषित होवे तो त्रिफला, कुटकी और चिरायतेके साथ गोमूत्रको पकाकर धात्री और बालकको पीनेको देवे। मूंगका यूष और मांसरसको पीनेसे भी धायका दूध शुद्ध होजाता है ॥ ७१–७४ ॥

अथ वज्रकाञ्जिकम्।

पिप्पलीपिप्पलामूलंचव्यंशुण्ठीयमानिका।
जीरकेद्वेहरिद्रेद्वेविडंसौवर्चलंतथा॥
एतैरेवौषधैःपिष्टैरारनालंविपाचयेत् ॥ ७५ ॥

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, सोंठ, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, हलदी, दारुहलदी, विरियासंचर नोन और कालानोन, इन सबको बारीक पीसकर काँजीमें पकावे, इसको पान करनेसे स्त्रियोंके दूध शुद्ध होजाते हैं ॥ ७५ ॥

अथ सूतिकारिरसः।

रसगंधककृष्णाभ्रंतद्[illegible]ताम्रकम्।
चूर्णितंमर्दयेद्[illegible]तार्द्रकपर्णीरसेनच ॥ ७६ ॥

छायाशुष्काक्वटीकार्याद्विगुंजाफलमानतः ।
क्षीरत्रिकटुनायुक्तासूतिकातङ्कनाशिनी ॥ ७७ ॥

अर्थ-पारा १ एक भाग, गंधक २ दोभाग, अभ्रक १ एक भाग और तांबा १॥ डेढ़भाग, सबको एकत्र मण्डूकपर्णीके रसमें खरलकर दोदो रत्तीकी गोली बनाकर छायामें सुखालेवे । प्रतिदिन १ एक गोली खावे और ऊपरसे त्रिकुटेको दूधमें औटाकर पीवे ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

अथ पञ्चजीरकगुडः ।

जीरकंहवुषाधान्यंशताह्वावदराणिच ।
यमानीराजिकाहिंगुपत्रिकाकासमर्दकम् ॥ ७८ ॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलमजमोदाथबाष्पिका ।
चित्रकश्चपलांशानितथाधान्यंचतुष्पलम् ॥ ७९ ॥
कशेरुकंनागरश्चकुष्टंदीप्यकमेवच ।
गुडस्यचशतंदद्याद्घृतप्रस्थन्तथैवच ॥ ८० ॥
क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तंशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
पंचजीरकइत्येपसूतिकानांप्रशस्यते ॥ ८१ ॥

अर्थ-गुड़ १२॥ साढ़ेबारह सेर, गायका घी ४ चारसेर, दूध ८ आठ सेर, और जीरा, हाऊबेर, धनियाँ, सोया, सूखेबेर, अजवायन, राई, हिंगुपत्री, कसौंदी, पीपल, पीपलामूल, अजमोदा, नाड़ी हिंगु और चीतेकी जड, प्रत्येकका चूर्ण ८ आठ तोले और धनियाँ, कशेरू, सोंठ, कूठ और अजवायन प्रत्येकका चूर्ण आधसेर, सबको मिलाकर गुडपाक करे, इसको सेवन करनेसे स्त्रियोंके सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ७८-८१ ॥

अथ सूतीरोगहरोपचाराः ।

वैयाघ्रतैलदीपाद्भद्रोत्कटकाष्ठपीठभजनाच्च ।
अभिभूयतेकदाचिन्नसूतिकातद्गुगातङ्कैः ॥ ८२ ॥

अर्थ-प्रसूताके घरमें व्याघ्रका तेल दीपकमें जलावे और भद्रोत्कट काठके पीढेपै प्रसूता स्त्रीको बिठलावे । इससे सर्व प्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं ॥ ८२ ॥

अथ प्रसूतिकारोगान्तकोरसः।

लवङ्गरसगन्धौचयवक्षारंयवाभ्रकम्।
लोहंताम्रंसीसकञ्चपलमानंसमाहरेत् ॥ ८३ ॥
जातीफलंकेशज्वराङ्गलेपमुस्तकम्।
ध तकी न्द्रयवापाठाशृंगीबिल्वंचबालकम् ॥ ८४ ॥
कर्षप्रमाणंसंचूर्ण्यसर्वमेकत्रकारयेत्।
गंधालिकापत्ररसैरनुपानंप्रदापयेत ॥
सर्वातिसारशमनंसर्वशूलनिवारणम् ॥ ८५ ॥

इति सूतिकाध्यायः।

अर्थ—लौंग, पारा, गंधक, जवाखार, जौ. अभ्रक. लोहा, ताँबा और सीसा, प्रत्येकका चूर्ण ४ चारतोले और जायफल, कुकुरभांगरा, दालचीनी, नागरमोथा, धायके फूल, इन्द्रजौ, पाढ़, काकड़ाशिंगी, बेलका गूदा और सुगंधबाला प्रत्येकका चूर्ण २ दो तोले, इन सबको एकत्र जलके साथ पीस-कर गोली बनालेवे। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् प्रसारिणीके पत्तोंका रस पीवे। इससे अतीसार, शूलादि सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होते हैं ॥ ८३–८५ ॥

इति सूतिकारोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ स्तनरोगचिकित्साधिकारः।

तत्रादौस्तनशोथचिकित्सा।

शोथंस्तनोत्थितमवेक्ष्यभिषग्विदध्यात्।
द्वैधंत्रिधाचविहितंबहुधाविधानम्।
आमेविदह्यतितथैवगतेचपाकं
तस्याःस्तनौसततमेवचनिर्गृहीतम् ॥ १ ॥
विशालामूललेपेनहन्तिपीडांस्तनोत्थिताम्।
निशाकनकफलाभ्यांलेपश्चातिस्तनार्त्तिहा ॥ २ ॥
कुकुन्दरमेचकमूलंचर्वितमास्यविधारितंजयति।

सप्ताहात्स्तनकाशतुल्यतैकान्ततःकुरुते ॥ ३ ॥
तन्मूलंधावयित्वामुखेधारयेद्रसंपिबेच्च ।
निर्वाप्यलौहंपिप्पल्याःपीतःक्काथःस्तनार्त्तिजित् ।

अर्थ—स्त्रियोंके स्तनोंपर सूजन आजावे तो दोबार या तीनबार अथवा बहुत बार क्रिया प्रयोग करे । स्त्रियोंके स्तनगत अपक्क अथवा पक्क शोथ रोगकी चिकित्सा करनेके समय सदैव स्तनोंसे दूध निकाल देवे, कदापि त्रुटि न करे । इन्द्रायणकी जडको जलमें पीसकर लेप करनेसे सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होतेहैं । हलदी और धतूरेको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे सर्व प्रकारकी स्तनोंकी पीडा दूर होतीहै । ककरांदेकी जडको या संजिनेकी जड़को जलमें धोकर दाँतोंसे चाबकर रसको मुखमें धारण करनेसे, या पीनेसे ७ सात दिनमेंही सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होतेहैं । पीपलके क्काथमें लोहेको बुझाकर पान करनेसे सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होजातेहैं ॥ १–४ ॥

अथ स्तनरोगेत्याज्यानिविद्रधिदारणञ्च ।

क्रियांशीतांप्रयुंजीतनस्तनावुपनाहयेत् ॥ ४ ॥
पक्केचदुग्धहरणीःपरिहृत्यनाडीः ।
कृष्णंचचूचुकयुगंनिदधीतशस्त्रम् ॥ ५ ॥

अर्थ—स्तनरोगमें सदैव शीतल क्रिया प्रयोग करे, कदापि उपनाह स्वेदन न देवे । स्तन पक जावें तो दुग्ध हरणी नाडीको बचाकर कुचोंके कृष्ण मुखपै नस्तर लगावे ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ महिषीनवनीतादियोगः ।

महिषीभवनवनीतंव्याधिबलोग्रातथैवनागबला ।
पिष्ट्वामर्दनयोगात्पीनंकठिनंस्तनंकुरुते ॥ ६ ॥

अर्थ—भैंसका माखन, कूठ, खिरैंटी, बच और गंगेरन इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर स्तनोंपै मलनेसे दोनों कुच स्थूल और कठिन होजातेहैं ॥ ६ ॥

अथ श्रीपर्णीतैलम् ।

श्रीपर्णीरसकल्काभ्यांतैलंसिद्धंस्तनोपरि ।
तुलकेनघृतं[illegible]र्यात्पतितावुत्थितौस्तनौ ॥ ७ ॥

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, जल आठ ८ सेर कुम्भेरकी छालका रस ८ आठसेर, और कल्कके लिये कुटीहुई कुम्भेरकी छाल ऽ॥ आधसेर ले, इस तेलको पकाकर स्तनोमें मलनेसे, अथवा दूलकके साथ घृतको पका कर दोनो स्तनोमें मलनेसे गिरे हुए स्तन उठ आतेहैं ॥ ७ ॥

अथ स्तनरोगचिकित्सा ।

शीतार्त्तिकेस्तनरोगेपीडाभवतिदारुणा ।
मूलमेरण्डवृक्षस्यशीततोयेनपेषयेत् ॥ ८ ॥
कफेप्रतिविषाकुष्ठंतोयलेपसुखावहः ।
यष्टीनिम्बहारिद्राचानिर्गुण्डीधातकीसमम् ॥ ९ ॥
चूर्णंस्तनव्रणेदेयंरोपणंकुरुतेभृशम् ।
वचोदुम्बरजाश्वत्थच्युतमर्ज्जुनकत्वचः ॥ १० ॥
जलैश्चतुर्गुणैःक्वाथंपादशेषंसमुद्धरेत् ।
तेनप्रक्षालयेन्नित्यंव्रणंपूयान्वितंस्तने ।
स्तनरुजाप्रशाम्यतिशोणिताकर्षावनात् ॥ ११ ॥

अर्थ–शीतार्त्त स्तनरोगमें दारुण पीड़ा उत्पन्न होतीहै।अरण्डके वृक्षकी जड़को शीतल जलमें पीसकर स्तनोंपै प्रलेप करनेसे शीघ्रही उपरोक्त रोग दूर होताहै फस्त खुलवानेसे भी स्तनरोग शांत होताहै । कफजन्य स्तनरोगमें अतीस और कूठको जलमें पीसकर स्तनोंपै प्रलेप करे। मुलेठी, नीमकीछाल,हलदी, सम्हालू, और धांयके फूल यह सब समान भाग ले चूर्णकर योजनेसे स्तनोंके घाव भर जातेहैं। वच, गूलरकीछाल, पीपलकी छाल, आमकी छाल और अर्जुनकी छाल यह सब समानभाग ले चौगुने जलमें पकावे, जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारकर छान लेवे, इससे राधयुक्त स्तनोंके व्रणोंको धोनेसे विशेष लाभ होताहै ॥ ८–११ ॥

अथ स्तनशूलनाशकयोगौ ।

आकाशस्योपलंभृंगीसर्पाक्षीतिल[illegible]ष्पकम् ॥ १२ ॥
लांगलीमेघनादश्चजलेनसहलेपयेत् ॥
अपक्केसर्वदोषोत्थेस्तनपीडाहरंभवेत् ॥ १३ ॥

बलाचातिबलाकुष्ठंवचाचूर्णंविलेपयेत् ॥
महिषीनवनीतेनस्तनपीडास्थिराभवेत् ॥ १४ ॥

अर्थ–बरफ, अतीस, सर्पाक्षी (खरहटी), तिलकेफूल, कलिहारी और चौलाई इनको जलमें पीसकर प्रलेप करनेसे सर्व दोष जात अपक्व स्तनरोग दूर होजातेहैं । खिरैटी, कंघी, कूठ, वच, इनको एकत्र पीसकर भैंसके माखनमें मिलाकर प्रलेप करनेसे स्तनोंकी पीड़ा शांत होतीहै ॥ १२–१४ ॥

अथ मुण्डीतैलम् ।

मुण्डीमूलंदशपलंजलेपच्याच्चतुर्गुणे ।
अर्द्धशेषंहरेत्क्वाथंक्वाथार्द्धंतिलतैलकम् ॥ १५ ॥
तैलशेषंभवेत्तच्चनस्येपानेचदापयेत् ।
पतितंयौवनंस्त्रीणांमासादुत्तिष्ठतेस्वयम् ॥ १६ ॥

अर्थ–गोरखमुण्डीकी जड १० दशपल, पाककेलिये जल ४० चालीसपल, शेष २० पल और तिलका तेल १० दशपल, सबको मिलाकर पकावे, जबतक तेल शेष न रहै तबतक पकातारहे । इस तेलको नस्य और पानमें व्यवहार करनेसे स्त्रियोंके गिरे हुए स्तन फिर एक महीनेमें ही उठ आतेहैं ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथ श्यामाद्यंतैलम् ।

श्यामानिशाबलालाजालवणंक्वाथयेत्समम् ।
तोयेचतुर्गुणेपाच्यंपादशेषंसमाहरेत् ॥ १७ ॥
तिलतैलंक्वाथपादंतैलार्द्धंमाहिषंघृतम् ।
स्नेहशेषंपचेत्तैलंनस्यैश्चमासमात्रकैः ॥
बालस्त्रीवृद्धनारीणांयौवनंकुरुतेध्रुवम् ॥ १८ ॥

अर्थ–तिलका तेल ४ चारसेर, भैंसका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये श्यामालता, हलदी, खिरैटी, खीलें और सेंधानोन यह सब औषधि १२॥ साढ़ेबारह सेर, जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलहसेर, जब केवल स्नेह बाकी रहै तब उतार लेवै, इसतेलका एकमहीनेतक नास लेनेसे वृद्धा स्त्री भी फिरसे यौवनवती होजातीहै ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ काशीशाद्यंतैलम्।

काशीशतुरगगंधासावरगजापिप्पलीविपक्केन।
तैलेनयान्तिवृद्धिंस्तनवर्णवरांगलिंगानि ॥ १९ ॥
सावरो लोध्रः।

अर्थ–हीराकसीस, असगंध, लोध और गजपीपलके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे स्त्रियोंके स्तन, कर्ण और योनि बढ़तीहै ॥ १९ ॥

अथ विडङ्गनस्यादीनि।

प्रथमर्त्तौतण्डुलांस्त्रीनस्यंकुर्यात्स्तनौस्थिरौ।
दीपास्यभस्मतास्यानांवेष्टान्नबहुलौस्तनौ ॥ २० ॥
घोलेनमाधवीमूलंपीतंस्त्रीमध्यकार्श्यकृत् ॥ २१ ॥

अर्थ–प्रथम ऋतुकालमें वायविडंगका नास लेनेसे स्त्रियोंके दोनो स्तन बहुत दिनोतक दृढ रहतेहैं। दीपकके मुखकी भस्मके द्वारा नास लेनेसे स्त्रियोंके दोनो स्तन ऊंचे होजाते हैं। माधवी लताकी जड़को घोलमें पीसकर पानकरनेसे स्त्रियोंके मध्यदेश क्षीण होजातेहैं और स्तन बढ़जातेहैं ॥ २०॥२१ ॥

अथ दम्पत्योर्द्वेषहरयत्नाः।

शववहनस्थितबंधनरज्ज्वासंताडनाद्धिदयितेन।
नश्यत्यबलाद्वेषःपत्यौसहजःकृतोऽथवायोगैः ॥ २२ ॥
दत्त्वैवदुग्धभक्तंविप्रायोत्पाद्यसितबलामूलम्।
पुष्येकन्यापिष्टंदत्तमनिच्छांहन्तिनिश्चितम् ॥
स्वामिपादोदकंपीत्वानारीवशीभूतोभवेत् ॥ २३ ॥

इति स्त्रीरोगाध्यायः।

अर्थ–मुरदेकी अर्थीकी रस्सीसे पति स्त्रीको मारे तो पतिमें स्त्रीकी अनिच्छा नहीं होतीहै। ब्राह्मणको दुग्धान्न भोजन कराकर पश्चात् पुष्य नक्षत्रमें सफेद-खिरैटीकी जडको उखाड घीकुवारके रसमें पीसकर सेवन करनेसे स्त्रियोंकी पतिमें अनिच्छा नहीं उत्पन्न होतीहै स्वामीके पादोदकको पीनेसेभी स्त्रियोंकी पतिमें अनिच्छा उत्पन्न नहीं होतीहै ॥ २२ ॥ २३ ॥

इति स्त्रीरोगाध्यायः समाप्तः।

अथ बालरोगचिकित्साधिकारः।

तत्रादौशिशुरोगोपद्रवार्थमुपायाः।

त्रिविधःकथितोबालःक्षीरान्नोभयवर्त्तकः ॥ १ ॥
स्वास्थ्यंताभ्यांमदुष्टाभ्यांदुष्टाभ्यांरोगसम्भवः ॥
क्षीरपथ्यौषधंधात्र्याःक्षीरान्नादस्यचोभयोः ॥ २ ॥
अन्नादस्यशिशोर्देयमौषधंभिषजासदा ॥
यथादोषंस्तनौलिस्वाचौषधंपाययेच्छिशुम् ॥ ३ ॥
मात्रयालंघयेद्धात्रीशिशोर्नोक्तंविशोधनम् ॥
सर्वंनिवार्यतेबालेस्तन्यंनप्रतिवार्य्यते ॥ ४ ॥
स्तन्याभावेपयश्छागंगव्यंवातद्गुणंपिबेत् ॥ ५ ॥

अर्थ—बालक तीन प्रकारके होतेहैं। पहिले दूध पीनेवाले, दूसरे दूध और अन्नको खानेवाले और तीसरे अन्नको खानेवाले होतेहैं। दूध और अन्नके दूषित न होनेसे बालक निरोगी रहतेहैं, दूध और अन्नके दूषित होनेसे बालक रोगी होजातेहैं। इस कारण बालकोंको सदैव अदूषित दूध और अन्न भोजनार्थ देवे। दूधको पीनेवाले और दुग्ध तथा अन्न दोनोंको खानेवाले बालकोंकी धाय (दूध पिलानेवाली) को दूध और अन्नका पथ्य देवे। अन्नको खानेवाले बालकोंको औषधि देवे। धाय या माताके स्तनोंपै औषधिको लेपकर बालकोंको पिलावे। बालकके रोग उत्पन्न होय तो बालककी धात्री (माता या धाय) को लंघन करावे और बालकको दस्त न करावे, बालककी सर्ववस्तुओंसे वर्ज्यकर चिकित्सा करे, परन्तु दूध पीना कदापि वर्जित न करे, कारण यह है कि, दूध बालकका जीवन है और विना दूधके बालकोंके प्राण नष्ट होजातेहैं। जो माता या धायके दूधका अभाव होय तो बकरीका दूध या गायका दूध पिलावे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथाचिरजातशिशोर्व्याधिहरयोगाः।

योबालोऽचिराज्जातःस्तनंनगृह्णातिनसहसैव।
धात्रीमधुघृतंपथ्याकल्केनोद्धर्षयेज्जिह्वाम् ॥ ६ ॥
मृत्पिण्डेनाग्नितप्तेनक्षीरसिक्तेनसोष्मणा।
स्वेदयेदुत्थितांनाभिंशोथस्तेनोपशाम्यति ॥ ७ ॥

दुग्धेनच्छागश...तानाभिपाकेऽवचूर्णयेत् ।
त्वक्चूर्णैःक्षीरिणंवापिकुर्याच्चन्दनरेणुना ॥ ८ ॥
नाभिपाकेनिशालोध्रप्रियंगुमधुकैःशृतम् ।
तैलमभ्यंजनेशस्तमेभिर्वाप्यवचूर्णनम् ॥ ९ ॥
मूर्वाव्योषवचाकोलजम्बूत्वक्दारुसर्षपाः ।
सपाठामधुनालीढास्तन्यदोषनिबर्हणाः ॥ १० ॥

अर्थ—बहुत दिनोका बालक दूध न पीवे तो आमला, सहत, घृत और हरडका चूर्ण इनको एकत्र करके बालककी जिह्वामें घिसे। मट्टीके पिण्डको अग्निमें गरम करके दूधमें बुझालेवे, पश्चात् गरमागरम उसको बालककी उत्थित-नाभिपै स्वेद देनेसे सूजन दूर होजातीहै । दूधके साथ बकरीकी विष्ठाको या वटादि क्षीरवृक्षोंके छालके चूर्णको अथवा लाल चंदनके चूर्णको नाभिपै घिस-नेसे नाभिपाक दूर होताहै। हलदी, लोध, फूलप्रियंगु और मुलेठी इनके साथ तेलको पकाकर नाभिपै मलनेसे अथवा उक्त औषधियोंके चूर्णको नाभिमें घिस-नेपर निश्चय नाभिपाक दूर होताहै। मूर्वा, सोंठ, पीपल, मिरच, बच, बेर, जामु-नकी छाल, देवदारु, सरसों और पाढ इन सबका चूर्ण सहतमें मिलाकर बाल-कको चटानेसे स्तन्यरोग दूर होताहै ॥ ६–१० ॥

अथ शिशुरोगहरचिकित्सा ।

प्रियंगवश्चासिन्धूत्थंमधुनालेहयेच्छिशुम् ।
क्षीरामयंनिहन्त्याशुविडंगेनयुतंक्रिमीन् ॥ ११ ॥
तैलस्यभागमेकंमूत्रस्तुद्वौद्वौचशिम्बिदलरसस्य ।
छागंपयश्चतुर्गुणमेवंदत्त्वापचेत्तैलम् ॥ १२ ॥
तैलाभ्यंगःसततंरोगमनासकाख्यमपहरति ।
अर्कजदुग्धकमाविकरोमाण्यादायकेशराजस्य ॥ १३ ॥
स्वरसेनाक्तेवस्त्रेकृत्वावार्त्तिंश्चतैलाक्ताम् ।
तज्जातकज्जलला...तलोचनयुगलोऽप्यलंकृतोबालः १४
कष्टमन सकरागंमुञ्चतिभूतादिकंचापि ।

लाजांजनसिताब्राह्मीमधुश्लक्ष्णकचूर्णितैः ॥
बालस्यलेहोमधुनादेयःसर्वज्वरापहः ॥ १५ ॥

अर्थ—फूलप्रियंगु और सैंधानोनका चूर्ण सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे स्तन्यरोग दूर होताहै। तथा वायबिडंगका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका कृमिरोग दूर होताहै। तेल १ एकभाग, गोमूत्र २ दो भाग, सेमके पत्तोंका रस २ दो भाग और बकरीका दूध ४ चार भाग इन सबको एकत्र करके पकावे, इस तेलके मलनेसे—बालकोंका अनासक रोग दूर होताहै। आकका दूध और भेडके रोम कुकुरभांगरेके रसमें मिलाकर वस्त्रपै लेपकर देवे, पश्चात् उस वस्त्रकी बत्ती बनाकर तेलमें भिजो लेवे, उन बत्तियोंके काजलको बालककी आँखोंमें लगानेसे अनासक रोग और भूतादिजनक सम्पूर्ण दोष दूर होजातेहैं। खीलें, अंजन, बूरा और ब्राह्मीको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होजातेहैं ॥ ११–१५ ॥

अथ चोरकादिरोगचिकित्सा।

ह्रत्वैकदातिशरणंवमनंतथैव
आध्मानघूर्णनरुजश्चशिशोर्विधाय।
यःश्वासमात्रपरिरक्षितजीवयोगा
रोगोबधूभिरुदितःसहिचोरनामा ॥ १६ ॥
शीर्षाघ्रिहस्ततलयोःसितकुक्कुटाण्ड-
मज्जाघृतोहरतिचोरकरोगमाशु ।
एवंनशाम्यतिशिशुंपरिपालयेत्तं
पूतात्मनाकिलविधेयमिदंजलेन ॥ १७ ॥
भद्रमुस्ताभयानिम्बपटोलामलकैः कृतः।
क्वाथःसोष्णोम्बुबालानामशेषज्वरनाशनः ॥ १८ ॥
कफकोपज्वरेऽरुच्यांप्रतिश्यायश्वासकासके ।
चूर्णतिक्तापंचकोलंलिह्यान्मधुघृताप्लुतम् ॥ १९ ॥

अर्थ—एक साथ बालक, अतीसार, वमन, आध्मान और घूर्ण रोगमें जड-ताको प्राप्त होजाय, केवल श्वास ही बाकी रहजाय और -तकसमान दीखे,

उसको चोरकरोग कहतेहैं । इस रोगवाले बालकके मस्तकमें, पाँवोंमें और हाथोंमें सफेद मुरगेके अंडेकी मज्जाको मले इससे निश्चय चोरक रोग दूर होता-है । जो इससे यह रोग दूर न होवे तो पवित्र साधु बालकको जलप्रदानादि करके पालन करे । नागरमोथा, या हरड, नीमकी छाल, पटोल और आमला इनका गरमागरम क्राथ पान करानेसे बालकोंका ज्वर दूर होताहै । कुटकी और पंचकोलका चूर्ण सहत और घृतमें सानकर बालकोंको चटानेसे ज्वर, अरुचि, प्रतिश्याय, श्वास और खाँसी दूर होतीहै ॥ १६–१९ ॥

अथ शिशुकादिचिकित्सा ।

शृंगींसमुस्तातिविषांविचूर्ण्य
लेहंविदध्यान्मधुनाशिशूनाम् ।
कासज्वरच्छर्दिभिरर्दितानां
समाक्षिकांचातिविषांघनैकाम् ॥ २० ॥
हरिद्राद्वययष्ट्याह्वसिंहीशक्रयवैःकृतः ।
शिशोर्ज्वरातिसारघ्नःकषायःस्तन्यदोषजित् ॥ २१ ॥

अर्थ–काकडाशिंगी, नागरमोथा और अतीसका चूर्ण सहतके साथ सेवन करनेसे, अथवा अतीसका चूर्ण या नागरमोथेका चूर्ण सहतमें मिलाकर चाट-नेसे बालकोंके खाँसी, ज्वर और वमनादि रोग दूर होतेहैं । हलदी, दारुहलदी, मुलेठी, पिठवन और इन्द्रजौका क्राथ पीनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वर दूर होतेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

अथ मुस्तादिचूर्णम् ।

घनकृष्णारुणाशृंगीचूर्णक्षौद्रेणसंयुतम् ॥ २२ ॥
इयं बालचातुर्भद्रिकाख्या ।

अर्थ–नागरमोथा, पीपल, अतीस और काकडाशिंगी, इनका चूर्ण कर सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंके ज्वरादि रोग होतेहैं । इन चारों औषधियोंको बाल-चतुर्भद्रिका संज्ञा है ॥ २२ ॥

अथान्येऽपिबालरोगप्रयोगाः ।

पारसीययमानिकाघनकणाशृंगीबिडंगारुणा ।
चूर्णश्लक्ष्णतरंविलीढमापितत्क्षौद्रेणसंयोजितम् ॥ २३ ॥

सर्पत्वङ्निंबशपारिष्टपत्रंवरजनीवचा।
रसोनहिंग्वजालोमशृंगीमरिचमाक्षिकैः ॥ २४ ॥
धूपःसर्वज्वरघ्नोऽयंकुमाराणांग्रहापहः।
पत्रैर्वदरचांगेरीकाकमाचीकपित्थशैः ॥ २५ ॥
शिशोरुग्राण्यतीसारनाशनंमूर्द्धलेपनम्।
सुवर्णगौरिकस्यापिचूर्णानिमधुनासह ॥
लीढ्वासुखमवाप्नोतिक्षिप्रंहिक्कार्दितःशिशुः ॥ २६ ॥

अर्थ—खुरासानी, अजवायन, नागरमोथा, पीपल, काकडाशिंगी, बायबिडंग और अतीस, इनका चूर्णकर सहतमें मिलाकर चटानेसे कासादिरोग दूर होतेहैं साँपकी कैंचली, सीसम, नीमके पत्ते, बच, हलदी, लहसुन, हींग, बकरीके रोम, काकडाशिंगी, कालीमिरच और सहत इनकी धूप देनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं। बेरी, चांगेरी, मकोय और कैथा इनके पत्तोंको पीसकर मस्तकपै प्रलेप करनेसे बालकोंका अतीसार दूर होताहै। पीली गेरूका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका वमन दूर होताहै ॥ २३–२६ ॥

अथ शिशुज्वरातिसारादिचिकित्सा।

धातकीबिल्वधान्याकलोध्रेन्द्रयवबालकः।
लेहःक्षौद्रेणबालानांज्वरातीसारवान्तिनुत् ॥ २७ ॥
रजनीदारुसरलश्रेयसीबृहतीद्वयम्।
पृश्निपर्णीशताह्वाचलीढंमाक्षिकसर्पिषा ॥ २८ ॥
मधुसर्पिर्युतंचूर्णंत्रिफलाव्योषसैन्धवम्।
लीढंनिवारयत्याशुगात्रशोथज्वरंशिशोः ॥ २९ ॥
जीर्णज्वरंशिशूनांलीढातैलेनकेशराजजटा।
हरतितथातीसारंपटुदशनाढ्योरसःपीतः ॥ ३० ॥

अर्थ—धायकेफूल, बेलकीगिरी, धनियाँ, लोध, इन्द्रजौ और सुगंधबाला इनको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं। हलदी, देवदारु, धूपसरल, गजपीपल, कटाई, कटेरी, पिठवन और सोया इनको एकत्र पीसकर सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके

संग्रहणी आदि रोग दूर होतेहैं। हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल और सैंधानोन यह सब समानभाग ले सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके शरीरकी सूजन और ज्वर दूर होताहै । कुकुरभांगरेकी जडको तेलके साथ सेवन करनेसे बालकोंका पुराना ज्वर दूर होताहै। चूकाके रसमें सैंधानोन डाल कर पीनेसे बालकोंके अतीसार दूर होतेहैं ॥ २७–३० ॥

अथ शुण्ठ्यादिक्काथाःसिन्दूरादिलेहश्च ।

नागरातिविषामुस्तबालकेन्द्रयवैःशृतम् ।
कुमारंपाययेत्प्रातःसर्वातीसारनाशनः ॥ ३१ ॥
कपित्थस्वरसःक्षौद्रलाजचूर्णसमन्वितः ।
पेयःसर्वातिसारघ्नःकुमाराणांविशेषाजित् ॥ ३२ ॥
समंगाधातकीलोध्रशारिवाभिःशृतंजलम् ।
सिन्दूरानलकुष्ठमुस्तमरिचैःशृंगीवटस्याग्रजैः ॥ ३३ ॥
पाठागंधककाचटंकणविषाविश्वौषधीकट्फलैः ।
कुचीसज्जककोलबीजकुनटीबिल्वेन्द्रलोध्रैस्तथा॥३४॥
लाजाऽजाजीयुगैःसचंदनयुतैःसश्रेयसीचूर्णितैः ।
लेहःक्षुद्रविनिर्मितोहरातिवैपश्चाद्रुजंदुस्तरम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–सोंठ, अतीस, नागरमोथा, सुगंधबाला और इन्द्रजौ इनका काथ बालकोंको पिलानेसे अतीसार दूर होताहै। कैथेका स्वरस, सहत और खीलोंका चूर्ण एकत्र सेवन करनेसे बालकोंका अतीसार दूर होताहै । मँजीठ, धायकेफूल, लोध और श्यामालता इनका काथ सहत डालकर पीनेसे बालकोंके सर्वप्रकारके अतीसार दूर होतेहैं । सिंदूर, चीतेकीजड, कूठ, नागरमोथा, कालीमिरच, काकडाशिंगी, बडके अंकुर, पाढ, गंधक, कांच, सुहागाकी खीलें, अतीस, सोंठ, कायफल, राल, बेलकीगिरी, गेरू, बेलकागूदा, इन्द्रजौ, लोध, खीलें, जीरा, कालाजीरा, लालचंदन और गजपीपल इन सबका चूर्ण करके सहतमें मिलाके चाटनेसे बालकोंके अतीसारादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३१–३५ ॥

बालकुटजावलेहः ।

मूलत्वचंवत्सकस्यपलमेकंसुकुट्टितम् ।
अष्टभागंजलंदत्त्वाचतुर्भागावशेषितम् ॥ ३६ ॥

अतिविषाचपाठाचजीरकंबिल्वमेवच ।
आम्रास्थिशतपुष्पाचधातकीमुस्तकंतथा ॥
जातीफलंचसंचूर्ण्यनिक्षिपेत्तत्रयत्नतः ॥ ३७ ॥

अर्थ–४ चार तोले कुडेकी छालको ३२ बत्तीससेर जलमें पकावे, जब आठ तोले जल शेष रहे तब उतारकर छानलेवे । फिर अग्निपै रखके पकावे, जब पकते २ गाढा होजाय तब उसमें अतीस पाढ़, जीरा, बेलका गूदा, आमकी-गुठली, सोया, धायके फूल, नागरमोथा, और जायफलका चूर्ण डालकर खूब मिलादेवे । इस औषधिको सेवन करनेसे बालकोंका आमशूल और रक्तभेद दूर होताहै ॥ ३६॥३७ ॥

अथामातीसारादिचिकित्सा ।

व्योषाभयावत्सकदीप्यकञ्च
कैटर्य्यमुस्ताविजयासमांशकम् ।
घृतेनवाशर्करयासमेतं
सामातिसारंहरतिक्षणेन ॥ ३८ ॥
त्रिकटुवचयमानीगंधपाषाणकुष्ठं
सनिशरजनिपुष्पंजीरकेकाचकञ्च ।
कुलिरकनकबीजंतालसिन्धुंशिलांच
वनजलशुनहिंगुंमूलमैशञ्चटंकम् ॥ ३९ ॥
समनृपतिविडंगन्तुल्यभागंगृहीत्वा
दृषदिमसृणपिष्टंवस्त्रपूतांविधाय ।
ग्रहजनिताशिशूनांक्षीरपानांशिशूनां
शमयतिजठरोत्थाजीर्णविष्टम्भकार्यम् ॥ ४० ॥

अर्थ–सोंठ, पीपल, कालीमिरच, हरड, कुडेकीछाल, अजवायन, कायफल, नागरमोथा और भांगकाचूर्ण घृत अथवा बूराके साथ सेवन करनेसे बालकोंका आमातीसार दूर होताहै । सोंठ, मिरच, पीपल, वच, अजवायन, गंधक, कूठ, फूलों समेत हलदी, कालाजीरा, सफेद जीरा, काच, काकडाशिंगी, कनकधतूरेके बीज, हरिताल, सैंधानोन, मैनशिल, नागरमोथा, लहशुन, हींग,

ईखकी जड, सुहागा, सैंजिनेकेबीज और बायबिडंग इन सबका चूर्णकर मधु आदि अनुपानके साथ सेवन करनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वर अतिसारादि-रोग दूर होतेहैं ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथ पञ्चविधकासादिचिकित्सा ।

द्राक्षापिप्पलिशुण्ठीनांचूर्णंक्षौद्रेणसर्पिषा ।
लीढंनिवारयत्याशुकासंपंचविधंशिशोः ॥ ४१ ॥
धान्यंशर्करयायुक्तंतण्डुलोदकसंयुतम् ।
पानमेतत्प्रदातव्यंकासेपंचविधेशिशोः ॥ ४२ ॥
बिल्वमूलकषायेणलाजाचैवसशर्करा ।
आलोड्यपाययेद्बालंछर्द्यतीसारनाशनम् ॥ ४३ ॥

अर्थ–दाख, पीपल और सोंठका चूर्णकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंके पांच प्रकारकी खाँसी दूर होजातीहै । धनियाँ और शर्करा चावलों-के जलके साथ पीनेसे बालकोंका कास रोग दूर होताहै । बेलकी जडके काथमें खीलोंका चूर्ण और बूरा मिला आलोडन कर बालकोंको पिलानेसे वमन और अतीसार दूर होताहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

अथ ज्वरातीसारादिचिकित्सा ।

समंगोत्पलकिंजल्कंसंपिष्टंतण्डुलाम्बुना ।
मत्स्यण्डीमधुसंयुक्तंज्वरातीसारनाशनम् ॥ ४४ ॥
ह्रीवेरशर्कराक्षौद्रंपीतंतण्डुलवारिणा ।
शिशोरक्तातिसारघ्नंतृट्छर्दिज्वरनाशनम् ॥ ४५ ॥
मरिचमहौषधकुटजंद्विगुणीकृत्यउत्तरोत्तरतः ।
गुडतक्रयुतमेतद्ग्रहणीरोगंनिहन्त्याशु ॥ ४६ ॥
लाजासयष्टीमधुकंशर्कराक्षौद्रमेवच ।
तण्डुलोदकसंपीतंक्षिप्रंहन्तिप्रवाहिकाम् ॥ ४७ ॥

अर्थ–वराहक्रान्ता, उत्पल, कमलकेसर, इनको एकत्र चावलोंके जलमें पीसकर मिश्री और सहत मिलाकर बालकोंको पिलानेसे ज्वरातिसार दूर होताहै । सुगन्धबाला, बूरा और सहत एकत्र चावलोंके जलके साथ पीनेसे

बालकोंके रक्तातिसार, प्यास, वमन और ज्वर नष्ट होताहै । मिरच १ एक-भाग, सोंठ २ भाग और कुडेकी छाल ४ चार भाग, इनका एकत्र चूर्णकर गुड और तक्रके साथ सेवन करनेसे बालकोंका संग्रहणी रोग दूर होताहै। खाल, मुलेठी, बूरा और सहत इनको चावलोंके जलके साथ पीनेसे बालकोंका प्रवाहिका रोग दूर होताहै ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अथ पश्चाद्रुगादिचिकित्सा ।

चंदनंशारिवेद्वेचशंखनाभिसमायुतैः ।
पश्चाद्रुजेप्रलेपोऽयमलेहस्तुप्रशस्यते ॥ ४८ ॥
गुदपाकेतुबालानांपित्तघ्नींकारयेत्क्रियाम् ।
रसांजनंविशेषेणपानालेपनयोर्हितम् ॥ ४९ ॥
पीतंपीतंवमेद्यस्तुस्तन्यंतंमधुसर्पिषा ।
द्विवार्त्ताकीफलरसंपंचकोलंचलेहयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ–लालचंदन, दोनो प्रकारकी शारिवा और शंखनाभि इनको एकत्र जलमें पीसकर लेप करनेसे अथवा इनका अवलेह बनाकर सेवन करानेसे बाल-कोंका पश्चाद्रुज दूर होताहै। बालकोंके गुदपाक रोगमें पित्तघ्नी क्रियाका व्यवहार करे । रसौतके पिलानेसे और रसौतका प्रलेप करनेसे बालकोंका गुदपाक रोग दूर होताहै । जो बालक बारंबार दूध पीकर बारंबार वमन करदेतेहैं, उनको बृहतीका रस, कटेरीका रस, पंचकोलका चूर्ण, सहत और घृत यह सब एकत्र मिलाकर चटावे तो दूध डालना बंद होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथ वमनादिहरयोगाः ।

आम्रास्थिलाजंसिन्धूत्थैर्लेहःक्षौद्रेणछर्दिनुत ।
कोलास्थिमध्यंसोदीच्यंचन्दनंमधुशर्करा ॥ ५१ ॥
भृष्टोमूर्त्तिरसंयुक्तंपीतंछर्दिहरंशिशोः ।
ज्वलितवटकाष्ठमम्भसिबहुधानिर्वाप्यकारितंपीतम् ५२
हरतिश्वसनंछर्दिमभयाचापिमात्रयायदत्ता ।
साऽपिमधुलोध्रसंयुक्ताछर्दिरोगंजयेद्द्रुतम् ॥ ५३ ॥
पुष्करातिविषाशृंगीमागधीधन्वयासकैः ।
चूर्णितैर्मधुनालेहःशिशूनांपंचकासनुत् ॥ ५४ ॥

अर्थ—आमकी गुठली, खीलैं और सैंधेनोनका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका वमन दूर होताहै । बेरकी गिरी,सुगन्धबाला और लालचंदनका चूर्ण सहत और बूरामें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंका वमन दूर होताहै । बडकी जलती हुई लकडियोंको बहुत बार जलमें बुझाकर उस जलको पिलानेसे अथवा हरड़का चूर्ण और लोधका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका वमन और श्वास दूर होजाता है । पोहकरमूल, अतीस, काकड़ाशिंगी, पीपल और धमासा इनका एकत्र चूर्णकर सहतमें मिलाकर चटावे तो बालकोंकी खाँसी दूर होतीहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

अथ हिक्कादिचिकित्सा ।

पिप्पलीमरिचानान्तुचूर्णंसमधुशर्करम् ।
रसेनमातुलुंगस्यहिक्काछर्दिनिवारणम् ॥ ५५ ॥
दाडिमस्यतुबीजानिजीरकंनागकेशरम् ।
चूर्णितंशर्कराक्षौद्रंलीढंतृष्णाहरंशिशोः ॥ ५६ ॥
कणोषणसिताक्षौद्रसूक्ष्मैलासैंधवैःकृतः ।
मूत्रग्रहेप्रयोक्तव्यःशिशूनांलिहउत्तमः ॥ ५७ ॥
पटोलत्रिफलारिष्टहरिद्राक्वथितंपिबेत् ।
क्षतवीसर्पविस्फोटज्वराणांशान्तयेशिशोः ॥ ५८ ॥

अर्थ—पीपल और कालीमिरचोंका चूर्ण, बूरा और बिजोरेनींबूके रसमें मिलाकर पीनेसे बालकोंकी वमन और हिचकी दूर होतीहै । अनारदाना, जीरा और नागकेसर, इनको एकत्र पीसकर बूरा और सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी प्यास दूर होतीहै । पीपल, कालीमिरच, बूरा, सहत, सैंधानोन, और छोटी इलायची इनका लेह बनाकर बालकोंको चटानेसे मूत्रग्रह (पेशाबका बंद होजाना) दूर होताहै । पटोल, हरड़, बहेड़ा,आमला, नीमकीछाल और हलदी इनका क्वाथ बनाकर पिलानेसे बालकोंके क्षत, विस्फोटादिरोग दूर होतेहैं ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

अथ तालुकण्टकादिचिकित्सा ।

पथ्याकुष्ठवचाचूर्णंमधुतैलयुतंपिबेत् ।
ग्रीवादार्ढ्यकरंश्रेष्ठतालुकण्टकनाशनम् ॥ ५९ ॥

तालु पाकेयवक्षारंमधुनाप्रतिसारणम् ।
सैंधवाङ्गारयोश्चूर्णंमुखविस्रावणेहितम् ॥ ६० ॥
अथवोदधिफेनश्चसैंधवेनसमायुतम् ।
मुखपाकेतुबालानांसाम्रसारमयोरजः ॥ ६१ ॥
गैरिकक्षौद्रसंयुक्तंभेषजंसरसांजनम् ।
केवलेनाप्यनेन मधुना लेह इति वृद्धाः ।
अश्वत्थवल्कलक्षौद्रैर्मुखपाकेप्रलेपनम् ॥ ६२ ॥

अर्थ–हरड़, कूठ और बचका चूर्ण, सहत और तेलके साथ पिलानेसे बालकोंकी ग्रीवा दृढ होतीहै, तथा तालुकण्टकरोग दूर होताहै । जवाखारका चूर्ण सहतमें मिलाकर उससे बालकोंके तालुको घिसनेसे बालकोंका तालुपाक-रोग दूर होताहै । सेंधेनोनकाचूर्ण और अंगारोंका चूर्ण अथवा समुद्रफेन और सेंधानोनका चूर्ण बालकोंको देनेसे मुखविस्रावण (लारका गिरना) दूर होताहै । आमकीमींग, लोहा, गेरू सहत और रसौत, यह सब द्रव्य समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका मुखपाक रोग दूर होताहै । तथा केवल सहतके चटानेसे भी मुखपाक रोग दूर होता है यह वृद्धोंका मत है । पीपलकी छालके चूर्णमें सहत मिलाकर प्रलेप करनेसे बालकोंका मुखपाक रोग दूर होताहै ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

अथ कर्णव्रणस्रावादिचिकित्सा ।

दार्वीयष्ट्यभयाजातीपत्रक्षौद्रैस्तथापरम् ।
जातीपत्ररसःपूतःक्षौद्रयुक्तःप्रशस्यते ॥ ६३ ॥
शिशोःकर्णव्रणस्रावेमुखपाकेचशस्यते ।
शारिवातिललोध्राणांकषायोमधुकस्यच ॥ ६४ ॥
विस्रावितेमुखेशस्तंधारणार्थंशिशोःसदा ।
हरिद्रानिम्बपत्राणिमधुकंलोध्रमुत्तमम् ॥ ६५ ॥
तैलमेभिर्विपक्तव्यंमुखपाकहरंपरम् ।
सह[illegible]मुद्गदलरसघर्षणंसद्यः ॥
द्रुतमुपहन्तिहिपाकंमुखगंबालस्यचाश्वेव ॥ ६६ ॥

अर्थ-दारुहलदी, मुलेठी, हरड़ और चमेलीके पत्ते इनको पीसकर सहतमें मिलाके प्रलेप करनेसे अथवा चमेलीके पत्तोंके रसमें सहत मिलाकर प्रयोग करनेसे बालकोंके कानका बहना और मुखपाकरोग दूर होताहै। अनन्तमूल, तिल, लोध और मुलेठी इनका क्काथ मुखमें कवलरूपसे धारण करनेसे बालकोंका मुखस्राव दूर होताहै। हलदी, नीमकेपत्ते, मुलेठी, लोध और उत्पल, साथ तेलको पकाकर प्रयोग करनेसे बालकोंका मुखपाकरोग दूर होताहै। इसके जम्भीरी नीबूका रस और थूहरके पत्तोंका रस दोनोको मिलाकर मुखमें घिसनेसे बालकोंका मुखपाकरोग दूर होताहै ॥ ६३-६६ ॥

अथ कुमारकल्याणघृतम्।

द्राक्षासशर्करंशुण्ठीजीवन्तीजीरकंबला।
शठीदुरालभाबिल्वंदाडिमंसुरसास्थिरा ॥ ६७ ॥
मुस्तंपुष्करमूलंचसूक्ष्मैलागजपिप्पली।
एषांकर्षसमैर्भागैः घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ६८ ॥
कषायेकण्टकार्यांतुक्षीरेतस्माच्चतुर्गुणे।
एतत्कुमारकल्याणंघृतरत्नंसुखप्रदम् ॥ ६९ ॥

अर्थ-गायका घी २ दो सेर, कटेरीका स्वरस २ दो सेर, गायका दूध ८ आठसेर और कल्कके लिये दाख, बूरा, सोंठ, जीवन्ती, जीरा, खिरैटी, कचूर, धमासा, बेल, अनारकी छाल, तुलसी, शालिपर्णी, नागरमोथा, पोहकरमूल, छोटी इलायची और गजपीपल, प्रत्येक दो दो तोले लेकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे। यह कल्याणकुमार घृत बालकोंको सुखदेनेवाला है। और सर्वरोग शोकोंको हरनेवाला है॥ ६७-६९ ॥

अथ मेधाजनकंघृतम्।

वचाकुष्ठंतथाब्राह्मीसिद्धार्थकमथापिवा।
शारिवासैन्धवंचैवपिप्पलीवेल्लमुस्तकम् ॥ ७० ॥
मेध्यंघृतमिदंसिद्धंपातव्यंचदिनेदिने।
दृढस्मृतिःक्षिप्रमेधाःकुमारोबुद्धिमान्भवेत् ॥ ७१ ॥

अर्थ-उत्तम गायका घी २ दो सेर, जल आठ ८ सेर, तथा कल्कके लिये बच, कूठ, ब्रह्मी, सफेदसरसों अनन्तमूल, सैंधानोन, पीपल, बायबिडंग और

नागरमोथा लेकर यथाविधिसे घृतको पकावे । यह मेध्य घृत बालकोंको प्रतिदिन पिलावे, इससे बालकोंकी मेधा बढतीहै, स्मरणशक्ति दृढ होतीहै और बुद्धिमान् होतेहैं ॥ ७०॥ ७१ ॥

अथ लाक्षादितैलम् ।

लाक्षारससमंसिद्धंतैलमस्तुचतुर्गुणम् ।
रास्नाचन्दनकृष्णाब्दवाजिगंधानिशायुगैः ॥ ७२ ॥
शताह्वादारुयष्ट्याह्वमूर्वातिक्ताहरेणुभिः ।
बालानांज्वररक्षोघ्नमभ्यंगाद्बलवर्णकृत् ॥ ७३ ॥

अर्थ—तिलका तेल २ दो सेर, लाखका क्राथ २ दो सेर, दहीकातोड़ ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये रास्ना, लालचंदन, पीपल, नागरमोथा, असगंध हलदी, दारुहलदी, सोया, देवदारु, मुलेठी, मूर्वा, कुटकी और रेणुका प्रत्येक दो दो तोले ले इस तेलको यथाविधिसे पकाकर शरीरमें मलनेसे बालकोंके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं । तथा बल और वर्णकी वृद्धि होतीहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अथौषधैर्मन्त्रैश्चबालग्रहनाशनम् ।

महामुण्डीतकोदीच्यक्काथस्नानंग्रहापहम् ।
श्वेतापराजितामूलंनिम्बपत्राणिसर्षपः ॥ ७४ ॥
भूर्जपत्रंवचासर्पिर्धूपःसर्वग्रहापहः ।
तथाग्रहघ्नान्नस्यांश्चमंत्राञ्छृणुशिवोदितान् ॥ ७५ ॥
"अंगादंगात्सम्भवसि हृदयादभिजायसे । आत्मा वैपुत्रनामासि संजीव शरदां शतम्" ॥ ७६ ॥
शतायुः शतवर्षोऽसि दीर्घमायुरवाप्नुहि ।
नक्षत्राणि दिशो रात्रिरहश्च त्वाभिरक्षतु ॥ ७७ ॥
ओं नमो भगवते गरुडाय त्र्यम्बकाय सद्यस्तव स्तवस्तुतस्तुत स्वाहा। ओं कँ टँ यँ शँ वैनतेयाय नमः। ओं ह्रीं क्रीं क्षः ।
तपसांचेतसांचैवयशसांवपुषान्तथा ।
निधानंयोऽव्ययोदेवःसतेस्कन्दःप्रसीदतु ॥ ७८ ॥

दुर्द्दशनामहाकायापिंगाक्षीभैरवस्वना ।
लम्बोदरीशंकुपर्णीकुशलीतिप्रसीदतु ॥ ७९ ॥
नागाःपिशाचागंधर्वाःपितरोयक्षराक्षसाः ।
अभिद्रवन्तियेयेत्वांब्रह्माद्याघ्नंतुतान्सदा ॥ ८० ॥
पृथिव्यामन्तरिक्षेचयेचरन्तिनिशाचराः ।
दिक्षुवास्तुनिवासास्तुपान्तुत्वांतेनसंस्कृताः ॥ ८१ ॥

अर्थ—वडीगोरखमुण्डी और सुगंधबालाके क्काथसे स्नान करनेसे बालकोंके ग्रह दोष दूर होतेहैं । सफेद कोयलकी जड, नीमकेपत्ते, सरसों, वच, भोजपत्र और घृत, इनकी धूपदेनेसे—बालकोंके सर्व ग्रहदोष दूर होजातेहैं । पूर्वोक्त "अंगादंगात्सम्भवसि०"इत्यादिमंत्रोंका पाठ करनेसे बालकोंके सर्व ग्रहदोष दूर होजातेहैं ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

अथाहिण्डिकाचिकित्सा ।

सोमग्रहणेविधिवत्कोकिशिखामूलमुद्धृतंबद्धा ।
जघनेऽथकन्धरायांक्षपयतिबालानामहिंडिकांनियतम् ८२
सप्तदलपुष्पंमरिचापिष्टंगोरोचनयासहितम् ।
पीतंनिहन्तितदहिण्डिकारोगंशिशोर्नियतम् ॥
उदुम्बरमूलंबालकटीबंधनादहिण्डिकांहन्ति ॥ ८३ ॥

इति बालरोगाध्यायः ।

अर्थ—चन्द्रग्रहणमें मोरशिखाकी जडको उखाडकर बालकोंकी जाँघोंमें और कंधोंमें बांधनेसे ग्रहदोष जनित अहिण्डिका रोग दूर होताहै । सतवनके फूल और कालीमिरचोंको पीसकर गोरोचनके साथ पीनेसे बालकोंका अहिण्डिका रोग दूर होताहै । गूलरकी जडको बालककी कटिपै बांधनेसे—अहिण्डिका रोग दूर होताहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

इति बालरोगाध्यायःसमाप्तः ।

अथ विषचिकित्साधिकारः ।

अथ स्थावरादिविषवर्णनंतद्भवरोगास्तच्चिकित्साच ।

स्थावरंजङ्गमञ्चैवद्विविधंविषमुच्यते ।
मूलाद्यात्मकमाद्यंस्यात्परंसर्पादिसंभवम् ॥ १ ॥
मूलंपत्रंफलंपुष्पंत्वक्क्षीरंसारएवच ।
निर्यासोधातवश्चैवकन्दश्चदशमंविषम् ॥ २ ॥
निद्रांतन्द्रांक्लमंदाहंसपाकंदाहहर्षणम् ।
शोथंचैवातिसारञ्चकुरुतेजंगमंविषम् ॥ ३ ॥
स्थावरन्तुज्वरंहिक्कांदन्तहर्षंगलग्रहम् ।
फेनच्छर्घ्यरुचिंश्वासंमूर्च्छांञ्चकुरुतेविषम् ॥ ४ ॥
दष्टस्यपेयंप्रागुक्तंहृदयावरुणंघृतम् ।
धरणीबंधनेमंत्रःप्रयोगश्चविषापहः ॥ ५ ॥
दशनंदंशकस्याहेःफलस्यमृदुनोऽथवा ।
शाखादष्टस्यदंशोर्द्ध्वंविधेयश्चतुरंगुले ॥ ६ ॥
समंत्रंधरणीबंधोवस्त्रचर्मादिभिर्दृढम् ।
नदेहेसर्पतिविषंतद्बन्धेननिवारितम् ॥ ७ ॥

मंत्रश्च गरुडभेरुण्डादिदेवतानाम् ।

ओंएहमात्रभेरुण्डेअइउँबीजंभविअरुण्डे तंत्र
मंत्रअग्दोषईन्हुँकारेविपनाशइस्थावरजंगमेतिमन्हुकइ ॥८॥

अयं मन्त्रः स्पष्टाक्षरैः कर्णे पठनीयः ।

वृत्तेदंशविधौनभोगिनमसौप्राप्नोतिदष्टोयदि ।
वस्त्रंखण्डमृणालकोमलफलंदन्तैर्दशत्याशुयत् ॥
गच्छेत्तत्क्षणमेवतस्यगरलंतद्दष्टवस्त्वन्तरम् ।
दंशंनिर्विषतांनयेच्चबहुधासम्पीड्यहस्तेनच ॥ ९ ॥

वाच्यंवाकालकण्ठाह्वंध्येयावागारुडीतनुः।
शून्यताध्यानमात्रेणशून्यतांयातितद्विषम् ॥ १० ॥

अर्थ–स्थावर और जंगम इन भेदोंसे विष दो प्रकारकाहै मूलादिसे उत्पन्न हुए विषको स्थावर विष और सर्पादिके विषको जंगम विष कहतेहैं। मूल, पत्र, पुष्प, त्वक्, क्षीर, सार, निर्यास, धातु और कन्द यह स्थावर विषके रहनेके दश स्थानहैं। निद्रा, तंद्रा, क्लम, दाह, पाक युक्तदाह, रोमांच, शोथ और अतीसार, यह सब कार्य जंगम विषके हैं। ज्वर, हिक्का, दन्तहर्ष, गलेमें पीडा, झागोंकी वमन, अरुचि, श्वास और मूर्च्छा यह सब स्थावर विषके कार्य्य हैं, अर्थात् इन सब विकारोंको स्थावर विष कहतेहैं। सर्पके काटे मनुष्यको हृदयावरक घृतपान, धरणीबंधन, मंत्र और औषधि प्रयोग योजना चाहिये। साँपके डसे हुए मनुष्यके काटनेकी जगह चार अंगुल ऊपर गुरुभेरुण्डादि देवताओंके मंत्रको पढ़कर वस्त्र चर्मादिसे खूब खैंचकर बाँध देवे, इससे सर्व शरीरमें विष नहीं फैलताहै। "ॐ एहमात्र भेरुण्डे जंगम केति मन्हुकइ" इस मंत्रको स्पष्ट अक्षरोंमें साँपके काटे हुए मनुष्यके कानोंमें सुनादेवे। जिस समय साँप काटै उसी वक्त काटतेके साथही वस्त्रखण्ड, मृणाल अथवा कोमल फलोंको चाब ले तो उसका विष वस्त्रखण्डादिमें चला जाताहै, अथवा काटनेकी जगह वारंवार हाथसे नोचनेसेभी विष नहीं रहताहै। या काल कंठाह्व अथवा गारुडी तनुका ध्यान करनेसेभी विष निजशून्य होजाताहै ॥ १–१० ॥

अथ सर्पदष्टचिकित्सा।

छत्रिसर्षपपाणिश्चचरेद्रात्रौदिवातथा।
तच्छायाशब्दवित्रस्ताःप्रणश्यन्तिचपन्नगाः ॥ ११ ॥
मधुमधुककाष्ठदीप्तोयत्रज्वलतिप्रदीपकोरात्रौ।
कुलिकादयोऽपिनागास्तत्रप्राणान्विमुंचन्ति ॥ १२ ॥
तण्डुलीयकमूलन्तुपीतंतण्डुलवारिणा।
तक्षकेणापिसंदष्टंनिर्विषंकुरुतेनरम् ॥ १३ ॥
गृहधूमोहरिद्रेद्वेसमूलंतण्डुलीयकम्।
श्वेतापराजितामूलंदेवदालीयमूलकम् ॥ १४ ॥

वारिणापेषितंनस्येकालदष्टोऽपिजीवति।
मूषलीटंकणंपानेकालदष्टोऽपिजीवति॥ १५॥
पिण्डीतगरजंमूलंपुष्येणोद्धृत्ययोजितोदंशे।
मृतमपिदष्टपुरुषंशमयतिसर्वेगात्रंनोचित्रम्॥ १६॥
पुत्रंजीवफलंमज्जांगवांक्षीरेणपेषयेत्।
लेपांजननस्येनकालदष्टोपिजीवति॥ १७॥

अथ गरुडमंत्रः।

वाँषोंवाँअनेनमन्त्रेणसर्पदष्टस्यशिखाबन्धनंकुर्यात्।
दाँपोंदाँअनेनमन्त्रेणदंष्ट्रस्यनिर्विषंनिर्व्वाहयेत्॥
सर्पदष्टोयदाधीरस्तंसर्पंदंशयेत्स्वयम्।
मुक्तोऽसौम्रियतेसर्पःस्वयंनिर्विषतांव्रजेत्॥ १८॥

अर्थ—सरसोंको हाथमें लेकर छत्रीको लगाकर जो मनुष्य रातदिन विचरण करताहै, उसकी छाया और शब्दसे सम्पूर्ण साँप त्रासयुक्त होकर नष्ट होजातेहैं। गत्रिमें—सहत मिलाकर मुलेठीको दीपककी समान जलानेसे कुलकादि सम्पूर्ण सर्प मर जातेहैं। चौलाईकी जड़को चावलोंके जलमें पीसकर सेवन करनेसे तक्षक सर्पका काटाहुआभी आराम होताहै। घरका धुआँ, हलदी, दारुहलदी और जड समेत चौलाई एकत्र पीसकर दही और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे साँपका विष दूर होताहै। सफेद अपराजिताकी जड़ और देवदालीकी जड़को जलमें पीसकर नास लेनेसे काले साँपका विष दूर होताहै। मुसली और सुहागेको पीसकर सेवन करनेसे काले साँपका विष दूर होताहै। पिण्डीतगरकी जड़को पुष्य नक्षत्रमें उखाड़कर साँपके काटे हुए स्थानमें प्रलेप करनेसे मरा हुआ भी जी जाताहै। पतिजियाके फलकी मींगको गायके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे, अंजन लगानेसे और नास लेनेसे काले साँपका काटाहुआभी जी जाताहै। वां पों वां इस मंत्रको पढ़कर सांपके काटे हुए मनुष्यकी चोटीको बाँध देवे, दां पों दां इस मंत्रके द्वारा विषको उतारे। सांपका काटा हुआ मनुष्य धीरज धरकर उसी सांपको डसलेवे तो सांप मरजावे और उस मनुष्यके प्राण बच जातेहैं। ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथ स्थावरादिविषभेदास्तन्नामरूपाणिच ।

शम्भुनोक्तंसमानेनविषंस्थावरजंगमम् ।
कृत्रिमंयोगजंचैववृश्चिकाखुविषंतथा ॥ १९ ॥
क्रमादौषधमेतेषांमंत्रयुक्तंवदाम्यहम् ।
अन्यन्मंत्रौषधीनान्तुक्रमात्सिद्धिःक्वचिद्भवेत ॥ २० ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनविषत्वंसममभ्यसेत् ।
चिकित्सांत्वरितंकृत्वासम्यग्रक्षामुपाचरेत् ॥ २१ ॥
नामरूपंविषाणान्तुशम्भुनाकीर्तितंपुरा ।
बहवोवत्सनाभश्चमुस्तकंपुष्करंविषम् ॥ २२ ॥
क्षौद्रंशटिःशर्करश्चहरिद्रंकालकूटकम् ।
इन्द्रबीजंचैववीरंहरितंगालकंविषम् ॥ २३ ॥
शृंगीकर्कटशृंगीचमेषशृंगीहलाहलम् ।
शक्तुकंरक्तशृंगीचअंजनंपुण्डरीयकम् ॥ २४ ॥
शंकोचंमधुपाकश्चरोहिणंमतुलंतथा ।
पंचविंशद्भिर्भेदैर्ज्ञेयंस्थावरजंविषम् ॥ २५ ॥
एषांमध्येह्यतिक्रूरंशङ्कोचंकालकूटकम् ।
शृंगंमुस्तंवत्सनाभंपंचमन्तुविषाद्विषम् ॥ २६ ॥
एतदेहगतेकार्यंतेषांलक्षणमुच्यते ।
वान्तिमूर्च्छातिसारश्चशूलंचातिकरंपरम् ॥ २७ ॥
कासश्वासौप्रवाहौचलक्षयेत्कुमुदंविषम् ॥ २८ ॥

अर्थ—स्वयं शंकरने कहा है कि, विष स्थावर, जंगम, कृत्रिम, योगज, वृश्चिक विष और उन्दुर इन भेदोंसे कई प्रकारका है । मंत्र औषधादिकोंमें कौनसे विषसे किस समय सिद्धि होती है ? इस कारण भले प्रकारसे विष-तत्त्वको जानना चाहिये और शीघ्र चिकित्सा करे । परंतु सर्पके काटे हुए मनुष्यकी बहुत शीघ्र चिकित्सा करे । पहले महादेवने विषके अनेक नामरूप कहे हैं, जैसे वत्सनाभ, मुस्तक, पुष्कर, क्षौद्र, शटि, शर्कर, हारिद्र, कालकूट

इन्द्रबीज, वीर, हरित, गालक, शृंगी, कर्कटशृंगी, मेषशृंगी, हलाहल, शकुक, रक्तशृंगी, अंजन, पुण्डरीयक, शंकोच, मधुपाक, रोहिण, विष और मतुल यह पचीस भेद स्थावर विषके हैं। इनमें शंकोच, कालकूट, शृंग, मुस्तक और वत्सनाभ, यह ५ पांच विष अत्यन्त क्रूर हैं। यह सब विष देहमें प्राप्त होनेसे वमन, मूर्च्छा, अतीसार और अत्यन्त शूलके समान पीडाको उत्पन्न करते हैं। तथा कुछ विष खांसी, श्वास और प्रवाहिका रोगको उत्पन्न करैहैं ॥ १९-२८ ॥

अथाशेषविषचिकित्सा ।

पुत्रंजीवफलंमज्जांशीततोयेनपेषयेत् ।
भोजनेचांजनेपानेलेपःसर्व्वविषापहः ॥ २९ ॥
स्थावरंजंगमंक्रूरंकृत्रिमंयोगजंतथा ।
निष्कमात्रात्रसंदेहःकालदष्टोहिजीवति ॥ ३० ॥
समूलपत्रंसर्पाक्षीतथैवदेवदालिका ।
गिरिकर्ण्याश्चवामूलंनरमूत्रेणपूर्ववत् ॥ ३१ ॥
स्त्रवस्त्रास्थापिनिर्वाहंनिर्विषीकरणन्तथा ।
कर्त्तव्यंमंत्रिणाशीघ्रंतत्तथैवप्रदर्श्यते ॥ ३२ ॥

"नाधोना" अनेन मंत्रेण शीतजलघटमभिमंत्र्य विषातुरस्य मस्तके क्षिपेत् । विषं न क्रामति इति स्तम्भनमंत्रः । "पंक्षौ" अनेन मंत्रेण विषान्बंधयेत् । "वाँपांवाँ" अनेन मंत्रेणार्कदण्डमभिमन्त्र्य विषातुरस्य सर्वाङ्गे निर्वाहयेत् । "ह्राँदस्त्रीह्रीं" अनेन मंत्रेण निर्विषीकरणार्थं विषातुरं दण्डेनापमार्ज्जयेत्स्तम्भो भवति ।

अथ मंगलाविद्या ।

ओं नमो भगवति परमतत्त्वपराण्यक्षरैर्महाविद्योल्कालानि घोरश्मशानपरिभ्रमणानि अट्टअट्टहासिनि उन्मान टोनिवासिनि एहि एहि योगपीठस्थिते त्रिपुरे त्र्यक्षरे

त्रिपथे त्रिकोणवासिनि वेतालापस्मारयक्षराक्षसप्रेतभूत-पिशाचनिवारिणि स्थावरजंगमकृत्रिमविषनाशिनि सर्वज्वरनिपातिनि एहि एहि मम पुत्रपौत्रपशुबांधव-दुहितृकलत्रपरिजनस्य भीतस्य रक्षां वज्रशरीरं कुरु कुरु कुशले स्थितं राजकुले स्थितंसुप्तस्थितं जाग्रत-स्थितं चतुष्पथे स्थितं बाह्यस्थितं रक्ष रक्ष सर्वशंकां विनाशय सर्वदुष्टान्भंजय भंजय । एकारक्षविद्धाक्षि त्रिकोणमुद्रांनिवारय बंध बंध आक्रामय उद्यानपीठ-प्रसादेन जालबंधपीठप्रसादेन चूर्ण गिरिपीठप्रसादेन एवं चतुष्पीठप्रसादेन देवि मम प्रसादं कुरु कुरु ऐका-हिकं द्व्याहिकं विषमज्वरं सन्निपातज्वरं सर्वज्वरं निर्णा-शय सर्वाबाधां निवारय सर्वविषं भक्ष भक्ष एहि एहि इन्द्रजालान्पश्चदण्डेन गरुडपक्षप्रपातेन महाकालरू-पेण सर्वापदान् विध्वंसय निर्भयं कुरु कुरु रक्ष रक्ष मंत्रसिद्धिं ददातु॥ओं ह्रां ह्रीं क्रूं फट् ।

एकादिमंगलाविद्या विषहादृष्टप्रत्यया ।
अनयामंत्रितंतोयंदत्तंसर्वविषापहम् ॥

अर्थ—पतिजियाके फलकी मींगको शीतल जलमें पीसकर भोजन, अंजन, पान और प्रलेपमें प्रयोग करनेसे स्थावर, जंगम,क्रूर, कृत्रिम और योगजादि सर्व प्रकारके विष दूर होतेहैं। सर्पाक्षी और देवदालीको पत्र और मूल सहित लाकर अथवा सफेद अपराजिताकी जड़ मनुष्यके मूत्रमें पीसकर पानादिमें देनेसे सर्व प्रकारके विष दूर होजातेहैं। सांपके काटे हुए मनुष्यकी बहुत शीघ्र मंत्रोंके द्वारा चिकित्सा करे। "नधोना" इस मंत्रके द्वारा स्तम्भन करे। "यँक्षौ" इस मंत्रसे विषको बाँध देवे। वाँ धों वाँ इस मंत्रसे एक आककी डालीको पढ़कर विषसे पीडित मनुष्यके सर्व अंगोंमें फेरे। "हाँदक्षीहीं" इस मंत्रको पढकर विषातुर मनुष्यके शरीरको पूर्वोक्त आकके दंडेसे मार्ज्जन करे,

इससे विषस्तम्भन होताहै। यह गरुडमंत्रहै। "ओं नमो भगवति क्रूं फट्" इस मंगल विद्यामंत्रसे जलको पढकर विषातुर मनुष्यको पीनेके लिये देवे, इससे सर्व प्रकारके विष दूर होते हैं ॥ २९-३२ ॥

अथ मृत्युपाशापहंघृतम् ।

अभयारोचनाकुष्ठमर्कपुष्पीतथोत्पलम् ।
नलवेतसमूलानिसरलंसुरसांवचाम् ॥ ३३ ॥
सपालिन्ध्रींसमंजिष्ठामनन्तासशतावरीम् ।
शृंगाटकंसमंगाचपद्मकेशरमित्यपि ॥ ३४ ॥
कल्कीकृत्यपचेत्सर्पिःपयोदत्त्वाचतुर्गुणम् ।
सम्यक्पक्वेऽवतीर्णेचशृतशीतेविनिक्षिपेत् ॥ ३५ ॥
सर्पिस्तुल्यंभिषक्क्षौद्रंकृतबंधंनिधापयेत् ।
नाशयत्यंजनाभ्यंगपानवस्तिषुभोजने ॥
सर्पकीटाखुलूताभिर्दष्टानांविषनुत्परम् ॥ ३६ ॥

अर्थ–गायका घी २ दोसेर, गायका दूध ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये हरड, गोरोचन, कूठ, अर्कपुष्पी, उत्पल, नलकीजड, वेतकी जड, सरल तुलसी, बच, कागियावासाऊ, मजीठ, अनन्तमूल, शतावर, सिंघाडे, वराहक्रान्ता और कमलकेशर ऽ॥ आधसेर ले यथाविधिसे घृतको पकावे। जब पककर शीतल होजाय, तब २ दोसेर सहतमिलादेवे । इसघृतको अंजन, अभ्यंग, पान, वस्ति और भोजनमें व्यवहार करनेसे साँप, वीछू, मूसा और लूतादिका विष दूरहोताहै ॥ ३३-३६ ॥

अथ तण्डलीयकघृतम् ।

तण्डुलीयकमूलेनगृहधूमेनचैकतः ।
क्षीरेणसघृतंसिद्धंसमस्तविषरोगनुत् ॥ ३७ ॥

अर्थ–गायका घी २ दोसेर, दूध ८ आठसेर और चौलाईकी जड तथा घरका धुआँ ऽ॥ आधसेर ले, यथाविधिसे घृतको पकाकर पान करनेसे सर्व प्रकारके विषविकार दूरहोतेहैं ॥ ३७ ॥

अथ विषवज्रपातरसः ।

निशाचटंकश्चसजातिकोषंतुत्थंसमांशंकुरुदेवदाल्याः ।
रसेनपिष्टोविषवज्रपातोरसोभवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ ३८ ॥

अर्थ–हलदी, सुहागा, जायफल और तूतिया इनको समानभाग लेकर देवदालीके रसमें खरल करे । यह विषवज्रपात रस सर्व प्रकारके विषविकारोंको हरैहै ॥ ३८ ॥

अथ भीमरुद्रोरसः ।

शिरीषपुष्पकुष्ठैलाशिलासव्योषरेणुका ।
यष्ट्यर्कहिंगुश्वेताग्रासिंधुवारकफञ्जिका ॥ ३९ ॥
सूतराजस्यतोलैकंगंधकस्यतथैवच ।
अभ्रात्कर्षततोदेयंतोलैकंकान्तलौहतः ॥ ४० ॥
परोक्तेनौषधेनैवभावयेच्चपृथक्पृथक् ।
विशालाबृहतीब्रह्मीसौगन्धिकसदाडिमैः ॥ ४१ ॥
मर्कटयाश्वात्मगुप्तायाःस्वरसेनपृथक्कृतः ।
एकरक्तिप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ४२ ॥
एकावटींभक्षयित्वापिबेच्छीतजलंततः ।
कुक्कुरस्यशृगालस्यविषंहन्तिसुदुर्जयम् ॥ ४३ ॥

अर्थ–शिरसके फूल, कूठ, इलायची, मैनशिल, सोंठ, पीपल, मिरच, रेणुका, मुलैठी, हींग, आककीजड, सफेदवच, सम्हालू और भारंगीकाचूर्ण, प्रत्येक १ एकतोला, लोहा, पारा, गंधक और अभ्रक प्रत्येक १ एकतोला, इन सब औषधियोंको एकत्र करके इन्द्रायण, बृहती, ब्राह्मी, सफेदकुमोदिनी, अनार, चिरचिटा और कौंछ, प्रत्येकके स्वरसमें एक एक बार भावना देकर एक एक-रत्तीकी गोली बनालेवे । प्रतिदिन एक गोली खाय और ऊपरसे शीतल जल पीवे । यह कुत्ते और गीदडके विषको हरैहै ॥ ३९–४३ ॥

अथ शृगालादिदष्टचिकित्सा ।

नृणांमूत्रेणसंपिष्टोगोपित्तमधुसंयुतः ।
शृगालैरथमार्जारैर्मण्डूकैरथवाहिभिः ॥ ४४ ॥

कालेनापिहिदष्टस्यमृतसंजीवनोह्ययम् ।
गदितोमुनिभिःसर्वैःसूर्योदयमहागदः ॥ ४५ ॥
लशुनोषणवैदेहीवरागोघृतकल्कितम् ।
पाननस्यांजनालेपैःश्वदष्टस्यौषधंपरम् ॥ ४६ ॥
धूस्तूरकरसोविश्वक्षीराज्यगुडपानतः ।
शुनोविषंविनश्येतशशांककृतशेखरः ॥ ४७ ॥

अर्थ—गोरोचनको मनुष्यके मूत्रमें पीस सहत मिलाके सेवन करनेसे गीदड, बिलाव, मेढक और सर्पादिका विष दूर होताहै। लहशुन, कालीमिरच, पीपल, और त्रिफला इन औषधियोंको कल्कके साथ गायके घीको पकाकर पान, प्रलेप, नस्य और अंजनरूपसे प्रयोगकरनेसे कुत्तेका विष दूरहोताहै। धतूरेका रस, सोंठ, दूध, घी और गुड इन सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे कुत्तेका विष दूर होताहै ॥ ४४—४७ ॥

अथ श्वदष्टचिकित्सा ।

कनकोदुम्बरफलमिवतण्डुलजलपीतमपहरति ।
कनकदलद्रवघृतगुडघृतदुग्धपलैकांशुनांगरलम् ॥४८॥

अर्थ—कनकधतूरा और गूलरका फल, दोनोंको चावलोंके जलमें पीसकर, या कनकधतूरेके पत्तोंकारस घृत, गुड और दूध सबको मिलाकर सेवन करनेसे कुत्तेकाविष दूर होताहै ॥ ४८ ॥

इति विषाधिकारःसमाप्तः ।

अथ रसायनाधिकारः ।

तत्रादौरसायनलक्षणंतत्सेवनविधिश्च ।

यज्जराव्याधिविध्वंसभेषजंतद्रसायनम् ।
पूर्वेवयसिमध्येवाशुद्धकायस्समाचरेत् ॥ १ ॥
नाविशुद्धशरीरस्ययुक्तोरसायनोविधिः ।
नभातिवाससिक्लिष्टेरंगयोगइवार्पितः ॥ २ ॥

अर्थ—जिसके द्वारा जरा और व्याधि नष्ट होयँ, उस औषधिको रसायन कहतेहैं। यह रसायन प्रथम अवस्थामें अथवा मध्यम अवस्थामें विरेचनादिसे

शुद्ध होकर सेवन करे । जैसे काले वस्त्रको रँगनेसे रंग नहीं चढ़ता अर्थात् सुन्दरता नहीं आती, इसीप्रकार अविशुद्ध कोष्ठवाले मनुष्यको रसायनविधि कुछ भी फलदायक नहीं होती ॥ १ ॥ २ ॥

अथ मधुहरीतकी ।

सिन्धूत्थशर्कराशुण्ठीकणामधुगुडैःक्रमात् ।
वर्षादिष्वभयासेव्यारसायनगुणैषिणा ॥ ३ ॥
दुर्नामश्वासकासज्वरवमथुतृषापाण्डुतानेत्ररोगान् ।
हिक्काकुष्ठातिसारभ्रममदसहशाऽजीर्णशूलप्रदोषान् ॥
तृष्णाशूलास्रपित्तंज्वरविगतजरारोचकानाहवातान् ।
हन्यादेतानवश्यंमधुनिपरिगतापूतनाचाम्लपित्तम् ॥४॥

अर्थ–वर्षाऋतुमें हरड़का चूर्ण सैंधेनोनकेसाथ, शरद्ऋतुमें मिश्रीके साथ, हेमन्तऋतुमें सोंठके चूर्णकेसाथ, शीतऋतुमें पीपलके चूर्णकेसाथ, वसन्तऋतुमें सहतकेसाथ और ग्रीष्मऋतुमें गुड़केसाथ, सेवन करे, यह उत्तम रसायन है । हरड़को कुछ कूटकर बहुत दिनोंतक सहतमें रखकर सेवन करे तो बवासीर, श्वास, खाँसी, ज्वर, वमन, तृषा, पाण्डुता, नेत्ररोग, हिचकी, कुष्ठ, अतीसार, भ्रम, मद, अजीर्ण, शूल, तृषा, रक्तपित्त, ज्वर, जरा, अरुचि, आनाह, वातरोग और अम्लपित्त यह सब अवश्य नष्ट होतेहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथायुषादिवृद्धियोगाः ।

हस्तिकर्णरजःखादेत्प्रातरुत्थायसर्पिषा ।
यथेष्टाहारचारोऽपिसहस्रायुर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ५ ॥
गुडूच्यपामार्गविडंगशंखिनीवचाभयाशुण्ठिशतावरीसमा ६
घृतेनमासंस्वरसंपिबन्तिदिनेदिनेश्रृंगरजःसमुत्थम् ।
क्षीराशिनस्तेबलवर्णयुक्ताःसमाशतंजीवितमाप्नुवन्ति ॥७॥
पीताश्वगंधापयसार्द्धमासंघृतेनतैलेनसुखाम्बुनावा ।
कृशस्यपुष्टिंवपुषोऽभिधत्तेबालस्यसस्यस्ययथाम्बुवृष्टिः ८॥

अर्थ–हस्तिकर्ण (पलाश) के बीजोंके चूर्णको घृतमें मिलाकर प्रातःकाल उठकर प्रतिदिन सेवन करे तो अत्यन्त आयुकी वृद्धि होतीहै । गिलोय, चिरचिटा, बायविडंग, शंखाहूली, बच, हरड, सोंठ और शतावरका चूर्ण घृतमें

मलाकर सेवन करनेसे सहस्र १००० श्लोकोंको धारण करनेवाली बुद्धि होजातीहै। भांगरेका स्वरस एक महीनेतक सेवन करे और दुग्धान्न भोजन करे तो बलकी वृद्धि हो, वर्ण सुन्दर होजाय और सौ १०० वर्षतक जीता है। असगंधका चूर्ण दूध, घी, तेल या गरम जलके साथ १५ पंद्रह दिनतक सेवन करे तो दुर्बल मनुष्य पुष्ट होजाताहै ॥ ५-८ ॥

अथ केशकृष्णीकरणादियोगाः ।

धात्रीतिलान्भृंगरजोविमिश्रान्येभक्षयेयुर्मनुजाःक्रमेण ।
तेकृष्णकेशाविमलेन्द्रियाश्चनिर्व्याधयोव्योमचराभवेयुः ९॥
वृद्धदारस्यमूलानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
शतावर्यारसेनैवसप्तवारांस्तुभावयेत् ॥ १० ॥
अक्षमात्रन्तुतच्चूर्णंसर्पिषासहयोजयेत् ।
उपयुञ्जीतदुग्धेनवलीपलितनाशनम् ॥ ११ ॥

अर्थ—आमला, तिल और भांगरा, इन तीनोंको एकत्र पीस चूर्ण कर सेवन करे तो बाल काले, इन्द्रिय विमल और शरीर नीरोग होताहै। विधारेके चूर्णको शतावरके रसमें सात बार भावना देकर, घृतके साथ १ एक महीनेतक सेवन करे तो मेधा और स्मरणशक्तिकी वृद्धि होवे, तथा वली पलित रोगका नाश होवे परंतु इस औषधिके ऊपरसे दूध अवश्य पीवे ॥ ९-११ ॥

अथामृतभल्लातकी ।

भल्लातकानांपवनोद्धृतानांवृन्ताच्च्युतानांचयदाढकंस्यात् ।
तच्चेष्टकाचूर्णकणैर्विघृष्यप्रक्षालयित्वाविसृजेत्प्रवाते ॥१२॥
शुष्कंपुनस्तद्द्विदलीकृतञ्चततःपचेदप्सुचतुर्गुणासु ।
तत्पादशेषंपरिपूतशीतंक्षीरेणतुल्येनपुनःपचेत्तम् ॥ १३ ॥
तत्पादशेषंपुनरेवशीतंघृतेनतुल्येनपुनःपचेत्तम् ।
तदर्द्धयाशर्करयाविमिश्रंततःखजेनोन्मथितंविधाय ॥१४॥
तत्सप्तरात्रादुपजातवीर्य्यंसुधामृतादप्यधिकत्वमेति ।
प्रातर्विशुद्धःकृतदेवकार्योमात्राञ्चखादेत्सुशरीरयोग्याम् १५

अर्थ—पवनसे टूटे हुए, वृन्त रहित ऐसे भिलावे ८ आठ सेर लेकर ईंटोंके चूर्णसे घिसकर धोलेवे, पश्चात् धूपमें सुखाकर उनके दो दो टुकडे करलेवे फिर चौगुने जलमें पकावे, जब चौथा भाग जल शेष रहे तब उतारकर छानलेवे, पश्चात् ८ आठ सेर दूध मिलाकर पकावे, जब चौथाई भाग शेष रहे तब उतारलेवे, फिर २ दो सेर घृत मिलाकर पकावे, जब गाढा होजाय तब १ एक सेर शर्करा मिलाके मथकर ७ सात दिनतक रक्खा रहने देवे, इससे पूर्ण वीर्य्यवान् अमृतके समान होजाताहै । इसको प्रातःकाल देवादिको पूजकर निज शक्तिके अनुसार खावे, इससे नानाप्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ १२–१५ ॥

अथ क्रव्यादरसः ।

द्विपलंगंधकंशुद्धंद्रावयित्वाविनिक्षिपेत् ।
पारदंपलमानेनमृतशुल्वायसीपुनः ॥
तेनमानेनसंमिश्र्यपंचांगुलदलेक्षिपेत् ॥ १६ ॥
ततोविचूर्ण्ययत्नेननिक्षिप्यायसपात्रके ।
चुल्ल्यांनिवेश्ययत्नेनज्वालयेन्मृदुनानलम् ।
पात्रमात्रंरसंसम्यक्जम्बीरस्यप्रयोजयेत् ॥ १७ ॥
संचूर्ण्यपंचकोलोत्थैःकषायःसाम्लवेतसः ।
भावनाःखलुदातव्याःपंचाशत्प्रमितास्तथा ॥ १८ ॥
भृष्टटंकणचूर्णेनतुल्येनसहमेलयेत् ।
तदर्द्धंकृष्णलवणंसर्वतुल्यंमरीचकम् ॥ १९ ॥
सप्तधाभावयेत्पश्चाच्चणकक्षारवारिणा ।
ततःसंशोष्यकुप्यास्तुजठरेचविनिक्षिपेत् ॥ २० ॥

अर्थ—तपायाहुआ शुद्ध गंधक ८ आठ तोले, मृतपारा ४ चार तोले, मृततांबा ४ चार तोले और शुद्ध लोहा ४ तोले, सबको एकत्रकर अरंडके पत्तेपै डालदेवे, शीतल होनेपर चूर्ण करके लोहेके पात्रमें स्थापन करे, पश्चात् जम्भीरी नीबूका रस मिलाके चूल्हेपै चढाके मंद मंद अग्निसे पकावे, फिर चूर्ण करके अम्लबेत और पंचकोलके क्वाथमें ५० बार भावनादेवे, फिर बराबर

भुनाहुआ सुहागा और उसका आधा काला नोन, तथा सबकी बराबर काली-मिरचोंका चूर्ण मिलाकर चनेके खारके जलकी ७ भावना देवे, पश्चात् सुखाकर काँचकी कुप्पीमें भरके रख देवे ॥ १९–२० ॥

अथाभ्रकादिरसः ।

अभ्रकंमारितंयेनपारदश्चवशीकृतम् ।
द्वारमुद्घट्टितंतेनयमस्यधनदस्यच ॥ २१ ॥
अभ्रचूर्णंपलशतंगृहीत्वालोहभाजने ।
पुनर्नवारसेनैवभाव्यमेकत्रचैकधा ॥ २२ ॥
त्रिफलायारसैःपंचनिम्बस्यद्वादशैवतु ।
अथनिश्चन्द्रिकायावत्तावद्देयःपुटःक्रमात् ॥ २३ ॥
नियोज्यगंधकंचैवपादांशेनतथारसम् ।
विधिनाजारितंलोहंरसतुल्यंप्रदापयेत् ॥ २४ ॥
रसेन्द्रमातृकातोयैर्भाव्यंतस्माच्चमर्दयेत् ।
घृतेनमधुनाचापिपश्चादेतच्चभक्षयेत् ॥ २५ ॥
रोगीवात्रिफलापानेरोगीवाक्षीरपानतः ।
वातहापित्तहाचैवकफहाकान्तिवर्द्धनः ॥ २६ ॥

अर्थ–जिसने अभ्रकको मारलिया और पारेको वशमें करलिया, उस मनुष्यने यमराज और कुबेरका द्वार उखाडदिया । सौ १०० पल अभ्रकका चूर्ण लोहेके पात्रमें रखकर पुनर्नवेके रसकी एकभावना देवे, फिर त्रिफलेके रसकी ५ पाँच भावनादेवे और नीमके रसकी १२ बारह भावना देवे, पश्चात् जबतक निश्चन्द्र न होवे तबतक पुट देवे, फिर चौथाई भाग गंधक, चौथाई भाग पारा, विधिपूर्वक जारित किया लोहा चौथाई भाग मिलाकरके रसेन्द्रमातृकारसमें भावना देवे, पश्चात् घृत और सहतके साथ इसको भक्षण करे, ऊपरसे त्रिफलेका क्काथ या दुग्ध पान करे । यह औषधि सर्वप्रकारके वातरोग, सर्वप्रकारके पित्तरोग और सर्व प्रकारके कफरोगोंको दूर करैहै तथा कान्तिजनक है ॥ २१–२६ ॥

अथ भक्तपावकगुटिका ।

माक्षिकंरसगंधौचहरितालंमनःशिला ।
गगनंकान्तलोहंचसर्वमेषांसमांशकम् ॥ २७ ॥
त्रिवृद्दन्तीवारिवाहंचित्रकंचमहौषधम् ।
पिप्पलीमरिचंपथ्यायमानीकृष्णजीरकम् ॥ २८ ॥
रामठंकटुकापालिसैन्धवंसाजमोदकम् ।
जातीफलंयवक्षारंसमभागंविचूर्णयेत् ॥ २९ ॥
आर्द्रकस्यरसेनैवनिर्गुण्डयाःस्वरसेनच ।
सूर्यावर्त्तरसेनैवज्योतिष्मत्यारसेनतु ॥ ३० ॥
आतपेभावयेद्वैद्यःखल्लपात्रेचनिर्म्मले ।
पेषयित्वावटींकुर्याद्गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥
भक्षयेच्छाणमानेनलवंगस्यचयोगतः ॥ ३१ ॥

अर्थ—पारा,हीरा,सोना,चाँदी, ताँबा, तीक्ष्णलोहा,अभ्रक,मोती,गंधक,शंख, मूँगा, हरिताल और मैनशिल,यह सब शुद्ध किये हुए ले चूर्णकर लाल चीतेकी जडके क्वाथमें और आकके दूधमें ३ तीनदिन भावना देवे फिर सम्हालूके पत्तोंके रसमें जमीकन्दके रसमें और थूहरके दूधमें ३ तीन दिन भावना देवे,पश्चात् इस औषधिको पीली कौडीमें भरलेवे और सुहागेको आकके दूधमें पीसकर कौडीके मुखको बंद करदेवे, फिर उस कौडीको भांडेमें रख तिसके मुखको बंद करके पकावे, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले, पश्चात् इसचूर्णमें बराबर पारेकी-भस्म और पारेसे चौथाईभाग वैक्रान्तकी भस्म मिलादेवे, इसको सैंजिनेकी जडके रसमें सातबार भावना देवे और लालचीतेकी जडके रसमें २ दोबार भावना देवे,यह त्रैलोक्यचिंतामणिरस—सर्वरोग नाशक है ॥ २७–३१ ॥

अथ पञ्चामृतोरसः ।

अथातःसंप्रवक्ष्यामि [illegible]मदुर्लभम् ।
पंचामृतमिदंख्यातंसर्वरोगहरंपरम् ॥ ३२ ॥
शास्त्रेसौख्यप्रदंनृणांभुविरोगनिवारणम् ॥
पथ्यापथ्यविनिर्युक्तंविष्णुनापरिकीर्त्तितम् ॥ ३३ ॥

सूतकान्तरविव्योमशुद्धानांभस्मकंशुभम् ॥
मारितंमाक्षिकंचैवप्रत्येकंचपलंपलम् ॥ ३४ ॥
गंधंपंचपलंदत्त्वाश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥
आर्द्रकस्यरसंदत्त्वात्रिदिनंमर्दयेत्ततः ॥ ३५ ॥
क्काथेचदशमूलस्यवह्निमूलरसेनवा ॥
युक्त्यातुक्कथितेनापिमर्दयेच्चदिनत्रयम् ॥ ३६ ॥
शोषयित्वाततोघर्मेचूर्णयेत्तदनन्तरम् ॥
त्रिवर्गंत्रित्रयाम्भोदतिन्दुतुम्बुरुवेणुकम् ॥ ३७ ॥
भार्ङ्गीभूनिम्बतिक्ताचजातीफलकशेरुकम् ॥
पलार्द्धमानेसर्वाणिप्रत्येकैकंभवन्तिहि ॥ ३८ ॥
निधायश्लक्ष्णचूर्णानिरसेनसहमेलयेत् ॥
काकमाच्याश्चनिर्गुंड्यावर्षाभूमुंडिकातथा ॥ ३९ ॥
कषायेणार्द्रकाम्भोभिर्भावनाःपीरकल्पयेत् ॥
कषायेणगुडूच्याश्चशिग्रुमूलरसेनवा ॥ ४० ॥

अर्थ-अब इसके आगे परम दुर्वल पंचामृत रसको कहतेहैं, यह सर्वरोग नाशक है, सर्वसुखदायकहै और संसारके रोगोंको दूरकरैहै, इससे पथ्यापथ्य विधिप्रयोग करनी चाहिये, यह विष्णुभगवान् ने कहाहै । पारा, कान्तलोहा, ताँबा, अभ्रक और सोनामाखी प्रत्येककी भस्म चारचार तोले और शुद्ध-गंधक बीस बीस तोले लेकर, सबको एकत्र पीसके बारीक चूर्ण करलेवे इस चूर्णको अदरखके रसमें तीनदिन खरलकरे, फिर दशमूलके क्काथमें अथवा लाल चीतेके रसमें ३ दिन खरलकर धूपमें सुखालेवे, पश्चात् हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, चीता, नागरमोथा, तेंदू, तुम्बुरु, रेणुका, भारंगी, चिरायता, कुटकी, जायफल और कशेरू प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले मिलादेवे, पश्चात् इसको मकोय, सम्हालू, पुनर्नवा और गोरखमु-ण्डीके रसमें, दशमूलके क्काथमें, धनियेंके क्काथमें, सोंठके क्काथमें, अदरखके रसमें, गिलोयके क्काथमें, संजिनेकी जडके रसमें, तथा फिर अदरखके रस में एक एक बार भावनादेकर झरबेरकी समान गोली बनालेवे, प्रतिदिन

एक गोली बीस २० कालीमिरचोंके साथ खावे । और इसपै तक्रके साथ भोजन करे ॥ ३२–४० ॥

अथ शुद्धपंचामृतरसः ।

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्कृष्णाभ्रसूतैःक्रमात्
गंधानांखलुभागवृद्धिरपितत्कृत्वाशुभांकज्जलीम् ।
निर्गुण्डीदशमूलवह्निरजनीव्योषार्द्रकैर्भाविते-
र्गोलीकृत्यविशोष्यतन्निगदितःपंचामृतःस्याद्रसः ४१॥

अर्थ–सोनेकी भस्म, चांदीकी भस्म, ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, पारेकी भस्म और शुद्ध गंधक, यह सब क्रमसे एकसे एक अधिक लेकर कज्जली बनावे, पश्चात् इस कज्जलीको सम्हालू, दशमूल, चीता, हलदी, त्रिकुटा और अदरखके रसकी भावना देकर गोली बना धूपमें सुखा लेवे, यहरस सर्व प्रकारके रोगोंको हरैहै ॥ ४१ ॥

अथ धातुबद्धोरसः ।

गंधकेनशिलावापिसीसकोमाक्षिकेणवा ।
अभ्रोलौह- [illegible] द्वत्समभागेनपारदः ॥ ४२ ॥
सुभृष्टटंकणेनापिरसपादेनसंयुतः ।
रसेनपारिजातस्यकारवेल्यारसेनवा ॥ ४३ ॥
द्रवन्त्यातण्डुलीयेनह्येकाहंमर्दयेद्रसम् ।
अर्धसंचूर्ण्यमण्डूरंदिनान्तंपरिमर्दयेत् ॥ ४४ ॥
तज्जलंभाजनेक्षिप्त्वासूर्यतापेनिधापयेत् ।
जलादुत्सृज्यमृत्स्नाश्चपथ्ययासहमर्दयेत् ॥ ४५ ॥
पूर्वसूतस्यतंकल्कंप्रलिम्पेन्मृत्स्नयातथा ।
अंगुलोत्सेधमानेनततःसंवेष्ट्य [illegible] न्मयेः ॥ ४६ ॥
विशोष्यतंधमेद्द्र [illegible] कैकघटिकावधि ।
तस्मा [illegible] द्धृत्यतंभित्त्वाशीतलाङ्गेन [illegible] षकाम् ॥ ४७ ॥

अर्थ-गंधक, मैनशिल, सीसा, सोनामाखी, अभ्रक और लोहा, प्रत्येक एक एक भाग, पारा छे भाग भुना हुवा सुहागा १॥ डेढभाग, इन सबको एकत्र पीस पारिजातके रसमें करेलेके रसमें मूषाकर्णीके रसमें और चौलाईके रसमें एक एक बार खरल करे। पश्चात् पारिजात (फरहद) करेला, मूषाकर्णी और चौलाईके रसमें एक दिन मण्डूरको खरल करे, फिर मंडूरको सोरठकी मट्टीमें मिलाकर मूषा बना लेवे, पश्चात् पूर्वोक्त गंधकादि खरल कीहुई औषधि इस मूषामें स्थापनकर एक अंगुल ऊँचा मृत्तिकाका लेपकर मृदु अग्निसे पकावे, स्वयं शीतल होजाय तो चूर्ण करले । इसको त्रिकुटा और चीतादिके चूर्णके साथ खावे ॥ ४२–४७ ॥

अथ सुरसुन्दरी गुटिका ।

अभ्रकंमाक्षिकंवज्रंकान्तंहेमसमंसमम् ।
सर्वाणिसमभागानिसूतयुक्तानिकारयेत् ॥ ४८ ॥
गोलकंचततःकृत्वापक्कंनिचुलवारिणा ।
ततस्तंपुटपाकेनस्तम्भयित्वा प्रयत्नतः ॥ ४९ ॥

अर्थ-अभ्रक, सोनामाखी, हीरा, कान्तलोहा और सोना, सब समान भाग लेकर समान भाग पारेके साथ समुद्रफलके फलमें खरलकर गोला बनालेवे, पश्चात् इस गोलेको मूषामें रख मूषाको मृत्तिकासे लेपकर मृदु अग्निसे पकावे, यह औषधि सर्व प्रकारके विषरोगोंको दूर करै है ॥ ४८॥४९ ॥

अथ सर्वतोभद्ररसः ।

सूतंकान्तंह्युपलगगनंताप्यकंशुद्धतालं
राजावर्त्तंसुरभिमधुकंमानसीचेतितुल्यम् ।
सर्वैस्तुल्यंदृषदिदलितंभृंगतोयेनसर्वं
गोलीभूतंभवतिविमलःसर्वभद्राभिधानः ॥ ५० ॥

अर्थ-पारा, कान्तलोहा, पत्थर, अभ्रक, सोनामाखी, हरिताल, राजावर्त्त, गूगुल, मुलेठी और दुर्गपुष्पी, यह सब समानभाग लेकर सबकी समान भांगरेके रसमें खरलकर गोली बनालेवे । यह औषधि गुल्मादि रोगोंको दूर करै है ॥ ५० ॥

अथ मृतसंजीवनीगुटिका ।

पारदंसारलोहश्चकान्तलोहसमन्वितम् ।
माक्षिकस्यापिसत्त्वञ्चसत्त्वंगगनसंभवम् ॥ ५१ ॥
एतानिसमभागानिमर्दयेच्च प्रयत्नतः ।
निचुलफलतोयेनगोलकंकारयेत्ततः ॥ ५२ ॥
नवांगुलप्रमाणेनमूषागर्भेऽथपिण्डिका ।
निर्गुण्डीकाकमाचीचगोजिह्वादुग्धिकातथा ॥ ५३ ॥
गृहकन्यांमधुकश्चसैन्धवंपिण्डिकान्ततः ।
स्वेदयेत्पुटयोगेनसापिण्डीदृढतांव्रजेत् ॥ ५४ ॥

अर्थ—पारा, सारलोह, कान्तलोह, सोनामाखीका सत्त्व और अभ्रकका सत्त्व, यह सब समान भाग लेकर जलबेतके रसमें खरलकर गोला बनालेवे, पश्चात् इस गोलेको नौ अंगुलकी मूषाके गर्भमें स्थापन करे, फिर सम्हालू मकोय, गोजिह्वा, दूधी, घीकुवार, मुलेठी और सैंधानोन यह सब एकत्र पीसकर पूर्वोक्त गोलेमें मिलादेवे, मंद अग्निसे पुटपाक करे, इस औषधिको मुखमें धारण करनेसे सर्व प्रकारके रोग दूर होते हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

अथोदयभास्कररसः ।

तोलैकंशुद्धसूतस्यगंधकंतच्चतुर्गुणम् ।
कृत्वाकज्जलिकामादौमर्दयेत्तदनंतरम् ॥ ५५ ॥
पक्वंनिचुलतोयेनयथाकल्कोपजायते ।
ततोद्वयस्यताम्रस्यकृत्वापात्रान्यतःपरम् ॥ ५६ ॥
कज्जल्याःसहपत्राणिपक्वंनिचुलवारिणा ।
प्लावयित्वातुबहुधास्थापयेदातपेखरे ॥ ५७ ॥
तत्क्षिप्त्वाचान्धमूषायांपुटपाकंसमाचरेत् ।
चुल्लिकामुद्धृतंमूषांकृत्वात्रीणिप्रदापयेत् ॥ ५८ ॥
पुटानिकुक्कुटाख्यानिसूतसंस्कारसिद्धये ।
सिद्धसूतंसमादायगुंजामानंप्रदापयेत् ॥ ५९ ॥

चित्रकार्द्रकसिन्धूत्थैर्नागवल्ल्यादलेनवा ।
उपचारन्तुनिर्दिष्टंयथाप्राणेश्वरेरसे ॥ ६० ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ एकतोला, शुद्धगंधक ४ चारतोले, दोनोकी कज्जलीकर खरलकरे, पश्चात् पक्के समुद्रफलोंके रसमें इसका कल्क बना ले, फिर दुगुना तांबा लेकर पत्र बना ले, उन पत्रोंको कज्जलीके साथ बहुतबार पक्के समुद्रफलोंके रसमें भिजोकर प्रचंड धूपमें धरदेवे, फिर अन्धमूषामें रख पुटपाक करे, पश्चात् चूल्हेसे उतारकर कुक्कुटाख्य तीन पुट देवे, प्रतिदिन १ एक रत्तीभर चीते, अदरख, सैंधानोन, या पानके साथ खावे । उपचार प्राणेश्वर रसकी समान है ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

अथ वारिसागररसः ।

शुद्धाभ्रकस्यगंधस्यरसस्यचततःपरम् ।
तालकंकल्पयित्वातुसुगंधस्यचसंख्यया ॥ ६१ ॥
निर्गुण्डीकाकमाचीचधुस्तूरार्द्रकशिग्रुभिः ।
गिरिकर्णीजयन्तीचभृंगंचतिलपर्णिका ॥ ६२ ॥
दण्डोत्पलीतथाजातीकन्दश्चकेशराजकम् ।
चित्रकश्चमहाराष्ट्रंतथान्यापिप्पलीजटा ॥ ६३ ॥
एतासामौषधीनाञ्चव्योमगंधंतथापरम् ।
रसैःप्रमर्दयेत्खल्वेक्रमेणानेनयत्नतः ॥ ६४ ॥
ततोनिरुन्धयेत्सम्यक्कृत्वासंपुटमध्यगम् ।
आरोप्यसंपुटंचुल्ल्यांकाष्ठाग्निंज्वालयेदधः ॥ ६५ ॥
याममात्रंततोध्मात्वास्वांगशीतलनागतम् ।
संपुटन्तंसमाकर्षेत्सिद्धसूतंप्रयत्नतः ॥ ६६ ॥
सिद्धसूतात्प्रदातव्याश्चित्रकेणसमन्विताः ।
तिस्रोगुंजाश्चतस्रोवासन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ६७ ॥
त्र्यूषणंजीरकेद्वेचयमानीवचयसह ।
आर्द्रकश्चतथापंचलवणानिप्रयोजयेत् ॥ ६८ ॥

क्षारत्रयंतथासर्वंसमभागंप्रकल्पयत् ।
तत्सर्वमेकतःकृत्वारसमेवविधिःपरम् ॥ ६९ ॥

अर्थ–अभ्रक, गंधक और पारा प्रत्येक १ एकएक तोला, लेकर सम्हालू, मकोय, धतूरा, अदरख, सैंजिना, कोयल, जयंती, भांगरा, तिलवन, सहदेवी, जातीकन्द, कुकुरभांगरा, चीता, जल पीपल और पीपरामूल, प्रत्येकके रसमें क्रमसे एक एक बार खरल करे, पश्चात् इसको सम्पुटमें रख, सम्पुटको चूल्हेपै स्थापनकर काठकी अग्निसे एक प्रहरतक पकावे, जब स्वांगशीतल होजाय तब सिद्ध पारेको निकाल लेवे, प्रतिदिन १ एकरत्ती खाय, पश्चात् लालचीता, त्रिकुटा, जीरा, अजवायन, वच, अदरख पंचलवण, जवाखार सज्जी और सुहागेकी खीलोंका चूर्ण सेवन करे, यह वारिसागररस नानाप्रकारके रोगोंको हरै है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

अथ श्वेतादिलौहम् ।

श्वेतापुनर्नवादन्तीवाजिगंधात्रिकत्रयम् ।
दशमूलीबलायुक्तैरेभिर्लौहःप्रसाधितः ॥ ७० ॥
निहन्तिनिहतंकार्श्यमपिभृंगाविटैरपि ।
नास्त्यनेनसमोलोहःसर्वरोगान्तकारकः ॥ ७१ ॥
त्रिफलात्रिमदत्रिकटुमिलितसमं लौहम् ।

अर्थ–सफेदकोयल, पुनर्नवा, दन्ती, असगंध, त्रिफला, त्रिकुटा, त्रिजातक, वायविडंग, चीता, नागरमोथा, दशमूल, खिरैटी, भांगरा और त्रिडनोन, यह सब एक भाग और सबकी बराबर लोहा लेवे । इस औषधिको यथानुपानके साथ सेवन करे तो–सर्व प्रकारके रोग दूर होवें ॥ ७० ॥ ७१ ॥

अथ कालनियमेनोदकपानादिवर्णनम् ।

कासश्वासातिसारज्वरपिटककटीकोठकुष्ठप्रकारान् ।
मूत्राघातोदरार्शःश्वयथुगलशिरःकर्णशूलाक्षिरोगान् ।
येचान्येवातपित्तक्षयजकफकृताव्याधयःसन्तिजन्तो-
स्तांस्तानभ्यासयोगादपनयतिपयःपीतमन्तेनिशायाः ७२

विगतघननिशीथेप्रातरुत्थायनित्यं
पिबतिखलुनरोयोनासरन्ध्रेणवारि ।
सभवतिमतिपूर्णश्चक्षुषाताक्ष्यंतुल्यो
वलिपलितविहीनःसर्वरोगैर्विमुक्तः ॥ ७३ ॥
प्रातःपानीयपानेमुनिभिरभिहितंद्रव्यमेतच्चनाद्यात्
मांसंक्षीरंचशाकंसकलविदलकंपिष्टकंचिङ्कटञ्च ।
बिल्वंवेत्राग्रनिम्बंबहुपवनकरंनित्यजातंविदाहि
उष्णान्नंतैलभृष्टंश्रमकुपितवपुःस्वेदनंलंघनंच ॥ ७४ ॥
त्यज्यादभ्यंगमुष्णंबहुपवनवरंतीव्रमादित्यतापं
अग्नेःसेवाविनीतासुरभिजलयुतंलंघनंशीघ्रयानम् ७५॥
भक्तंवारियुतंसुपथ्यविहितंतक्रंप्रशस्तंसदा
स्नानंचापिनिरंतरंचशुभदंनिद्राप्रशस्तादिवा ।
कुर्याद्यानिरसायनेचसततंतन्नारिकेलोदकं
युक्तंदग्धझषेणपानकरणेझोलश्चमत्स्यस्यच ॥ ७६ ॥

अथ—जो मनुष्य नित्य रात्रिके अंतमें विधिपूर्वक जलपान करतेहैं उनके खाँसी, श्वास, अतीसार, ज्वर, पिटक, कटिरोग, कोठरोग, कुष्ठरोग, मूत्राघात, उदररोग, बवासीर, सूजन, गलरोग, शिरोरोग, कर्णरोग, शूलरोग, नेत्ररोग, वात, पित्त, क्षय और कफसे, उत्पन्न हुए यह सबरोग नष्ट होजातेहैं । जो मनुष्य मेघरहित रात्रिके अंतमें अर्थात् सूर्योदयसे पहिले नित्य उठकर नासिकाके द्वारा जल पीतेहैं,—वह मतिपूर्ण, दृष्टिमें गरुडकीसमान, वलिपलितहीन और सर्वरोगोंसे छूट जातेहैं । नित्य प्रातःकाल जलपीनेवाले मनुष्य मांस, दूध, शाक, सर्वप्रकारके विदल अन्न, पिष्टक, चिगट, बेल, वेतका अग्रभाग, नीम, वातको करनेवाले पदार्थ, दाहजनक पदार्थ, उष्ण अन्न, तेलमें भुनेहुए पदार्थ, परिश्रम, स्वेद, लंघन, तीक्ष्णद्रव्य, अग्निसेवन, शीघ्रगमन आदि त्यागदेवें । और जल-युक्त भात, तक्र, स्नान, दिनमें सोना, नारियलका जल, भुनीमछली, और मछलियोंका झोल सदैव सेवन करे ॥ ७२—७६ ॥

अथ त्रिफलारसायनम् ।

त्रिफलायाःपलशतंचूर्णंभृङ्गरसाम्बुना ।
भावयेत्सप्तवारांस्तुछायाशुष्कन्तुकारयेत् ॥ ७७ ॥
पादंगंधकचूर्णस्यतदर्द्धंपारदंक्षिपेत् ।
लिह्यान्मधुघृताभ्यांचमात्रयाप्रत्यहंपुमान् ॥ ७८ ॥
जीर्णेभोज्येह्यनाहारेगुणानेतानवाप्नुयात् ॥
प्रसन्नदृष्टिरव्याधिर्जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥ ७९ ॥

अर्थ-१०० सौ पल त्रिफलेके चूर्णको भांगरेके रसमें ७ सातबार भावना देकर छायामें सुखादेवे, पश्चात् इसमें २५ पचीस पल गंधक और १२॥ साढे-बारहपल पारा मिलादेवे । इसको प्रतिदिन सहत घृतमें मिलाकर सेवन करे, भोजनके जीर्ण होनेमें अथवा भोजनसे पहिले खाय । यह दृष्टिको प्रसन्न करैहै, सम्पूर्ण रोगोंको हरैहै, और ३०० तीनसौ वर्षकी आयु करैहै ॥ ७७-७९ ॥

अथ सर्वतोभद्रलौहम् ।

विडंगसारोमेघाख्योरक्तवह्निररुष्करः ।
हस्तिकर्णःसितार्कश्चतथाश्वेतपुनर्नवा ॥ ८० ॥
वागुजीमुण्डिकाभृंगराजकोवृद्धदारकः ।
गुडूच्यतिबलारास्नातालमूलीशतावरी ॥ ८१ ॥
पिण्डारश्चोच्चटगजाःसमूलःकेशराजकः ।
पारदंचपृथक्कर्षंलौहस्यपलपंचकम् ॥ ८२ ॥
पलानिपंचचाभ्रस्यपलमेकन्तुगुग्गुलोः ।
द्विपलंगन्धकात्प्रोक्तंषट्कर्षाणिमनःशिला ॥ ८३ ॥
स्वर्णमाक्षिककर्षैकंपलंसार्द्धंशिलाजतोः ।
त्रिफलात्रिकटूनाञ्चप्रत्येकंकार्षिकद्वयम् ॥ ८४ ॥
सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्यघृतेनमधुनासह ।
घृतभाण्डेसमालोड्यभक्षयेत्क्रमयगतः ॥
संज्ञयासर्वतोभद्रंनिरत्ययमुदाहृतम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–बिडंगसार, [illegible], लालचीता, भिलावा, [illegible]स्तिकण (पलाश) सफेद आक, सफेद पुनर्नवा, बापची, गोरखमुण्डी, भांगरा, विधारा, गिलोय, कंघी, रास्ना, मुसली, शतावर, पिण्डार, निर्विषीतृण, नागकेशर, मूली, कुकुरभांगरा, और पारा, प्रत्येक एकएक कर्ष, लोहा ५ पाँचपल, अभ्रक १ एकपल, गूगल १ एकपल, गंधक २ दोपल, मैनशिल ६ छै कर्ष, सोनामाखी १ एककर्ष, शिलाजीत ६ तोले त्रिफला २ कर्ष और त्रिकुटा २ कर्ष सबको एकत्रपीस बारीक चूर्णकर घृत और सहतमें मिलाके घीके बासनमें भरके रखदेवे, इसको सेवनकरनेसे अम्लपित्तादि नानाप्रकारके रोग दूर होते हैं ॥ ८०–८५ ॥

अथ रसाभ्रगुटिका ।

सहदेवाबलाचैवसूर्यावर्त्तोऽथमारिपः ।
अपामार्गोऽमृताचेतिसम्यक्सम्पादयेद्भिषक् ॥ ८६ ॥
एषांपलानिचत्वारिप्रत्येकंकुट्टयेत्ततः ।
अतऊर्द्ध्वंचतदत्त्वामण्डूरंयत्पुरातनम् ॥ ८७ ॥
गोमूत्रेणपचेत्तावद्यावद्गोमूत्रशोषणम् ।
तस्मादुद्धृत्यतच्चूर्णकुर्यात[illegible]म् ॥ ८८ ॥
त्रिकटुत्रिफलामुस्तगुडूचीचित्रकंत्रिवृत् ।
दन्तीविडंगमे[illegible]कंकर्षमेकन्तुचूर्णयेत् ॥ ८९ ॥
एकपत्रीकृतस्याथवज्रकाभ्रस्ययत्पलम् ।
वार्य्यन्नाम्भस्त्रिरात्रस्थंवारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥ ९० ॥
आतपेशोषयेत्तीक्ष्णेदिनमेकंसुरक्षया ।
शूरणस्यरसैःपि[illegible]तत्रटंकणकस्यच ॥९१ ॥
दत्त्वाष्टौमासकांस्तत्रपुटपाकेनपाचयेत् ।
मृन्मयेसुदृढेपात्रेमृदुनागोमय[illegible]ना ॥ ९२ ॥
रसाद्वादशमासाश्चकर्षगन्धकतःपृथक् ।
रसेमण्डू[illegible]पर्ण्याश्चमूर्च्छितौकज्जलीकृतौ ॥ ९३ ॥

घृतस्यमधुनश्चापिपृ ग्कपलचतुष्टयम् ।
तत्सर्वमेकतःकृत्वास्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ॥ ९४ ॥
ततोऽष्टौमासकान्खादेद्दशवाद्वादशैवच ।
कर्षवापितथाकुर्याद्बुद्धादोषबलाबलम् ॥ ९५ ॥
दुग्धंचापिपिबेद्रोगीवह्नौमंदभवेततः ।
तप्तोदकानुपानंवासेवेच्चग्रहणीगदे ॥
अजाक्षीरानुपानश्चश्वासकासेप्रयोजयेत् ॥ ९६ ॥

अर्थ—सहदेई, खिरैंटी, हुलहुल मरसा, चिरचिटा और गिलोय, प्रत्येक चार चार पल ले कूटकर आधेको एक हाँडीमें रखदेवे, उसके ऊपर पुरानामण्डूर रस रखकर फिर ऊपरसे पूर्वोक्त आधा कुटाहुवा द्रव्य रखदेवे, फिर गोमूत्र डालकर पकावे, जब गोमूत्र जलकर सूख जाय तब निकालकर ४ चार पल चूर्ण करले फिर इस चूर्णमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, चीता, निसोथ, दन्ती और बायबिडंग,प्रत्येकका चूर्ण एक एक कर्ष मिलालेवे, पश्चात एकपत्री किया हुआ वज्राभ्रक १ एक पल लेकर जलकुम्भीके रसमें तीनदिन भिजोकर एक दिन धूपमें सुखावे, फिर जमीकन्दके रसमें पीस इसमें ८ आठमासे सुहागा मिला दृढ़ मट्टीके पात्रमें मंद मंद उपलोंकी अग्निसे पुटपाक करे पश्चात इसका चूर्णकर पूर्वोक्त चूर्णके साथ मण्डूकपर्णीके रसमें मूर्च्छित कीहुई कज्जली चार ४ तोले, घृत ४ चारपल, और सहत ४ चारपल लेकर सबको मिलाकर एक घीके बासनमें रखदेवे, इसको दोष और बलानुसार सेवन करे । अनुपान मंदाग्निरोगमें दूध, संग्रहणी रोगमें गरम जल, श्वास और खाँसीमें बकरीका दूध, यह अर्शादि रोगोंको दूर करेहै ॥ ८६–९६ ॥

अथ सर्वेश्वरोरसः ।

चित्रकंमाणकश्चैवशूरणंघण्टकर्णकम् ।
ग्रन्थिकंत्रिफलव्योषंद्रूफलंसपुनर्नवम् ॥ ९७ ॥
दण्डोत्पलंवृश्चिकालीरुदन्तीकाकमाचिका ।
सूर्यावर्त्तत्रिवृद्दन्तीक्रिमिघ्नंकुष्ठमुस्तकम् ॥ ९८ ॥
शतपुष्पावचाचव्यंपत्रंरास्नाचतोलकम् ।

माक्षिकाणाश्चताम्राणांपलंगंधकसूतयोः ॥ ९९ ॥
अभ्रकंद्विपलंग्राह्यंपात्रेकृत्वादृढोपमे ।
सर्वमेकत्रसंमर्द्यद्विगुणंमृतमायसम् ॥
चूर्णंसर्वेश्वरोनामसर्वामयनिबर्हणम् ॥ १०० ॥

अर्थ—चीता, मानकन्द, जमीकन्द, घण्टाकर्ण, पीपलामूल हरड़ बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, कायफल, पुनर्नवा,दण्डोत्पल, बिछारी, रुदन्ती, काकमाची, बायबिडंग, दन्तीकी जड, सूर्यावर्त्त, कूठ, नागरमोथा, निसोत, सोया, बच, चव्य, तेजपात और रास्ना, प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोले, सोनामाखी, ताँबा, पारा, और गंधक प्रत्येकका चूर्ण ४ चार चार तोले, अभ्रकका चूर्ण आठ ८ तोले, और दुगुना लोहेका चूर्ण, सबको एकत्र कर उत्तम दृढपात्रमें मर्दन करे। यह सर्वेश्वर नामवाला चूर्ण सर्व प्रकारके रोगोंको दूर करैहै ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

अथ लक्ष्मीविलासोरसः ।

पलंकृष्णाभ्रचूर्णस्यतदर्द्धेरसगंधके ।
कर्पूरस्यतदर्द्धन्तुजातीकोषफलेतथा ॥ १०१ ॥
वृद्धदारकबीजश्चबीजमुन्मत्तकस्यच ।
त्रैलोक्यविजयाबीजंविदारीकन्दमेवच ॥ १०२ ॥
नारायणीतथानागबलाचातिबलातथा ।
बीजंगोक्षुरकस्यापिऐज्जलंबीजमेवच ॥ १०३ ॥
एतेषांकार्षिकंचूर्णंगृहीत्वावारिणापुनः ।
निष्पिष्यवटिकाकार्यात्रिगुंजाफलमानतः ॥ १०४ ॥
निहन्तिसन्निपातोत्थान्गदान्घोरान्सुदारुणान् ।
वातोत्थान्पैत्तिकांश्चापिनास्त्यत्रनियमःक्वचित् १०५॥
अनुपानमिदंप्रोक्तंमांसंपिष्टंपयोदधि ।
वारितक्रसुधासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ॥ १०६ ॥

अर्थ—कृष्णाभ्रक चार ४ तोले, कज्जली ४ चारतोले, कपूर २ दोतोले जायफल, जावित्रीकाचूर्ण २ दोतोले, और विधारेकेबीज, धतूरेके बीज,

सप्तमेवाजिवेगःस्या· ष्टमेमंत्रसाधकः ।
सर्वज्ञोनवमेमासि -शमेपवनो ·मः ॥ ११९ ॥
स्त्रीजिदेकादशेमासेनाग्निनाद्वादशेदहेत् ॥
वलीपलितनिर्मुक्तोयुवकादधिकोभवेत् ॥ १२० ॥
एवंसंवत्सरंयावद्यःकरोतिपुमानिह ।
वत्सराणांसहस्राणिजीवेन्नास्त्यत्रसंशयः ॥ १२१ ॥

अर्थ–हरड़, बहेड़ा, आमला, गिलोय, नागरमोथा, विधारा और बच, प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ तोले, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपलामूल, सुगंधवाला, चीतेकीजड, दालचीनी, इलायची और नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले और सबसे दुगुना गुड़लेवे, सबको मिलाकर ३६० तीनसौ साठ लड्डू बनालेवे। वमन विरेचनादिसे शुद्ध होकर शुभसमय शुभदिनमें रोज रोज एक लड्डू खाय और ऊपरसे जल पीवे। इस औषधिपै इच्छानुसार भोजन पान करे। इसको सेवनकरनेसे पहिले महीनेमें सर्वप्रकारके रोग दूर होतेहैं। दूसरे महीनेमें पुष्टि बढ़तीहै। तीसरे महीनेमें सुवर्णकी समान शरीरकी कान्ति होतीहै। चौथे महीनेमें शुक्रकी अधिकता होतीहै। पाँचवें महीनेमें महाबुद्धिमान् होजाताहै। छठे महीनेमें हाथीकी समान बली होताहै। सातवें महीनेमें घोडेकी समान वेग होताहै। आठवें महीनेमें मंत्रसिद्धि होतीहै। नववें महीनेमें सर्वज्ञ होताहै। दशवेंमहीनेमें पवनकी समान गति होतीहै। ग्यारहवें महीनेमें मैथुनके द्वारा स्त्रीको जीतताहै। बारहवें महीनेमें अग्निकी समान तेजकी वृद्धि होतीहै। एकवर्षके पश्चात् वलीपलितादि रोगोंसे रहित होकर दीर्घायु होताहै ॥ ११२–१२१ ॥

अथ शर्करावलेहः ।

क्राथेमधुरवर्गस्यप्रस्थेप्रस्थेतथैवच ।
पंचमूल्यास्तृणाख्यायाःसिताप्रस्थंविपाचयेत् ॥१२२॥
दत्त्वार्द्धकुडवंसर्पिर्नारि·ेलजलस्यच ।
प्रस्थत्रयंविनिक्षिप्यदृढेपात्रेशनैश्शनैः ॥ १२३ ॥
सिद्धेऽवतारितेशीते·चूर्णमेषांविनिक्षिपेत् ।
मुस्तैलापत्रधन्याकजीरकाणांगुडत्वचः ॥ १२४ ॥

कारव्यावंशजायाश्चरोचनायास्तथैवच ।
शाणद्वयमिकृत्वाप्रत्येकंकेशरस्यच ॥ १२५ ॥
खादेदग्निबलापेक्षीपथ्यभुङ्मात्रयानरः ।
सनाशयेत्सर्वरोगाञ्शर्करालेहउत्तमः ॥ १२६ ॥

इति रसायनाधिकारः ।

अर्थ-मेदा, महामेदा, ऋद्धि, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती और मुलेठी, इस मधुवर्गका क्काथ २ दो सेर, तृणपंचमूलका क्काथ २ दो सेर, मिश्री २ दो सेर, घी ऽ॥ आधसेर, और नारियलका जल ६ छे सेर, सबको एकत्र पकावे, जब सिद्ध होजाय तब उतारले, शीतल होनेपर नागरमोथा, इलायची तेजपात, धनियाँ, जीरा, दालचीनी, सौंफ, वंशलोचन, गोरोचन, और नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ मासे मिलादेवे, इसको अग्निका बलाबल देखकर खावे । यह शर्करावलेह सर्वप्रकारके पित्त वातादि रोगोंको दूर करैहै । इसपै पथ्य भोजन करे ॥ १२२-१२६ ॥

इति रसायनाधिकारः समाप्तः ।

अथादौरसाजीर्णचिकित्सा ।

नाभिमूलेभवेच्छूलंनिद्रालस्यंज्वरोऽरुचिः ।
जाड्यंमलग्रहोदाहोरसाजीर्णेभवेन्नृणाम् ॥ १ ॥
रसाजीर्णमितिज्ञात्वाततःकुर्यात्प्रतिक्रियाम् ।
दिनत्रयंयत्नेनक्रियमाणेरसयने ॥ २ ॥
कर्कोटीकन्दसम्भूतंकषायंत्रिदिनंपिबेत् ।
रसाजीर्णेपिबेद्द्रापिगोजलंरुचकान्वितम् ॥ ३ ॥
विश्वसैन्धवसंयुक्तंमातुलुंगस्यमूलकम् ।
अंगिनानागकल्केनभुक्तोयदिभवेद्रसः ॥ ४ ॥
नागदोषविशुद्ध्यर्थंगोमूत्रेणसमान्वितः ।
पटुयुक्तंपिबेन्मूलंकारवेल्ल्याभवन्तथा ॥ ५ ॥
एषांनागभवोदोषोनाशमायातिनिश्चितम् ॥

वन्ध्याककोंटकं ष्पंगारुडीचततःपरम् ॥ ६ ॥
असामान्यतमंमूलंक्षिप्त्वागोजलमध्यतः ।
अत्यम्लकटुतिक्तैश्चसूतःस्रवतिसेवितैः ॥ ७ ॥
अत्यम्ललवणाहारैर्मन्दवीर्योभवेद्रसः ।
सततंवर्जयेदेकाहारञ्चरससेवकः ॥ ८ ॥
नश्यत्यग्निरनाहारात्सूतोनैवक्रमेत्तनौ ।
रोगशान्तिंतथाकर्त्तुंनैवशक्नोतिपारदः ॥ ९ ॥
विचित्रैर्भोजनैस्तस्माद्रसंसमुपबृंहयेत् ।
निषिद्धंवर्जयेत्सर्वंरससेवाविधौनरः ॥ १० ॥
रसस्रावकरंवर्ज्ज्यंभोजनेचातियत्नतः ।
अग्निमान्द्यकरंतद्वद्वर्ज्यञ्चापिप्रयत्नतः ॥ ११ ॥

अर्थ—नाभिशूल, निद्रा, आलस्य, ज्वर, अरुचि, जड़ता, मलबंध, दाह, यह लक्षण होयँ तो रसाजीर्ण जानना। रसाजीर्णके उत्पन्न होतेही तत्काल उसका प्रतीकार करना चाहिये। ककोडेके कन्दका क्वाथ तीन दिन पीनेसे अथवा कालेनोनके साथ गोमूत्रको पीनेसे रसाजीर्ण नष्ट होताहै। सोंठका चूर्ण, सैंधेनोनका चूर्ण और बिजौरेकी केशर, तीनोंको एकत्र सेवन करनेसे रसाजीर्ण रोग दूर होता है। मनुष्योंके नागदोष युक्त पारेको सेवन करनेसे रसाजीर्ण होय तो नागदोषको दूर करनेके लिये सैंधेनोनका चूर्ण और करेलेकी जडके चूर्णके साथ गोमूत्रको सेवन करें, इससे नागदोष दूर होताहै। वन्ध्याककोडेके फूल और छिलहिंडकी जड़, थोडेसे गोमूत्रमें पीसकर सेवन करनेसे नागदोष नष्ट होताहै। अत्यंत खट्टी, चरपरी और कडवी वस्तु खानेसे पारा झिरकर निकलजाताहै, तथा अत्यन्त खटाई और लवणके साथ आहार करनेसे पारा हीनवीर्य होजाताहै। रसको सेवन करनेवाला मनुष्य सदैव एक प्रकारका आहार त्याग देवे। और एकवार प्रथम आहार न करनेसे जठराग्नि नष्ट होती है पारा निजशक्तिको प्रकाशित नहीं करता और रोग नष्ट करनेकोभी समर्थ नहीं होता, इसकारण पारेके सेवन करनेवाला मनुष्य नानाप्रकारके आहारोंको सेवन करे। पारेको सेवन करनेवाला मनुष्य रसविधिमें संपूर्ण निषिद्धविषय सदैव

त्यागदे, तथा आहारके द्रव्योंमें रसस्रावक और मंदाग्निजनक पदार्थ समस्त त्यागने चाहियें ॥ १-११ ॥

अथ विधिपूर्वकपारदसेवनगुणाः ।

वलीपलितनिर्मुक्तोमृत्युहीनोभवेन्नरः ।
जायतेमन्मथाकारोनरोऽपिप्रमदारतः ॥ १२ ॥
रसायनेहिनिर्दिष्टंप्रायशोरससेवने ।
बुद्धिप्रजाबलंकान्तिप्रभावेणयथाबहिः ॥ १३ ॥
नौषधंपारदादन्यन्नदेवःकेशवात्परः ।
नवैद्यादपरोबन्धुर्नदानादपरोविधिः ॥ १४ ॥
आरोग्यंलघुतासौष्ठवंरुचिर्गुर्व्वन्नजीर्णता ।
रोगनाशश्चवृष्यश्चसततंरससेवनात् ॥ १५ ॥

इति रसोपद्रवशमनम् ।

अर्थ—विधिपूर्वक पारेको सेवन करनेसे वली (शरीरमें बलोंका पडना), पलित (बिना समयके बालोंका धवल होजाना) हीन, मृत्युके भयसे रहित और कामदेवके समान स्त्रियोंमें रमण करताहै । तथा बुद्धि, सन्तान, बल और कान्ति बढ़तीहै । जैसे संसारमें कृष्णकी समान दूसरा देवता नहीं है, वैद्यकी समान भाई नहीं हैं, दानकी समान अन्य विधि नहीं है, उसीप्रकार पारेकी समान अन्य औषधि नहीं है । सदैव पारेको सेवन करनेसे अरोगिता, शरीरमें लघुता, सुन्दरता, रुचि, गुरुपाकी अन्नोंका जीर्ण होना, रोगोंका नाश और वीर्यकी वृद्धि होतीहै ॥ १२-१५ ॥

इति रसोपद्रवचिकित्सा समाप्ता ।

अथ वाजीकरणाधिकारः ।

तत्रादौवातादिदूषितशुक्रलक्षणम् ।

वातादिकुणपंग्रन्थिक्षीणपूयमलाह्वयम् ।
प्रजासमत्वेरेतोस्रंस्वलिंगैर्दोषजंवदेत् ॥ १ ॥
रक्तेनकुणपंश्लेष्मवाताभ्यांग्रन्थिसंभवम् ।
पूयाभंरक्तपित्ताभ्यांक्षीणंमारुतपित्ततः ॥ २ ॥

कृच्छ्राण्येतानिसाध्यानित्रिदोषंमूत्रविड्निभम् ।
तेस्वान्याञ्छुक्रदोषांस्तान्स्नेहस्वेदादिभिर्जयेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—मनुष्योंका वीर्य वातादिदोषोंसे दूषित होकर दुर्गन्धित, क्षीण, ग्रन्थि, राधकी समान, और मलकी सदृश होजाताहै, तहां रुधिरसे दुर्गन्धित, कफवातसे ग्रन्थियुक्त, रक्तपित्तसे क्षीण और त्रिदोषसे मूत्र और मलकी समान होताहै । त्रिदोषजको छोडकर अन्यान्य सर्व प्रकारके शुक्रदोष स्नेह स्वेदादिसे आरोग्य होतेहैं, परन्तु त्रिदोषजन्य शुक्र कष्टसाध्य है ॥ १–३ ॥

अथ वाजीकरणयोगाः ।

पिप्पलीलवणोपेतौवस्ताण्डौक्षीरसर्पिषा ।
साधितौभक्षयेद्यस्तुसगच्छेत्प्रमदाशतम् ॥ ४ ॥
वस्ताण्डसिद्धेपयसिभावितानसकृत्तिलान् ।
यःखादेत्सनरोगच्छेत्स्त्रीणांशतमपूर्ववत् ॥ ५ ॥
चूर्णविदार्याःसुहृतंस्वरसेनैवप्रभावितम् ।
सर्पिःक्षौद्रयुतोलीढ्वादशगच्छेन्नरोऽङ्गनाः ॥ ६ ॥
भूमिकूष्माण्डमूलचूर्णमस्यैव मूलरसेन भावितं रात्रौ लेह्यम् एवामामलकचूर्णं स्वरसेनैव भावितम् ।
शर्करामधुसर्पिर्भ्यांयुक्तंलीढ्वापयःपिबेत् ।
एतेनाशीतिवर्षोपियुवेवपरिहृष्यति ॥ ७ ॥
विदारीकन्दकल्कन्तुघृतेनपयसानरः ।
उदुम्बरसमंपीत्वावृद्धोऽपितरुणायते ॥ ८ ॥
गोक्षुरकःक्षुरकःशतमूलीवानरीनागबलाऽतिबलानाम् ।
चूर्णमिदंपयसानिशिपेयंयस्यगृहेप्रमदाशतमस्ति॥ ९ ॥

अर्थ—पीपल और सैंधानोन मिलाकर बकरेके अंडकोषोंको घी और दूधके साथ पकावे, पश्चात् इनको खानेसे सौ १०० स्त्रियोंसे गमन करनेको समर्थ होताहै । जिस दूधमें बकरेके अंडकोषों को पकायाहै उस दूधमें तिलोंको बारंबार भावनादेकर खानेसे सौ स्त्रियोंसे गमन करनेकी शक्ति होजातीहै । विद ।

रीकन्दके चूर्णको विदारीकन्दके रसमें भावना देकर घृत और सहतकेसाथ सेवनकरनेसे दश १० स्त्रियोंसे गमनकरनेकी शक्ति होतीहै। विदारीकन्दकी जड़के चूर्णको विदारीकन्दके जड़के रसमें भावनादेकर रात्रिमें शर्करा, घृत और सहतके साथ चाटे, ऊपरसे दूध पीवे, अथवा आमलोंके चूर्णको आमलोंके रसमें भावना देकर शर्करा, घृत और सहतके साथ चाटे, पश्चात् दूध पीवे तो ८० अस्सीवर्षका वृद्ध भी जवानकी समान होजाताहै। विदारीकन्दकी जड़को पीसकर घृत और दूधकेसाथ सेवनकरे तो वृद्ध मनुष्य भी तरुणताको प्राप्त होताहै। गोखुरू, तालमखाना, शतावर, कौंछ, गंगेरन और खिरैंटी, इनका चूर्ण करके दूधकेसाथ रात्रिमें पीवे तो १०० सौ स्त्रियोंमें रमणकरनेको समर्थ हो ॥ ४-९ ॥

अथ नरसिंहचूर्णम्।

शतावर्यारजःप्रस्थंप्रस्थंगोक्षुरकस्यच।
वाराह्याविंशतिपलंगुडूच्याःपंचविंशतिम् ॥ १० ॥
भल्लातकानांद्वात्रिंशच्चित्रकस्यदशैवतु।
तिलानांशोधितानाञ्चप्रस्थंदद्यात्सुचूर्णितम् ॥ ११ ॥
त्र्यूषणस्यपलान्यष्टौशर्करायास्तुसप्तभिः।
माक्षिकंशर्कराद्धेनमाक्षिकार्द्धेनवैघृतम् ॥ १२ ॥
शतावरीसमंदेयंविदारीकन्दजंरजः।
एतदेकीकृतंचूर्णंस्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ॥ १३ ॥
पलार्द्धमुपयुञ्जीतयथेष्टञ्चास्यभोजनम्।
मासैकमुपयोगेनजरांहन्तिरुजापहम् ॥ १४ ॥

अर्थ-शतावरकाचूर्ण दो २ सेर, गोखुरूकाचूर्ण २ दो सेर, वाराहीकन्दकाचूर्ण २॥ ढाई सेर गिलोयका चूर्ण ३ तीनसेर चार ४ तोले, भिलावेके बीजोंका चूर्ण ४ चारसेर, चीतेका चूर्ण १। सवासेर, शुद्ध किये हुए तिलोंका चूर्ण २ दो सेर, त्रिकुटेका चूर्ण १ एकसेर, शर्करा ७ सात पल, सहत १४ चौदह तोले, घी ७ सात तोले, और विदारीकंदका चूर्ण २ दो सेर, सबको एकत्र करके एक चिकने बासनमें भरके रखदेवे, इसमेंसे प्रतिदिन २ दो तोले

खाय, इसके ऊपर यथेष्ट भोजन करे, यह औषधि एकमहीनेमें जरा और ज्वरादिरोगोंको दूर करैहै ॥ १०-१४ ॥

अथ शतावरीघृतम् ।

घृतंशतावरीगर्भंक्षीरेदशगुणेपचेत् ।
शर्करापिप्पलीक्षौद्रयुक्तंतद्वृष्यमुच्यते ॥ १५ ॥

अर्थ-गायका घी २ दो सेर, दूध २० बीससेर, तथा कल्कके लिये शतावरका चूर्ण ऽ॥ आधसेर लेकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे । सिद्धहोनेपर शर्करा, पीपलका चूर्ण, और सहत मिलाके इसको सेवन करे इससे अत्यन्त वीर्यकी वृद्धि होतीहै ॥ १५ ॥

अथ वृष्यवस्तुलक्षणंमैथुनविधिश्च ।

यत्किंचिन्मधुरंस्निग्धंजीवनंबृंहणंगुरु ।
हर्षणंमनसश्चैवसर्वंतद्वृष्यमुच्यते ॥ १६ ॥
यदिमासाद्रसंशुक्रमुग्रंबतनिरर्थकम् ।
प्रायश्च्योतयतेशुक्रंशय्यान्यत्रकरोतितत् ॥ १७ ॥
नरोवीर्य्यकरान्योगान्सम्यक्छुद्धोनिरामयः ।
आसप्ततिंप्रकुर्वीतवर्षादूर्द्ध्वंचषोडशात् ॥ १८ ॥
नतुवैषोडशाद्वर्षात्सप्ततेःपरतोनच ।
आयुष्कामोनरःस्त्रीभिःसंयोगंकर्त्तुमर्हति ॥ १९ ॥
कल्याणोदग्रवयसोवाजीकरणसेवितः ।
सर्वेषुऋतुषुबहुव्यवायोहिनिवारितः ॥ २० ॥
आयुष्मन्तोमन्दजरावपुर्वर्णबलान्विताः ।
स्थिरोपचितमांसाश्चभवन्तिस्त्रीषुसंयताः ॥ २१ ॥
त्रिभिस्त्रिभिरहोभिश्चसेवेतप्रमदांनरः ।
सर्वेषुऋतुषुग्रीष्मेपक्षात्पक्षाद्व्रजेद्बुधः ॥ २२ ॥
योगान्संसेव्यवृष्यान्सततमथपयः शीतलंचाम्बुपीत्वा
गच्छेन्नरीं सुरूपांस्मरशतकलिलांकामुकःकाममाद्ये ।

यामेहृष्टप्रहृष्टांव्यपगतसुरतःसंस्वपेन्नित्यनित्यां
कान्तःकान्ताङ्गसंगादपहृतनरोधातुवैषम्यमेति॥२३॥
ग्लानिःकम्पोरुदौर्वल्यंधात्विन्द्रियबलक्षयः ।
क्षयवृद्ध्युपदंशाद्यारोगाश्चातीवदुर्ज्जयाः ॥ २४ ॥
अनेनमरणञ्चस्याद्व्रजतःस्त्रियमन्यथा ।
शोषकासज्वराशांसिश्वासकासातिपाण्डुता ॥ २५ ॥
अतिव्यवायाज्जायन्तेरोगाश्चाक्षेपकादयः ।
असेवनान्मेहमेदोग्रन्थिरग्नेश्चमार्दवम् ॥
त्यजेत्पूज्येशुचिस्थानेलोकाध्यक्षञ्चमैथुनम् ॥ २६ ॥
ग्लानिःकम्पोऽरुचिःसादस्तदनुचकृशताक्षीणताश्चेन्द्रियाणां
श्वासःशोपोपसंगोज्वरगुदजरुजाक्षीणताश्चेन्द्रियाणाम् ।
जायन्तेदुर्निवाराःपवनपरिभवःक्लीबतालिङ्गभङ्गो ।
रम्यारम्याभियोगाद्व्रजतइहसदावाजिकर्मच्युतस्य ॥ २७ ॥
तोयाङ्गरागशिशिरातपशीतवाताः
ताम्बूलसोमकरशीतरसेक्षुभक्ष्याः ।
स्नानञ्चदुग्धमधुपूगफलानिनिद्रा
सेव्यानिकामुकजनैःसुरतावसाने ॥ २८ ॥

अर्थ—जो पदार्थ किंचित् मधुर, तृप्तिकारक, जीवन, पुष्टिकारक, भारी और मनको हर्षित करनेवाले हैं उनको वृष्य कहतेहैं । मनुष्योंके एक महीनेकी अपेक्षासे अधिक अर्थात् जितना एक महीनेमें शुक्र उत्पन्न होय उससे अधिक शुक्रस्राव होयं तो उससे नानाप्रकारके रोग उत्पन्न होतेहैं । शुद्ध और रोगरहित मनुष्य १६ षोडश वर्षसे लेकर ७० सत्तर वर्षकी आयुतक मैथुन करताहै,परन्तु षोडश वर्षसे कम और७०सत्तर वर्षसे अधिक अवस्थावाला पुरुष कदापि स्त्रीसंसर्ग न करे, किसी ऋतुमें भी अधिक स्त्रीसंसर्ग नहीं करना चाहिये । आयुष्मान्,जरासे रहित, सुन्दर शरीर वाला, बलवान् और हृष्ट, पुष्ट मनुष्यको प्रत्येक ऋतुमें तीन तीन दिनके बाद और ग्रीष्मऋतुमें १५ दिनके पश्चात् मैथुन करना चाहिये ।

वीर्य्यजनक औषधियोंको सेवनकर पश्चात् मिश्रीके साथ दूध और शीतल जलको पीकर, सुन्दर स्वरूपवाली स्त्रियोंके पास जावे। अत्यन्त मैथुन करनेसे ग्लानि, कम्प, घुटनोमें दुर्बलता, धातु और इन्द्रियोंके बलका नाश, राजयक्ष्मा, उपदंश, शोष, खाँसी, ज्वर, बवासीर, श्वास, पाण्डु, और आक्षेपादिरोग उत्पन्न होतेहैं। बिलकुल मैथुन नहीं करनेसे प्रमेह, मेदा वृद्धि, ग्रन्थि, और मंदाग्निरोग उत्पन्न होताहै। पूज्य और पवित्र स्थानमें स्त्रीसंसर्ग न करना चाहिये तथा रमणकरने योग्य या नहीं रमणकरनेके योग्य स्त्रियोंके साथ जो रमण करताहै और जिसने-वाजीकरण औषधोंका सेवन नहीं किया उसके ग्लानि, कम्प, अरुचि, अवसाद, कृशता, शोष, श्वास, गरमी, बवासीर, धातुक्षीण, नपुंसकता और ध्वजभंग रोग उत्पन्न होताहै। जल, अंगराग, शिशिर, आतप, शीतलवायु, ताम्बूल, चन्द्रकिरण, शीतलपदार्थ, ईखकारस, ईखके विकार, दूध, सहत, सुपारी और निद्रा यह सब मैथुनके अंतमें अत्यंत हितकारी हैं॥ १६–२८॥

अथ श्रीमन्मदनमोदकः।

त्रैलोक्यविजयापत्रंसबीजंघृतभर्ज्जितम्।
त्रिकटुत्रिफलाशृंगीकुष्ठसैन्धवधान्यकम्॥ २९॥
शटीतालीशपत्रंचकट्फलंनागकेशरम्।
यमानीचाजमोदाचयष्टीमधुकमेवच॥ ३०॥
मेथीजीरकयुग्मञ्चगृहीत्वाभर्जितंकियत्।
यावदेतानिचूर्णानितावदेवतदौषधम्॥ ३१॥
तावत्येवसितादेयायावत्यायातिबन्धनम्।
घृतेनमधुनामिश्रंमोदकंपरिकल्पयेत्॥ ३२॥
त्रिसुगन्धिसमायुक्तंकर्पूरेणाधिवासयेत्।
स्थापयेद्घृतभाण्डेतुश्रीमन्मदनमोदकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थायवातश्लेष्मविनाशनम॥ ३३॥

अर्थ–घीमें भुने हुए भांगके बीज और पत्ते, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला, काकडाशिंगी, कूठ, सैंधानोन, धनियाँ, कचूर, तालीशपत्र, कायफल, नागकेशर, अजवायन, अजमोदा, मुलेठी, मेथी, और भुनाहुवा कालाजीरा तथा सफेदजीरा, प्रत्येकका चूर्ण एक एक भाग, सबकी बराबर

बूरा, तथा दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायची तथा कपूर, प्रत्येक एक-भाग, यथानुसार घृत और सहत मिलाकर लड्डू बनाके घीके बासनमें भरके रखदेवे, प्रतिदिन एक मोदक दूधके साथ खाय । यह श्रीमन्मदनमोदक अत्यन्त कामवर्द्धक, तथा वातश्लेष्मादिरोगोंको हरैहै ॥ २९–३३ ॥

अथ महामदनमोदकम् ।

त्रैलोक्यविजयापत्रंसबीजंघृतभर्जितम् ॥
समेशीतातपेलेपश्चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥ ३४ ॥
शतावरीरजश्चैवविदारीकन्दजंरजः ।
बलातिवलयोश्चैवमूलवल्कलजंरजः ॥ ३५ ॥
गोक्षुरक्षुरयोर्बीजाद्रजोवानरिबीजतः ।
एतदेकीकृतंयावच्छतावर्य्यादिकंरजः ॥ ३६ ॥
तस्माच्चतुर्गुणंकार्य्यंत्रैलोक्यविजयारजः ।
पयसाथसमेतस्मिन्गोलयेच्चूर्णसञ्चयः ॥ ३७ ॥
गोलयित्वासिताश्चैवशक्रचूर्णाच्चतुर्गुणाम् ।
पचेदवहितोवैद्योमंदमन्देनवह्निना ॥ ३८ ॥
ततःपाकक्रमंदृष्ट्वाभृष्टाचैवाऽसितंतिलम् ।
बुद्ध्वावतारितंदद्यान्मोदकार्थंभिषग्वरः ॥ ३९ ॥
त्रिकटुत्रिसुगंधंचसैन्धवंसधनीयकम् ।
जातीकोषफलंचैवबालकंजीरकद्वयम् ॥ ४० ॥
शटीकुन्दुरुकोटिश्चमुस्तामधुरिकामुरा ।
मांसीतालीशपत्रंचपत्रंवारेन्द्रमेवच ॥ ४१ ॥
ग्रन्थिपर्णीशिवाचैवतथैवशतपुष्पिका ।
चविकादेवदारुश्चसप्रियंगुलवंगकम् ॥ ४२ ॥
सरलःशैलजश्चैवसमेतान्चूर्णयेत् ।
अत्रघट्टालनेयुक्तंद्रव्यंतद्गन्धवृद्धये ॥ ४३ ॥

ढालयित्वाकृतंचूर्णंशक्रचूर्णस्यपादिकम् ।
सैन्धवंस्वादुतायोग्यंदेयंकटुकमेवच ॥ ४४ ॥
ततःसुमिलितंकुर्यान्मोदकंपरिकल्पयेत् ।
भूयस्त्रिजातकेचूर्णेचूर्णेत्र्यूषणजेतथा ॥ ४५ ॥
लोठयेन्मोदकानेतान्सिद्धार्थानथसिद्धये ।
कांचनेराजतेपात्रेकांस्येसम्पुटकेन्यसेत् ॥ ४६ ॥
रजस्त्रिजातानास्तीर्य्यकर्पूरेणाधिवासयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थायमहामदनमोदकम् ॥ ४७ ॥

अर्थ–घृतमें भुनेहुए भाँगके बीज और पत्तोंको पीसकर बारीक चूर्ण बना छायामें और धूपमें सुखालेवे । शतावर, विदारीकंद, खिरैटी, कंघी, गोखुरू, तालमखाना और कौंछके बीज, प्रत्येकका चूर्ण एक एक भाग, घीमें भुने-हुए भांगके बीज और पत्तोंका चूर्ण २८ अट्टाईस भाग दूध समान भाग, और बूरा भांगके चूर्णसे चौगुना, सबको मिलाकर मंद मंद अग्निसे पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब भुने हुए कालेतिल, त्रिकुटा, त्रिसुगंधि, सैंधा-नोन, धनियाँ, जावित्री, जायफल, सुगंधबाला, सफेद जीरा, कालाजीरा, कचूर, कुँदुरू, सौंफ, नागरमोथा, कपूरकचरी, तालीसपत्र, तेजपात, खिरैटी, हरड, सोया, चव्य, देवदारु, फूलप्रियंगु, लौंग, धूप सरल और भूरिछरीला, इनका चूर्ण करके मिलादेवे, पश्चात् इसको एक परातमें डालकर चौथाई-भाग भांगका चूर्ण, स्वादके योग्य सैंधव लवणका चूर्ण मिलाकर मोदक-बनालेवे, फिर इन लड्डुओंको त्रिजातके चूर्णमें और त्रिकुटेके चूर्णमें लुठाक रके कपूरकी वासनादेवे, पश्चात् सोने, चांदी, या कांसीके पात्रमें भरके रखदेवे, इसमेंसे प्रतिदिन एक मोदक खाय और ऊपरसे दूध पीवे तो अत्यन्त कामकी वृद्धिहो, तथा कास श्वासादि सम्पूर्ण रोग नष्ट होवें ॥ ३४–४७ ॥

अथ शतावरीमोदकम् ।

शतावर्यःश्वदंष्ट्राचबलाचातिबलातथा ।
मर्कटीक्षुद्रबीजञ्चविदारीकंदजंरजः ॥ ४८ ॥
एतानिसमभागानिपलिकानिविचूर्णयेत् ।
चूर्णाच्चतुर्गुणंदेयंत्रैलोक्यविजयारजः ॥ ४९ ॥

सर्वमेकीकृतंयावत्तदर्द्धमाहिषंपयः ।
तावन्मात्रन्तुदातव्यंशतावर्यारसन्तथा ॥ ५० ॥
विदार्य्याःस्वरसप्रस्थं सितापलशतंन्यसेत् ।
गोलयित्वासितान्दत्त्वापात्रेताम्रमयेदृढे ॥ ५१ ॥
पचेत्पाकविधिज्ञोऽपिमोदकःपरमोहितः ।
त्र्यूषणंत्रिफलाशृंगीत्रिजातंसैन्धवंशठी ॥ ५२
धान्यकंबालकंमुस्तंजीरकंकुन्दुरुर्मुरा ।
काकोलीक्षीरकाकोलीद्राक्षातुगामृगाण्डजम् ॥ ५३ ॥
जातीकोलफलंमांसीतालाङ्कुरकशेरुकम् ।
शतपुष्पाचवीदारुग्रन्थिकंसलवंगकम् ॥ ५४ ॥
कुष्ठंयमानिकाचात्मगुप्ताकट्फलमेथिका ।
मधुरीकाचमधुकंतालीशंवरखर्ज्जुरम् ॥ ५५ ॥
टंकणञ्चविचूर्ण्याथप्रत्येकंकोलसंमितम् ।
चूर्णार्द्धंशोधितंगंधंगंधपादांशपारदम् ॥ ५६ ॥
कज्जलीकृत्यदत्त्वातंलोडयेत्रिसुगन्धिना ।
यथाशक्त्यामोदकंचकर्पूरेणाधिवासयेत् ॥ ५७ ॥
उद्धृत्यस्निग्धभाण्डेतंप्रस्थाप्यचभिषग्वरैः ।
शिवंसंपूज्यसगणंधन्वन्तरिमुनिन्तथा ॥ ५८ ॥
कोलप्रमाणंकर्त्तव्यंक्षीरंचानुपिबेन्नरः ।
प्रातर्भोजनकालेवासायंकालेऽपिभक्षयेत् ॥ ५९ ॥
प्रमदाशतंचभजतेनचशुक्रक्षयोभवेत् ।
नातःपरतरंकिंचिद्विद्यतेवाजिकर्म्मसु ।
शतावरीमोदकंचवासुदेवेननिर्मितम् ॥ ६० ॥

अर्थ—शतावर, गोखुरू, खिरैंटी, कंघी, कौंछ, मंदारके बीज और विदारी-कन्दका चूर्ण प्रत्येक ४ चार तोले लेवे इन सब औषधियोंसे चौगुना भाँगके

बीजोंका चूर्ण, सबचूर्णसे आधा भैंसकादूध, शतावर और विदारीकन्दका रस २ दोसेर, और बूरा १०० सौपल, इन सबको एकत्र करके ताँबेके बासनमें पकावे, जब पकते पकते गाढ़ा होजाय तब त्रिकुटा, त्रिफला,काकडाशिंगी, त्रि· जातक,सैंधानोन,कचूर,धनियाँ,सुगंधबाला नागरमोथा, सफेदजीरा,कालाजीरा कुंदुरू,कपूरकचरी, काकोली,क्षीरकाकोली, दाख, वंशलोचन,कस्तूरी,जायफल, जावित्री, बालछड़, ताड़केअंकुर,कशेरू,सोया,चव्य,देवदारु गठिवन, लौंग,कूठ, अजवायन, कौंछके बीज, कायफल, मेथी, सौंफ,काच (कालानोन), मुलेठी, तालीशपत्र, पिण्डखजूर और सुहागेकीखीलैं, प्रत्येकका चूर्ण एक एकतोला,सब चूर्णसे आधागंधक, और गंधकसे चौथाई भाग पारेकी बनाई हुई कज्जली ले सबको मिलाकर एकएक तोलेके लड्डू बनालेवे, पश्चात् इन लड्डूओंको त्रिसुगंधिके चूर्णमें लुटाकर कपूरकी वासनादेवे, फिर एक उत्तम चिकने बासनमें भरके रखदेवे, प्रतिदिन १ एकलड्डू खाय और ऊपरसे दूधका अनुपान करे । इसके प्रभावसे सौ १०० स्त्रियोंके पास जासकताहै और शुक्रका क्षय न होवे । तथा कास, श्वास और प्लीहादि रोग दूरहो- जातेहैं ॥ ४८–६० ॥

अथ शतावरीमोदकः ।

शतावरीश्वदंष्ट्राचबलाचातिबलातथा ।
मर्कटीक्षुरबीजश्चविदारीकन्दजंरजः ॥ ६१ ॥
एतानिसमभागानिपलिकानिविचूर्णयेत् ।
चूर्णाच्चतुर्गुणश्चैवत्रैलोक्यविजयारजः ॥ ६२ ॥
एतदेकीकृतंयावत्तदर्द्धमाहिषंपयः ।
तावन्मात्रेणदातव्यंशतावर्यारसन्तथा ॥ ६३ ॥
विदार्याःस्वरसंप्रस्थंसितापलशतद्वयम् ॥
गोलयित्वासितांचैवपात्रेताम्रमयेदृढे ॥ ६४ ॥
पाचयेत्पाकविद्वैद्योमोदकःपरमोहितः ।
त्र्यूषणंत्रिफलाशृंगीत्रिजातंसैन्धवंशटी ॥ ६५ ॥
धन्याकंबालकंमुस्तांद्विजीरंकुन्दुरुर्मुरा ।
काकोलीक्षीरकाकोलीकस्तूरीमृद्विकातुगा ॥ ६६ ॥

जातीकोषफलंमां ०पत्रं वारेन्द्रग्रन्थिकम् ।
शतपुष्पाचवीदारुप्रियंगुसलवंगकम् ॥ ६७ ॥
सरलंशैलजंकुष्ठंजातीपुष्पंयमानिकाम् ।
कट्फलंकेशरंमेथीमधुकंदेवताडकम् ॥ ६८ ॥
मिश्रिता लीशपत्रञ्चखर्ज्जूरंरसगंधकम् ।
त्रिसुगन्धिसमायुक्तंकर्पूरेणाधिवासयेत् ॥ ६९ ॥
शिवंसंपूज्यसगणंधन्वन्तरिमथापरम् ।
कोलप्रमाणंकर्त्तव्यंक्षीरंचापिपिबेन्नरः ॥ ७० ॥
प्रातर्भोजनकालेवाभक्षयेच्चविचक्षणः ।
प्रमदाशतंरमतेनचशुक्रक्षयोभवेत् ॥ ७१ ॥

अर्थ—शतावर गोखुरूकेबीज, खिरैटीकीजड, कंघीकीजड़, कोंछकेबीज, तालमखानेके बीज और विदारीकन्द, प्रत्येकका चूर्ण एक १ पल, भाँगकाचूर्ण २८ आट्ठाईसपल, बूरा १००सौपल, भैंसकादूध, शतावरका रस और विदारीकंदका रस, प्रत्येक ३२ बत्तीसपल लेवे इन सबको मिलाकर ताँबेके पात्रमें मंद मंद अग्निसे पकावे, जब पकते पकते गाढ़ा होजाय, तब त्रिकुटा, त्रिफला, काकडासिंगी, त्रिजातक, सैंधानोन, कचूर, धनियाँ, सुगंधवाला, नागरमोथा, कालाजीरा, सफेदजीरा, कुँदुरू, कपूरकचरी, काकोली, क्षीरकाकोली, कस्तूरी, दाख, वंशलोचन, जावित्री, जायफल, बालछड़, वारेन्द्रपत्र, गठिवन, सोया, चव्य, देवदारु, फूलप्रियंगु, लोंग, धूपसरल, भूरिछरीला, कूट, चमेलीके फूल, अजवायन, कायफल, नागकेशर, मुलेठी, मेथी, देवताड़, सौंफ, तालीशपत्र, खजूर, पारा, गंधक, तगर, लालचन्दन और सज्जी प्रत्येकका चूर्ण एकएक तोले, मिलादेवे, पश्चात् एक एक तोलेके मोदक बनाकर त्रिजातक, त्रिकुटा और कपूरके चूर्णमें लुटालेवे । प्रतिदिन एक मोदक प्रातःकाल या भोजनके समय अथवा संध्याके समय खाय और ऊपरसे दूध पीवे । इसके प्रभावसे सौ १०० स्त्रियोंके साथ रमे तोभी शुक्रका क्षय न होवे ॥ ६१–७१ ॥

अथ रतिवल्लभमोदकः।

शक्राशनस्यबीजानिचूर्णितानिपलाष्टकम् ।
कुडवन्तुहविष्यस्यखण्डप्रस्थंप्रगृह्यच ॥ ७२ ॥
शतपुत्रीरसप्रस्थंप्रस्थंशक्राशनस्यच ।
गव्यमाजंपयःप्रस्थंदत्त्वाप्रस्थद्वयंपचेत् ॥ ७३ ॥
धात्रीद्विजीरकप्रस्थंत्वगेलापत्रकेशरम् ।
अतिबलाचात्मगुप्तातालांकुरकशेरुकम् ॥ ७४ ॥
शृंगाटकंत्रिकटुकंधन्याकंचित्रकंतथा ।
पथ्याद्राक्षाचकाकोल्यौखर्ज्जूरस्तवकन्तथा ॥ ७५ ॥
कटुकांमधुकंकुष्ठंलवंगंक्षारसैन्धवम् ।
यमानिकाचाजमोदाजीवन्तीगजपिप्पली ॥ ७६ ॥
प्रत्येकंकर्षमेकञ्चचूर्णितानिशुभानिच ।
मधुनःकुडवार्द्धञ्चपाकशेषेतथाक्षिपेत् ॥ ७७ ॥
मृगाण्डजंसकर्पूरंयथाभागंविनिक्षिपेत् ।
रतिवल्लभनामायंसेव्यमानोरसायनः ॥ ७८ ॥

अर्थ–भांगका चूर्ण १ एक सेर, घी १ एकसेर, बूरा २ दोसेर, शतावरका-रस ४ चारसेर, भांगका रस ४ चारसेर, गायका दूध ४ चारसेर, बकरीका दूध ४ चारसेर, आमलोंका रस ४ चारसेर, तथा दोनो जीरोंका क्वाथ ४ चारसेर, इन सबको मिलाकर पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेशर, कंघी, कौंछ, तालकेअंकुर, कशेरू, सिंघाडे, सोंठ, मिरच, पीपल, धनियाँ, लालचीता, हरड, दाख, काकोली, क्षीरकाकोली, पिण्डखजूर, कुटकी, कूठ, मुलेठी, लौंग, वज्रखार, सैंधानोन, अजमोदा, जीवन्ती और गजपीपल प्रत्येकका चूर्ण २ दो दो तोले, सहत एक १ सेर और कस्तूरी तथा कपूर कुछ थोडासा सुगंधिके लिये मिला देवे। पश्चात् लड्डू बनालेवे । यह लड्डू अत्यन्त कामदेवको बढावैहै और सर्वरोग नाशक है ॥ ७२–७८ ॥

अथ मन्मथरसवल्लभोमोदकः ।

समूलपत्रशाखायास्तुलांशक्राशनस्यच ।
संक्षुद्योलूखलेछित्त्वाऽपांद्रोणेहितथाचवै ॥ ७९ ॥
क्वाथंपादावशिष्टन्तुवस्त्रपूतंचकारयेत् ।
क्षीरप्रस्थंसमादायखण्डस्यार्द्धशतंन्यसेत् ॥ ८० ॥
शतावरीरसस्याष्टौपिप्पप्याःकुडवन्तथा ।
सर्वमेतत्समालोड्यघृतप्रस्थेनमेलयेत् ॥ ८१ ॥
औषधानान्ततश्चूर्णंदापयेत्कलिकंपृथक् ।
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमेलात्वक्पत्रकेशरम् ॥ ८२ ॥
चित्रकंपिप्पलीमूलंधान्यकाजाजिमेथिका ।
कुष्ठाब्दरेणुकाव्योपभार्ङ्गीतालीशकेशरम् ॥ ८३ ॥
तालमूलीत्रिवृद्दन्तीश्रेयसीहिंगुपौष्करम् ।
लवंगजातिकोपश्चयमानीकारवीतथा ॥ ८४ ॥
शुभाजातीफलंचन्द्रंशृंगीचैवविदारिका ।
अष्टवर्गश्चकाकोलंश्लक्ष्णचूर्णश्चकारयेत् ॥ ८५ ॥
कुडवद्विपचेद्वैद्योमोदकंकारयेत्ततः ।
अक्षमात्रश्चजग्ध्वोर्द्धशीतलंपाययेज्जलम् ॥ ८६ ॥
नाशयेच्छुक्रदोषश्चषण्ढश्चैवातिदारुणम् ॥
श्रीकरंलाघवकरंमेधाबुद्धिप्रवर्धनम् ॥ ८७ ॥

अर्थ—मूल, पत्र और शाखाओं समेत भांगको लेकर ओखलीमें कूटले, ऐसी कुटी हुई भांग ६। सवाछे सेर लेकर बत्तीस ३२ सेर जलमें पकावे, जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारकर कपडेमें छानलेवे, पश्चात् इसमें गायका दूध २ दोसेर, बूरा ६। सवा छे सेर, सतावरका रस १ एकसेर, पीपलका क्वाथ १ एकसेर और घी २ दोसेर मिलाकर पकावे, फिर पकते समय त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, लालचीता, पीपलामूल, धनियाँ, जीरा, मेथी, कूठ, नागरमोथा, रेणुका, त्रिकुटा, भारंगी,

तालीशपत्र, नागकेशर, मुसली, निसोत, दन्ती, गजपीपल, हींग, पोहकरमूल, लौंग, जावित्री, अजवायन, सौंफ, पीपल, जायफल, कपूर, काकडाशिंगी, विदारीकन्द, अष्टवर्ग और शीतलचीनी, प्रत्येकका चूर्ण ४ चार तोले मिलाकर गुड़की समान पाक करे, फिर दो दो तोलेके लड्डू बनालेवे, प्रतिदिन १ एक लड्डू खाय ऊपरसे शीतल जल पीवे । यह महारतिवल्लभमोदक शुक्रदोष और अत्यंत दारुण षण्ढत्वदोषको हरैहै । लक्ष्मीजनक, लाघवताकारक, मेधा और बुद्धिको बढावैहै ॥ ७९–८७ ॥

अथ कामेश्वरमोदकः ।

धात्रीसैन्धवकुष्ठकट्फलकणाशुण्ठीयमानीद्वयम् ।
यष्टीजीरकयुग्मधान्यकशटीशृंगीयवाःकेशरम् ॥८८॥
तालीशंत्रिसुगन्धिकंसमरिचंतंमेथिकाख्यान्वितम् ॥
चूर्णीकृत्यसमःमनाक्फलयुतंभृष्टश्चशक्राशनम् ॥ ८९ ॥
सर्वैस्तुल्यमतःसितांसुविमलांदत्त्वासमंसंक्षिपेत् ।
माध्वीकंसघृतंप्रशस्तदिवसेकुर्याच्छुभान्मोदकान् ९०॥
कर्पूरैरवचूर्णितानपिहितान्दत्त्वाचभृष्टांस्तिलान् ।
गोप्योऽयंक्षितिमंडलेषुसुधियापाखण्डिनामग्रतः॥९१॥
आधिव्याधिहरंक्षयक्षयकरंकुष्ठापहंबृंहणम् ।
स्त्रीणांतोयकरंमुखद्युतिकरंशुक्राग्निवृद्धिप्रदम् ॥ ९२ ॥

अर्थ–आमला, सैंधानोन, कूठ, कायफल, पीपल, सोंठ, अजवायन, अजमोदा, मुलेठी, जीरा, कालाजीरा, धनियाँ, कचूर, काकडासिंगी, जौ, नागकेशर, तालीशपत्र, छोटीइलायची, दालचीनी, तेजपात, कालीमिरच, मेथी और सौंफ प्रत्येककाचूर्ण, दो दो तोले, भुनीहुई बीजों समेत भाँगकाचूर्ण, सबकीबराबर, तथा, बूरा, सहत और घी सबकीबराबर, तथा सुगंधिकेलिये कपूर मात्राके अनुसार और काले तिलोंका चूर्ण, सबको एकत्र पकाकर मोदक बनालेवे । इस कामेश्वर मोदकको सेवन करनेसे अत्यम्त कामकी वृद्धि होतीहै तथा सर्वप्रकारके रोग शोकादि दूर होतेहैं ॥ ८८–९२ ॥

अथ महाकामेश्वरोमोदकः ।

चूर्णांशशोधितञ्चैवगगनंशु[illegible] ।
तदर्द्धंशुद्धलोहञ्चलोहार्द्धंवंगभस्मकम् ॥ ९३ ॥
जातीकोषफ[illegible] चूर्णांशंतत्रदापयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तंचातुर्ज्जातंससैन्धवम् ॥ ९४ ॥
शृंगीजीरकयुग्मञ्चधन्याकंग्रन्थिपर्णकम् ।
मांसीशतावरीकुष्ठंतुगाद्राक्षालवंगकम् ॥ ९५ ॥
शालपर्णीचकण्टीचचित्रकंकुन्दुरुर्मुरा ।
पुनर्नवाश्वगंधांघ्रिपद्मकंक्षुरबीजकम् ॥ ९६ ॥
सितातिलंचधन्याकंमेथिकाहरितालुकम् ।
बलातिबलयोर्मूलंचव्यंचदेवदारुच ॥ ९७ ॥
यमानीशतपुष्पाचमर्कटीबीजबिल्वकम् ।
काकोलीक्षीरकाकोलीतालांकुरकशेरुकम् ॥ ९८ ॥
शृंगीलवणकंचैवकर्पूरंदेवताडकम् ।
एतेषांसमभागानांचूर्णंकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ९९ ॥
शोधितांविजयाचूर्णंसर्वचूर्णार्द्धसंयुतम् ।
शर्करांद्विगुणांदत्त्वामोदकंपरिकल्पयेत् ॥ १०० ॥
मध्वाज्यमिश्रितंकृत्वाकर्षमेकन्तुमोदकम् ।
खादेत्प्रतिदिनंचैवसर्वव्याधिविवर्जितम् ।
महाकामेश्वरोह्येषमहादेवेननिर्म्मितः ॥ १०१ ॥

अर्थ—त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, चातुर्जातक, सैंधानोन, काकड़ाशिंगी, जीरा, कालाजीरा, धनियाँ, गठिवन, बालछड, सतावर, कूठ, वंशलोचन, दाख, लौंग, शालिपर्णी, कटेरी, चीता, कुँदुरू, पुनर्नवा, कपूर, कचरी, असगंधकी जड़, पद्माख, गोखुरूकेबीज, मिश्री, तिल, धनियाँ, मेथी, रेणुका, खिरैटी, कंघी, चव्य, देवदारु, अजवायन, सोया, कौंछ, बेलगिरी,

काकोली, क्षीरकाकोली, ताडके अंकुर, कशेरू, काकडासिंगी, सैंधानोन, कपूर और देवताड इन सबका चूर्ण समान भाग, सब चूर्णसे चौथाईभाग अभ्रककी भस्म, जायफल और जावित्रीका चूर्ण, अभ्रकसे आधी लोहेकी भस्म, लोहेसे आधी बंगकी भस्म और सब चूर्णसे आधा भाँगका चूर्ण और इससे दुगुना बूरालेवे, इनको एकत्र पकाकर सहत और घृत मिलाके एक एक कर्षप्रमाणके मोदक बनालेवे। प्रतिदिन एक १ मोदक खाय, इससे सर्वप्रकारके रोग दूर होतेहैं। यह महाकामेश्वर मोदक महादेवने निर्म्माण कियाहै ॥ ९३–१०१ ॥

अथ कामेश्वरमोदकः ।

चूर्णांशंगगनंघनार्द्धविमलंकुष्ठश्वगंधामृता
मेथीमोचरसोविदारिमुषलीगोक्षूरकंक्षूरकम् ।
भीरुश्चैवकशेरुकंयमनिकातालांकुरंधान्यकं
यष्टीनागबलाबलामधुरिकाजातीफलंसैन्धवम् ॥ १०२ ॥
भृंगीकर्कटशृंगकंत्रिकटुकंजीरद्वयं चित्रकं
चातुर्ज्जातपुनर्नवंगजकणाद्राक्षाशटीकट्फलम् ।
शाल्मल्यंघ्रिफलत्रिकंकपिभवंबीजंसमंचूर्णयेत् ।
चूर्णार्द्धाविजयासिताद्विगुणितामध्वाज्यमिश्रंनयेत्॥ १०३॥
कर्षार्द्धंगुडकंनिधायविधिनाराजासदासेवयेत्
पेयाक्षीरसिताचवीर्यकरणेस्तम्भोऽप्ययंकामिनाम् ।
वामावश्यकरःसुखातिसुखदःसर्वांगनाद्रावकः
क्षीणेपुष्टिकरःक्षयक्षयकरोनानामयध्वंसकः ॥ १०४ ॥
कासश्वासमहातिसारशमनोमंदानलोद्दीपको
दृष्टःसिद्धिफलोरसायनवरःकामेश्वरोदुर्ल्लभः ॥ १०५ ॥

अर्थ–कूठ, गंडक, गिलोय, मेथी, मोचरस, बिदारीकंद, मुसली, गोखुरू, तालमखाना, सतावर, कशेरू, अजवायन, ताडके, अंकुर, धानियाँ, मूलेठी, गंगेरन, खिरैंटी, सौंफ, जायफल, सैंधानोन, अतीस, काकडाशिंगी, त्रिकुटा, जीरा, कालाजीरा, चीता, चातुर्जातक, गजपीपल, दाख, कचूर, कायफल, सेमलकीजड, त्रिफला और कौंछके बीज, प्रत्येकका चूर्ण समानभाग, सब-

चूर्णसे आधाभाँगका चूर्ण, भाँगसे आधा अभ्रक और अभ्रकसे आधा रूपा-मारवीकाचूर्ण, सबचूर्णसे दुगुनी खाँड और कुछ थोडासा सहत तथा घृत ले सबको मिलाकर एक एक तोलेके मोदक बनालेवे । प्रतिदिन १ एकमोदक खाय, और ऊपरसे मिश्रीसंयुक्त दूधका अनुपानकरे, इससे वीर्यस्तम्भन होताहै, स्त्रियें वशीभूत होजातीहैं, अत्यन्त सुखहोताहै, सर्वस्त्रियें द्रवीभूत होजातीहैं, क्षीणमनुष्योंको पुष्टकरैहै, क्षयरोगको क्षय करैहै, नानाप्रकारके रोगोंको नष्ट करैहै, तथा खाँसी श्वास और अतीसारादि रोगोंको दूर करैहै, मन्दाग्निको दीपन करैहै इसका फल देखा हुआहै यह उत्तम कामेश्वर रसायन दुर्लभहै ॥ १०२–१०५ ॥

अथ बृहत्कामेश्वरमोदकः ।

निश्चन्द्रिकाभ्रंपलमात्रभागंलोहस्यवङ्गस्यतदर्द्धभागम् ।
जातीफलंकोषफलञ्चजीरंयमानिकाचाथपलप्रमाणा १०६॥
कर्षंद्विभागांत्रिसुगंधिकुष्ठंमांसीमुराकुन्दुरुदेवदारुः ।
चाम्पेयासिन्धूद्भवबालचव्यंसौभाग्ययष्टिंमधुग्रन्थिपर्णम् १०७
तालीशकर्पूरलवंगकान्ताकाकोलिकायुग्मकटुत्रिकञ्च ।
शैलेयपद्मंसरलंसपुष्पंहस्तीकणावत्सकबीजधान्यम् १०८॥
शृंगीशताह्वात्रिफलाथमेथीश्यामाब्दकंकृष्णतिलंकशेरुः ।
शक्राशनंतत्सदृशंविभागंसिताचशुभ्राद्विगुणाविधेया १०९
तत्पाकवेत्ताविधिवद्विधानंलब्ध्वाधिवासंनवनागरेण ॥
मध्वाज्यमिश्रंवटकप्रमाणंखादेन्नरःकाण्डकमंगलेन ॥
सर्वामयानांशमनंविधेयंविशेषतःसंग्रहकोष्ठदोषम् ॥११०॥

अर्थ–निश्चन्द्र अभ्रक चार तोले,लोहा दोतोले,वंग दोतोले जायफल,जावित्री, जीरा और अजवायन प्रत्येकका चूर्ण,४ चारतोले, छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, कूठ, कपूरकचरी, कुँदुरू, वालछड, देवदारु, सोनेके वरक, सेंधानोन, सुगंधबाला, चव्य, सुहागा, गठिवन, तालीशपत्र, कपूर, लौंग, फूलप्रियंगु, काकोली, क्षीरकाकोली, सोंठ, मिरच, पीपल, भूरिछरीला, पद्माख, धूपसरल, गजपीपल, इन्द्रजौ,धनियाँ,काकडाशिंगी,सोया,हरड़,बहेडा,आमला, मेथी,काली यावासाऊ, नागरमोथा, कालेतिल और कशेरू प्रत्येकका चूर्ण दो कर्ष, भांगका-

चूर्ण सबकी समान और सब चूर्णसे दुगुना बूरा ले सबको मिलाकर पाकको जाननेवाला उत्तम विधिसे पकावे, फिर नये सोंठकी वासना देकर घृत और सहत मिलाकर बडेकी बराबर मोदक बनालेवे । प्रतिदिन १ एक मोदक खाय। इससे सर्व प्रकारके रोग दूर होतेहैं और विशेष करके यह कोष्ठदोषको हरैहै ॥ १०६–११० ॥

अथ कामाग्निसंदीपनमोदकः ।

कर्षोरसोगंधकमभ्रकञ्चत्रिक्षारचित्रेलवणानिपञ्च ।
शटीयमानीद्वयकीटहारितालीशपत्राण्यपरंद्विकर्षम् ॥ १११ ॥
जीरंचतुर्ज्जातलवंगजातीफलञ्चकर्षत्रयमेवमन्यत् ।
सवृद्धदारंकटुकत्रयंचतथाचतुःकर्षमिदंनिबोध ॥ ११२ ॥
धन्याकयष्टीमधुरीकशेरुकर्षाःपृथक्पंचवरीविदारी ।
वरेभकर्णेभकणात्मगुप्ताफलंतथागोक्षुरबीजयुक्तम् ॥ ११३ ॥
सबीजपत्रेन्द्ररजःसमानंसमासिताक्षौद्रघृतंचतुल्यम् ।
कर्षैकमिन्दोरथमोदकन्तत्कामाग्निसन्दीपनमेतदुक्तम् ११४

अर्थ–पारा, गंधक, अभ्रक, सज्जी, सुहागा, जवाखार, चीता, कालानोन, सैंधानोन. विरियासंचरनोन, सांभरनोन सामुद्रलवण, कचूर, अजवायन, अजमोदा, बायबिडंग और तालीशपत्र प्रत्येक १ एक कर्ष, जीरा २ दो कर्ष, चातुर्जातक प्रत्येक २ दो कर्ष और लौंग २ दो कर्ष जायफल २ दो कर्ष, विधारा ३ तीन कर्ष सोंठ ३ तीन कर्ष, मिरच ३ तीन कर्ष, पीपल ३ तीन कर्ष, धनियाँ, मुलेठी, सौंफ और कशेरू, प्रत्येक ४ चार कर्ष, शतावर, विदारीकन्द, हरड, बहेडा, आमला, हस्तिकर्पा (पलाश) गजपीपल, कौंछकेबीज, और गोखुरूकेबीज प्रत्येक ५ पाँच कर्ष, बीज और पत्रोंसमेत भाँगका चूर्ण सबकी बराबर, बूरा, लबकी तुल्य तथा घी और सहत प्रत्येक समानभाग, कपूर एक कर्ष सबको एकत्र करके मोदक बनालेवे इनमोदकोंको सेवन करनेसे कास और यक्ष्मादिरोग दूर होतेहैं ॥ १११–११४ ॥

अथाम्रखण्डम् ।

पक्वचूतरसद्रोणंपात्रंस्याच्छुद्धखण्डतः ।
घृतमर्द्धंततोम्रा यंचतुर्थांश[illegible] ॥ ११५ ॥

तदर्द्धंमरिचस्यापितदर्द्धापिप्पलीस्मृता ।
तो ं खण्डसमंग्राह्यंसर्वमेकत्रसंस्थितम् ॥ ११६ ॥
विपचेन्मृन्मयेपात्रेयावद्दर्वीप्रलेपनम् ।
चूर्णान्येषांततोदद्यात्पत्रंपलचतुष्टयम् ॥ ११७ ॥
ग्रन्थिकंचित्रकंमुस्तंधन्याकंजीरकद्वयम् ।
त्र्यूषणंजातितालीशंचूर्णमेषांपृथक्पलम् ॥ ११८ ॥
त्वगेलानागपुष्पाणांप्रत्येकञ्चपलंतथा ।
सिद्धशीतेनमधुनाप्रस्थार्द्धंसर्वमेकतः ॥ ११९ ॥
सन्धायपिष्टवत्कृत्वाशुभेभाण्डेनिधापयेत् ।
भोजनादग्रतःखादेत्पलमेकंप्रमाणतः ॥ १२० ॥
शतंवापिशतार्द्धंवारमेत्स्त्रीणांपुमानिह ।
गच्छेत्कन्दर्पदर्पान्धोरागवेगाकुलांस्त्रियम् ॥ १२१ ॥
संसेव्यभेषजंह्येतद्वन्ध्यायांजनयेत्सुतम् ।
वीरंसर्वगुणोपेतंशतायुश्चह्यनामयम् ॥ १२२ ॥
कन्याप्रदायिनीचैवददातिसुतमुत्तमम् ।
मृतवत्साचयानारीयाचगर्भोपघातिनी ॥ १२३ ॥

अर्थ–पक्के आमोंका रस ३२ बत्तीससेर, खांड ४ चारसेर घी १८ अठारहसेर, सोंठकाचूर्ण ९ नौसेर, काली मिरचोंका चूर्ण ४॥ साढेचारसेर, पीपलका चूर्ण २। सवादो सेर, और जल ४ चारसेर, इन सबको एकत्र करके एक उत्तम मट्टीके बासनमें पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब तेजपातका चूर्ण ४ चार पल, गठिवन, लाल, चीतेकी जड, नागरमोथा. धनियाँ, जीराकाला जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, चमेलीके पत्ते, तालीशपत्र, दालचीनी, छोटी इलायची और नागकेशर प्रत्येक चार चार तोले ले चूर्णकर मिलादेवे, शीतल होनेपर १ एक सेर सहत मिलाकर सबको एकजीवकर चिकने बासनमें भरके रखदेवे । प्रतिदिन भोजनसे प्रथम चार तोले खाय । इसके प्रभावसे मनुष्य १०० सौ, या ५० पचास स्त्रियोंसे रम सक्ताहै, तथा कंदर्पके समान कामान्ध होकर रागके वेगसे आकुल स्त्रियोंपै जाताहै । वन्ध्या स्त्रियें भी वीर,

सर्वगुण सम्पन्न, रोगरहित और १०० सौ वर्षकी आयुवाले पुत्रको उत्पन्न करतीहैं । जिन स्त्रियोंके कन्या उत्पन्न होतीहैं, जिसके बालक नहीं जीतेहैं, और जिसका गर्भ पतित होजाता है, उनके इसके प्रभावसे उत्तम सर्व गुणालंकृत और दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ ११९-१२३ ॥

अथ मदनसंदीपनचूर्णम् ।

गोक्षुरश्क्षुरकोमेघोमर्कटीशतपुत्रिका ।
मधुकंक्षीरकाकोलीतालमूल्यमृताम्बुच ॥ १२४ ॥
शाल्मलीलौहगगनेविदारीतालमस्तकम् ।
हस्तिकर्णोबलाधात्रीजातीफलकशेरुकम् ॥ १२५ ॥
शृंगाटकोमासपर्णीभृंगराट्कुङ्कुमंवचा ।
शिलाजतुशिवाबीजंपारदंधातुमाक्षिकम् ॥ १२६ ॥
वटस्यकोमलापादाएलायष्टिकतण्डुला ।
रक्तशालिंचगोधूममासकोयवकस्तथा ॥ १२७ ॥
एतच्चूर्णीकृतंसर्वंसितशर्करयासमम् ।
विडालपदकंखादेत्सर्पिषामधुनासह ॥ १२८ ॥
शीतंपयोऽनुपानञ्चकामिनींकामयेन्नरः ।
वीर्यहीनोभवेद्यस्तुजीर्णोव्याधिप्रपीडितः ॥ १२९ ॥
प्रमेहीमूत्रकृच्छ्रीचस्त्रीदोषात्पतितध्वजः ।
साशीतिवार्षिकोवृद्धोयुवेवरमतेऽङ्गनाः ॥ १३० ॥
पुत्रंजनयतेवीरमरोगंदीर्घजीविनम् ।
भेषजैर्विविधैःकिंस्यादन्यैश्चशतसंख्यकैः ॥ १३१ ॥
फलंनकिंचित्तत्रास्तिकेवलंगौरवंबहु ।
बालसस्यंयथातोयैर्वर्द्धतेचादिनेदिने ॥ १३२ ॥
तथानेननृणांदेहःपुष्टोभवतिनान्यथा ।
योऽत्तिमण्डलमात्रन्तुसगच्छेत्प्रमदाशतम् ।
जगतस्तुहितार्थायचूर्णमदनदीपनम् ॥ १३३ ॥

अर्थ–गोखुरू, तालमखानेके बीज, नागरमोथा, कौंछके बीज, शतावर, मुलेठी, क्षीरकाकोली, मुसली, गिलोय, सुगंधबाला, मोचरस, लोहा, अभ्रक, विदारीकन्द, ताडकेअंकुर, हस्तिकर्ण (पलाश) के बीज, मषवन, भांगरा, केशर, बच, शिलाजीत, गंधक, पारा, सोनामाखी, वड़की नवीन दाढी, इलायची, बायविडंग, मुलेठी, रक्तशालि, गेहूँ, उडद और जौ प्रत्येक औषधिका चूर्ण समानभाग ले और सबकी बराबर बूरा मिलालेवे, प्रतिदिन २ दो तोले प्रमाण सहत और घीमें मिलाकर खाय, ऊपरसे शीतल दूधका अनुपान करे । यह मदनसन्दीपन चूर्ण, कामिनियोंको प्रसन्न करताहै। तथा इससे वीर्यहीन और रोगोंसे पीडित वृद्ध मनुष्य भी तरुण होजाताहै। प्रमेही, मूत्रकृच्छ्ररोगी, जिसका अत्यंत स्त्रीप्रसंग करनेसे लिंग शिथिल, होगयाहो, वह ८० वर्षका वृद्ध भी जवानोंकी तरह स्त्रियोंमें रमताहै । और इस चूर्णको सेवन करनेसे वीर, निरोगी और दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होताहै । नानाप्रकारकी सैकडों औषधियोंके सेवन करनेसे क्या फल होताहै । केवल उनका गौरव ही वडा है। जैसे–बालखेती जलसे दिन दिन बढतीहै, इसीप्रकार इस चूर्णको सेवन करनेसे मनुष्योंके शरीरकी पुष्टि होतीहै । इसको अडतालीस दिन नियमसे सेवन करे तो १०० सौ स्त्रियोंसे मैथुन करनेकी शक्ति होजातीहै । यह संसारके उपकारके लिये अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥ १२४–१३३ ॥

अथ बृहदश्वगंधाघृतम् ।

अश्वगंधापलशतंशुभदेशसमुत्थितम् ।
पुण्येहनिसमाहृत्यसाधयेच्छ्लक्ष्णकुट्टितम् ॥ १३४ ॥
द्रोणेऽम्भसिशनैस्तावद्यावत्पादावशोषितम् ।
सर्पिःप्रस्थंपचेत्तेनगव्यंक्षीरञ्चतुर्गुणम् ॥ १३५ ॥
कषायंछागमांसस्यदद्याच्छतद्वयस्यच ।
कल्कानिश्लक्ष्णपिष्टानिकर्षमात्राणिदापयेत् ॥१३६॥
काकोलीयुग्मकंमृद्वीद्विमेदेद्वेचजीरके ।
स्वयंगुप्तामृषभकावेलामधुकमेवच ॥ १३७ ॥
मृद्वीकसूर्पपर्ण्यौचजीवन्तीचपलाबला ।
नारायणीविदारीचदत्त्वासम्यग्विपाचयेत् ॥ १३८ ॥

सितामाक्षिकयोःशीतेगृह्णीयात्कुडवेपृथक् ।
लिह्यात्पाणितलंभुक्त्वापरिहारविवर्जितम् ॥ १३९ ॥
क्षीणेन्द्रियानष्टशुक्रावृद्धाबालास्तथाऽबलाः ।
हीनमांसाश्चयेकेचित्प्राश्येदंमात्रयाघृतम् ॥ १४० ॥

अर्थ–घी २ सेर, दूध ८ आठसेर, क्वाथके लिये उत्तम देशमें उत्पन्न हुई और शुभ दिनमें उखाडी हुई असगंध १२॥ साढ़ेबारहसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, बकरेके मांसका क्वाथ २५ पचीससेर, तथा कल्कके लिये काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीरा, कालाजीरा, कौंछके बीज, जीवक, ऋषभक, इलायची, मुलेठी, दाख,हस्तिकर्ण (पलाश) के बीज, जीवन्ती, पीपल, खिरैंटी, शतावर और विदारीकन्द यह सब औषधि कुटी हुई प्रत्येक२ तोले ले सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको पकावे, शीतल होनेपर १ एक सेर बूरा और १ एकसेर सहत मिलादेवे। इसमेंसे प्रतिदिन २ दो तोले खाय और यथेष्ट भोजन करे। यह घृत क्षीण इन्द्रियवाले, नष्ट होगया है वीर्य जिनका, वृद्ध, बालक, निर्बल और हीन मांसवाले प्राणियोंको हितकारी है ॥ १३४–१४० ॥

अथाश्वगंधाद्यंघृतम् ।

शुभदिग्देशसमुत्थंमूलंशतमश्वगंधयोःशुद्धम् ।
पुण्येऽहनिसंक्षुण्णंविपचेद्द्रोणेऽम्भसांविद्वान् ॥
श्रेष्ठंवाजीकरणेनिर्दिष्टंपूर्वमश्विभ्याम् ॥ १४१ ॥

अर्थ–घी २ दोसेर, दूध ८ आठसेर, क्वाथके लिये असगंधकी जड़ १२॥ साढ़ेबारहसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा, बकरेका मांस २५ पचीससेर, जल १२८ एकसौ अट्ठाईससेर, शेष ३२ बत्तीससेर और कल्कके लिये काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, कौंछके बीज, इलायची, मुलेठी, दाख, हस्तिकर्ण (पलाश) जीवन्ती, पीपल, खिरैंटी, विदारीकन्द और शतावर ये सब कुटेहुए प्रत्येक२ दो तोले ले यथाविधिसे घृतको सिद्धकरे, शीतल होनेपर १ एकसेर सहत और एकसेर बूरा मिलादेवे। इसको सेवन करनेसे नाना प्रकारके वीर्य्यदोष और विविधप्रकारके कास श्वासादि रोग दूर होतेहैं ॥ १४१ ॥

अथ यौवनंघृतम् ।

सुरभिचाश्वगंधकल्कृताञ्जलीकटुकीरजनीसमंसिद्धम् ।
गोमहिषीघृततुल्यंतैलंसंसाधितंविधिना ॥ १४२ ॥
कुरुतेपरिणतवयसांवनितानांसप्तरात्रेण ।
स्थिरविपुलतुंगकठिनंस्तनयुगलमस्ययोगेन ॥१४३॥

अर्थ—गायका घी १ एकसेर, भैंसका घी १ एकसेर, तिलका तेल २ दोसेर जल १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये दालचीनी, असगंध, छुई मुई, कुटकी और हलदी सब १ एकसेर ले यथाविधिसे सिद्धकरे इस औषधिके सेवन करनेसे अधिक उमरवाली स्त्रियोंके भी स्तन सात दिनमें स्थिर और पुष्ट होजाते हैं ॥ १४२॥१४३ ॥

अथ गुडकूष्माण्डकम् ।

कूष्माण्डकात्पलशतंसुस्विन्नंनिष्कुलीकृतम् ।
प्रस्थंचतिलतैलस्यतस्मिंस्तप्तेनिधापयेत् ॥ १४४ ॥
त्वक्पत्रधान्यकव्योपजीवकैलाद्वयानलम् ।
ग्रन्थिकंचव्यमातङ्गपिप्पलीविश्वभेषजम् ॥ १४५ ॥
शृंगाटकंकशेरुञ्चप्रलम्बंतालमस्तकम् ।
चूर्णीकृतंपलाशंचगुडस्यतुलयापचेत् ।
शीतीभूतेपलान्यष्टौमधुनःसंप्रदापयेत् ॥ १४६ ॥

अर्थ—उबाले हुए और छिले हुए पेठेके टुकडे १२॥ साढे बारह सेर, घी २ दोसेर, तिलकातेल २ दोसेर और गुड १२॥ साढेबारह सेर ले सबको मिलाकर पकावे, जब पकते पकते गाढा होजाय तब दालचीनी, तेजपात, धनियाँ, सोंठ, मिरच, पीपल, जीवक छोटी इलायची, बडी इलायची, चीता, पीपरामूल, चव्य, गजपीपल, सोंठ, सिंघाडे, कशेरू, ताडका मस्तक और ताडके अंकुर, प्रत्येक चार चार तोले मिलादेवे, शीतल होनेपर एक १ सेर सहत मिलादेवे । इसको सेवन करनेसे कफ, पित्त, वातादि दोष नष्ट होते हैं ॥ १४४—१४६ ॥

अथ मेथीमोदकः ।

त्रिकटुत्रिफलामुस्तजीरकद्वयधान्यकम् ।
कट्फलंपौष्करंशृंगीयमानीसैंधवंविडम् ॥ १४७ ॥
तालीशकेशरंपत्रंत्वगेलाचफलंतथा ।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावदेवचमेथिका ॥ १४८ ॥
संचूर्ण्यगुडकंकार्यंपुरातनगुडेनतु ।
घृतेनमधुनामिश्रंखादेदग्निबलंप्रति ॥ १४९ ॥
अग्निंचकुरुतेदीप्तंमासमेकंमहौषधम् ।
बलवर्णकरोह्येषस्वरसंधानकारकः ॥ १५० ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, जीरा, काला-जीरा, धनियाँ, कायफल, पोहकरमूल, काकडाशिंगी, अजवायन, सैंधानोन, विरिया संचरनोन, तालीशपत्र, नागकेशर, तेजपात, दालचीनी, छोटी इला-यची और जायफल प्रत्येक एक भाग और मेथीका चूर्ण सबकी बराबर लेकर इनको पुराने गुडमें मिलाकर मोदक बनालेवे, यह सहत और घीमें मिलाकर अग्निका बलाबल देखकर खावे इससे एकमहीनेमें अग्निदीपन होतीहै, बल और वर्णकी वृद्धि होतीहै और स्वर उत्तम होताहै ॥ १४७–१५० ॥

अथ महासुगंधितैलम् ।

कर्पूरागुरुचोचबोलनलिकालाक्षाशटीधातकी-
पुष्पैःसप्तदलैलवालुसरलाशैलेयमांसीप्लवैः ।
एलाकुंकुमरोचनादमनकश्रीवासजातीफलैः
कक्कोलक्रमुकाझटामदमुराकान्तालवंगामयैः॥ १५१ ॥
तैलोशीरहरेणुकामलयजस्थौणेयचण्डानखै-
र्जातीकोषकुलीरपद्मकनतैःपृक्कान्वितैःपालिकैः ।
लाक्षायोजनवल्लिलोध्रसलिलैस्तैलंपचेच्चाढकं
तेनाभ्यज्यतनुंजरन्नपिपुमान्कान्तःप्रियावल्लभः १५२॥

अर्थ–तिलकातेल १६ सोलह सेर, लाखका काथ, मँजीठका काथ और लोधका काथ प्रत्येक १६ सोलह सेर, तथा कल्कके लिये अगर, कपूर, दाल-

चीनी, बोल, नलिका, लाख, कचूर, धायके फूल, सतवनकी छाल, एलुआ, धूप सरल, भूरिछरीला, बालछड, सुगंध तृण, इलायची, केशर, गोरोचन, दौना, राल, जायफल, शीतलचीनी, सुपारी, भुईआमला, कस्तूरी, कपूरकंचरी फूलप्रियंगु, लौंग, कूठ, शिलारस, खश, रेणुका, लालचंदन, गठिवन, चोरक-द्रव्य, नखी, जावित्री, काकडाशिंगी, पद्माख, तगर और असवरग प्रत्येक कुटीहुई औषधि ४ चारतोले लेकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । इस तेलकी मालिस करनेसे वृद्ध पुरुष भी स्त्रियोंका वल्लभ होजाताहै ॥ १५१॥१५२ ॥

अथ तालकतैलम् ।

हरितालोऽश्वगंधाचजलौकाघृष्टिकञ्चुकैः ।
तिलतैलंपचेद्धीरोगोधामांससमन्वितम् ॥ १५३ ॥
तैलेनानेनलिंगस्यश्रवणस्यकुचस्यच ।
भगस्यचतथावृद्धिर्मर्दनान्नात्रसंशयः ॥ १५४ ॥

अर्थ—हरिताल, असगंध, जोंक, सूकर और सांपकी कैंचली तथा गोधाका मांस, इन सबके साथ तेलको पकाकर मर्दन करनेसे लिंग, कर्ण, स्तन और योनि बढ जातीहै ॥१५३॥१५४॥

अथ गर्भस्थितिहरयोगौ ।

रसांजनंहैमवतीवयस्थाचूर्णीकृतंशीतजलेनपीतम् ।
रजोविनाशंनियतंकरोतिशंकांतथागर्भसमागमस्य ।
क्षिप्तेवराङ्गेसतिदुष्टरण्डास्वप्नेऽपिवन्ध्यानहिगर्भशंकाम् १५५

अर्थ—रसौत, सफेद,वच और हरडका चूर्ण करके शीतल जलके संग पीवे तो रजस्राव निवारण होकर गर्भ रहनेकी शंका दूर होवे । ढाकके बीजोंका चूर्ण सहत और गायके घीमें मिलाकर ऋतुस्नानके समय योनिमें घिसनेसे व्यभिचा-रिणी और रण्डा स्त्रियोंके स्वप्नमें भी गर्भ नहीं रहता ॥ १५५ ॥

अथ हेमाङ्गसुन्दररसः ।

शुद्धसूतंसमंग्राह्यंसुवर्णगंधकंद्वयः ।
कज्जलीकृत्ययत्नेनशुल्वपात्रेभिषग्वरः ॥ १५६ ॥
राजिकास्वरसंदत्त्वाकृष्णोन्मत्तस्यवैरसम् ।
दत्त्वादत्त्वाप्रयत्नेनमर्दयेच्चत्रिभिर्दिनैः ॥ १५७ ॥

त्रिभिश्चसार्षपंतैलंदत्त्वाकल्कांवेमर्द्दये॰ ।
शोषयेद्भानुभिर्भानोज्वालांदद्याच्छनैःशनैः ॥ १५८ ॥
बालुकायंत्रयोगेतुउक्तोभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वालाप्रदातव्यायावत्स्यादुष्णबालुका॥ १५९ ॥
स्वाङ्गशीतलतांज्ञात्वाकर्षयेत्तंभिषग्वरः ।
ततोगुंजाप्रमाणेनमासंमासार्द्धकंपुनः ॥ १६० ॥
ज्ञात्वारोगंशरीरंचयोजनीयंबुधैःसदा ।
घृतेनमधुनासार्द्धंमर्द्दयित्वातुखल्वके ॥ १६१ ॥
रसंवाभक्षयेत्पश्चादाज्यंगव्यंगवांपयः ।
सामान्येनतुकर्त्तव्यंचित्रकार्द्रकसैन्धवैः ॥ १६२ ॥
रोगिणामनुपानीयंरसमाज्येनभोजनम् ।
सुस्निग्धंनातिमधुरंमांसञ्चैवविहायसम् ॥ १६३ ॥
भक्ष्यंछागादिकंमांसंद्वैत्वायस्यतुभक्षणम् ।
एतेनापिविधानेनप्रातःप्रातर्निषेवयेत् ॥
साध्यासाध्येषुरोगेषुतथाव्याधिचयेषुच ॥ १६४ ॥

अर्थ—शुद्धपारा, सोना, गंधक और लोहा यह सब समान भाग लेकर ताँबेके पात्रमें खरलकर कज्जली करे, इस कज्जलीको राईके रसमें और धतूरेके रसमें ३ तीन दिन खरलकरके पश्चात् सरसोंके तेलमें ३ तीन दिन खरलकर सूर्यकी तपनमें सुखावे, फिर बालुकायंत्रमें पकावे, जबतक बालू गरम न हो तबतक पकाता रहे,पश्चात् स्वांगशीतल चूर्ण करले । इस रसको एकरत्तीसे लेकर एक मासा पर्यंत अथवा आधे मासेपर्यंत रोग और शरीरको जानकर सदैव सेवन करे । अनुपान घृत, मधु, अदरखका रस, चीतेका रस सैंधानोन और औषधिके सेवनकरनेके पश्चात् बकरीका दूध पीना चाहिये । इस औषधिके ऊपर भोजनकरे । आकाशमें उड़नेवाले जीवोंका मांस और बकरे आदि पशुओंका मांस भक्षण करे । इसविधिसे प्रतिदिन प्रातःकाल इसको सेवन करे । इसके द्वारा वली पलितादि सम्पूर्ण साध्यासाध्यरोग दूर होतेहैं ॥ १५६—१६४ ॥

अथ कनककन्दर्परसः ।

पूर्व्वसिद्धेरसेक्षिप्त्वारसपादन्तुकाञ्चनम् ।
विमर्द्यापिविधानेनसुपिष्टञ्चविनिक्षिपेत् ॥ १६५ ॥
कान्तवैक्रान्तयोरेवंक्षिप्तेतत्रविधानतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तंमासमात्रंदिनेदिने ॥ १६६ ॥
लीढ्वानुपानंपातव्यंमन्दतप्तंगवांपयः ।
त्रिसप्तदिवसैःक्षीणोभवेदक्षीणधातुकः ।
उर्द्धलिंगःसदातिष्ठेद्द्रावयेद्वनिताशतम् ॥ १६७ ॥

अर्थ—पूर्वोक्त हेमांगसुन्दर रसमें चौथाईभाग सोनेकी भस्म मिलाकर खरल करे, पश्चात् इसमें कान्तलोहेकी भस्म और वैक्रान्तकी भस्म मिलाकर घृत, बूरा और सहतके साथ सेवन करे और ऊपरसे किंचित् गरम दूध पीवे तो २१ दिनमें सम्पूर्ण ज्वरादिरोग दूर होवें तथा क्षीणधातुवाले पुष्ट होजातेहैं । और कामदेवकी अत्यन्त वृद्धि होतीहै ॥ १६५–१६७ ॥

अथ ताम्रपर्पटीरसः ।

रसगंधकताम्राणांचूर्णंकृत्वासमांशिकम् ।
पुटपाकविधौपक्वामधुनालोड्यसंलिहेत् ॥
सर्वरोगहरंचैतत्पर्पटाख्यंरसायनम् ॥ १६८ ॥

अर्थ—पारा, गंधक और ताँबा, समान भाग लेकर पुटपाकविधिसे पकाकर सहतमें आलोड़न करे। यह पर्पटाख्य रसायन सम्पूर्ण रोग नाशक है ॥१६८॥

अथ पाण्डुरोगादिहररसः ।

जीर्णताम्रंरसंचैवगंधकंचसुचूर्णितम् ।
स्वर्णमाक्षिकमादायधूस्तूरकरसेपचेत् ॥ १६९ ॥
यावत्पाकंतथाकृत्वाशास्त्रविन्मृदुवह्निना ।
त्रिफलापिण्डेनावेष्ट्याविधिवत्सर्पिषापचेत् ॥ १७० ॥
विमर्द्यमधुसर्पिर्भ्यांनारिकेलंपिबेदनु ।

पाण्डुरोगंचकासंचज्वरांश्चविषमांस्तथा ॥
गुलमप्लीहामयंचैवविनाशयातितत्क्षणात् ॥ १७१ ॥

अर्थ—ताँबा; पारा, गंधक और सोनामाखी इनका चूर्ण करके धतूरेके रसमें मंद मंद अग्निसे पकावे, पश्चात् त्रिफलेसे वेष्टित कर विधि पूर्वक घृतकेसाथ पकावे । इस औषधिको घृत और सहतमें मिलाकर सेवन करे और ऊपरसे नारियलका दूध पीवे तो पाण्डुरोग, खाँसी, विषमज्वर, गुल्म और प्लीहादिरोग दूर होवें ॥ १६९–१७१ ॥

अथ शिलाजतूत्पत्त्यादिवर्णनम् ।

हेमाद्याःसूर्यसन्तप्ताःस्रवन्तिगिरिधातवः ।
जत्वाभंमृदुमृत्स्नाभंयन्मलंतच्छिलाजतु ॥ १७२ ॥
अनम्लंचाकषायश्चकटुपाकेशिलाजतु ।
नात्युष्णशीतंधातुभ्यश्चतुर्भ्यस्तस्यसम्भवः ॥ १७३ ॥
हेम्नोऽथरजतात्ताम्राद्वरंकृष्णायसादपि ।
मधुरश्चसतिक्तंचजपापुष्पनिभंचयत् ॥ १७४ ॥
विपाकेकटुशीतंचतत्सुवर्णस्यनिःसृतम् ।
राजतंकटुकंश्वेतंशीतंस्वादुविपच्यते ॥ १७५ ॥
ताम्राद्बर्हिणकण्ठाभंतीक्ष्णोष्णंपच्यतेकटु ।
यच्चगुग्गुलुसंकाशंसतिक्तंलवणान्वितम् ॥ १७६ ॥
विपाकेकटुशीतंचसर्वश्रेष्ठंतदायसम् ।
गोमूत्रगंधःसर्वेषांसर्वकर्म्मसुयौगिकाः ॥ १७७ ॥
रसायनप्रयोगेषुपश्चिमस्तुविशिष्यते ।
यथाक्रमंवातपित्तेश्लेष्मपित्तेकफेत्रिषु ।
विशेषेणप्रशस्यन्तेबलाहेमादिधातुजाः ॥ १७८ ॥

अर्थ—स्वर्ण, रूपादि पर्वतोंकी सम्पूर्ण धातु सूर्यकी धूपमें सन्तप्त होकर लाखकी समान और कोमल मिट्टीकी समान मैलको छोडती हैं उसको शिलाजीत कहतेहैं । यह शिलाजीत खट्टा और कषैला नहीं है, पचनेमें कटु, कुछ

शीतल और गरम है । यह सुवर्ण, रजत, ताँबा और लोहा इन चार प्रकार-की धातुओंसे उत्पन्न होताहै । जो शिलाजीत सुवर्णसे उत्पन्न होताहै । वह मधुर, कडवा, जवाके फूलके समान वर्णवाला, पचनेमें कटु और शीतलहै । जो शिलाजीत चांदीसे उत्पन्न होताहै वह कटु, सफेदरंगका, शीतल और पचनेमें मधुर होताहै । जो शिलाजीत ताँबेसे उत्पन्न होताहै वह मोरके कंठके समान रंगका, तीक्ष्ण, गरम और कटु रसवाला होताहै । जो शिलाजीत लोहेसे उत्पन्न होताहै वह गूगुलकी समान रंगवाला, कडवा और नमकीन पचनेमें चरपरा और शीतलहै यह सबोंमें श्रेष्ठहै । गोमूत्रकी समान गंधवाले सर्व प्रकारके शिलाजीत सर्व कर्म्मोंमें लाने चाहिये, परन्तु रसायन कर्म्ममें लोहेसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत लेना चाहिये । सुवर्णसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत वातपित्तरोगमें, चांदीसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत पित्तकफ रोगमें, ताँबेसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत कफज रोगमें और लोहेसे उत्पन्न हुआ शिलाजीत सान्निपातिक रोगमें देना चाहिये ॥ १७२–१७८ ॥

अथ शैवसिद्धान्तोक्ताशिवागुटिका ।

कालेरवितापाढ्येकृष्णायसजांशिलाजतुप्रवरम् ।
त्रिफलारससंसक्तंत्र्यहंशुष्कंपुनःशुष्कम् ॥ १७९ ॥
दशमूलस्यगुडूच्यारसेवावासायास्तथापटोलस्य ॥
मधुकरसेगोमूत्रेत्र्यहंत्र्यहंभावयेत्क्रमशः ॥ १८० ॥
एकाहंक्षीरेणतुतत्परंभावयेत्पुनःशुष्कम् ।
सप्ताहंभाव्यंस्यात्क्वाथैनैपांयथालाभम् ॥ १८१ ॥
काकोल्यौद्विमेदेविदारियुग्मंशतावरीद्राक्षा ।
ऋद्धियुगर्षभकवीरामुण्डितिकांशुमत्यौच ॥ १८२ ॥
रास्नापुष्करचित्रकदन्तीभकणाकलिंगचव्याब्दाः ।
कटुकाशृंगीपाठाचैतानिपलांशिकानिकार्याणि ॥ १८३ ॥
आभ्रेणसाधितानांरसेनपादांशिकेनभाव्यानि ।
गिरिजस्यैवंभावितशुद्धस्यपलानिदशषट्द्विपलंच १८४
विश्वाधात्रीमागधिकाकर्कटाख्यमरिचानाम् ।
चूर्णपलंचविदार्यास्तालीशपलानिचत्वारि ॥ १८५ ॥

षोडशसितापलानिचत्वारिघृतस्यमाक्षिकस्य ष्टौ ।
तिलतैलस्यद्विपलंचूर्णार्द्धपलानिपंचानाम् ।
त्वक्क्षीरपत्रत्वग्नागैलाभिःमिश्रयित्वातुतम् ॥ १८६ ॥

अर्थ—कृष्ण लोहेसे उत्पन्न हुए शिलाजीतको ग्रीष्म ऋतुमें संग्रहकर रक्खे, फिर उस शिलाजीतको त्रिफलेके क्काथमें ४ चार दिन भावनादेकर धूपमें सुखावे, पश्चात् दशमूल, गिलोय, अड्सा, पटोल, मुलेठी और गोमूत्र इनके क्काथमें या रसमें ३ तीन दिन भावनादेवे, पश्चात् दूधमें १ एक भावना देकर धूपमें सुखालेवे, पश्चात् काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, विदारीकन्द, क्षीरविदारी, शतावर, दाख, ऋद्धि, वृद्धि ऋषभक, घीकुवार, गोरखमुंडी, रास्ना, पोहरकरमूल, लालचीता, दन्ती गजपीपल, कुडा, चव्य, नागरमोथा, कुटकी, काकडाशिंगी और पाढ प्रत्येक चार चार तोले लेकर ३२ बत्तीससेर जलमें औटावे, जब चौथाभाग शेषरहे तब उतारकर इसमें ७ सात दिन भावनादेवे, इसप्रकार शुद्ध कियाहुवा और भावना दियाहुवा शिलाजीत १६ सोलहपल, सोंठ, आमला, पीपल, काकडाशिंगी और कालीमिरच प्रत्येकका चूर्ण २ दो पल, विदारीकंदका चूर्ण १ एक पल, तालीशपत्रका चूर्ण ४ चार पल, बूरा १६ सोलहपल, घी ४ चार पल, सहत ८ आठपल, तिलका तेल २ दो पल, और वंशलोचन, तेजपात, दालचीनी, नागकेशर और इलायची यह सब दो तोले ले इन सबको मिलाकर दो दो तोलेकी गोली बनाकर धूपमें सुखा चमेलीके फूलोंमें वसाकर एक उत्तम बासनमें भरके रखदेवे, प्रतिदिन १ एक गोली खाय और ऊपरसे दूध, उडदादिकोंका यूष, अनारकारस, सुरा, आसव, मधु, शीतल जलादि पान करे । इसके ऊपर यथेष्ट भोजन करे । इससे वात-कृमि, कासादि सर्वप्रकारके रोग नष्ट होतेहैं १७९–१८६ ॥

अथाष्टाङ्गघृतम् ।

मण्डूकींसजटांसशंखकुसुमांसब्रह्मसौवर्चलां
श्वेतांवागुजिकांशतावरियुतांब्रह्मींगुडूचीन्तथा ॥
पिष्टांशैःपलिकैरिमानिविधिवद्द्रव्याणिपच्यान्नरः
सर्पिःप्रस्थमथाढकेनपयसायुक्तंपचेद्युक्तितः ॥ १८७ ॥
नाम्नाष्टाङ्गमिदंदिवीवतुवियत्ख्यातंपिबेच्चामृतं ।
साग्रंग्रन्थसहस्रमेकदिवसेनैवाखिलंधारयेत् ॥ १८८ ॥

अर्थ-उत्तम गायका घी २ दो सेर, गायका दूध आठ ८ सेर, तथा कल्कके लिये इलहुल, जटामासी, शंखपुष्पी, ब्रह्मसौवर्चल, सफेद कोयल, वापचीकेबीज, शतावर, बडीशतावर, ब्रह्मी और गिलोय, प्रत्येक चार चार तोले ले यथाविधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे अत्यन्त धारणा शक्ति, मधुरध्वनि और बृहस्पतिकी समान श्रुति होजातीहै ॥ १८७॥१८८ ॥

अथ कामदीपकरसः ।

सितपुनर्नवामूलंशाल्मलीसत्त्वभावितम् ।
शाल्मलीसत्त्वनिर्यासंदद्यादत्ररसंसमम् ॥ १८९ ॥
गंधकंतत्समंदद्याद्भक्षयेत्तुर्यमानकम् ।
अनुपानंप्रकुर्वीतगवांक्षीरपलद्वयम् ॥ १९० ॥
अयंचाण्डालिकायोगोऽप्यगम्यामपिगम्यते ।
निषेधान्निधनंयातिकरणात्कामदेववत् ॥ १९१ ॥

अर्थ-सफेद पुनर्नवेकी जडका चूर्ण करके सेमलके रसमें भावना देवे, पश्चात् इसमें सेमलका सत्त्व और गंधक समान भाग मिलाकर गोली बनाके भक्षण करे और दूधका अनुपान करे । यह चाण्डालिका नामक योग है इसके सेवनसे पुरुष अगम्या स्त्रीमें भी गमन कर सकता है यदि इसको सेवन करके स्त्रीसंग न करे तो रोगयुक्त होकर नष्ट होजाताहै और सेवन करे तो कामदेवकी समान रूप लावण्यता आदिसे युक्त और वीर्य्यवान् होताहै ॥ १८९-१९१॥

अथ कामदूतरसः ।

सूतंगंधंकान्तभस्मापितुल्यंयामंनीरैःशाल्मलीसम्भवोत्थैः ।
गोलंकृत्वावेष्टयित्वान्धमाषैराढ्यंपक्काकाचकुप्यांनिधाय १९२।
भूकूष्मांडंनागवल्लींचपिष्ट्वातोयंदद्याद्रात्रिमेकान्तयत्नात् ।
सिद्धःसूतःकामदेवस्यवल्लंमध्वाज्याभ्यांयोजयेत्तत्रिसप्तम् १९३
खण्डंदुग्धंचानुपानेचदद्याद्रात्रौदुग्धंशक्यमानेचदेयम् ।
तिक्तंरूक्षंवर्जयित्वातिचाम्लंपेयंनित्यंशाल्मलीक्षीरयुक्तम् १९४
खण्डंधात्रीवानरीमूलदुग्धंपुष्टिंवीर्यंजायतेतत्प्रभूतम् ।
कुर्यात्नित्यंरम्यकान्ताविनोदं[illegible]दिव्यंकामदेवंरसेन्द्रम् १९५॥

अर्थ–पारा, गंधक और कान्तलोहेकी भस्म समभाग लेकर सेमलके रसमें एकप्रहर खरलकर गोला बना घृतके साथ कांचकी कुप्पीमें भरके विदारीकन्द और पानोंके रसमें डालकर एकदिन पकावे । इस औषधिको घृत और सहतके साथ सेवन करे, पश्चात् दूध और बूराका अनुपान करे । इसपै तिक्त, रूक्ष और अत्यंत खट्टे पदार्थ त्याग देवे । खांड, आमला और सेमल इनको दूधके साथ सेवन करे । इससे अत्यन्तवीर्य्यपुष्टि और रतिशक्ति बढती-है ॥ १९२–१९५ ॥

अथ पूर्णचन्द्ररसः ।

सूतंगंधंचाश्वगंधागुडूचीयष्टिस्तोयैरेकघस्रंनिघृष्य ।
क्षुद्रंशंखंमौक्तिकंलौहकिट्टंभस्मीभूतंसूततुल्यंचदद्यात् १९६
भूकूष्माण्डैरेकघस्रंविघृष्यगोलंकृत्वाभूधरेतंपुटेच्च ।
चूर्णंकृत्वानागवल्लीरसेनदद्यादेवंमर्दयित्वाचनिष्कम् १९७
मध्वाज्याभ्यांपूर्णचंद्रन्तुयुक्तंपुष्टिंवीर्यंदीपनंचैवकुर्यात ।
योज्यंप्रायःपित्तरोगेग्रहिण्यामर्शोरोगेसेवयेद्धोलयुक्तम् ।
स्त्रीणांतापेशाल्मलीनीरयुक्तंमात्रामानंकालदेशंविभज्य १९८

अर्थ–पारा और गन्धकको एकदिन असगंध, गिलोय और मुलेठीके क्वाथमें भावना देवे, पश्चात् इसमें पारेकी समान क्षुद्रशंख, मोती और मण्डूरको मिला-कर एकदिन विदारीकंदके रसमें खरलकर गोला बना भूधरयंत्रमें पुटपाक करके चूर्ण करले । फिर इसको पानोंके रसमें खरलकर सहत और घीके साथ सेवन करे तो पुष्टि, तथा वीर्यकी वृद्धिहो, अग्निदीपनहो, पित्तरोग, संग्रहणी और बवासीर रोगमें घोल (जलके विना मथा हुआ दही) के साथ सेवन करनेसे रोगमुक्त होताहै और स्त्रियोंके ताप होय तो सेमलके रसके साथ सेवन करे ॥ १९६–१९८ ॥

अथ बृहत्पूर्णचन्द्रोरसः ।

द्विकर्षशुद्धसूतंचगंधकञ्चद्विकार्षिकम् ।
लौहभस्मपलञ्चाभ्रंजारितञ्चपलांशिकम् ॥ १९९ ॥
द्वितोलंरजतंचैववंगभस्मद्विकार्षिकम् ।
सुवर्णंतोलकंचैवताम्रंकांस्यंचतत्समम् ॥ २०० ॥

जातीफलंचन्द्रपुष्पमेलाभृंगञ्चजीरकम् ।
कर्पूरंवनितामुस्तंकर्षंकर्षंपृथक्पृथक् ॥ २०१ ॥
सर्वंखल्वतलेक्षिप्त्वाकन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वावरातोयेकटुकानांरसैस्तथा ॥ २०२ ॥
एरण्डपत्रैःसंवेष्ट्यधान्यैरात्रिन्दिनोषितम् ।
उद्धृत्यमर्दयित्वातुवटिकांचणसंमिताम् ॥ २०३ ॥
खादेच्चपर्णखण्डेनसंयुक्तांव्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशश्चकाशीनाथेननिर्म्मितः ॥ २०४ ॥

अर्थ—पारा २ दोकर्ष, गंधक २ दोकर्ष, लोहा ४ चारतोले, अभ्रक ४ चारतोले, चाँदी २ दो तोले, वंग २ दो कर्ष, सोना १ एकतोला, ताँबा १ एकतोला, काँसा १ एकतोला, जायफल, नागकेशर, इलायची, दालचीनी, जीरा, कपूर, प्रियंगु और नागरमोथा प्रत्येक एकएक कर्ष ले इनको एकत्र पीस-कर घीकुवारके रसमें खरल करे फिर त्रिफलेके क्काथमें १ एकदिन भावना देकर १ एकदिन त्रिकुटेके क्काथमें भावना देवे,पश्चात् इसको अरंडके पत्रोंमे वेष्टित कर एकदिन धानोंके ढेरमें गाढदेवे, फिर निकालकर चनेकी बराबर गोली बनालेवे प्रतिदिन १ एकगोली पानके टुकडेमें रखके खाय, इससे सर्व प्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ १९९–२०४ ॥

अथाभिनवकामदेवरसः ।

तोलकैकंसमादायपृथग्गंधकसूतयोः ।
रक्तोत्पलदलाम्भोभिर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०५ ॥
मर्दयित्वापुनर्देयंगंधंमासचतुष्टयम् ।
तस्यैवपत्रतोयेनपुनर्दत्त्वाचगंधकम् ॥ २०६ ॥
शंखिन्याश्चापितोयेनरुद्धाकाचघटेदृढे ।
ततस्तुबालुकायंत्रेपचेद्यामत्रयंततः ॥ २०७ ॥
काचकुप्याःसमाकृष्यसिद्धसूतमतःपरम् ।
खादेत्तुरक्तिकापंचरोगैराक्रान्तमानवः ॥ २०८ ॥
भोजनंपूर्ववद्देयंयत्नतःसततंभिषक् ।

दुर्बलंवपुरत्यर्थंमल्लवज्जायतेनृणाम् ॥
मासेनैकेनसूतेन्द्रःपित्तजान्नाशयेद्गदान् ॥ २०९ ॥

अर्थ–१ एक तोले पारा, और १ एकतोले गंधकको एकत्र लाल कमलके पत्तोंके रसमें तीन ३ दिन खरलकरे, पश्चात् ४ चारमासे गंधक मिलाकर फिर लाल कमलके पत्तोंके रसमें खरल करे,तदनंतर ४ चारमासे गंधक मिलाकर शंखपुष्पीके रसमें खरल कर कांचकी कुप्पीमें भरके वालुकायंत्रमें ३ तीन प्रहर पकावे। मात्रा ५ रत्तीकी है। इससे १ एक महीनेमें सर्व प्रकारके पित्तविकार दूर होजातेहैं, और दुर्बल मनुष्योंका मल्लकी समान शरीर होजाताहै। भोजन पूर्व रसकी समान जानना ॥ २०५–२०९ ॥

अथ मदनसुंदररसः।

माक्षिकंधातुमाक्षिकंलौहचूर्णंशिलाजतु।
पारदंचविडंचैवगन्धकञ्चसमंसमम् ॥ २१० ॥
घृतेनभावयित्वातुपात्रेकृत्वातुचायसे।
विडालपदमात्रन्तुभक्षयेच्चपुनःपुनः ॥ २११ ॥
मत्स्याण्डंतिलपिष्टंचघृतेनचपरिप्लुतम्।
क्षीरेणानुपिबेद्रात्रौशर्करामधुमिश्रितम् ॥ २१२ ॥
मासमात्रंपिबेन्नित्यंवीर्यवृद्ध्यैदिनेदिने।
सपुमान्रमयेन्नारीमजस्रंचटकोयथा ॥ २१३ ॥

अर्थ–सोनामाखी, रूपामाखी, लोहेका चूर्ण, शिलाजीत, पारा, बिरियासंचरनोन, और गंधक समान भाग लेकर, लोहेके बासनमें घीकी भावना देवे। मात्रा २ दो कर्षकीहै। इसपै मछलीके अण्डे और तिलोंकी पिट्ठीको घृतमें मिलाकर खावे और रातको दूधमें शर्करा और सहत मिलाकर एकमहीने पर्यन्त सेवन करे। इससे प्रतिदिन वीर्य्यकी वृद्धि होतीहै। इसको सेवन करनेसे बारंबार मैथुन करनेकी इच्छा होतीहै ॥२१०–२१३ ॥

अथ कामदीपकरसः।

गंधकस्यतुतोलैकंकृत्वावैतण्डुलाकृतिम्।
दत्त्वाभृंगद्रवंरौद्रेभावयेद्दिनसप्तकम् ॥ २१४ ॥
तच्चूर्णंप्रक्षिपेत्तत्रप्रत्येकंमासकद्वयम्।
जातीफलस्यकोषस्यतथाचंद्रलवंगयोः ॥ २१५ ॥

ततःसगुडकंकृत्वातस्यगुंजाचतुष्टयम् ।
अभ्यर्च्यभास्करंप्रातर्भक्षयेत्प्रत्यहंततः ॥ २१६ ॥
आर्द्रकंसैन्धवोपेतंमरिचस्यचसप्तकम् ।
तच्चानुचर्वणंकृत्वापिबेत्क्षीरपलद्वयम् ।
अनेनैवप्रयोगेणस्थविरोऽपियुवायते ॥ २१७ ॥

अर्थ–१ एकतोले गंधकको लेकर चावलोंकी समान छोटे छोटे टुकडे करलेवे, पश्चात् भांगरेके रसमें ७ सातदिन भावना देकर चूर्ण करलेवे, फिर इस चूर्णमें जायफल, जावित्री, कपूर और लौंग प्रत्येक दो दो मासे मिलाकर चार चार गुंजाकी गोली बनालेवे। सूर्य्यदेवकी पूजा करके प्रतिदिन १ एकगोली खाय, ऊपरसे अदरख, सेंधानोन, सातकाली मिरचोंका चूर्ण, इनको चाबे और दो पल दूध पीवे इसको सेवन करनेसे वृद्ध मनुष्य स्त्रीसंसर्गकी इच्छा करताहै ॥ २१४–२१७ ॥

अथ वसन्तकुसुमाकररसः ।

पृथग्द्वौहाटकंचन्द्रंत्रयोवंगाहिकान्तकम् ।
चत्वारिशुद्धमभ्रञ्चप्रवालंमौक्तिकन्तथा ॥ २१८ ॥
भावनागव्यदुग्धेनभावनेक्षुरसेनच ।
वासालाक्षारसोदीच्यरम्भाकन्दप्रसूनकैः ॥ २१९ ॥
शतपत्ररसेनैवमालत्याःकुसुमोदकैः ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यंसुगन्धिरससम्भवैः ॥ २२० ॥
गुंजाद्वयमिदंसेव्यंसितामध्वाज्यसंयुतम् ।
मेहघ्नंकान्तिदञ्चैवकामदंपुष्टिदन्तथा ॥ २२१ ॥

अर्थ–सोना २ दोभाग, चाँदी २ दोभाग, वंग ३ तीनभाग, कान्तलोह ३ तीन भाग, अभ्रक ४ चार भाग, मोती ४ चार भाग, मूँगा ४ चार भाग इन सबको एकत्र पीसकर गायका दूध, ईखका रस, अडूसेका रस, लाखका रस, सुगंधबालेका रस, केलेके फूलका रस, मोच, कमलके पत्तोंका रस, मालतीके फूलोंका रस और कस्तूरीका रस इन सबरसोंमें एक एक बार भावना देवे। प्रतिदिन २ दो रत्ती प्रमाण बूरा सहत और घीमें मिलाकर सेवन करे। यह प्रमेहनाशक, कान्तिजनक, कामको देनेवाला और पुष्टिको करनेवालाहै॥ २१८–२२१

अथ कामकलाख्योरसः।

मृतसूताभ्रकंस्वर्णंवाजिगंधामृतारसैः।
मुसलीकदलीकन्दद्रवैस्तंमर्दयेद्दिनम् ॥ २२२ ॥
रुद्ध्वामृद्वग्निनापच्यान्मर्द्यंपूर्वोक्तकैर्द्रवैः।
पुटन्देयंपुनर्मर्द्यमेवमष्टपुटैःपचेत् ॥ २२३ ॥
शाल्मलीजातनिर्यासैश्चतुर्मासंचभक्षयेत्।
गोक्षीरैर्मर्कटीबीजैःपलार्द्धंपाययेदनु ॥ २२४ ॥
रसःकामकलाख्योऽयंरमतेस्त्रीसहस्रधा।
सर्वाङ्गोद्वर्त्तनंकुर्यात्सयवैःशाल्मलीरसैः ॥ २२५ ॥

अर्थ—पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म और सोनेकी भस्म समानभाग लेकर असगंध, गिलोय, मुसली और केलेके कन्दके रसमें एकदिन खरल कर मृदु-अग्निके द्वारा पुटपाक करे फिर पूर्वोक्त रसोंमें खरलकर पुटपाक करे।इस प्रकार आठ ८ बार पुटपाक करे। इसको प्रतिदिन ४ चारमासेभर सेमलके रसमें मिलाके खाय, ऊपरसे वापचीके बीजोंके चूर्णको गायके दूधमें मिलाकर पीवे। और सेमलके रसमें जौका चूर्ण मिलाकर उबटन करे।इस रसके प्रभावसे १००० सहस्र बार स्त्रीके पास जानेको समर्थ होजाताहै ॥ २२२–२२५ ॥

अथ पूर्णेन्दुरसः।

शाल्मल्युत्थैर्मर्द्यपलैकंमृतगंधकम्।
पृथक्खल्वेत्रिसप्ताहंतद्द्रवैर्मर्द्यगंधकम् ॥ २२६ ॥
एकीकृत्यघृतेश्चार्द्धंमर्दयेत्तच्चगोलकम्।
यामद्वयंपचेदाज्येवस्त्रेबद्धातुपाचयेत् ॥ २२७ ॥
दिनैकंशाल्मलीद्रावैःपिण्डंयामद्वयंपचेत्।
मर्दयित्वापुनःपिण्डंनागवल्ल्याचवेष्टयेत् ॥ २२८ ॥
निक्षिप्यकाचकुप्यांचद्रवंदत्त्वातुशाल्मलम्।
पलैकपरिमाणन्तुपचेद्यामद्वयन्ततः ॥ २२९ ॥
बालुकायन्त्रमध्येतुद्रवेजीर्णेसमुद्धरेत्।
द्विगुंजंभक्षयेत्प्रातर्नागवल्लीदलान्तरे ॥ २३० ॥
मुसलींसासिताक्षीरैःपलैकांपाययेदनु।
रसःपूर्णेन्दुनामायंसम्यग्वीर्यकरोभवेत् ॥ २३१ ॥

अर्थ–पारा और गंधक ४ चार तोले लेकर सेमलके रसमें खरल करे और एक खरलमें अलग गंधकको २१ इक्कीस दिनतक खरल करके पूर्वोक्तमें मिलादेवे, पश्चात् घीमें मर्दन कर गोला बना दो प्रहर घीके साथ पकाकर पिण्डकी समान बनादेवे, फिर उस पिण्डको वस्त्रमें बाँधकर सेमलके रसमें १ एकदिन पकावे। तत्पश्चात् सेमलके रसमें फिर खरल कर फिर पानोंसे वेष्टितकर काँचकी कुप्पीमें भरके १ एक पल सेमलके रसके साथ २ दोप्रहरतक वालुकायंत्रमें पकालेवे। प्रतिदिन २ दो रत्ती पानमें रखके खाय और ऊपरसे मुसलीके चूर्णको दूधके साथ बूरा मिलाकर पीवे। इससे अत्यन्त वीर्यकी वृद्धि होतीहै और अत्यन्त स्त्रीसंसर्गकी इच्छा होतीहै ॥ २२६–२३१ ॥

अथ मदनोदयरसः।

शुद्धसूतंसमंगंधंरक्तोत्पलपलद्रवैः।
याममर्द्यपुनर्गन्धंपूर्वादर्द्धंविनिक्षिपेत् ॥ २३२ ॥
पंचगुंजासितासार्द्धंरसोऽयंमदनोदयः।
समूलंशत्रुबीजञ्चमुसलीशर्करासमम् ॥ २३३ ॥
गवांक्षीरेणतत्पेयंपलार्द्धमनुपानकम् ॥ २३४ ॥
तैलपक्वंचचटकंखादेद्भोजनपूर्वतः।
भोजनान्तेपिबेत्क्षीरमजस्रंरमतेऽबलाम् ॥ २३५ ॥

अर्थ–पारा और गंधक समान भाग लेकर लाल कमलके पत्तोंके रसमें एक प्रहरतक खरल करे, पश्चात् पूर्व गंधकसे आधा गंधक और लेकर मिलादेवे, तीन तीन रत्तीकी गोलियां बनालेवे। इसको बूरामें मिलाकर खाय, पश्चात् जड समेत भांग मुसली और बूरा एकत्र दूधके साथ सेवन करे। इस औषधिको खाकर भोजनके पूर्व तेलमें भुना हुआ चिडेका मांस और भोजनके अंतमें दूधको पीवे ॥ २३२–२३५ ॥

अथ वसन्ततिलकोरसः।

हेम्नोभस्मकतोलकंद्विगुणितंलौहास्त्रयःपारदा-
श्चत्वारोनियतन्तुवङ्गयुगलंचैकीकृतंमर्दयेत्।
मुक्ताविद्रुमयोरसेनरसतागोकण्टवासेक्षुणः।
सर्ववन्यकरीषकेणसुदृढंतत्संपचेत्सप्तधा ॥ २३६ ॥
कस्तूरीघनसारमर्दितरसःपश्चात्सुसिद्धोभवेत्।
कासश्वाससपित्तवातकफजित्पांडुक्षयादीन्हरेत् २३७॥

अर्थ—सोनेकी भस्म २ दो तोले, लोहेकी भस्म ३ तोले, पारेकी भस्म ४ चार तोले, वंगकी भस्म २ दो तोले, मोतीकी भस्म २ दो तोले और मूंगेकी भस्म २ दो तोले इनको एकत्र गोखुरू, अडूसा और ईखके रसमें खरल कर अरनेउपलोंकी आँचसे ७ सातबार पकाकर पश्चात् कपूर और कस्तूरीके साथ खरल करे। इसको यथायोग्य अनुपानकेसाथ सेवन करनेसे—खाँसी, श्वास, पित्त वात—कफ, पाण्डु और क्षयादि रोगोंको क्षय करैहै॥ २३६–२३७॥

अथ धात्रीलौहम्।

धात्रीफलस्यचूर्णन्तुभावयेत्रिफलाजले।
एकविंशतिवाराणिशोधयेच्चपुनःपुनः॥ २३८॥
पलैकंभक्षयेन्नित्यंसिताक्षीरंपिबेदनु।
कामयेत्स्त्रीशतंनित्यंधात्रीलौहप्रभावतः॥ २३९॥

अर्थ—आमलोंके चूर्णको त्रिफलेके क्वाथमें २१ इक्कीसवार भावना देकर पश्चात् चौथाई भाग लोहा मिलालेवे, इसको सहत और घृत तथा बूरामें मिलाकर चार तोले खाय पश्चात् दूधमें बूरा मिलाकर पीवे तो—नित्य १०० सौ स्त्रियोंसे विषय करनेकी शक्ति उत्पन्न होजातीहै॥ २३८॥ २३९॥

अथ चन्द्रोदयरसः।

पलंमृदुस्वर्णदलंरसेन्द्रात्पलाष्टकंषोडशगंधकस्य।
शोणैःसुकार्पासभवप्रसूनैःसर्वंविमर्द्याथकुमारिकाद्भिः २४०
तत्काचकुम्भेनिहितंप्रगाढंमृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च।
पचेत्क्रमाग्नौसिकताख्ययन्त्रेततोरसःपल्लवरागरम्यम् २४१
संगृह्यचैतस्यपलंपलानिचत्वारिकर्पूररजस्तथैव।
जातीफलंसोषणमिन्द्रपुष्पंकस्तूरिकायाइहशाणएकः २४२
चन्द्रोदयोऽयंकथितोऽस्यमाषःभुक्तोहिबल्लीदलमध्यवर्ती।
मदोन्मदानांप्रमदाशतानांगर्वाधिकत्वंश्लथयत्यवश्यम् २४३

अर्थ—नरम सोनेके पत्र ४ चार तोले, शुद्ध पारा ८ आठपल और शुद्धगंधक १६ सोलह पल तीनोंको एकत्र पीसकर नरमावाडीके रसमें और घीकुवारके रसमें खरल करके सुखा लेवे, फिर आतसी सीसीमें भर ऊपरसे मिट्टी चढ़ाकर धूपमें सुखा लेवे, पश्चात् वालुकायंत्रमें रखकर तीन दिनतक क्रमसे मंद, मध्य और तेज अग्नि देवे तो यह रस लाल वर्ण होजाताहै। यह चंद्रोदय ४

चार तोले, भीमसेनी कपूर ४ चार पल, जायफल, मिरच, लौंग और कस्तूरी प्रत्येक चार चार मासे, इनको एकत्र पीसकर एक मासे पानमें रखके खाय, इसके प्रभावसे मदोन्मत्त सैकडों स्त्रियोंके गर्वको इकला मनुष्य दूर करदेताहै। तथा सर्वप्रकारके बली पलितादि रोग दूर होतेहैं ॥ २४०-२४३ ॥

अथ शृङ्गाराभ्रम्।

शुद्धंकृष्णाभ्रचूर्णंद्विपलपरिमितंशाणमानंयदन्यत्
कर्पूरंजातिकोषंसजलमिभकणातेजपत्रंलवंगम् ।
मांसीतालीशचोचंगजकुसुमगदंधातकीचेतितुल्यं
पथ्याधात्रीविभीतंत्रिकटुचपृथक्त्वद्धेशाणंद्विशाणम् २४४
एलाजातीफलाख्यंक्षितितलविधिनाशुद्धगन्धाश्मतोलं
तोलार्द्धंपारदंचप्रतिपदनिहितंपिष्टमेकत्रामिश्रम् ।
पानीयेनैवकार्यापरिणतचणकास्विन्नतुल्याश्चवट्यः ।
प्रातःखादेच्चतस्रस्तदनुचकियच्छृंगबेरंसपर्णम् ॥ २४५ ॥
पानीयंशीतमन्तेध्रुवमपहरतिक्षिप्रमादौविकारान् ।
दीर्घायुःकाममूर्त्तिर्जितबलिपलितोमानवोऽस्यप्रसादात् २४६॥

अर्थ—शुद्धकृष्णाभ्रकका चूर्ण दोपल, कपूर, जावित्री, सुगंधबाला, गजपीपल, तेजपात, लौंग, बालछड, तालीशपत्र, दालचीनी, नागकेशर, कूठ और धायके फूलोंका रस प्रत्येक चार ४ मासे, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच और पीपल प्रत्येकका चूर्ण दो मासे, इलायची और जायफल प्रत्येकका चूर्ण आठ ८ मासे शुद्धगंधक, १ एक तोला और शुद्धपारा आधा तोला, सबको एकत्र पीसकर पानीमें भीजेहुए चनेकी बराबर गोली बनालेवे, प्रतिदिन प्रभातके समय १ एक गोली खाय, पश्चात् अदरख और पानको खावे और जल पीवे। इसके प्रसादसे—कास, यक्ष्मा, शोथादि सर्वप्रकारके रोग नष्ट होकर शरीरकी कान्ति, लावण्य, पुष्टि और बलवीर्यादिकी वृद्धि होतीहै ॥ २४४-२४६ ॥

अथ शुक्रस्थितिकरादियोगाः।

सिद्धंकुसुम्भतैलंभूमिलताचूर्णमिश्रितंकुरुते ।
चरणाभ्यंगेपुंसांबीजस्तम्भंदृढंलिंगम् ॥ २४७ ॥
कर्पूरगोपाङ्गननीरलेपात्स्त्रीणांपरंस्रावणमेवपुंसाम् ॥
पिष्टास्थितास्तम्भनमेवलिंगेवदन्तिवैद्याइतिचित्रमेतत् २४८॥

मेदसाक्षौद्रयुक्तेनवराहस्यप्रलेपितम् ।
सम्यग्लिंगंरतान्तेऽपिस्तब्धताञ्चनमुञ्चति ॥ २४९ ॥
नीलोत्पलसितपंकजकेशरमधुशर्करावलिप्तेन ।
सुरतेसुचिरंरमतेदृढलिंगंनाभिविवरेण ॥ २५० ॥
नीलोत्पलसितसरसिजयोःकेशरम् ।
एभिर्नाभिंलिप्त्वाबीजानांधारणाच्चिरंरमते ॥ २५१ ॥
श्वेतकोकिलनेत्रांघ्रिंभुजेशिरसिवाधृतः ।
शाखोटबीजंत्वैलंवातिलकाद्बीजधारणम् ॥ २५२ ॥
श्वेतकोकिलकाश्वेतकुलियाख्यस्यमूलकम् ।
श्वेतक्षुद्राजटाबिम्बीमार्ज्जारास्थिच्युतास्थिरा ॥ २५३॥
करोतिनियतंतद्धिबीजस्तम्भंदृढध्वजम् ।
श्वेतक्षुद्राश्वेतबृहतीस्थिराशालपर्ण्यपि ॥ २५४ ॥

अर्थ—पकायेहुए कुसुमके तेलमें वनककोडेके चूर्णको मिलाकर दोनों पावोंमें मलनेसे मनुष्योंका वीर्य्यस्तम्भ और लिंगदृढ़ होजाताहै । कपूर, अनन्तमूलके बीज और शुद्धपारेको एकत्र गोपांगनाके जलमें मिलाकर उससे लिंगको धोवे तो वीर्यस्तम्भहो और योनिमें लगावे तो योनि द्रवीभूत होजातीहै । सुअरकी चरबीको सहतके साथ मिलाकर लेपकरनेसे मैथुनके अंतमेंभी लिंग नहीं बैठताहै । नीलोत्पल और सफेद कमलकी केसरको पीसकर सहत और बूरामें मिलाकर नाभिके छिद्रपै प्रलेप करनेसे अनेकबार मैथुन करनेकी सामर्थ्य और लिंग दृढ़ होजाताहै । सफेद तालमखानेकी जड़को चरणमें बाहुमें अथवा मस्तकमें बाँधनेसे, या सिहोंडेके बीजोंका तेल, या तिलकके बीजोंको धारण करनेसे वीर्य्यस्तम्भ होताहै । सफेद कटेरीकी जड़, कन्दूरी, बिलावकी हड्डियोंका चूरा और शालिपर्णी इनको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे वीर्यस्तम्भ और लिंग दृढ होजाताहै ॥ २४७—२५४ ॥

अथाऽन्येपिवीर्यस्तम्भार्थमुपायाः ।

एककरञ्जोदरकृतसधवलशरपुंखपारदोनियतम् ।
धारयतिबीजवेगंपुंसावदनार्पितोयावत् ॥ २५५ ॥

सप्ताहंछागाण्डरसेस्थितंकरभवारुणीमूलम् ।
गाढोद्वर्त्तनविधिनालिंगस्तम्भंतथाकुरुते ॥ २५६ ॥
बीजंबृहत्करंजस्यकृतमन्तःसपारदम् ।
हेम्नासुवेष्टितंनस्यंवदनेबीजधृङ्मतम् ॥२५७ ॥
महासुगन्धिकामूलंकटीस्थंबीजधृङ्मतम् ॥ २५८ ॥
श्वेतार्कमूलवर्त्यावराहमेदःप्रदिग्धयादीपः ।
स्तब्धंपुरुषवरांगंधारयतिबीजंशर्वरींसकलाम् ॥२५९॥
डुण्डुभोनामयःसर्पःकृष्णवर्णस्तमाहरेत् ।
तस्यास्थिचकटौबद्ध्वानरोवीर्यंनमुञ्चति ॥ २६० ॥
चरणयुगलेपेनस्तम्भयतिपुरुषबीजंयोगो-
ऽयंयामिनीं सकलाम्।आजंवज्रीक्षीरं लज्जालुमूलं पिष्ट्वा-
चरणयुगलेपेन सेतुरिव तोयवेगं धारयाति पुरुषबीजम्।

अर्थ–पारे और शरफोंकेको कांजुवेके भीतर रखकर जबतक मुखमें धारण-किये रहेगा तबतक वीर्य नहीं छूटेगा। इन्द्रायणकी जड़को बकरेके अण्डकोषोंके रसमें मिलाकर उबटन करनेसे लिंगस्तम्भ होताहै । बृहत्करंजके फलके भीतर पारेको रख स्वर्णसे वेष्टितकर मुखमें धारण करनेसे वीर्यस्तम्भ होताहै । नकुलकंदकी जडको कटिमें बाँधनेसे अथवा सफेद आककी रुईकी बत्ती बनाकर सुअरकी चरबीमें मिलाकर दीपक जलावे तो सम्पूर्णरात्रि वीर्यस्तभ रहताहै । डुण्डुभ नामवाले काले साँपकी हड्डीको कटिमें बाँधनेसे वीर्य्य नहीं छूटताहै । बकरीका दूध, थूहरका दुध और गायका घी, एकत्र मिलाकर दोनों पावोंमें लेपकरनेसे बहुत देरतक वीर्य्यस्तम्भ रहताहै । बकरीका दूध, थूहरका दूध, और लज्जावंती, इन तीनोंको एकत्र पीसकर दोनो पाओंमें लेप करनेसे बहुत देरतक वीर्य्य रुकताहै ॥ २५५–२६० ॥

अथ रतिवल्लभगुटिका ।

नागवल्लीदलद्रावैःसप्ताहंशुद्धसूतकम् ।
मर्दयेद्द्रावयेदम्लैश्चतुर्निष्कप्रमाणतः ॥ २६१ ॥
विषतुण्डगतंसूतंविषेणापिनिरोधयेत् ।
ततःसूकरमांसस्यगर्भेक्षिप्त्वातुशोधयेत् ॥ २६२ ॥

सन्ध्याकालेबलिंदत्त्वाकुक्कुटंबलिसंयुतम् ।
ततश्चुल्ह्यामयःपात्रेतैलेधुस्तूरजेपचेत् ॥ २६३ ॥
क्षिप्त्वावंशानलेपाच्यंताद्दृशंमांसपिष्टकम् ।
सन्ध्यामारभ्यमन्दाग्नौयावत्सूर्योदयोभवेत् ॥ २६४ ॥
हठाज्जागरणंकुर्यादन्यथानैवसिध्यति ।
प्रातरुत्थायगुटिकांक्षीरभाण्डोविनिक्षिपेत् ॥ २६५ ॥
क्षीरंसापिबतिक्षिप्रंजायतेप्रत्ययोमहान् ।
रतिकालेमुखेधार्यागुटिकावीर्यधारिणी ॥ २६६ ॥
क्षीरंपीत्वारमेन्नारींयथाकामसुखार्थिनः ।
मुखस्थागुटिकायावत्तावद्वीर्यस्यरोधिनी ॥ २६७ ॥

अर्थ–४ चार निष्क शुद्धपारेको नागरपानोंके रसमें खरलकर अम्लवर्गमें द्रावित करे, पश्चात् विषतुण्डमें रखकर विषसे बंद करदेवे पश्चात् सुअरके मांसमें स्थापन कर शुद्ध करे । फिर संध्याके समय मुरगेको मारकर मुरगेके मांसके साथ इसको लोहेके पात्रमें धतूरेके तेलके द्वारा पकावे, पश्चात् बाँसोंकी मृदु अग्निके द्वारा संध्यासे तडके तक पकावे, फिर प्रातःकाल उठकर गोली बना दूधके बासनमें गेरदेवे, जब वह गोली दूधको पीलेवे, तब काममें लावे मैथुनके समय जबतक इसगोलीको मुखमें धारण किये रहेगा तबतक वीर्य नहीं छूटेगा ॥ २६१–२६७ ॥

अथाहिफेनादियोगः ।

अफेनजातीफलयोःप्रत्येकंरक्तिकात्रयम् ।
कर्पूरस्यचरत्त्येकासप्तच्छदसुमस्यच ॥ २६८ ॥
पंचरक्तिप्रमाणन्तुग्राह्यमिंद्राशनस्यच ।
मासकञ्चचतुर्ग्राह्यंमधुनालेहउत्तमः ॥
धार्यंकदापिनोवीर्यंरमेत्स्त्रीणांशतानिच ॥ २६९ ॥

अर्थ–अफीम और जायफल, प्रत्येक ३ तीन रत्ती, कपूर १ रत्ती, सतवनके-फूल ५ रत्ती और भाँग चार ४ मासे, इन सबको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाके गोली बनालेवे जबतक गोलीको मुखमें धारण किये रहेगा तबतक वीर्य नहीं छूटेगा, चाहे सौ स्त्रियोंसेभी रमण करे ॥ २६८–२६९ ॥

अथ स्थूलीकरणम् ।

भल्लातकबृहतीफलदाडिमफलकल्कसाधितंसाधु ।
कटुतैलमर्द्दनवशात्कुरुतेलिङ्गंहिवाजिलिङ्गाभम् २७०।
अश्वगंधावरीकुष्ठंमांसीसिंहीफलान्वितम् ।
चतुर्गुणेनदुग्धेनतिलतैलंविपाचयेत् ॥
स्तनलिङ्गकर्णपालीवर्द्धनंम्रक्षणादपि ॥ २७१ ॥
भल्लातकबृहतीफलनलिनीदलासिन्धुजन्मजलशूकैः ।
माहिषनवनीतेनचकरस्मितेसप्तदिनमुषितैः ॥ २७२ ।
मूलेहयगंधायामहिषीमलमालितपूर्णमवलिप्तम् ।
भवतिलघुकृतमपितद्रासभलिंगंध्रुवंपुंसाम् ॥ २७३ ॥

अर्थ—सरसोंका तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलहसेर और कल्कके लि भिलावे; कटाईके फल और अनार, यह सब १ एकसेर ले यथाविधिसे तेलव पकाकर लिंगपै मर्दन करनेसे लिंग अश्वकी समान होजाताहै । तिलकातेल चारसेर, दूध १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये असगंध, शतावर, कूठ, बाल छड और बृहतीके फल, यह सब १ एकसेर ले यथा विधिसे तेलको सिद्धव मर्दन करनेसे स्तन, लिंग और कर्णपाली बढ़जातीहैं । भिलावे, बृहती फ कमलपत्र, सेंधानोन और जलशूक, इन सबको समान भाग लेकर भैंस नवनीतके साथ मिलाकर ७ सातदिन तक रक्खा रहनेदेवे, पहले असगंध जड और भैंसका गोबर एकत्र मिलाकर लिंगपै लेप करे, पश्चात् पूर्वोक्त रक् हुवा सातदिनका वासी लेपकरे तो लिंगस्थूल होजाताहै ॥ २७०–२७३ ॥

अथ वशीकरणार्थमुपायाः ।

माहिषंनवनीतञ्चकुष्ठंचमधुयष्टिका ।
सौभाग्यंभगलेपेनदासवच्चभवेत्पतिः ॥ २७४ ॥
निम्बकाष्टम्यधूपेनधूपयित्वाभगंस्त्रियः ।
सुभगाःस्युःपतिस्तासांदासवद्व्रजतेध्रुवम् ॥ २७५ ॥
सत्यंस्वार्त्तवशोणितभावितगोरोचनारचिततिलका ॥
नारीयंयंपश्यतिपुरुषंतंतंवशीकुरुते ॥ २७६ ॥
यदिसहदेवामूलंग्रहणेसंगृह्यरोचनापिष्टम् ।
तत्कृततिलकानारीगुरुकुलमपिविकलतांनयति २७७

चतुर्द्दशीभूमिजवारयोगेविलुप्तसंपुष्पितसर्षपंयः ।
संपिष्यहस्तौपरिलिप्ययस्याःसन्दर्शयेत्सातद्दतेनजीवेत् २७८
रतिकालेनिजंशुक्रंगृहीत्वावामपाणिना ।
वामंकान्तापदंलिप्त्वाभवेत्तस्याःप्रियोध्रुवम् ॥ २७९ ॥
सैन्धवन्तुमहास्वच्छंपारावतमलंमधु ।
एभिर्लिप्तन्तुलिंगंवैकामिनीवशकृद्भवेत् ॥ २८० ॥

अर्थ–भैंसका घी, कूठ और मुलेठी, इनको एकत्रपीसकर भगमें प्रलेप करनेसे अथवा नीमकी लकड़ियोंकी भगमें धूपदेकर पतिकेसाथ रमण करे, इससे निश्चय स्त्रीके वशमें पति होजाताहै । स्त्री अपने आर्त्तवमें गोरोचनको भावना देकर मस्तकपै तिलक लगाकर जिस जिस मनुष्यको देखे, वही वही मनुष्य निश्चय वशीभूत होजातेहैं । सहदेवीकी जडको ग्रहणके समय उखाड गोरोचनके साथ पीसकर उससे कपालपै तिलक लगानेसे सम्पूर्ण मनुष्य वशमें होजातेहैं । मंगलवार चौदशकेदिन फूलीहुई सरसोंको पीस हाथोंमें लेप करके जिसस्त्रीको देखे, वह स्त्री निश्चय मनुष्यके वशमें होजातीहै । पति अपने शुक्रको बाँये हाथमें लेकर मैथुनके समय स्त्रीके बाँये पाँवमें लेप करदेवे तो वह स्त्री निश्चय पतिपरायणा होजातीहै । सेंधानोन, कबूतरकी बीट और सहत एकत्र मिलाकर लिंगपै लेपकर मैथुनकरनेसे निश्चय स्त्री वशीभूत होजातीहै ॥ २७४–२८० ॥

अथान्येऽपिवशीकरणयोगाः ।

अपराजिताशिखांकट्यांनीलोत्पलसमन्विताम् ।
ताम्बूलंसहभावेनवशीकरणमुत्तमम् ॥ २८१ ॥
यदाब्रह्माहिनाभेकःसशब्दोगिलितोमनाक् ।
तदादण्डेनसन्ताड्यच्छायाशुष्कन्तुकारयेत् ॥ २८२ ॥
पृथग्नूतनपात्रस्थौदग्धौभस्मत्वमागतौ ।
एषकापालिकायोगोगच्छन्तमनुगच्छाति ॥
अनेननिहतानारीक्रमादायातियातिच ॥ २८३ ॥

अर्थ–अपराजिताकी जडको नीलोत्पल और ताम्बूलके साथ कटिमें बाँधनेसे निश्चय स्त्री वशीभूत होजातीहै । ब्रह्मसर्प जिस समय मेंढकको आधा निगल गया हो और आधा बाहर हो, उस समय उस मेंढकसमेत सर्पको लाठीसे मार छायामें सुखालेवे, फिर मेंढकको उसके मुखमेंसे निकालकर दोनोको अलग

अलग पात्रमें रखके जलादेवे, इस औषधिको सेवनकर जिस स्त्रीका दर्शनकरे, वह स्त्री अवश्य वशीभूत होजातीहै ॥ २८१-२८३ ॥

अथ पुनरपिवशीकरणयोगाः ।

सप्तदलमल्लिकामूलं पुष्योद्धृतं ताम्बूलेन भक्षणान्नारी वश्याभवेत् । पुष्योद्धृतं दण्डोत्पलमूलं भक्षणात्तथा । शुनो जिह्वां संगृह्य शंखचूर्णेन तिलकं तेन जगन्नारी वश्या स्यात् ।

गोरोचनासवीर्यश्चमूलंदण्डोत्पलस्यच ।
ताम्बूलंभक्षणेदेयंप्रमदारसकारकम् ॥ २८४ ॥
कर्णचक्षुर्मलंचैवतथादन्तमलंपुनः ।
स्वरेतसातुसंपिष्टंभक्षणाद्वनितावशम् ॥ २९५ ॥
गोरोचनाप्रियंगुश्चकुनटीनागकेशरम् ।
पुष्येचाञ्जनयोगेननरनारीवशंभवेत् ॥ २८६ ॥

गोरोचनारोहितपित्तंकुडवकटुतैलेभावयित्वा मुखम्रक्षणाज्जगद्वश्यम् । दण्डोत्पलमूलं पुष्योद्धृतं गोरोचनातिलकेन सर्वजनप्रियः स्यात् । पुष्येनोद्धृतं सुदर्शनामूलं करे बद्ध्वा जगज्जनप्रियः स्यात् ।

अर्थ-पुष्यनक्षत्रमें मल्लिकाकी जड़को उखाड़लावे, पश्चात् पीसकर पानके साथ खानेसे, अथवा पुष्यनक्षत्रमें उखाडीहुई दण्डोत्पलकी जड खानेसे स्त्री वशमें होतीहै । कुत्तेकी जिह्वाको शंखके चूनेके साथ जलमें पीसे, इसका तिलक लगाकर जिस स्त्रीको देखे वह स्त्री अवश्य वशमें होजातीहै । गोरोचन, अपना वीर्य और दण्डोत्पलकी जड एकत्र पीसकर पानकेसाथ स्त्रीको खानेको देवे तो निश्चय वशीभूत हो । कानका मल, नेत्रका मैल और दाँतोंका मैल वीर्यमें पीसकर जिस स्त्रीको खिलावे, वह तत्काल वशमें होजातीहै । गोरोचन, फूलप्रियंगु, मैनशिल और नागकेशर इन सबको एकत्र पीसकर अंजन लगानेसे नर और नारी दोनों वशीभूत होजातेहैं । आधसेर कडवेतेलमें गोरोचन और रोहितके पित्तको भावना देकर मुखपै मालिश करनेसे सब संसार वशमें होजाताहै । पुष्यनक्षत्रमें उखाडीहुई दण्डोत्पलकी जडको गोरोचनके साथ पीसकर तिलक लगावे, जिसको देखे वह अवश्य वशमें होय । पुष्यनक्षत्रमें सुदर्शनकी जडको उखाडकर हाथमें बाँधनेसे सर्वजगत्को प्रिय लगताहै ॥ २८४-२८६ ॥

अथ द्रावणम्।

मनःशिलावचाकुष्ठंसैन्धवञ्चपुनस्तथा।
मधुनालेपयेल्लिङ्गंद्रावयेत्कामिनीजनम् ॥ २८७ ॥
टंकणंमधुनायुक्तंसुपिष्टंधारयेद्बुधः।
तेनलेपेनगुह्यस्यनारीणांद्रावणंध्रुवम् ॥ २८८ ॥
मूलञ्चकाकमाच्याश्चपुष्येणोद्धृत्ययत्नतः।
ताम्बूलेनसमंस्त्रीणांद्रावणंभक्षणादपि ॥ २८९ ॥
शैलजंकटुतैलंचनवनीतंचमाहिषम्।
एतेनमर्दयेल्लिंगंमर्दनादश्ववद्भवेत् ॥ २९० ॥
तथापुनश्चाश्वगंधाजटामांसीकुष्ठश्चैव।
माहिषनवनीतंचलेपाद्ध्वजविवर्द्धनम् ॥ २९१ ॥

अर्थ–मैनशिल, वच,कूठ और सैंधानोन इनको सहतमें पीस लिंगपै लेपकर मैथुनकरनेसे शीघ्रही स्त्रीकी योनि द्रावित होतीहै। सुहागेको सहतमें पीसकर मुखमें रखलेवे और कुछ थोडासा स्त्रियोंके गुह्यदेशमें प्रलेप करदेवे तो मैथुन करते ही स्त्रियोंकी योनि द्रावित होजातीहै। मकोयकी जड पुष्यनक्षत्रमें उखाड पानकेसाथ स्त्रियोंको खिलावे तो निश्चय स्त्रियोंकी योनि द्रावित होजातीहै। भूरिछरीला, कड़वातेल और भैंसके नौनीघीको लिंगपै मलनेसे अथवा असगंध बालछड कूठ और भैंसका माखन इनको एकत्र पीसकर लिंगपै प्रलेप करनेसे लिंग घोडेकी समान बडा होजाताहै ॥ २८७–२९१ ॥

अथेन्द्रियोत्थानपतनार्थमुपायाः।

शृंगाद्वृषस्यपतितापतनक्रमेण
छत्रीसताडकजटावरिताडबीजम्।
पिष्ट्वाप्रलिम्पतिवधूरिहयस्यलिङ्गं
तस्याङ्गनास्तनरतौपतितोध्वजःस्यात् ॥ २९२ ॥
गोरोचनासहितखञ्जनयुग्मचूर्णं
योनौनिधायरमतेमदनोत्सवेया।
तस्याःपतिःकथमिहापरकामिनीषु
स्यात्सर्वदा किलपतद्ध्वजकान्तमूर्त्तिः ॥ २९३ ॥

ऊर्द्धाधोमुखगस्त्रीगोशृंगस्यचूर्णयुगलेन ।
योनिगतेनजलिंगोत्थानंपतनञ्चस्यान्नियतम् ॥ २९४ ॥
उर्द्धाधो शृंगयुगलेनःयथाक्रमं लिंगोत्था-
नं पतनञ्च । ताम्रचूर्णं बलीवर्दस्य शृंगाग्रं
विघृष्य तेन लेपादूर्ध्वलिंगस्य ध्वजपतनोत्थाने ।
कटुतैलभावितश्चटंकणकंसैन्धवं वापि ।
तत्रक्षिपतिरतान्तेसततंतमादितःपथ्यम् ॥ २९५ ॥
धात्र्यंजनाभयाचूर्णतोयपीतंरजोहरेत् ।
शेलुच्छदमिश्रपिष्टभक्षणञ्चतदर्थकृत् ॥ २९६ ॥

अर्थ–बैलके सींगकी पतितजटा और बीजताडकको एकत्र पीसकर लिंगपै प्रलेप करनेसे लिंग उठता नहींहै । गोरोचन और खंजनका चूर्ण करके योनिमें रखके पुरुषकेसाथ मैथुनकरे इससे लिंग उठता नहींहै । गायके सींगको बारीक पीसकर लिंगके ऊपर लेपकरे तो लिंग खडा होजाय और जो नीचेके भागमें प्रलेप करे तो लिंग बैठ जाय । ताँबेके चूर्ण और बैलके सींगके ऊपरका भाग दोनोंको बारीक पीसकर लेप करे तो पतित लिंग खडा होजाय । मैथुनके अन्तमें कडवे तेलमें सुहागे अथवा सेंधेनोनको भिजोकर लेप करे तो लिंगोत्थापन हो । आमलोंका चूर्ण हरडका चूर्ण और रसोतका चूर्ण एकत्र जलके साथ पीनेसे, अथवा लिसोडेके पत्तोंमें पिट्ठीमिलाकर भक्षण करे तो स्त्रियोंका रज बन्द होताहै ॥ २९२–२९६ ॥

अथ पुष्पप्रकाशनाप्रकाशनार्थमुपायाः ।

यावन्त्यबलाचम्पकंवारिणापिबति ।
नभवतिकुसुमंतस्यानियतंतावन्तिवर्षाणि ॥२९७ ॥
वेणुतरुबीजकल्कंकुरुतेक्षारगुडयुतोगिलितः ।
अपगतकुसुमांकुरुतेवनतुङ्गकुचामपिप्रमदाम् ॥२९८ ॥
जरयाचिन्तयाशुक्रंव्याधिभिःकर्म्मकर्षणात् ।
क्षयंगच्छत्यनशनात्स्त्रीणामतिनिषेवणात् ॥ २९९ ॥
क्षयाद्भयादविश्रान्ताच्छोकात्स्त्रीदोषदर्शनात् ।
नारीणामभिसंगाद्वाअभिघातादसेवनात् ॥ ३०० ॥
अतिव्यवायशीलोयोनचवाजिक्रियारतः ।

असाध्यंजायतेषण्डक्लैब्यंतदपरंस्थितम् ॥ ३०१ ॥
तोयांगलेपशिशिरातपशीतवाता-
स्ताम्बूलसोमकरशीतरसेक्षुभक्ष्याः ॥
स्नानञ्चदुग्धमधुमूलफलानिनिद्रा
सेव्यानिकामुकजनैःसुरतावसाने ॥ ३०२ ॥
असेवनान्मेहमेदोग्रन्थिरग्नेश्चमार्दवम् ।
इन्द्रियाणाञ्चजडताप्राप्यतेयौवनेजनैः ॥ ३०३ ॥
योगान्संसेव्यवृष्यान्ससितमथपयःशीतलंचाम्बुपीत्वा
गच्छेन्नारींसुरूपांस्मरशरतरलांकामुकःकामदेवः
यामेतुर्य्येप्रकृष्टाअपगतसुरतःसंस्वपेन्नित्यनित्यं
कांताःकान्ताङ्गसङ्गादसकृदपिनरोधातुवैषम्यमेति ३०४

अर्थ—स्त्री जितने चम्पाके फूलोंको जलमें पीसकरपीवे, उतनेवर्ष उसके पुष्प प्रकाशित नहीं होताहै।वेणु वृक्षके बीजोंकी छालके क्षारको गुडकेसाथ भक्षण करे तो स्त्रियोंका पुष्प प्रकाशित होताहै और दोनो स्तन पुष्ट होजातेहैं । जरा, चिन्ता, व्याधि, अधिक कार्य्य और भोजन नहीं करनेसे तथा अत्यन्त स्त्रीप्रसंग करनेसे शुक्रका क्षय होताहै । शुक्रक्षय,भय,परिश्रम,शोक,स्त्रियोंके दोषदर्शन, अधिक स्त्रीप्रसंग,अभिघात, बिलकुल मैथुन नहीं करना और वाजीकरणको नहीं करना, इन सबकारणोंसे मनुष्योंके नपुंसकता उत्पन्न होतीहै । जल अंगलेपन शिशिर, आतप,शीतलपवन, ताम्बूल, चन्द्रमाकी चाँदनी,शीतलरसोंका भोजन, ईखके रसका भोजन, स्नान, दूध, मधु, मूल और फल तथा निद्रा यह सब कामी पुरुषोंको मैथुनके अंतमें अवश्य सेवन करना चाहिये,नहीं सेवनकरनेसे मेह, मेदा, ग्रन्थि, मन्दाग्नि और इन्द्रियोंमें जडता उत्पन्न होतीहै । कामी पुरुष बूरा, दूध, शीतलजल और पुष्टिकारक द्रव्य सेवन करके तीसरे प्रहरमें मैथुनकर्म्म कर चौथे प्रहरमें निद्रा लेवे । चौथेप्रहरमें कदापि स्त्री प्रसंग न करे। बारंबार स्त्रियोंके शरीरके प्रसंगसे मनुष्यकी धातु विषमभावको प्राप्त होतीहै २९७–३०४

इति श्रीमुरादाबादनिवास्यायुर्वेदोद्धारककौ[illegible]कलानिधि–भिषक् शालिग्रामवैश्य विरचिते रसरत्नाकरे रसप्रदीपिकाख्यभाषाटीकायां मिश्राधिकारः समाप्तः ॥

समाप्तोऽयंग्रंथः ।

पुस्तकमिलनेकाठिकाना—खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बंबई.